CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

५४

प्रश्नमार्गः

'पाथेय'-हिन्दीटीकासहितः

?

आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्र.सं. ५४

प्रश्नमार्गः

'पाथेय'-हिन्दीटीकासहितः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF
ज्यो - 9855 R.

॥ श्रीः ॥

चौखम्भा सुरभारती ग्रन्थमाला
४१२

प्रश्नमार्गः

'पाथेय' - हिन्दीटीकासहितः

[पूर्वार्द्धः • अध्यायाः १-१६]

टीकाकार

आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

एम्.ए. (संस्कृत), एम्. फिल्., ज्योतिषाचार्य

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन
(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)
के. 37/117 गोपालमन्दिर लेन
पो. बा. नं. 1129, वाराणसी 221001
दूरभाष : 2335263

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण 2007 ई॰
मूल्य : 200.00 (प्रत्येक भाग)

Acc. 30920/30130 R

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्बा पब्लिशिंग हाउस
4697/2, भू-तल (ग्राउण्ड फ्लोर)
गली नं. 21-ए, अंसारी रोड
दरियागंज, नई दिल्ली 110002
दूरभाष : 32996391
ई-मेल : chaukhamba_neeraj@yahoo.com

❖

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
38 यू. ए. बंगलो रोड, जवाहर नगर
पों. बा. नं. 2113
दिल्ली 110007
दूरभाष : 23856391

❖

चौखम्बा विद्याभवन
चौक (बैंक ऑफ बड़ोदा भवन के पीछे)
पो. बा. नं. 1069, वाराणसी 221001
दूरभाष : 2420404

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF
ओ - ९५५४ R

प्रस्तावना

शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णञ्चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ।।

फलित ज्योतिषशास्त्र एक रहस्यात्मक विज्ञान है । भारतवर्ष में इस विषय पर लक्षाधिक ग्रन्थों की रचना संस्कृत भाषा में आज से सहस्राधिक वर्ष पूर्व ही हो चुकी थी; परन्तु उनमें से बहुत-से ग्रन्थ काल-क्रम से नष्ट हुए और बहुत-से मुगल तथा इस्लामी शासन काल में धर्मान्धों द्वारा मन्दिरों के विध्वंस के साथ ही सुनियोजित ढंग से नष्ट किये गये । नवीन ग्रन्थों के निर्माण की परम्परा अवश्य ही अबाध गति से चलती रही । प्रस्तुत ग्रन्थ भी उसी प्रक्रिया का अंग है ।

ग्रन्थ का रचनाकाल—इस ग्रन्थ (प्रश्नमार्ग) में ग्रन्थ के रचनाकाल का उल्लेख नहीं है; परन्तु पाँचवें अध्याय के श्लोक ११ में लिखा है—

कोलम्बे मुरहासंख्ये चन्द्रे वीरयुतिर्मता ।

अर्थात् कोलम संवत् की मुरहा (८२५) संख्या होने पर चन्द्रस्पष्ट में २४ कला जोड़ना चाहिए । यहाँ कटपयादि विधि से मुरहा का अर्थ है—मु = ५, र = २ तथा हा = ८ । ये तीनों क्रमशः इकाई, दहाई, सैकड़ा के अंक हैं । अतः इन्हें 'अङ्कानां वामतो गतिः' के अनुसार उलट दिया तो ८२५ कोलम संवत् हुआ । इसी श्लोक के आधार पर इस ग्रन्थ का रचनाकाल कोलम संवत् ८२५ माना जाता है । तदनुसार यह काल विक्रमसंवत् १७०६-१७०७ तथा ईसवी सन् १६४९-१६५० निश्चित होता है । यह समय आज से लगभग ३५४ वर्ष पूर्व का है ।

कोलम संवत्—यह केरल प्रदेश का अपना सन् है, जो वहाँ के परम्परागत जीवन में व्यवहार में लाया जाता है । इस संवत् के प्रारंभ से ही केरलवासियों का नया वर्ष प्रारम्भ होता है । यह सौरगणना पर आधारित वर्ष है, जिसका प्रारम्भ निरयण गणना से सूर्य के सिंह राशि में प्रवेशोपरान्त होता है । केरल प्रदेश भगवान् परशुराम के निवास की भूमि रही है । सात चिरञ्जीवी में से वे भी एक हैं, जो अद्यावधि महेन्द्र पर्वत पर निवास करते हैं । इसी कारण नववर्षारंभ को सूर्य के राशिप्रवेश के साथ मान्य किया गया है । सूर्य तथा सिंह दोनों ही वीरत्व के प्रतीक हैं । कोलम के प्रवेश तक केरल में धान की नयी फसल भी तैयार होती है । इस नववर्ष को 'सिंहादि' (मलयालम भाषा में) कहते हैं । कोलम वर्ष के सौर मासों के नाम निम्न प्रकार से हैं—(१) चिङ्ङम्, (२) कन्नी, (३) तुलम्, (४) वृश्चीकम्, (५) धन्, (६) मकरं, (७) कुम्भम्, (८) मीनम्, (९) मेकम्, (१०) विटपम्,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(११) मिथुनम् तथा (१२) कर्काटकम् । सौर तारीखों को मलयालम भाषा में 'तीयती' कहा जाता है ।

ग्रन्थकार का परिचय—भारतीय मनीषियों में अहंभाव से दूर रहकर स्वयं के नाम को प्रचारित न करने की इच्छा रही है । इस कारण इस ग्रन्थ के रचनाकार ने भी ग्रन्थ में कहीं भी अपने नाम का उल्लेख नहीं किया है । इस ग्रन्थ से मात्र इतना ही ज्ञात होता है कि ग्रन्थकर्त्ता केरल प्रान्त में तलश्शेरी (तल्लचेरि) नामक नगर के समीप एडकाड़ नामक स्थान में रहते थे । ग्रन्थकार ने इस क्षेत्र को मध्याटवी तथा विष्णु क्षेत्र के नाम से उल्लिखित किया है । इसी प्रकार तल्लश्शेरी नगर को उन्होंने 'चेल्लूरी' लिखा है—

चेल्लूरीश्वरमानम्य शैलजावल्लभं मया ।
शिष्याय देशिकावाप्तं प्रश्नवर्त्मोपदिश्यते ।।

इसमें ग्रन्थकार ने चेल्लूरीश्वर भगवान् शिव की वन्दना की है । इन्हें स्थानीय जनता 'पेरिञ्चेल्लरप्पा' कहती है । ग्रन्थकार के गुरु का नाम 'श्री मङ्गलश्रेणी निवास' था; जिन्हें प्रारम्भ के तीसरे श्लोक में प्रणाम किया गया है—

नमः मङ्गलश्रेणीनिवासाय महात्मने ।
सर्वं जानन्ति दैवज्ञा यद् दत्तश्रुतिचक्षुषः ।।

ये नम्बूदरी ब्राह्मण कुल में जन्मे थे । इनके पिता का नाम महादेव तथा माता का नाम श्रीदेवी था । इस सम्बन्ध में इन्होंने बत्तीसवें अध्याय के श्लोक १२४ में लिखा है—

यः श्रीमहादेवसुतो मुरारेर्लब्धोदयो मध्यवनाधिनाथात् ।
स प्रश्नमार्गाख्यमकार्षमेतच्छास्त्रं सुखम्बोधयितुं स्वशिष्यान् ।।

यहाँ महादेव के पूर्व में लगा 'श्री' शब्द कुछ विद्वानों के अनुसार इनकी माता का वाचक (नाम) है ।

ग्रन्थकर्त्ता के समकालीन व्यक्तियों में एक नाम ईश्वरदीक्षित का है, जो ग्रन्थकर्त्ता के विरोधी थे, जिनका उल्लेख भी बत्तीसवें अध्याय के १३८वें श्लोक में कर दिया है । दूसरे समकालीन व्यक्ति श्री 'मोच्छत्तिलोयित' ग्रन्थकर्त्ता के शिष्यों में से थे । वे एक विख्यात ज्योतिषी थे । यदि तुलनात्मक ऐतिहासिक अध्ययन की दृष्टि से देखा जाय तो जिस वर्ष इस ग्रन्थ की रचना हुई थी, ठीक उसी वर्ष छत्रपति शिवाजी महाराज की गुरु स्वामी समर्थ रामदासजी से भेंट हुई थी तथा उसी वर्ष सन्त तुकारामजी का निर्वाण भी हुआ था । श्री शहाजी राव (शाहजी) को उसी वर्ष कर्णाटक की जागीर प्राप्त हुई थी (इन राजनैतिक घटनाओं का सन् 'मराठे शाही या इतिहास - संक्षिप्त आलेख'; प्रकाशक—द० वि० लेले, २०२ केदारेश्वर पारनका, वसई-४०१२०१ से ग्रहण किया गया है) ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस ग्रन्थ के पूर्वार्ध के सोलह अध्यायों पर तत्कालीन प्रसिद्ध ज्योतिषी श्री केरल वर्मा के शिष्य 'पुण्णश्शेरिनम्बिनीलकण्ठ शर्मा' द्वारा की गयी संस्कृत टीका की पाण्डुलिपि चेन्नई (मद्रास) की ओरियेण्टल लाइब्रेरी में उपलब्ध बतायी जाती है।

ग्रन्थ की विषयवस्तु—इस ग्रन्थ का नाम प्रश्नमार्ग है। अस्तु; यह ग्रन्थ दैवज्ञ को जीवन से सम्बन्धित सभी महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के समाधान का मार्ग प्रशस्त करता है। यह समाधान जातकशास्त्र, प्रश्नशास्त्र, मुहूर्तशास्त्र, स्वरोदयविज्ञान, आयुर्वेद, प्राकृतिक लक्षण, संहिताज्योतिष, शकुनशास्त्र, स्वप्नशास्त्र, व्यक्ति की भाव-भंगिमाएँ, उसकी चेष्टाएँ तथा उसके मनोविज्ञान पर आधारित रहता है। अस्तु; ३२ अध्यायों तथा छब्बीस सौ के लगभग श्लोकों में विस्तारित इस ग्रन्थ में ज्योतिष ही नहीं; आयुर्वेद से सम्बन्धित अनेक विषयों का भी वर्णन है। इससे यह सिद्ध होता है कि ग्रन्थकर्त्ता बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। यही कारण है कि ग्रन्थ में अनेक दूसरे ग्रन्थों से अति महत्त्वपूर्ण उद्धरण दिये गये हैं। उनमें से एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ 'माधवीयम्' है, जिसके लेखक आचार्य माधव थे, जो कि विजयनगर साम्राज्य के अधिपति 'बुक्कदेव' की सभा में रहते थे। सम्भवत: यह वेदों के भाष्यकार सायण के भाई थे। इनके अतिरिक्त जिन ग्रन्थों से श्लोक या विचार उद्धृत किये गये हैं, उनके नाम निम्न हैं—

बृहज्जातक (वराहमिहिर), सारावली (कल्याणवर्मा), दैवज्ञवल्लभा (वराहमिहिर), विद्वज्जनवल्लभा, कण्ठाभरण, षट्पञ्चाशिका (पृथुयशा), आर्यासप्तति (भट्टोत्पल), अनुष्ठानपद्धति, कृष्णीयम्, प्रश्नसंग्रह, प्रश्नरत्न, सर्वार्थचिन्तामणि (वेंकटेश), सर्वसिद्धि, श्रीपति, पराशरहोरा, सारसमुच्चय, रणदीपिका, सन्तानदीपिका, ज्ञानदीपिका, नष्टजातकम्, दशाध्यायी तथा अष्टाङ्गहृदय (वाग्भटकृत आयुर्वेदीय ग्रन्थ)।

इस ग्रन्थ में दिये गये सूत्र रचनाकार द्वारा अनुभूत हैं।

प्रश्नमार्ग की विशेषताएँ एवं भाषा-शैली—यह ग्रन्थ दक्षिण भारत में लिखा होने से इसकी भाषा पर दाक्षिणात्य प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। अनेक स्थानों में मूर्धन्य वर्ण 'ट' के स्थान पर वर्ग का तृतीय वर्ण 'ड' प्रयुक्त हुआ है। जैसे कुटुम्ब=कुडुम्ब। 'ल' के स्थान पर 'र' का प्रयोग; जैसे खल=खर तथा आपोक्लिम=आपोक्रम आदि। इसी प्रकार 'व' के स्थान पर 'प' वर्ण का प्रयोग; जैसे कि—विषुवम्=विषुपम् आदि।

आरूढलग्न, छत्रराशि, वीथीराशि, चक्रपूजा, राशिचक्र, ताम्बूललग्न, अष्टमंगल विधि आदि ऐसे विषय हैं, जिनका उल्लेख उत्तर भारत में लिखे गये ग्रन्थों में बहुत ही कम मिलता है। इसी प्रकार अप्रकाशक ग्रह, उपग्रह तथा बहुत-से फलित प्रकाशक बिन्दुओं का प्रश्नफल में उपयोग इस ग्रन्थ की अनोखी विशेषता है।

प्रस्तुत संस्करण के विषय में—यह ग्रन्थ केरल की 'भारत विलास प्रेस' से मुद्रित मलयालम संस्करण के देवनागरी रूपान्तरित तथा मद्रास (चेन्नई) की ओरियेण्टल लाइब्रेरी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में मूल कन्नड़ लिपि से देवनागरी रूपान्तरित संस्करणों से तैयार किया गया है । इसमें तुलनात्मक रूप से शुद्ध एवं समीचीन पाठ को ही ग्रहण किया गया है तथा कोई श्लोक छोड़ा भी नहीं गया है; अत: उक्त दोनों संस्करणों की अपेक्षा इस संस्करण में श्लोकसंख्या अधिक हो गयी है । साथ ही श्लोकांकों में भी इसी कारण परिवर्तन भी हो गया है ।

ग्रन्थ की हिन्दी टीका को 'पाथेय' नाम दिया गया है, जो कि निश्चित रूप से हिन्दी-भाषी क्षेत्र के पाठकों के लिए प्रश्नरूपी मार्ग में 'पाथेय' का काम देगी । पाठक इसे 'पाथेयो' भी कह सकते हैं । टीका को सरल भाष्य का रूप दिया गया है, जिससे कि पाठक को विषय को भली-भाँति समझने में कोई कठिनाई न हो । यथास्थान आवश्यकतानुसार स्पष्टीकरण हेतु चक्र तथा सारणियाँ भी दी गयी हैं । टीका की भाषा को सरल एवं बोधगम्य रखने का प्रयास किया गया है । आशा है यह टीका अन्य टीकाओं की अपेक्षा अधिक उपादेय होगी ।

गच्छतः स्खलनं क्वापि यद्वा मद्दृष्टिदोषतः ।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ।।

मार्गशीर्ष शुक्ल अष्टमी
संवत् २०६० विक्रमी

विदुषामनुचरः
आचार्य गुरुप्रसाद गौड़

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषयानुक्रमणिका

॥ पूर्वार्द्धः ॥

प्रथमोऽध्यायः

मङ्गलाचरणम्	१
टीकाकारकृतं मङ्गलाचरणम्	१
ज्योतिःशास्त्रस्वरूपम्	२
स्कन्धषडङ्गयोः समन्वयमाह	२
संहिताविषयाः	२
गणितफलितविभागौ	२
वेदाङ्गानां कथनम्	३
वेदपुरुषनिरूपणम्	३
वेदाङ्गेषु ज्योतिःशास्त्रस्य प्राधान्यम्	३
ज्योतिषाध्ययने अधिकारमाह	३
ज्योतिषमहिमा	४
अथ दैवज्ञलक्षणमुच्यते	४
ग्रहगणितस्य दश भेदाः	५
पञ्च सिद्धान्ताः	५
ज्योतिषशास्त्राध्ययनविधिः	६
ज्योतिषाध्ययनमुहूर्तः	६
ग्रहपूजादिकथनम्	६
वराहोक्तबृहज्जातकमहिमाकथनम्	७
कृष्णाचार्यस्य प्रशंसा	७
दशाध्यायीप्रशंसा	७
पुनर्जन्मसिद्धान्तकथनम्	८
द्विविधकर्मभेदौ	८
ज्योतिषशास्त्रेण कर्मफलसूचनम्	९
मुहूर्तमहत्त्वम्	९
जातकशास्त्रेण कर्मज्ञानम्	९
जातकशास्त्रमहत्त्वम्	९
प्रश्नशास्त्रमहत्त्वम्	१०
जातके प्रश्ने च साम्यमाह	१०

द्वितीयोऽध्यायः

तत्रादौ दैवज्ञस्य दैनिककृत्यमुच्यते	१३
पृच्छकस्य चेष्टावलोकनम्	१३
ततो पृच्छककर्तव्यमाह	१३
दैवज्ञस्य कर्त्तव्यमाह	१४
अथारूढविधिरुच्यते	१५
प्रकारान्तरेण आरूढज्ञानम्	१६
प्रश्नकाले विचारणीयविषयाः	१६
अथ फलनिर्देशनक्रमः	१८
प्रश्नार्थे वर्जितकालः	१८
प्रश्नार्थे विहितकालः	२१
प्रश्नार्थे विहितदेशः	२१
प्रश्नार्थे अप्रशस्तदेशः	२१
स्वरोदयविचारः	२२
वारानुसारेण स्वराणां शुभत्वम्	२३
वारानुसारेण स्वराणां शरीरे परिणामः	२३
वारानुसारप्रतिकूलस्वराणां फलम्	२४
वारानुसार-अष्टदिनात्मकस्वर-निरन्तरताफलम्	२४
श्वासस्य प्रमाणेन तत्त्वज्ञानम्	२५
पक्षानुसारेण नाडीतत्त्वानां फलम्	२६
स्वरोदयेन नष्टवस्तुज्ञानम्	२८
स्वरेण पृच्छकस्य दीर्घायुष्यादिज्ञानम्	२८
नाडीभेदकथनम्	२९
नाडीषु प्रशस्तकृत्यानि	२९
स्वरोदयेन रोगज्ञानम्	२९
स्वरशकुनाभ्यां रोगविचारः	३०
पक्षभेदे रोगिप्रश्नः	३१
अनुभूतिसाम्यम्	३१
पुनश्च दूतस्थितिफलम्	३१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नष्टवस्तुदिग्ज्ञानम् ३१
वारपक्षभेदन शुभाशुभत्वम् ३२
देहस्वराज्जयपराजयज्ञानम् ३२
सूर्यनाडीप्रशंसाकथनम् ३३
वामनाड्या प्राशस्त्यम् ३३
स्वरोपरि गर्भप्रश्नविचार: ३३
कार्यसिद्धियोग: ३३
शत्रुरागमनप्रश्न: ३४
अङ्कयुद्धप्रश्न: ३४
अङ्कयुद्धे विजयार्थे स्वरोपयोगमाह ३४
स्वराङ्गुलैः सन्ततिविचार: ३५
पृच्छकचेष्टा(स्पर्श)फलम् ३५
ध्वजाद्यानाम् आयानां फलम् ३६
शरीरे आयानां स्थिति: ३६
अष्टायोपरि प्रश्नफलनिरूपणम् ३७
शास्त्रान्तरकथनम् ४०
आरूढराशिवशाच्च प्रष्टानुभवेन फलकथनम् ४०
सारसङ्ग्रहमतम् ४०
विगतरविवारस्य घटनाकथनम् ४१
विगतभौमवारस्य घटनावर्णनम् ४१
विगतबुधवारस्य घटनावर्णनम् ४२
विगते गुरुवारे घटनाक्रम: ४२
विगतशुक्रवारस्य घटनाक्रम: ४२
गतशनिवारस्य घटनाक्रम: ४३
आरूढराशित: तृतीयस्थपापग्रहफलम् ४३
अनिष्टभावेषु पापग्रहफलम् ४३
अनिष्टभावेषु शुभखेटानां फलम् ४४
शकुनविचार: ४४
पृच्छकाश्रितदिशाफलम् ४५
पृच्छकस्य दक्षिणदिशि स्थितिफलम् ४५
रोगायु:प्रश्ने विशेष: ४५
उक्तञ्च प्रश्नसंग्रहे ४५
अनुष्ठानपद्धतिमतम् ४६
प्रष्टु: शब्देन फलादेश: ४७
प्रश्नाद्यक्षराल्लग्नज्ञानम् ४८
उक्तञ्च प्रश्नज्ञाने ४८
दूतचेष्टाफलम् ५०
उत्थितस्य फलम् ५०
दृष्टिपये प्रष्टु: मुहुर्मुहु: स्तम्भनफलम् ५०
अन्तरागमनफलम् ५०
दूतस्य प्रश्नविस्मरणादिफलम् ५०
अङ्गप्रहारादिफलम् ५१
दूतस्य रुदनादिफलम् ५१
दूतस्य पाशोद्वर्तनादिफलम् ५१
दूतस्य शस्त्रादिधारणफलम् ५२
दूतस्य मनोभावफलम् ५२
शुभदूतलक्षणम् ५२
दूतस्य नेत्रचेष्टाफलम् ५२
दूतस्य वेश-भूषाफलम् ५२
दूतस्य द्रव्यस्पर्शफलम् ५३
फले तारतम्यकथनम् ५३
अथ तत्कालजानि शुभाशुभनिमित्तानि उच्यन्ते ५३
एतदेव स्पष्टीक्रियते ५३
विवाहप्रश्ने शकुनादिकम् ५४
सन्ततिप्रश्ने शकुनादिकम् ५४
गर्भप्रश्ने शकुनादिकम् ५४
युद्धप्रश्ने जयप्रदा: शकुना: ५५
युद्धे पराजयकरा: शकुना: ५५
प्रस्थानप्रश्ने शकुना: ५५
रोगप्रश्ने शकुना: ५५
आयु:प्रश्ने शकुना: ५६
यात्राविघ्नकरा: शकुना: ५६
सन्धिप्रश्ने शकुना: ५६
कार्यहानिकरा: शकुना: ५६
नामकीर्तने शुभाशुभशकुना: ५७
शुभशकुना: ५८
अन्यशुभशकुना: ५८
पुनश्च शुभशकुनानां कथनम् ५८
उपसंहार: ५९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तृतीयोऽध्यायः

अथ निर्गमनसमये निरूपणीयान्युच्यन्ते ६०
अथ मार्गे चिन्तनीयान्युच्यन्ते शास्त्रान्तरे ६१
शकुनानां त्रिकालेषु फलम् ६२
आसूर्योदयात् सूर्यस्य दिग्विभागमाह ६२
सूर्यदिग्फलम् ६३
राज्ञादीनां दिक्कथनम् ६४
स्पष्टीकरणम् ६४
सवर्णदूतेन कार्यसिद्धिमाह ६५
गमनपथे अपशकुनाः ६५
पथश्छेदो दोषकृतमाह ६६
मार्गे शुभशकुनाः ६६
शान्तादिशि स्वप्नफलम् ६७
सूर्यस्य यामार्धोदयतः पूर्वदिशाफलम् ६७
मार्गे अशुभशकुनदर्शने प्रष्टुः कर्तव्यमाह ६८
अथ पृच्छकगृहप्रवेशसमये निरूपणीयान्युच्यन्ते ६८
रुग्णालये प्रवेशसमये शकुनाः ६८
वेदादिनिर्घोषश्रवणफलम् ६९
शय्यासनवाहनादीनां दर्शनफलम् ६९
आतुरस्य जीवनविषयकफलमाह ६९

चतुर्थोऽध्यायः

अथ प्रश्नानुष्ठानकथनम् ७१
प्रश्नफलकथनविधिः ७१
प्रश्नार्थे समुचितकालमाह ७१
रोगिप्रश्ने प्रश्नप्राक्भस्मानयनम-निष्टकरम् ७२
दीपकशकुनाः ७२
दीपस्य अनिष्टसूचकलक्षणानि ७२
दीपस्य शुभलक्षणानि ७२
दीपस्य देवत्वमाह ७३
दीपशिखादिक्फलम् ७३
जन्मतो आरूढतो वा अष्टमगुलिकफलम् ७४
राशिचक्रलेखनविधिः ७४
सम्प्रदायभेदः ७५
अनुलोमप्रतिलोमरेखाङ्कनफलम् ७६
रेखारम्भदिक्फलम् ७६
राशिचक्रस्य नत्युन्नतिफलम् ७६
राशिचक्रे तृणादिफलम् ७६
चक्रलेखनानन्तरं प्रष्टुः चेष्टाफलम् ७७
अङ्गस्पर्शफलम् ७७
पृच्छकावासक्षेत्रस्य स्वरूपकथनम् ७८
चक्रपूजनम् ७९
तत्रैव ध्यानम् ७९
राशिचक्रपूजने मन्त्रनिर्देशः ७९
वाग्देव्यादिपूजनम् ७९
सुवर्णपूजनम् ८०
अष्टमङ्गलविधिः ८०
शिवस्य आवाहनम् ८१
पूर्वादिदिशासु सूर्यादीनां पूजनम् ८१
प्रार्थना ८१
कन्यया कुमारेण वा राशिचक्रस्य पूजनम् ८१
पृच्छकस्य दैवज्ञस्य च कर्त्तव्यता ८२
आरूढज्ञानविधिः ८२
अङ्कलेखनम् ८४
उपसंहारः ८४

पञ्चमोऽध्यायः

अथ लग्नानयनादिकमुच्यते ८५
तत्र प्रथमं दिनगतनाडिकानीतिरुच्यते ८५
लग्नानयनम् ८६
कुन्दघातः ८६
चन्द्रसाधनम् ८६
उक्तञ्च सरस्वतीकण्ठाभरणे ८७
मान्दिस्पष्टविधिः ८७
त्रिस्फुट आनयनम् ८९
चतुःस्फुटं पञ्चस्फुटञ्चाह ८९
प्राणदेहमृत्युसाधनञ्चाह ८९
अथ मतान्तरेण कालमृत्युसाधनञ्चाह ९१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नोपयोगी होराऽर्कहोरेन्दुस्पष्टञ्चाह ९२
होराराहुचक्रमाह ९४
मृत्युचक्रम् ९५
ग्रहस्पष्टसाधनम् ९५
ग्रहाणां दृक्तुल्यताकथनम् ९५
आरूढस्य स्पष्टतामाह ९६

षष्ठोऽध्यायः

सूत्रपञ्चकज्ञानम् ९७
पञ्चमहाभूतसंज्ञकसूत्राणि ९७
जीवमृत्युरोगसूत्राणि ९७
अंशकसूत्रकथनम् ९९
सूत्राणां फलम् ९९
मतान्तरेण जीवरोग-मृत्युज्ञानम् ९९
पुनश्च जीवादिसूत्रकथनम् ९९
जीवादिसूत्राणां फलम् १००
ग्रन्थान्तरात्फलम् १००
भूतप्राबल्येन रोगज्ञानम् १०१
पुनश्च स्पष्टरूपेण पाञ्चभौतिक-रोगकथनम् १०१
कालसूत्राणि १०१
राशिचक्रोपरि कालकथनम् १०२
कण्ठाभरणोक्तसूत्रत्रयकथनम् १०२
सूत्रत्रयवर्णनम् १०३
त्रिस्फुटैर्मृत्युनिर्णयः १०३
अथ ग्रन्थान्तरम् १०४
समयावधिकथनम् १०४
त्रिस्फुटस्य नवमांशद्वादशांशानयनञ्च १०५
त्रिस्फुटेन अकालमृत्युज्ञानम् १०५
रोगापत्तिकृत् त्रिस्फुटमाह १०५
त्रिस्फुटनक्षत्रफलम् १०७
त्रिस्फुटे गोचरफलम् १०७
त्रिस्फुटे ग्रहयुतिफलम् १०८
नवांशचक्रे त्रिस्फुटेन ग्रहयुतिफलम् १०८
त्रिस्फुटनक्षत्रदशासाधनम् १०८
रहस्यकथनम् १०९
त्रिस्फुटेन मृत्युनक्षत्रज्ञानम् १०९
प्रकारान्तरेण मृत्युज्ञानम् ११०
पञ्चस्फुटैः मृत्युज्ञानम् ११०
मतान्तरेण प्राण-देहमृत्युफलम् ११०
लग्न-चन्द्र-गुलिकनवांशफलम् १११
पुनश्च मतान्तरमाह १११
त्रिस्फुटराशौ राहुगुलिकयुतिफलम् १११
रोगिप्रश्ने विशेषः ११२
संहारराशिः त्रिताराकथनञ्च ११२
आयुर्वृद्धियोगः ११२
त्रिस्फुटेन बन्धुजनानां शुभाशुभज्ञानम् ११३
गुणदोषकथनम् ११३
द्रेष्काणादिफलम् ११३
त्रिस्फुट-चन्द्रनक्षत्रादीनां फलम् ११३
ग्रहाणां रोगाः (पुनरुक्तिः) ११४
रुग्णस्य मृत्युकथनम् ११४
पुनः दशाकथनम् ११५
अशुभफलकथनम् ११५
अत्र प्रश्नदशानयने पक्षान्तरं लिख्यते ११५

सप्तमोऽध्यायः

अथाष्टमङ्गलफलान्युच्यन्ते ११७
देहे अष्टमङ्गलभागानां कल्पना ११७
अष्टमङ्गलफलके ग्रहादीनां कल्पना ११७
ग्रहाणां फलम् ११८
आयानां फलम् ११९
सर्पादि जीवानां फलम् १२०
मध्यभागे आयानां फलम् १२१
वराटिकाफलके दक्षिणे मध्यभागे च ग्रहाणां फलम् १२१
पञ्चभूतानां फलम् १२२
तिथ्यादि साधनम् १२२
तिथ्यादीनां फलम् १२३
अष्टमङ्गले अवशिष्टसंख्याफलम् १२४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्याणशनिः १२४
उपसंहारः १२५

अष्टमोऽध्यायः

अथारूढादिफलमुच्यते १२६
स्पृष्टाङ्गराशिकथनम् १२६
शुभफलम् १२७
अशुभफलम् १२७
पुनश्च अशुभफलम् १२७
ग्रहाणां सप्तावस्थाः १२७
मतान्तरेण ग्रहावस्थाकथनम् १२८
अवस्थानिर्णयं तत्फलञ्च १२८
आरूढस्य उच्चनीचादि कथनम् १२९
आरूढराशितः रोगज्ञानम् १२९
आरूढात् मृत्युज्ञानम् १३१
आरूढे गण्डान्तफलम् १३२
पङ्गु-कूपपतनयोगौ १३२
वृक्षादिकथनम् १३२
ग्रहाणां वृक्षाः १३३
आरूढे ऊर्ध्वमुखादिराशीनां फलम् १३३
लग्ने आरूढे च शुभग्रहफलम् १३४
सुवर्णफलम् १३४
पुनश्च ऊर्ध्वादिफलकथनम् १३५
अथ लग्नादिफलमुच्यते १३६
षड्वर्गफलम् १३६
उष्णघट्यादिफलम् १३६
लग्ननवांशफलम् १३७
नवांशे चन्द्रादिफलम् १३७
मृत्युप्राणदेहफलकथनम् १३७
पुनश्च प्राण-मृत्यु-देहफलम् १३८
प्रश्नलग्नेन्दुगुलिकनवांशानां फलम् १३९
सूर्येन्दुराहुचक्रफलम् १३९
कालहोरानुसारेण प्रश्नफलकथनम् १४०
चन्द्रनवांशफलम् १४१
चन्द्रफलपरिपाककालकथनम् १४२
चन्द्रक्रियाफलकथनम् १४२

नवमोऽध्यायः

विषयप्रवेशः १४५
आयुर्विचारणा १४५
आयुर्दायप्रयोजनम् १४५
स्वस्थातुरस्य निर्णयकथनम् १४५
स्वस्थातुरविचारसूत्राणि १४६
प्रश्नलग्नेशतः आयुर्विचारणम् १४६
लग्नेशाष्टमेशयोः संयुक्तफलम् १४७
दीर्घायुयोगाः १४७
मृत्युकरा योगाः १४८
आयुष्यप्राधान्यम् १४८
द्वे प्रयोजने १४८
आयुर्निर्णयस्य पञ्च साधनानि १४९
लग्नाष्टमयोर्गुणदोषाश्च १४९
लग्नेशस्य गुणदोषौ १४९
अष्टमेशस्य गुणदोषौ १५०
चन्द्रस्य गुणदोषौ १५०
वराहमतम् १५०
उक्तञ्च सारसङ्ग्रहे १५०
रोगीमृत्युयोगाः १५१
आरूढलग्नस्य महत्त्वम् १५१
आयव्ययभावाभ्यां फलकथनम् १५१
प्रश्नस्य द्वौ भेदौ १५२
वीथीसह छत्रलग्नमपि कथ्यते १५२
आरूढस्य प्रधानताकथनम् १५४
पञ्चोपकरणानां फलम् १५४
दीर्घायुर्योगाः १५४
मिश्रितयोगौ १५५
दोषप्रदाने गुलिको बलीयान् १५५
बृहज्जातकस्य अध्ययनम् १५५
अथ जातकवशादायुर्निरूप्यते १५६
पूर्वकर्मफलकथनम् १५७
योगनिर्वचनम् १५७
षड्विधा योगाः १५७
स्थानादिकथनम् १५७
योगायुश्च दशायुश्च १५९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगायुर्भेदाः १५९
योगायुर्वर्षाणि १५९
त्रिविधायुर्योगद्वयम् १६०
आयुर्दैर्घ्यकरा गुणाः १६०
आयुःक्षयकरा दोषाः १६१
गुणदोषानां प्रभावकथनम् १६२
उपसंहारः १६२

दशमोऽध्यायः

अथ मरणकालश्चिन्त्यते १६४
दशायोगयोस्तारतम्यकथनम् १६४
दशापहारादिकथनम् १६४
अथ दोषदा दशापहारा उच्यन्ते १६४
पापानां दशावसतिरशुभा १६५
अष्टमेशस्य दुष्टता १६६
नीचस्थमूढानां दशाऽशुभत्वम् १६६
अथ कालचक्रदशा १६६
सव्यापसव्यनक्षत्रकथनम् १६७
सव्यचक्रवाक्यानि १७१
अपसव्यवाक्यानि १७१
देहजीवयोगफलम् १७२
निर्याण शनि १७२
गुलिकेन मरणकालज्ञानम् १७२
मन्दस्य गोचरे मरणम् १७२
जीवस्य मृत्युकारकगोचरकथनम् १७३
पुनश्च गुरुगोचरकथनम् १७३
सूर्यगोचरे मरणकथनम् १७३
अनुष्ठानपद्धतेर्मतम् १७३
चन्द्रगोचरे मरणम् १७४
प्रमाणगुलिकेन मृत्युविचारः १७४
प्रमाणगुलिकानयनम् १७४
प्रमाणगुलिकेन अरिष्टकथनम् १७५
अथ प्रकारान्तरेण मन्दादीनां स्थितिरुच्यते १७५
अथ सर्वग्रहाणां मरणकालस्थिति-रुच्यते १७६
अष्टकवर्गेण मृत्युकालज्ञानम् १७६
अथ मरणलग्नमुच्यते १७७
प्रश्नेन मृत्युकालविचारः १७७
दूतवाक्यान्मृत्युकालनिर्णयम् १७८
अन्तिमवर्णाल्लग्नज्ञानम् १७८
रोगवृद्धियोगः १७९
यमकण्टकेन मृत्युकथनम् १७९
गुलिकनक्षत्रे त्रिकोणे वा गोचरफलम् १८०
त्रिस्फुटनक्षत्रेण मृत्यु-अवधिज्ञानम् १८०
प्रकारान्तरेण मृत्युवर्षादिज्ञानम् १८०
अनुष्ठानपद्धतेर्मतम् १८१
पुनश्च १८२
पुनरपि १८२
पुनश्चापि १८२
पुनरपि कैश्चन मरणकालग्रहस्थितय उच्यन्ते १८२
अध्यायोपसंहारः १८३

एकादशोऽध्यायः

अथ मरणनिमित्तान्युच्यन्ते १८४
अष्टमद्रष्टाग्रहैर्मृत्युकथनम् १८४
ग्रहाणां त्रिदोषकथनम् १८५
कालाङ्गेषु रोगविचारः १८५
खरद्रेष्काणे मृत्युः १८५
धातुविकारतो मृत्युकथनम् १८५
मन्दोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम् १८५
मृत्युः सुखपूर्वकं भवति न वेति? प्रश्नः १८६
मन्दाधिष्ठितद्रेष्काणतो मृत्युज्ञानम् १८७
मन्दनवांशे मृत्युः १८७
मन्देन सह ग्रहाणां युतिफलम् १८८
पश्चादिभिर्मृत्युकथनम् १८८
दुर्वलमन्देन सह गृहयुत्यादिभिर्मृत्यु-कथनम् १८८
प्रश्नलग्नान्मृत्युदायकयोगानां कथनम् १८९
मरणप्रदरोगानां प्रतिनिधिग्रहाः १८९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्यादिनवग्रहाणां रोगा: १८९
जातकोक्तरोगाणामपि विचारकथनम् १९०
रोगवृद्धिकालिकचन्द्रेण मृत्यु: १९०
शकुनादिविचार: १९०
कण्ठाभरणमतम्, मृत्युपतिफलम् १९१
विशेषसंज्ञानां कथनम् १९२
मरणस्थलकथनम् १९२
लग्नांशलग्नेशतो मरणस्थलकथनम् १९३
पुनश्च तत्फलकथनम् १९३
पुनश्च मरणस्य शुभाशुभत्वम् १९३
अध्यायोपसंहार: १९४

द्वादशोऽध्याय:

अथ रोगविशेषा उच्यन्ते १९५
ग्रहस्थितिवशाद् रोगज्ञानम् १९५
ग्रहाणां शुभाशुभस्थिति: १९५
सुस्थ-दु:स्थसंज्ञा १९६
पुनश्च दु:स्थ-सुस्थसंज्ञाकथनम् १९६
शरीरे रोगाधिष्ठानज्ञानम् १९६
शरीरे सूर्यादिग्रहाणामङ्गकथनम् १९७
द्वादशभावानां शरीराङ्गकथनम् १९८
स्पृष्टाङ्गराशित: रोगविचार: १९८
सारसंग्रहमतेन त्रिदोषविभाग: १९८
ग्रहाणां वातादिदोषा: १९९
रोगाणाम् ऋतुसम्बन्धकथनम् १९९
ग्रहाणां दु:स्थानस्थितिवशाद्रोगकथनम् १९९
ग्रन्थान्तरमतम् २००
रोगाणां भेदा: २००
शारीरिकरोगा: २०१
शारीरिकरोगा: २०१
मानसिकरोगा: २०१
दृष्टनिमित्तजरोगा: २०२
अदृष्टनिमित्तजरोगा: २०२
प्रश्नेन रोगनिर्णय: २०२
अत्राष्टाङ्गहृदयम् २०३
ग्रहदोषानुसारेण रोगोत्पत्ति: २०३
पापालोकिताद्यानां ग्रहाणां रोगकारकत्वम् २०४
उन्मादकरयोगानुच्यते २०४
वातोन्मादलक्षणम् २०५
पित्तोन्मादलक्षणम् २०५
कफोन्मादलक्षणम् २०५
सन्निपातजोन्माद: २०६
आगन्तुकोन्माद: २०६
उन्मादस्य चिकित्सा २०७
उन्मादप्रतिपादने सम्प्रदायभेदकथनम् २०७
उन्मादस्य दश हेतव: २०७
ग्रहयोगवशात् उन्मादहेतूनां कथनम् २०८
अथापस्मारलक्षणमुच्यते २११
अपस्मारलक्षणम् २११
अपस्मारस्य दूतय: २११
अपस्मारे अनुष्ठानम् २१३
अपस्मारचिकित्सा २१४
नस्यप्रयोग: २१४
अपस्मारनाशकघृतम् २१४
पुनश्चापस्मारनाशकघृतम् २१४
अपस्मारे विशेषघृतम् २१५
भक्तविरोधरोगप्रदयोग: २१५
प्रमेहरोगयोग: २१५
रोगविचारनिर्देशनम् २१६
प्रश्नानुष्ठानपद्धतिनिर्देशकथनम् २१६
सूर्यरोगा: २१६
चन्द्रजन्यरोगा: २१६
भौमजन्यरोगा: २१७
बुधकृतरोगा: २१८
जैवरोगा: २१९
शुक्रजन्यरोगा: २२०
शनिजन्यरोगा: २२०
राहुजन्या पीडा २२१
केतुजन्यं गुलिकजन्यं च पीडाकथनम् २२१
रोगकारको विशेषयोग: २२१

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहाश्रितराशितो रोगकथनम् २२२
त्रिरेकादशं विहाय पापस्थितिफलम् २२२
अङ्गानां प्रतिनिधिभावकथनम् २२२
प्रश्नशास्त्रीय अङ्गविभाग: २२३
लग्नत: नवांशतोऽपि विचारणा २२४
अर्कस्य निर्बलतायां किं कर्तव्यम्? २२५
कृष्णीयशास्त्रमतम् २२५
कृष्णीयाङ्गविभागकथनम् २२५
प्रश्ने जातकोक्त अङ्गविचारस्य निषेध: २२६
अध्यायोपसंहार: २२६

त्रयोदशोऽध्याय:

अथ रोगारम्भावसानकाल: निरूप्यते २२८
रोगारम्भदिशाज्ञानम् २२९
रोगारम्भप्रहरकथनम् २२९
रोगारम्भकाले समुपस्थितजनानां संख्याकथनम् २३०
रोगस्य कालावधिकथनम् २३०
रोगारम्भे दिवारात्रिकथनम् २३०
उक्तञ्च कण्ठाभरणे २३०
षष्ठेशाश्रितराशिचन्द्रतो रोगज्ञानम् २३१
लग्नेशस्य चन्द्रस्य वा पापसम्बन्धाद्रोगारम्भं शमनञ्चाह २३२
लग्ननवांशद्वादशांशवशाच्च रोगोपशमकथनम् २३२
अत्रानुष्ठानपद्धति: २३२
रोगारम्भनक्षत्रात् रोगशान्तिकथनम् २३३
मृत्युप्रदनक्षत्राणि तिथयश्च २३४
शूलचक्रम् २३५
मृत्युयोग: २३६
बालातुरस्य विचार: २३६
रोगावधिकथनम् २३६
चिरकालीनरोगकथनम् २३७
अथ प्रायश्चित्तम् २३७
प्रश्नकुण्डल्यां रोगनाशका ग्रहयोगा: २३७
आप्तवचनात् कर्मजव्याधिकथनम् २३८
देवादीनां प्रकोपकथनम् २३८
ग्रहाणां प्रबलताकथनम् २३८
पापभेदकथनम् २३९
राजयक्ष्मादिरोगाणां कर्मजहेतुकथनम् २३९
कर्मविपाक: २३९
रोगमुक्त्यर्थमुपायकथनम् २३९
मृत्युञ्जयहवनम् २३९
अध्यायोपसंहार: २४०

चतुर्दशोऽध्याय:

अथ भावा निरूप्यन्ते २४१
वयोज्ञानविधि: २४१
लग्नतो विचारणीया विषया: २४१
द्वितीयभावाद् विचारणीया विषया: २४२
तृतीयतो विचारणीया विषया: २४२
चतुर्थभावतो विचारणीया विषया: २४२
पञ्चमभावात् किं विचारणीयम् २४२
षष्ठभावात् किं विचारणीयम् २४२
सप्तमभावात् किं विचारणीयम् ? २४३
अष्टमभावात् किं विचारणीयम् २४३
नवमवेश्मात् किं चिन्तनीयम् २४३
दशमभावात् चिन्तनीयानि २४३
एकादशभावात् विचारणीया विषया: २४३
द्वादशभावात् विचारणीया विषया: २४४
केन्द्रभावानां विशेषविचार: २४४
द्वादशभावात् भुक्तिप्रश्नराज्ञप्रश्नस्य विचारकथनञ्च २४४
भोजनप्रश्ने विशेष: २४५
राज्ञ: प्रश्ने विशेष: २४५
बाह्याभ्यन्तरभावानां कथनम् २४६
उभयविधविचारणाकथनम् २४७
आङ्गानां प्रतिनिधिभावा: २४७
अङ्गानां ह्रस्वदैर्घ्यकथनम् २४८
भावानां ह्रासवृद्धिकथनञ्च २४८
षट्पञ्चाशिकामतम् २४८
आर्यासप्ततिमतम् २४८
भावफलस्य नाशकथनम् २४९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनश्च भावफलह्रासकथनम्	२४९	अष्टमभावाद् दशमपर्यन्तगुलिकफलम्	२६२
पुनरपि भावनिर्बलताकथनम्	२४९	एकादशे द्वादशे च गुलिकफलम्	२६२
ग्रहाणां कारकत्वम्	२५०	ग्रहफले सत्याचार्यमतम्	२६३
कारकत्वप्रयोजनम्	२५०	धूमाद्यप्रकाशग्रहाणां फलम्	२६४
फलप्राबल्यकथनम्	२५१	द्वादशभावेषु धूमफलम्	२६५
शुभाशुभफलस्य पूर्णतामाह	२५१	द्वादशभावेषु व्यतिपातफलम्	२६५
फलविरोधे तारतम्यकथनम्	२५१	लग्नादिद्वादशभावेषु परिवेषफलम्	२६६
भावफलस्यानुभूतिः	२५२	द्वादशेषु भावेषु इन्द्रचापफलम्	२६६
अनिष्टस्थखेटानां भावे न फलानुभूतिः	२५२	उपकेतुफलम्	२६७
मिश्रितानुभूतिः	२५३	भावानां फलपाकसमयकथनम्	२७०
पुनश्च भावानुभूतिकथनम्	२५३	जयपराजयप्रश्ने अवधिज्ञानम्	२७३
ग्रन्थान्तरमतम्	२५३	रोगादिसमयज्ञानम्	२७४
ग्रहाणाम् इष्टानिष्टभावाः	२५३	मतान्तरेण शुभाशुभसमयज्ञानम्	२७४
ग्रहस्थितिवशाद् द्रव्याणां लाभहानिकथनम्	२५४	अचिरेण चिरेण वा फलाप्तिकथनम्	२७४
		प्रकारान्तरेण समयज्ञानम्	२७५
लघुजातकमतम्	२५४	पुनः मतान्तरेण फलसमयज्ञानम्	२७५
प्रश्ने दशाफलोपयोगः	२५४	नक्षत्रादौ खेचराणां फलम्	२७५
प्रश्ने जातकोपयोगकथनम्	२५४	विस्तरेण फलकथनम्	२७६
भावविपत्ति चाङ्गरोगानां कथनम्	२५४	सूर्यस्य अनिष्टेष्टफलम्	२७६
ऊहापोहकथनम्	२५५	चन्द्रस्य अनिष्टेष्टस्थानयोः फलम्	२७७
लग्नस्थितग्रहाणां शुभाशुभफलम्	२५५	अनिष्टेष्टस्थभौमफलम्	२७७
द्वितीयभावे अशुभशुभग्रहाणां फलम्	२५५	अनिष्टानिष्टस्थबुधफलम्	२७८
तृतीयस्थग्रहाणां फलम्	२५६	अनिष्टानिष्टस्थिते गुरुफलम्	२७८
चतुर्थस्थग्रहाणाम्फलम्	२५६	अनिष्टेष्टगते शुक्रफलम्	२७९
पञ्चमभावस्थग्रहाणां फलम्	२५७	अनिष्टेष्टगते शनिफलम्	२७९
षष्ठस्थग्रहाणां फलम्	२५७	राहोः केतोश्च फलम्	२८०
सप्तमभावगतग्रहफलम्	२५८	भविष्यकथनविधिः	२८०
अष्टमस्थाने ग्रहफलम्	२५८	कुण्डल्यां दोषाणां प्रभावकथनम्	२८१
नवमस्थितग्रहाणां फलम्	२५९	कुण्डल्यां गुणानां प्रभावकथनम्	२८१
दशमभावगतग्रहफलम्	२६०	कर्मफलभेदाः	२८२
लाभभावगतग्रहफलम्	२६०	चत्वारि कारणानि	२८३
व्ययभावस्थग्रहफलम्	२६१	दृढादृढसूचका ग्रहयोगाः	२८३
विशेषनिर्देशः	२६१	पुनश्च त्रिविधदोषसूचका योगाः	२८४
द्वादशभावेषु गुलिकफलम्	२६१	अथ पित्रादिविषयं बन्धनादिकं किञ्चिल्लिख्यन्ते	२८५
लग्नाच्चतुर्थभावपर्यन्तं गुलिकफलम्	२६१		
पञ्चमात्सप्तमपर्यन्तगुलिकफलम्	२६२	लग्नतः प्रष्टुर्बन्धनकथनम्	२८५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वराहोक्तिकथनम् २८५
वराहोक्तबन्धनयोगा: २८६
कृष्णीयमतेन बन्धनयोगा: २८६
पुनश्च बन्धनयोगकथनम् २८७
शनिराशिवशात् बन्धनकथनम् २८७
कृष्णाचार्यमतेन शुभखेटानां फलम् २८७
शुभाशुभफलम् २८७
मृत्युकरा योगा: २८७
कलहयोगा: २८८
प्रष्टुर्वासस्थानज्ञानम् २८८
भावेशत: अन्यभावानां फलकथनम् २८८
सप्तमेशस्य उदाहरणम् २८९
अध्यायोपसंहार: २९०

पञ्चदशोऽध्याय:

अथ दैवानुकूल्यादि निरूप्यते २९१
धिषणानुकूलताकथनम् २९१
ग्रहाणां देवरूपता (सूर्यचन्द्रयो:) २९२
भौमस्य देवत्वम् २९३
बुधजीवयोर्देवत्वम् २९३
भृगुमन्दयोर्देवत्वम् २९४
ग्रहाणां बाधकस्थानादिजन्यपीडा-कथनम् २९४
देवपीडाप्रतिकारकारादिकथनम् २९४
व्ययभावस्थितिवशात्पीडाकथनम् २९४
देवबिम्बे दोषकथनं निवारणञ्च २९५
सप्तमभावाद्दोषज्ञानं निवारणञ्च २९५
अष्टमदशमभावाभ्यां दोषकथनम् २९६
ग्रन्थान्तरम् २९६
सूर्यशान्ति: २९७
सोमशान्ति: २९७
पञ्चताराग्रहाणां शान्तिकथनम् २९७
कुण्डल्यां देवकृपाज्ञानम् २९८
देवस्वहरणसूचकयोग: २९८
अनिष्टकारकधातु-मूल-जीवज्ञानम् २९८
जीवापहरणं कथं भवति ? २९९
धात्वपहरणं मूलापहरणञ्च कथं भवेत् ? २९९
खेचराणां धातुमूलजीवज्ञानम् ३००
कृष्णीयमतम् ३००
द्रव्यसंज्ञाविषये मतान्तरम् ३००
धर्मदैवबाधाकथनम् ३०१
चतुर्थभावभावेशौ धर्मदैवसूचकौ भवत: ३०१
धर्मदैवबाधानिवारणार्थं पूजादिकथनम् ३०२
कोपहेतुज्ञानमावश्यकम् ३०२
अथ सर्पबाधा निरूप्यते ३०२
सर्पबाधानिवारणार्थमुपायानां कथनम् ३०३
सर्वस्थानगतराहुजन्यसर्पदोषशान्ति-कथनम् ३०३
सर्पकोपस्य कारणानां कथनम् ३०४
विशेषसम्प्रदायकथनम् ३०४
पुनश्च सर्पकोपस्य अन्यकारणानि ३०५
पुनरपि सर्पकोपस्य कारणानां कथनम् ३०५
अथ पितृशापादिकं निरूप्यते ३०६
देवद्विजानाञ्च शापकथनम् ३०६
गुर्वादिशापकथनम् ३०७
प्रेतबाधाकथनम् ३०७
प्रेतबाधासूचकग्रहयोगा: ३०७
दुर्मृत्युजन्यप्रेतोद्भवा बाधा: ३०८
पृच्छकस्य भ्रात्रादीनां प्रेतत्वज्ञानम् ३०८
प्रेतस्य वय:कथनम् ३०९
पुनश्च प्रेतावस्थाज्ञानम् ३०९
प्रेतस्य जातिवर्णज्ञानम् ३०९
प्रेतबाधाशान्त्युपाया: ३१०
दृष्टिबाधाकथनम् ३१२
दृष्टिबाधाग्रसितपुरुषस्य लक्षणम् ३१२
दृष्टिबाधायोग्यस्त्रीलक्षणम् ३१२
ग्रहपीडाहेतव: ३१३
ग्रहाणां वासस्थानानि ३१३
शास्त्रान्तरोक्ति: ३१४
ग्रहाणां संख्या ३१४
अष्टादश महाग्रहा: ३१४
नवसंख्यका लघुग्रहा: ३१५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अन्यानां ग्रहाणामपि कथनम् ३१५
अत्र ग्रन्थान्तरम् ३१५
देवादिमहाग्रहेभ्य: पीडितानां लक्षणम् ३१६
देवावेशितलक्षणम् ३१६
असुरावेशितलक्षणम् ३१६
नागावेशितलक्षणम् ३१६
यक्षग्रस्तस्य लक्षणम् ३१७
गन्धर्वग्रसितलक्षणम् ३१७
राक्षसग्रहगृहीतलक्षणम् ३१७
हेद्रपीड़ितलक्षणम् ३१८
कश्मलग्रहपीडितलक्षणम् ३१८
निस्तेजग्रहलक्षणम् ३१९
भस्मकग्रहपीड़ितलक्षणम् ३१९
पितृग्रहपीडितलक्षणम् ३१९
कृशग्रहपीडितलक्षणम् ३२०
विनायकग्रहलक्षणम् ३२०
प्रलापग्रहपीडितानां लक्षणम् ३२०
पिशाचग्रहग्रस्तलक्षणम् ३२०
अन्त्यजग्रहपीडितानां लक्षणानि ३२१
योनिजग्रहलक्षणम् ३२१
भूतग्रहपीडितलक्षणम् ३२१
अपस्मारग्रहपीडितलक्षणम् ३२२
द्विजलक्षणं ब्रह्मराक्षसलक्षणञ्च ३२२
नृपग्रहपीडितलक्षणम् ३२३
वैश्यग्रहपीडितलक्षणम् ३२३
वृषलग्रहपीडितलक्षणम् ३२३
शेषग्रहाणां मिश्रलक्षणम् ३२३
हन्तुकामाग्रहाणां लक्षणानि ३२४
बलिकामाग्रहलक्षणम् ३२४
रन्तुकामाग्रहलक्षणम् ३२४
निदानपूर्वकचिकित्साकथनम् ३२५
ग्रहाणां खेटसम्बन्ध: ३२५
सारसङ्ग्रहात् खेचराणां ग्रहा: ३२५
बाधकस्थानगतग्रहपीडाकथनं
सन्तानदीपिकात: ३२६
बाधकस्थानानि ३२७
राशीनां बाधकस्थानानि ॥
(तृतीयमतम्) ३२८
पक्षत्रये प्राधान्यम् ३२८
पित्तोष्णेत्यादिविषये कथनम् ३२९
दृष्टिबाधायोगा: ३२९
सन्तानदीपिकामतम्
(देवदृष्टितो रुजा) ३३०
पिशाचदृष्टितो रुजाकथनम् ३३०
ग्रहपीडाप्रयोजनज्ञानम् ३३०
अन्यमतेन ग्रहपीडाप्रयोजनकथनम् ३३०
मैथुनकाले दृष्टिपीडाकथनम् ३३१
बाधास्थलम् ३३१
मेषवृषयो: स्थानानि ३३१
युग्मकर्कटयो: स्थानानि ३३१
सिंहकन्ययो: स्थानानि ३३२
तुलादित्रयाणां स्थानानि ३३२
मकरादित्रयाणां वासस्थानानि ३३२
अन्यमतेन संक्षेपेण राशीनां स्थानानि ३३२
अथ जिह्वादोषो निरूप्यते ३३३
पूतनादिबालग्रहाणां पीडाकथनम् ३३३
बालपीडाकरौ योगौ ३३३
अथ विषभोजननिरूपणम् ३४१
आरूढलग्नराशिवशात् विषाक्त-
द्रव्याणां कथनम् ३४२
विषदातृप्रयोजनम् ३४२
रोगाणां बाधाजन्यत्रिदोषजन्यभेदौ ३४३
प्रश्नकुण्डलीत उभयविधभेदज्ञान-
कथनम् ३४३
रोगकारकौ ग्रहौ ३४३
शत्रुकृदभिचारयोगानां कथनम् ३४३
क्षुद्रमहाभिचारयो: कथनम् ३४४
अभिचारकर्तुर्जातिज्ञानम् ३४४
षष्ठाष्टमयोर्जातिकथनम् ३४४
रिपोर्जातिसूचका योगा: ३४५
वराहमतेन ग्रहाणां जातय: ३४५
मतान्तरेण ग्रहाणां वर्णा: ३४६
माधवीयमतेन जातय: ३४६
कृष्णीयमतञ्च ३४७
सारसमुच्चयमतञ्च ३४७

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शत्रुताहेतूनां विचारणा ३४७
शत्रुताहेतूनां सूचका ग्रहा: ३४७
शत्रुतासूचका ग्रहयोगा: ३४८
शात्रवे मतान्तरम् ३४८
पुनश्च मतान्तरम् ३४९
शत्रुर्निकटस्थो दूरस्थो वेति ज्ञानम् ३४९
ज्ञाताज्ञातशत्रुज्ञापका योगा: ३५०
रिपो: स्थानज्ञानम् ३५०
शत्रोर्दिशाज्ञानम् ३५०
सन्तानदीपिकात: अभिचारलक्षणानां कथनम् ३५१
केतुजन्य अभिचारयोग: ३५३
क्षुद्राभिचारयोग: ३५३
अभिचारमुक्ति: ३५४
भूमिगत अभिचारद्रव्यकथनम् ३५४
जलगताभिचारद्रव्यकथनम् ३५४
वर्गोत्तमे चतुर्थस्थगुलिकप्रभाव: ३५५
शनिगुलिकाभ्यां योगा: ३५५
शनिगुलिकयो: केन्द्रसम्बन्ध: ३५५
राशित्रिकोणेषु गुलिकस्थिति-वशादभिचारद्रव्यज्ञानम् ३५५
अभिचारद्रव्यस्य दिशाज्ञानम् ३५६
मतान्तरेण बाधास्थानकथनम् ३५७
अथ वृक्षादिनाम उत्तमतादिज्ञानम् ३५७
जलस्थानज्ञानम् ३५९
बाधकेशफलम् ३५९
बाधकेशेन राहुकेतुगुलिकयुतिफलम् ३६०
क्षुद्राभिचारशान्तिकथनम् ३६२
दशमस्थानात् शान्त्युपायकथनम् ३६४
दूतोच्चारितवर्णात् उपायज्ञानम् ३६४
पृच्छकस्य दृष्टिवशात् शान्तिविधानम् ३६५
प्रष्टुरङ्गस्पर्शेन रोगशान्ति-उपायज्ञानम् ३६५
अनुष्ठानपद्धतिमतम् ३६५
बाधाधिपराशिनवांशद्वारा देवपीडाज्ञानम् ३६६
मेषादिराश्याश्रितखेटानां फलकथनम् ३६८
मेषादिराशिस्थसूर्यस्य देवता ३६८
मेषादिराशिस्थचन्द्रस्य देवता ३६९
द्वादशराशिस्थभौमस्य देवता ३७०
द्वादशराशिस्थबुधस्य देवत्वकथनम् ३७१
बाधाधिपगुरो: राशिस्थितिवशात् देवता ३७२
भृगोर्देवानां कथनम् ३७३
द्वादशराशिस्थशनेर्देवानां कथनम् ३७४
अथ व्याधे: शमननिरूपणप्रकारो लिख्यते ३७५
ग्रन्थान्तरे व्याधिशान्तियोगा: ३७७
शान्तिकर्तृज्ञानम् ३७८
मतान्तरम् ३७९
मृत्युञ्जयादि जपादिकथनम् ३८०

षोडशोऽध्याय:

सन्दर्भकथनम् ३८४
पूर्वमायु: परीक्षणं कर्तव्यम् ३८४
अत्र प्रथमलग्नवशात् किञ्चिल्लक्षणमुच्यते ३८५
आरूढेशराशिनवांशवशात् लक्षणम् ३८६
शत्रुविजयप्रदा दिशाज्ञानम् ३८६
ग्रहाद् द्रव्यलाभज्ञानम् ३८७
आरूढराशित: फलकथनम् ३८७
अथ ग्रहस्थितिवशाल्लक्षणमुच्यते ३८८
नीतिप्रश्न: ३८९
ग्रहाणां नीतिकथनम् ३८९
निधिप्रश्न: ३९०
प्रष्टुर्वस्त्रज्ञानम् ३९१
प्रस्थानलग्नफलकथनम् ३९१
ग्रहाणां व्रणादिकथनम् ३९१
विवाहप्रश्ने वरकन्ययो: शरीरे वा व्रणादिज्ञानम् ३९२
पुनश्च लक्ष्मकथनम् ३९२
धातु-मूलादिविचार: ३९३
शकुनविषयकं लक्षणम् ३९३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ दिनगतघटिकावशाल्लक्षणमुच्यते ३९४
अष्टमांशज्ञानविधि: ३९५
अनुष्ठानपद्धतिमतम् ३९८
अथ त्रिधा भूतोदयम् ३९८
आत्मश्वासोद्भवतत्त्वज्ञानकथनम् ३९८
दूतवाक्यप्रथमवर्णात् तत्त्वज्ञानम् ३९९
भूतोदयलग्नकथनम् ३९९
पञ्चभूतानामुदयफलम् ४०१
पूर्वसन्दर्भकथनम् ४०२
विपत्तिप्रदयोगा: ४०२
संहारनक्षत्रवशात् विपत्तिकथनम् ४०३
वस्तुलाभ-वस्तुहानिश्च ४०३
पुनश्च धातुलाभहानियोग: ४०४
जीवनाश-मूलनाशयोगानां कथनम् ४०४
उच्चादिगतगुरु-शुक्र-चन्द्रयुतिफलम् ४०५
दूतोक्तप्रथमवर्णफलम् ४०५
पञ्चघ्नेऽष्टविभाजिते अक्षरगणोपरिफलकथनम् ४०५
दिक्पालानां फलम् ४०७
प्रष्टु: प्रदत्तताम्बूलसंख्यया फलकथनम् ४०८
ताम्बूलसंख्यावशात् ग्रहोदयकथनम् ४०९
ताम्बूललग्ने ग्रहोदयफलम् ४१०
वाहनप्रश्न: ४१०
प्रश्नकुण्डल्यां वाहनप्राप्तियोगा: ४११
गुलिकवशाल्लक्षणकथनम् ४११
सूर्येन्द्वोर्गुलिकेन युतिफलम् ४१२
गुलिकेन भौमयुतिबुधयुतिफलं वा ४१२
गुलिकेन गुरुयुतिफलम् ४१२
गुलिकेन शनिशुक्रराहूणां युतिफलम् ४१३
पितुरन्त्येष्टिप्रश्न: ४१४
मातृसंस्कारकथनम् ४१५
पितुरनुयायीयोगा: ४१७
अन्ययोगा: ४१८
पितुर्दु:ख-ऋणग्रस्ततादियोगा: ४१८
पुनरपि पितृविषयकं किञ्चिल्लक्षणमुच्यते ४१९
गृहदोषप्रश्न: ४१९
भूमेर्लग्नज्ञानम् ४१९
भूमिलग्ने गुरुनिर्णयम् ४२१
भूमेर्जन्मनक्षत्रज्ञानम् ४२१
भूमिलग्नात् फलकथनम् ४२२
गुरुफलम् ४२३
आधिपत्यप्रश्न: ४२३
कालचक्रकथनम् ४२४
कालचक्ररचनाविधि: ४२५
कालचक्रे सूर्यभादिनर्क्षपर्यन्तगणनाकथनम् ४२६
पुनश्च कालचक्रफलम् ४२७
कालचक्रे योगिनीज्ञानम् ४२७
योगिनीनामुदयकथनम् ४२८
योगिनीगणितम् ४३०
अथ योगिन्या: स्वरूपमुच्यते ४३१
मतान्तरेण योगिनीनामुदयकथनम् ४३२
अथ मृत्युर्योगिन्यो: स्फुटानयनमुच्यते ४३३
मृत्योरन्त:प्रवेशादि फलम् ४४२
मतान्तरम् ४४२
पुनश्च मृत्योरन्त:प्रवेशफलम् ४४२
सारसंग्रहमतम् ४४३
तिथियोगिनी ४४४
अङ्केषु तिथियोगिनीसञ्चारकथनम् ४४५
नामेषु तिथियोगिनीदिक्कथनम् ४४५
योगिनीदृष्टिफलम् ४४७
स्वर्गादिप्राप्तिप्रश्न: ४४७
षोडशदोषानां कथनम् ४४८
त्रिस्थूणादिस्पष्टविधि: ४४८
राशीनां युगकथनम् ४५०
युगराशिजन्मलग्नाद् धनलाभादिकथनम् ४५१
दशान्तर्दशायां फलकथनम् ४५१

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नमार्गः

'पाथेय'-हिन्दीटीकासहितः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

।। श्रीः ।।

प्रश्नमार्गः

'पाथेय' हिन्दीटीकासहितः

(पूर्वार्द्धम्)

अथ प्रथमोऽध्यायः

मङ्गलाचरणम्

मध्याटव्यधिपं दुग्धसिन्धुकन्याधवं धिया।
ध्यायामि साध्वहं बुद्धेः शुध्यै वृध्यै च सिद्धये।। १।।

मैं (ग्रन्थकार) मध्याटवी क्षेत्र के स्वामी एवं क्षीरोदधि की पुत्री श्रीलक्ष्मीजी के पति श्रीविष्णुभगवान् का विधिपूर्वक ध्यान अपनी बुद्धि की शुद्धि, वृद्धि तथा सिद्धि के लिए करता हूँ ।।१।।

गुरुभ्यश्च ग्रहेभ्यश्च मया बद्धोऽयमञ्जलिः।
प्रसन्नमनसस्ते मे सत्याङ्कुर्वन्तु भारतीम्।। २।।

मैंने अपने गुरुओं-गुरुजनों में नवग्रहों को प्रणाम हेतु यह अञ्जलि बाँधी है वे मेरा प्रणाम ग्रहण करें और प्रसन्नतापूर्वक मुझे ऐसा सामर्थ्य प्रदान करें जिससे मेरी वाणी सत्य सिद्ध हो ।।२।।

नमः श्रीमङ्गलश्रेणीनिवासाय महात्मने।
सर्वं जानन्ति दैवज्ञा यद्दत्तश्रुतिचक्षुषः।। ३।।

मैं अपने ज्योतिषगुरु महात्माश्री मङ्गलश्रेणी (मङ्गलश्शेरि) निवास को प्रणाम करता हूँ जिनके द्वारा प्रदत्त ज्योतिषशास्त्रीय ज्ञान से उनके शिष्य सर्वज्ञ हो जाते हैं ।।४।।

चेल्लूरीश्वरमानम्य शैलजावल्लभं मया।
शिष्याय देशिकावाप्तं प्रश्नवर्त्मोपदिश्यते।। ४।।

जगदम्बा पार्वती के पति चेल्लूरीश्वर (भगवान् शंकर) को प्रणाम करके मैं अब अपने गुरु से प्राप्त ज्ञान को इस प्रश्नमार्ग ग्रन्थ के रूप में उपदेश कर रहा हूँ ।।४।।

टीकाकारकृतं मङ्गलाचरणम्

यक्षेश्वरं प्रणम्यादौ गणनाथं सरस्वतीम् ।
नवग्रहांश्च राशींश्च पितरौ च गुरूनपि ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नमार्गस्य पान्थेभ्यः कृते पाथेयरूपिणीम् ।
टीकेयं गुरुप्रसादेन ज्योतिर्विदां प्रीतये ॥

ज्योतिःशास्त्रस्वरूपम्

स्कन्धत्रयात्मकं ज्योतिश्शास्त्रमेतत् षडङ्गवत् ।
गणितं संहिता होरा चेति स्कन्धत्रयं मतम् ॥ ५॥
जातकगोलनिमित्तप्रश्नमुहूर्ताख्यगणितनामानि ।
अभिदधतीह षडङ्गान्याचार्या ज्यौतिषे महाशास्त्रे॥ ६॥

ज्योतिषशास्त्र का विभाजन आचार्यों ने दो प्रकार से किया है— (१) गणित, (२) संहिता तथा (३) होरा इन तीनों स्कन्धों के रूप में तथा दूसरे प्रकार से— (१) जातक, (२) गोल, (३) निमित्त, (४) प्रश्न, (५) मुहूर्त एवं (६) गणित इन षडङ्गों (छह अंगों) के रूप में । यह ज्योतिषशास्त्र एक महाशास्त्र है ॥५-६॥

स्कन्धषडङ्गयोः समन्वयमाह

गोलो गणितञ्चेति द्वितयं खलु गणितसंहिते स्कन्धे ।
होरासंहितयोरपि निमित्तमन्यत्रयञ्च होराख्ये॥ ७॥

इन षडङ्गों में गोल तथा गणित इन दोनों का समावेश गणितस्कन्ध में है । निमित्तशास्त्र संहितास्कन्ध के अन्तर्गत है । अन्य तीन (जातक, प्रश्न एवं मुहूर्त) होरा-स्कन्ध के अन्तर्गत परिगणित हैं ॥७॥

संहिताविषयाः

जनपुष्टिक्षयवृष्टिद्विरदतुरङ्गादिसकलवस्तूनाम् ।
केतूल्कादीनां वा लक्षणमुदितं हि संहिते स्कन्धे॥ ८॥

जनकल्याण, जनहानि, वृष्टिविज्ञान, हाथी, घोड़ा (गाय, भैंस, बकरी, कुत्ता, मुर्गा, बिल्ली आदि पालतू पशुओं के भी) आदि के शुभाशुभ लक्षण; धूमकेतु, उल्कापिण्डादि के उदय का पृथ्वी पर प्रभाव—ये सभी विषय संहितास्कन्ध के अन्तर्गत आते हैं ।

आचार्य वराहमिहिर ने बृहत् संहिता में संहितास्कन्ध के अन्तर्गत आने वाले विषयों की विस्तृत सूची दी है ।

गणितफलितविभागौ

प्रमाणफलभेदेन द्विविधं च भवेदिदम् ।
प्रमाणं गणितस्कन्धः स्कन्धावन्यौ फलात्मकौ॥ ९॥

पुनश्च प्रमाण तथा फल के भेद से ज्योतिषशास्त्र के दो भेद हैं—इनमें जो गणित-स्कन्ध (सिद्धान्त) है वह प्रमाण है । अन्य स्कन्ध (होरा तथा संहिता) फलात्मक हैं ॥९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वेदाङ्गानां कथनम्

ज्योतिः कल्पो निरुक्तञ्च शिक्षा व्याकरणं तथा ।
छन्दो विचितिरेतानि षडङ्गानि विदुः श्रुतेः ।। १०।।

श्रुति (वेद) के (१) ज्योतिषशास्त्र, (२) कल्पसूत्र, (३) शिक्षा, (४) निरुक्त, (५) व्याकरण तथा (६) छन्दःशास्त्र ये—छह अङ्ग बताये गये हैं ।।१०।।

इनमें **कल्पसूत्र** नामक अंग (वेदांग) में यज्ञ एवं धार्मिक क्रियाओं को सम्पन्न कराने का विधान वर्णित है । **निरुक्त** में वैदिक शब्दों के विशेष अर्थ का विवेचन रहता है । **शिक्षा** में वैदिक मंत्रों का उच्चारण तथा ध्वनिविज्ञान सिखाया जाता है । **व्याकरण** को शब्दशास्त्र भी कहते हैं । इसमें वेदवाणी के स्वरूप गठन को समझाया जाता है । **छन्दःशास्त्र** में वर्णिक तथा मात्रिक छन्दों का लक्षण तथा रचनाविधान समझाया जाता है । ज्योतिषशास्त्र के विषय में तो यहाँ पर्याप्त समझ दी गयी है ।

वेदपुरुषनिरूपणम्

छन्दः पादौ शब्दशास्त्रञ्च वक्त्रं
कल्पः पाणी ज्यौतिषं चक्षुषी च ।
शिक्षा घ्राणं श्रोत्रमुक्तं निरुक्तं
वेदस्याङ्गान्येवमाहुर्मुनीन्द्राः ।। ११।।

इस वेदरूपी पुरुष के छन्दःशास्त्र चरण है, व्याकरण मुख है । कल्पसूत्र हाथ है । ज्योतिष नेत्र है, शिक्षा नासिका तथा निरुक्त कान हैं । इस प्रकार विद्वान् मुनियों ने वेदपुरुष के अङ्गों का वर्णन किया है ।।११।।

वेदाङ्गेषु ज्योतिःशास्त्रस्य प्राधान्यम्

वेदस्य चक्षुः किल शास्त्रमेतत्
प्रधानताङ्गेषु ततोऽस्य युक्ता ।
अङ्गैर्यतोऽन्यैरपि पूर्णमूर्ति-
श्चक्षुर्विना कः पुरुषत्वमेति ।। १२।।

यह ज्योतिषशास्त्र वेदरूपी पुरुष का नेत्र होने से सभी अङ्गों में प्रधान है, क्योंकि किसी पुरुष के शरीर में यदि अन्य सभी अंग हों परन्तु नेत्र न हों तो सम्पूर्ण व्यक्तित्व की प्राप्ति नहीं होती (अतः यह नेत्र रूपी ज्योतिष ही प्रमुख है तथा अन्य हाथ, पैर आदि गौण अंग हैं) ।।१२।।

ज्योतिषाध्ययने अधिकारमाह

अध्येतव्यं ब्राह्मणैरेव तस्मात्
ज्योतिश्शास्त्रं पुण्यमेतद्रहस्यम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एतद्बुदध्वा सम्यगाप्नोति यस्मा-
दर्थं धर्मं मोक्षमग्र्यं यशश्च ।। १३।।

वेदाङ्ग होने से इस शास्त्र (ज्योतिष) को केवल ब्राह्मणों को परमावश्यक रूप से पढ़ना चाहिए, क्योंकि इसको जानकर व्यक्ति चारों पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) को प्राप्त कर उन्नति को प्राप्त होता है ।।१३।।

इस श्लोक के 'काम' के स्थान पर 'यश' शब्द का प्रयोग हुआ है । यह वसिष्ठ जी का वचन ग्रन्थकार द्वारा उद्धृत किया गया है ।

ज्योतिषमहिमा

म्लेच्छाहियवनास्तेषु, सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम् ।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः ।। १४।।

यवनजाति के लोग जो कि म्लेच्छ हैं, वे भी इस शास्त्र का अध्ययन कर (सम्यग् रूप से पढ़कर) ऋषियों की भाँति पूजनीय बन जाते हैं, फिर ज्योतिषशास्त्र का ज्ञाता यदि ब्राह्मण हो तो कहना ही क्या? ।।१४।।

यह श्लोक गर्गसंहिता का है जो उनके नाम से वाराही संहिता में भी मिलता है ।

अथ दैवज्ञलक्षणमुच्यते

ज्योतिषशास्त्रविदग्धो गणितपटुवृत्तवांश्च सत्यवचाः ।
विनयी वेदाध्यायी ग्रहयजनपटुश्च भवतु दैवज्ञः ।। १५।।
दैवविदेवम्भूतो यद्वदति फलं शुभाशुभं प्रष्टुः ।
तत्सर्वं न च मिथ्या भवति प्राज्ञैस्तया चोक्तम् ।। १६।।
दशभेदं ग्रहगणितं जातकमवलोक्य निरवशेषं यः ।
कथयति शुभमशुभं वा तस्य न मिथ्या भवेद्वाणी ।। १७।।
अनेकहोरातत्त्वज्ञः पञ्च सिद्धान्तकोविदः ।
ऊहापोहपटुः सिद्धमन्त्रो जानाति जातकम् ।। १८।।

दैवज्ञ को ज्योतिषशास्त्र में पारंगत होना चाहिए । वह सच्चरित्र तथा गणितशास्त्र में कुशल हो, सत्य बोलता हो । वह विनयशील, नित्य वेदों का स्वाध्याय करने वाला, ग्रहयज्ञ (शान्तिकर्म एवं अनुष्ठानादि) करने में निपुण होना चाहिए ।।१५।।

इस प्रकार की अर्हता को प्राप्त दैवज्ञ प्राश्निक के प्रश्न का जो कुछ भी शुभाशुभ उत्तर कहता है वह सब प्राचीन ऋषियों के मतानुसार कभी असत्य नहीं होता है ।।१६।।

दैवज्ञ को दश प्रकार के ग्रहगणित को सीखना बहुत आवश्यक है । उसे सम्पूर्ण जातकशास्त्र का सविस्तर अध्ययन करना चाहिए, फिर वह जो भी शुभाशुभ फल कहेगा वह सत्य होगा (कभी मिथ्या न होगा) ।।१७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनेक विद्वानों द्वारा रचित होराग्रन्थों (जातक) के अध्ययन करने वाला, सिद्धान्त ग्रन्थों में पाँच प्रकार के सिद्धान्त ग्रन्थों (ब्राह्म सिद्धान्त, वसिष्ठ सिद्धान्त, पौलिश सिद्धान्त, रोमक सिद्धान्त, सूर्य सिद्धान्त) में निष्णात हो, ऊहापोह (विचार) में निपुण हो तथा मन्त्रों को सिद्ध करने वाला दैवज्ञ ही जातकशास्त्र के वास्तविक रहस्य को समझ सकता है ॥१८॥

बृहत् संहिता में दैवज्ञ के इन लक्षणों एवं गुणों का सविस्तार वर्णन है ।

ग्रहगणितस्य दश भेदाः

द्युगणानयनं खेटमध्यमस्फुटयोरपि ।
ग्रहणद्वितयं खेटकलहस्तत्समागमः ॥ १९॥
अस्तोदयौ च खेटानां नक्षत्राणाञ्च सङ्गमः ।
इति भेदास्तु विज्ञेयाः ग्रहाणां गणिते दश ॥ २०॥

ग्रहगणित के लिए दस प्रक्रियाएँ क्रमशः करनी पड़ती हैं । सर्वप्रथम सृष्ट्यादि, युगादि या किसी वर्ष-विशेष का अहर्गण निकाला जाता है, उसी को द्युगण आनयन कहते हैं । फिर मध्यम ग्रह निकालते हैं, मध्यम ग्रहों के पश्चात् स्पष्ट ग्रह होते हैं, फिर सूर्य-चन्द्र ग्रहण का गणित, ग्रहयुद्ध, ग्रहयुति, ग्रहों का उदयास्त, ग्रहनक्षत्रयुति का गणित करते हैं ॥१९-२०॥

पञ्च सिद्धान्ताः

ब्राह्मः सौरश्च वसिष्ठो रोमशः पौलिशस्तथा ।
सिद्धान्ता इति पञ्च स्युः कथ्यन्ते खलु तद्भिदाः ॥ २१॥
स्पष्टा ब्राह्मस्तु सिद्धान्तस्तस्यासन्नस्तु रोमशः ।
सौरः स्पष्टतरोऽस्पष्टौ वसिष्ठः पौलिशश्च तौ ॥ २२॥
कदाचिद् ब्रह्मसिद्धान्तः सावित्रस्तु कदाचन ।
कदाचिद् रोमशः स्पष्टो न कदाचित्तथेतरौ ॥ २३॥

ब्राह्म, सौर, वशिष्ठ, रोमश तथा पौलिश ये (पञ्चांग निर्माण के) पाँच सिद्धान्त हैं । अब इनकी तुलनात्मक श्रेष्ठता कहते हैं ॥२१॥

इन सब में ब्राह्मसिद्धान्त सूक्ष्म (स्पष्ट accurate) है । रोमशसिद्धान्त भी ब्राह्म जैसा ही है । सूर्यसिद्धान्त अधिक सूक्ष्म (स्पष्टतर = most accurate) है । जबकि वशिष्ठ-सिद्धान्त तथा पौलिशसिद्धान्त अस्पष्ट (not accurate) हैं ॥२२॥

ब्राह्म, सौर तथा रोमश कदाचित् दृग्गणितीय होते है । शेष दो तो कभी दृक्तुल्य नहीं होते ॥२३॥

इन श्लोकों में दृक्तुल्यता (सूक्ष्मता = स्पष्टता) के भाव में प्रयोग है । यदि किसी सिद्धान्त से गणना करने पर कोई ग्रह किसी राशि के जितने राशि अंश-कला-विकला पर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आये आकाश में नापने पर वह उतने ही राश्यादि पर स्थित हो अथवा जिस गणित से ग्रहण तथा ग्रहों का उदयास्तादि यथासमय तथा यथास्थान प्राप्त हो तो उसी सिद्धान्त के गणित को स्पष्ट कहा जाता है। आचार्य वराहमिहिर ने सूर्यसिद्धान्त को ही सर्वाधिक स्पष्ट कहा है। यूँ तो भारतीय ज्योतिष में अठारह सिद्धान्तों का उल्लेख मिलता है। परन्तु उनमें पाँच सिद्धान्त ही मुख्य माने जाते हैं।

ज्योतिषशास्त्राध्ययनविधि:

मन्त्रं यथाविधि गुरोः सुदिने गृहीत्वा
तद्देवतां जपहुतिप्रमुखैः प्रतोष्य।
ज्ञानाय जातकफलस्य तु सिद्धमन्त्रः
स्यादेव दैवविदिहाप्तववात्तया हि ॥ २४॥

ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन करने वाले व्यक्ति को शुभ दिन में सुयोग्य गुरु से मन्त्रदीक्षा ग्रहण करनी चाहिए। फिर उस मन्त्र से सम्बन्धित देवता को जप तथा होम के द्वारा सन्तुष्ट करे; ऐसा दैवज्ञ ही जातक-प्रश्नादि के फल को भलीभाँति जानकर सफलता को प्राप्त हो सकता है ॥२४॥

ज्योतिषाध्ययनमुहूर्तः

दातव्यमपापेभ्यो निपुणमतिभ्यः प्रशान्तशीलेभ्यः।
शुभदिवसे गुरुलग्ने चन्द्रे मृदुशीघ्रवर्गस्थे ॥ २५॥

इस विद्या का अध्ययन पापरहित (सद्गुणी, सच्चरित्र) शिष्य को ही कराना चाहिए। निपुणमति तथा शीलवान् शिष्य को शुभ दिन (सोम, बुध, गुरु, शुक्र) में जब गुरु लग्न में हो तथा चन्द्रमा मुदु नक्षत्रों (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) अथवा क्षिप्र नक्षत्रों (हस्त, अश्विनी, पुष्य तथा अभिजित्) में से किसी नक्षत्र पर हो ऐसे मुहूर्त में ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ कराना चाहिए ॥२५॥

ग्रहपूजादिकथनम्

बलिहोमगन्धपुष्पैरादित्यादीन् ग्रहान् समभ्यर्च्य।
प्रारम्भमिदं शास्त्रं विधिवत् कृत्वा गुरोः पूजाम् ॥ २६॥
विधिवन्मत्राः पठिता भवन्ति सर्वार्थसाधका लोके।
एवं सफलं शास्त्रं भवति हि विधिपूर्वकं पठितम् ॥ २७॥

सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु, केतु—इन नवग्रहों की बलिदान, होम, गन्ध, पुष्प आदि से अर्चना करके तथा विधिवत् अपने ज्योतिषगुरु की पूजा करके ही ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन प्रारम्भ करना चाहिए ॥२६॥

पूजोपचारों में विधिवत् वैदिक मंत्रों का विनियोग तथा उच्चारण करना चाहिए। विधिपूर्वक किये मंत्रोच्चारण का फल सफलता देता है, सभी कामों को सिद्ध करता है। इसी भाँति विधिपूर्वक पढ़ा हुआ शास्त्राध्ययन भी सफल होता है ॥२७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वराहोक्तबृहज्जातकमहिमाकथनम्

स्वल्पास्तथार्थबहुला च वराहहोरा
तस्याः पुनः पटुधियामपि दुर्गमोऽर्थः ।
भट्टोत्पलादिरचिता विवृतीर्विलोक्य
स्पष्टं करोतु हृदि दैवविदर्थमस्याः ।। २८।।

आचार्य वराहमिहिर का होरा (बृहज्जातक तथा दैवज्ञवल्लभा) संक्षिप्त रूप में है परन्तु उसकी अर्थबहुलता के कारण बड़े-बड़े पटुबुद्धि ज्योतिषी भी अर्थ समझने में चकरा जाते हैं । अतः आचार्य भट्टोत्पल ने बृहज्जातक पर जो विवृति लिखी है उसका अध्ययन भी उसके अध्येताओं को कर लेना चाहिए । तभी होराशास्त्रक मर्म समझ में आ सकेगा ।।२८।।

कृष्णाचार्यस्य प्रशंसा

होरां वराहमिहिरास्यविनिर्गतां ये
मालामिवादधति दैवविदः स्वकण्ठे ।
कृष्णीयशास्त्रमपि भर्तृमतीव सूत्रं
तेषां सभासु महती भवतीह शोभा।। २९।।

जिस प्रकार आचार्य वराहमिहिर के होराशास्त्र (बृहज्जातक + दैवज्ञवल्लभा) को दैवज्ञलोग अपने कण्ठ में माला की भाँति धारण करते हैं उसी प्रकार कृष्णाचार्य के शास्त्र (कृष्णकलिका) को गले में मंगलसूत्र की भाँति धारण करने वाले ज्योतिषी लोग विद्वानों की सभा में महती शोभा बढ़ाते हैं ।।२९।।

दशाध्यायीप्रशंसा

होरायास्तु दशाध्याय्यां व्याख्यायां क्रियतां श्रमः ।
दैवज्ञेन विशेषेण फलमादेष्टुमिच्छता ।। ३०।।
दशाध्याय्यां विशेषेण श्रमो नैव कृतो यदि ।
दुष्करः फलनिर्देशस्तद्विदां च तथा वचः ।। ३१।।
अदृष्ट्वा यो दशाध्यायी फलमादेष्टुमिच्छति ।
इच्छत्येव समुद्रस्य तरणं स प्लवं विना ।। ३२।।

सटीक भविष्यवाणी के इच्छुक दैवज्ञ को बृहज्जातक पर दशाध्यायी नामक टीका का अध्ययन परिश्रमपूर्वक करना चाहिए ।।३०।।

यदि ज्योतिषी ने दशाध्यायी के अध्ययन में विशेष श्रम नहीं किया तो ज्योतिषी को फलकथन करना बहुत ही कठिन होगा, भले ही उसने अन्य कितने ही ग्रन्थों का अध्ययन क्यों न कर लिया हो ? ।।३१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्योंकि जो ज्योतिषी दशाध्यायी के बिना पढ़े ही जातक तथा प्रश्न का फल कहने का इच्छुक है वह बिना नौका के ही समुद्र को तैरना चाहता है ॥३२॥

दशाध्यायी—यह बृहज्जातक के आरम्भ के मात्र दश अध्यायों पर केरल प्रान्त के किसी ज्योतिषी द्वारा लिखी गयी संस्कृत टीका है । इसके सम्बन्ध में महामना सुधाकर द्विवेदी ने अपनी पुस्तक गणकतरंगिणी के पृष्ठ चौदह पर लिखा है—"एका केरली टीका च दशाध्यायीनाम्ना दुर्मिलास्ति; यस्या एका प्रति बहुनाऽऽयासेन काशिकराजकीय-पुस्तकालये स्थापनार्थं मया लेखकद्वारेणोत्पादिता" ।

यह टीका बृहज्जातक के अध्ययन में नौका के समान है, इसलिए जातकादेश मार्ग के रचयिता ने भट्टोत्पली टीका के साथ ही इसका अध्ययन भी अति महत्त्वपूर्ण माना है। इसके टीकाकार का नाम अज्ञात है । कुछ विद्वान् इसके रचयिता का नाम "गोविन्द सोमयाजी" बतलाते हैं । जो भी हो इस टीका का अध्ययन करने वाले विद्वानों ने इसे वराहमिहिर के होराशास्त्र के गूढार्थों को प्रकाशित करने वाली बताया है ।

पुनर्जन्मसिद्धान्तकथनम्

स्वर्गाद्यनुभवक्षीणशिष्टप्राचीनकर्मणाम् ।
भोगाय जननं नृणां मोहभाजां मुहुर्मुहुः ॥ ३३ ॥

मानवशरीर का अन्त होने पर स्वर्ग के सुख तथा नरक के दुःख जो कि प्राचीन कर्मों के कारण ही प्राप्त होते हैं उन्हें भोगने पर भी मोहयुक्त व्यक्ति शेष बचे हुए कर्मों के फल भोगने के लिए संसार में बारम्बार जन्म लेते रहते हैं ॥३३॥

द्विविधकर्मभेदौ

अत्र तु द्विविधं कर्म प्राक्कर्म निजयत्नतः ।
अन्यस्यानुभवोऽमुत्र भुक्त्वेहाद्यस्य संक्षयः ॥ ३४ ॥
स्वकर्म भोक्तुं जायन्ते प्रायेणैव हि जन्तवः ।
क्षीणे कर्मणि चान्यत्र पुनर्गच्छन्ति देहिनः ॥ ३५ ॥

कर्म के दो भेद हैं—(१) प्राक्तन कर्म तथा (२) निजयत्नज (क्रियमाण कर्म) । इनमें जो पूर्वजन्म में किया कर्म है वही प्राक्तन कर्म होता है । इसके दो भेद होते हैं—(क) प्रारब्ध तथा (२) संचित । इस प्रकार कर्म के सामान्य रूप से तीन भेद हो जाते हैं— संचित, प्रारब्ध तथा क्रियमाण (जो वर्तमान में किया जा रहा है) । इस जन्म का क्रियमाण आगे के लिए प्राक्तन कर्म बन जाता है जो कि जन्म लेने का कारण बनता है ॥३४॥

प्रायः जीवों का जन्म अपना कर्मफल भोगने के लिए ही होता है । कर्मों का क्षय होने पर आत्मा एक शरीर को छोड़कर दूसरे शरीर में (पुनर्जन्म के रूप में) प्रविष्ट होता रहता है ॥३५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्योतिषशास्त्रेण कर्मफलसूचनम्

यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः पक्तिम् ।
व्यञ्जयति शास्त्रमेतत्तमसि द्रव्याणि दीप इव ।। ३६।।
पूर्वजन्मार्जितं कर्म शुभं वा यदि वाऽशुभम् ।
तस्य पक्तिं ग्रहास्सर्वे सूचयन्तीह जन्मनि ।। ३७।।

जिस प्रकार दीपक अन्धकार में रखी वस्तु को प्रत्यक्ष दिखला देता है उसी प्रकार पूर्वजन्म में किये गये कर्मों का जो शुभ हों अथवा अशुभ उन्हें ज्योतिषशास्त्र प्रकट कर देता है ।।३६।।

पूर्वजन्म में किये गये शुभाशुभ कर्मो का विपाक (फल) को ग्रह (जन्मपत्री या प्रश्न-कुण्डली के द्वारा) इस जन्म में सूचित करते हैं ।।३७।।

विवक्षा—प्रायः इस बात पर ऊहापोह चलती रहती है कि फल देने वाले ग्रह होते हैं अथवा व्यक्ति द्वारा किये गये कर्म ? इसी का उत्तर देते हुए यहाँ बताया गया है कि ग्रह शुभाशुभ कर्मों के सूचक मात्र होते हैं फल तो किये गये कर्मो का ही मिलता है ।

मुहूर्तमहत्त्वम्

सुखदुःखकरं कर्म शुभाशुभमुहूर्तजम् ।
जन्मान्तरेऽपि तत्कुर्यात् फलं तस्यान्वयेऽपि वा ।। ३८।।

शुभ समय (शुभ मुहूर्त) में किया कर्म शुभ फल देता है तथा अशुभ समय में किया कर्म अशुभ फल देता है । वह कर्म जन्मान्तर में भी शुभाशुभ फल देता है, उसी प्रकार वह कर्म उसके अन्वय (वंश) के लोगों को भी फल देता है ।।३८।।

जातकशास्त्रेण कर्मज्ञानम्

प्राग्जन्मार्जितपुण्याघप्राबल्योद्रेकहेतुतः ।
प्रारब्धसंज्ञि मानुष्यजातौ जातकचिन्तनम् ।। ३९।।

प्राग्जन्म में अर्जित किये हुए पुण्य तथा पाप के प्रबल उद्रेक के कारण जन्म लेना पड़ता है । अतः जातकशास्त्र द्वारा व्यक्ति के प्रारब्ध का विचार करना चाहिए ।।३९।।

जातकशास्त्रमहत्त्वम्

आ मरणादिह जन्तुः प्राक्कृतनिजकर्मपाकमनुभवति ।
तद्वक्तुममलं जातकमथ किं प्रश्नेन कथ्यते सत्यम् ।। ४०।।

जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त प्राणी अपने किये हुए कर्मफल का भोग करता है, इस (प्रारब्ध-संचित-क्रियमाण) फल को जातक ही बतलाता है । इसे प्रश्नशास्त्र कैसे बतलाता है ? यह आगे बताया जा रहा है—।।४०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नशास्त्रमहत्त्वम्

कस्य पक्तिरिति ज्ञातुमिदानीं पूर्वकर्मणाम् ।
इहार्जितञ्च विज्ञातुं कर्म प्रश्नो विधीयते ।। ४१ ।।
प्राग्जन्मनि कृतानाञ्च कृतानां चेह कर्मणाम् ।
विभागोऽपि कथं ज्ञेय इति चेत्सोऽपि कथ्यते ।। ४२ ।।
यदा जातकतः प्रश्नो गुणदोषैर्विभिद्यते ।
तदा शुभाऽशुभं विद्यात् कर्मभेदैरिहार्जितैः ।। ४३ ।।
यदानुसरति प्रश्नो जातकं ग्रहभादिभिः ।
तदा प्राक्कर्मपाकः स्यादित्याद्यूह्यं हि धीमता ।। ४४ ।।

वर्तमान समय में शुभ या अशुभ किस प्रकार के प्राक्तन कर्म का विपाक चल रहा है ? इस समय का कौन-सा क्रियमाण कर्म है तथा भविष्य में क्या कर्म (करिष्यमाण) होगा ? इन सब को जानने के लिए प्रश्नशास्त्र ही उपयोगी है ।।४१।।

पूर्वजन्म में किये गये कर्म तथा इस जन्म में किये गये कर्मों का विभाग भी किस प्रकार से जाना जा सकता है ? इसके लिए प्रश्नशास्त्र उपयोगी है ।।४२।।

जब जन्मकुण्डली तथा प्रश्नकुण्डली का फल भिन्न-भिन्न हो तब इस जन्म में किये गये कर्मों के कारण ही यह भिन्नता है—यह बताना चाहिए ।।४३।।

मान लीजिए—जन्मकुण्डली में विंशोत्तरी आदि के अनुसार यदि इस समय शुभ फल घटित होना चाहिए परन्तु प्रश्नकुण्डली में अशुभ फल का संकेत हो तो वह अशुभ फल इस जन्म के दुष्कर्मों का फल है ऐसा समझना चाहिए ।

परन्तु जब जातक तथा प्रश्नशास्त्र दोनों के अनुसार फल में समानता हो तो यह फल प्राक्कर्मों के कारण ही है ऐसा समझना चाहिए ।।४४।।

जातके प्रश्ने च साम्यमाह

बुद्ध्वा शास्त्रं यथान्यायं बलाबलविधानतः ।
यदुक्तं जातके सर्वं तद्वत् प्रश्नेऽपि चिन्तयेत् ।। ४५ ।।
सम्प्रेर्यमाणस्त्ववशः शरीरी प्रसह्य देवेन शुभाऽशुभेन ।
ज्योतिर्विदः सन्निधिमेति यस्मात् प्रश्नोऽप्यतो जन्मसमः फलेषु ।। ४६ ।।
जन्मलग्नतया प्रश्नलग्नं सङ्कल्प्य पण्डितः ।
जातके यद्यदुद्दिष्टं तत्तत् प्रश्नेऽपि चिन्तयेत् ।। ४७ ।।

।। इति प्रश्नमार्गे प्रथमोऽध्यायः ।।

सबसे पहले ज्योतिषी को सम्पूर्ण ज्योतिषशास्त्र का अध्ययन कर उसके सामान्य नियमों को भलीभाँति जान लेना चाहिए । फिर उसे सम्यक् रूप से जातकशास्त्र को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हृदयंगम कर लेना चाहिए और जन्मकुण्डली की भाँति ही प्रश्नकुण्डली का ऊहापोहपूर्वक विचार करना चाहिए ।।४५।।

यह प्राणी परतन्त्र है, क्योंकि इसको कर्मों में प्रेरित करने वाला ईश्वर है । यह उसी से प्रेरित होकर शुभाऽशुभ कर्मों को करता है; परन्तु ज्योतिषी प्रश्नकुण्डली के माध्यम से उस व्यक्ति के शुभाशुभ कर्मों एवं उनके फलों की निकटता की जानकारी कर लेता है । इसलिए जातकशास्त्र की तरह प्रश्नशास्त्र के द्वारा भी फलादेश किया जाता है, अस्तु । इस सन्दर्भ में प्रश्नशास्त्र जातकशास्त्र के समान ही महत्त्वपूर्ण है ।।४६।।

विद्वान् ज्योतिषी को चाहिए कि वह जन्मलग्न की भाँति प्रश्नलग्न का साधन कर ले और उसे प्रश्नकुण्डली पर से जैसे जन्मकुण्डली का फल कहा जाता है वैसा ही फल उसी रीति से कहे ।।४७।।

उपर्युक्त तीन श्लोकों में जातक तथा प्रश्न फल की तुल्यता बताई है । इस प्रकार जन्मसमय की भाँति प्रश्नसमय भी महत्त्वपूर्ण होता है । मनुष्य का जन्म कर्म के कारण ही तो होता है, अत: जन्म का समय भी उन कर्मों का सूचक ही होता है । जब कोई व्यक्ति जिज्ञासा लेकर किसी दैवज्ञ से अपने भविष्य तथा किसी समस्या के समाधान हेतु पहुँचता है तब वह दैव से प्रेरित होता है । दैवप्रेरणा के कारण वह ऐसे समय पहुँचता है जो समय उसके भवितव्य का सूचक होता है । यही कारण है कि जातक की जन्मकुण्डली के ग्रहादि की स्थिति में कुछ-न-कुछ समानता अवश्य होती है । कभी-कभी बहुत समानता भी देखी गयी है—यह बात सभी दैवज्ञ अनुभव करते हैं । जन्मकुण्डली के भावों से जिन विषयों का विचार होता है प्रश्नकुण्डली से भी उनका विचार किया जाता है । इस बात की पुष्टि अन्य ज्यतिष-ग्रन्थों से भी होती है—

"यज्जातके निगदितं भुवि मानवानां
तत्प्राश्निकेऽपि सकलं कथयन्ति तज्ज्ञा: ।
प्रश्नोऽपि जन्मसदृशो भवति प्रभेद:
प्रश्नस्य चास्ति जननस्य न कश्चिदस्ति" ।।

— (सर्वार्थचिन्तामणि १/५)

यही तथ्य उत्तरकालामृतप्रश्नखण्ड के प्रथम श्लोक में निम्न शब्दों में वर्णित है—

"एवं जन्म खगोदय: फलमिदं सर्वं वदेज्जातके
तन्नो चेदथ जन्मपत्रमपि वा तत्प्रश्नलग्नाद्वदेत् ।
प्रश्नो जातकतुल्य एव न भवेद् भेदोऽथवा दुर्दिने
न ज्ञाते घटिकादिके ग्रहनवांशादींश्च पृच्छाद्वदेत्" ।।

इतना ही नहीं, जन्म एवं प्रश्न की भाँति आधानलग्न में भी ग्रहों का फल समान नहीं होता है । आचार्य वराहमिहिर रचित प्रश्नग्रन्थ दैवज्ञवल्लभा के निम्न श्लोक द्रष्टव्य हैं—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"सौरांशेऽब्जांशे वा चन्द्रः सौरान्वितोऽथवा हिबुके ।
शान्तो दीपो जन्मन्याधाने प्रश्नकाले वा" ॥
(अ. १३ श्लोक ८)

"आधाने तदनुजये पराजये वा शत्रूणां निधनविधौ समागमे वा ।
अर्थाप्तौ शुभमशुभं च सर्वकालं पृच्छायां समयमिमं विचिन्त्य वाच्यम्"॥
(अध्याय १४ श्लोक २३)

"यदेकगौ लग्नपकार्यनाथौ त्र्यंशे नवांशेऽप्यथ हौरिकायाम् ।
प्रश्ने प्रसूतावपि चिन्तनीयं पूर्णं विमिश्रं सुधियाफलं तत्" ॥
(शम्भुहोराप्रकाश ६/२५८)

सम्प्रदायानन्तरं किञ्चित्पुनरप्यत्र लिख्यते ।
प्रश्नजातकयोश्चिन्त्यं सन्तानधिषणादिभिः" ॥
(जातकादेशमार्ग १६/१)

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का प्रथम अध्याय पूर्ण हुआ ।।१।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ द्वितीयोऽध्यायः

तत्रादौ दैवज्ञस्य दैनिककृत्यमुच्यते

उत्थायोषसि देवतां हृदि निजां ध्यात्वा वपुश्शोधनं
कृत्वा स्नानपुरःसरं सलिलविक्षेपादि कर्माविलम् ।
कृत्वा मन्त्रजपादिकञ्च विधिवत् पञ्चाङ्गवीक्षां तथा,
खेटानां गणनञ्च दैवविदथ स्वस्थान्तरात्मा भवेत् ।। १।।

दैवज्ञ को प्रतिदिन उषःकाल में जागकर सर्वप्रथम अपने इष्टदेव का हृदय में ध्यान करना चाहिए, फिर शरीरशोधक (मल-मूत्रत्याग, शौच, दन्तधावन, कवल, गण्डूष आदि) करके स्नान करे । फिर स्नानाङ्गतर्पणादि, सूर्यार्घ्यदान तथा पूजा-होम आदि नित्यकर्मों का सम्पादन करके मन्त्रजपादि से निवृत्त होवे । तत्पश्चात् अपने आसन पर बैठ कर उस दिन का पञ्चाङ्ग तथा ग्रहस्थिति को देखें । कौन-सा ग्रह किस स्थिति में किस राशि-नक्षत्र में किन अंशों पर संचार कर रहा है यह गणना कर स्वस्थ शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा से संयुक्त हो जावे ।।१।।

पृच्छकस्य चेष्टावलोकनम्

आलोके खलु यस्य कस्यचिदसावायाति यत्किञ्चनः
प्रष्टुं मां प्रति नूनमित्यवहितस्तन्न्यस्तदृष्टिर्दृढम् ।
तच्चेष्टादिकमाकलय्य सकलं तत्कालजातं पुन-
र्जानीयात्सदसन्निमित्तमपि च श्वासस्थितिं चात्मनः ।। २।।

अब दैवज्ञ को जो कोई भी पृच्छक आता हुआ दिखायी दे उसे उस पृच्छक की चेष्टाओं का मनोयोगपूर्वक सावधानी से अवलोकन करना चाहिए । उसकी सम्पूर्ण तात्कालिक चेष्टाओं का आकलन कर उस समय समीप में दिखने वाले शकुनों को भी देखे, उनकी शुभाशुभता पर विचार करे । अपनी श्वास की स्थिति स्वरशास्त्र के अनुसार ज़ान कर उसके द्वारा भी प्रश्न का शुभाशुभ जाने ।।२।।

इस प्रकार पृच्छक का अंगस्पर्श, वातावरण, शकुन, स्वर आदि का अध्ययन कर पश्चात् प्रश्नकुण्डली की ग्रहस्थिति के अनुसार ऊहापोह करके दैवज्ञ द्वारा दिया हुआ उत्तर पूर्णतः सटीक होता है ।

ततो पृच्छककर्तव्यमाह

तिथौ शुभायां शुभदेऽनुकूले तारे दिने भानुशुभग्रहाणाम् ।
प्रष्टेप्सितं प्राभृतदानतुष्टं ज्योतिर्विदं प्रातरुपेत्य पृच्छेत् ।। ३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नकर्त्ता को चाहिए कि वह शुभ चान्द्र तिथि, शुभ तारा, शुभ वार (सोम, बुध, गुरु, शुक्र) को दक्षिणा से युक्त होकर प्रात:काल ज्योतिषी के समीप जाकर उसे सन्तुष्ट करके प्रश्न पूछे ॥३॥

पाठान्तर किसी प्रति में "तियौ" के स्थान पर "तिथौ" पाठान्तर है । मलयालम भाषा में तिथि को "तिय" तथा सौर तारीख को तीयती कहते हैं । संस्कृत में इसका प्रयोग नहीं है अत: मुझे दूसरी प्रति का पाठ "तिथौ" ही ठीक प्रतीत होता है ।

दैवज्ञस्य कर्त्तव्यमाह

नापृष्टः कस्यचिद् ब्रूयान्नान्यायेन च पृच्छतः ।
परमार्थफलज्ञानं यतो नैवेह सिध्यति ॥ ४॥
अपृच्छतः पृच्छतो वा जिज्ञासोऽर्थस्य कस्यचित् ।
होराकेन्द्रत्रिकोणेभ्यः शुभाऽशुभफलं वदेत् ॥ ५॥
वसिष्ठवचनादस्मात् जिज्ञासोरप्यपृच्छतः ।
दर्शने दैवविद् ब्रूयादारूढेन शुभाऽशुभम् ॥ ६॥

दैवज्ञ को बिना पूछे कभी किसी बात को पृच्छक को नहीं बताना चाहिए । अन्यायपूर्वक पूछे हुए प्रश्न का उत्तर भी नहीं देना चाहिए, क्योंकि इस प्रकार के प्रश्नों से दैवज्ञ को फल का ज्ञान सम्यक् रूप से नहीं हो पाता ॥४॥

इस श्लोक में अन्याय शब्द का प्रयोग किया गया है । अन्याय क्या ? अविधिपूर्वक प्रश्न पूछना अन्याय है । प्रथम बिना दक्षिणा सामने रखे प्रश्न पूछना अन्याय है । श्रद्धारहित होकर प्रश्न पूछना अन्याय है । परीक्षा लेने के लिए प्रश्न पूछना अन्याय है । विनयरहित तथा कपटयुक्त मन से प्रश्न पूछना अन्याय है । अत: अविधिपूर्वक पूछे प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहिए ।

तो भी पृच्छक यदि वास्तविक रूप से दीन, आर्त तथा जिज्ञासु है, श्रद्धावनत है तो उसके मूक प्रश्न का उत्तर या पूछे गये प्रश्न का उत्तर दैवज्ञ को प्रश्नकुण्डली में लग्न, केन्द्र तथा त्रिकोण स्थानों में स्थित ग्रहों के आधार पर देना चाहिए ॥५॥

क्योंकि महर्षि वसिष्ठजी के कथनानुसार कोई जिज्ञासु व्यक्ति प्रश्न करे या न करे परन्तु उसके प्रश्न का समाधान दैवज्ञ को आरूढ लग्न के आधार पर स्वत: ही कह देना चाहिए । उस पृच्छक के पूछने की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए ॥६॥

इस श्लोक का अभिप्राय यह है कि यदि कोई पृच्छक श्रद्धावनत होकर सदक्षिणा दैवज्ञ के सम्मुख उपस्थित होता है तो उसके मूक प्रश्न का उत्तर दैवज्ञ को स्वयमेव दे देना चाहिए; उसके पूछने की प्रतीक्षा करना आवश्यक नहीं है । परन्तु अश्रद्धालु कपटी के प्रश्न का उत्तर पूछे जाने पर भी न देवे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथारूढविधिरुच्यते

ऐन्द्र्यां मेषवृषावग्निकोणे मिथुनभं स्थितम् ।
याम्यां कर्कटसिंहौ तौ नैर्ऋत्यां दिशि कन्यका ।। ७ ।।
वारुण्यां तु तुलाकीटौ वायुकोणे धनुःस्थितिः ।
सौम्यां मृगघटौ स्यातामैशान्यां दिशि मीनभम् ।। ८ ।।
भूमिचक्रमिति प्रोक्तं विष्वक् दैवविदः स्थितम् ।
तत्र यत्र स्थितः प्रष्टा पृच्छत्यारूढभं हि तत् ।। ९ ।।
आरूढत्वात्पृच्छकेन राशिरारूढ उच्यते ।
तस्मिन्सम्यक्परिज्ञाते सर्वं तेनैव चिन्त्यताम् ।। १० ।।

पूर्व दिशा में मेष-वृष राशियाँ, अग्निकोण में मिथुन राशि, दक्षिण दिशा में कर्क-सिंह राशियाँ, नैर्ऋत्यकोण में कन्या राशि, पश्चिम दिशा में तुला-वृश्चिक राशियाँ, वायुकोण में धनु राशि, उत्तर दिशा में मकर-कुंभ राशियाँ तथा ईशान कोण में मीन राशि स्थित है ।।७-८।।

यह आरूढ चक्र है, इसी को भूमिचक्र कहा जाता है । इसके मध्यवर्ती स्थान में दैवज्ञ का आसन होता है । दैवज्ञ से जिस दिशा या कोण में आकर पृच्छक बैठता है उस दिशा की राशि आरूढ राशि कहलाती है ।।९।।

पृच्छक के आरूढ होने से वह राशि आरूढ कहलाती है । आरूढ राशि के ठीक-ठीक ज्ञान से दैवज्ञ को फल विचार कर कहने में बड़ी मदद मिलती है । उसी से फल विचार करना चाहिए ।।१०।।

आरूढ चक्र (भूमिचक्र) में पूर्वादि क्रम से दिशाओं में मेषादि राशिक्रम का अनुसरण करते हुए प्रत्येक दिशा में एक चरराशि तथा दूसरी उसके बाद वाली स्थिरराशि रहती है । तीसरी राशि कोण (विदिशा) में पड़ती है, वह द्विस्वभाव होती है । इस प्रकार चारों दिशा में जोड़ी से चर तथा स्थिर राशियाँ तथा विदिशाओं में द्विस्वभाव राशियाँ होती हैं । आगे के चक्र का अवलोकन करें ।

आरूढ चक्र (भूमिचक्र)

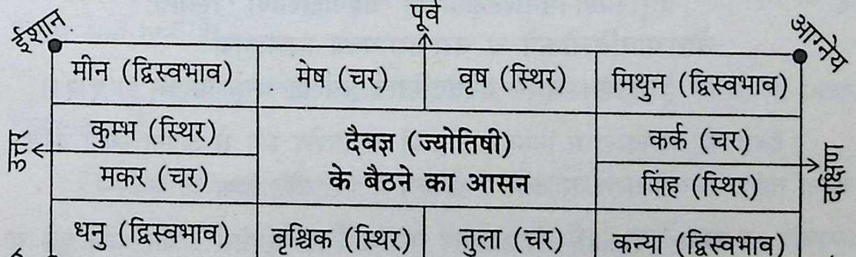

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकारान्तरेण आरूढज्ञानम्

तस्मिन्ननिश्चिते चक्रं विलिख्यास्मिन् सुपूजिते ।
प्रष्टा स्वर्णेन यं राशिं स्पृशेदारूढ एव सः ।। ११।।

यदि पृच्छक के बैठने की स्थिति से आरूढ राशि का निश्चय न हो अथवा पूर्वोक्त विधि से आरूढ ज्ञान में असुविधा होने पर ऊपर बताई गई विधि के आरूढ चक्र को (सुविधानुसार भूमि, चौकी, कागज, ताम्रपत्र आदि पर) लिखकर रखना चाहिए। उस चक्र में पृच्छक स्वर्णखण्ड या स्वर्णमुद्रा से जिस राशि का स्पर्श करे उसी राशि को ही आरूढ राशि मानना (समझना) चाहिए ।।११।।

प्रश्नशास्त्र में उदयलग्न की भाँति ही आरूढलग्न महत्त्वपूर्ण होता है। पूर्व समय में दैवज्ञों के कार्य को ऋषि-मुनि सम्पादित करते थे। वे वनों में खुले स्थानों में बैठते थे, छाया के लिए वृक्ष या छत्र या गुम्बद की भाँति घासफूस की छाया होती थी। प्रश्नकर्त्ता समीप के किसी भी गाँव से किसी भी दिशा से आकर किसी तरफ बैठ सकता था। आजकल ज्योतिषी घरों और पक्के भवनों में रहते हैं जिनमें बैठने के लिए दीवाल के सहारे मसनद या तकिया होता है अथवा कुर्सी-मेज या सोफे पर बैठक रहती है। अतः पूर्वोक्त श्लोक ७ से १० पर्यन्त जो विधि आरूढ लग्न के ज्ञान की दी गयी है वह व्यावहारिक नहीं रह गयी है। अतः ग्यारहवें श्लोक में जो दूसरी विधि दी गयी है वर्तमान समय में वही सुविधाजनक तथा व्यावहारिक है।

प्रश्नज्ञानप्रदीप (प्रश्नादर्श) नामक ग्रन्थ में आरूढ राशि के ज्ञानार्थ निम्न श्लोक प्राप्त हैं—

"प्रदक्षिणक्रमेणैव द्वादशारूढसंज्ञकम् ।
वृषस्य वृश्चिकश्चैव मिथुनस्य शरासनम्" ।।

इस श्लोक का भावार्थ पूर्व में बतायी विधि के अनुसार ही है।

प्रश्नकाले विचारणीयविषयाः

दैवज्ञेन समाहितेन समयो देशः स्ववायुर्दशा,
प्रष्टुःस्पर्शनमाश्रितर्क्षहरितौ प्रश्नाक्षराणि स्थितिः।
चेष्टाभावविलोकने च वसनाद्यन्यच्च तत्कालजं
पृच्छायाः समये तदेतदखिलं ज्ञेयं हि वक्तुं फलम् ।। १२।।

दैवज्ञ को प्रश्नकाल में निम्नांकित तथ्यों पर विशेष रूप से अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए जिससे प्रश्न का उत्तर समग्र रूप में भलीभाँति दिया जा सके—

(१) समयः (Time)—जिस समय पृच्छक दैवज्ञ के पास आकर प्रश्न पूछे या दक्षिणा समर्पित करें उस समय को आधुनिक मानक समय में या सूर्योदय से घटी-पलों में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिख लेना चाहिए। क्योंकि उदयलग्न बनाने के लिए यही समय आधारभूत होता है और इसी के अनुसार प्रश्नकालीन ग्रहस्थिति तथा पञ्चाङ्गशुद्धि देखी जाती है।

(२) देश: (Locality)—प्रश्न करने के स्थान को देश कहते हैं। इसका उपयोग दो प्रकार से होता है—एक तो उस स्थान के अक्षांश एवं रेखांश (Latitudes & Longitudes) के अनुसार प्रश्नलग्न की गणना होती है। दूसरा उस स्थान की शुभता-अशुभता, पवित्रता-अपवित्रता के अनुसार ही प्रश्न का फल होता है। शुभ पवित्र स्थल में किये प्रश्न का फल उत्तम होता है।

(३) स्ववायुर्दशा—दैवज्ञ की श्वासक्रिया में उसके नथुनों से चलने वाले सूर्य एवं चन्द्र स्वर तथा सुषुम्णा नाडी का वायुप्रवाह उनके तत्त्व आदि पर भी प्रश्न का शुभाशुभ परिणाम निर्भर करता है, अत: उसका भी ध्यान रखा जाना आवश्यक है।

(४) प्रष्टु:स्पर्शनम्—पृच्छक अपने शरीर के जिस भाग को स्पर्श करता है उस पर भी प्रश्न का शुभाशुभ फल निर्भर करता है।

(५) आरूढ राशि—भूमिचक्र में दिशानुसार जिस राशि का पृच्छक स्पर्श करे वह राशि इस ग्रन्थ के अनुसार आरूढ है। जैमिनिसूत्र तथा पराशर के अनुसार जो आरूढलग्न या पदलग्न है वह इस आरूढ से भिन्न है। इस तथ्य का ध्यान रखा जाना अति आवश्यक है।

(६) प्रश्नाक्षराणि—प्राश्निक द्वारा उच्चरित प्रश्नवाक्य के अक्षर या उसके द्वारा लिये गये देवता, नदी, पुष्प या फल के नामाक्षर भी प्रश्नफल बताने में सहायक होते हैं।

(७) स्थिति: —प्रश्नकर्त्ता किस प्रकार के आसन से किस दिशा की ओर मुख करके बैठता है, यह बात भी महत्त्वपूर्ण है।

(८) चेष्टा—प्राश्निक द्वारा की गयी विविध प्रकार की चेष्टाएँ (हरकत), जैसे—अंगुलियाँ चटकाना, ताली बजाना, अँगड़ाई लेना, आँखें मींचना, कागज या छोटी लकड़ी आदि के टुकड़े करना, अपनी अंगुली चबाना आदि।

(९) भाव—प्रश्नकर्त्ता की मनोदशा को भाव कहते हैं।

(१०) विलोकने—प्रश्नकर्त्ता की दृष्टि प्रश्न पूछते समय ऊपर को, नीचे को या तिरछी कैसी रहती है?

(११) वसनादि—प्रश्नकर्त्ता जो वस्त्र-वेशभूषा धारण किया है उसका भी विचार किया जाता है।

(१२) तत्कालजम्—तात्कालिक शकुनों का विचार ॥१२॥

इस श्लोक के अनुसार एक अच्छे ज्योतिषी के लिए मनोविज्ञान का अध्ययन भी आवश्यक है जिसके कारण पृच्छक के मनोभावों का ठीक से पता किया जा सके।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ फलनिर्देशनक्रमः

पृच्छानिर्गममार्गमन्दिरगतिप्रश्नक्रियासम्भवं
सूत्रत्रिस्फुटजाष्टमङ्गलफलारूढोदयेन्दूद्भवम् ।
आयुः खेटवशाच्च जातकवशात्सञ्चिन्त्य भावान् परान्
देवानामनुकूलतादि च वदेद् बाधाभिचाराद्यपि ।। १३।।
दैवज्ञसावधानत्वे प्रष्टुश्च प्रश्नसौष्ठवे ।
सति प्रश्नेषु सर्वेषु शुभाप्तिर्वचनं तथा ।। १४।।
दैवज्ञसावधानत्वं प्रष्टुश्च प्रश्नसौष्ठवम् ।
इष्टद्रव्यश्रुतीक्षे च सम्यगिष्टोपलब्धये ।। १५।।

दैवज्ञ को चाहिए कि वह शास्त्र द्वारा पृच्छक के घर से निकलने पर मार्ग में तथा दैवज्ञ के घर में प्रविष्ट होते समय कौन-कौन स्त्री-पुरुष साथ रहें, मिलें, बिछुड़ें तथा शकुन-अपशकुन जो भी हुए इन सबका विचार कर के त्रिस्फुट सूत्र, अष्टमङ्गल, आरूढलग्न, उदयलग्न तथा चन्द्रराशि से क्या फल होगा—इसका विचार ग्रहों के अनुसार प्रश्न से सम्बन्धित स्त्री-पुरुषों एवं जीवों की आयु, जातक में वर्णित पद्धति से भावों का विचार, देवताओं की अनुकूलता-प्रतिकूलता, अभिचारादि प्रयोग आदि के विषय में भी विचार करे ।।१३।।

ऐसे प्रश्न सदैव शुभफलकारक होते हैं जिनमें दैवज्ञ पूर्णतः सावधान हो तथा प्रश्नकर्त्ता सविनय संक्षिप्त प्रश्न पूछे और उस समय मांगलिक एवं आशीर्वचन सुनायी पड़ते हों ।।१४।।

इसी प्रकार यदि दैवज्ञ सावधानी से प्रश्न का श्रवण तथा निरीक्षण कर रहा हो, प्रश्नकर्त्ता ने चातुर्य तथा विनयपूर्वक दक्षिणा देकर सारगर्भित प्रश्न पूछा हो ऐसे समय में जिन व्यक्तियों, वस्तुओं या विषयों से सम्बन्धित प्रश्न है यदि उनकी चर्चा सुनायी दे, वे पदार्थ सामने दिखायी दें, उनका नाम सुनाई पड़ें तो उनकी प्राप्ति अवश्य ही होती है ।।१५।।

प्रश्नार्थे वर्जितकालः

बालान्नवर्ज्यतारासु गण्डान्तोष्णाविषेषु च ।
अष्टमीविष्टिरिक्तासु स्थिरेषु करणेषु च ।। १६।।
तिथिनक्षत्रराश्यंशसन्धौ च गुलिकोदये ।
चक्रार्धे ग्रहणे सार्पशिरस्येकार्गले तथा ।। १७।।
मृत्युदग्धादियोगेषु पापदृश्युदयेषु च ।
त्रयोदश्यां प्रदोषे च निशीथे रविदर्शने ।। १८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सङ्क्रान्तौ च तथा प्रष्टुर्विपत्प्रत्यरयोर्वधे ।
अष्टमे च तथा राशौ जन्माष्टमगते विधौ ।। १९।।
इत्यादि दुष्टकालेषु प्रश्नः स्यादशुभप्रदः।। २०।।

बालकों के अन्नप्राशन में वर्जित नक्षत्रों में, गण्डान्त नक्षत्रों में, उष्ण नक्षत्रों में, विष नक्षत्रों में, अष्टमीतिथिविष्टिकरण, रिक्तातिथि स्थिरकरणों में ।।१६।।

तिथिसन्धि, नक्षत्रसन्धि, राश्यंशसन्धि, गुलिककाल, चक्रार्धग्रहण, सार्पशिर, एकार्गल में ।।१७।।

मृत्युयोग, दग्धादि दुष्ट योगों में, पाप ग्रहों से दृष्ट लग्नों में, त्रयोदशी तिथि में, प्रदोषकाल में, मध्यरात्रि में, रवि से दृष्ट लग्न में (अथवा सूर्योदय काल में), संक्रान्ति प्रवेश समय में; पृच्छक के विपत्, प्रत्यरि तथा वधतारा में, लग्न से अष्टम में चन्द्र होने पर, जन्मलग्न से आठवें लग्न में, अन्य दुष्ट कालों (भूकंप, उत्पात, उल्कापात, धूमकेतु के उदय समय) में किया गया प्रश्न अशुभ फल देता है । अत: इन समयों में प्रश्न नहीं करना चाहिए ।।१८-१९-२०।।

इस प्रकार इन श्लोकों में लगभग २२ दोष गिनाये गये हैं । इनमें कुछ की व्याख्या आवश्यक होने से दी जा रही है—

(१) **बालान्नवर्ज्यतारा**—भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, विशाखा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा—ये नक्षत्र बालकों के अन्नप्राशन में वर्णित होने से बालान्नवर्ज्यतारा कहलाते हैं । प्रश्नकाल में वर्जित है ।

(२) **गण्डान्त**—अश्विनी, मघा तथा मूल का प्रथम चरण एवं रेवती, आश्लेषा तथा ज्येष्ठा का चतुर्थ चरण गण्डान्त होने से प्रश्नकाल में वर्ज्य हैं ।

(३) **उष्ण नक्षत्र**—अश्विनी नक्षत्र के प्रारम्भ के पश्चात् साढ़े सात घटी से लेकर पन्द्रह घटी तक; उसी प्रकार रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, भरणी, मृग., पुष्य, पू.फा. तथा चित्रा इन नक्षत्रों की पचपन से लेकर साठ घटी तक; कृ., आर्द्रा, श्लेषा., उ.फा. तथा स्वाति नक्षत्रों की इक्कीस घटी से लेकर तीस घटिका पर्यन्त; विशाखा का प्रथम चरण, मूल, श्रवण, पू. भा. की एक से आठ घटी पर्यन्त; अनु., पू. षा., धनि. उ.भा. की बावन से साठ घटी तक तथा ज्येष्ठा, उ.षा., शतभिषा तथा रेवती की बीस से तीस घटी तक का समय उष्ण नक्षत्र कहा जाता है ।

(४) **विषघटी**—प्रत्येक नक्षत्र की निम्न घटियों से लेकर चार घटी तक विष घटी होती है । नक्षत्रों की गणना अश्विनी से करें—५०, २४, ३०, ४, १४, ११, ३०, २०, ३२, ३०, २०, १८, २२, २०, १४, १४, १०, १४, २०, २४, २०, १०, १०, १८, १६, २४, ३० । तात्पर्य यह है कि अश्विनी की पचास घटी से चौवन घटी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तक का समय विष घटी होता है। भरणी के २४ घटी के उपरान्त ३८ तक का भाग विष भाग है। इसी प्रकार अन्यों को जानें।

(५) **रिक्तातिथियाँ**—चतुर्थी, नवमी तथा चतुर्दशी।

(६) **विष्टि तथा स्थिरकरण**—भद्रा तथा शकुनि, चतुष्पद, नाग एवं किंस्तुघ्न करण।

(७) **तिथिसन्धि**—प्रत्येक चान्द्रतिथि की प्रथम तथा अंतिम घटी।

(८) **नक्षत्रसन्धि**—प्रत्येक नक्षत्र की आरम्भ और अंत की एक-एक घटी।

(९) **राशिसन्धि**—प्रत्येक राशि के आदि-अंत के पाँच-पाँच पल का समय।

(१०) **अंशसन्धि**—प्रत्येक नवांश के आदि एवं अंत का एक-एक पल।

(११) **गुलिककाल**—यह समय अब उत्तर भारत के प्रमुख पञ्चाङ्गों में दिया जाने लगा है। उसे वहीं देखना उचित है।

(१२) **चक्रार्ध**—व्यतिपात को कहते हैं। यह विष्कंभादि २७ योगों में एक होता है। वैधृति योग भी इसी के सदृश वर्ज्य है। महापात को भी व्यतिपात कहते हैं। इसे भी पंचांग में देखना चाहिए।

(१३) **सार्पशिरः**—व्यतीपात योग के उत्तरार्ध को सार्पशिर कहते हैं।

(१४) **एकार्गल**—सूर्यस्पष्ट के राश्यादि को बारह राशि में घटा दें, जो शेष बचें उसमें तेरह अंश तथा बीस कला (१३°/२०′) का भाग दें, इसके शेष को त्याग दें तथा लब्धि (भजनफल) में एक जोड़ दें; यह एकार्गल नक्षत्र की संख्या होगी। इस संख्या से दूसरा, सातवाँ, दशवाँ, ग्यारहवाँ, चौदहवाँ, सोलहवाँ, अठारहवाँ तथा बीसवाँ नक्षत्र भी एकागर्ल दोष से पीड़ित होता है।

उदाहरणार्थ—उस दिन सूर्यस्पष्ट सिंह राशि के दस अंश पर है। अतः इसके अंश १३०° (एक सौ तीस अंश) हुए। इस अंशात्मक सूर्यस्पष्ट को बारह राशि (३६० अंशों) में से घटाया तो अवशेष २३०° (दो सौ तीस अंश) हुए। इनमें १३°/२०′ अर्थात् $१३\frac{१}{३}$ अंश = $\frac{४०}{३}$ अंशों का भाग देने पर लब्धि १७ प्राप्त हुई। इसमें एक जोड़ दिया तो अठारहवाँ नक्षत्र एकागर्ल दोष से पीड़ित हुआ। यह संख्या अश्विनी से गिनने पर ज्येष्ठा की है, ज्येष्ठा से दूसरा मूल, सातवाँ शतभिषा की एकार्गल नक्षत्र हैं। इसी प्रकार रेवती, अश्विनी, रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य तथा मघा नक्षत्र भी एकार्गल दोष से युक्त हुए। उस दिन नक्षत्र (चन्द्रनक्षत्र) पू.फा. होने से यह एकार्गल दोष युक्त नक्षत्र नहीं हुआ। यह उदाहरण भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा गुरुवार संवत् २०६०, शाके १९२५, आंग्ल दिनांक २८ अगस्त सन् २००३ ईस्वी का है।

यहाँ मुख्य दोषों की व्याख्या कर दी गयी है। शेष का ज्ञान दैवज्ञ को मुहूर्त विषय के अध्ययंन से हो जायेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नार्थे विहितकालः

इत्यादिदोषरहिते कालेऽमृतघटीषु च ।
शुभानामुदये दृष्टौ मुहूर्तेषु शुभेषु च ।
सिद्धामृतादियोगेषु पृच्छाभीष्टफलप्रदा ।। २१।।

पूर्वोक्त श्लोकों में कथित दोषों से रहित समय में, अमृतवेला में, लग्न में शुभ ग्रह होने पर, शुभ मुहूर्त में, सर्वार्थसिद्धि, अमृतसिद्धि आदि योगों में पूछा गया प्रश्न अभीष्ट फल प्रदान करता है ।

प्रश्नार्थे विहितदेशः

फलप्रसूनसम्पूर्णमहीरुहसमाकुले ।
स्निग्धभूमितले रत्नकाञ्चनादिसमन्विते ।। २२।।
पञ्चेन्द्रियमनःप्रीतिकरे गोमयवारिणा ।
तत्क्षणप्रोक्षितक्षोणितले समवसुन्धरे ।। २३।।
मङ्गल्यकर्मसंयुक्ते मङ्गलस्त्रीसमाकुले ।
मन्दिरे पुत्रभार्यादिहृष्टपुष्टजनाश्रिते ।। २४।।
यः पृच्छतीदृशे देशे साप्नोत्यभिमतं ध्रुवम् ।। २५।।

अब प्रश्न के लिए उत्तम स्थान को कहते हैं—जो स्थान फल, फूल, वृक्ष आदि से हरा-भरा, समतल तथा स्निग्ध भूमि से युक्त, रत्नकांचनादि से युक्त; शब्द, स्पर्श, रूप, रस तथा गन्ध में प्रिय, तत्काल ही गोबर से लिपा-पुता, सम भूमिवाला, मंगल कार्य (मंगल गीत, भजन, कीर्तन आदि) से युक्त तथा सौभाग्यवती स्त्रियों से भरा-पूरा हो उस घर में, रोग-बीमारी से रहित सुन्दर, मनोरम, स्वस्थ स्त्री-पुरुष बालक हों—ऐसे स्थान में पूछा गया प्रश्न निश्चित ही शुभ फल देता है ।।२२-२५।।

प्रश्नार्थे अप्रशस्तदेशः

महावने श्मशानान्ते निम्नोच्चे शून्यमन्दिरे ।
गृहे चार्तजने प्रेतक्रियाद्यशुभकर्मणि ।। २६।।
जलाग्निशुष्कवृक्षान्ते तथैवेन्द्रियचेतसाम् ।
अनिष्टदे प्रदेशे च प्रष्टा नाप्नोत्यभीप्सितम् ।। २७।।

यदि प्रश्न किसी महावन (विशाल जंगल) में किया जाये या श्मशान के समीपवाला स्थान हो या ऊँची-नीची भूमि हो अथवा सुनसान घर हो; उस स्थान में दुःख, रोग, भय आदि से लोग दुःखी हो या रो रहे हों, वहाँ प्रेतक्रिया (मुर्दे के अंतिम संस्कार का प्रयत्न, श्राद्ध, दशगात्रादि विधान) चल रही हो, ऐसे अशुभ कर्म हो रहे हों ।।२६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

थोड़े जल के समीप का स्थान, अग्नि के समीप का स्थान, सूखे वृक्षों के समीपवर्ती प्रदेश में, मन तथा इन्द्रियों को अनिष्ट लगने वाला स्थल, चित्त को खिन्न करने वाली जगह तथा अनिष्ट स्थान (हिंसादि कार्यों का स्थान) में पूछा गया प्रश्न हो तो पूछने वाले की अभीष्ट कामना पूर्ण नहीं होती है ॥२७॥

स्वरोदयविचारः

कार्यं श्वासपरीक्षणं प्रतिदिनं बुध्वा प्रभातागमे,
तस्येडादिगतिर्धराप्रभृतिसञ्चारश्च विज्ञायताम् ।
तेनात्मीयशुभाऽशुभं हि सकलं ज्ञेयं पुनः पृच्छतां
तत्कालात्मसमीरणेन च तथा नष्टादिकं चोच्यताम् ।। २८।।

दैवज्ञ को प्रतिदिन सूर्योदय समय पर अपने श्वास के द्वारा संचरित होने वाले स्वरों का परीक्षण करते रहना चाहिए। श्वास की इडा, पिंगला तथा सुषुम्णा नाड़ियों (स्वरों) की गति पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाश इन पाँच तत्त्वों के संचार को समझना चाहिए। उसी के आधार पर स्वयं का शुभाऽशुभ फल जानना चाहिए तथा प्रश्नकाल के स्वरों के आधार पर प्रश्नकर्त्ता के प्रश्न का शुभाशुभ फल तथा लाभ-हानि कहना चाहिए ॥२८॥

इडा—नाक के बाँयें नथुने (Left nostril) में इडानाड़ी विद्यमान है । इससे निकलने वाली श्वास वायु को ही चन्द्र स्वर कहते हैं । यही वाम स्वर है ।

पिंगला—दाहिने नथुने में (Right nostril) में पिंगला नाड़ी संचरित होती है । इसका स्वामी सूर्य है । यह दक्षिण स्वर है ।

सुषुम्णा—जब एक क्षण वाम नाड़ी तथा दूसरी ही क्षण दक्षिण नाड़ी चले या दोनों नथुनों से श्वास का प्रवाह प्रतीत हो तब पिंगला नाड़ी चल रही है ऐसा जानना चाहिए।

इन नाड़ियों का विस्तृत अध्ययन योगशास्त्र के ग्रन्थों यथा शिवस्वरोदय आदि से करना चाहिए—

प्रकटं प्राणसञ्चारं लक्षयेद्देहमध्यतः ।
इडापिङ्गलासुषुम्णाभिर्नाडीभिस्तिसृभिर्बुधः ॥
इडा वामे च विज्ञेया पिङ्गला दक्षिणे स्मृता।
इडानाडीस्थिता वामे ततो व्यस्ता च पिङ्गला ॥
इडायां तु स्थितश्चन्द्रः पिङ्गलायाञ्च भास्करः।
सुषुम्णा शम्भुरूपेण शम्भुर्हंसस्वरूपतः॥
शक्तिरूपस्थितश्चन्द्रो वामनाडीप्रवाहकः।
दक्षनाडीप्रवाहश्च शम्भुरूपो दिवाकरः ॥

(शिवस्वरोदय, श्लोक ४८-४९-५०-५२)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुकदेव कहें चरणदास सौं थिर चर स्वर पहिंचान।
थिर कारज कों चन्द्रमा चर कारज कौं भान॥
(ज्ञानस्वरोदय, दोहा ११)

पण्डित रामचन्द्र सोमयाजी ने अपने ग्रन्थ "समरसार" में भी श्लोक ३९ से ५० तक प्रश्नों का उत्तर देने के लिए श्वासस्वरविज्ञान का वर्णन किया है।

वारानुसारेण स्वराणां शुभत्वम्

वारेष्विन्दुबुधाङ्गिरोभृगुभुवां वामे चरन्मारुतो,
भौमाऽर्कार्किदिनेषु दक्षिणगतो नृणामभीष्टः स्मृतः।
सौम्यानां दिवसेषु दक्षिणगतोऽनिष्टो सतां वामगो
वक्ष्यन्ते मरुतोः शुभाशुभदयोर्भेदाः फलानामथ॥ २९॥

जब शुभ वारों में अर्थात् सोम, बुध, गुरु या शुक्र में चन्द्रस्वर (वामनाड़ी = इडा) चले तो शुभ फल होता है। इसी प्रकार सूर्य, मंगल, शनि वारों में सूर्य स्वर (दक्षिण नाडी = पिङ्गला) का प्रवाह मनुष्यों के लिए शुभ फलसूचक होता है। इसके विपरीत स्थिति हो अर्थात् शुभ ग्रहों के वार में सूर्य (दक्षिण) स्वर तथा अशुभ ग्रहों के वार में वाम स्वर चले तो अशुभ फल होता है॥२९॥

वारानुसारेण स्वराणां शरीरे परिणामः

सर्वेषामपि वासरेषु पवनेऽभीष्टे वपुः स्वस्थता,
लाभोऽर्थस्य च मृष्टभोजनमितीष्टानां च भावोऽन्यथा।
श्वासश्चेदहितो न मृष्टमशनं नार्थागमो विग्रहः,
सर्वैर्नो शयनं सुखेन च सुखं विण्मोक्षणादिष्वपि॥ ३०॥

जब शुभ ग्रहों के वार में शुभ (वामस्वर) तथा पाप ग्रहों के वार में दक्षिण स्वर चलता है तब शरीर स्वस्थ रहता है, धनलाभ होता है, मधुर एवं स्वादिष्ट भोजन मिलता है, मनोभिलषित कार्य सिद्ध होते हैं। इसके विपरीत स्थिति हो अर्थात् पापवार में शुभस्वर चले तथा शुभवार में अशुभ (दक्षिण) स्वर चले तो विपरीत फल होता है; न मधुर भोजन मिलता है, न धनलाभ होता है, सुखपूर्वक नींद नहीं आती, न शरीर स्वस्थ रहता है तथा पेट में कब्ज होने से मल-मूत्र विसर्जन में कष्ट का अनुभव होता है॥३०॥

वारों के अनुसार स्वरों की शुभता के सम्बन्ध में महात्मा चरणदासजी कहते हैं—

मंगल अरु इतवार दिन और शनीचर लीन।
शुभकारज कों मिलत हैं सूरज के दिनहीन॥
सोमवार शुक्कर भलो दिन बृहस्पति को देखि।
चन्द्रयोग में सुफल हैं चरणदास वीशेखि॥ (१३-१४)
गुरुशुक्रबुधेन्दूनां वासरे वामनाडिका।
सिद्धिदा सर्वकार्येषु शुक्लपक्षे विशेषतः॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अर्काङ्गारकसौरीनां वासरे दक्षनाडिका ।
स्मर्तव्या चरकार्येषु कृष्णपक्षे विशेषतः ।।

(शिवस्वरोदयः ६९-७०)

वारानुसारप्रतिकूलस्वराणां फलम्

श्वासस्य प्रतिकूलता यदि दिने भानोर्वपुर्वेदना,
शीतांशोः कलहः कुजस्य मरणं दूरप्रयाणं विदः ।
राज्यापद्धिषणस्य शुक्रदिवसे कार्यस्य कस्यापि नो
सिद्धिर्मन्ददिने स्ववीर्यकृषिनाशोऽधिवादादयः ।। ३१।।

इस श्लोक मे प्रतिवार को प्रतिकूल स्वर चलने का फल बतलाते हैं ।

यदि रविवार को प्रतिकूल श्वास (चन्द्रस्वर) चले तो शरीर में वेदना होती है । सोमवार को प्रतिकूल स्वर (सूर्यस्वर) चलने पर कलह होता है । इसी प्रकार प्रतिकूल स्वर चलने पर मंगल को मृत्यु, बुध को दूर की यात्रा, गुरु को शासन पक्ष से परेशानी, शुक्र को असफलता तथा शनिवार को कृषि की हानि, शक्ति की क्षीणता, नौकरों से कष्ट तथा भूमि से सम्बन्धित विवाद उत्पन्न होता है ।।३१।।

वारानुसारप्रतिकूलस्वरबोधकचक्रम्

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	
वाम	दक्षिण	वाम	दक्षिण	दक्षिण	दक्षिण	वाम	प्रतिकूल स्वर
शरीरकष्ट	कलह	मृत्युतुल्य कष्ट	दूर की यात्रा	राजकष्ट	असफलता	कृषिहानि भृत्यहानि	फल

वारानुसार–अष्टदिनात्मकस्वरनिरन्तरताफलम्

वायुर्भानुदिनाष्टके यदि चरेद् वामे गुरोः पञ्चता
व्याधिर्वा सुमहांस्तथैव हिमगोर्वाराष्टके दक्षिणे ।
पुत्रापत् क्षितिजस्य बन्धनमरेर्वामे विदो दक्षिणे
मृत्युः स्वस्य निरन्तरं सुरगुरोर्मृत्युर्गुरोः सम्भवेत् ।। ३२।।
शुक्रस्यावनिहेतुर्धनक्षयो दक्षिणे शनेर्वामे ।
यदि चरति मातरिश्वा भार्यानाशो निवासनाशो वा।। ३३।।

यदि रविवार के दिन से वामस्वर (विपरीत स्वर) चलना प्रारंभ होकर निरन्तर आठ दिन तक चलता रहे तो गुरु की मृत्यु होती है (गुरु से तात्पर्य शिक्षक, सम्माननीय, माता-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पिता आदि है) अथवा कठिन रोग या विपत्ति आती है । इसी प्रकार निरन्तरता से सोमवार से लगातार आठ दिनों तक दक्षिण स्वर चलता रहे तो पुत्र को या पुत्र से कष्ट प्राप्त होता है । मंगलवार के दिन से निरन्तर आठ दिनों तक वामस्वर चलने पर शत्रु द्वारा या अन्य प्रकार से बन्धन (अपहरण, कारावास आदि) होता है । बुधवार से आठ दिनों तक लगातार दक्षिण स्वर चलने पर जिसका स्वर चलता है उसकी स्वंय की मृत्यु होती है । गुरुवार से आठ दिन तक निरन्तर दक्षिण स्वर चलने पर गुरु या गुरुजन की मृत्यु होती है । शुक्रवार से अनवरत रूप से आठ दिनों तक दक्षिण स्वर चलने पर धनहानि होती है तथा शनिवार के दिन से लगातार आठ दिवस तक वामस्वर चलने पर पत्नी, प्रेमिका या घर-गृहस्थी की हानि होती है ॥३२-३३॥

श्वासस्य प्रमाणेन तत्त्वज्ञानम्

मेदिन्याः खलु षोडशाङ्गुलमपां दैर्घ्यं दिनेशाङ्गुलं
वह्नेर्दन्तिमिताङ्गुलं मरुत एतद्व्यूनमग्न्यङ्गुलम् ।
आकाशस्य च वेद्यमेतदुदितं भूम्यादिभूतात्मक-
स्वीयश्वासगतिप्रमाणमुभयोरेतत्समं घ्राणयोः ॥ ३४॥

अब नाक से लेकर अंगुलात्मक दूरी के अनुसार पंच तत्त्वों में कौन-सा तत्त्व स्वर में सञ्चार कर रहा है इसका ज्ञान कराते हैं—

पृथ्वीतत्त्व के प्रवाह काल में श्वास की लम्बाई सोलह अंगुल होती है । आप् (जल)-तत्त्व में बारह अंगुल दीर्घ श्वास चलती है । वह्नि (अग्नि) तत्त्व में श्वास नासिका से आठ अंगुल की दूरी तक चलता है । मरुत् (वायु) तत्व के संचरित होने पर श्वास अग्नितत्त्व से दो अंगुल न्यून अर्थात् छह अंगुल दूर तक जाता है । आकाशतत्त्व के उदित होने पर श्वास की गति का प्रमाण अग्नि अंगुल (तीन अंगुल) होता है । दोनों नासिकाछिद्रों से निकलने वाले वायु की गति की दूरी के अनुसार पृथ्वी आदि पंचभूतों का ज्ञान करना चाहिये ॥३४॥

मतान्तर—इस ग्रन्थ में स्वरों की लम्बाई की माप दी गई है, उससे अन्य ग्रन्थों में भिन्नता है तथा उन ग्रन्थों में भी एकरूपता नहीं है ।

उज्जयिनी के पण्डित दीनानाथ मिश्र द्वारा शकाब्द १७७२ (आज से १५३ वर्ष पूर्व) रचित ग्रंथ में पृथ्वीतत्त्व का माप सोलह, जल का बारह, अग्नि का आठ, वायु का चार तथा आकाश का कोई माप नहीं— ऐसा लिखा है ।

सोमयाजी रामचन्द्र विरचित 'समयसार' (मुम्बई से प्रकाशित) की टिप्पणी में तत्त्वों का प्रमाण निम्न प्रकार से दिया है—

"वामे वा दक्षिणे वापि धराष्टाङ्गुलदीर्घिका ।
षोडशाङ्गुलमापाः स्युस्तेजश्च चतुरङ्गुलम् ॥१॥
द्वादशाङ्गुलदीर्घः स्याद् वायुर्व्योमाङ्गुलेन हि" ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शिवस्वरोदय के अनुसार वायु आठ अंगुल, अग्नि चार अंगुल, पृथ्वी बारह अंगुल तथा जल का प्रमाण सोलह अंगुल है । यथा—

"अष्टाङ्गुलं वहेद्वायुरनलश्चतुराङ्गुलम् ।
द्वादशाङ्गुलमाहेयं वारुणं षोडशाङ्गुलम्"॥

(शिवस्वरोदय, श्लोक १५८)

महात्मा चरणदास अपने दोहों में शिवस्वरोदय का ही समर्थन करते हैं । नीचे विभिन्न मतों का चक्र दिया जा रहा है ।

स्वरतत्त्वदैर्घ्यचक्रम्

पृथ्वी	जल	अग्नि	वायु	आकाश	तत्त्व
१६	१२	८	६	३	प्रश्नमार्ग के मत से अंगुल
१२	१६	४	८	X	शिवस्वरोदय के मत से अंगुल
८	१६	४	१२	X	समरसार की टिप्पणी के मत से अंगुल
षोडश	द्वादश	अष्ट	चतुरंगुल	X	दीनानाथ के मत से अंगुल
१२	१६	४	८	X	ज्ञानस्वरोदय के मत से अंगुल

धरती अरु आकास है और तीसरी पौन।
पानी पावक पांचवों करत श्वास में गौन ॥३५॥

(ज्ञानस्वरोदय)

पक्षानुसारेण नाडीतत्त्वानां फलम्

पक्षेऽच्छे खलु पक्षतौ क्षितिरिडायातोन्नमन्मन्दिर-
प्राकारादिगृहप्रवेशनकरी पट्टाभिषेकप्रदा ।
कुर्यादन्यदपीष्टकर्म सलिलं वामस्थमेवं शुभं
कूपादे रचनं करग्रहणमम्बूत्थं च कुर्याद् भयम् ।। ३५।।
वह्निर्वारिभयायुधक्षतिशरीरारुर्गृहप्लोषणं,
पातं वा शिशुकादिकस्य दहने कुर्याद् भजेतेश्वरम् ।
वायुश्चोरभयं पलायनमपि स्थानं विमृज्यात्मनो,
दन्त्यश्वाद्यधिरोहणं च वितरेद् व्योमोदयश्चेत्पुनः ।। ३६।।
मन्त्रादेरुपदेशलब्धिरसकृद्देवप्रतिष्ठापनं
दीक्षा व्याधिसमुद्भवश्च नितरां पीडा तनोः सन्ततम् ।
विज्ञेयं खलु भूतपञ्चकफलं नाड्योः समं चोभयोः
श्वासः संहतदीर्घ इष्ट उदितः शीर्यच्छिखो नेष्टदः ।। ३७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अच्छ (शुक्ल) पक्ष की पक्षती (प्रतिपदा) को श्वासस्वरों की नाड़ी के संचार के तत्त्वानुसार फल इस प्रकार होते हैं—यदि उस दिन इडा नाड़ी में क्षिति (पृथ्वी) तत्त्व चल रहा हो तो आवास के लिए भव्य सुविधायुक्त बहुमंजिले भवन की प्राप्ति होती है तथा उच्च पद एवं सम्मान मिलता है, शपथग्रहणादि होता है । यदि सलिल (जल) तत्त्व इड़ा नाड़ी में चल रहा हो तो शुभ फल होता है; कूप, जलाशय, नलकूप आदि का निर्माण होता है । विवाहादि होता है ॥३५॥

यदि उस दिन वह्नि (अग्नि) तत्त्व चल रहा हो तो अग्निभय, शत्रुभय अथवा शस्त्रभय या शस्त्राघात होता है; शरीर में जलन, घर में अग्निकाण्ड, बालकों का अग्निदग्ध होना आदि अशुभ फल होते हैं । इनसे बचने के लिए उस दिन देवाराधन, ध्यान, भजन आदि करना चाहिए । यदि वायु तत्त्व उस दिन चलता हो तो चौरभय, पलायन द्वारा स्थान त्याग, वाहन सुख की प्राप्ति होती है ॥३६॥

व्योमतत्त्व (आकाश) का उदय होने पर मंत्रोपदेश प्राप्त होता है, यज्ञ-यागादि धार्मिक अनुष्ठानों का आयोजन होता है । देवताओं की प्रतिष्ठा, देवालयादि का निर्माण या जीर्णोद्धार होता है । लेकिन शरीर में व्याधि उत्पन्न होती है, पीड़ा होती है । यह फल तत्त्वों का है । इन तत्त्वों के वाम या दक्षिण किसी भी नाड़ी में उदय होने पर समान फल होता है ।

यदि श्वास संहतदीर्घ (छोर तक पूर्ण वेग वाला) हो तो फल शुभ होता है परंतु यदि इन तत्त्वों का श्वास शीर्णाग्र (आगे की ओर जिसका बल कम होता जाय) तो फल शुभ नहीं होता ॥३७॥

यद्यपि श्लोक ३७ में ग्रन्थकार ने उक्त शुक्ल प्रतिपदा को दोनों नाड़ियों में तत्त्वों का फल समान कहा है,उसे मेरी समझ में तो श्लोक ३५-३६ के अनुसार केवल वामनाड़ी चलने पर ही लागू करना चाहिए । श्लोक ३७ का वास्तविक आशय यह है कि कृष्ण पक्ष में प्रतिपदा को सूर्यनाड़ी (दक्षिण = पिंगला) चलने पर तत्त्वों का यही फल होगा जो कि शुक्ल पक्ष में इडा नाड़ी के तत्त्वों का होता है । जैसा कि महात्मा चरणदास कहते हैं—

"कृष्ण पक्ष जबहीं लगै जाय मिलत है भान ।
शुक्ल पक्ष है चन्द्र कौ यह निश्चिय करि जान ॥ दोहा १२ ॥
शुक्लपक्ष चन्दा चलै परिवा लेहि निकारि ।
फल आनन्द मंगल करै देही कौ सुख सारि ॥ दोहा १९ ॥
शुक्ल पक्ष तिथि में चलै जो परिवा कौ भानु ।
होय क्लेश पीडा कछू कै दुख कै कछु हान ॥ दोहा २० ॥
कृष्ण पक्ष तिथि में चलै जो परिवा को चन्द ।
कलह करै पीडा करै हानि ताप कै द्वन्द" ॥ दोहा २७ ॥

स्वरोदय ग्रन्थों के अनुसार शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को स्वाभाविक रूप से चन्द्रस्वर (इडा) ही चलना चाहिए । यह तीन दिन तक लगातार चलता है । फिर तीन दिन सूर्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वर (दक्षिण) स्वर चलता है, फिर तीन दिन वाम स्वर चलता है, फिर तीन दिन सूर्य, फिर तीन दिन चन्द्र—स्वर यह स्वाभाविक क्रम माना गया है। यह स्थिति प्रात:काल की होती है। यही स्थिति शुभ मानी गयी है। यथोक्तं शिवस्वरोदये—

"आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करौ हि सितेतरे।
प्रतिपत्तो दिनान्याहुस्त्रीणि त्रीणि कृतोदया।। श्लोक ६२।।
शुक्लपक्षे भवेद्वामा कृष्णपक्षे च दक्षिणा।
जानीयात् प्रतिपत्पूर्वं योगी तद्यतमानसः" ।। श्लोक ६५।।
"आदौ चन्द्रस्सिते पक्षे भास्करस्तु सितेतरे।
प्रतिपद्युदितोऽहानिस्त्रीणि त्रीणि क्रमोदयः ।।१।।
चन्द्रोदये यदा सूर्यः चन्द्रः सूर्योदये यदा।
अशुभं हानिरुद्वेगः शुभं सर्वं निजोदये"।।२।।
(समरसारटीका)

स्वरोदयेन नष्टवस्तुज्ञानम्

भूमौ निखातमवनेरुदये जलेऽपां
वातस्य धूमवति खस्य तथोर्ध्वदेशे।
भूपृष्ठगं हुतभुजः खलु वास्तु नष्टं
ब्रूयात् कृतेह यदि नष्टपदार्थपृच्छा।। ३८।।

यदि नष्ट वस्तु के सम्बन्ध में प्रश्न हो तब यदि ज्योतिषी का पृथ्वी तत्त्व चल रहा हो तो नष्ट वस्तु भूमि में गड्ढे आदि में हैं ऐसा बताना चाहिए। जल तत्त्व का उदय होने पर जल के समीप (नदी, तालाब, कूप, हैण्डपम्प, नल, टंकी, होज आदि) या भीतर होगी। वायु तत्त्व के उदय होने पर धुँवावाले स्थान (रसोई, चिमनी, अलाव, चूल्हा, हवनकुण्ड आदि) में; आकाश तत्त्व के उदय होने पर नष्ट वस्तु ऊँचे स्थान पर छत, आलय या आलयमालिका आदि में या वृक्षादि पर होती है, ऊँचे टीले आदि पर भी हो सकती है। अग्नि तत्त्व के उदय में नष्ट वस्तु भूपृष्ठ (जमीन की ऊपरी सतह) पर ही होती है। नष्ट वस्तु के सम्बन्ध में इसी प्रकार विचार करे ।।३८।।

स्वरेण पृच्छकस्य दीर्घायुष्यादिज्ञानम्

भागे यत्र मरुत्स्थितिः पुनरिह क्षोण्या जले वा यदा,
भागे तत्र तदेक्ष्यते यदि पुमान् ज्योतिर्विदा कश्चन।
दीर्घायुर्गुणवत्कलत्रतनयः पुष्यद्धनश्चाधिकं
विज्ञेयः स तथा स्त्रियोऽपि विपरीतेतत्फलं चान्यथा।। ३९।।

दैवज्ञ के वाम या दक्षिण जिस भाग में मरुत् (स्वर वायु) की स्थिति हो अर्थात् जिस ओर का दैवज्ञ का स्वर चल रहा हो और उसी ओर से पृच्छक आता हुआ दिखायी दे, साथ ही उस समय पृथ्वी या जल तत्त्व का उदय हो तो पृच्छक दीर्घायु तथा गुणवान् पत्नी, पुत्र तथा धनाधिक्य से युक्त होगा। यदि पृच्छक स्त्री हो तो वह धनी गुणी पति-पुत्रादि से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

युक्त होगी। परन्तु यदि इस समय यदि प्रश्नकर्त्ता की ओर की नाड़ी में अग्नि, वायु या आकाश तत्त्व चल रहा हो तो फल विपरीत होता है अर्थात् प्रश्नकर्त्ता उत्तम स्त्री-पुत्रादि से रहित होता है। यदि जिस ओर का स्वर चल रहा है उससे विपरीत भाग की ओर से पृच्छक का आगमन हो तो भी पृच्छक के लिए इस प्रकार की रिक्त नाड़ी भले ही पृथ्वी-जलतत्त्व युक्त क्यों न हो अशुभ फलप्रद होगी ॥३९॥

नाडीभेदकथनम्

इडा वामा भवेन्नाडी सोमस्यार्कस्य दक्षिणा।
पिङ्गलाख्या सुषुम्नाख्या मध्यमाग्नेरुदीरिता ॥ ४० ॥

इडा नाड़ी वामा है, यह सोम (चन्द्रमा) की नाडी है। सूर्य की नाडी दक्षिणा है, वह पिङ्गला कही जाती है। इन दोनों के बीच में सुषुम्णा नाडी है जो अग्नि की नाडी कही गयी है ॥४०॥

नाडीषु प्रशस्तकृत्यानि

निर्गमे तु शुभदा भवेदिडा पिङ्गला तु शुभदा प्रवेशने।
योगसाधनविधौ तु मध्यमा शस्यते न तु परेषु कर्मसु ॥ ४१ ॥

यात्रा कार्य में प्रस्थान (Departure) हेतु इडा नाड़ी प्रशस्त है। पिङ्गला नाड़ी गृहप्रवेश, नगरप्रवेश, वधूप्रवेश, ग्रामप्रवेश आदि में शुभ फलदायक है। योगसाधन के कार्यों में सुषुम्णा नाड़ी शुभ होती है। योगसाधना के अतिरिक्त अन्य कार्यों में सुषुम्णा नाड़ी अशुभ फलकारक ही है ॥४१॥

तात्पर्य यह है कि सुषुम्णा नाडी के चलते कोई भी सांसारिक कृत्य नहीं करना चाहिए अन्यथा वह निष्फल ही होगा। उस समय किये गये प्रश्न का उत्तर भी अशुभ ही होता है—

"क्षणं वामे क्षणं दक्षे यदा वहति मारुतः।
सुषुम्णा सा विज्ञेया सर्वकार्यहरा स्मृता ॥
क्षणं वामे क्षणं दक्षे विषमं भावमादिशेत्।
विपरीतं फलं ज्ञेयं ज्ञातव्यञ्च वरानने ॥
तस्या नाड्यां स्थितो वह्निर्ज्वलते कालरूपकः।
विषवन्तं विजनीयात् सर्वकार्यविनाशनम् ॥
उभयोरेव सञ्चारं विषवत्तं विदुर्बुधाः।
न कुर्यात्क्रूरसौम्यानि तत्सर्वं विफलं भवेत् ॥

(शिवस्वरोदय)

स्वरोदयेन रोगज्ञानम्

देवे दक्षिणभागगेऽथ पुरुषो रोगातुरो दक्षिणे
स्थित्वा पृच्छति पृच्छकेऽथ पुरुषो जीवत्यरोगश्चिरम्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वामायां तु रुजाकुलीकृततनौ वामाश्रिते चेश्वरे
वामे पृच्छति चेद्दृढं गतगदा वामा चिरं जीवति ।। ४२।।

(१) यदि पुरुष रोगी हो, दाहिना स्वर चल रहा हो तथा रोगी या उसका पृच्छक दूत भी दाहिनी ओर ही बैठकर पूछ रहा हो तो वह रोगी शीघ्र ही आरोग्य लाभ करेगा और दीर्घायु होगा। (२) यदि स्त्री रोगी हो और उस समय दैवज्ञ का वाम स्वर चल रहा हो, रोगिर्णा या उसकी ओर से आया पृच्छक भी दैवज्ञ के वाम भाग में बैठकर प्रश्न पूछे तो वह रुग्णा सुनिश्चित रूप से चंगी होकर दीर्घकाल तक जीवित रहेगी ।।४२।।

देवे गते पृच्छति वामभागे
स्थितो नरो दक्षिणतो यदि स्यात् ।
व्यत्यासतोऽस्मादपि कृच्छ्रसाध्यं
वदन्ति सन्तः खलु रोगजातम्।। ४३।।

यदि दैवज्ञ का वाम स्वर चल रहा हो और पृच्छक दक्षिण भाग में बैठकर प्रश्न करे। अथवा इसके विपरीत स्थिति में अर्थात् दैवज्ञ का दक्षिण स्वर चलता हो और प्राश्निक वाम भाग में बैठकर प्रश्न पूछे तो विद्वानों के अनुसार रोग कष्टसाध्य होता है ।।४३।।

अन्तर्गते पृच्छति पृच्छकश्चेद्देवे नरो जीवति वीतरोगः।
तेनैव मार्गेण बहिर्गतश्चेत् परेतराजस्य पुरीं प्रयाति।। ४४।।

जिस समय दैवज्ञ की श्वास भीतर जा रही हो उस समय पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछा जाय तो रोगी जीवित रहेगा तथा उसका रोग भी दूर हो जाता है। इसके विपरीत यह श्वास के निर्गम के समय पृच्छक ने दैवज्ञ को प्रश्न पूछा हो तो रोगी परेतराज (यम) की पुरी को जाता है ।।४४।।

वामे वा दक्षिणे भागे प्रश्नश्चेद् वायुसंयुते ।
जीवेन्नरश्च नारी च तथानुष्ठानपद्धतिः ।। ४५।।

दैवज्ञ का जिस ओर का स्वर चल रहा हो उसी ओर से प्रश्न पूछा जाय तो वह स्त्री-पुरुष अनुष्ठान का आयोजन करने पर जीवित रहता है। यहाँ स्त्री के लिए वाम भाग तथा स्वर उत्तम होता है। तथैव पुरुष रोगी के लिए दक्षिण स्वर एवं पृच्छक की दक्षिण स्थिति शुभकारक होती है ।।४५।।

स्वरशकुनाभ्यां रोगविचारः

लयलिङ्गश्रवणेक्षास्मरणाभावे तु दूतमारुतयोः।
एकदिशावस्थाने जीवति रोगी विपर्यये म्रियते।। ४६।।

यदि पृच्छक दूत और स्वर दोनों ही एक दिशा में हों तथा वहाँ मृत्यु के चिह्न दर्शन, श्रवण या स्मरण में न आवें तो रोगी जीवित रहता है। यदि विपरीत स्थिति हो अर्थात् रोगी का दूत तथा दैवज्ञ का स्वर दोनों भिन्न दिशा में हों तथा मृत्यु के चिह्न देखने, सुनने या स्मरण में आवें तो रोगी जीवित नहीं रहता है ।।४६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पक्षभेदे रोगिप्रश्नः

अग्रे वामेऽपि च यदुपरि स्थायिना पृच्छ्यमानं
शुक्ले पक्षे तदिह सकलं लभ्यते चन्द्रचारात् ।
पृष्ठेऽधस्तान्नियतमसिते दक्षिणे सूर्यचाराद्
आत्मावस्था सदृशमखिलं पृच्छकस्यापि वाच्यम् ।। ४७।।

यदि शुक्लपक्ष में आया पृच्छक सामने, वाम भाग में या ऊँचे स्थान में बैठकर प्रश्न पूछे और उस समय चन्द्र स्वर का संचार हो रहा हो तो पृच्छक को सब कुछ मिलता है (और रोगी अच्छा हो जाता है) । यदि कृष्णपक्ष में सूर्य स्वर के संचार करने पर पृच्छक पीछे से, दक्षिण भाग से या नीचे से प्रश्न पूछे तो भी पृच्छक को सब कुछ मिलता है । प्रश्न के समय दैवज्ञ यदि प्रसन्न है तो पृच्छक को भी शुभ फल मिलेगा । यदि दैवज्ञ खिन्न है तो प्राश्निक को अशुभ फल मिलेगा ऐसा जानना चाहिए ।।४७।।

अनुभूतिसाम्यम्

स्नानभोजननिद्रादिनिजकर्मसु यादृशः ।
आत्मनोऽनुभवस्तेषु तादृशः प्रष्टुरुच्यताम् ।। ४८।।

अपने दैनिक क्रियाकलापों में स्नान, भोजन, निद्रादि में दैवज्ञ को जैसी सुखात्मक अनुभूति हो रही हो वैसी ही स्थिति प्रश्नकर्त्ता को भी होगी ।।४८।।

जो दैवज्ञ गीता के अनुसार आचरण करता होगा, सभी प्राणियों को अपने समान समझता होगा ("आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पण्डितः") वही ऐसा अनुभव कर सकता है । महापुरुषों की अनुभूति इसी कोटि की होती है । श्रीरामकृष्ण परमहंस की अनुभूति ऐसी ही थी ।

पुनश्च दूतस्थितिफलम्

यत्र कुत्र स्थितः पृष्ट्वा पुनर्दूतः समारुते ।
स्थिरस्तिष्ठति चेद्रोगी जीवत्येव न संशयः ।। ४९।।

भले ही रोगी का दूत किसी भी दिशा में आकर प्रश्न करे परन्तु वह दैवज्ञ से उसी दिशा में जाकर बैठा या खड़ा हो जिधर का स्वर चल रहा हो तो दूत के स्थिर होने की स्थिति में असन्दिग्ध रूप से रोगी जीवित रहेगा (रोगमुक्त भी हो जायेगा) ।।४९।।

इस श्लोक का तात्पर्य है कि दूत प्रश्न पूछ कर उसी दिशा में जाकर स्थिर (खड़ा या बैठा हुआ) हो जिस ओर का स्वर चालू हो तो रोगी चंगा होगा । यहाँ फल उसके स्थिर होने का है भले ही वह प्रश्न किसी भी दिशा में से पूछे ।

नष्टवस्तुदिग्ज्ञानम्

ऐन्द्र्याद्यास्तु दिशो ज्ञेयाः पृथिव्याद्युदयैः क्रमात् ।
आकाशोदयतो मध्यं नष्टं तत्रैव वा स्थितम् ।। ५०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि नष्ट वस्तु के प्रश्नकाल में पृथ्वी तत्त्व का उदय हो तो नष्ट वस्तु पूर्व दिशा में, जल तत्त्व के उदय में नष्ट वस्तु दक्षिण दिशा में, अग्नि तत्त्व के उदय होने पर पश्चिम दिशा में, वायु तत्त्व का उदय होने पर उत्तर दिशा में तथा आकाश तत्त्व के उदय में नष्ट वस्तु या तो मध्य में होती है अथवा उसी स्थान पर जिस पर वह रखी थी, अदृष्ट होती है ॥५०॥

तत्त्वानुसार नष्ट वस्तु के दिशा ज्ञान का चक्र

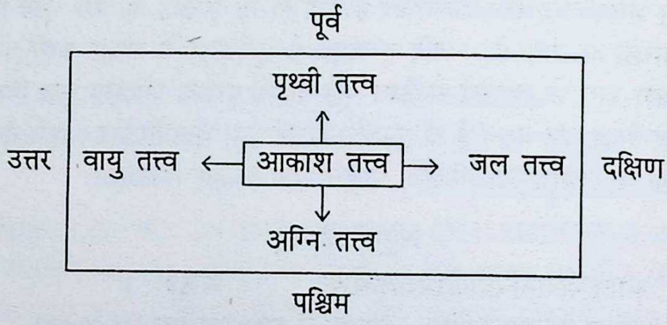

वारपक्षभेदन शुभाशुभत्वम्

शुभवारे शुक्लपक्षे सिद्धिदा वामनाडिका।
पापवारे कृष्णपक्षे नाड्यन्या सिद्धिदाधिकम्॥ ५१॥

शुभ ग्रहों के वार (सोम, बुध, गुरु, शुक्र) में तथा शुक्ल पक्ष में वामनाड़ी सिद्धिदायक होती है। पाप ग्रहों के वार (सूर्य-मंगल-शनि) में तथा कृष्णपक्ष में विशेष रूप से दक्षिण नाडी सफलतादायक होती है ॥५१॥

देहस्वराज्जयपराजयज्ञानम्

गृहाच्चन्द्रेण निर्यातः प्रविष्टो भानुना रणे।
शून्याङ्गे वैरिणं कृत्वा कातरोऽपि जयी भवेत्॥ ५२॥
निष्क्रान्तो भानुना गेहात् प्रविष्टः शशिना रणे।
जीवांशे यस्य वा शत्रुः स शूरोऽपि विनश्यति॥ ५३॥

लड़ने वाला योद्धा घर से चलते समय यदि चन्द्रस्वर में प्रस्थान करे तथा सूर्यस्वर के चलते हुए युद्धभूमि में प्रवेश करे एवं रिक्त (शून्य = जिस ओर वायु का संचार न हो) अंग की ओर शत्रु को करके युद्धारंभ करे तो कायर भी युद्ध में विजयी होगा ॥५२॥

यदि योद्धा सूर्यस्वर में घर से निकले और चन्द्रस्वर में युद्धभूमि में प्रविष्ट होकर युद्धारंभ करे तथा जीवांश (पूर्ण स्वर) की ओर शत्रु को क़रके लड़े तो ऐसी स्थिति में शूरवीर भी पराजित होता है ॥५३॥

दस्यवः शत्रवो भूपाः कितवा व्यवहारिणः।
एते शून्यगताः सौम्याः पूर्णस्था भयदाः स्मृताः॥ ५४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चोर, लुटेरे, डाकू, उठाइगीरे, आतङ्कवादी, गुण्डे, राजागण, जुवारी, दीवानी मुकद्दमों के प्रतिद्वन्द्वी यदि शून्य (खाली) स्वर की तरफ हो तो दुर्बल हो जाते हैं परन्तु पूर्ण स्वर की ओर हों तो ये सबल तथा भयदायक होते हैं ।।५४।।

सूर्यनाडीप्रशंसाकथनम्

विवादे द्यूतयुद्धे च स्नानभोजनमैथुने।
व्यवहारे भये भङ्गे भानुनाडी प्रशस्यते ।। ५५।।

न्यायालयीन विवाद, वाद-विवाद, वकीलों की बहस, जुआ, युद्ध, स्नान, भोजन तथा मैथुन में; दीवानी न्यायालय में, भय में, व्यापारादि में तथा उत्साहभंग में दक्षिण स्वर शुभ होता है ।।५५।।

वामनाड्या प्राशस्त्यम्

यात्रादानविवाहेषु वस्त्रालङ्कारभूषणे ।
शुभे सन्धौ प्रवेशे च वामनाडी प्रशस्यते ।। ५६।।

यात्रा, दानकर्म, विवाह, वस्त्रालङ्कार धारण, शुभकर्मों में सन्धि (मेल-मिलाप) में, गृहप्रवेशादि में वाम नाड़ी प्रशस्त है ।।५६।।

स्वरोपरि गर्भप्रश्नविचारः

गर्भिणीदर्शने वायुर्दक्षिणे चेत्पुमान् वधूः।
गर्भस्था वामभागे चेद् द्वयोर्नो चेदसत्प्रजा ।। ५७।।
गर्भे मे किमिति प्रश्ने सवायौ गर्भिणी यदि।
पुमान् स्त्री वीरणे भागे युग्मं वायुर्द्वयोर्यदि ।। ५८।।

जब दैवज्ञ को गर्भिणी दिखायी दे अथवा जब गर्भप्रश्न का विचार किया जा रहा हो उस समय दक्षिणा नाड़ी प्रवाहित हो तो पुत्र होगा, यदि वामा नाड़ी प्रवाहित हो तो कन्या होगी । यदि दोनों नाड़ी (सुषुम्णा) चले तो नपुंसक (Hermaphrodite) जन्मता है या मृत शिशु जन्म लेता है ।।५७।।

जब मेरे गर्भ में क्या है ? यह प्रश्न पूछा जाय तब गर्भिणी यदि दैवज्ञ के पूर्ण स्वर की ओर हो तो पुत्र है ऐसा बताये । यदि रिक्त स्वर की ओर गर्भिणी हो तो कन्या बतानी चाहिए । यदि उभय स्वरों (दोनों तरफ) हो तो गर्भ में युगल गर्भ है ऐसा कहे ।।५८।।

श्लोक में 'वीरणे भागे' शब्द प्रयोग है जिसका अर्थ वीरान भाग (शून्य या रिक्त) होता है ।

कार्यसिद्धियोगः

निर्गत्य शशिना गेहात् प्राप्यं प्राप्तस्य भानुना।
कार्यस्य दुर्लभस्यापि लाभः स्यादप्रयत्नतः ।। ५९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि कोई व्यक्ति कार्यसिद्धि हेतु घर से चन्द्रस्वर में निकले तथा सूर्यस्वर में कार्य स्थल पर प्रवेश करे तो उसे बिना प्रयत्न लाभ होता है और कठिन कार्य में भी सफलता प्राप्त होती है ॥५९॥

शिवस्वरोदय में भी दूर की यात्रा हेतु निर्गम चन्द्र स्वर में तथा प्रवेश सूर्यस्वर में सिद्धिप्रद कहा है—

"दूराध्वनि शुभश्चन्द्रो निर्विघ्नोऽभीष्टसिद्धिदः ।
प्रवेशकार्यहेतौ च सूर्यनाडी प्रशस्यते" ॥ (श्लोक ९८)

शत्रुरागमनप्रश्नः

रिपोरागमनप्रश्ने वामगे मातरिश्वनि ।
नागमोनुक्तसिद्धैव तदागतिरतोऽन्यथा ॥ ६० ॥

शत्रु आयेगा या नहीं ? इस प्रश्न में यदि मातरिश्वा (वायु) वामा नाड़ी से चल रही हो तो 'शत्रु नहीं' आता है । यदि दैवज्ञ का दक्षिण स्वर चलता हो तो शत्रु आयेगा यह तथ्य स्वतः सिद्ध है ॥६०॥

अङ्कयुद्धप्रश्नः

अङ्कयुद्धे ममैतस्मिन् जयो किं वा पराजयः ।
प्रश्नोऽयं पूर्णभागे चेज्जयोऽन्यत्र पराजयः ॥ ६१ ॥

अङ्कयुद्ध में जय-पराजय के प्रश्न में प्रश्नकर्त्ता यदि पूर्ण स्वर की ओर स्थित होकर प्रश्न करता है तो जीत होगी । यदि रिक्त स्वर की ओर से प्रश्न पूछता है तो पराजय होगी ॥६१॥

अङ्कयुद्धे विजयार्थे स्वरोपयोगमाह

सन्नहनं निर्गमनं खलूरिकारहणं च शुभमिडया ।
पिङ्गलया च पुनरितरं प्रहरति यदि वामगं जयो नियतम् ॥ ६२ ॥
इडयाप्यारूढवतः खलूरिकामेनयैव पुनरपि चेत् ।
चरति मरुन्नैव जयः प्राग्वोदक्स्थीयतां तदा तस्याम् ॥ ६३ ॥

इडा नाड़ी में अङ्कयुद्ध के लिए सन्नहन (तैयारी करना), प्रस्थान तथा खलूरिका (खेल या परेड का मैदान) में प्रवेश करना शुभ है । जो अङ्कयोद्धा पिंगला नाड़ी चलते समय अपने बाँयें भाग में स्थित प्रतिद्वन्द्वी पर प्रहार करता है तो उसकी जीत सुनिश्चित है ॥६२॥

अङ्कयुद्धार्थ खलूरिका को प्रस्थान तो शुभ होता है परन्तु युद्ध के समय स्वर बदल कर दक्षिण होना आवश्यक है अन्यथा जीत नहीं होगी । अतः यदि दक्षिण नाड़ी न चले वाम नाड़ी ही चलती रहे तो विजयार्थी को प्रतिद्वन्द्वी से पूर्व या उत्तर में रहना चाहिए ॥६३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अङ्कयुद्ध—खेल-खेल में शत्रुतारहित भाव से जो युद्ध या क्रीड़ा-प्रतियोगिताएँ होती हैं उन्हें प्राचीन काल में अङ्कयुद्ध या केलियुद्ध कहा जाता था। इनमें मैत्रीपूर्ण मुकाबला होता है।

खलूरिका—क्रीड़ाङ्गण, परेड के मैदान, स्पोर्ट्स स्टेडियम आदि के लिए संस्कृत में खलूरिका शब्द का प्रयोग होता है। इन अखाड़ों को अंग्रेजी में Arena, Ring आदि तथा लैटिन में Harena तथा Hring कहते हैं।

स्वराङ्गुलैः सन्ततिविचारः

वायोराकाशसञ्चारो गर्भस्थमृतिसूचकः।
पृष्ट्वा सवायावन्यत्र स्थितौ चाऽसत्प्रजां वदेत्॥ ६४॥

यदि प्रश्नकाल में वायु तत्त्व या आकाश तत्त्व का सञ्चार स्वर में हो रहा हो तो वह गर्भ की मृत्यु का सूचक है। यदि पृच्छक वायु-पूर्ण स्वर की ओर से प्रश्न करके रिक्त स्वर की ओर चला जाय तो भी मृत सन्तति होगी ॥६४॥

पृच्छकचेष्टा(स्पर्श)फलम्

प्रष्टा वक्षोदेशे स्पृशेद्यदि क्षिप्रमीप्सितं लभते।
मङ्गलवस्तूनि च तथा विपरीतं फलममङ्गलस्पर्शे॥ ६५॥
संस्पृशन्नाभिनासास्यकेशरोमनखद्विजान्।
गुह्यपृष्ठस्तनग्रीवाजठरानामिकाङ्गुलीः॥ ६६॥
रन्ध्राणामपि नवकं करपदयोस्तलञ्च सर्वपर्वाणि।
प्रष्टा लभतेऽनिष्टं निम्नस्पर्शे तथैव विज्ञेयम्॥ ६७॥

यदि प्राश्निक अपने वक्ष का स्पर्श करे तो उसका कार्य शीघ्र सफल होता है। यदि वह मांगलिक वस्तुओं में से किसी का भी स्पर्श करे तब भी उसका कार्य सिद्ध होता है (धर्मग्रन्थ, हल्दी, कुंकुम, नारियल, अक्षत, पुष्प, जलपूर्ण कलश, दही, दूध, घी, गाय—ये सब मांगलिक पदार्थ हैं)। इसके विपरीत मलिन घृणास्पद अपवित्र वस्तुओं का स्पर्श अमाङ्गलिक होने से कार्य को असफल करता है (अस्थि, नख, चर्म, केश, रक्त, फूटा बर्तन, फटा वस्त्र आदि अमांगलिक पदार्थ हैं) ॥६५॥

जो पृच्छक अपनी नाभि (Navel), नासा, मुख, केश, रोम, नख, द्विज (दाँत), गुप्तांग, पीठ, स्तन, ग्रीवा, पेट, अनामिका अंगुली, शरीर के नौ छिद्रों में से कोई छिद्र, हथेली, पगतली, पर्व (शरीर के जोड़) आदि का स्पर्श करता है तो उसे सफलता नहीं मिलती तथा अशुभ फल प्राप्त करता है। शरीर के अधोभाग के अंगों के स्पर्श का भी यही फल जानना चाहिए ॥६६-६७॥

इस प्रकार प्रश्नशास्त्र में अंगस्पर्श का विशेष महत्त्व है। नारदजी ने इसे अंगविद्या कहा है। उत्तमाङ्गों के स्पर्श का फल शुभ होता है। अधमाङ्गों के स्पर्श का फल अशुभ होता है। अस्तु, दैवज्ञ को प्राश्निक की अङ्गस्पर्श चेष्टा पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ध्वजाद्यानां आयानां फलम्

प्रागादिदिक्षु मूर्धादिष्वङ्गेष्वष्टसु च स्थिताः।
ध्वजाद्यास्तत्स्थितिस्पर्शफलमप्यथ कथ्यते ॥ ६८॥
ध्वजो धूमश्च सिंहश्च सारमेयो वृषः खरः।
दन्ती काकः क्रमादेते दिशास्वैन्द्र्यादिषु स्थिता॥ ६९॥

पूर्वादि दिशा-विदिशाओं के क्रम से आठ आय आठ दिशाओं में तथा देह के शिर आदि आठ अंगों में ध्वजादि आठ आय स्थित हैं, उनका फल भी कहा जा रहा है ॥६८॥

ध्वज, धूम, सिंह, सारमेय, वृष, खर, दन्ती तथा काक—ये आठ आय क्रमशः पूर्वादि दिशाओं में स्थित हैं ॥६९॥

(१) **ध्वज**—इसे, केतु, पताका, आदि भी कहते हैं। यह झण्डे (Flag) की भाँति है।
(२) **धूम**—इसे धूम्र, अग्निकेतु, अग्निबाहु, अग्निवाहः (Smoke) भी कहते हैं।
(३) **सिंह**—इसे केसरि, हरि, लेय (Lion) आदि भी कहते हैं।
(४) **सारमेय**—इसे श्वान, श्वा, ग्रामसिंह, भषक, शुनक, दोग्धृ (Dog) आदि कहते हैं।
(५) **वृष**—इसे वर्दः, उक्षा, गो (Cow, Ox) आदि भी कहते हैं।
(६) **खर**—इसे रासभ, गर्दभ, धेनुक (Donkey) आदि कहते हैं।
(७) **दन्ती**—इसे हस्ति, गज, सिन्धुर, इभ, ऐरावत (Elephant) आदि कहते हैं।
(८) **काक**—इसे ध्वांक्ष, वायस, कुनक, क्रूरराव (Crow) आदि कहते हैं।

आयों का दिशासूचक चक्र

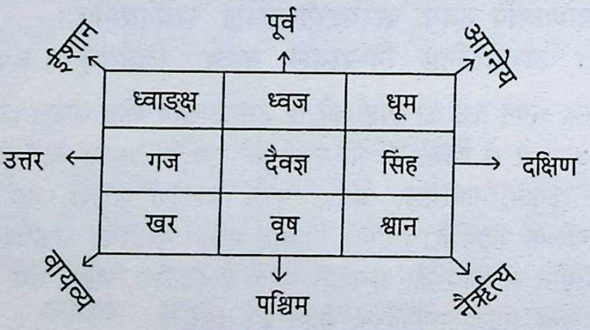

शरीरे आयानां स्थितिः

मूर्ध्निध्वजो घ्राणपुटे तु धूम-
श्चास्ये हरिः श्रोत्रदृशो श्वसंज्ञः।
कण्ठे वृषः पाणियुगे खरश्च
गजश्च हृद्यङ्घ्रियुगेऽथ काकः॥ ७०॥

मानव शिर पर ध्वज आय, नासापुटों में धूम्र आय, मुख पर सिंह आय, कर्ण एवं चक्षुओं पर श्वान आय, कण्ठ में वृष आय, दोनों हाथों में खर आय, हृदय में गज आय तथा दोनों पैरों में ध्वांक्ष आय स्थित है ॥७०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अष्टायोपरि प्रश्नफलनिरूपणम्

केतुस्थो ध्वजसिंहगो वृषगजस्थानादि देहे स्पृशन्
सम्प्राप्नोति नरः क्रमेण धनगोयानानि भूषामपि ।
सिंहस्थोऽपि च सिंहगो वृषकरिश्रेष्ठध्वजान् संस्पृशन्
नायाति प्रतिपक्षनाशकमला सत्पुत्रबन्ध्वागमान् ॥ ७१॥

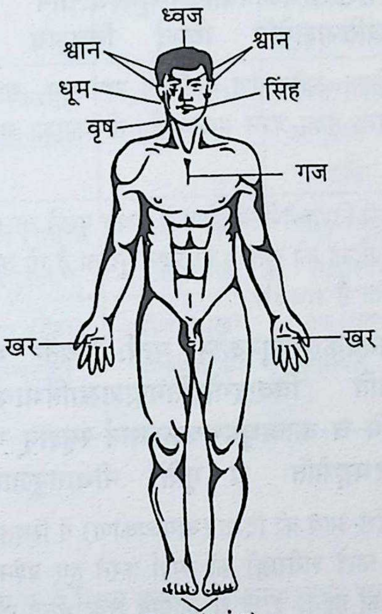

यदि प्राश्निक केतु (ध्वज) की दिशा अर्थात् पूर्व में खड़ा होकर या बैठकर ध्वज, सिंह, वृष तथा गज इन आयों के देह स्थित स्थानों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न पूछे तो उसे क्रमशः धन, गो, यान तथा वस्त्राभूषणों की प्राप्ति होती है ।

यदि सिंह आय की दिशा (दक्षिण) में स्थित होकर पृच्छक यदि सिंह, वृष, गण, ध्वज इन आयों के दैहिक स्थलों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो शत्रु नहीं आता । यदि आता है तो उसका नाश होता है; लक्ष्मी, श्रेष्ठ पुत्र तथा बन्धुओं का आगमन क्रमशः होता है ॥७१॥

गच्छेन्दोर्वृषसिन्धुरध्वजहरिस्पर्शेन तिष्ठन् वृषे
सद्योऽसौ वृषयानधातृदयितामित्राप्तिमव्याहताम् ।
दन्तिस्थो गजकेतुसिंहवृषभस्थानं स्पृशन् पाणिना
यायाद्दन्तिविभूषणोत्तमसुहृत्सत्पुत्रलाभान् क्रमात् ॥ ७२॥

यदि वृष आय की दिशा=पश्चिम में स्थित प्रश्नकर्ता वृष, गज, ध्वज तथा सिंह आयों का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करता है तो क्रमशः गाय-बैल, वाहन, धातृदयिता (सरस्वती=विद्या) तथा मित्रों की निर्बाध प्राप्ति होती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि पृष्टा गज आय की दिशा=उत्तर में स्थित होकर गज, ध्वज, सिंह एवं वृष आय के अंगों को अपने हाथ से स्पर्श करता हुआ प्रश्न पूछता है तो क्रमशः हाथी, आभूषण, उत्तम मित्र तथा सत्पुत्र का लाभ होता है ।।७२।।

धूमस्थोऽपि च धूमकुक्कुरखरध्वाङ्क्षप्रदेशान् स्पृशन्
मृत्युक्लेशभयव्रतक्षयकुटुम्बध्वंसमप्याप्नुयात् ।
श्वारूढं श्वखराभिधानवलिभुग्धूमस्थलानि स्पृशन्
व्याधिं पुत्रविनाशमेति विपदं वित्तक्षयं मानवः ।। ७३।।

यदि धूम की दिशा=अग्निकोण में स्थित प्रष्टा धूम, श्वान, खर तथा ध्वाङ्क्ष के शरीरांगों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न पूछता है, तो क्रमशः क्लेश, भय, व्रतक्षय तथा कुटुम्बनाश होता है ।

यदि श्वान आय की दिशा नैर्ऋत्य कोण में स्थित पूछने वाला व्यक्ति श्वान, खर, काक तथा धूम आय के शरीरप्रदेशों को छूता हुआ प्रश्न पूछता है तो क्रमशः व्याधि, पुत्र- नाश, विपत्ति तथा धनक्षय होता है ।।७३।।

स्प्रष्टा गर्दभकाकधूमशुनकान् मर्त्यः स्थितो गर्दभे
यद्यो याति विवादगोहतिमहाशस्त्रार्तिभार्यारुजः ।
काकस्थोऽपि च काकधूमभषकस्थानं स्पृशन् गर्दभं
बन्ध्वार्तिद्विजभङ्गमेति च मृतिं नीचात्तनूजापदम् ।।७४।।

यदि प्रश्नकर्ता गर्दभ आय की दिशा (वायव्यकोण) में स्थित होकर खर, काक, धूम, श्वान आयों के अधिकार वाले शरीराङ्गों को स्पर्श करते हुए प्रश्न पूछे तो क्रमशः विवाद की प्राप्ति, दुधारू पशु की हानि, शस्त्र से आघात तथा भार्या को पीड़ा होती है ।

यदि प्राश्निक काक आय की दिशा (ईशानकोण) में स्थित होकर काक, धूम, श्वान तथा खर आय के प्रभाव वाले अंगों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करता है तो क्रमशः बन्धुओं को पीड़ा, दाँतों को कष्ट, मृत्यु तथा नीच व्यक्ति से सन्तान को कष्ट या सन्तान की नीच वृत्ति से कष्ट होता है ।।७४।।

ध्वजहरिवृषदन्तिस्थो धूमश्वखराख्यवायसस्पर्शी ।
विपरीतो वा याति च विपदं वा सम्पदं च नात्यन्तम् ।। ७५।।

ध्वज, हरि, वृष, गज इन आयों की दिशाएँ क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर हैं । धूम, श्वान, खर तथा ध्वांक्ष ये क्रमशः आग्नेय, नैर्ऋत्य, वायव्य तथा ईशान के स्वामी हैं । अब यदि मुख्य दिशाओं में स्थित पृच्छक क्रमशः चारों कोणों के प्रतिनिधि अंगों का स्पर्श करे अथवा चारों कोनों में खड़ा पृच्छक इन मुख्य दिशाओं के प्रतिनिधि अंगों का स्पर्श करे तो शुभाशुभ फल बहुत थोड़ा होता है । तात्पर्य यह है कि दिशाओं में स्थित होकर विदिशाओं के अंगों का स्पर्श करने पर तथा विदिशाओं में खड़े होकर क्रमशः दिशाओं के अंगों का स्पर्श करने पर पूर्व श्लोकों में जो शुभाशुभ फल वर्णित हैं वे न्यूनमात्रा में ही प्राप्त होंगे ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चार दिशाओं में स्थित पृच्छक आयांगों के स्पर्श के फल का चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर	दिशा
ध्वज (शिर)	सिंह (मुख)	वृष (कण्ठ)	गज (वक्ष)	आय
धनलाभ	शत्रुनाश	गाय, बैल की प्राप्ति	हाथी (मोटर, ट्रक, भारी वाहन) का लाभ	अंगस्पर्श फल
सिंह (मुख) गोलाभ	वृष (कण्ठ) लक्ष्मीप्राप्ति	गज (वक्ष) वाहनप्राप्ति	ध्वज (शिर) आभूषणों की प्राप्ति	आय+स्पृष्ट अंग फल
वृष (कण्ठ) वाहनलाभ	गज (वक्ष) सत्पुत्रलाभ	ध्वज (शिर) विद्याप्राप्ति	सिंह (मुख) मित्रालाभ	आय (स्पृष्ट अंग) फल
गज (वक्ष) भूषालाभ (पोशाक)	ध्वज (शिर) बन्धुलाभ	सिंह (मुख) मित्रसमागम	वृष (कण्ठ) सुसन्तति लाभ	आय (स्पृष्ट अंग) फल

चारों विदिशाओं में स्थित पृच्छक के आयाङ्गों के स्पर्शफल का चक्र

आग्नेय (S.E.)	नैर्ऋत्य (S.W.)	वायव्य (N.W.)	ईशान (N.E.)	विदिशा (कोण)
धूम (नासिका) मृत्यु या क्लेश	श्वान (नेत्र-कर्ण) व्याधि	खर (हाथ) विवाद	ध्वांक्ष (पैर) बन्धुपीड़ा	आय (स्पृष्ट अंग) फल
श्वान (नेत्र-कर्ण) भय	खर (हाथ) सन्ततिकष्ट	ध्वांक्ष (पैर) पशुहानि	धूम (नासिका) दन्तकष्ट	आय (स्पृष्ट अंग) फल
खर (हाथ) व्रतभङ्ग	ध्वांक्ष (पैर) विपत्ति	धूम (नासिका) शस्त्राघात	श्वान (नेत्र-कर्ण) मृत्युतुल्य कष्ट	आय (स्पृष्ट अंग) फल
ध्वांक्ष (पैर) कुटुम्ब की हानि	धूम (नासिका) धनहानि	श्वान (नेत्र-कर्ण) पत्नी को पीड़ा	खर (हाथ) सन्तति कष्ट	आय (स्पृष्ट अंग) फल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शास्त्रान्तरकथनम्

शास्त्रान्तरमपीहास्ति दूतदैवविदोर्दशा।
यादृशी तादृशी वाच्या दशा व्याधिमतामपि ।। ७६ ।।

शास्त्रान्तरो में प्रश्नफल जानने के अन्य उपाय भी हैं । पृच्छक-दूत तथा दैवज्ञ की शारीरिक एवं मानसिक जैसी स्थिति हो उसके अनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए ।।७६।।

आरूढराशिवशाच्च प्रष्टानुभवेन फलकथनम्

पृच्छकाधिष्ठितं राशिं विज्ञायानेन पृच्छताम् ।
अनुभूतं हि वक्तव्यं किमपि प्रत्ययाप्तये ।। ७७ ।।

पृच्छक की आरूढ राशि जानकर तथा उसे मार्ग मे जो अनुभव हुए हों उनको जानकर विश्वास कराने के लिए दैवज्ञ को अपनी बुद्धि से ऊहापोह कर फल कहना चाहिए ।।७७।।

सारसङ्ग्रहमतम्

राहुर्वार्क्किः पृच्छकाधिष्ठितर्क्षे
यद्वा तस्मात्पञ्चमे वाष्टमे वा।
चाण्डालानां पंक्तिरग्रे प्रदृष्टा
शूद्रा दृष्टास्तत्र चेद् भूमिजज्ञौ।। ७८ ।।

इस अध्याय के श्लोक ७-८-९-१० के अनुसार आरूढ चक्र से पृच्छक की आरूढ राशि का ज्ञान कर इस प्रकार फल कथन करे—यदि प्रश्नकालीन कुण्डली में जो पृच्छक की आरूढ राशि हो उस राशि में राहु या शनि बैठे हों अथवा उस आरूढ राशि से पञ्चम भाव या अष्टम भाव में राहु या शनि की स्थिति हो तो पृच्छक (दूत) ने मार्ग में चाण्डालों (अथवा उन जैसे लोगों का) झुण्ड देखा था । यदि आरूढलग्न या उससे पंचम या अष्टम भावों में मंगल या बुध स्थित हों तो दूत ने शूद्रों को देखा था ऐसा कहना चाहिए ।।७८।।

लग्नसुताष्टमसंस्थौ गुरुशुक्रौ चेद्विजादिभिर्योगः ।
पापयुतौ दृष्टौ चेद् दुर्ब्राह्मणतन्तुधारिभिर्योगः ।। ७९ ।।

यदि आरूढ राशि से लग्न, पंचम या अष्टम भाव में गुरु-शुक्र स्थित हों तो मार्ग में ब्राह्मण या साधु मिलते हैं और यदि गुरु-शुक्र पापग्रहों से दृष्ट हों या युत हों तो नाम मात्र के जनेऊधारी दुर्ब्राह्मण या पाखंडी ब्राह्मण मिलते हैं ।।७९।।

अर्को यद्येषु नृपैश्चन्द्रसितौ चेत् स्त्रिया योगः ।
चन्द्रार्कजौ स्थितौ चेद् दुष्टस्त्रीभिः सितः कुलस्त्रीभिः ।। ८० ।।

यदि आरूढ राशि से लग्न, पंचम, अष्टम भावों में सूर्य स्थित हो तो मार्ग में राजा (मंत्री या उच्च प्रशासनिक अधिकारी, V.I.P.) से भेंट हुई थी ऐसा कहना चाहिए । यदि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्र और शुक्र (युति) हों तो शूद्र से, चन्द्र तथा शनि होने (युति होने) पर दुष्टा स्त्रियों तथा अकेला शुक्र उक्त स्थानों में स्थित हो तो कुलीन स्त्रियों से दूत की भेंट हुई थी—दैवज्ञ को पृच्छक के विश्वासार्थ ऐसा कहना चाहिए ॥८०॥

अशुभशुभदृष्टियोगात्तज्जातीयैश्च योगमपि विद्यात्।
दूतस्य चेष्टयातः परं वदेल्लक्षणं दिशागतया॥ ८१॥

जैसे शुभाशुभ ग्रहों की दृष्टि या युति उक्त स्थानों में होने से उन ग्रहों की जाति के लोगों का मिलन मार्ग में कहना चाहिए। फिर इसके पश्चात् दूत की चेष्टा तथा वह जिस दिशा से आया हो उस दिशा के आधार पर अन्य वर्णन भी करें ॥८१॥

विगतरविवारस्य घटनाकथनम्

अर्केऽष्टमे बहुजनैर्नृपसेनया वा
याते रवेरहनि नूनमुपद्रवोऽभूत्।
जीवांशके नृपतिनेति वदेदिनांशाद्
धात्वादिवस्तुविहतिश्च विचिन्त्य वाच्या॥ ८२॥

यदि आरूढ राशि से सूर्य आठवें भाव में हो तो बहुत लोगों या राजसैनिको ने विगत रविवार को उपद्रव या दंगा किया था ऐसा कहना चाहिए। यदि अष्टमस्थ सूर्य जीवसंज्ञक राशि के नवमांश में स्थित हो तो राज्यशासन द्वारा विगत रविवार को जीवहानि की गयी (पुलिस द्वारा गोली चलाने से या दंगाइयों के उपद्रव से कुछ स्त्री-पुरुष, बालकादि तथा पालतू पशु आदि मारे गये); यदि वह सूर्य धातुराशि के नवांश में हो तो पुलिस प्रशासन या समाजविरोधी तत्त्वों द्वारा धातुनाश (मकान, दुकान, फर्नीचर, निर्माण आदि की तोड़फोड़, अतिक्रमण का हटाना आदि) हुआ है। इसी प्रकार सूर्य का नवांश मूल राशि में हो तो समुदाय या प्रशासन के बल द्वारा मूलनाश (फसलों की हानि, वृक्षों की कटाई आदि) किया जाता है ॥८२॥

अष्टमस्थे निशानाथे प्रष्टुर्वाच्यमभोजनम्।
यवागूपानमात्रं वा गते चन्द्रस्य वासरे॥ ८३॥

यदि आरूढ राशि से अष्टम भाव में चन्द्रमा बैठा हो तो पृच्छक या दूत ने विगत सोमवार को भोजन नहीं किया था अथवा केवल दलिया या दलिया जैसा पेय पीकर ही रहना पड़ा ॥८३॥

यहाँ अष्टम भाव में स्थित ग्रहों के अनुसार उन ग्रहों से सम्बन्धित विगतवार की घटनाओं का वर्णन करना बताया जा रहा है।

विगतभौमवारस्य घटनावर्णनम्

आरेऽष्टमे पदभ्रंशो मान्दियुक्तस्स चेत् क्षतिः।
धात्वांशेऽसृजि शस्त्रेण मूलांशे कण्टकादिना॥ ८४॥
वाच्या जीवांशके दन्तनखाद्यैरंशकोदितैः।
सरीसृपांशे तद्दंशो वारस्य गतवासरे॥ ८५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि आरूढ से अष्टम राशि में मंगल स्थित हो तो दूत या पृच्छक को गत मंगलवार के दिन स्थानच्युति होती है। यदि यह मंगल गुलिक से युक्त हो तो शस्त्रादि का आघात भी होता है। यदि मंगल धातुराशि के नवांश या धातुनवांश में हो तो शस्त्र से, मूलसंज्ञक राशिनवांश में मूल (वृक्षादि) से तथा जीवनवांश के मंगल से दाँत, नाखून या सींग से यदि सरीसृप नवांश में मंगल हो तो सरीसृप (सर्पादि) से गत मंगलवार को कष्ट पहुँचता है ॥८४-८५॥

विगतबुधवारस्य घटनावर्णनम्

अष्टमस्थे विधोः पुत्रे भङ्ग इष्टस्य कर्मणः।
मूलांशे पूगताम्बूलनाशोऽभावोऽथवाऽनयोः ॥ ८६॥
धात्वंशे वपुषः सादो वाच्यो जीवांशके पुनः।
पारुष्यं वचसश्चूर्णाभावो वा गतविद्दिने ॥ ८७॥

आरूढ से अष्टम राशिगत बुध होने पर अभीष्ट कार्य में बिघ्न, बाधा तथा अडंगेबाजी होती है या कार्यहानि ही हो जाती है।

यदि वह बुध मूलनवांश में हो तो पान, सुपारी, तमाखू आदि की हानि या अभाव हो जाता है (दन्तमंजनादि की कमी भी हो सकती है)। यदि धातुनवांश में बुध हो तो शरीर में आलस्य कहना चाहिए। जीवनवांश में हो तो वाणी में कर्कशता, पान-मसाले, इलायची, सौंफ आदि की कमी विगत बुधवार को हो जाती है ॥८६-८७॥

विगते गुरुवारे घटनाक्रमः

रन्ध्रस्थितेऽमराचार्ये नित्यकर्मविलम्बनम्।
द्विजानां द्रव्यनाशो वा वाच्यं गुरुदिने गते ॥ ८८॥

यदि आरूढलग्न से अष्टम राशि में गुरु ग्रह स्थित हो तो विगत गुरुवार के दिन दूत के नित्यकर्म में विलम्ब होता है। द्विजातियों का सन्ध्या-वन्दनादि गड़बड़ा जाता है तथा धन या पदार्थ की हानि होती है ॥८८॥

विगतशुक्रवारस्य घटनाक्रमः

भृगुपुत्रेऽष्टमं प्राप्ते वियोगः प्रिययोषिता।
वक्तव्यो वस्त्रनाशश्च तत्र धात्वंशगे भृगौ ॥ ८९॥
वसने पङ्कसम्पर्कौ जीवांशेऽस्य नखक्षतिः।
पिपीलिकाखुवाभ्राद्यैः क्षतिरंशे सरीसृपे ॥ ९०॥
कण्टकाद्यैस्तु मूलांशे यद्वा जीवांशगे पुनः।
अन्यस्मै वस्त्रदानं वा गतासन्ने भृगोर्दिने ॥ ९१॥

यदि आरूढ राशि से अष्टम भाव में शुक्र स्थित हो तो पत्नी या प्रेमिका से उस दिन वियोग होता है, वस्त्रों की हानि होती है। यदि वह शुक्र धातुनवांश में है तो वस्त्र में कीचड़ या दाग लग जाता है। जीवांश में अष्टमस्थ शुक्र होने पर वह वस्त्र नख, सींग या दाँत

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

से फट जाता है या उसे चूहे, दीमक, चींटी आदि खा जाते हैं। सरीसृप नवांश में होने पर दीमकादि से हानि होती है। मूल राशि के नवांश में अष्टमस्थ शुक्र होने पर वस्त्र काँटों आदि में उलझ कर फटता है। कभी-कभी जीवनवांश होने पर वस्त्र किसी दूसरे को (माँगने पर) देना पड़ता है। ये सब घटनाक्रम विगत शुक्रवार के दिन घटता है ॥८९-९०-९१॥

गतशनिवारस्य घटनाक्रमः

अष्टमस्थे रवेः पुत्रे वाच्यं भुक्तिविलम्बनम्।
अत्यापत्तिश्च मन्दस्य समीपस्थे गतेऽहनि ॥ ९२॥
रन्ध्रगे सिंहिकासूनौ वाच्या पादव्यथा पथि।
मूलांशेकण्टकेनैषा धात्वंशेऽश्माभिघाततः ॥ ९३॥
जीवांशे साध्वसं सर्पात् गते मन्दस्य वासरे ।
केतौ रन्ध्रस्थिते वाच्यं पादे पाषाणघट्टनम् ॥ ९४॥
मान्दियुक्तोऽत्र केतुश्चेत्पादो नूनमभिद्यत ।
भौम्यसाम्यात्फले केतोर्गति भौमस्य वासरे ॥ ९५॥

यदि आरूढ लग्न से शनि अष्टमभावस्थ हो तो गत शनिवार को भोजन में विलम्ब हुआ था ऐसा बताना चाहिए और कई प्रकार की परेशानियाँ भी हुई थीं ॥९२॥

यदि आरूढ से अष्टम में राहु की स्थिति हो तो विगत शनिवार को पैरों में पीड़ा होती है, यह कष्ट मार्ग में चलने से होता है। यदि अष्टमस्थ राहु मूलराशि के नवांश में हो तो पीड़ा काँटों से होती है। धातुनवांश में पत्थर की ठोकर से तथा जीवराशि के नवांश में स्थित राहु से सर्पादि से पीड़ा होती है। यह सब विगत शनिवार को होता है।

अष्टमस्थ केतु (आरूढ राशि से) होने पर विगत मंगलवार को पैर में पत्थर की चोट लगती है। यदि इस स्थान में केतु गुलिक से युत हो तो पैर में घाव हो जाता है। केतु के गुण मंगल जैसे हैं अतः घटनाक्रम केतु के प्रभाव से विगत मंगलवार को ही घटित होता है ॥९३-९४-९५॥

आरूढराशितः तृतीयस्थपापग्रहफलम्

पापस्तृतीयसंस्थश्चेत् वक्तव्यं स्यादुपोषणम्।
गते तु तत्तद्दिवसे सुविचार्थैवमादिशेत् ॥ ९६॥

यदि आरूढ राशि से कोई पाप ग्रह तीसरी राशि पर स्थित हो तो उस पाप ग्रह सम्बन्धी विगत वार को उपवास या लङ्घन (Fast) हो जाया करता है। यह उस ग्रह के बल के प्रमाणानुसार भलीभाँति विचार कर कहना चाहिए ॥९६॥

अनिष्टभावेषु पापग्रहफलम्

व्ययः षष्ठस्तृतीयश्च भावा नेष्टा यथाष्टमः।
दिनेष्वनिष्टसंस्थानां यातेष्वशुभदं वदेत् ॥ ९७॥

जिस भाँति अष्टम भाव अनिष्टकर भाव है उसी भाँति तीसरा एवं छठा भाव भी अनिष्ट फलदायक हैं। इनमें आरूढ से गिनने पर पाप ग्रह स्थित हो तो पाप ग्रह के सम्बन्धित वारों में अशुभ फल कहना चाहिए ॥९७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनिष्टभावेषु शुभखेटानां फलम्

इष्टस्थितानां वारेषु शुभप्राप्तिञ्च निर्दिशेत् ।
उदयेनैष्यवारेषु फलमप्येवमादिशेत् ।। ९८ ।।

यदि ३-६-८ भावों में (आरूढ राशि से गिनने पर) शुभ ग्रह बैठे हों तो उन शुभ ग्रहों (सोम, बुध, गुरु, शुक्र) के वार में शुभ फल की प्राप्ति बतानी चाहिए ।

जिस प्रकार आरूढ लग्न से विगत वारों का ज्ञान होता है उसी प्रकार उदयलग्न से आगामी वारों के घटनाक्रम का शुभाशुभ कहना चाहिए ।।९८।।

शकुनविचार:

द्यूनस्थेष्वशुभेषु दुष्टशकुनं सौम्येषु तच्छोभनं
दूतारूढवशादमुष्य कथयेत् प्रश्नाधिरूढेन वा ।
कर्मारूढसुखस्थितैर्बलयुतैरप्येवमादिश्यतां
यातुर्वा शकुनं शुभाऽशुभमिति प्रस्थानलग्नाद् वदेत् ।। ९९ ।।

दूत के द्वारा आरूढ राशि या प्रश्नाधिरूढ (पृच्छक द्वारा राशिचक्र में स्वर्णमुद्रा द्वारा स्पर्शित राशि) से सप्तम राशि में पाप ग्रह हों तो अशुभ शुकन तथा शुभ ग्रह हों तो शुभ शकुन मार्ग में दूत द्वारा देखा जाता है । दशम भाव, आरूढ लग्न और चतुर्थ भाव में बलवान् ग्रहों के अनुसार दृष्ट शकुनों का वर्णन करना चाहिए अथवा प्रस्थान लग्न से भी मार्ग के शकुनों का वर्णन करना चाहिए ।।९९।।

तत्रस्थे चतुरंघ्रिसंज्ञविहगे मातङ्गपश्वादयो-
भ्यायातः पथि पक्षिसंज्ञखचरे दृष्टाश्चकोरादयः ।
सूर्यारौ तु चतुष्पदौ निगदितौ मन्देन्दुजौ पक्षिणौ
शीतांशुस्तु सरीसृपोऽष्टचरणः शास्त्रे प्रदिष्टः फणी ।। १०० ।।
चण्डालाभ्यागमो यद्यहिशिखिगुलिकब्रध्नजास्तत्र संस्थाः
शुक्रेन्दू चेद्वधूनां यदि शशितनयस्तत्र विद्वज्जनानाम् ।
विप्राणां वाक्पतिश्चेद्यदि धरणिसुतः शस्त्रिणां कीर्तनीयो
वर्त्मन्यभ्यागमः प्राग्यदि पुनररुणः श्रैष्ठ्यभाजां जनानाम् ।। १०१ ।।

यदि उपर्युक्त स्थानों में चतुष्पद ग्रह हों तो मार्ग में हाथी आदि पशु (या ट्रक, बुल्डोजर, रोडरोलर जैसे वाहन आदि) मिलते हैं । यदि उक्त ग्रह पक्षिसंज्ञक हों तो चकोरादि पक्षी दिखते हैं । सूर्य तथा मंगल चतुष्पाद ग्रह हैं अर्थात् चौपाये हैं, शनि तथा बुध पक्षी संज्ञावाले हैं, चन्द्रमा सरीसृप तथा राहु अष्टपद (बहुपद) संज्ञक ग्रह है—ऐसा शास्त्र में बताया गया है ।।१००।।

यदि उक्त भावों में राहु, केतु, गुलिक तथा शनि स्थित हों तो मार्ग में चाण्डाल मिलता है । यदि उन राशियों में शुक्र तथा चन्द्रमा हो तो स्त्रियाँ मिलती हैं । बुध होने पर विद्वान्, गायक, गणितज्ञ या व्यापारी मिलते हैं । गुरु होने पर ब्राह्मणादि के दर्शन होते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मंगल होने पर सशस्त्र जन आते-जाते दिखते हैं। उक्त राशि (भावों) में सूर्य की स्थिति होने से श्रेष्ठ लोग (V.I.P.) मिलते हैं ॥१०१॥

पृच्छकाश्रितदिशाफलम्

पृच्छकस्य दिशि स्थानं विशेषाच्छुभदं नृणाम्।
पृच्छकस्य स्थितिः कोणे प्रश्ने स्त्रीविषये शुभा ॥ १०२॥

प्रश्न में मुख्य दिशाओं में पुरुष प्राश्निक का बैठना शुभ फलप्रद होता है। यदि प्राश्निक स्त्री है तो उसका कोने (विदिशा) में बैठकर प्रश्न करना शुभ है ॥१०२॥

पृच्छकस्य दक्षिणदिशि स्थितिफलम्

दक्षिणाशाभिमुख्यञ्च प्रष्टुर्यमदिशि स्थितिः।
अशुभाय भवेनूनमायुः प्रश्ने विशेषतः ॥ १०३॥

यदि प्रष्टा दक्षिणाभिमुख होकर या दक्षिण में स्थित होकर प्रश्न करे अर्थात् आरूढ की दिशा दक्षिण हो तो प्रायः पूछे गये प्रश्न की सिद्धि नहीं होती। यदि प्रश्न रोगी के स्वास्थ्य या आयु से सम्बन्धित हो तो फल विशेष अशुभ होता है ॥१०३॥

रोगायुःप्रश्ने विशेषः

आकाशवायुवह्न्यर्णपूर्वं तद्गणपूर्वकम्।
भूतार्थवाचकञ्चापि वचनन्न शुभप्रदम् ॥ १०४॥

यदि प्रश्नकर्त्ता द्वारा उच्चारित प्रश्न का प्रथमाक्षर आकाश, वायु, अग्नि या जल तत्त्व के अक्षरों में से कोई अक्षर हो या गण हो या वाक्य का प्रथम शब्द भूतकालिक क्रिया हो तो प्रश्न का फल शुभ नहीं होता ॥१०४॥

इस श्लोक में पृथ्वी तत्त्व को छोड़कर शेष चार तत्त्वों को शुभ फलदायक कहा गया है। यहाँ पर गणों के तत्त्वानुसार छन्दःशास्त्र के आठ गणों द्वारा भी फल में विकल्प का निर्देश है। ग्रन्थ के पाठकों के भ्रम के निवारणार्थ ग्रन्थकार ने आगे के श्लोकों में प्रश्न-संग्रह, अनुष्ठानपद्धति तथा आर्यासप्तति आदि के श्लोकों को उद्धृत कर दिया है।

उक्तञ्च प्रश्नसंग्रहे

आद्यैस्स्वरैस्तु काद्यैश्च वर्गैर्भिन्ना लिपिर्द्विधा।
स्वरा जीवस्तनुर्वर्गा इति ज्ञेया च मातृका ॥ १०५॥
प्रश्नवाक्यं स्वराद्यञ्चेज्ज्ञेयं जीवगतं शुभम्।
दोषश्च देहविषयो हलाद्यं चेदतोऽन्यथा ॥ १०६॥
वर्गेष्वक्षरपञ्चकं पवनवह्नीन्द्राम्बुना पुंसकं
वाक्यादौ तु नपुंसकाक्षरमतीवानिष्टदं पृच्छताम्।
दुष्टौ मारुतपावकौ बलरिपुर्मध्यः प्रशस्तं जलं
दीर्घह्रस्वविभागतः स्वरगणाश्चाम्भोमहेन्द्रात्मकाः ॥ १०७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लिखने तथा बोलने में दो प्रकार के वर्ण होते हैं जिन्हें क्रमशः स्वर (vowels) तथा व्यञ्जन (consonants) कहते हैं । यदि उच्चारित प्रश्न का प्रथमाक्षर स्वर हो तो जिस व्यक्ति या जीव के सम्बन्ध में प्रश्न किया गया है उसका कल्याण होता है परन्तु इसके विपरीत यदि प्रथमाक्षर व्यंजन हो तो उस व्यक्ति के शरीरादि में कष्ट या दोष होता है ॥१०५-१०६॥

वर्गों के अनुसार वर्णमाला में व्यंजनों के जो पाँच वर्ग हैं उनमें प्रत्येक पाँच-पाँच अक्षर का होता है । जैसे क, ख, ग, घ तथा ङ इन पाँच का 'क-वर्ग' तथा च, छ, ज, झ, ञ इन पाँच का 'च-वर्ग' होता है । इन पाँच वर्गों (क-वर्ग, च-वर्ग, ट-वर्ग, त-वर्ग तथा प-वर्ग) क्रमशः वायु, अग्नि, इन्द्र, जल तथा नपुंसक होते हैं । इनमें यदि वाक्य के आरम्भ में नपुंसक अक्षर हो तो पृच्छक हेतु अत्यन्त अशुभ फल का संकेत होता है । इसी प्रकार प्रश्न का प्रथमाक्षर वायु तथा अग्नि तत्त्व का होने पर भी अशुभ फल देता है । यदि प्रथमाक्षर इन्द्र हो तो मध्यम फल होगा । यदि आद्याक्षर जलसंज्ञक हो तो शुभ फल होगा। अब दीर्घ स्वर तथा ह्रस्व स्वर के अनुसार उनकी संज्ञा बताते हैं । यदि प्रथमाक्षर दीर्घ स्वर (Long Vowel = आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ) हो तो उसकी जल संज्ञा होती है । यदि प्रथमाक्षर ह्रस्व स्वर (Short Vowel = अ, इ, उ, ऋ) हो तो वह इन्द्रसंज्ञक होता है । (वैदिक भाषा, पालि, प्राकृत अपभ्रंश, तमिल, तेलुगु, मलयालम आदि भाषाओं में ह्रस्व 'ए' तथा 'ओ' भी होता है) ॥१०७॥

पञ्चवर्गाक्षरों से तत्त्वज्ञान चक्र

वायु	अग्नि	इन्द्र	जल	नपुंसक	तत्त्व
क	ख	ग	घ	ङ	क-वर्ग
च	छ	ज	झ	ञ	च-वर्ग
ट	ठ	ड	ढ	ण	ट-वर्ग
त	थ	द	ध	न	त-वर्ग
प	फ	ब	भ	म	प-वर्ग
य	र	ल	व	-	अन्तस्थ
श	ष	स	ह	-	ऊष्म
प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम	वर्णक्रम

अनुष्ठानपद्धतिमतम्

मध्यान्ताद्यखिलेषु गाजसभमाः सूर्यानिलेन्दुक्षमा,
देवा स्फीतरुगन्यदेशगमनप्रख्यातकीर्तिश्रियः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तद्वत्स्युर्लघवो गुणा रतयना वह्न्यम्बराम्भोदिवो
मर्त्याःस्युर्मृतिशून्यतोत्तमसमृध्यायूंषि ते तन्वते।। १०८।।

अब इस श्लोक में छन्दःशास्त्रानुसार गण बनाने की विधि समझाते हुए कहते हैं— एक गण में तीन अक्षर होते हैं। यदि तीन अक्षरों में से मध्य में अक्षर गुरु हो तो जगण, अन्त्याक्षर गुरु हो तो सगण, आद्याक्षर गुरु हो तो भगण तथा तीनों अक्षर गुरु हों तो मगण होता है। इन चारों गणों के स्वामी (देवता) क्रमशः सूर्य, वायु, चन्द्र तथा पृथ्वी होते हैं। प्रश्नारंभ में उक्त चारों गणों में से कोई भी होने पर क्रमशः रोगवृद्धि, विदेशगमन, कीर्ति तथा श्रीवृद्धि आदि फल होते हैं। यदि गण के तीनों अक्षरों में मध्याक्षर लघु हो तो रगण, अन्तिमाक्षर लघु होने पर तगण, आद्याक्षर लघु होने पर यगण तथा तीनों अक्षर लघु होने पर नगण बनता है। इन गणों के स्वामी क्रमशः अग्नि, आकाश, जल तथा दिवि (स्वर्ग) होते हैं ।।१०८।।

आगे ''यमाताराजभानसलगा'' सूत्र के अनुसार चक्र दिया जा रहा है—

गणबोधक चक्र

क्रम	गणों के नाम	नाम-सूचक सूत्रा-क्षर	सूत्र से गणों का निर्माण	गण का स्वरूप चिह्न में	गण का स्वरूप शब्दों में	उदाहरण हेतु शब्द	गण के स्वामी	प्रश्न के आदि में फल
१.	यगण	य	यमाता	ISS	आदि लघु	चमेली	जल	समृद्धि
२.	मगण	मा	मातारा	SSS	तीनों दीर्घ	पांचाली	भूमि	अर्थलाभ
३.	तगण	ता	ताराज	SSI	अन्त्य लघु	बाजार	आकाश	अभाव
४.	रगण	रा	राजभा	SIS	मध्य लघु	मालती	अग्नि	मृत्यु
५.	जगण	ज	जभान	ISI	मध्य दीर्घ	अशोक	सूर्य	रोगवृद्धि
६.	भगण	भा	भानस	SII	आदि दीर्घ	पूरब	चन्द्र	ख्याति
७.	नगण	न	नसल	III	तीनों लघु	कमल	दिवि	दीर्घायु
८.	सगण	स	सलगा	IIS	अन्त्य दीर्घ	तुलसी	वायु	विदेशगमन
		लगा						

प्रष्टुः शब्देन फलादेशः

श्रोत्रप्रियं वदति वा वचनं शुभं वा
यद्वार्थपुष्टगिरिमस्खलितां तदानीम्।
प्रष्टाभियात्यभिमतं त्वितरोऽनभीष्ट-
मन्ते विसर्गसहितं वचनं च वक्ता।। १०९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि प्रष्टा मधुर वचन बोलता है, शुभ या सार्थक वाक्य कहता है तथा वाक्यों में स्पष्टता हो तो उसका अभीष्ट सिद्ध होता है । यदि इसके विपरीत वचन बोलता है अर्थात् उसकी वाणी कटु, अस्पष्ट, निरर्थक हो अथवा वाक्यान्त में विसर्ग का प्रयोग हो तो अशुभ फल होता है ॥१०९॥

अन्त में विसर्ग केवल संस्कृत भाषा में ही आता है ।

प्रश्नाद्यक्षराल्लग्नज्ञानम्

प्रष्टुर्वाक्यादिवर्णेन लग्नं संगृह्य चामुना ।
वाच्यं शुभाऽशुभं सर्वं तत्प्रकारोऽथ कथ्यते ॥ ११० ॥

प्रश्नवाक्य के प्रथमाक्षर से लग्न का ज्ञान कर के शुभाऽशुभ फल आगे लिखे अनुसार कहना चाहिए ॥११०॥

उक्तञ्च प्रश्नज्ञाने

अकचटतपया वर्गा रविकुजासितसौम्यजीवसौराणाम् ।
चन्द्रस्य च निर्दिष्टं प्रश्ने प्रथमोद्भवं वर्णम् ॥ १११ ॥
ज्ञात्वा तस्माल्लग्नं सङ्गृह्य शुभाऽशुभं वदेत्प्रष्टुः ।
वर्गादिमध्यचरमैर्वर्णैः प्रथमोद्भवैर्विषमम् ॥ ११२ ॥
राशिं लग्नं प्रवदेच्छिष्टैर्युग्मं कुजज्ञजीवानाम् ।
सितरविजयोश्च नैवं रविराशिनोरेकराशित्वात् ॥ ११३ ॥
तस्माल्लग्नात्प्रवदेत् पृच्छासमये शुभाऽशुभं सर्वम् ।
कालस्य विज्ञानादेतच्चिन्त्यं बहु प्रश्ने ॥ ११४ ॥

यह वर्गपद्धति आर्यासप्तति (प्रश्नज्ञान) के रचयिता श्री भट्टोत्पल के अनुसार है । यूँ तो वर्ग आठ होते हैं परन्तु यहाँ पर य-वर्ग तथा श-वर्ग के आठ अक्षरों का एक ही वर्ग माना गया है । तदनुसार—

'अ' वर्ग का स्वामी सूर्य, क-वर्ग का मंगल, च-वर्ग का शुक्र, ट-वर्ग का बुध, त-वर्ग का गुरु, प-वर्ग का शनि तथा य-वर्ग का चन्द्र होता है । प्रश्न का प्रथमाक्षर जिस वर्ग का हो उस वर्ग के विषम एवं सम अक्षर के अनुसार विचार करते हैं परन्तु अ-वर्ग का स्वामी सूर्य है अतः इसका सदैव सिंहलग्न तथा य-वर्ग के सभी अक्षरों का स्वामी चन्द्र होने से कर्कलग्न होता है । शेष "क,च,ट,त,प" इन पाँच अक्षरों के स्वामीग्रह दो-दो लग्नों के स्वामी होते हैं । अतः विषम क्रम का अक्षर होने पर उसका स्वामी जो ग्रह है उसकी विषम राशि का लग्न होगा तथा समसंख्यक अक्षर होने पर उस ग्रह की सम राशि का लग्न होगा । उदाहरण—(१) मान लीजिये किसी के प्रश्न का प्रथम अक्षर 'ग' है तो यह क-वर्ग का तीसरा (विषम) अक्षर हुआ । क-वर्ग का स्वामी मंगल है, उसकी दो राशियाँ मेष (विषम) तथा वृश्चिक (सम) हैं । यहाँ उच्चारित वर्ण विषम होने से प्रश्नाक्षरानुसार मेषलग्न माना जायेगा । यदि प्रश्न का आद्यक्षर ख या घ होता तो प्रश्नाक्षर का लग्न वृश्चिक माना जायेगा ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(२) यदि किसी ने अ-वर्ग का उच्चारण किया तो सदैव सिंह लग्न मानना चाहिए।

(३) य, र, ल, व, श, ष, स, ह—इन अक्षरों के आदि में होने पर सदैव कर्कलग्न ही होता है ॥१११-११३॥

प्रश्नकाल में इस प्रकार लग्न का विचार कर फलादेश कहना चाहिए। यदि एक समय में कोई व्यक्ति अनेक प्रश्न भी करें तो भी प्रश्न के प्रथमाक्षरानुसार उत्तर दिया जाना चाहिए ॥११४॥

इन लग्नों से प्रश्नकुण्डली बनाने के लिए तत्कालीन ग्रहस्थिति उस दिन के पञ्चांग में देखकर लिखना आवश्यक है। (विस्तार के लिए मेरे लिखित केरलप्रश्नशास्त्रसंग्रह की हिन्दी टीका देखिए।)

प्रश्न के प्रथमाक्षर से लग्नज्ञान का चक्र

वर्ग (स्वामी)	क्रम	विषय	सम	विषम	सम	विषम
अ-वर्ग (सूर्य)	अक्षर	अ,आ,ई,ई	उ,ऊ,ऋ	ॠ,ऌ,ॡ	ए.ऐ.ओ,औ	अं,अः
	लग्न	सिंह	सिंह	सिंह	सिंह	सिंह
क-वर्ग (मंगल)	अक्षर	क,कि,कु, के,को	ख,खी,खू, खे,खो	ग,गी,गु, गे,गो	घ,घि,घु,घे, घो	ङ
	लग्न	मेष	वृश्चिक	मेष	वृश्चिक	मेष
च-वर्ग (शुक्र)	अक्षर	च,चि,चु, चे,चो	छ,छि,छु, छे,छो	ज,जि,जु, जे,जो	झ,झि,झु, झे,झो	ञ
	लग्न	वृष	तुला	वृष	तुला	वृष
ट-वर्ग (बुध)	अक्षर	ट,टि,टु, टे,टो	ठ,ठि,ठु, ठे,ठो	ड,डि,डु, डे,डो	ढ,ढि,ढु, ढे,ढो	ण
	लग्न	मिथुन	कन्या	मिथुन	कन्या	मिथुन
त-वर्ग (गुरु)	अक्षर	त,ती,तू, ते,तो	थ,थि,थु, थे,थो	द,दि,दु, दे,दो	ध,धि,धु धे,धो	न,नी,नू, ने,नो
	लग्न	धनु	मीन	धनु	मीन	धनु
प-वर्ग (शनि)	अक्षर	प,पी,पु, पे,पो	फ,फी,फु, फे,फो	ब,बी,बु, बे,बो	भ,भी,भु, भे,भो	म,मी,मु, मे,मो
	लग्न	कुंभ	मकर	कुंभ	मकर	कुंभ
यवर्ग (चन्द्र)	अक्षर	य,या,यि,यी	यु,यू,ये	यै	यो,यौ	यं,यः
	लग्न	कर्क	कर्क	कर्क	कर्क	कर्क
(शवग सहित)	अक्षर	र,ल	व,श	ष,स	ह,हा	हि,हु
	लग्न	कर्क	कर्क	कर्क	कर्क	कर्क

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

टिप्पणी—इस प्रकार के लग्न में अक्षरों के ह्रस्व, दीर्घ तथा मात्रा का विचार नहीं करते हैं ।

दूतचेष्टाफलम्

वामाङ्घ्रिरग्रे निहितः शुभः स्याद् दूतस्य दोषाय च दक्षिणाङ्घ्रिः ।
दोषाय चाङ्घ्रेश्चलनं हि तस्य स्थितिः स्थिरस्तस्य शुभप्रदः स्यात् ।।११५।।

यदि पृच्छक या दूत अपना बाँया चरण आगे करके प्रश्न पूछे तो शुभ होता है। परन्तु यदि दक्षिण चरण आगे करे तो अशुभ फल होता है । प्रश्नकाल में दूत यदि अपने पैरों को हिलाता रहता है तो अशुभ फल तथा स्थिर बैठकर प्रश्न करने पर प्रश्न का फल शुभ होता है ।।११५।।

सुखोपविष्ट ऋज्वङ्गस्तुङ्गदेशे शुभासने ।
दैवज्ञाभिमुखश्चैव शुभं यात्यत्यथाऽशुभम् ।। ११६।।

यदि पृच्छक ऊँचे स्थान (आसन) पर तथा शुभासन पर सुखपूर्वक अपने शरीर को सीधा करके दैवज्ञ की ओर मुख करके बैठता है तो प्रश्नफल शुभ होता है ।।११६।।

उत्थितस्य फलम्

उत्तिष्ठति यदि प्रश्नं कुर्वन्नासीत आसनात् ।
स्थितश्चोपविशेत् कुर्वन् भद्रमेवोभयं मतम् ।। ११७।।

यदि पूछनेवाला प्रश्न पूछते हुए आसन से उठ खड़ा हो और फिर न बैठे या खड़े होकर प्रश्न करके फिर बैठ जाय तो प्रश्नफल कल्याणकारी (भद्रङ्कर) होता है ।।११७।।

दृष्टिपथे प्रष्टुः मुहुर्मुहुः स्तम्भनफलम्

प्रष्टा दृष्टिपथं प्राप्य स्थित्वा स्थित्वागमद्यदि ।
अतीत्य स्थितिसंख्याहान्यस्य कार्यस्य साधनम् ।। ११८।।

दैवज्ञ के दृष्टिपथ में यदि प्रष्टा बार-बार रुक-रुक कर आता हुआ दृष्टिगोचर हो तो जितनी बार वह रुकता है उतने ही दिनों में उसका कार्य सिद्ध होता है ।।११८।।

अन्तरागमनफलम्

अन्तरा दूतमात्मानं यदि कश्चन गच्छति ।
अनागमं सहायस्य कल्पितस्यास्य निर्दिशेत् ।। ११९।।

यदि प्रश्नकाल में पृच्छक तथा दूत के मध्य से कोई चला जाय यह अन्तरागमन है इसमें कार्य हेतु सहयोग नहीं मिलेगा अर्थात् कोई अड़ंगा लग जायेगा । परन्तु यदि दोनों के बीच में कोई आड़ा न हो (रास्ता न काटे) तो उस कार्य में अपेक्षित सहयोग मिल जायेगा ।।११९।।

दूतस्य प्रश्नविस्मरणादिफलम्

हस्तौ धून्वन् विमृदंश्च तिरश्चीनमुखः स्थितः ।
विस्मृतस्वार्थ इत्येतैर्यत्पृष्टं तद् विनश्यति ।। १२०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि पृच्छक हाथों को हिलाते या मटकाते हुए या मींड़ते (मसलते या रगड़ते) हुए प्रश्न करे या उसका मुख तिरछा या टेढ़ा हो, उसे अपना प्रश्न ही भूल जाय तो वह जो पूछता है उसका फल असफलता तथा हानि होता है ॥१२०॥

अङ्गप्रहारादिफलम्

स्वाङ्गेष्वन्यत्र वा द्रव्ये गाढसन्ताडनं क्षणात् ।
मृत्युदं लयलिङ्गानां चिन्तेक्षाश्रवणादिकम् ॥ १२१ ॥

यदि पृच्छक अपने अंगों का जोर से ताड़न करे (हाथ या मुष्टि प्रहार करे या किसी अन्य वस्तु को पीटे) तो मृत्युदायक होता है । यदि लयलिंगों (सर्पदंश, कूपपतन, अग्निकाण्ड, दुर्घटना आदि) से सम्बन्धित घटनाएँ देखने या सुनने को मिलें तो भी अशुभ फल होता है ॥१२१॥

दूतस्य रुदनादिफलम्

सुप्ते मुक्तकचेऽशुचौ रुदति वा भग्नागमे मुण्डिते;
नग्ने छिन्दति निन्दति द्रवति वा वह्नौ हविर्जुह्वति ।
दूते हस्तपदां च बन्धनपरे दोष्णाक्षिसम्मर्दने;
दीने काष्ठतृणादिमर्दनपरे न स्याद्विचारः शुभः ॥ १२२ ॥

यदि प्रश्नकर्त्ता लेटकर, खुले बालों से युक्त, अपवित्र या मलिन स्थिति में, रोता हुआ, रुक-रुककर मुण्डित शिर होकर, नग्न (केवल कौपीन, लंगोट या निकर पहिने हुए), किसी चीज को काटते (तोड़ते) हुए, निन्दात्मक शब्द बोलते हुए, द्रवित होते हुए (घबराहट में), अग्नि में हवन करते हुए (या चुल्हा आदि सुलगाते हुए), दूत के हाथ-पैर जुड़े हुए हों, वह अपने हाथों एवं आँखों को रगड़ता हो तथा दीन होकर काष्ठ, तृण आदि तोड़ता हुआ यदि प्रश्न करता है तो प्रश्न का फल शुभ नहीं होगा ॥१२२॥

दूतस्य पाशोद्वर्तनादिफलम्

पाशोद्वर्तनके नखैर्लिखति वाप्युत्सारिते वारिते,
साभ्यङ्गे भसितास्थिसीसशकृतां भर्तर्यपि व्याधिते ।
वस्त्रप्रावृतकन्धरे च मलिने रूक्षाशुभालापिनि
प्रश्नौ नैव शुभाय निर्वपति वा पिण्डान् परेतान् प्रति ॥ १२३ ॥

यदि पृच्छक पाशोद्वर्तन करते हुए (चौपड़, शतरंज, ल्यूडो, कैरम आदि के पाशे फैंकते हुए या गोटियाँ रखते हुए या ताश फैंटते हुए, जुआ आदि खेलते हुए) प्रश्न करे अथवा नाखूनों से लिखते हुए, घर के भीतर-बाहर जाते-आते हुए (आगे बढ़कर फिर पीछे हटते हुए) प्रश्न करे, उसे कोई रोक रहा हो, तैल मालिश किये हुए, उबटन किये या साबुन आदि लिपटे हुए, भस्म (राख), हड्डी, लोहा, गोबर, गन्दगी आदि से युक्त, स्वामी के रोगी होते हुए स्वयं भी रोगी होकर कन्धों या गर्दन के चारों ओर वस्त्र लपेटे हुए,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मलिन, रूखे तथा अशुभ वचन बोलते हुए, बाल काटते हुए, प्रेतादि को पिण्डदान करते हुए प्रश्न करे तो फल शुभ नहीं होता है ॥१२३॥

दूतस्य शस्त्रादिधारणफलम्

वासीखङ्गपलालजालकतुषापादत्रपिच्छत्वचां
शृङ्गस्यापि च वाहके च विकले सम्मार्जनीधारिणी।
प्रेतालङ्कृतिशूर्पपाशमुसलान् भर्तर्युपेते क्षुधा,
दैवज्ञेऽपि च पृच्छके न च शुभो ज्ञेयो विचारः क्वचित्॥ १२४॥

यदि पृच्छक वासी (चाकू, छुरी, हंसिया, दराती, खुरपी, नश्तर, विश्वुरी या शस्त्रकर्म का औजार), तलवार, मांसखण्ड, जाल, भूसा, पत्ता (घास-फूँस), पंखा, त्वचा (चमड़ा), सींग आदि पदार्थ लिये हो, विकल हो, झाडू लिये हो, प्रेत के लिए फूल, अलंकार आदि, शूर्प, पाश, मुसल आदि लिये हुए हो या भूख से पीड़ित हो या स्वयं दैवज्ञ इस स्थिति में हो तो भी दोनों के लिए प्रश्नफल पूछना तथा उत्तर देना शुभ नहीं जानना चाहिए ॥१२४॥

दूतस्य मनोभावफलम्

दौर्मुख्यं वदनारूढशोककोपश्रमादिभिः।
वैमनस्यञ्च दूतस्य येन केनापि दोषकृत्॥ १२५॥

यदि दूत के चेहरे पर शोक, कोप, थकान, किसी के साथ वैमनस्य आदि के भाव हों तो अशुभ फल के सूचक होते हैं ॥१२५॥

शुभदूतलक्षणम्

सुन्दरश्च कुलीनश्च विनयी च निरामयः।
सुप्रसन्नश्च दूतश्चेत्प्रष्टा सुखमवाप्नुयात्॥ १२६॥

यदि पृच्छक दूत सुन्दर, कुलीन, विनयी, निरोग, सुप्रसन्नचित्त हो तो प्रश्नफल शुभ होता है ॥१२६॥

दूतस्य नेत्रचेष्टाफलम्

उन्मिषदम्बकयुगलो मङ्गलपदार्थदृढतरनिहितेक्षः।
अध ऊर्ध्वेक्षणरहितो लभतेऽभीष्टं प्रतीपदृग्दुःखम्॥ १२७॥

यदि दूत आँखों के पलक न झपकाते हुए, माँगलिक पदार्थों पर टकटकी लगाये हुए (ध्यान केन्द्रित किये हुए), ऊपर या नीचे न देखते हुए (सीधी दृष्टि में) प्रश्न करे तो फल शुभ होता है। इसके विपरीत स्थिति में अशुभ फल होता है ॥१२७॥

दूतस्य वेश-भूषाफलम्

तोयार्द्रभिन्नमलिनारुणनीलवासा
रक्तप्रसूनभृदपि व्यसनं प्रयाति।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वासः सितं सुरभिगौरशुभानुलेप-
भूषा दधच्च खलु मङ्गलमेति नूनम्।। १२८।।

यदि दूत पानी से भींगे, फटे, मैले, लाल रंग या नीले रंग के वस्त्र पहिने हो, लाल रंग के फूल लिये हो तो प्रश्न का फल अशुभ (संकटदायक) होता है। इसके विपरीत यदि श्वेत वस्त्र, सुंगधित अनुलेपादि—जो शुभ्रवर्ण का हो—धारण किये हो तो निश्चित ही मंगलकारक होता है ।।१२८।।

दूतस्य द्रव्यस्पर्शफलम्

बिभ्राणो मङ्गलद्रव्यं पृच्छको याति मङ्गलम् ।
रिक्तपाणिरमङ्गलद्रव्यभृच्चाशुभं व्रजेत् ।। १२९।।

मङ्गल द्रव्य लेकर आने वाले पृच्छक का मंगल होता है। खाली हाथ (बिना दक्षिणा-पुष्पादि) तथा अमंगल द्रव्य के साथ आने वाले का अमंगल होता है ।।१२९।।

फले तारतम्यकथनम्

प्रश्नकाले शुभे प्रष्टुः स्थितिस्पर्शेक्षणादिके ।
दैवज्ञचित्ते तुष्टे च स्यादिष्टार्थसमागमः।। १३०।।
मनोगतफलप्राप्तिरशुभेष्वेषु नो भवेत्।
मिश्रेषु येषामाधिक्यं फलं तेषां विनिर्दिशेत्।। १३१।।

यदि प्रश्न का समय, पृच्छक की स्थिति, पृच्छक का स्पर्श, पृच्छक की दृष्टि आदि शुभ हो एवं दैवज्ञ का मन प्रसन्न हो तो पृच्छक का अभीष्ट कार्य सफल होता है ।।१३०।।

उपर्युक्त सभी स्थितियाँ यदि अशुभ हों तो पृच्छक को मनवांछित फल नहीं मिलता है। यदि शुभाशुभ दोनों प्रकार के संकेत हों तो उसमें जिसकी अधिकता हो उसके तारतम्भ से फल कहना चाहिए ।।१३१।।

अथ तत्कालजानि शुभाशुभनिमित्तानि उच्यन्ते

प्रश्ने यदुच्यते यच्च श्रूयते यच्च दृश्यते।
तत्सादृश्येन सकलं प्रष्टुर्वाच्यं शुभाशुभम्।। १३२।।

प्रश्नकाल में जो कुछ कहा जाता है, जो कुछ श्रवणगोचर होता है, जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है—तत्सादृश्य के अनुसार ही दैवज्ञ को पृच्छक का शुभाशुभ फलादेश बताना चाहिए ।।१३२।।

एतदेव स्पष्टीक्रियते

यस्य कस्यापि कार्यस्य पृच्छायां प्रस्थितावपि।
तत्कार्यसाधनं वस्तु दृष्टं चेत्तत्तु सिध्यति।। १३३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किसी कार्य से सम्बन्धित प्रश्न हो उस कार्य से सम्बन्धित वस्तु, साधन आदि यदि प्रश्नकाल में दिखें तो वह कार्य सिद्ध होता है । इसी प्रकार यात्रा से सम्बन्धित प्रश्न में यात्रा का साधन (वाहन आदि) या वस्तु दिखे तो यात्रा अवश्य होती है ।।१३३।।

मान लीजिए—विवाह सम्बन्धी प्रश्न के समय यदि उस स्थान पर कोई कुमारी या नव परिणीता दिखाई दे तो युवक का विवाह अवश्य होगा । कुमारी के विवाह प्रश्न समय कुमार युवक (सजातीय) का दिखायी देना विवाहसूचक होता है ।

विवाहप्रश्ने शकुनादिकम्

नववस्तुद्वयादीनां दर्शनं करसङ्ग्रहे ।
सिद्धये तदसिध्यै स्याद् वियोगस्तु कयोरपि ।। १३४।।
रन्ध्रेऽङ्गुलिप्रवेशे तु कन्यया दूषणं वदेत् ।
यस्या यः कश्चिदागच्छेद् विवाहोस्यां दिशीर्यताम् ।। १३५।।

यदि विवाह प्रश्न के समय नवदम्पति या अन्य किन्हीं नव वस्तुओं का जोड़ा दिखायी दे (पशु-पक्षियों का नर-मादा का जोड़ा दिखे) तो विवाह अवश्य होता है परन्तु यदि उनमें से किसी का वियोग हो तो विवाह नहीं होता है ।।१३४।।

यदि विवाह प्रश्न के समय पृच्छक या समीपस्थ का कोई अन्य व्यक्ति शरीर के किसी छिद्र (आँख, कान, नाक, मुख या भाग) में अंगुली प्रवेश करे तो वर या कन्या के उस अंगादि में रोग या विकार कहना चाहिए । विवाह के प्रश्नकाल में यदि कोई अन्य व्यक्ति तुरन्त आवे तो वह जिस दिशा से आया है उसी दिशा में विवाह बताना चाहिए ।।१३५।।

सन्ततिप्रश्ने शकुनादिकम्

घुटिकापुस्तिकाद्यं यद्विद्याभ्यासनसाधनम् ।
किङ्किणीकटकादीनि भूषणानि शिशोरपि ।। १३६।।
मेखलाजिनदण्डाश्च गर्भिणी बालकस्तथा ।
एतेषां दर्शनादीनि भवेयुः पुत्रसिद्धये ।। १३७।।

सन्तति प्रश्न के समय यदि घुटिका (स्लेट, पट्टी, तख़्ती), पुस्तिका या विद्याभ्यास के साधन (लेखनी, पेंसिल, ज्योमेट्री बक्स, स्कूल बैग आदि), करधनी (बेल्ट), कटक (प्राचीनकाल में पहिना जाने वाला बच्चों का आभूषण) आदि आभूषण (शिशु की चड्ढी, बनियान, वस्त्रादि भी), मेखला, अजिन, दण्ड (ये सब प्राचीन विद्यार्थियों की वस्तुएँ थी), गर्भिणी, बालक—इन सब के दर्शनों से सन्तान प्राप्त होती है ।।१३६-१३७।।

गर्भप्रश्ने शकुनादिकम्

दर्शनं ज्वलितस्याग्नेर्मलादित्यजनं तनोः ।
यानं कस्यापि तद्देशाद्गर्भच्छिद्रस्य सूचकम् ।। १३८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गर्भस्थिति प्रश्न के समय यदि जलती हुई आग दिखलायी पड़े, शरीर के अंगों से मल निकलता दिखाई दे (आँखों से कीचड़, मल-मूत्रत्याग, वमन, थूक, नाक सिनकना आदि) या प्रश्नस्थान से उसी समय कोई उठकर बाहर चला जाय तो गर्भपात का संकेत होता है ॥१३८॥

युद्धप्रश्ने जयप्रदाः शकुनाः

दक्षिणाङ्घ्रिं स्थिरीकृत्य स्थितिरायुधचालनम्।
मर्दनं दक्षहस्तस्य ज्वलिताग्निप्रदर्शनम् ॥ १३९॥
पुरुषस्य प्रसिद्धस्य प्रसन्नस्य च दर्शनम् ।
एतत्षट्कं विशेषेण युद्धप्रश्ने जयावहम् ॥ १४०॥

यदि कोई अपने दाहिने पैर को स्थिर करके खड़ा हो, शस्त्राभ्यास या शस्त्रसंचालन कर रहा हो, अपने दाहिने हाथ को रगड़ रहा हो, कहीं पर अग्नि जल रही हो । कोई प्रसिद्ध व्यक्ति प्रसन्न मुद्रा में जाता हुआ दिखलायी पड़े—ये छह शकुन युद्ध में विजयी कराते हैं ॥१३९-१४०॥

युद्धे पराजयकराः शकुनाः

वामपादं स्थिरीकृत्य स्थितिर्विक्लवता गिरः ।
साश्रुता मलिनेक्षा च नियम्यायुधधारणम् ॥ १४१॥
पराजयकराः पञ्च युद्धप्रश्ने विशेषतः ॥ १४२॥

युद्धप्रश्न के समय किसी का (१) वामपाद स्थिर करके खड़ा होना, (२) व्याकुल स्वर में बोलना, (३) अश्रुपात होना, (४) आँखों के आगे अंधेरा छा जाना या धुँधला दिखना तथा (५) शस्त्र को उसके खोल में बन्द कर धारण करना—ये पाँच शकुन पराजय के संकेत होते हैं ॥१४१-१४२॥

प्रस्थानप्रश्ने शकुनाः

यत्किञ्चित्कार्यमुद्दिश्य प्रस्थाने यदि पश्यति ।
सुवर्णं वा फलं वा स्याद् द्रव्यलाभो न संशयः ॥ १४३॥

अभीष्ट कार्यार्थ प्रस्थान करते समय यदि सुवर्ण (Gold) या आभूषण दिखायी दें या फल दिखायी दें तो यह शकुन गमनकर्ता को नि:सन्देह द्रव्यलाभ करायेगा ॥१४३॥

रोगप्रश्ने शकुनाः

आरुह्य वा समाश्रित्य जीववद्वस्तु पृच्छति॥
प्रश्ने चाऽगच्छति प्राणी तं देशं प्रति कश्चन ॥ १४४॥
जीवत्येव ध्रुवं रोगी म्रियते वैपरीत्यतः ॥ १४५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोग या रोगी से सम्बन्धित प्रश्न के समय यदि कोई भी व्यक्ति किसी जीवित प्राणी पर (हाथी, घोड़ा, बैल आदि पर) सवार होकर आता दिखायी दे या प्रश्नस्थल पर आ जाय तो रोगी सुनिश्चित रूप से जीवित रहेगा। इसके विपरीत शकुन होने पर मृत्यु होती है ॥१४४-१४५॥

आयुःप्रश्ने शकुनाः

पितृपुष्पं तिलं वह्निर्नूतनं वसनं तथा।
दर्भदध्यादिनिखिलं सम्भृतं पितृकर्मणे॥ १४६॥
मरणानन्तरापेक्षं द्रव्यं यत्सकलन्तु तत्।
एतेषां दर्शनं नूनमायुः प्रश्ने मृतिप्रदम्॥ १४७॥

पितृकार्य हेतु लाये गये पुष्प, तिल, अग्नि, नूतन वस्त्र, कुश (दर्भ), दधि आदि वस्तुएँ (समिधाएँ, दशगात्र का सामान, ऊन, जौ का आटा, लकड़ीकंडा, घी आदि)— ये जो भी मृतक के दाहसंस्कार या दफनाने के लिए प्रयुक्त सामग्री है उसका दर्शन यदि आयु प्रश्न के समय हो तो निश्चित रूप से जिसके सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया है उसको मृत्यु देने वाला है ॥१४६-१४७॥

यात्राविघ्नकराः शकुनाः

शयनं चोपवेशश्च पृष्ट्वा यात्रा विघातकृत्।
पादव्यत्याससङ्कोचौ विलम्बनकरौ ध्रुवम्॥ १४८॥
पृष्ट्वोत्थानञ्च यानञ्च यात्रालाभाय सत्वरम्॥ १४९॥

यात्राप्रश्न में प्रश्न पूछने के बाद शयन कर जाना, बैठक लगा जाना यात्रा में विघ्न उपस्थित करता है (तात्पर्य यह है कि यात्राप्रश्न पूछने के तुरन्त पश्चात् शयन तथा उपवेशन नहीं करना चाहिए अपितु यात्रा की तैयारी करनी चाहिए)। इसके विपरीत यदि पृच्छक प्रश्न पूछकर चल देता है तो यात्रा के लिए शुभ होता है। पृच्छक द्वारा प्रश्न पूछ कर फिर पालथी मार कर बैठ जाना या पैर फैलाना यात्रा में विलंब करता है ॥१४८-१४९॥

सन्धिप्रश्ने शकुनाः

पाणिग्रहणमन्योऽन्यं द्वयोः कस्यापि चागमः।
सन्धये छेदभेदादि सर्वं सन्धिविरोधकृत्॥ १५०॥

यदि सन्धिप्रश्न के समय दो व्यक्ति आपस में हाथ मिला रहे हों तो सन्धि हेतु किसी का आगमन होता है। यदि समझौते (राजीनामा) के प्रश्नकाल में किसी वस्तु को काटते हुए, अलग करते हुए एवं छेद करते हुए देखा जाय तो सन्धि में मतभेद होने से या किसी के द्वारा फूट डालने से सन्धि नहीं होती है ॥१५०॥

कार्यहानिकराः शकुनाः

हाहाखेदरवं क्षुतं च पतनं चैत्यध्वजादेस्तथा
वस्त्रच्छत्रपदत्रविक्षतिमपि ध्वंसार्थनानागिरः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

क्रूराणां मृगपक्षिणां प्रतिदिशं वाचश्च दीपक्षयः
पातं पूर्णघटादिकस्य च बुधाः कष्टं निमित्तं विदुः ।। १५१।।
मार्जारडुण्डुभोलूकगोधाद्यशुभदर्शनम् ।
गौलल्यां च रुतं नाशाय वामे दक्षे तथा क्षुतम् ।। १५२।।

यदि प्रश्नस्थल पर हाहाकार, खेद ध्वनि, पश्चात्तापसूचक शब्द सुनाई पड़ें, छींक का शब्द हो, कोई पूज्य चैत्य (चबूतरा—पीपल, वट आदि पूज्य वृक्ष) तथा ध्वजा (झण्डा) गिर पड़े, कपड़ा फट जाय, छाता गिर पड़े या फट जाय, जूता अचानक फट जाय, विध्वंस (दंगा, उपद्रव) आदि हो, क्रूर पशु-पक्षियों (गीदड़, कौआ आदि) की बोली चारों ओर सुनायी पड़ें, जलता हुआ दीपक बुझ जाय (या अचानक बिजली चली जाय), भरा हुआ घड़ा फैल जाय या फूट जाय तो विद्वान् लोग इन शकुनों के दर्शनों को कष्टसूचक कहते हैं ।।१५१।।

यदि प्रश्नकाल में दैवज्ञ के वाम भाग में बिल्ली, डुण्डुभ (निर्विष सर्प, कुचलैंड़, दोमुँहा साँप), उल्लू (घुग्घू, घुकुआ, खूसटी, खुसिटिया, कोचर आदि), गोधा (गोह, विषखपरा) आदि का दर्शन हों तो अशुभ होता है । गोलली (छिपकली) का शब्द यदि बाँईं ओर हो तो कार्यनाशक होता है । यदि दाहिने भाग में छींक हो तो अशुभ होता है ।।१५२।।

इस श्लोक में गौलली शब्द का अर्थ एक हिन्दी टीकाकार ने गधा किया है जो मेरी दृष्टि में ठीक नहीं है । इसका अर्थ छिपकली (Wall lizard) ही समीचीन है, क्योंकि छिपकली का शब्द यदि वाम भाग में हो तो अशुभ होता है—

''वामभागे स्वरङ्कुर्वतीऽभव्या'' ।

(वसन्तराजशाकुन पर भानुचन्द्र सं.टीका)

नामकीर्तने शुभाशुभशकुनाः

प्रशस्ताः कीर्तने कोलगोधाहिशशजाहिकाः ।
न दर्शने न विरुते वानरक्षवितोऽन्यथा ।। १५३।।

यदि प्रश्नकाल में कहीं से कोल (सूअर, शूकर, Hog, Pig), गोधा (गोह = Lizard), अहि (सर्प), शशज (खरगोश / Hare = Rabbit), अहिक (अन्धा साँप)—इनका नाम सुनाई पड़े तो शुभफल होता है । इसी प्रकार बन्दर तथा रीछ-भालू के शब्द (बोली) तथा दर्शन तो शुभ होते हैं परन्तु इनका नाम लेना अशुभ होता है ।।१५३।।

वानर का बोलना तथा दिखायी देना ''वसन्तराजशाकुन'' (जो कि शकुनशास्त्र का प्रसिद्ध ग्रन्थ है) के अनुसार भी शुभ होता है परन्तु उसका नाम लेना या सुनना भयप्रद होता है—

''रुतेक्षणं ग्रामवलीमुखस्य जयाय नामग्रहणं भयाय'' ।

(वसन्तराजशाकुन वर्ग १४ श्लोक १९)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"ग्रामवलीमुखस्य वानरस्य रुतेक्षणे जयाय स्याताम् ।
नामग्रहणं भयाय स्यात् ।"

(भानुचन्द्रगणि कृत टीका)

बन्दर का नाम लेना श्री गोस्वामी तुलसीदासजी को भी अभीष्ट नहीं लगा अतः उन्होंने हनुमान्‌जी के मुख से अपनी वानर जाति की हीनता का वर्णन करते हुए कहलवाया है—

"प्रात लेइ जो नाम हमारा।
तेहि दिन ताहि न मिलै अहारा॥"

(श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड ७/८)

अर्थात् (हे विभीषण) जिस दिन कोई व्यक्ति प्रातःकाल हमारा नाम (वानर) पुकारता है उसे दिनभर के लिए अपशकुन हो जाता है और परिणामस्वरूप उसे दिनभर आहार (भोजन) नहीं मिलता है अर्थात् दिनभर भूखा रहना पड़ता है ।

शुभशकुनाः

मातङ्गाश्ववृषादीनां पृच्छाकाले रुतं यदि ।
तेषां वा दर्शनं तर्हि प्रष्टाभीष्टमवाप्नुयात् ॥ १५४॥

प्रश्नकाल में हाथी, घोड़ा, गाय, बैल, भैंस का रंभानार (बोलना, चिंघाड़ना, हींसना, रैंकना आदि) दिखायी देना तथा उनके विषय में बातचीत सुनाई पड़ने पर पृच्छक को अभीष्ट लाभ होता है ॥१५४॥

अन्यशुभशकुनाः

वीणावेणुमृदङ्गशङ्खपटहध्वानं च भेरीरवं
गीतं मङ्गलमङ्गनां च गणिकां दध्यक्षतेक्ष्वादिकम् ।
दूर्वाचन्दनपूर्णकुम्भकुसुमं मालां फलं कन्यकां
घण्टां दीपसरोरुहे च शुभदं विद्यान्निमित्तं बुधः ॥ १५५॥

वीणा (सारंगी, सितार आदि भी), बाँसुरी, मृदङ्ग (ढोलक तथा तबला आदि भी), पटह (पटह = नगाड़ा जैसा वाद्य) का बजना, भेरी की आवाज सुनाई पड़ना, सौभाग्यवती स्त्रियों के गीतों का सुनाई पड़ना, वेश्या, दही, अक्षत, ईख, दूब, चन्दन, जल से पूर्ण कलश, पुष्प, पुष्पमाला, फल, कन्या, घण्टा, दीपक तथा कमल— इन सबका दर्शन एवं ध्वनिश्रवण शुभ फल का निमित्त होता है । ऐसा विद्वानों का कथन है ॥१५५॥

पुनश्च शुभशकुनानां कथनम्

छत्रं तोरणहृद्ययानशकटं स्तोत्रं च वेदध्वनिं
बद्धं चैकपशुं वृषञ्च मुकुरं स्वर्णं सवत्साञ्च गाम्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भक्ष्यं चोद्धृतमृत्तिकां बुधवरं यच्चान्यदिष्टं श्रुतं
दृष्टं श्रोत्रदृशोश्शुभं तदखिलं प्रश्ने निमित्तं विदुः ।। १५६।।

छत्र (राजाओं के सिर पर लगने वाला सोने-चाँदी निर्मित छाता), तोरण (बन्दनवार या स्वागत द्वार), मनोहर यान, शकट (गाड़ी) के दर्शन होना, स्तोत्रपाठ या वेदध्वनि (जय शब्द, कथा-कीर्तन, भजन, मानसपाठ, संतप्रवचन) आदि सुनाई पड़ना, खूँटे आदि से बँधा हुआ एक पशु, बैल, दर्पण, स्वर्ण, बछड़े के साथ गाय, भोज्य पदार्थ, खोदकर लायी गई मिट्टी, विद्वान्-पण्डित तथा अन्य मनोहारी पवित्र वस्तुओं के दर्शन, श्रवण, दर्शनीय शुभ पदार्थादि प्रश्न में शुभ शकुन होते हैं ।।१५६।।

उपसंहारः

लोकच्छास्त्रमुखात्तथा गुरुमुखादन्यन्निमित्तान्तरं
विज्ञातव्यमतः शुभाशुभफलं प्राज्ञैः प्रयत्नादिह ।
यद्यद् पृच्छति पृच्छकोन्तिकगतं तन्नाशचिह्नं भवेत्
नाशः स्यादिह तस्य तस्य न चिरात्तद्रव्यत्यये व्यत्ययः ।। १५७।।
ज्ञात्वैत्सकलं सम्यक् समयादि शुभाऽशुभम् ।
एतैरेवाखिलं वस्तुं शक्यं प्रष्टुः शुभाऽशुभम् ।। १५८।।

।। इति प्रश्नमार्गे द्वितीयोऽध्यायः ।।

सामान्य जनता से शास्त्रमुख तथा गुरुजनों के मुख से अन्य भी शकुन हैं, उनको जानना चाहिए और उनके अनुसार विद्वानों को सावधानी से प्रयत्नपूर्वक फल कहना चाहिए । पृच्छक जो-जो पूछे उस समय उसके समीप अशुभ शकुन दिखाई दें तो पृच्छक का कार्य असफल होता है । इसके विपरीत यदि शुभ शकुन उपस्थित हों तो पूछा गया कार्य सफल होता है ।।१५७।।

इस प्रकार प्रश्नकाल के समयादि का भलीभाँति ज्ञान करके अच्छी तरह ऊहापोह करके इनके आधार पर प्रश्न का सम्पूर्ण शुभाशुभ फल कहा जा सकता है ।।१५८।।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय'
हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का दूसरा अध्याय पूर्ण हुआ ।। २।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ तृतीयोऽध्यायः

अथ निर्गमनसमये निरूपणीयान्युच्यन्ते

प्रश्नकालोद्भवं बुद्ध्वा सदसत्समयादिकम् ।
निर्गच्छेत्समये जीवकालहोरादिके शुभे ।। १।।

पृच्छक को प्रश्नकाल का शुभाशुभ समय पूछकर के ही दैवज्ञ के समीप जाना चाहिए। (क्योंकि शुभ समय में पूछा प्रश्न शुभ फल देता है और अशुभ समय में पूछा प्रश्न अशुभ फल देता है।) प्रश्न पूछने के लिए गुरु के होरा (कालहोरा) में निकलना तथा प्रश्न पूछना शुभ रहता है ।।१।।

शुभाशुभनिमित्तं यत्प्रश्नकालसमुद्भवम् ।
उक्तं निखिलमप्येतच्चिन्तनीयं हि निर्गमे ।। २।।

प्रश्नकाल में जो शुभाशुभ शकुन कहे गये हैं उन सब का विचार पृच्छक को घर से निकलते समय अवश्य करना चाहिए ।।२।।

तात्पर्य यह है कि यदि अशुभ शकुन हों तो दैवज्ञ के पास न जाकर घर वापस लौट जाना चाहिए तथा पुनः शुभ समय तथा शुभ शकुनों के साथ निकलना चाहिए।

होरा—इसे कालहोरा भी कहते हैं। प्रत्येक वार को सूर्योदय के समय उसी वार का होरा एक घण्टा (होरा) तक रहता है। फिर उस होरा से छठे वार का होरा, फिर उस छठे वार के होरा से पुनः छठे वार का होरा रहता है। घटियों के हिसाब से होरा ढाई घटी तक रहता है। होरा ज्ञान हेतु प्रति वार का चक्र निम्न प्रकार है—

होराबोधकचक्रम्

होरा घंटा	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२
होराघटी	२॥	५	७॥	१०	१२॥	१५	१७॥	२०	२२॥	२५	२७॥	३०
सूर्य	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.
चन्द्र	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.
मंगल	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.
बुध	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	च.	श.	गु.	मं.
गुरु	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.
शुक्र	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.
शनि	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होरा घंटा	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४
होराघटी	३२॥	३५	३७॥	४०	४२॥	४५	४७॥	५०	५२॥	५५	५७॥	६०
सूर्य	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.
चन्द्र	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.
मंगल	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.
बुध	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.
गुरु	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.
शुक्र	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.
शनि	बु.	चं.	श.	गु.	मं.	सू.	शु.	बु.	चं.	श.	गु.	मं.

अब पाठक देखेंगे कि बृहस्पति का कालहोरा प्रति वार को निम्नानुसार रहता है—

रविवार को छठे, तेरहवें तथा बीसवें घण्टे में; सोमवार को तीसरे, दशवें, सत्रहवें तथा चौबीसवें घण्टे में; मंगलवार को सातवें, चौदहवें तथा इक्कीसवें घण्टे में; बुधवार को चौथे, ग्यारहवें, अठारहवें में; गुरुवार को पहिले, आठवें तथा पन्द्रहवें घण्टे में; शुक्रवार को पाँचवें, बारहवें, उन्नीसवें घण्टे में और शनिवार को दूसरे, नौवें तथा सोलहवें घण्टे में गुरु का होरा रहता है।

निर्गच्छतोऽम्बरं सङ्गमेति भूमौ पतेच्च वा।
छत्राद्यं यत्करस्थं वा भवेदेवाशुभाय तत्॥ ३॥

जब पृच्छक प्रश्न पूछने के लिए ज्योतिषी के पास घर से निकले उस समय यदि हाथ में लिया छाता, दण्ड आदि उसके हाथ से छूटकर अचानक गिर पड़ें तो अशुभ फल सूचक होता है ॥३॥

आगच्छ तिष्ठ मा गच्छ प्रविश क्व नु गच्छसि।
इत्यादिवाचः प्रस्थाने भवन्त्यशुभदा दृढम्॥ ४॥

यदि घर से निकलते समय आओ, रुक जाओ, मत जाओ, भीतर आओ, कहाँ जाते हो ? इत्यादि वाक्य पृच्छक को सुनने को मिलते हैं तो अशुभफल सुनिश्चित रूप से होता है ॥४॥

पाषाणादिषू पादस्खलनं स्तम्भादिके तथा शिरसः।
नेष्टं निर्गमनेऽन्यान्यपि चिन्त्यानि लोकसिद्धानि॥ ५॥

यदि घर से चलते समय प्रश्नकर्त्ता का पैर फिसल जाय, खम्भे आदि से सिर टकरा जाय या सिर पर कुछ गिर पड़े तो यह लोकसिद्ध बात है कि नहीं जाना चाहिए ॥५॥

अथ मार्गे चिन्तनीयान्युच्यन्ते शास्त्रान्तरे

अन्यजन्मान्तरकृतं शुभं वा यदि वाऽशुभम्।
यत्तस्य शकुनः पाकं निवेदयति गच्छताम्॥ ६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शकुन व्यक्ति के पूर्वजन्मों में किये गये शुभाशुभ कर्मों के फल की सूचना देता है ।।६।।

सदसच्छकुनोद्भूतौ कर्तृभिदा सत्येव तत्फलानुभवे ।
मार्गदिभेदवशतस्तदपि च शास्त्रान्तरे कथितम् ।। ७।।

शास्त्रान्तर के अनुसार ग्रन्थकर्त्ता पृच्छक को परामर्श देते हुए कहते हैं कि—मार्ग में जो कुछ भी अच्छे-बुरे शकुन हों उन पर विचार करने के लिए मार्ग में रुकना चाहिए । यदि वह दैवज्ञ के घर का मार्ग भूल जाय तो भी रुकना उचित है ।।७।।

पथ्यात्मानं नृपं सैन्ये पुरे चोद्दिश्य देवताम् ।
सार्थे प्रधानं साम्ये तु जातिविद्यावयोऽधिकम् ।। ८।।

मार्ग में यदि व्यक्ति अकेला जा रहा हो तो उसे स्वयं ही शकुनों का फल प्राप्त होता है । यदि ससैन्य राजा जा रहा हो तो फल राजा को प्राप्त होता है । यदि किसी नगर या देवता के लिए शकुन हो तो उसका शुभाशुभ फल नगरवासियों को मिलता है । यदि मार्ग में एक ही जाति, वर्ण या सामर्थ्यवान व्यक्ति हों तो जो वयोधिक हो उसे फल मिलता है ।।८।।

शकुनानां त्रिकालेषु फलम्

शकुनफलानामपि भूतानागतवर्तमानत्वम् ।
तत्सम्भवदिग्वशतो ज्ञेयं शास्त्रान्तरोक्तमेतदपि ।। ९।।

जिस दिशा में शकुन हो उसके अनुसार ही शकुन का फल भूतकालिक, भविष्य-कालिक या वर्तमानकालिक है यह जाना जा सकता है—यह शास्त्रान्तरों में कथित है ।।९।।

आसूर्योदयात् सूर्यस्य दिग्विभागमाह

आरभ्य स्वोदयादर्कः पूर्वाद्यष्टासु दिक्ष्वपि ।
सञ्चरत्यर्धसंयुक्ताः सप्तनाडीर्द्दिवानिशम् ।। १०।।

सूर्योदय से प्रारम्भ करके सूर्य प्रत्येक साढ़े सात घटी अर्थात् ७ घटी ३० पल के हिसाब से सूर्य पूर्वादि आठों दिशाओं में रहता है ।।१०।।

सूर्यदिशाबोधक चक्र

पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशावास
७।। तक	१५ तक	२२।। तक	३० तक	३७।। तक	४५ तक	५२।। तक	६० तक	घटी प्रमाण सूर्योदय से
३ घंटा तक	३ से ६ घं. तक	६ से ९ घं. तक	९ से १२ वें घं. तक	१२ से १५ घं. तक	१५ से १८ घं. तक	१८ से २१ घं. तक	२१ से २४ घं. तक	घण्टात्मक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अब आगे के श्लोकों में सूर्य को अग्नि (कालाग्नि) मानकर उसके द्वारा सेवित दिशानुसार दिशाओं के भेद ठीक वैसे ही किये हैं जैसे कि कोई लकड़ी यदि तीन भागों में कल्पित करके अग्नि से एक छोर पर जलाना प्रारम्भ की जाय तो उसका प्रथम भाग प्रज्वलित (दीप्त) होगा, फिर कुछ दूर में दूसरा प्रज्वलित होगा; तब तक प्रथम भाग अंगारक बन चुका होगा और आगे का तीसरा भाग धूमान्वित होगा ।

सूर्यदिग्फलम्

मुक्तप्राप्तैष्यसूर्यासु फलं दिक्षु तथाविधम् ।
अङ्गारदीप्तधूमिन्यस्ताश्च शान्तास्ततो परा: ।। ११।।
तत्पञ्चमदिशां तुल्यं फलं त्रैकाल्यमादिशेत् ।
परिशेषदिशोर्वाच्यं यथासन्नं शुभाशुभम् ।। १२।।

सूर्य तीन घण्टे तक जिस दिशा में रहता है वह प्राप्त या युक्त दिशा कहलाती है । फिर जब सूर्य उस दिशा को छोड़कर आगे की दिशा में पहुँचता है तो पिछली दिशा मुक्त कहलाती है और जिस दिशा में सूर्य आगे जायेगा उसे ऐष्य दिशा कहते हैं—यही बताते हुए ग्रन्थकार ११ एवं १२वें श्लोकों में कहते हैं—सूर्य से मुक्त, प्राप्त तथा ऐष्य दिशाओं का फल दिशाओं के अनुसार इस प्रकार होता है । सूर्य से मुक्त दिशा अंगार कहलाती है, युक्त (प्राप्त) दिशा दीप्त कहलाती है तथा ऐष्य दिशा धूमिनी कही जाती है । शेष पाँचों दिशाएँ ''शान्ता'' कहलाती हैं । जिस दिशा में सूर्य हो उससे पाँचवीं दिशा में होने वाले शकुनों का फल तीनों कालों का फल मिलता है, जबकि सूर्य से मुक्त दिशा भूतकाल का; युक्त दिशा वर्तमान काल का फल देती है तथा ऐष्य दिशा भविष्य काल की सूचक होती है । शेष दिशाओं का फल वे जिस काल से निकट होती हैं उसके अनुसार शुभ या अशुभ प्राप्त होता है ।।११-१२।।

मान लीजिए शकुन के समय का इष्टकाल १० घटी है तो सूर्य का निवास अग्निकोण में होगा । सूर्य से मुक्त दिशा पूर्व होगी, इसके शकुन से भूतकालिक फल जो हो चुका है उसका बोध होगा । जो शकुन युक्त दिशा (ईशान) में होगा वह वर्तमान में फल देगा । यदि यह शकुन दक्षिण दिशा में दिखे या सुनाई पड़े तो ऐष्य दिशा (धूमिनी) होने के कारण भविष्य में फलित होगा । अग्निकोण में स्थित सूर्य से पाँचवीं दिशा वायव्य होगी अत: वायव्य कोण में होने वाला शकुन भूत-भविष्य तथा वर्तमान इन तीनों कालों में फलदायी होगा । शेष दिशाओं में नैर्ऋत्यकोण में होने वाला शकुन भविष्यकाल में फल देगा । क्योंकि यह दिशा भविष्य की दिशा दक्षिण के निकट है । यदि शकुन पश्चिम दिशा में या उत्तर दिशा में होगा तो ये दोनों दिशाएँ त्रिकालसूचक दिशा से अगल-बगल होने से त्रिकाल फल देगी । ईशान दिशा इस स्थिति में भूतकाल की दिशा पूर्व के निकट होने से भूतकाल में स्वप्न के फल की सूचक होगी ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्यस्थितिवशात् दिशानां कालसूचकत्वचक्रम्

पूर्व East	आग्नेय S.E.	दक्षिण South	नैर्ऋत्य S.W.	पश्चिम West	वायव्य N.W.	उत्तर North	ईशान N.E.	सूर्य की स्थिति वाली दिशा
उत्तर ईशान	ईशान पूर्व	पूर्व आग्नेय	आग्नेय दक्षिण	दक्षिण नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य पश्चिम	पश्चिम वायव्य	वायव्य उत्तर	भूतकाल सूचक दिशाएँ
पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	वर्तमानकाल सूचक दिशाएँ
आग्नेय दक्षिण	दक्षिण नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य पश्चिम	पश्चिम वायव्य	वायव्य उत्तर	उत्तर ईशान	ईशान पूर्व	पूर्व आग्नेय	भविष्यकाल सूचक दिशाएँ
नैर्ऋत्य पश्चिम वायव्य	पश्चिम वायव्य उत्तर	वायव्य उत्तर ईशान	उत्तर ईशान पूर्व	ईशान पूर्व आग्नेय	पूर्व आग्नेय दक्षिण	आग्नेय दक्षिण नैर्ऋत्य	दक्षिण नैर्ऋत्य पश्चिम	त्रिकालसूचक दिशाएँ

सरलार्थ यह है कि सूर्यस्थित दिशा को प्रथम मानने पर प्रदक्षिणक्रम (Clockwise) से पहली दिशा वर्तमानकाल, दूसरी दिशा भविष्यत् काल, तीसरी दिशा भविष्यत्काल, चौथी-पाँचवीं-छठी दिशाएँ त्रिकाल, सातवीं-आठवीं दिशाएँ भूतकाल की सूचक होती हैं। इस प्रकार वर्तमानकाल हेतु केवल एक दिशा, भविष्य तथा भूत काल हेतु दो-दो दिशाएँ तथा त्रिकाल हेतु तीन दिशाएँ निर्धारित हैं।

राज्ञादीनां दिक्कथनम्

राजा कुमारो नेता च दूतः श्रेष्ठी चरो द्विजः ।
गजाध्यक्षश्च पूर्वाद्याः क्षत्रियाद्याश्चतुर्दिशः ।। १३।।
गच्छतस्तिष्ठतो वापि दिशि यस्यां प्रतिष्ठितः ।
विरौति शकुनो वाच्यस्तद्दिक्स्थेन समागमः।। १४।।

(१) राजा, (२) युवराज, (३) प्रधानमंत्री, (४) दूत, (५) वित्तमंत्री, (६) गुप्तचर विभाग, (७) ब्राह्मण (शिक्षामंत्री) तथा (८) गजाध्यक्ष (यातायात मंत्री) इनकी कल्पना पूर्वादि आठ दिशाओं में करनी चाहिए। इसी प्रकार पूर्व में क्षत्रिय, दक्षिण में वैश्य, पश्चिम में शूद्र तथा उत्तर में ब्राह्मण की स्थिति जानना चाहिए। चलते हुए या बैठे हुए व्यक्ति (पृच्छक) को जिस दिशा में शकुन दिखायी पड़े उसी दिशा से उस राजादि का आगमन जानना चाहिए ।।१३-१४।।

स्पष्टीकरणम्

प्राच्यां खलु शकुनो यदि खलु भविता समागमो राज्ञा।
राजकुमारेणाग्नौ याम्यादिष्वेवमेव नेतृमुखैः ।। १५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्वोक्त तथ्य का स्पष्टीकरण करते हुए कहते हैं—यदि पूर्व दिशा में शकुन दिखे या श्रवणगोचर हो तो पूर्व से राजा (राष्ट्रपति, राज्यपाल या जिलाध्यक्ष या नगराध्यक्षादि) का आगमन जानना चाहिए। अग्निकोण में शकुन होने पर राजकुमार (युवराज, उपराष्ट्रपति, उपराज्यपाल, उपजिलाध्यक्षादि) का आगमन होगा। इसी प्रकार दक्षिणादि दिशाओं से प्रमुख व्यक्ति (V.I.P.) का आगमन समझना चाहिए ॥१५॥

नेता—इस शब्द का अर्थ वर्तमान परिस्थितियों में प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, मुख्य सचिव, सचिव तथा कार्यकारी आदि जानना चाहिए। नगर तथा ग्राम के सन्दर्भ में इस अर्थ को स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार लागू करें। सेनाध्यक्षादि भी।

दूत—इस शब्द का अर्थ राजदूत, प्रतिनिधि, सन्देशवाहक आदि।

श्रेष्ठी—वर्तमान भारत के सम्बन्ध में इस शब्द का अर्थ वित्तमंत्री, वित्तसचिव, रिजर्व बैंक का गवर्नर, बैंकमैनेजर, साहूकार, उद्योगपति, व्यवस्थाप्रमुख आदि ग्रहण करें।

चर—गुप्तचरी से सम्बन्धित सभी प्रकार के अधिकारी एवं व्यक्ति तथा पुलिस आदि के सिपाही आदि को इसके अन्तर्गत मानना चाहिए।

द्विज—शिक्षा, धर्म आदि से सम्बन्धित विभागों के मंत्री तथा अधिकारी एवं शिक्षक आदि का ग्रहण इस शब्द से करे। वैज्ञानिक तथा विशेष विद्वान् भी इसी शब्द के अन्तर्गत आते हैं।

गजाध्यक्ष—यातायात एवं वाहन-व्यवस्था से सम्बन्धित विभागों के मंत्री, सचिव, अधिकारी आदि गजाध्यक्ष हैं।

सवर्णदूतेन कार्यसिद्धिमाह

पाखण्डाश्रमवर्णानां सवर्णाः कार्यसिद्धये।
ते एव विपरीताः स्युर्दूताः कार्यविपत्तये ॥ १६॥

भिक्षुओं, पादरियों एवं मौलवी आदि के लिए उनके ही संप्रदाय के दूत कार्यसिद्धि सूचक तथा अन्य दूत कार्यहानिकर होते हैं ॥१६॥

गमनपथे अपशकुनाः

कार्पासौषधकृष्णधान्यलवणं जालादि हिंसार्थकं,
भस्माङ्गारमयश्च तक्रमुरगं पूतिश्च विट्छर्दिते।
भ्रान्तापन्नजडान्धमूकबधिरक्लीबांश्च संन्यासिनो;
यद्यद्दृङ्गनसोरनिष्टमखिलं कष्टं निमित्तं विदुः ॥ १७॥

कपास या रुई, औषध, काले रंग का अनाज, नमक, हिंसादि के लिए प्रयुक्त जाल, भस्म, अंगार (कोयला), मठा, सर्प, वमन, पुरीष तथा अन्य दुर्गन्धित एवं सड़े पदार्थ, मार्ग भूला व्यक्ति (जो रास्ता या पता पूछ रहा हो) अथवा शराब या नशे में झूमनेवाला व्यक्ति (भ्रान्तापन्न), जड़ (मन्दबुद्धि या उन्मादग्रस्त), अन्धा, गूँगा, बहरा, नपुंसक,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

संन्यासी और अन्यान्य जो भी वस्तुएँ देखने, सूँघने में अरुचिकर हों उनके मार्ग में मिलने पर कष्ट का संकेत जानना चाहिए ॥१७॥

पथश्छेदो दोषकृतमाह

पथश्छेदोऽहिमार्जारगोधानकुलवानरैः ।
सर्षपेन्धनपाषाणतृणानीतिश्च दोषकृत् ॥ १८॥

यदि मार्ग गमन करते समय सर्प, बिल्ली, गोह, नेवला या वानर (दायें से बाँयें अथवा बायें से दायें किसी भी ओर) से रास्ता काट दें अथवा मार्ग में सरसों, इन्धन, पत्थर, तृण, भूषादि मिलें तो दोषकारक होता है ॥१८॥

मार्गे शुभशकुनाः

आमं मांसमथासवं मधुघृते धौतांशुकालेपनं,
रत्नेभद्विजवाजिनश्च नृपतिं संवर्धमानं नरम्।
देवं पाण्डरचामरं सुमधुरस्निग्धान्नपाने शवं;
विप्रौ च ज्वलदग्निमत्र शुभदं विद्यान्निमित्तं बुधः ॥ १९॥

कच्चे फल आदि, मांस, आसव (मदिरा), शहद, घृत, धुला हुआ वस्त्र, लेपन (चन्दन, स्नो-क्रीम-पाउडर आदि), मूल्यवान् रत्न, इभ (हाथी), द्विज (ब्राह्मण तथा पक्षी), अश्व, राजा (आज के सन्दर्भ में लाल बत्ती वाला विशिष्ट व्यक्ति), उन्नतिशील व्यक्ति, देवमूर्ति, श्वेतवर्ण का चँवर, स्वादिष्ट दूध-घी से युक्त भोजन तथा पेय पदार्थ, मुर्दा, दो ब्राह्मण, जलती हुई अग्नि—यदि ये सब मार्ग में सम्मुख हों तो शुभ हैं ॥१९॥

प्रदक्षिणं खगमृगा यान्तो नैवं श्वजम्बुकौ।
अयुग्माश्च मृगाश्शस्ताः शस्ता नित्यञ्च दर्शने ॥ २०॥

बाँयें से दायें (घड़ी के काँटों की तरह) जाते हुए पक्षी, पशु शुभ होते हैं परन्तु इस प्रकार से जाने वाला सियार (गीदड़) शुभ नहीं होता है और न कुत्ता शुभ होता है। विषम संख्या में मृग (हिरन, चिकारा, बारहसिंगा, चीतल, नील गाय आदि) प्रशस्त हैं। मार्ग में तथा प्रातःकाल विषमसंख्यक मृगों का दर्शन शुभ होता है ॥२०॥

चाषभासभरद्वाजनकुलछागबर्हिणः ।
मत्स्यौ घटीति पद्योक्तं निमित्तं च शुभप्रदम्॥ २१॥

नीलकण्ठ, भास (मुर्गा या गीध), भरद्वाज (पपीहा), नेवला (Mongoose), छाग, मयूर तथा वरामिहिर रचित बृहज्जातक में कहे गये राशियों के आकार वाले पशु तथा जीव, मिथुन-कुंभादि भी शुभ फल देते हैं ॥२१॥

इस सम्बन्ध में श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी का निम्न दोहा प्रसिद्ध है—

नकुल, सुदर्शन, दरसनी, क्षेमकरी चख चास ।
दश दिशि देखत सगुन सुभ पूजहिं मन अभिलाष ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्रृगालनकुलव्याघ्रचकोरोरगपोत्रिणः ।
गच्छन्तो दक्षिणे वामे श्वकाकाजमृगद्विपाः ।। २२।।
दृष्टाः प्रशस्ता एते तु न शुभाः स्युर्विपर्ययात् ।। २३।।

सियार (jackal), नकुल, व्याघ्र (Tiger), चकोर पक्षी, उरग (पेट के बल रेंगने वाले जन्तु) तथा पक्षी यदि दाहिने से बायें जाते हैं तथा कुत्ता, कौआ, मृग, हाथी—ये बाँयें से दायें जाते हों तो प्रशस्त हैं ।।२२-२३।।

शान्तादिशि स्वप्नफलम्

शान्ता दीप्तत्वमाशानां शकुनानाञ्च तद्वशात् ।
शुभाशुभत्वमस्त्येतदपि शास्त्रान्तरोदितम् ।। २४।।

शान्ता (सूर्य की स्थिति से ७-६-५-४३), दीप्त (सूर्ययुक्त दिशा), धूमिनी (सूर्य की स्थिति से दूसरी दिशा)—इन दिशाओं के शकुन शुभ तथा अशुभ फल देते हैं ऐसा शास्त्रान्तरो का कथन है ।।२४।।

रविमुक्तादयस्तिस्रो दीप्ता नेष्टास्ततोऽपराः ।
शान्ताःशुभाः स्वदिक्तुल्यफलं हि शकुनं मतम्।। इति।। २५।।

इन दिशाओं में आठवीं, पहली (रवियुक्त) तथा दूसरी दिशाएँ अशुभ फलदायक हैं तथा शेष पाँच दिशाएँ (तीसरी, चौथी, पाँचवीं, छठी तथा सातवीं) शान्त होने के कारण इनके शकुन नामतुल्य शुभ फल देते हैं ।।२५।।

सूर्यस्य यामार्धोदयतः पूर्वदिशाफलम्

यामादर्धमुदयात्पूर्वमारभ्याष्टासु दिक्ष्वपि ।
परिभ्रमति तिग्मांशुर्यामेष्वष्टासु सर्वदा।। २६।।
रवौ ज्वाला ततो धूमच्छायामृद्वारिभूमयः ।
भसिताङ्गारकाश्चेति प्रादक्षिण्येन संस्थितम् ।। २७।।

पूर्व में इसी अध्याय के श्लोक १०-११-१२ में सूर्योदय से प्रारम्भ कर सूर्य की स्थितिवशात् गणना की गयी है । परन्तु श्लोक २६-२७ में गणना का आरंभ सूर्योदय के यामार्ध (आधा प्रहर = डेढ़ घण्टा = पौने चार घटी) पूर्व से है । इसमें सूर्योदयादिष्ट घटी-पल में पौने चार घटी घटाकर अथवा सूर्योदय के समय में डेढ़ घंटा कम करके गणना करते हैं । तात्पर्य यह है कि इन श्लोकों में गणना का समयबिन्दु सूर्योदय से डेढ़ घण्टा पहले से है ।

आठों दिशाओं में सूर्योदय से आधा प्रहर पूर्व से ही सूर्य आठों दिशाओं में भ्रमण करता है; तदनुसार सूर्य की प्रात:कालीन स्थिति से ही होती है तथा प्रदक्षिण क्रम से की जाती है । इस प्रकार प्रथम प्रहर के आरंभ (सूर्योदय के पौने चार घटी) पूर्व से दिशाओं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की संज्ञा क्रमशः (१) ज्वाला, (२) धूम, (३) छाया, (४) मृदा, (५) जल, (६) भूमि, (७) भस्म तथा (८) अंगार होती है ॥२६-२७॥

अङ्गारादित्रयं दीप्तं शान्तं मृत्स्नादिकत्रयम् ।
छाया पूर्वं शुभं भस्म पश्चाच्चैवं शुभं भवेत् ॥ २८॥

ऊपर कथित आठ दिशाओं में तीन दिशाएँ अंगारक, ज्वाला तथा धूम ये तीनों दीप्त होती हैं । मृत्तिका, जल तथा भूमि ये तीनों दिशाएँ शान्त होती हैं । छाया का पूर्वार्ध शुभ तथा भसित (राख या भस्म) का उत्तरार्ध शुभ फलदायक है, शेष भाग अशुभ फलप्रद है ॥२८॥

मार्गे अशुभशकुनदर्शने प्रष्टुः कर्तव्यमाह

एकादशादिमेऽनिष्टे द्वितीये शकुने पुनः ।
प्राणायामाः षोडश स्युस्तृतीये तु न च व्रजेत् ॥ २९॥

यदि पृच्छक को मार्ग में चलते समय प्रथम बार अपशकुन हो तो ग्याहर बार प्राणायाम करके पुनः आगे बढ़ना चाहिए । दूसरी बार अपशकुन होने पर सोलह बार प्राणायाम कर फिर आगे चले । परन्तु यदि तीसरी बार भी अपशकुन हो जाय तो आगे नहीं बढ़ना चाहिए ॥२९॥

अथ पृच्छकगृहप्रवेशसमये निरूपणीयान्युच्यन्ते

प्रश्ने तत्कालजं यद्यन्निर्गमे यद्यदध्वनि।
प्रोक्तं प्रष्टुर्गृहप्राप्तौ तत्तत्प्रायेण चिन्त्यताम्॥ ३०॥

तात्कालिक प्रश्नों में निर्गम के समय जिन-जिन शुभाशुभ शकुनों का विचार किया जाता है; पृच्छक को अपने घर में लौटकर प्रवेश करते समय विचारना चाहिए ॥३०॥

रुग्णालये प्रवेशसमये शकुनाः

आर्तालयं विशति दैवविदीत एतद्
द्वारा निरेति यदि कोऽपि सरुङ्म्रियेत ।
द्वारा तयैव विशतीह यदीतरश्चेत्
जीवेत्स नूनमिति मे गुरुणोपदिष्टम्॥ ३१॥

रोगी के घर में यदि दैवज्ञ (अथवा चिकित्सक) प्रवेश करता है और उसी द्वार से अन्य लोगों में से कोई बाहर निकले तो वह रोगी मर जाता है । यदि उसी द्वार से कोई अन्य प्रवेश करता है तो वह रोगी निश्चय ही जीवित रहता है । ऐसा ग्रन्थकार के गुरु का उपदेश है ॥३१॥

गृहान्तिकं प्रष्टुरिहाभियाते
ततो वधूः प्रश्नविचारिणीत्थम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विनिर्गता मूलफलोपपन्ना
रजस्वलोन्मूलविनाशिनी स्यात् ॥ ३२॥

जब दैवज्ञ पृच्छक के घर प्रवेश कर रहा हो उस समय कोई सौभाग्यवती वधू मूल-फलादि लेकर उस घर से निकले और वह रजस्वला हो तो वह मूल (सन्तान) के विनाश की सूचक होती है ॥३२॥

वेदादिनिर्घोषश्रवणफलम्

वेदाध्ययनघोषश्च तथा पुण्याहनिःस्वनः ।
गन्धश्च सुरभिर्वायुः सुखस्पर्शः प्रदक्षिणः ॥ ३३॥
वृषस्य चानुलौमस्य स्वनस्तद्वद् गवामपि ।
प्रवेशसमये प्रष्टुरारोग्यादिफलाप्तये ॥ ३४॥

वैदिक ऋचाओं का उद्घोष तथा स्वस्तिवाचन या पुण्याहवाचन की ध्वनि, सुगन्धित मन्द वायु का प्रदक्षिण क्रम से सुखद स्पर्श तथा पृच्छक (प्रष्टा) के घर की ओर गूँजता हुआ बैल या गाय का स्वर दैवज्ञ द्वारा पृच्छक के गृह में प्रवेश करते समय आरोग्यादि शुभ फलों को प्रदान करने में समर्थ होता है ॥३३-३४॥

शय्यासनवाहनादीनां दर्शनफलम्

शयनासनयानानामुत्तानानां च दर्शनम् ।
न्युब्जानामितरेषां च पात्रादीनामशोभनम् ॥ ३५॥

प्रश्नकालीन समय में खड़ी हुई खटिया, आसन तथा वाहनों का खड़ा हुआ दिखाई देना और नीचे की ओर को मुख किये हुए बर्तनों (पात्रों) का दिखाई देना अशुभ फल का सूचक होता है ॥३६॥

आतुरस्य जीवनविषयकफलमाह

आतुरस्य गृहे यस्य भिद्यन्ते वा पतन्ति वा ।
अतिमात्रममत्राणि दुर्लभं तस्य जीवितम् ॥ ३६॥
निवाते दीपनाशः स्यान्मन्दिरे यस्य रोगिणः ।
स न जीवति चुल्यादौ चाग्निनाशः सतीन्धने ॥ ३७॥

॥ इति प्रश्नमार्गे तृतीयोऽध्यायः ॥

जिस रोगार्त्त व्यक्ति के घर में बारम्बार अमत्र (पात्र या बर्तन) फूटते या गिरकर आवाज करते हों, उसका जीवन दुर्लभ हो जाता है अर्थात् रोग से मुक्ति और प्राणरक्षा कठिन हो जाती है । जिस रोगी के घर में वायुवेग के बिना ही दीपक बुझ जाये और चूल्हे (बरोसी) आदि में ईंधन रहने पर भी अग्नि शान्त हो जाये, वह आतुर (रोगी) जीवित नहीं रहता ॥३६-३७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विशेष—घर के भीतर तो किसी भी अवसर पर टूटे बर्तनों एवं वस्तुओं का निषेध धर्मशास्त्र में किया गया है। महाभारत में फूटे बर्तन, टूटी खाट, मुर्गा, कुत्ता, घर के आँगन में ऊँचा वृक्ष—ये सब निन्दित कहे गये हैं। इन सबका वहाँ अलग-अलग फल भी बताया गया है—

"भिन्नं भाण्डञ्च खट्वाञ्च कुक्कुटः शुनकस्तथा।
अप्रशस्तानि सर्वाणि यश्च वृक्षो गृहे रुहः॥
भिन्ने भाण्डे कलिं प्राहुः खट्वायां तु धनक्षयः।
कुक्कुटे शुनके चैव हविर्नाश्नन्ति देवताः"॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का तीसरा अध्याय पूर्ण हुआ ॥ ३॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ चतुर्थोऽध्यायः

अथ प्रश्नानुष्ठानकथनम्

प्रश्नानुष्ठानमेतेन लक्षणान्यपि कानिचित्।
शास्त्रान्तरेषु दृष्टानि कथ्यन्ते खल्वनन्तरम्।। १।।

अब इस अध्याय में प्रश्नानुष्ठान के साथ अन्य शास्त्रों में वर्णित लक्षणों को दिया जा रहा है ।।१।।

प्रश्नफलकथनविधिः

स्नात्वा धृतसितवासा भृतभस्मा प्राङ्मुखः सुखासीनः।
आलोच्याथ निमित्तं प्रश्नविधिं प्रारभेत् गुरुभक्त्त्या।। २।।

दैवज्ञ स्नान करके भस्म धारण कर श्वेत वस्त्र पहिन कर पूर्व की ओर मुख करके अपने आसन पर सुखपूर्वक बैठे, फिर प्रश्न के निमित्तों को भलीभाँति विचार कर गुरु की भक्तिपूर्वक प्रश्नकालीन कर्त्तव्य को करे ।।२।।

प्रश्नार्थे समुचितकालमाह

अनासन्ने तु समये मध्याह्नोदययो रवेः ।
प्रश्नकर्म हि कर्त्तव्यं सुप्रसन्ने दिवाकरे।। ३।।

जब सूर्य सुप्रसन्न हो जाय (उदित होकर आकाश में चढ़ जाय) तब प्रश्न करना उचित होता है परन्तु उसके पश्चात् जब सूर्य ठीक मध्याह्न के आसन्न (निकट) हो उस समय को भी प्रश्नकाल में त्यागना उचित है ।।३।।

सूर्य ठीक से उदित न होने पर प्रश्न करना वर्जित कहा गया है, उसके तीन कारण है—प्रथम शंकु द्वारा छाया मापने में उस समय असुविधा होती थी, दूसरे प्रात:काल का समय ज्योतिषी हेतु पूजादि का होता है तथा तीसरा ऐसे समय में प्रश्नकथन ज्योतिषी के स्वयं के लिए भी अनिष्टकर माना गया है । लग्नस्थ सूर्य दैवज्ञ के लिए भारी होता है । अत: सूर्योदय के कम-से-कम डेढ़ घण्टे बाद ही प्रश्न करना उचित होता है । मध्याह्नकाल के निकट सूर्य की छाया प्राय: बनती ही नहीं है अत: अभिजित् मुहूर्त के प्रश्नकाल में निषेध का यही कारण है । मध्याह्नकालीन सन्ध्या का समय होने से भी इस समय की वर्जना की गयी है ।

सायंकाल में प्रश्नकथन करने की परम्परा नहीं है अत: सायं का उल्लेख यहाँ नहीं किया गया है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोगिप्रश्ने प्रश्नप्राक्भस्मानयनमनिष्टकरम्

प्रश्नानुष्ठानसम्भारसम्भृतौ प्राक्तु भस्मनः ।
आनीतिर्मृतिदार्तस्य दीपस्य तु शुभप्रदा ।। ४।।

यदि रोगी से सम्बन्धित प्रश्न हो और प्रश्न से पूर्व (राशिचक्र लेखनार्थ) भस्म लाई जाय तो रोगी के लिए अनिष्ट की सूचक होती है परन्तु दीपक की कालिख लाई जाय तो शुभ होती है ।।४।।

दीपकशकुनाः

सर्वप्रश्नेषु सर्वेषु कर्मस्वपि विशेषतः ।
प्रसादेनैव दीपस्य भविष्यच्छुभमादिशेत् ।। ५।।

घी, सरसों का तैल या तिलतैल का दीपक प्रज्वलित करना और उसकी लौ को देखकर प्रश्नफल कहना चाहिए । दीपकज्योति की निर्मलता से प्रश्न का फल शुभ होता है ।।५।।

दीपस्य अनिष्टसूचकलक्षणानि

वामावर्त्तो मलिनकिरणः संस्फुलिङ्गोऽल्पमूर्तिः,
क्षिप्रं नाशं व्रजति विमलस्नेहवर्त्यन्वितोऽपि ।
दीपः पापं कथयति फलं शब्दवान्वेपथुश्च,
व्याकीर्णार्च्चिर्विमलमसकृद्यश्च नाशं प्रयाति ।। ६।।

यदि दीपक की ज्योति बांई ओर को घूमती हो, दीपक मलिन किरण हो, बुझने जैसी स्थिति दिखती हो, उसकी ज्योति छोटी हो, यदि खूब तैल भरा होने पर भी दीपक बार-बार बुझ जाता हो, जलते समय शब्द (चट-चट) करता हो, उसकी लौ काँपती हो तथा बिखरी हुई ज्योति हो तो अशुभ फल होता है ।।६।।

दीपस्य शुभलक्षणानि

दीपः संहतमूर्तिरायततनुर्निर्वेपथुर्दीप्तिमान्
निःशब्दो रुचिरः प्रदक्षिणगतिर्वैडूर्यहेमद्युतिः ।
लक्ष्मीं क्षिप्रमभिव्यनक्ति रुचिरां यश्चोच्छिखो दृश्यते;
शेषं लक्षणमग्निलक्षणसमं योज्यं यथा युक्तितः ।। ७।।

जो दीपक सम्मिलित ज्योतिवाला, मोटी ज्योति वाला, अकंपित ज्योतिवाला, तीव्र प्रकाशयुक्त, निःशब्द, देखने में शोभायमान, दक्षिणावर्त ज्योतिवाला, वैदूर्य तथा स्वर्ण जैसी कान्ति से युक्त हो तो ऐसा दीपक शीघ्र ही लक्ष्मी के आगमन का सूचक होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऊँची ज्योति वाला दीपक धनलाभ का सङ्केत देता है । दीपक के शेष लक्षण अग्नि की ज्वाला की तरह निर्णीत करना चाहिए ॥७॥

दीपस्य देवत्वमाह

स्नेहो यस्येह देहो भवति तदुदरे वर्तिनी वर्तिरात्मा;
ज्वाला चायुस्तदीये विमलमलिनते सौख्यदुःखे क्रमेण ।
पात्रं गेहं समीरो मृदुपरुषगुणो बन्धुशत्रुस्वरूपः
प्रष्टुः प्रायेण वृत्तं पिशुनयति महादेवतात्मा स दीपः ॥ ८॥

स्नेह (तैल-घी इत्यादि) जिसकी देह है, उसके उदर में स्थित बत्ती जिसकी आत्मा है, ज्वाला (Flame) जिसकी आयु (Life span) है, दीपक की निर्मलता तथा मलिनता उसके क्रमशः सुख तथा दुःख हैं, पात्र जिसका घर है, मन्द गति तथा तीव्र गति की वायु जिसके मित्र तथा शत्रु की भाँति हैं—ऐसा महान् (साक्षात्) देवता रूपी दीपक पृच्छक के प्रश्नों का उत्तर संकेत रूप में प्रकट करता है ॥८॥

दीपशिखादिक्फलम्

पूर्वाभिप्रेतदात्री शिखिनि शिखिभयं दक्षिणे प्राणहानि-
नैर्ऋत्यां विस्मृतिः स्याद् वरुणदिशि शिखा शान्तिदा वायुकोणे ।
शून्य मृत्युञ्जयी स्याद् धनददिशि शिखा शं विधत्ते शिवाख्ये
वह्नेरूर्ध्वा शिखैषा वितरति वपुषोऽभीष्टवस्तूनि सद्यः ॥ ९॥

दीपशिखा की दिशा के अनुसार फल इस प्रकार है—पूर्व की ओर शिखा का झुकाव हो तो अभीष्ट सिद्धिकारक होती है । अग्निकोण की शिखा अग्निभय की सूचक है । दक्षिण दिशा की ओर उन्मुख शिखा प्राणहानि करती है । नैर्ऋत्य दिशा की शिखा याददाश्त को नष्ट करती है । पश्चिमाभिमुख शिखा शान्तिदायक होती है । वायुकोण की शिखा धन तथा मान से शून्य (रहित) करती है । कुबेर की दिशा की शिखा दीर्घायु तथा आरोग्यदायक होती है । ईशानाभिमुख दीपशिखा कल्याण करती है । ऊँची शिखा शरीर के स्वास्थ्य को उत्तम रखने वाली तथा उसके पोषण एवं धारणार्थ अभीष्ट भोज्य पदार्थ तथा वस्त्रादि देती है ॥९॥

विशेष—श्लोक ९ के तृतीय चरण में किसी-किसी प्रति में "मृत्युञ्चयी" पाठ है जिसका अर्थ मृत्युम् = मृत्यु को चयी = बढ़ाने वाली होता है । अंग्रेजी के एक विद्वान् टीकाकार ने यही पाठ तथा अर्थ दिया है, परन्तु मेरी सम्मति में दक्षिण दिशा तो यम की दिशा होने से उसके लिए यह पाठ ठीक है । उत्तर दिशा का फल तो दक्षिण के ठीक विपरीत शुभ ही होता है एतदर्थ "मृत्युञ्चयी" के स्थान पर "मृत्युञ्जयी" पाठ ही शुद्ध है जिसका अर्थ "मृत्यु को जीतने वाली" होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दीपशिखा के दिशाफल का चक्र

शं विधत्ते शिवाख्ये Good health (कल्याण)	पूर्वाभिप्रेतदात्री Prosperity (मनोकामना पूर्ति)	शिखिनि शिखिभयं Fear from fire (अग्नि या बिजली से भय)
मृत्युञ्जयी स्याद् धनदिशि शिखा Long life (दीर्घायु)	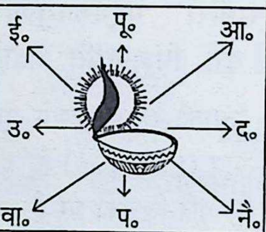	दक्षिणे प्राणहानि: Death (मृत्युभय)
वायुकोणे शून्या Poverity (निर्धनता)	वरुणदिशि शिखा शान्तिदा Peace (तनाव का अभाव)	नैर्ऋत्यां विस्मृति: Apoplexy (बेहोशी)

जन्मतो आरूढतो वा अष्टमगुलिकफलम्

प्रश्नार्थमापादितपत्रपूर्वान्
छित्वा च भित्वा गुलिकस्थराशौ ।
प्रष्ट्वष्टमर्क्षे यदि निक्षिपेच्चेत्
सद्यो मृतिः स्यान्न तु जीवदृष्टे ।। १० ।।

यदि पृच्छक का जन्मलग्न अथवा आरूढलग्न से अष्टमभाव में गुलिक की स्थिति हो तथा उस पर गुरु की दृष्टि न हो तो पूर्ववर्ती सम्पूर्ण शकुनों के शुभफल को छिन्न-भिन्न कर मृत्यु करता है ।।१०।।

राशिचक्रलेखनविधि:

शुद्धतण्डुलसम्पूर्णप्रस्थदीपाद्यलङ्कृते ।
समे सुमृष्ट संसिक्ते चक्रं लिखतु भूतले ।। ११ ।।

अच्छी प्रकार लीपे हुए धरातल पर शुद्ध चावलों जो कि एक सम्पूर्ण प्रस्थ (अंजलि भरकर) हों उनसे राशिचक्र बनावे तथा दीपादि माङ्गलिक पदार्थों से उसे अलंकृत करना चाहिए ।।११।।

हस्तप्रमाणे चतुरस्त्रखण्डे षडङ्गुलांशैर्विभजेद्दलानि ।
चतुर्दलं पद्ममिहास्तु मध्ये चतुर्भिरन्यान्यजपूर्वभानि ।। १२ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एक हाथ लम्बे तथा एक हाथ चौड़े (एक वर्ग हाथ) क्षेत्रफल में चौकोर वर्ग बनावे, उसे छह-छह अंगुलों के अन्तर से सोलह कोष्ठकों में रेखाओं द्वारा विभाजित करें। मध्य के चार कोष्ठकों में कमल बनावें, किनारों के द्वादश कोष्ठकों में मेषादि राशियाँ लिखें ॥१२॥

दक्षिण भारत में ज्योतिषी प्रश्नकर्त्ता के आने पर राशिचक्र बनाते थे। यह परम्परा केरल तथा तमिलनाडु में अद्यावधि प्रचलित है। वहाँ तण्डुल, चन्दन, भस्म आदि से आज भी राशिचक्र बनाते हैं तथा उसमें उदयलग्न लिखते हैं। उत्तर भारत के बूढ़े ज्योतिषी स्लेट-पट्टी तथा खड़िया का प्रयोग किया करते हैं। वर्तमान ज्योतिषी कागज तथा लेखनी का उपयोग भी निःसंकोच कर सकते हैं।

राशिचक्र

मीन	मेष	वृषभ	मिथुन
कुंभ	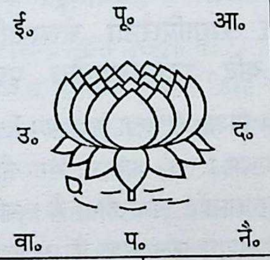		कर्क
मकर			सिंह
धनु	वृश्चिक	तुला	कन्या

दक्षिण भारत के इस राशिचक्र में राशियों के स्थान स्थिर हैं। जन्मप्रश्नादि के समय जो उदय लग्न होता है उस राशि के कोष्ठक में लग्न शब्द या राशि शब्द दिया जाता है। मान लीजिये सिंह लग्न है तो उपर्युक्त राशिचक्र में सिंह के नीचे लग्न दिया जायेगा तथा पंचाङ्ग देखकर राशियों में ग्रह स्थापन कर दिये जाते हैं।

सम्प्रदायभेदः

केचिन्निन्दन्ति दैवज्ञा भस्मना चक्रलेखनम्।
तथापि तत्र भस्मैव गृह्णन्ति बहवोऽधुना॥ १३॥

यद्यपि दैवज्ञों का एक सम्प्रदाय ऐसा भी है जो भस्म से राशिचक्र लेखन का निषेध करता है तो भी बहुसंख्यक समुदाय आज भी भस्म का ही उपयोग करता है ॥१३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैष्णव सम्प्रदाय के लोग भस्म को नापसन्द करते हैं तथा शैवजन उसका उपयोग करते हैं ।

अनुलोमप्रतिलोमरेखाङ्कनफलम्

प्रदक्षिणतया कार्यं राशिचक्रविलेखनम् ।
अनुलोमविलोमेन लेखने विघ्नसम्भवः ।। १४।।
स्थूलरेखा सुखकरी सूक्ष्मा दुःखप्रदायिनी ।
रेखाच्छेदो भवेत्प्रष्टुः सुखकार्यविघातकः ।। १५।।

प्रदक्षिणक्रम से राशिचक्र लिखना चाहिए । अनुलोभ से विलोम लिखने या अनुलोम लिखकर फिर विलोम लिखने से विघ्नबाधा उपस्थित होती है ।।१४।।

राशिचक्र की रेखाएँ मोटी होने पर सुख होता है तथा पतली होने पर दुःखप्रद होती हैं। कटी हुई रेखा प्रश्नकर्त्ता को दुःख एवं असफलता की सूचक हुआ करती है ।।१५।।

रेखारम्भदिक्फलम्

लिखिता सौम्यरेखा प्राग्यदि नूनं धनागमः ।
वारुणी यदि रोगाप्तिरैन्द्रो चेत्सन्ततिर्भवेत् ।। १६।।
याम्यरेखा यदि भवेन्मरणायैव पृच्छताम् ।। १७।।

यदि राशिचक्र की उत्तर दिशा की रेखा सर्वप्रथम लिखी जाय तो निश्चय ही धनागम होता है । यदि पश्चिमा रेखा प्रथम लिखी जाय तो रोग की संभावना करती है । पूर्वदिशा की रेखा प्रथम लिखी जाने पर सन्तति लाभ होता है । यदि सर्वप्रथम दक्षिण रेखा लिखी जाय तो पूछने वाले के लिए अशुभ फल होता है ।।१६-१७।।

राशिचक्रस्य नत्युन्नतिफलम्

चक्रस्य यत्र निम्नत्वमौन्नत्यं वापि दृश्यते ।
प्रष्टुर्निवासभूमिश्च तत्र तत्र नतोन्नता ।। १८।।

राशिचक्र जिस दिशा या भाग में ऊँचा हो उस दिशा एवं भाग में पृच्छक का निवास ऊँचा होता है तथा राशिचक्र जिस दिशाभाग में नीचा होता है पृच्छक का आवास उसी भाग में नीचा होता है—ऐसा बताना चाहिए ।।१८।।

यहाँ राशिचक्र में पृच्छक के घर की कल्पना कर उसका स्वरूप कहा गया है ।

राशिचक्रे तृणादिफलम्

चक्रे यत्र तृणानि तत्र तरवस्तत्राम्बुसिक्ते जलं
ग्रावा यत्र शिलेह यत्र सिकतास्तत्र स्थलं चोन्नतम् ।
केरा वा खलु नालिकेरसदृशाकाराः परे भूरुहो
वल्मीकोऽत्र पिपीलिकाहृतमृदो यत्र क्षितौ पृच्छताम् ।। १९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूमि पर लिखित राशिचक्र में जिस स्थल पर तृण हो वहाँ पृच्छक के निवास से उस दिशा में या भाग में वृक्षादि होते हैं। जहाँ जल से गीलापन हो वहाँ कूप, नल या टँकी आदि होती है। जहाँ पाषाणकण हो वहाँ पत्थर तथा जहाँ बालू के कण हों वहाँ ऊँची भूमि होती है; वहाँ केले या नारियल के वृक्ष भी हो सकते हैं। यदि राशिचक्र के किसी भू-भाग में चींटी या वल्मीक द्वारा लाई गई मिट्टी हो तो उस भाग में बाँबी हो सकती है ॥१९॥

कागज पर लिखने के कारण आजकल यह सब बताना संभव नहीं है। प्राचीनकाल में पृच्छक के विश्वास के लिए ज्योतिषी बताया करते थे।

चक्रलेखनानन्तरं प्रष्टुः चेष्टाफलम्

संस्पर्शनाद्यैर्यदि चक्रकर्तुः प्रष्टुः क्षितेर्लक्ष्म विचारणीयम्।
विलिख्य चक्रं प्रददाति किञ्चिद् द्रव्यं परस्मै यदि भूमिरेषा ॥ २०॥
परस्वतामेष्यति यत्परस्मादादानमन्यक्षितिलाभशंसि।
यद्युद्धरेत्स्वाभिमुखं प्रसार्य हस्तं नगाः स्युर्यदि साङ्गुलीयः ॥ २१॥
करः सवल्लीपरिवेष्टिताङ्गा ग्रीवाविभूषालभनेऽपि तद्वत्।
शाखाविहीनास्तरवोऽङ्गुलीनामाकुञ्चने स्थाणव एव मुष्टौ ॥ २२॥

चक्रकर्त्ता दैवज्ञ को चक्रलेखनोपरान्त पृच्छक की चेष्टाओं—स्पर्शादि से फल विचार करना चाहिए। यदि चक्र लिखने के उपरान्त पृच्छक किसी को कुछ देता है तो पृच्छक की सम्पत्ति आदि दूसरे के पास चली जाती है। यदि वह किसी से कुछ लेता है तो पृच्छक को भूमि आदि का लाभ होता है। यदि सामने हाथ फैलाकर अंगूठी के नग को स्पर्श करे तो पृच्छक की भूमि में पत्थर संभव है। यदि अंगूठी का प्रदर्शन करे तो भूमि में लतावल्ली आदि है तथा यदि वह अपने कण्ठ के आभूषणो को स्पर्श करे तो भी लतावल्ली आदि होते हैं। यदि अँगुलियों को सिकोड़े तो वृक्षादि शाखा रहित होते हैं। मुट्ठी बाँधने पर ठूंठे पेड़ होते हैं ॥२०-२१-२२॥

अङ्गस्पर्शफलम्

मुखरोमार्धच्छिन्नं स्पृशेद्यदि वदेत्सकण्टकान् वृक्षान्।
नासाश्रवसो रन्ध्रस्पर्शे तु विलं भुजङ्गमाखूनाम् ॥ २३॥
केशान् विश्लथितांश्च रोम मुखजं यद्वा स्पृशेन्निर्दिशेन्
मुञ्जोशीरकुशादिकानपि नसो वल्मीकमामर्शने।
मेढ्रक्रोडदृशाङ्कुचास्यविलयोश्चामर्शनेन्तर्जलं
प्रष्टुर्वास्त्वनिशोद्यदम्बु कथयेत् स्विन्नाङ्गसंस्पर्शने ॥ २४॥
दुष्टं बाहून्नत्यां भूरुहोतीव दीर्घाः।
खर्वो लोहानि स्युः स्पर्शनेदन्नखानाम् ॥ २५॥
स्पृशेच्चेत् पाषाणजालैर्निचितास्थिभिश्च।
र्शे श्वभ्रान्विता पृच्छकभूतकुल्या॥ २६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वपृष्ठभागनतप्रदेशस्पर्शेन कुल्यां प्रवदेन्नदीं वा।
रहस्यलक्ष्मेत्यथ तत्प्रसङ्गाद् दूताश्रयं किञ्चन लक्ष्म वक्ष्ये।। २७।।

यदि पृच्छक दाढ़ी-मूँछ के बालों का स्पर्श करे तो उसकी भूमि पर काँटेदार वृक्ष होते हैं। यदि नाक-कान के छिद्र स्पर्श करे तो भूमि या आवास पर चूहों एवं सर्पों के बिल होते हैं ।।२३।।

यदि सिर के खुले लहराते बालों का स्पर्श करे तो उस भूमि पर मंजू (Sacchrum munj Roxb), खस (Andropogonmuricatus) तथा कुश (Eragrositis cynosuroides) आदि घासजातीय पौधे होते हैं। नासिका का स्पर्श करने पर वहाँ वामी (ante holes) होती है। यदि मेढ़्र (Penis), क्रोड (पेट = Abdomen), नेत्र, स्तन तथा मुख का स्पर्श करें तो उस भूमि के भीतर जल होता है तथा पसीने का स्पर्श करने पर वह स्थान जल से पसीजता रहता है ऐसा जानना चाहिए ।।२४।।

कक्षा (काँख), अपान (गुदा) का स्पर्श करे तो खारा पानी होता है। यदि अपनी भुजाओं के ऊँचा करे तो उस स्थल में ऊँचे वृक्ष होते हैं। यदि हाथ नीचे करे तो वहाँ अति छोटे वृक्ष होते हैं। दाँत एवं नाखूनों का स्पर्श करने पर वहाँ लौह आदि धातुएँ या खनिज होते हैं ।।२५।।

यदि घुटने आदि अस्थियों वाले अङ्गों को स्पर्श करे तो पत्थर होता है या हड्डियाँ होती हैं। नाभि आदि निम्नभाग के अंगों का स्पर्श करे तो पृच्छक की भूमि में कुल्या (नालियाँ) होती हैं ।।२६।।

यदि अपनी पीठ का स्पर्श करे तो भूमि में पीछे भाग में नदी होती है या नहर होती है। ये सब लक्षण रहस्यों को बताने वाले हैं। अब दूतों के लक्षण कहता हूँ ।।२७।।

पृच्छकावासक्षेत्रस्य स्वरूपकथनम्

दृश्यन्ते दिशि यत्र यत्र मनुजा दूतस्य विष्वक्स्थिता,
दिक्ष्वास्वासु ग्रहाणि सन्ति सदृशां जात्या च तैः संख्यया।
आयानेन धनुष्मतोऽत्र हरति स्थानं च शास्तुर्वदेद्
देवास्तद्दिशि योषितः कुपृथुकायाने पिशाचस्थितिः।। २८।।
विप्रायाने ब्रह्मरक्षो निवासश्चौरोत्थापद्दुर्मतेरागमेन।
दूतस्यैतत्सम्भवेद्यद्दिशायां प्रष्टुर्धाम्नस्तत्फलं तद्दिशि स्यात् ।। २९।।

पृच्छक दूत के जिस-जिस दिशा में मनुष्य दिखायी पड़े पृच्छक के घर की उस-उस दिशा में उन जातियों के (जिनके मनुष्य दिखाई दें) घर होते हैं और उतनी ही संख्या में होते हैं। जिस दिशा में धनुर्धारी या शस्त्रधारी आवें उस-उस दिशा में तत्संख्यक क्षत्रिय या शासक वर्ग के घर होते हैं। जिस दिशा से स्त्रियाँ दिखाई पड़ें उस दिशा में दुर्गा, काली, अन्नपूर्णा आदि देवियों के मन्दिर होते हैं। जिस दिशा से ऊधमी तथा ढीठ बालक आवें या गुण्डे आदि दिखायी पड़ें उस दिशा में भूत, राक्षस आदि का निवास होता है ।।२९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नकर्त्ता दूत के जिस तरफ से ब्राह्मण आवें उस दिशा में ब्रह्मराक्षस का निवास होता है। जिस दिशा से कोई धूर्त एवं चालाक व्यक्ति आवे उस दिशा में चोरों-डाकुओं का भय होता है ॥३०॥

चक्रपूजनम्

चक्रं विलिख्य चरणौ प्रक्षाल्य तनुशोधनम्।
आत्मपूजां गणेशार्चामपि कृत्वा महेश्वरम्॥३०॥
चक्रमध्यस्थिते पद्मे पीठपूजापुरस्सरम्।
परिवारनिवेद्याढ्यं पञ्चाक्षर्या समर्च्चयेत्॥३१॥

दैवज्ञ राशिचक्र को लिखकर, अपने पैरों को धोकर, आचमन-प्राणायाम, अन्तर्मातृका, बहिर्मातृकादि का निज शरीर में न्यास करके आत्मपूजा करके, श्रीगणेशजी एवं शिवजी की पूजा करके, चक्र के मध्य में कमल पर देवपूजा करके सौर-परिवार (ग्रह-राशियों) को नैवेद्य समर्पित करके फिर पंचाक्षरी मंत्र (ॐ नमः शिवाय) का जप करे ॥३०-३१॥

तत्रैव ध्यानम्

कैलाशाद्रीशकोणे सुरविटपितटे स्फाटिके मण्डपे सन्
मातङ्गारातिपीठोपरि परिलसितं सेव्यमानं सुरौघैः।
जानुस्थं वामबाहुं मृगमपि परशुं ज्ञानमुद्रां वहन्तं
नागोद्यद्योगवेष्टं ददतमृषिगणे ज्ञानमीशानमीडे॥३२॥

कैलाशाद्रि (पर्वत) के ईशान कोण में कल्पवृक्ष के नीचे स्फटिक मणि से निर्मित मण्डप में व्याघ्रचर्म आस्तरित (सिंहासन) पीठ पर देवताओं से सेवित, घुटने पर वामहस्त रखे हुए; मृग, परशु एवं ज्ञानमुद्रा धारण किये हुए, सर्पविेष्टित योगपट्ट वाले तथा ऋषिगणों से सेवित श्री भगवान् शंकर की पूजा एवं ध्यान करता हूँ (इस प्रकार ध्यान करे) ॥३२॥

राशिचक्रपूजने मन्त्रनिर्देशः

मेषाद्या राशयः स्वस्वस्थाने स्वाश्रितभेग्रहाः।
परिवारतया पूज्या गुलिकश्च स्वनामभिः॥३३॥

नाममंत्रों के द्वारा राशिचक्र में अपने-अपने स्थानों पर राशियों, सूर्यादि नवग्रहों, गुलिकादि उपग्रहों, धूमादि अप्रकाश ग्रहों का पूजन करना चाहिए ॥३३॥

वाग्देव्यादिपूजनम्

ब्रह्मार्पणान्ते वाग्देवीं गुरूंश्चाप्यष्टमङ्गले।
पुष्पैराराध्य वन्देत् प्रदीपे च तथा श्रियम्॥३४॥

ब्रह्मार्पण करने के पश्चात् सरस्वती देवी तथा विद्यागुरु की पूजा अष्टमंगल द्रव्यों से करना चाहिए तथा दीपक पर श्री (लक्ष्मी) जी की पूजा पुष्पों से करनी चाहिए ॥३४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अष्टमङ्गल—पूजादि मांगलिक अवसरों पर प्रयुक्त आठ पदार्थों को अष्टमंगल कहा जाता है। इसकी सूची शास्त्रों में दो प्रकार से प्राप्त है—

"मृगराजो, वृषो नागः कलशो व्यजनं तथा।
वैजयन्ती तथा भेरी दीप इत्यष्टमङ्गलम्"॥१॥

अर्थात् सिंह, वृषभ, नाग (इनकी धातुमूर्तियाँ), कलश, पंखा, वैजयन्तीमाला, भेरी नामक वाद्य या शंख तथा दीपक—ये आठ पदार्थ अष्टमंगल कहलाते हैं। यह प्रथम मत है।

द्वितीय मत से निम्न पदार्थ अष्टमंगल हैं—

"लोकेऽस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणो गौर्हुताशनः।
हिरण्यं सर्पिरादित्य आपो राजा तथाष्टमः" ॥२॥

अर्थात् इस संसार में ब्राह्मण, गौ, अग्नि, स्वर्णधातु, घी, सूर्य, जल तथा राजा—ये आठ वस्तुएँ मांगलिक होती हैं।

सुवर्णपूजनम्

अथ प्रक्षाल्य तोयेन स्वर्णं चन्दनभूषितम्।
पत्रे विन्यस्य कुसुमैरक्षतैरपि योजयेत्॥ ३५॥
वामहस्ते निधायाथ पिधायान्येन पाणिना।
पञ्चाक्षरीं साष्टशतं मनूनन्यांश्च भक्तितः॥ ३६॥
जप्त्वाथैकत्र विन्यस्य प्रारभेताष्टमङ्गलम्।
संक्षेपेणाथ तत्कर्म कथ्यते गुरुणोदितम्॥ ३७॥

तत्पश्चात् स्वर्णाभूषण, स्वर्णखण्ड अथवा स्वर्णमुद्रा को जल से धोकर चंदन से लिप्त कर पत्र पर रखें तथा उस पर पुष्पाक्षत चढ़ायें। फिर उस पत्र सहित स्वर्ण को वामा हथेली पर रखकर दक्षिण हथेली से ढँक कर भक्तिपूर्वक एक सौ आठ बार पंचाक्षरी मंत्र (ॐ नमः शिवाय) का जप करें। इसके पश्चात् स्वर्णखण्ड को पीठ पर रखकर गुरु के द्वारा बताये गये अष्टमंगल नामक विशेष विधान को प्रारम्भ करे जिसे संक्षेप में बता रहा हूँ॥३५-३६-३७॥

अष्टमङ्गलविधिः

कृत्वा दक्षिणतो राशिचक्रं प्राङ्मुख आसने।
आसीनः फलके भिन्ने वराटीस्साष्टकं शतम्॥ ३८॥

अष्टमंगल विधि के लिए दैवज्ञ राशिचक्र को दाहिनी ओर कर दे या सरका दे, स्वयं राशिचक्र के बाँई ओर होकर पूर्व की ओर मुख करके अपने सामने एक अच्छिद्र पाटा या चौकी पर एक सौ आठ वराटिकाओं (कौड़ियों या कपर्दिकाओं) को रखे॥३८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शिवस्य आवाहनम्

निधाय मन्त्रवत्प्रोक्ष्य गन्धपुष्पाक्षतैश्च ताः।
अलङ्कृत्यार्चयेत्तासु शिवमावाह्य चक्रवत् ॥ ३९॥

फिर उन १०८ कौड़ियों को (ॐ नमः शिवाय) मंत्र से प्रोक्षण करें (जल के छींटे देकर पवित्र करे) और उनको गन्ध-पुष्प-अक्षतों से अलंकृत कर उन पर राशिचक्र में जो भगवान् शिव का ध्यान कहा है वह ध्यान करे ॥३९॥

पूर्वादिदिशासु सूर्यादीनां पूजनम्

प्रागाद्याशासु सूर्यारार्यज्ञाच्छार्किविधूरगान् ।
अपि सम्पूज्य ताः स्पृष्ट्वा स्पृष्ट्वा साष्टशतं जपेत् ॥ ४०॥
पञ्चाक्षरीं मनूनन्यानपि गुर्वाननाच्छ्रुतान् ।
ततः सम्प्रार्थयेदेवं गुरूनपि निजान् ग्रहान् ॥ ४१॥

इन कपर्दिकाओं के पूर्वादि दिशाओं में क्रमशः सूर्य, मंगल, आर्य (गुरु), ज्ञ (बुध), अच्छ (शुक्र), शनि, चन्द्र तथा राहु की भी पूजा करके फिर वराटिकाओं को बारम्बार स्पर्श करके पञ्चाक्षरी मन्त्र तथा गुरुमंत्र का जप करे, फिर भगवान् शिव तथा गुरु की प्रार्थना करे एवं ग्रहों से प्रार्थना करें ॥४०-४१॥

प्रार्थना

एतन्नक्षत्रसञ्जातस्यैतन्नाम्नोऽस्य पृच्छतः ।
भूते च वर्तमाने च समये च भविष्यति ॥ ४२॥
शुभाशुभानि चेदानीं चिन्तितस्य विशेषतः ।
सम्भवाऽसम्भवाद्यन्यान्यर्थपुत्रगृहादिषु ॥ ४३॥
शुभाशुभानि यान्येतान्यखिलान्यपि तत्त्वतः ।
युष्मत्प्रसादतः स्पष्टं मम चित्ते स्फुरन्त्विति ॥ ४४॥

सर्वप्रथम प्रश्नकर्त्ता का जन्मनक्षत्र तथा नाम पूछ लेना चाहिए, फिर श्लोक ४२ से ४४ तक के श्लोकों को बोलते हुए प्रार्थना करनी चाहिए जिसका भावार्थ निम्नलिखित है— अमुक नक्षत्रोत्पन्न अमुक नाम वाले (स्त्री या पुरुष) पृच्छक का भूत, भविष्य तथा वर्तमान काल में घटित होने वाला शुभाशुभ फल; धन, सन्तति, भवन आदि की संभावनाएँ मेरे (दैवज्ञ के) मन में आपकी कृपा से यथार्थ में स्फुरित हो जायें ॥४२-४४॥

कन्यया कुमारेण वा राशिचक्रस्य पूजनम्

ततः कन्या कुमारो वा स्नात्वा वस्त्राद्यलङ्कृतः ।
राशिग्रहस्थितिज्ञानशून्यो वा कश्चनापरः ॥ ४५॥
उपेत्याराधयेत्पुष्पैर्दीपविघ्नखगेश्वरान् ।
ततोऽस्य दक्षिणे हस्ते स्वर्णं साक्षतपुष्पकम् ॥ ४६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दद्यादेतद् वहन् सोऽपि कृत्वा चक्रप्रदक्षिणम्।
पश्चात्समीपतस्तिष्ठेच्चक्रस्य प्राङ्मुखः सुधीः।। ४७।।

तब कोई कुमारी कन्या या कुमार बालक स्नान कर वस्त्रादि पहन कर (जो कि राशि आदि के ज्ञान से अनभिज्ञ हो) वह राशिचक्र की श्रीगणेशजी तथा नवग्रहों की पूजा करें। फिर उसके दाहिने हाथ में स्वर्ण, अक्षत-पुष्प देकर उस बालक या बालिका से राशिचक्र की प्रदक्षिणा करायें। फिर वह राशिचक्र के समीप में पूजन करके बैठ जाय ।।४५-४६-४७।।

पृच्छकस्य दैवज्ञस्य च कर्त्तव्यता

ततः प्रष्टा निजाभीष्टं ध्यायंस्तिष्ठतु साञ्जलिः।
दैवज्ञोऽथ स्मरन्प्रष्टुरभीष्टं ता वराटिकाः।। ४८।।
संस्पृशन् संस्पृशन् मन्त्रं मूर्तित्वे पूर्वकं जपेत्।
त्रिवारं तज्जपस्यान्ते दूतं ब्रूयान्न्यसेदिति।। ४९।।
तदैव विन्यसेद्दूतः स्वर्णं निजकरस्थितम्।
चक्रस्थभेषु चैकत्र दैवज्ञस्ताः वराटिकाः ।। ५०।।

तब प्रश्नकर्त्ता अपने इष्ट देव का ध्यान करके हाथ जोड़कर खड़ा हो जाय और दैवज्ञ पृच्छक के अभीष्ट प्रश्न का विचार करते हुए उन कपर्दिकाओं को मूर्तिमान् कर उनका बारम्बार स्पर्श करते हुए मंत्र (पंचाक्षरी या गुरुमंत्र) का जप करे। उधर पृच्छक तीन बार मंत्र जप कर हाथ में जो स्वर्णादि लिया है उसे दैवज्ञ राशिचक्र में रखने का निर्देश दे (आजकल स्वर्ण के स्थान पर दक्षिणा द्रव्य रखवा सकते हैं)। तब दूत उस स्वर्ण या दक्षिणा को उस राशिचक्र के किसी एक कोष्ठक (खाने) में रख दे तथा दैवज्ञ उस पाटे पर रखी वराटिकाओं को (जो एकत्र रखी हैं) ग्रहण करे ।।४८-४९-५०।।

आरूढज्ञानविधिः

विभजेत्तिरुदक्पूर्वं निमित्तानि च चिन्तयेत्।
प्राक् पृच्छासमये यद्यच्छुभाशुभमुदीरितम्।। ५१।।
तत्तत्सकलमत्रापि चिन्त्यं स्पर्शशरादिकम्।
अथ दूतः पदच्छायामानं कुर्यात् समक्षितौ।। ५२।।
यस्मिन् राशौ स्थितं स्वर्णं स स्यादारूढसंज्ञकः।
ज्ञात्वा दैवविदारूढं स्वर्णस्योत्तानतादि च।। ५३।।
पृच्छकाय फलं किञ्चित्प्रोच्य पूजां समाप्य च।
वराटीरष्टशस्त्यक्त्वा स्थानत्रितयतः पृथक् ।। ५४।।
शिष्टसंख्यामपि ज्ञात्वा रक्षणीया वराटिकाः।। ५५।।

फिर दैवज्ञ उन कपर्दिकाओं का एक भाग उत्तर में, दूसरा भाग मध्य में तथा तीसरा भाग दक्षिण में (उसी पाटे पर) रख दे। इस प्रकार कौड़ियों के तीन भाग कर दे और उसी के अनुसार शुभाशुभ फल कहें ।।५१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्व में पृच्छक के स्पर्शादि का जो शुभाशुभ फल कहा जा चुका है उसे यहाँ पर विचार करें। फिर दूत सम भूमि पर अपनी छाया को अंगुलियों से नापे ॥५२॥

आरूढ ज्ञान—दूत या पृच्छक राशिचक्र की जिस राशि में स्वर्ण रखे उसी राशि को आरूढ जानना चाहिए। रखे गये स्वर्ण के मुखादि (चित्त-पट्ट) के अनुसार पृच्छक को कुछ फलादेश बताकर पूजा को समाप्त करें।

अष्टमंगल—फिर तीन स्थानों पर रखी कौड़ियों को अलग-अलग गिनें। उनकी संख्या में प्रत्येक स्थान पर आठ का भाग दे, जो संख्या शेष बचें उसे उत्तर भाग, मध्य भाग तथा दक्षिण भाग के अनुसार पृथक्-पृथक् लिख लें ॥५३-५४-५५॥

यह अष्टमंगल कहलाता है, क्योंकि इसमें आठ-आठ करके कपर्दिकाएँ गिनी जाती हैं। मान लीजिये—दैवज्ञ ने तीन स्थानों पर वराटिकाएँ रखीं, फिर उनको जब गिना तो उत्तर स्थान पर ३५, मध्य में ४३ तथा दक्षिण भाग में ३० निकलीं। इनमें प्रत्येक को आठ से विभाजित करने पर तीनों स्थानों पर क्रमशः तीन, तीन तथा छह शेष रहीं। सातवें अध्याय के श्लोक ४-५-६ में इन शेषाङ्कों का फल लिखा गया है। इस प्रकार इस ग्रन्थ में अष्टमंगल के दो अर्थ है।

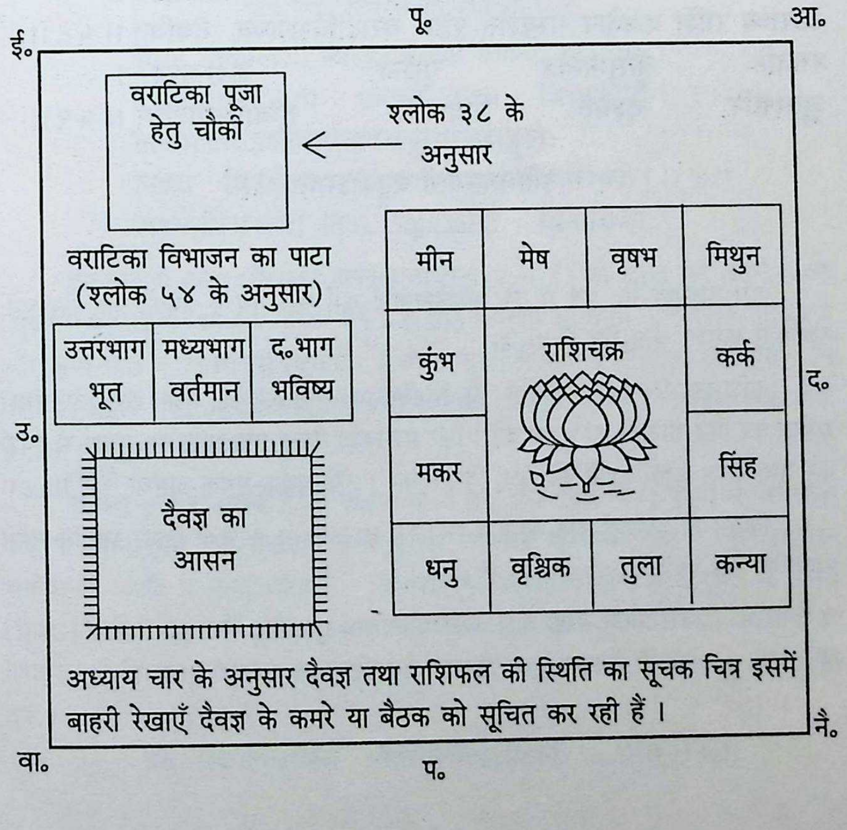

अध्याय चार के अनुसार दैवज्ञ तथा राशिफल की स्थिति का सूचक चित्र इसमें बाहरी रेखाएँ दैवज्ञ के कमरे या बैठक को सूचित कर रही हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अङ्कलेखनम्

आरूढं स्वर्णसंस्थानं छायामप्यष्टमङ्गलम्।
विलिखेन्मासयाताहःप्रष्टृतारापुरस्सरम् ॥५६॥

इस श्लोक में आवश्यक आँकड़ों को लिखना बताया है। तदनुसार दैवज्ञ को जिस कोष्ठ में स्वर्ण रखा हो उसकी राशि (आरूढ) का नाम, दूत-छाया के अंगुल, अष्टमंगल के अनुसार तीन स्थानों पर शेष बची कौड़ियों की अलग-अलग संख्या, पृच्छक का जन्म-नक्षत्र (राशि आदि), जन्ममास, जन्म की चान्द्रतिथि आदि के आँकड़े लिख लेना चाहिए ॥५६॥

दक्षिण भारत के अनेक दैवज्ञ परंपरागत रूप से पृच्छक द्वारा लाये गये ताम्बूल (पान के पत्तों) की संख्या, दीपकशिखा का विवरण आदि भी लिखते हैं।

उपसंहारः

यदत्र कथितं कर्म चक्रलेखनपूर्वकम्।
संक्षेपेण तदेवाथ पुनरप्युच्यते क्रमात् ॥५७॥
विलिख्य चक्रं प्रविकीर्य चाक्षतं सम्पूज्य भक्त्याथ कृतेष्टमङ्गले।
आराध्य राशिं कनकेन संस्पृशेत् प्रष्टा वराटीर्विभजेच्च दैववित् ॥५८॥
रक्तानि कुसुमान्यत्र गृह्यन्ते कैश्चनापरैः।
शुक्लानि दृश्यते प्रायेणाद्य तुम्बाभिधार्तवम् ॥५९॥

॥ इति प्रश्नमार्गे चतुर्थोऽध्यायः ॥

*

इस अध्याय में पूर्व में जो चक्रलेखनादि कर्म कहे गये हैं उनको एक बार पुनः संक्षेप में क्रमशः बता रहा हूँ ॥५७॥

राशिचक्र लिखकर, अक्षतों को विकीर्ण कर, भक्तिपूर्वक पूजा कर, अष्टमंगल सम्पन्न कर फिर राशियों का पूजन करें। फिर प्रश्नकर्त्ता किसी एक राशि का सुवर्ण से स्पर्श करे तथा दैवज्ञ वराटिकाओं को त्रिधा विभक्त करे। उन्हें पृथक्-पृथक् अष्टधा गिनें ॥५८॥

कितने ही आचार्य उक्त कार्य में रक्तपुष्पों का उपयोग करते हैं किन्तु सम्प्रति तुम्बी आदि के श्वेत पुष्पों का भी प्रचलन है ॥५९॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का चौथा अध्याय पूर्ण हुआ ॥४॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ पञ्चमोऽध्यायः

अथ लग्नानयनादिकमुच्यते

प्रश्नकालविलग्नस्य स्फुटावगमने सति।
फलादेशस्य साफल्यं तथा शास्त्रान्तरोदितम् ।। १।।
तन्त्रे सुपरिज्ञाते लग्ने छायाम्बुयन्त्रसंविदिते।
होरार्थे च सुरूढे नादेष्टुर्भारती वन्ध्या।। इति ।। २।।

प्रश्नकालीन उदयलग्न की स्पष्टता के पश्चात् कहे गये फलादेश को ही शास्त्रान्तरों से सफल माना है ।।१।।

तन्त्र (सिद्धान्त, तन्त्र, करण = पंचांगनिर्माण के ग्रन्थों) का सम्यक् ज्ञान प्राप्त होने पर, छाया, जलघटी यंत्र से समय जानकर लग्न निकालना चाहिए । ऐसा करने पर दैवज्ञ की वाणी कभी निष्फल नहीं होती है ।।२।।

तत्र प्रथमं दिनगतनाडिकानीतिरुच्यते

छायां तत्कालजां न्यस्य त्यक्त्वा वाक्यं तदूर्ध्वगम्।
तच्छेषमङ्गुलीकृत्य षष्ठ्या हत्वा विभाजयेत् ।। ३।।
तत्कालांघ्रिप्रभापार्श्ववाक्ययुग्मान्तराङ्गुलैः ।
लब्धा विनाडिकास्त्यक्तवाक्यनाड्याः परित्यजेत् ।। ४।।
लभ्यन्तेऽह्नस्तदा याता नाडिकाश्च विनाडिकाः।

तात्कालिक छाया (जिसका उल्लेख अध्याय ४ में है) को लिख कर उसमें वाक्य (ध्रुवांक) को घटाये, जो शेष अंगुल बचें उन्हें साठ से गुणा कर उनमें तात्कालिक पदच्छाया और आगे-पीछे के दो वाक्यों (ध्रुवकों) के अन्तराङ्गुलों से भाग दें तो लब्ध पल होंगे । इन पलों को घटाये गये वाक्य की घटियों में से घटावें । तब दिनगत घटी इष्टकाल प्राप्त होता है ।।३ से ४½।।

वाक्य—ये वे ध्रुवंक हैं जो दक्षिण भारत तथा विशेषकर केरल प्रदेश में परंपरागत रूप से लग्नानयन हेतु प्रचलित हैं । इनका उल्लेख सूत्रग्रन्थों तथा ''ज्योतिषशास्त्र-सुबोधिनी'' आदि में पाया जाता है । निरयण सूर्य की राशिस्थिति के अनुसार ये वाक्य (ध्रुवक) वहाँ दिये गये हैं । आजकल तो स्टेण्डर्ड टाइम का प्रचलन है अत: ज्योतिषी के लिए इस विधि का उपयोग अव्यावहारिक हो गया है । अस्तु, घडी के समय का प्रयोग ही करें ।

ततस्तत्कालसूर्यस्य गम्यलिप्तांशकान् हरेत् ।। ५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्नानयनम्

अर्कयुक्तर्क्षहारेण लभ्यतेऽर्कोदयात् परम्।
नाड्यादिकं हि तद्राशेरेतद्दिनगतास्त्यजेत् ।। ६।।
ऊर्ध्वराशिप्रमाणानि त्याज्यान्यपि ततस्त्यजेत् ।
शेषं तद्राशिहारघ्नं लग्नं स्याद् गतराशियुक् ।। ७।।

इसके पश्चात् तात्कालिक सूर्य (सायन) के गम्य (भोग्य = शेष) अंश कलाओं में सूर्य स्थित राशि के हार (स्वोदय पलों) से भाग देने से सूर्योदय पश्चात् काल के सूर्याधिष्ठित राशि के घट्यादि (भोग्य काल) प्राप्त होते हैं । पूर्व में जो दिनगत घटी (इष्टकाल) प्राप्त हुआ है उसमें इन घट्यात्मक भोग्यकाल को घटा दें और एष्य (अग्रिम) सूर्य अर्थात् सूर्य से दूसरे क्रमांक वाली राशि के पलों को आगे-आगे की राशियों में तब तक घटाना चाहिए जब तक कि वे घटते रहें । अब जो शेष बचे उसे घटनेवाली राशि के अग्रिम राशि के हार से गुणा करें । इस प्रकार प्राप्त फल को शुद्ध राशि की संख्या में मिला देने से लग्न स्पष्ट होता है ।

टिप्पणी—सम्प्रति दैवज्ञ को इतनी माथापच्ची करने की आवश्यकता नहीं पड़ती है । आजकल पृच्छक तथा दैवज्ञ दोनों के पास समय की कमी है अतः किसी भी अच्छी घड़ी में समय देखकर अपनी अभ्यस्त रीति से उस स्थान का लग्न इष्टकाल बनाकर या सांपातिक काल द्वारा तुरन्त निकाल लेना चाहिए अथवा किसी सम्पुटित्र (संगणक = कम्प्यूटर) से तुरन्त ही लग्न निकालना ही व्यावहारिक होगा ।

कुन्दघातः

कुन्दनिघ्ने पृथग्लग्ने प्रष्टृतारा न चेद्भवेत् ।
क्षिप्त्वा काश्चित् कलास्त्यक्त्वा वानेयं पृष्टजन्मभम् ।। ८।।
ऊर्ध्वासन्ने क्षिपेत्त्याज्या अधश्चेत् पृच्छकोडुनि ।
स्वर्णं दशदशैकैकनक्षत्रस्येह लिप्तिकाः ।। ९।।

यदि प्रश्नकर्त्ता का जन्मनक्षत्र ज्ञात न हो तो पृच्छक स्थान पर लग्नस्पष्ट का कुन्द घात करके कुछ कलाएँ न्यूनाधिक करके पृच्छक का जन्मनक्षत्र जान लें । यदि पृच्छक का जन्मनक्षत्र आगे हो तो जितने नक्षत्रों का अन्तर हो उनमें से प्रत्येक नक्षत्र की दस-दस कला के अनुपात से जोड़ना उचित है ।।८-९।।

चन्द्रसाधनम्

चन्द्रे परहितानीते वीरलिप्तासमन्विते ।
"कालभीमतिशोभाङ्गाये"ति कन्याझषाऽर्कतः ।। १०।।
प्रारभ्यर्णं धनं वीणाचापार्काद्दृग्विधुर्भवेत् ।
कोलम्बे मुरहासंख्ये चन्द्रे वीरयुतिर्मता ।। ११।।
सुम्भाब्देष्वथ यातेषु संयोज्यैकैकलिप्तिका ।। १२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

''परहित'' नामक गणित की विधि से जो चन्द्र स्पष्ट होता है उसमें चौबीस कलाएँ जोड़ने पर सौर कन्यार्क एवं मीनार्क की दसवीं तिथि में एक, तुलार्क + मेषार्क की दसवीं तिथि में तीन, वृश्चिकेऽर्क + वृषेऽर्क की दसवीं तिथि में चार, मिथुनेऽर्क + धनुष्यर्क की दसवीं सौर तिथि में पाँच, कर्केऽर्क + मकरेऽर्क की दसवीं सौर तिथि में छह तथा सिंहेऽर्क + कुम्भेऽर्क में सात का संस्कार धनात्मक तथा ऋणात्मक करे । कन्याऽर्क से धनुषार्क की दशम तिथि तक तथा मीनेऽर्क की दशवीं तिथि में घटाने का संस्कार एवं शेष महीनों में जोड़ने का संस्कार करने से दृग्गणितीय चंद्र स्पष्ट होता है । ८२५ कोलम्ब संवत् तक ही चन्द्रमा में चौबीस कला जोड़नी चाहिए । बाद में प्रत्येक ४७ वर्षोपरान्त एक-एक कला जोड़नी चाहिए ॥१०-११-१२॥

सरल रीति—इन क्लिष्टताओं से बचने के लिए आजकल प्रचलित दृग्गणितीय पंचांगों के आधार पर लाहिरी के अयनांश के अनुसार चन्द्र स्पष्ट करना उचित है । या लाहिरी पंचांग के गणना वाला कम्प्यूटर उपयोग में लावें ।

''परहित'' दक्षिण भारत में प्रचलित ग्रहस्पष्ट की स्थूल पद्धति है जिससे ग्रहस्पष्ट बहुत अन्तरित रहता है ।

कोलम्ब केरल का विशेष संवत् है । कलिसंवत् में ३३२६ की संख्या घटाने पर कोलम्ब संवत् प्रारंभ होता है । इसका प्रारम्भ सिंहेऽर्क (निरयण) से होता है । इसकी सौर तारीखें मलयालम भाषा में ''तीयती'' कहलाती है ।

उक्तञ्च सरस्वतीकण्ठाभरणे

कोलम्बोसुकलान्तरैरयनयुक्तकालसूर्योद्भवैः
सौम्यघ्नप्रियभाजितै रहितयुग्भास्वद्भुजाकोटितः ।
संयुक्तः शिवकेन वाक्यभिदया निघ्नो धनेशेर्हृतो
लिप्तायां खलु योजितः परहितग्लावः सदृक्चन्द्रमाः ॥ १३॥

कोलम्ब संवत् में ३१८ घटायें, फिर वेधागत अयनांश (लाहिरी का चित्रापक्षीय) जोड़कर फिर ११७ से गुणा करें । उस गुणनफल में ११२ का भाग दें, जो लब्धि प्राप्त हो उसे सूर्य के भुजकोटि से घटावें । फिर इसमें १४५ जोड़ें और वाक्यान्तर से गुणाकर ५९ का भाग दें । इस प्रकार से प्राप्त चन्द्रस्पष्ट को परहित गणित द्वारा स्पष्ट चन्द्र की कलाओं में जोड़ने से दृग्गणितीय चन्द्र स्पष्ट होता है ॥१३॥

इन सब झंझट से बचने के लिए पंचांग या कम्प्यूटर का ही उपयोग करें जिसमें शीघ्रता से चन्द्र स्पष्ट होता है ।

मान्दिस्पष्टविधिः

मान्दिकालानयनाढ्यार्कचरज्यां विभजेत् त्रिभिः ।
लब्धा विनाडिकास्ताभिर्हत्वा मान्दिघटीः पृथक् ॥ १४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हरेन्नीलैर्विघटिका लब्धा स्वर्णं यथाक्रमम् ।
मान्दिनाड्यां सायनार्के मेषजूकादिसंस्थिते ॥ १५॥
मान्दिनाड्यस्तदा स्पष्टास्ताभिस्तु गुलिकस्फुटम् ।
आनेतव्यं यथालग्नं नाड्या दिवसयानया॥ १६॥

जिस समय का गुलिक स्पष्ट करना हो उस समय का सायन सूर्य स्पष्ट कर लें, उसकी चरज्या तीन का भाग दें, जो लब्धि प्राप्त हो (वह तीस घटी से तात्कालिक दिनमान का अन्तर होता है) उससे मान्दि घटी का गुणा कर तीस का भाग दें । इस प्रकार प्राप्त फल को मेषादि छह राशियों में जोड़ना तथा तुलादि छह राशियों में घटाना चाहिए तो मान्दि घटी प्राप्त होती है, फिर लग्नस्पष्ट की भाँति मान्दि स्पष्ट कर लें ॥१४-१५-१६॥

मन्दिस्पष्ट की सरल विधि—दिन के समय दिनमान में आठ का भाग दें, जो प्राप्त हो उसे वारानुसार जो ध्रुवक आगे लिखे हों उससे गुणा कर दें । जो गुणनफल प्राप्त होगा वे घटीपल ही मान्दि (गुलिक) का इष्टकाल होंगे । इस मान्दि इष्ट पर से लग्नस्पष्ट की भाँति मान्दिस्पष्ट (राशि-अंश-कला-विकला) कर लें ।

रात के समय मान्दि स्पष्ट करना हो तो रात्रिमान में आठ का भाग दें तथा उस अष्टमांश को जिस वार को मान्दि स्पष्ट करना हो उस वार के रात्रिकालीन मान्दि ध्रुवक से गुणा करें । जो गुणनफल घटीपलात्मक प्राप्त हो उसमें उस दिन का दिनमान जोड़ने से रात का गुलिकेष्ट या मान्दीष्टकाल आ जाता है । इस पर से लग्नस्पष्ट की भाँति मान्दिस्पष्ट कर लें । आगे मान्दि, काल, मृत्यु, अर्धयाम, यमकण्टक के ध्रुवांकों का चक्र दिया जाता है जिनको गुलिक की भाँति ही स्पष्ट किया जाता है ।

गुलिकादि उपग्रहों की स्पष्टता हेतु ध्रुवांक चक्र

उपग्रह	समय	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुध	गुरुवार	शुक्र	शनिवार
गुलिक	दिवा	७	६	५	४	३	२	१
	रात्रि	३	२	१	७	६	५	४
यमकण्टक	दिवा	५	४	३	२	१	७	६
	रात्रि	१	७	६	५	४	३	२
अर्धयाम	दिवा	४	३	२	१	७	६	५
	रात्रि	७	६	५	४	३	२	१
मृत्यु	दिवा	३	२	१	७	६	५	४
	रात्रि	६	५	४	३	२	१	७
काल	दिवा	१	७	६	५	४	३	२
	रात्रि	४	३	२	१	७	६	५

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अप्रकाश ग्रहस्पष्ट सूत्र—धूम—ता॰निरयण सूर्यस्प॰ + राश्यादि ४/१३°/२०'/०'' **पात** = (१२ राशि – धूम), **परिधि** = (पात + छ: राशि), **इन्द्रचाप** = (१२ राशि–परिधि), **उपकेतु** = इन्द्रचाप + राश्यादि ०/१६°/४०'/०'' । इन्द्रचाप में यदि एक राशि जोड़ दें तो तात्कालिक निरयण सूर्यस्पष्ट पूर्ववत् आता है ।

त्रिस्फुट आनयनम्

एवं लग्नं विधुं मान्दिमानीय विलिखेत्पृथक् ।
तेषां त्रयाणां संयोगस्त्रिस्फुटं विलिखेच्च यत् ।। १७।।

लग्नस्पष्ट, चन्द्रस्पष्ट तथा मान्दि (गुलिक) स्पष्ट इन तीनों के राशि-अंश-कला-विकला का योग करें । वह योग ही त्रिस्फुट कहलाता है ।।१७।।

इन सबका स्पष्ट आधुनिक दृग्गणित (निरयण) से ही करना सुविधाजनक तथा समीचीन है ।

चतु:स्फुटं पञ्चस्फुटञ्चाह

लग्नेन्दुमादिसंयोगस्त्रिस्फुटं तच्च भानुयुक् ।
चतुःस्फुटं राहुयुक्तमेतत्पञ्चस्फुटं भवेत् ।। १८।।

जैसे लग्न + चन्द्र + मान्दिस्फुट (स्पष्ट) को त्रिस्फुट कहते हैं उसी प्रकार उसमें सूर्य स्पष्ट मिलाने पर चतु:स्फुट तथा राहुस्पष्ट भी मिला दिया जाय तो ''पञ्चस्फुट'' कहलाता है ।।१८।।

राहुस्फुट में सदैव मध्यम राहु ही लेना चाहिए जिसकी गति सदैव ३'/११'' रहती है । फलादेश मध्यम राहु से ही मिलता है । स्पष्ट राहु तो केवल ग्रहण के गणित के लिए उपयोगी रहता है । आजकल अनेक पंचांगों में मध्यम के स्थान पर स्पष्ट राहु दिया जा रहा है । अनेकों में मध्यम तथा स्पष्ट दोनों प्रकार का राहु लिखा रहता है; यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है ।

मान लीजिए लग्नस्पष्ट राश्यादि ४/७°/३'४/१५'', चन्द्रस्पष्ट रा॰ ०/१८/१०/२०, गुलिकस्पष्ट ७/२/३५/४०, सूर्यस्पष्ट १/५/१५/३० तथा मध्यम राहु राश्यादि ५/८/५३/१७ है तो लग्न रा॰ ४/७/३४॰१५ + चन्द्र रा॰ ०/१८/१०/२० + गुलिक रा॰ ७/२/३५/४० = त्रिस्फुट राश्यादि ११/२८°/२०'/१५'' हुए । इसमें सूर्यस्पष्ट राश्यादि १/५/१५/३० और जोड़ा तो राश्यादि १/३/३५/४५ हुआ, यह चतु:स्फुट है । इसमें मध्यम राहु रा॰ ५/८/५३/१७ और संयुक्त करने पर राश्यादि ६/१२°/२९'/२'' यह पञ्चस्फुट हुआ । इसी प्रकार समझना चाहिए ।

प्राणदेहमृत्युसाधनञ्चाह

लग्नेन्दुमानदानाभ्यां हत्वा मान्दिं क्षिपेद् द्वयोः ।
प्राणदेहौ क्रमात्स्यातां पुनर्मान्दिस्सुताडितः ।। १९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भानुयुक्तो भवे न्मृत्युः विलिखेत्त्रीनिमानपि।
प्रश्नकालगता नाडीर्निरयघ्ना विभाजयेत् ।। २०।।

लग्नस्पष्ट को पाँच से तथा चन्द्रस्पष्ट को आठ से गुणा करें, फिर दोनों में अलग-अलग गुलिकस्पष्ट जोड़ दें तो क्रमशः प्राणस्फुट तथा देहस्फुट होते हैं । फिर मान्दि को सात से गुणा कर गुणनफल में जो राश्यादि प्राप्त हों उसमें सूर्यस्पष्ट जोड़ने से मृत्युस्पष्ट होता है ।

अब प्राणसाधन का दूसरा प्रकार बताते हुए कहते हैं कि प्रश्नकालीन इष्ट की घटियों को १२० से गुणा करे, फिर भाग दें ।।१९-२०।।

दिवसस्य प्रमाणेन लब्धं राश्यादिकं फलम् ।
तत्कालार्के क्षिपेदर्कः स्थिरराशिगतो यदि।। २१।।
भचतुष्कं त्यजेच्चास्माद् द्वन्द्वगो यदि योजयेत् ।
त्यागयोगौ चरे न स्तः प्राणाप्त्यै विलिखेच्च तत् ।। २२।।

कितने से भाग दें तो आगे कहते हैं ''दिवसस्य प्रमाणेन'' अर्थात् दिनमान के घटी-पल से भाग दें तो राश्यादि फल प्राप्त होता है । उसे तात्कालिक निरयण सूर्य में जोड़ दिया जाय । अब यदि तात्कालिक सूर्यस्पष्ट स्थिर राशि में हो तो उसमें चार राशि घटा दें । यदि द्विस्वभाव राशिगत सूर्य हो तो चर राशि जोड़ दें । परन्तु चर राशिगत सूर्य होने पर जोड़ना-घटाना कुछ भी नहीं करना चाहिए । यह भी प्राणस्पष्ट का दूसरा प्रकार है । इस प्रकार दैवज्ञ को प्राणस्फुट, देहस्फुट तथा मृत्युस्फुट इन तीनों को लिख लेना चाहिए ।।२१-२२।।

अगले अध्यायों में इन तीनों का फल कहा जायेगा । इस प्रसंग में जो चर राशियों को जोड़ना–घटाना कहा गया है उसका सार तो केवल इतना है कि यदि सूर्य मेष-सिंह-धनु इनमें से किसी राशि का हो उसे केवल मेष (चरराशि) का मान कर चलना चाहिए। इसी प्रकार यदि सूर्य वृष-कन्या-मकर इनमें से किसी भी राशि में हो उसे प्राणस्पष्ट के लिए मकर (चर) का ही मान लें । यदि सूर्य मिथुन-तुला-कुंभ इन तीन में से किसी राशि का हो तो उसे चरराशि तुला का मान लें । इसी भाँति कर्क-वृश्चिक-मीन इन तीन में से किसी भी राशि का सूर्य हो तो उसे इस प्रसंग में चरराशि कर्क का ही मानकर उस एक सौ बीस गुणित तथा दिनमान से भाजित इष्टकाल में जोड़कर प्राणस्पष्ट करना चाहिए । इसमें चार जोड़ने या घटाने की आवश्यकता ही नहीं है और उत्तर भी एक ही प्राप्त होता है । यह प्रक्रिया प्राणपद स्पष्ट की तरह है परन्तु अन्तर यह है कि जहाँ प्राणपद में स्थिर रूप से पन्द्रह पल का एक प्राण होता है वहीं इस प्रसंग में वह दिनमान के न्यूनाधिक होने से पन्द्रह पल से कुछ न्यूनाधिक हो जाता है । जब दिनमान ३० घटी होता है तब पन्द्रह पल का ही एक प्राण होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मान लीजिए–प्रश्नकालीन इष्ट १५ घटी है। इसमें १२० से गुणा किया तो १८०० हुए। इनमें दिनमान ३० घटी का भाग दिया तो लब्धि ६० राशियाँ हुईं अब उस दिन सूर्य स्पष्ट राश्यादि ४/११/३०/४० है, यह स्थिरराशि है। इसमें चार राशि घटाने पर राश्यादि ०/११°/३०'/४०'' हुईं। इनमें पूर्वोक्त लब्धि ६० राशि जोड़ा, राशि बारह से अधिक है अतः १२ का भाग देने पर लब्धि शून्य प्राप्त हुई, जिसे चर सूर्य में जोड़ने पर राश्यादि ४/११/३०/४० यह प्राणस्पष्ट हुआ।

अब इसी उदाहरण से बृहत् पाराशरहोराशास्त्र के अनुसार प्राणपद निकालते हैं। यथा इष्ट घटी १५ को चौगुना किया तो ६० हुए, यह राशियाँ हुईं (यदि पल हों तो उन्हें पन्द्रह से भाग देते हैं और उन्हें चतुर्गुणित घटी में जोड़ देते है)। इन ६० में १२ भाग दिया तो शून्य राशि प्राप्त हुई। अब सूर्य सिंह का है अतः सिंह के त्रिकोण में मेष, सिंह तथा धनु ये तीन राशियाँ हैं। अतः सूर्य को मेष राशि का मानकर उसके राश्यादि ०/११/३०/४० में पूर्वोक्त फल शून्य राशि जोड़ने पर राश्यादि ०/११/३०/४० स्पष्ट प्राणपद हुआ।

अथ मतान्तरेण कालमृत्युसाधनञ्चाह

याता नाडीस्तिलघ्ना विभजतु दिनमानेन राश्यादि लब्धं
सूर्यार्याच्छेन्दुवारेष्वजमुखचरभान्त्येष्वसृक्ज्ञार्किवारे ।
वीणादिद्वन्द्वमध्येष्वपि धनमुदितं मृत्युलब्ध्यै विजह्यात्
स्थानेभ्यश्चोदितेभ्यस्तदिदमपि भवेत् काल एतौ लिखेच्च॥ २३॥

प्रश्नकालीन दिनगत घाटियों (इष्टकाल) को गुणा कर गुणनफल दिनमान से भाग दें। लब्ध राश्यादि फल को यदि उस दिन रविवार, गुरुवार, शुक्रवार या सोमवार में से कोई हो तो मेष-कर्क-तुला तथा मकर इनमें वारक्रमानुसार जोड़ें। यदि मंगल, बुध, शनि इन वारों में से कोई वार हो तो क्रमशः मिथुनादि द्विस्वभाव राशियों में (मीन को छोड़कर क्रमशः जोड़ें) तो मृत्यु स्पष्ट होता है। इसी प्रकार उक्त फल को सूर्य, गुरु तथा शुक्र-सोम में मेषादि चर राशियों में जोड़ने तथा भौमादि वारों में मिथुन आदि द्विस्वभाव राशियों में घटाने से काल स्पष्ट होता है। इन मृत्यु तथा काल को भी लिख लेना चाहिए ॥२३॥

एक अंग्रेजी टीकाकार में इस श्लोक के "तिलघ्ना" शब्द का अर्थ ३५ से गुणा करें ऐसा किया है परन्तु कटपयादि क्रम से इसमें "तिल" शब्द है जिसमें ति = ६ तथा ल=३ है, इसे उलट देने पर ३६ की संख्या प्राप्त होती है जो कि समीचीन है। न जाने उक्त विद्वान् टीकाकार ने किस प्रकार 'तिल' का अर्थ ३५ कर दिया है।

अस्तु, ३६ से गुणित इष्टकाल को दिनमान से भाजित कर उसमें वारानुसार चक्रांकित फल जोड़ें अथवा घटायें। अग्रांकित चक्र में द्विस्वभाव राशियों के १५° भी जोड़ने के लिए है, उसका कारण यह है कि द्विस्वभाव का उत्तरार्ध चर होता है जबकि पूर्वार्ध स्थिर होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नवारानुसार राशि जोड़ने-घटाने का चक्र

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	प्रश्नकालीन वार
मेषराशि जोड़े	मकर जोड़ें	मिथुन १५° जोड़ें	कन्या १५° जोड़े	कर्क जोड़ें	तुला जोड़ें	धनु १५° जोड़ें	मृत्युस्फुट हेतु (इष्ट×३६) ÷ दिन-मान=लब्ध राश्यादि में जोड़ें
मेष घटावें	मकर घटावें	मिथुन १५° घटावें	कन्या १५° घटावें	कर्क घटावें	तुला घटावें	धनु १५° घटावें	कालस्फुट हेतु (इष्ट×३६) ÷ दिन-मान=लब्ध राश्यादि में घटावें

मान लीजिए—इष्टकाल १० घटी है, इसे ३६ से गुणा करने पर गुणनफल ३६० हुआ। इसमें दिनमान ३२ घटी है, इसका भाग दिया तो ३६०÷३२=लब्धि ११ राशि तथा शेष ८ बचें। शेष को ३० से गुणा करने पर २४० हुए। इनमें पुनः ३२ (दिनमान) का भाग दिया तो लब्धि ७ अंश प्राप्त हुए। फिर शेष १६ को ६० से गुणा कर गुणनफल ९६० में पुनः ३२ का भाग दिया तो लब्धि ३० कला हुई। इस फल राश्यादि को रविवार का प्रश्न होने से मेषराशि (चरराशि) में जोड़ दिया तो राश्यादि ११/७/३० यह मृत्युस्पष्ट हुआ। इसी प्रकार पूर्वोक्त लब्धि को मेषराशि में घटाया तो राश्यादि ०/२२°/३०'' यह कालस्फुट हुआ।

प्रश्नोपयोगी होराऽर्कहोरेन्दुस्पष्टञ्चाह

सार्धेन नाडीद्वितयेन गच्छत्यारभ्य सूर्योदयतो दिनेशः।
चापाद् विलोमादनुलापयामी भानोरमुष्यास्तगतः शशाङ्कः॥ २४॥

सूर्योदय से ढाई घटी के अन्तर से धनुराशि से वक्रगति से होरार्क चलता है। इसी प्रकार के होरार्क में छह राशि जोड़ने पर होरेन्दु चलता है। यह प्रश्नफल के लिए उपयोगी होरा सूर्य तथा होरा चन्द्र हैं॥२४॥

कई प्रतियों में "अनुलोपयामी" पाठ है जो कि समीचीन नहीं है। शुद्ध पाठ "अनुलापयामी" है। "अनुलापयामी" का अर्थ मार्गी नहीं है। अनुलाप का अर्थ आवृत्ति तथा यामी अथवा यामिः का अर्थ एक घर से दूसरे घर (कुल) में जाने वाला होता है। यहाँ एक राशि से दूसरी राशि में गमन के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दैनिक होरासूर्य तथा होराचन्द्र प्रदर्शक चक्र

सूर्योदय से घटी	सूर्योदयात् घंटा	होराऽर्क राशि	होरेन्दु राशि	राहु राशि
२॥ तक	पहिला घंटा	धनु	मिथुन	मकर
५ तक	दूसरा घंटा	वृश्चिक	वृष	सिंह
७॥ तक	तीसरा	तुला	मेष	कर्क
१० तक	चौथा	कन्या	मीन	मेष
१२॥ तक	पाँचवाँ	सिंह	कुंभ	वृश्चिक
१५ तक	छठा	कर्क	मकर	तुला
१७॥ तक	सातवाँ	मिथुन	धनु	कर्क
२० तक	आठवाँ	वृषभ	वृश्चिक	कुंभ
२२॥ तक	नौवाँ	मेष	तुला	मकर
२५ तक	दशवाँ	मीन	कन्या	मेष
२७॥ तक	ग्यारहवाँ	कुंभ	सिंह	वृष
३० तक	बारहवाँ	मकर	कर्क	तुला
३२॥ तक	तेरहवाँ	धनु	मिथुन	मकर
३५ तक	चौदहवाँ	वृश्चिक	वृष	सिंह
३७॥ तक	पन्द्रहवाँ	तुला	मेष	कर्क
४० तक	सोलहवाँ	कन्या	मीन	मेष
४२॥ तक	सत्रहवाँ	सिंह	कुंभ	वृश्चिक
४५ तक	अठारहवाँ	कर्क	मकर	तुला
४७॥ तक	उन्नीसवाँ	मिथुन	धनु	कर्क
५० तक	बीसवाँ	वृष	वृश्चिक	कुंभ
५२॥ तक	इक्कीसवाँ	मेष	तुला	मकर
५५ तक	बाईसवाँ	मीन	कन्या	मेष
५७॥ तक	तेईसवाँ	कुंभ	सिंह	वृष
६० घटी तक	चौबीसवाँ	मकर	कर्क	तुला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्लोक २४ के अनुसार जो सूर्यस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट की राशियाँ हैं उनका अनुपात के अनुसार गणितीय स्पष्ट कर लें। इसमें तीस अंश का मान २ घटी तीस पल अर्थात् एक सौ पचास पल अथवा साठ मिनट के (एक घण्टे के) तुल्य होता है। अत: एक अंश पर पाँच पल अथवा दो मिनट का अनुपात रहता है।

मान लीजिए—अभीष्ट दिन पर किसी ने सोलह घटी तथा तीस पल पर प्रश्न किया तो इसको ढाई से विभाजित करने पर छह घण्टे तथा छत्तीस मिनट प्राप्त हुए। यह घंटे = ६ राशियाँ तथा छत्तीस मिनट के आधे अठारह अंश प्राप्त हुए, अत: इनको धनु राशि में जोड़ने पर राश्यादि ६/१८° + राश्यादि ८/०/०/० = राश्यादि २/१८/०/० यह होराऽर्कस्पष्ट हुआ। इसमें छह राशि जोड़ने पर राश्यादि ८/१८/०/० यह होरेन्दु स्पष्ट होगा। यदि हम पिछले चक्र में देखें तो सातवें घण्टे में मिथुन राशि में होरासूर्य तथा धनु राशि में होराचन्द्र लिखा है तदनुसार हमारी यह गणितीय प्रक्रिया सही है।

होराऽर्क तथा होरेन्दु—यद्यपि मूल पाठ में इसे सूर्यस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट कहा गया है परन्तु यह दोनों सौर परिवार के ग्रहों से सर्वथा भिन्न तथा प्रश्नफल प्राप्ति हेतु कल्पित संज्ञाएँ हैं। अत: भ्रान्ति से बचने के लिए टीकाकार ने इनको होरार्क तथा होरेन्दु कहा है, क्योंकि एक-एक घण्टे पर सूर्य की राशियाँ सूर्योदय से लेकर धनु-वृश्चिक-तुला क्रम से उलटी चलती हैं। सूर्य से छह राशि के अन्तर पर उलटे क्रम से अर्थात् मिथुन, वृष, मेष क्रम में चन्द्रमा चलता है।

होराराहुचक्रमाह

राहुर्मृगमृगारातिकर्किमेषालिजूकभे ।
कर्किकुम्भैणमेषोक्षजूकेषु प्रतिलोमत: ।। २५ ।।
चरत्यर्कोदयात् सार्धनाडीद्वितयतोऽन्वहम् ।
लिखेदेतानपीनेन्दुराहुचक्रमिदं स्मृतम् ।। २६ ।।

प्रत्येक २।। (ढाई) घटी या एक घण्टे के अन्तर से प्रतिदिन सूर्योदय के पश्चात् राहु, मृग (मकर), मृगाराति (सिंह), कर्क, मेष, अलि (वृश्चिक), जूक (तुला), कर्क, कुंभ, एण (मकर), मेष, उक्ष (वृष) इस क्रम से चलता है। इसे सूर्य-चन्द्र-राहुचक्र कहते हैं ।।२५-२६।।

श्लोक २५ तथा २६ के अनुसार राहु जो कि टीकाकार द्वारा "होराराहु" नाम से संबोधित है वह केवल चर एवं स्थिर राशियों में चाहता है। द्विस्वभाव राशियों के नाम इसमें नहीं है। इसके स्फुट हेतु सूर्योदयात् इष्ट के घण्टा–मिनट बना लें तथा जितने घंटे हों उन्हें छोड़ दें तथा जो मिनट हों उन्हें आधा कर दें तो उस राशि के अंश प्राप्त होंगे। राशि–ज्ञान श्लोक में कहे क्रम से कर लें। स्पष्टीकरण हेतु चक्र देखें। इन तीनों का फल आगे आठवें अध्याय में वर्णित हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मृत्युचक्रम्

गुलिकेन्दुतीक्ष्णमहसांक्रमान्निजोदयनवांशराशिगतैः ।
प्रतिग्रहचारो ज्ञेयो नवतिप्राणैस्तु वामतो गुलिकः।। २७।।
सोऽर्कयुतो मृत्युकरो भयदः सेन्दुश्च मृत्युचक्रमिदम्।। २८।।

गुलिक, चन्द्रमा तथा सूर्य प्रति नब्बे प्राण अर्थात् पन्द्रह पल में सूर्योदय समय से अपनी राशि के तत्कालीन नवांश राशि के क्रम से चलते हैं। इनमें सूर्य–चन्द्र मार्गी तथा गुलिक वक्री गति से संचरित होता है ।।२७।।

यदि गुलिक सूर्य या चन्द्र के साथ हो तो वह मृत्युकारक होती है तथा चन्द्रमा के साथ भयप्रद होती है ।।२८।।

६ प्राण के बराबर एक विनाडी (पल) होती है जैसा कि कहा है—

"षड्भिः प्राणैर्विनाडी स्यात् तत्षष्ट्या नाडिका स्मृता" ।

(सूर्यसिद्धान्त १/११)

मान लीजिए—किसी दिन सूर्योदय समय सूर्यस्पष्ट राश्यादि ४/११°/२२'/४५" है तो यह कर्क नवांश में है । अब यह सूर्य सूर्योदय से ९० प्राण अर्थात् १५ पल के पश्चात् सिंह में, फिर दूसरे पन्द्रह पल के पश्चात् कन्या में इस क्रम से संचरित होंगे । इस प्रकार से सूर्य, चन्द्र तथा गुलिक की राशि का ज्ञान कर लें । यदि गुलिक सूर्य के साथ हो, मृत्युकारक तथा चन्द्र के साथ हो तो भयदायक होती है । अतः इसको मृत्युचक्र कहते हैं ।

ग्रहस्पष्टसाधनम्

अर्केन्द्वारूढोदयभांशेशाः स्पष्टगणितशास्त्रेण ।
दृक्तुल्येनानेया ग्रहाश्च सर्वे तथैवान्ये।। २९।।

पूर्वकथित सूर्य, चन्द्र तथा लग्नराशीश, लग्ननवांश पति जो भी ग्रह हों उनका स्पष्ट दृग्गणित से करना चाहिए । इसी प्रकार अन्य ग्रह भी किसी दृग्गणितीय पंचांग से ही साधित करें ।।२९।।

आरूढ लग्न का क्रान्ति वृत्त के अनुसार संचरण नहीं होता, ये सब ग्रहादि मात्र फल के लिए कल्पित हैं ।

ग्रहाणां दृक्तुल्यताकथनम्

योगे ग्रहाणां ग्रहणेऽर्कसोमयोर्मौढ्ये तथा वक्रगतौ च पञ्चसु।
दृष्टानुरूपं करणं यदन्वहं तेन ग्रहेन्द्रान् गणयेत् त्रिवारम्।।३०।।
यदा यश्चैव सिद्धान्तो गणिते दृक्समो भवेत् ।
तथा तेनैव संसाध्यं जातकं गणयेद्बुधः ।।३१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्य-चन्द्रमा का ग्रहण, गहयुति, ग्रहविधान, ग्रहों का उदयास्त, पंचतारा ग्रहों का वक्री मार्गी जानना—इन सब की गणना में दृग्गणित के पञ्चांगों एवं ग्रन्थों का ही उपयोग करना चाहिए। ग्रहों की तीन बार गणना करें ।।३०।।

जिस सिद्धान्त, तंत्र या करण से ग्रह दृक्तुल्य हो उसी से ग्रह गणित करें ।।३१।।

वर्तमान समय में चित्रापक्षीय (केतुकरीय) अयनांश के अनुसार जो पञ्चांग निर्मित हो रहे हैं वे सभी भारत शासन द्वारा अनुमोदित है तथा दृग्गणितीय कहे जाते हैं।

आरूढस्य स्पष्टतामाह

लग्नस्फुटस्यभं त्यक्त्वा कलाभागांश्च योजयेत्।
आरूढभे स्फुटावाप्त्या अमुष्य विलिखेच्च यत् ।। ३२।।

।। इति प्रश्नमार्गे पञ्चमोऽध्यायः ।।५।।

—*—

इस श्लोक में आरूढ लग्न के स्पष्ट करने की विधि कही गयी है। पूर्व में कथित पृच्छक द्वारा स्वर्ण से स्पर्श की गयी राशि में उदय लग्न की राशि को छोड़कर उसके अंश-कला-विकला में जोड़ देने से आरूढ लग्न स्पष्ट होता है, उसे पृथक् लिख लेना चाहिए ।।३२।।

मान लीजिए—पृच्छक ने राशिचक्र में अध्याय २ श्लोक ११ के अनुसार पृच्छक ने राशिचक्र में सिंह राशि का स्पर्श किया तथा उस समय धनुराशि उदय लग्न है तथा उसके अंशादि ८°/१७'/३०'' है तो यहाँ राशि छोड़ दी तथा उसके अंशादि को सिंह के अंशादि मान लिया। इस प्रकार आरूढ स्पष्ट राश्यादि ४/८°/१७'/३०'' हुई।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का पाँचवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।। ५।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ षष्ठोऽध्यायः

सूत्रपञ्चकज्ञानम्

आरूढोदयलग्नाभ्यां सूत्रं सामान्यसंज्ञितम् ।
तदीशाभ्यान्तु यच्चिन्त्यं तत्स्यादधिपसंज्ञकम् ।। १।।
लग्नांशारूढराशिभ्यां सूत्रमंशकसंज्ञितम् ।
लग्नोडुपृच्छकोडुभ्यां चिन्त्यं नक्षत्रसंज्ञितम् ।। २।।
आरूढतद्दशमतो महासूत्रं विचिन्तयेत् ।

(१) आरूढ तथा उदयलग्न से विचार करना सामान्य सूत्र है । (२) आरूढ स्वामी तथा उदयलग्न के स्वामी से विचार करना अधिप सूत्र कहलाता है । (३) लग्ननवांश तथा आरूढलग्न से विचार करने को अशंक सूत्र कहते हैं । (४) लग्ननक्षत्र तथा पृच्छक के जन्मनक्षत्र से विचार करने का नाम नक्षत्रसूत्र है । तथा (५) आरूढलग्न तथा उससे दशम भाव से विचार करने को महासूत्र कहते हैं ।।१-२।।

अंग्रेजी में जिसे फार्मूला, हिन्दी में "गुर" कहते हैं उसी को संस्कृत में सूत्र कहा जाता है । किसी विषय को जानने की सरल एवं सुनिश्चित विधि को सूत्र कहा जाता है । जैसे गणित, भौतिकी, रसायन आदि में सूत्र होते हैं तथैव ज्योतिषशास्त्र में भी सूत्रों का उपयोग होता है ।

पञ्चमहाभूतसंज्ञकसूत्राणि

पृथ्वी सामान्यसूत्रं स्यादापस्त्वधिपसंज्ञितम्।। ३।।
तेजस्त्वंशकसूत्रं स्यादुडुसूत्रं तु मारुतः।
आकाशस्तु महासूत्रमित्येतत्सूत्रपञ्चकम्।। ४।।
प्राधान्येन विचिन्त्यं स्यात्पञ्चभूतात्मकत्वतः।

पृथ्वी तत्त्व सामान्य सूत्र है । जल तत्त्व को अधिप सूत्र कहते हैं । अग्नि तत्त्व अंशक सूत्र है । वायु नक्षत्र सूत्र है तथा आकाश तत्त्व को महासूत्र कहा जाता है । इन पञ्चमहाभूतों के सूत्रों से पाञ्चभौतिक प्रधानता का विचार करे ।।३-४।।

जीवमृत्युरोगसूत्राणि

आरूदोदययोर्द्वन्द्वं चरराशिगतं यदि ।। ५।।
द्वन्द्व एकं स्थिरेन्यद्वा जीवसूत्रमिति द्विधा ।
आरूढोदययोरेकं चरे स्यादुदये परम् ।। ६।।
द्वितयं वा स्थिरे तद्वन्मृतिसूत्रमपि द्विधा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चरसंस्थं तयोरेकमपरं स्थिरसंज्ञितम् ॥ ७॥
द्वयं वोभयराशिस्थं रोगसूत्रमपि द्विधा।

(१) **जीवसूत्र**—आरूढलग्न तथा उदयलग्न इनमें से दोनों ही यदि चर राशिगत हों या एक स्थिर राशि में तथा दूसरा द्विस्वभाव में हो तो यह दोनों प्रकार से जीवसूत्र होता है ।

(२) **मृत्युसूत्र**—(क) यदि आरूढलग्न तथा उदयलग्न में से एक चर राशि में, दूसरा द्विस्वभाव राशि में हो तो अथवा (ख) दोनों स्थिर राशि गत हों तो यह दो प्रकार का मृत्युसूत्र है ।

(३) **रोगसूत्र**—(क) यदि आरूढलग्न तथा उदयलग्न इनमें से एक चर राशि में तथा दूसरा स्थिर राशि में हो; (ख) यदि दोनों द्विस्वभाव राशियों में हों—ये दो प्रकार का रोगसूत्र होता है ॥५-६-७॥

इन सूत्रों का विचार जैमिनि मत के दीर्घायु, अल्पायु तथा मध्यमायु की भाँति है। उदयलग्न तथा आरूढलग्न के स्थान पर जैमिनि ने लग्नेश तथा अष्टमेश की जोड़ी से शनि, चन्द्र अथवा लग्न चन्द्र से तथा उदयलग्न एवं होरालग्न से आयुयोगों का विचार किया है वहाँ जो दीर्घायु की स्थिति है उसी प्रकार प्रश्नमार्ग में आरूढ लग्न एवं उदय लग्न के अनुसार जीवसूत्र है । अल्पायु की स्थिति मृत्युसूत्र तथा मध्यमायु की स्थिति रोग सूत्र है ।

तात्पर्य यह है कि आरूढलग्न तथा उदयलग्न यदि दोनों चरराशिगत हों अथवा एक स्थिर, दूसरा द्विस्वभाव में हो तो जैमिनि की दीर्घायु की भाँति जीव सूत्रसंज्ञक होता है। दोनों स्थिर राशियों में या एक चर में, दूसरा द्विस्वभाव में होता हो तो अल्पायु की भाँति मृत्युसूत्र होता है । यदि आरूढ तथा उदय लग्न में दोनों द्विस्वभावगत हों अथवा एक चर राशि में तथा दूसरा स्थिर राशि में हो तो वह मध्यमायु की भाँति रोगसंज्ञक सूत्र होता है। आगे चक्र देखें ।

जीवमृत्युरोगसूचकचक्रम्

जीवसूत्रम्	मृत्युसूत्रम्	रोगसूत्रम्
चर में आरूढलग्न चर में उदयलग्न	चर में आरूढलग्न द्विस्वभाव में उदयलग्न	चर में आरूढ स्थिर में उदयलग्न
स्थिर में आरूढलग्न द्विस्वभाव में उदयलग्न	स्थिर में आरूढलग्न स्थिर में उदयलग्न	स्थिर में आरूढ चर में उदयलग्न
द्विस्वभाव में आरूढलग्न स्थिर में उदयलग्न	द्विस्वभाव में आरूढलग्न चर में उदयलग्न	द्विस्वभाव में आरूढलग्न द्विस्वभाव में उदयलग्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अंशकसूत्रकथनम्

चिन्तनेंऽशकसूत्रस्याप्ययं न्यायो विचिन्त्यताम्।। ८।।
चरे चरस्थिरद्वन्द्वास्थिरे द्वन्द्वचरस्थिराः।
द्वन्द्वे स्थिरोभयचरा जीवो रोगो मृतिः क्रमात्।। ९।।

जब अंशक सूत्र का विचार करें तो आरूढलग्न तथा उदयलग्न के नवांश से विचार करना चाहिए।

चरलग्न में चरनवांश हो तो जीवसूत्र, चर में स्थिर नवांश हो तो रोगसूत्र तथा चरलग्न में द्विस्वभाव नवांश होने पर मृत्युसूत्र होता है। स्थिर लग्नों में द्विस्वभाव, चर तथा स्थिर नवांश क्रमशः जीव, रोग तथा मृत्यु के सूचक होते हैं। इसी प्रकार द्विस्वभाव राशियों के लग्न होने पर उनमें स्थिर नवांश, द्विस्वभाव नवांश तथा चर नवांश क्रमशः जीवन, रोग तथा मृत्यु की सूचना देते हैं ।।८-९।।

सूत्राणां फलम्

आरूढस्य च लग्नस्य पत्योरैक्ये च सौहृदे।
जीवसूत्रं विजानीयात्समत्वे रोगदं भवेत्।। १०।।
तयोश्शात्रवभावे तु सूत्रन्तु मरणप्रदम्।

यदि आरूढलग्न तथा उदयलग्न का स्वामी एक ही ग्रह हो अथवा दोनों स्वामियों में मित्रता हो तो जीवसूत्र का फल होता है। यदि आरूढेश तथा उदयलग्नेश में समता होती है तो रोगसूत्र का फल होता है। इसी प्रकार यदि आरूढराशिपति तथा उदयलग्नपति में शत्रुता हो तो मृत्युसूत्र का फल प्राप्त होता है अर्थात् मृत्युप्रद होता है ।।१०।।

मतान्तरेण जीवरोग-मृत्युज्ञानम्

गणयेल्लग्ननक्षत्रादारभ्य प्रष्टृजन्मभम्।। ११।।
त्रिभिस्तां गणयेत्संख्यामेकशेषे तु जीवकृत्।
द्विशेषे रोगदं सूत्रं निश्शेषे मरणप्रदम्।। १२।।

लग्न जिस नक्षत्र में हो उससे प्रष्टा के जन्मनक्षत्र तक गिने, उस संख्या में तीन का भाग दें; यदि १ शेष बचे जीवकृत फल है। २ शेष बचने पर रोगसूत्र होता है। कुछ भी शेष न बचे (शून्य शेष) तो मृत्युदायक जानना चाहिए ।।११-१२।।

पुनश्च जीवादिसूत्रकथनम्

आरूढतद्दशमयोर्द्वितयं चन्द्रराशिगम्।
यदि जीवनदं सूत्रं द्वयं चेत्सूर्यराशिगम्।। १३।।
मृत्युसूत्रं तदा ज्ञेयं यदा तु पुनरेनयोः।
एकं चान्द्रं परं सौरं रोगसूत्रं तदा भवेत्।। १४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि आरूढलग्न तथा उससे दशम राशि दोनों चान्द्र राशियों में हों तो जीवनदायक सूत्र होता है । यांद दोनों सौर राशियों में हों तो मृत्यदायक सूत्र होता है और जब आरूढ तथा उससे दशम राशि में एक चान्द्र में तथा दूसरी सौर राशि में हो तो रोगसूत्र जानना चाहिए ।।१३-१४।।

सौर राशियाँ—इस प्रसंग में सौर राशियों से तात्पर्य सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु तथा मकर—इन छह राशियों से है ।

चान्द्र राशियाँ—कुंभ, मीन, मेष, वृष, मिथुन तथा कर्क ये छह चान्द्र राशियाँ हैं ।

जीवादिसूत्राणां फलम्

जीवसूत्रफलं दीर्घमायू रुक्शमनादि च ।
रोगोत्पत्तिश्च रुग्दैर्घ्यं रोगसूत्रफलं मतम् ।। १५।।
मृतिसूत्रफलं मृत्युः प्रष्टुः सम्बन्धिनामपि ।
प्रेप्सिताप्तिरपि प्रष्टुः सूत्रे जीवनदायिनि ।। १६।।
रोगदे कार्यनाशादिर्दुःखं भीरपि मृत्युदे ।
अत्र ग्रन्थान्तरं चास्ति तदैवानु विलिख्यते।। १७।।

जीवसूत्र का फल दीर्घायु तथा रोगादि कष्टों की शान्ति करता है । रोगसूत्र का फल रोगोत्पत्ति तथा दीर्घकालीन रोग होता है ।।१५।।

मृत्युसूत्र का फल पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु तथा मृत्युतुल्य कष्ट होता है । जीवसूत्र में पृच्छक को उत्तम तथा मनचाहा लाभ होता है ।।१६।।

रोगसूत्र में कार्यनाश (असफलता) होता है; दुःख की प्राप्ति होती है । मृत्युकारक सूत्र में भय प्राप्त होता है । अब आगे ग्रन्थान्तर से फल लिखते हैं ।।१७।।

ग्रन्थान्तरात्फलम्

आयुर्वीर्यं धनमपि तथा वर्धते जीवसूत्रे;
रुक्सूत्रं चेद् धनहतिमनोभङ्गदेहप्रपीडाः ।
भीरुग्वृद्धिर्दिनमनुमनःकर्मभङ्गोऽन्त्यसूत्रैः
प्रष्टुर्वाच्यं फलमिति दृढं सर्वपृच्छासु सूत्रैः ।। १८।।

जीवसूत्र के कारण आयु, बल, धन की वृद्धि होती है । रोगसूत्र में धन की हानि, मन के उत्साह में कमी (निराशा), शरीर-कष्ट तथा भय के साथ रोगवृद्धि होती है । मृत्युसूत्र होने पर दिन-प्रतिदिन मनोबल गिरता चला जाता है; प्रत्येक कार्य में असफलता प्राप्त होती है, व्यर्थ का परिश्रम होता है । इस प्रकार सभी सूत्रों का फल दृढतापूर्वक पृच्छक को बताना चाहिए ।।१८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूतप्राबल्येन रोगज्ञानम्

सूत्रं यद्भूतसम्बन्धि मृत्युकृद्वाथ रोगकृत्।
तद्भूतांशभवान् देहे रोगान् प्रष्टुर्विनिर्दिशेत् ।। १९ ।।

पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाश इन पंच भूतों की प्रबलता से होने वाले रोगों का तद्-तद् भूतों के प्राबल्य के अनुसार पृष्टा को बताना चाहिए ।।१९।।

पृथ्वीसूत्र की प्रबलता होने पर रोग पृथ्वीतत्त्व जन्य होगा । प्रश्नकाल में जलतत्त्व के प्राबल्य से रोग जलतत्त्व सम्बन्धी (सर्दी, खाँसी, जुकाम, जलोदर आदि) होगा । ऐसे ही अन्य तत्त्वों का जानना चाहिए ।

पुनश्च स्पष्टरूपेण पाञ्चभौतिकरोगकथनम्

मांसास्थित्वक्सिरारोम पृथ्वी देहभृतां तनौ ।
स्वेदासृङ्मूत्रशुक्लास्यतोयं तोयमुदाहृतम् ।। २० ।।
क्षुत्तृडालस्यनिद्राभास्तेजोऽङ्गचलनं मरुत् ।
द्वेषरागौ च मोहश्च साध्वसञ्च जरा नमः ।। २१ ।।
एवं हि सर्वजन्तूनां पञ्चभूतमयी तनुः ।
पञ्चोक्तान्यत्र सूत्राणि त्रीण्येवान्ये प्रचक्षते ।। २२ ।।

मानव देह में मांस (flesh), अस्थि (bones), त्वक् (cutis), सिरा (veuns), रोम (hair)—ये सब धातुएँ पृथ्वी तत्त्व से निर्मित कही गयी हैं । (अत: इनके रोग भी पृथ्वी तत्त्व के रोग कहलाते हैं । स्वेद (sweat), असृङ् (blood), मूत्र (urine), शुक्ल (शुक्र=semen), आस्यतोय (saliva)—ये सब जल तत्त्व के पदार्थ होते हैं (अत: इनसे सम्बन्धित रोग जलीय रोग कहलाते हैं)।।२०।।

क्षुधा (hunger), तृषा (thirse),आलस्य (lethargy), निद्रा (sleep) तथा आभा (splendour)—ये सब अग्नितत्त्व के कारण होते है । अंगों का संचालन (movement and throbbing of limbs) वायुतत्त्व के कार्य हैं । द्वेष (dislike), राग (affection), मोह (infatulation), भय (fear), जरा (old age)—ये सब लक्षण वायुतत्त्व के कारण होते हैं ।।२१।।

इस प्रकार से सभी प्राणियों का शरीर पाँचभौतिक है । मैंने यहाँ पाँच तत्त्वों के अनुसार पाँच सूत्र दिये हैं परन्तु अन्य विद्वान् तीन सूत्र (वात, पित्त, कफ) से ही विचार करते हैं ।।२२।।

बुध पृथ्वीतत्त्व प्रधान, शुक्र जलतत्त्व प्रधान, मंगल अग्नितत्त्व प्रधान, शनि वायुतत्त्व प्रधान तथा गुरु आकाशतत्त्व प्रधान ग्रह होते हैं ।

कालसूत्राणि

नक्षत्राधिपसूत्रे द्वे वर्तमानफलप्रदे ।
सामान्यं भूतकालेऽन्ये भविष्यत्फलसूचके ।। २३ ।।

६नं ३०१२०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्व में कथित सूत्रपंचक में से नक्षत्रसूत्र तथा अधिप सूत्रों का फल वर्तमान काल (हाल = Present) मिलता है। सामान्य सूत्र का फल भूतकाल (माजी/Past) में मिलता है तथा अन्यों (आकाश एवं महासूत्रों) का फल भविष्यत्काल (अनागत, इस्तकबाल=Future) में होता है ॥२३॥

राशिचक्रोपरि कालकथनम्

लग्नादापञ्चमगैरानवमस्थैश्च पञ्चमान्नवात् ।
आलग्नगैरपि भवद्भावि च भूतं शुभाशुभं ज्ञेयम् ॥ २४॥

प्रथम त्रिकोण लग्न से चतुर्थ पर्यन्त भावों से वर्तमान काल का, पञ्चमादि चार भावों से भविष्य काल का तथा तृतीय त्रिकोण नवम से लेकर द्वादश पर्यन्त चार भावों से भूतकाल का शुभाशुभ विचार करना चाहिए ॥२४॥

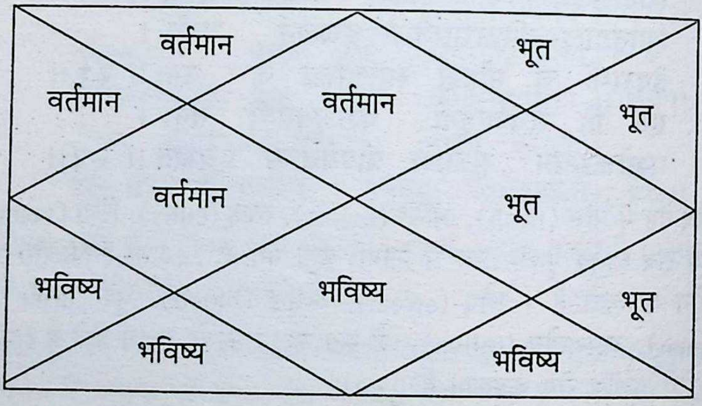

कण्ठाभरणोक्तसूत्रत्रयकथनम्

सूत्राणां त्रितयस्य कीर्तितमिह प्राधान्यमन्यैः परं
तत्कण्ठाभरणे समीरितमिहाप्येतत्फलञ्चोच्यते ।
आरूढोदययोर्द्वयोरपि तयोः सम्बन्धि चाङ्काशयो-
रादित्यांशकयोश्च यच्च तदिहारूढस्फुटं गृह्यताम् ॥ २५॥

अनेक विद्वानों ने प्रश्नशास्त्र में सूत्रत्रय विचार की प्रधानता वर्णित की है। यहाँ इस ग्रन्थ में उक्त सूत्रों का वर्णन कण्ठाभरण नामक ग्रन्थ के अनुसार किया जाता है। उसका फल इस प्रकार है—

आरूढराशिपति तथा प्रश्नकालीन उदयलग्नपति एवं उन दोनों के नवांशेश या द्वादशांशेशों का विचार करने के लिए स्पष्ट आरूढ (राशि-अंश-कला- विकला) का ग्रहण करना चाहिए ॥२५॥

स्पष्ट आरूढ की विधि पाँचवें अध्याय के ३२वें श्लोक में दी जा चुकी है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूत्रत्रयवर्णनम्

आरूढोदययोस्तयोश्च नवभागाऽर्कांशसम्बन्धि यत्;
सूत्राणां त्रितयं मृतिप्रदमिदं यद्येनयोर्नाथयोः।
स्वस्वाङ्कांशदिवाकरांशकपती स्यातां च चेद्वैरिणौ;
दोषे त्रिस्फुटदूतलक्षणदशादीनां म्रियेताप्यरुक् ।। २६।।

सूत्रत्रय क्या हैं यह समझाते हुए कहते हैं कि (क) आरूढराशि तथा उदयराशि (लग्न), (ख) आरूढ तथा लग्न के नवमांश तथा (ग) आरूढ एवं लग्न के द्वादशांश— इन तीनों से सम्बन्धित सूत्रों (जिनका वर्णन इस ग्रन्थ में है) को "सूत्रत्रय" कहा जाता है। यदि आरूढस्वामी तथा उदयलग्न का स्वामी, आरूढेश तथा लग्ननवांशेश, आरूढेश तथा द्वादशांशेश इन ग्रहों की जोड़ी में परस्पर शत्रुता हो तो सूत्रत्रय मृत्युकारक होता है। यदि त्रिस्फुट, दूत शकुन तथा चेष्टादि (भाव, स्वर) ये दोष पूर्ण हैं तो स्वस्थ व्यक्ति भी मृत्यु को प्राप्त होता है ।।२६।।

सूत्राणां त्रितयेव जीवनकरे चांशेशयोः सौहृदे;
शस्ते त्रिस्फुटदूतलक्षणदशाछिद्रादिके चाखिले।
अत्यासन्नमृतेरपीह न मृतिर्मिश्रेऽथ सूत्रादिके
जीवेत्कर्मभिरेव नैव सुकरं दोषेऽधिके जीवनम्।। २७।।

यदि तीनों सूत्र जीवनप्रद हों तथा नवांशेशों में मित्रता हों, दूत, शकुन, दशा, छिद्र आदि सभी विचारणीय तथा शुभ हों तो मरणासन्न व्यक्ति भी नहीं मरता है। यदि ये तीनों सूत्र मिश्रित हों (जीवनप्रद, मृत्युप्रद, रोगप्रद) तो व्यक्ति अपने शुभाशुभ कर्मानुसार जीवन या मृत्यु को प्राप्त हुआ करता है। यदि दोष की अधिकता हो तो जीवन दुष्कर तथा कठिन हो जाता है ।।२७।।

त्रिस्फुटैर्मृत्युनिर्णयः

कुलीरभृङ्गमत्स्येषु दोषजं स्याद्यथोत्तरम्।
तत्राप्यहीन्द्रपौष्णेषु तथैव त्रिस्फुटं भवेत्।। २८।।
कार्किवृश्चिकमीनानां त्रिस्फुटं चरमांशगम्।
मृत्युप्रदं भवेत्प्रष्टुरब्दमासदिनैः क्रमात्।। २९।।

कर्क, वृश्चिक और मीन इन राशियों में उत्तरोत्तर अधिक दोष होता है। इस भाँति आश्लेषा, ज्येष्ठा तथा रेवती इन तीनों नक्षत्रों में भी अधिक दोष होता है। यदि इन राशियों एवं नक्षत्रों में त्रिस्फुट हो तो उत्तरोत्तर दोष अधिक होता है ।।२८।।

यदि कर्क, वृश्चिक मीन इन राशियों के अन्तिम (नवम) नवांशों (मीननवांश) में त्रिस्फुट हों तो क्रम से वर्ष, मास तथा दिनों में पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु होती है ।।२९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ ग्रन्थान्तरम्

मेषात् केसरिणस्तथैव धनुषो भानां चतुष्कं क्रमात्;
सृष्टिस्थानविनाशसंज्ञमजतो दस्त्रात्तथा भानि च।
त्रीणि त्रीणि नवांशका भवनवन्नाशर्क्षसन्ध्याह्वये-
ष्वष्टाशीतितमांशकादिषु तथा नो शोभनं त्रिस्फुटम् ॥ ३०॥

मेषादि चार राशियाँ सृष्टिसंज्ञक होती हैं, सिंहादि चार राशियाँ स्थितिसंज्ञक तथा धनु आदि चार राशियाँ विनाशसंज्ञक होती हैं। पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र तथा रेवती नक्षत्र प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय नवांश लग्न से चार-चार भाव क्रमशः सृष्टि, स्थिति तथा विनाश संज्ञक होते हैं। विनाशसंज्ञक नक्षत्र, विनाशसंज्ञक राशि, गण्डान्त नक्षत्र एवं गण्डान्त राशि में और प्रष्टा के जन्मकालीन नवमांश से ८८वें नवांश में त्रिस्फुट का होना अशुभ होता है ॥३०॥

सृष्टि + स्थिति + विनाशसूचक चक्र

संज्ञा	सृष्टिसंज्ञक	स्थितिसंज्ञक	विनाशसंज्ञक
राशि	मेष, वृष, मिथुन, कर्क	सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक	धनु, मकर, कुंभ, मीन
भाव	प्रथम भाव (लग्न), द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ	पञ्चम भाव, षष्ठ, सप्तम, अष्टम	नवम भाव, दशम, एकादश, द्वादश
नक्षत्र	अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्र. पू.भा.,	भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पू.फा.,चित्रा, अनुराधा, पू.षा.,धनि., उ.भा.	कृत्तिका, आर्द्रा, श्लेषा, उ.फा., स्वाति, ज्येष्ठा, उ.षा., शत., रेवती
नवांश	प्रथम, द्वितीय, तृतीय	चतुर्थ, पंचम, षष्ठ	सप्तम, अष्टम, नवम

समयावधिकथनम्

कर्कटान्त्यनवभागसंश्रितं, त्रिस्फुटं मरणदायि वत्सरात्।
मासतो मधुकरान्त्यभागगं रेवतीचरमभागगं दिनात्॥ ३१॥

यदि कर्क राशि के अन्तिम (नवम) नवमांश में त्रिस्फुट हो तो एक वर्ष के भीतर मृत्युप्रद होता है। यदि वृश्चिक राशि के अन्तिम नवमांश में त्रिस्फुट पड़े तो एक मास के भीतर रोगी की मृत्यु होती है। यदि त्रिस्फुट रेवती के अन्तिम चरण अर्थात् मीन के अन्तिम नवांश में हो तो उसी दिन मृत्यु होती है ॥३१॥

ध्यान रहे लग्न, चन्द्र तथा गुलिक के योग को ही त्रिस्फुट कहते हैं। देखें— अध्याय ५ श्लोक १८ में।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

त्रिस्फुटस्य नवमांशद्वादशांशानयनञ्च

त्रिस्फुटं नवहतं निहन्त्विनैर्भं विना यदि तादृक्षसन्धिगम्।
जन्मगं यदि च तत्त्रिकोणगं मृत्युदं भवति पृच्छतां ध्रुवम्।। ३२।।

त्रिस्फुट के राश्यादि को नौ से गुणा करें, जो राशि प्राप्त हों उन्हें छोड़ दें, शेष अंशों एवं कलाओं को बारह से गुणा करें तो क्रमशः नवमांश तथा द्वादशांश प्राप्त होते हैं। यदि ये दोनों राशिसन्धि (कर्क, वृश्चिक, मीन के नवम नवांश) में हों या पृच्छक एवं सम्बन्धित व्यक्ति के जन्मनक्षत्र में हों तो उनके लिए मृत्युप्रद होता है। इसी प्रकार जन्मनक्षत्र के त्रिकोण में भी मृत्युदायक होता है ।।३२।।

जन्मनक्षत्र से दसवाँ तथा उन्नीसवाँ नक्षत्र त्रिकोण होते हैं। जन्मनक्षत्र से नौ-नौ नक्षत्रों के अन्तर से तीन त्रिकोण हुआ करते हैं।

त्रिस्फुटेन अकालमृत्युज्ञानम्

त्रिस्फुटस्य भनवांशयोर्बलं यस्य तेन जनिचन्द्रसङ्गमः।
मृत्युवेजहरिकार्मुकांशगं त्रिस्फुटं यदि महत्तरायुषे।। ३३।।

त्रिस्फुट की राशि एवं नवांश में जो भी अधिक बली हो यदि वह पृच्छक की जन्मकालीन चन्द्रराशि में हो तो मृत्युप्रद होता है। यदि त्रिस्फुट मेष, सिंह, धनु (अग्नितत्त्व) के नवांश में हो तो महत्तर आयु (वृद्धावस्था) में मृत्युप्रद होता है ।।३३।।

रोगापत्तिकृत् त्रिस्फुटमाह

संयुक्तं गुलिकेन वा यदि खरैर्नो शोभनं त्रिस्फुटं;
तत्र स्यात्तदुडूद्भवो यदि निजे गेहस्य कल्प्यो गदः।
दोषाणां नवकेन चान्वितमिदं प्रष्टुर्विपत्त्यै भवेत्
सृष्ट्यृक्षादिगतं च सद्ग्रहयुतं दीर्घायुरारोग्यदम्।। ३४।।

यदि त्रिस्फुट गुलिक या पाप ग्रहों से युक्त हो तो शुभ फलप्रद नहीं होता है। त्रिस्फुट जिस नक्षत्र में होता है उस नक्षत्र के गृह में रोगोत्पन्न होता है। यदि त्रिस्फुट नौ दोषों में किसी भी दोष से युक्त हो तो पृच्छक को विपत्ति देता है। यदि त्रिस्फुट सृष्टिसंज्ञक नक्षत्र, राशि, नवांश में हो अथवा शुभ ग्रह से युक्त हो तो दीर्घायु तथा आरोग्यप्रद होता है ।।३४।।

नवदोषाः—ऊपर श्लोक ३४ में नौ दोषों का उल्लेख है। ये नौ दोष निम्न होते हैं—

"विषोष्णविष्टिगण्डान्तलाटैकार्गलवैधृतः ।
गुलिकोऽहिशिरश्चैते नवदोषाः बलोत्तराः ।।"

अर्थात् (१) नक्षत्रों की विष घटी, (२) नक्षत्रों की उष्ण घटी, (३) गण्डान्त, (४) लाट दोष, (५) एकार्गल, (६) वैधृति, (७) गुलिक, (८) सार्प्यशीर्ष तथा (९) विष्टि—ये नौ दोष होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषघटी—अश्विनी की ५१ से ५४ घटी, भरणी की २५ से २८ तक, कृत्तिका की ३१ से ३४ तक, रोहिणी की ४१ से ४४ तक, मृगशिरा की १५ से १८ तक, आर्द्रा की २२ से २५ तक, पुनर्वसु की ३१वीं से ३४वीं तक, पुष्य की २१ से २४ तक, आश्लेषा की ३३ से ३६ तक, मघा की ३१ से ३४ तक, पूर्वाफाल्गुनी की २१ से २४ तक, उत्तराफाल्गुनी की २९ से २२ तक, हस्त की २२ से २५ तक, चित्रा की २१ से २४ तक, स्वाति की १५ से १८ तक, विशाखा की १५ से १८ तक, अनुराधा की ११ से २४ तक ज्येष्ठा, की १५ से १८ तक, मूल की ५७ से ६० तक, पूर्वाषाढ़ा की २५ से २८ तक, उत्तराषाढ़ा की २१ से २४ तक, श्रवण की ११ से १४ तक, धनिष्ठा की ११ से १४ तक, शतभिषा की १९ से २२ तक, पूर्वाभाद्र की १७ से २० तक, उत्तराभाद्र की २५ से २८ तक तथा रेवती की ३१ से ३४ तक की चार-चार घटियाँ विषघटी होती हैं। तात्पर्य यह है कि अश्विनी नक्षत्र की ५० घटी बीतने के उपरान्त चार घटी का समय, भरणी की २४ घटी बीत चुकने के बाद चार घटी का समय विषघटी होता है।

उष्णघटी—अश्विनी नक्षत्र के द्वितीय प्रहर की पाँच घटी, भरणी की आठवें प्रहर की नौ घटी; कृत्तिका, रोहिणी, मृग, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पू.फा., उ.फा., हस्त, चित्रा तथा स्वाति इन १३ नक्षत्रों के प्रारंभ की २२ घटी तथा अन्त की ३ घटियाँ, विशाखा के प्रारंभ की ८ घटी, अनुराधा के अन्त की ८ घटी, ज्येष्ठा के पूर्वार्ध की १० घटी; ज्येष्ठा के उत्तरार्ध, मूल, पू.षा., उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र तथा रेवती—इन शेष नक्षत्रों के अन्त की ३-३ घटी उष्ण होती है।

विष्टिकरण (भद्रा)—इसका उल्लेख पञ्चाङ्गों में रहता है।

गण्डान्त—यह तीन प्रकार का होता है—तिथिगण्ड, लग्नगण्ड तथा नक्षत्रगण्ड। पूर्णा तिथियों के अन्त की ७ घटी तथा नन्दा तिथियों के आरम्भ की २ घटियाँ गण्डदोष युक्त होती है। मीन लग्न का अन्तिम अंश तथा मेष लग्न का प्रथमांश गण्डान्त होता है। कर्क का अंतिम, सिंह का प्रथम अंश, वृश्चिक का अन्तिम अंश तथा धनु का प्रथम अंश गण्डान्त दोष युक्त होता है। रेवती, ज्येष्ठा, श्लेषा की समाप्ति का भाग, अश्विनी, मूल तथा मघा के प्रारम्भ का भाग गण्डदोषयुक्त होता है। ये छह गण्डनक्षत्र कहे जाते हैं।

लाट दोष—इसे व्यतिपात, अतिपात, महापात तथा क्रान्तिसाम्य कहते हैं। २७ योगों में एक योग व्यतिपात होता है। इसके अतिरिक्त पंचाङ्गों में जो क्रान्तिसाम्य सूक्ष्म गणित से दिया रहता हैं उसको भी इस दोष में परिगणित किया है।

एकार्गल—खार्जूर दोष या खार्जूर वेध भी इसी का नाम है। सूर्यनक्षत्र से अभिजित् सहित दिननक्षत्र तक गणना करें। यदि चन्द्रनक्षत्र विषम संख्या वाला हो तथा उस दिन विष्कंभादि योगों में से यदि व्याघात, शूल, वैधृति, व्यतिपात, वज्र, गण्ड, अतिगण्ड तथा परिघ में से कोई भी हो तो उस संयोग में वह नक्षत्र एकार्गल दोष से पीड़ित होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैधृति—विष्कंभादि योगों में यह सत्ताइसवाँ है । पंचांग में दिया रहता है ।

गुलिक—इसे मान्दि या शनिपुत्र भी कहते हैं । यह पूर्व में दिया जा चुका है ।

सार्प्यशीर्ष—यदि चन्द्र-सूर्य की युति (अमावस्या) के समय अनुराधा नक्षत्र हो तब अनुराधा का चौथा चरण सार्पशीर्ष कहलाता है यह दोषयुक्त होता है ।

त्रिस्फुटनक्षत्रफलम्

आढ्यक्षोणिसुरागमो विधनविप्रायानमग्नेर्भयं
वासोहानिरथ क्रमात्कलहभग्नायानमह्यागमः ।
भूदेवत्रितयागमोऽथ चतुरन्घ्र्यापच्च बन्ध्वागमो ;
मृत्योर्लक्षणमश्विभादिनवकत्रय्याश्रिते त्रिस्फुटे ।। ३५।।

अश्विनी से आश्लेषा तक, मघा से ज्येष्ठा तक तथा मूल से रेवती तक नक्षत्रों के तीन खण्ड हैं । इनमें अश्विनी, मघा तथा मूल का फल एक जैसा होगा । इसी प्रकार भरणी, पू.फा. तथा पू.षा. का होता है । इन नक्षत्रों में यदि त्रिस्फुट हो तो (१) सम्पन्न विप्र का आगमन, (२) निर्धन विप्र का आगमन, (३) अग्निभय तथा स्थाननाश, (४) कलह में पराजित व्यक्ति का आगमन, (५) सर्पदर्शन, (६) तीन विप्रों का आगमन, (७) पशुओं पर विपत्ति, (८) मित्रागमन तथा (९) मृत्यु लक्षणों का दर्शन—यह फल नक्षत्रों के वर्गों में क्रमशः होता है ।

त्रिस्फुटाश्रित नक्षत्रफल चक्र

त्रिस्फुट आश्रित नक्षत्र	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	श्लेषा	प्रथम नवक
	मघा	पू.फा.	उ.फा.	हस्त	चित्रा	स्वाति	विशाखा	अनुरा.	ज्येष्ठा	द्वितीय नवक
	मूल	पू.षा.	उ.षा.	श्रवण	धनि.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती	तृतीय नवक
फल	धनी विप्रागमन	निर्धनविप्रागमन	अग्निभय, वस्त्र या आवास की हानि	पराजित पुरुष का आगमन	सर्पागम	तीन विद्वानों का आगमन	चतुष्पादों को कष्ट	बन्ध्वागमन	मृत्यु लक्षण	फल

त्रिस्फुटे गोचरफलम्

यस्मिन् राशौ नवांशे वा त्रिस्फुटं तद्गते विधौ ।
त्रिकोणस्थेऽथवाऽर्के वा प्रोक्तलक्षणसम्भवः ।। ३६।।

त्रिस्फुट जिस राशि में या जिस नवांश में स्थित हो उस राशि या नवांश में गोचरवशात् चन्द्रमा का संचार हो अथवा उस राशि से त्रिकोण स्थान में सूर्य स्थित हो जाय तो (श्लोक ३५ से वर्णित नक्षत्रनवकों के अनुसार) पूर्व में कथित फल प्राप्त होता है ।।३६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

त्रिस्फुटे ग्रहयुतिफलम्

मूर्द्धोष्णज्वरतापकृद्रविरतीसारं शशिमें कुजः
स्तम्भं वाङ्मनसोः करोत्यपि बुधो दृक्पारवश्यं गुरुः।
बुद्धिभ्रंशशरीरतोदकृतः शोफं भृगुः पादयो-
स्सङ्कोचं कुरुतेऽर्कजोऽथ पतनं राहुः शिखी भौमवत् ॥ ३७॥

(१) सूर्य की त्रिस्फुट में युति शिरःशूल, उष्णता, ज्वर एवं संताप करती है। (२) चन्द्र युति या स्थिति अतिसार, प्रवाहिका (पेचिश) आदि उत्पन्न करती है। (३) मंगल व्रणोत्पादक है। (४) बुध वाणी एवं मन के रोग उत्पन्न करता है। (५) गुरु के कारण नेत्रदृष्टि दुर्बल होती है। (६) शुक्र बुद्धिभ्रंश, शरीर में सुई चुभोने जैसी पीड़ा तथा सूजन उत्पन्न करता है। (७) शनि पैरों में जकड़न एवं लंगड़ापन आदि उत्पन्न करता है। (८) राहु ऊँचे स्थान से पतन करता है तथा (९) केतु का फल मंगल की तरह (अग्निभय एवं बिजली आदि की दुर्घटना) करता है ॥३७॥

नवांशचक्रे त्रिस्फुटेन ग्रहयुतिफलम्

सूर्याद्यंशकसंस्थिते रविमुखैरप्यन्विते त्रिस्फुटे,
तेषामीरित आमयो यदि भवेत्प्रष्टुर्मृतिः स्याद्ध्रुवम् ।
यत्र त्रिस्फुटमङ्कनिघ्नमुडुनि स्यात्तत्रभे स्याद्रुजः
प्रारम्भोऽथ ततः परोडुनि भवेन्मोहस्तृतीये मृतिः ॥ ३८॥

यदि सूर्यादि ग्रहों के नवांश में त्रिस्फुट के साथ वे ग्रह भी बैठे हों तो भी पूर्व (श्लोक ३७) में कथित रोग पृच्छक या उससे सम्बन्धित व्यक्ति को अवश्य होते हैं।

मृत्युकर नक्षत्र का ज्ञान—त्रिस्फुट जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र की अश्विन्यादि संख्या को ९ से गुणा करें। गुणनफल में जो नक्षत्र आवे उस नक्षत्र में रोगोत्पत्ति होती है, उस नक्षत्र से दूसरे नक्षत्र में मूर्च्छा तथा तीसरे नक्षत्र में मृत्यु होती है ॥३८॥

त्रिस्फुटनक्षत्रदशासाधनम्

त्रिस्फुटस्यैष्यनाडीभिरानीय भदशां तथा।
अपहारं छिद्रमतो वत्सरान्तः फलं वदेत् ॥ ३९॥

जिस नक्षत्र में त्रिस्फुट स्थित हो उसकी ऐष्य (शेष = भोग्य) घटियों से भाग्य दशा का साधन करें। उससे अपहार तथा छिद्र का विचार कर वत्सरान्त (एक वर्ष के भीतर) फल विचारना चाहिए ॥३९॥

यहाँ दशा के आनयन में अन्तर यह होगा कि १२० वर्ष के स्थान पर केवल १२ मास (३६० दिन) ही ग्रहण किये जायेंगे अतः ग्रहों की दशा का समयानुपाद इसी के अनुसार होगा। इसमें ग्रह के एक वर्ष के अनुपात में तीन दिन ग्रहण करें। इन ग्रहों की दशा की अवधि वर्षफल में प्रयुक्त विंशोत्तरी दशा के तुल्य होती है। छिद्रविचार हेतु इस अध्याय का ६५वाँ श्लोक द्रष्टव्य है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

त्रिस्फुटनक्षत्रदशा ज्ञानचक्र

केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	ग्रहाः	
अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृग.	आर्द्रा.	पुन.	पुष्य	श्लेषा	नक्षत्र	
मघा	पू.फा.	उ.फा.	हस्त	चित्रा	स्वाति	विशा.	अनु.	ज्येष्ठा		
मूल	पू.षा.	उ.षा.	श्रवण	धनि.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती		
०	२	०	१	०	१	१	१	१	मास	दशा
२१	०	१८	०	२१	२४	१८	२७	२१	दिन	अवधि

रहस्यकथनम्

आरूढाष्टमरिःफषष्ठपतयस्तत्स्थाश्च नीचस्थिता
मूढाः केन्द्रधनत्रिकोणगखरा मान्द्यंशराशीश्वरौ।
ये च त्रिस्फुटतारसङ्गमभपास्ते दोषदाः पृच्छतां
केन्द्रादिस्थशुभादयोऽत्र शुभदा एतद्रहस्यं परम्॥ ४०॥

यदि आरूढ स्थान से आठवें, छठे, बारहवें स्थान के स्वामी; इन स्थानों में बैठे ग्रह, नीचस्थ अस्तङ्गत ग्रह, पापग्रह, केन्द्र, धनस्थान तथा त्रिकोण स्थानों में हो, गुलिक-नवांशेश, गुलिकराशीश, त्रिस्फुट नक्षत्र, विपत्तारा, प्रत्यरितारा, वधतारा—ये सब प्रश्नकर्त्ता को अशुभ फल देते हैं। इसके विपरीत यदि केन्द्र-त्रिकोण, धनभाव में शुभ ग्रह हों तो शुभ फल देते हैं। यह एक परम रहस्य है ॥४०॥

त्रिस्फुटेन मृत्युनक्षत्रज्ञानम्

योंऽशस्त्रिस्फुटगोऽस्य यातघटिका धीघ्ना विभज्य स्थिरैः
शिष्टं त्रिस्फुटतारकादि गणयेदत्रागतं मृत्युभम्।
तारं चाथ चतुःस्फुटस्थमिह तु व्याधेः शमः स्याद्यदि
प्रष्टुस्तर्हि चतुःस्फुटोडुजनुषं बन्धुं विशेदामयः॥ ४१॥

त्रिस्फुट का नक्षत्र जिस नवांशक में पड़े उस नक्षत्र की गत घटिकाओं अर्थात् भयात (भुक्तर्क्ष) को ९ (नौ) से गुणा कर सत्ताईस का भाग दें, जो शेष बचे उतनी संख्या त्रिस्फुट नक्षत्र से आगे गिने। इस प्रकार जो संख्या प्राप्त होगी वह नक्षत्र मृत्युनक्षत्र होगा। इस नक्षत्र में प्रश्नकर्त्ता या जिसके सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया है उस व्यक्ति की मृत्यु होती है (या उसे मृत्यु तुल्य कष्ट होता है)। जिस नक्षत्र में चतु:स्फुट स्थित हो उसे भी मृत्युनक्षत्र समझना चाहिए। यदि चतु:स्फुट स्थित नक्षत्र में रोगी का रोग चंगा हो जाय तो उसके बाद उस रोगी का निकटतम सम्बन्धी उस रोग से ग्रसित हो जाता है। अर्थात् रोग का संक्रमण होता है ॥४१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकारान्तरेण मृत्युज्ञानम्

त्रिस्फुटस्थगृहगो यदा भवेद् भानुरिन्दुरथवात्र वा मृतिः।
निर्णयस्त्विह गुरूपदेशतो जायते बहुपरीक्षणैरपि ।। ४२।।

जिस राशि में त्रिस्फुट स्थित हो उसमें गोचर में भ्रमण करते हुए सूर्य अथवा चन्द्रमा का संचार हो तब मृत्यु होती है । प्रश्नशास्त्र में मृत्यु का निर्णय गुरु के उपदेश से तथा अनेक बार के परीक्षणों से किया जा सकता है अर्थात् यह अनुभवगम्य विषय है ।।४२।।

पञ्चस्फुटैः मृत्युज्ञानम्

लग्नाहिमान्दीन्दुरविस्फुटानां
योगे भवेयुर्यदि जन्मभानि ।
वधर्क्षवैनाशिकपौष्णभानि
मृत्युर्विपत्प्रत्यरयोश्च सद्यः ।। ४३।।

यदि लग्न, राहु, मान्दि, चन्द्र तथा रवि इन पाँचों के स्फुटों के योग तुल्य पृच्छक या सम्बन्धित जन के जन्मराश्यंशकला-विकला हों अथवा वधनक्षत्र, वैनाशिक नक्षत्र, रेवती नक्षत्र, विपत्तारा, प्रत्यरि तारा—इनमें पञ्चस्फुटों का योग पड़ता हो तो मृत्युकारक होता है ।।४३।।

जन्मनक्षत्र के बाइसवाँ नक्षत्र वैनाशिक नक्षत्र कहलाता है । अठासीवाँ नवांश भी अनिष्टकर होता है । खरद्रेष्काण (बाइसवाँ द्रेष्काण) भी मृत्युकारक होता है । इस प्रकार के खतरनाक गणितीय बिन्दुओं पर पञ्चस्फुट (अ. ५२ श्लोक १८) का होना जीवन के लिए हानिकर होता है ।

मतान्तरेण प्राण-देहमृत्युफलम्

लग्नस्यांशमसुं वपुश्शशभृतो मान्देश्च मृत्युं विदु-
स्तद्योगेक्षणवर्जितो वपुरसू युक्तेक्षितौ चेन्मिथः ।
दीर्घायुर्दृढमादिशेद्यदि तनोर्मृत्योर्युतीक्षादिकं,
पीडा स्याद् वपुषो रुजाय तदसोर्मोहप्रदं पृच्छताम् ।। ४४।।

लग्ननवांश असु (प्राण), चन्द्रनवांश वपु (देह) तथा मान्दिनवांश को मृत्यु जानना चाहिए । यदि प्राणराशीश तथा देहराशीश की परस्पर युति, दृष्टि हो तथा वे दोनों मृत्युराशीश की युति-दृष्टि से रहित हों तो पृच्छक दीर्घायु होता है । यदि देहस्फुट पर मृत्युस्फुट का प्रभाव युति या दृष्टि द्वारा हो तो दीर्घकालीन रोग होता है । शरीर में पीड़ा होती है । यदि प्राणस्फुट (प्राणद्योतक राशि) पर मृत्युस्फुट का प्रभाव (युति या दृष्टि द्वारा) हो तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति को मोह (बुद्धिमान्द्य, अचेतनता, बेहोशी) प्राप्त होता है ।।४४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्न-चन्द्र-गुलिकनवांशफलम्

द्वन्द्वांशे यदि लग्नचन्द्रगुलिका मृत्युप्रदा रोगदाः
प्रष्टुस्ते स्थिरभागगा यदि चरांशेष्वायुरारोग्यदाः।
अन्योऽन्यं यदि ते त्रिकोणभगता भागा महारोगदा
दृष्टा मोहकरा युता मरणदाः कर्कित्रिकोणे दृढम्।। ४५।।

जब लग्न, चन्द्र तथा गुलिक द्विस्वभाव राशियों के नवांश में हों तो प्रष्टा के लिए मृत्युदायक होते हैं। यदि स्थिर नवांश में हो तो रोगोत्पन्न करते हैं। यदि चरनवांश में हों तो आयुरारोग्यकारक होते हैं। यदि लग्न, चन्द्र एवं गुलिक परस्पर त्रिकोण स्थानों में हों तो भयानक रोगोत्पन्न करते हैं। यदि इन तीनों में दृष्टि सम्बन्ध हो तो मूर्च्छित करते हैं। यदि इनकी परस्पर युति हो तो मृत्यु होती है। यदि ये कर्क, वृश्चिक तथा मीन राशियों में हों तो सुनिश्चित ही मृत्युकारक होते हैं ।।४५।।

पुनश्च मतान्तरमाह

प्राग्लग्नं पञ्चनिघ्नं गुलिकयुतमसुं प्राहुरिन्दुं वसुघ्नं
मान्द्याढ्यं चापि देहं मुनिहतगुलिकं भानुयुक्तञ्च मृत्युम्।
प्राणाधिक्ये तु रोगः शमनमथ रुजां देहवृद्धौ प्रवृद्धे,
मृत्यौ स्यात्तेषु मृत्युर्जनिभमुपगते सार्पपौष्णेन्द्रभे वा।। ४६।।

प्राग्लग्न (पूर्व में उदित प्रश्नलग्न) को पाँच से गुणा कर उसमें गुलिक जोड़ दें तो प्राणस्पष्ट होता है। चन्द्रस्पष्ट को आठ से गुणा कर उसमें गुलिकस्पष्ट मिलाने से देहस्फुट प्राप्त होता है। गुलिकस्पष्ट को सात से गुणा कर उसमें सूर्यस्पष्ट मिलाने से मृत्युस्पष्ट होता है। अब इन तीनों स्पष्टों की तुलना करें—यदि प्राणस्फुट के राश्यंशादि अधिक हों तो रोगशान्ति होती है। देहाधिक्य होने पर रोग बढ़ता है। मृत्युस्फुट यदि अधिक होता है तो मृत्यु होती है। अथवा यदि मृत्युस्फुट श्लेषा, ज्येष्ठा तथा रेवती में से किसी नक्षत्र में हो तो भी मृत्यु होती है ।।४६।।

त्रिस्फुटराशौ राहुगुलिकयुतिफलम्

युक्ते तत् त्रितयं भवेद्यदिह भं तत्स्थेषु सूर्यादिषु
ब्रूयात्तातमुखापदं मृतिमिह प्रष्टुस्समान्दावहौ।
मान्दौ दैवविदो शुभानि शिखिनि प्रश्नस्य कर्तुस्तथा;
दूतस्यास्य विनाशमर्कतनये प्रष्टेह यः प्रेषितः ।। ४७।।

सूर्य स्थित राशि में यदि त्रिस्फुट हो तो पिता या पितृतुल्य व्यक्ति को परेशानी होती है। यदि त्रिस्फुट की राशि में मान्दि के साथ अहि (राहु) हो तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु होती है। यदि त्रिस्फुट की राशि में केवल गुलिक हो तो दैवज्ञ का कल्याण होता है। यदि केवल केतु हो तो पृच्छक का भला होता है। यदि त्रिस्फुट की राशि में शनि हो तो पृच्छक द्वारा प्रेषित दूत का नाश होता है ।।४७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोगिप्रश्ने विशेषः

गतासुतः प्रोक्षणभक्तभादिना
विहीनमान्दिर्जनिगो मृतिप्रदः ।
न चेन्निजाधिष्ठिततारजन्मनो
मृतिप्रदो बन्धुजनस्य पृच्छताम् ।। ४८।।

दिनगत प्राणों में ५६२ का भाग दें, जो लब्ध राश्यादि प्राप्त हों उनको गुलिकस्पष्ट के राश्यादि में घटायें; जो शेष राश्यादि बचे यदि वह पृच्छक के जन्मनक्षत्र के तुल्य हो अर्थात् वह जन्मनक्षत्र में पड़ता हो तो मृत्युदायक होता है। यदि वह पृच्छक के जन्मनक्षत्र के बराबर न भी हो तो वे राश्यादि जिस नक्षत्र में पड़ते हों वह नक्षत्र यदि प्रश्नकर्त्ता के किसी निकटस्य का है तो उस व्यक्ति की मृत्यु होती है ।।४८।।

स्पष्टीकरण—इस श्लोक में असु शब्द का प्रयोग हुआ है । पूर्व में बता चुके हैं कि असु एक पल का छठा भाग होता है । अतः प्रश्नेष्टकाल के जितने घटी-पल हों उनको पलात्मक बनाकर फिर उनका ६ से गुणा करने पर असु प्राप्त होंगे, असु को ही प्राण कहते हैं । असु में ही ५६२ का भाग देना चाहिए । मान लीजिए कि इष्टकाल ५ घटी तथा ३० पल हैं अतः इसके ३३० पल हुए; इन्हें ६ से गुणा किया तो २१८० असु या प्राण हुए । इनमें ५६२ का भाग दिया तो राश्यादि ३/२६°/२२'/१२'' प्राप्त हुए । यह आश्लेषा नक्षत्र में पड़ता है, क्योंकि आश्लेषा राश्यादि ३/१६°/४०'/०'' से राश्यादि ४/०°/०'/०'' तक रहता है ।

संहारराशिः त्रिताराकथनञ्च

संहारगमसद्युक्तं प्रष्टुर्देहांशकादिगम् ।
जन्मतारात्रयस्थञ्च नियमेन मृतिप्रदम् ।। ४९।।

यदि संहारराशियों (कर्क-वृश्चिक-मीन) के राशि, नवांश या नक्षत्र में त्रिस्फुट हो या पृच्छक के देहांशक (अठासीवाँ नवांश) में हो या जन्मतारा (प्रथम, दशम तथा उन्नीसवाँ नक्षत्र) में हो या जन्मतारा (प्रथम, दशम तथा उन्नीसवाँ नक्षत्र) में हो एवं अशुभ ग्रहादि से युक्त हो तो मृत्युदायक होता है ।।४९।।

ग्रहस्पष्ट के राश्यादि में राश्यादि ९/२०°/०'/०'' जोड़ने पर अठासीवाँ नवांश (देहांश) प्रारम्भ होता है जो कि आगे ३°/२०' तक रहता है ।

आयुर्वृद्धियोगः

सृष्टिखण्डगृहोडुस्थमथवा शुभसंयुतम् ।
यद्वाजहरिचापांशगतं त्रिस्फुटमायुषे ।। ५०।।

यदि त्रिस्फुट (पूर्व में कथित) सृष्टिखण्ड की राशियों, भावों, नवांशों या नक्षत्रों में हो या शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हो या मेष, सिंह, धनु के नवांश में हो तो ऐसा त्रिस्फुट पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की आयु की वृद्धि का सूचक होता है ।।५०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

त्रिस्फुटेन बन्धुजनानां शुभाशुभज्ञानम्

त्रिस्फुटस्य दृगाणादि वर्गेशाश्रितराशिपैः ।
तातमातृभ्रातृबन्धुपुत्रभार्याशुभाशुभम् ॥ ५१॥
सगुणैस्तैः शुभं वाच्यं सदोषैश्च तथाऽशुभम् ।

त्रिस्फुट के द्रेष्काण से पिता का, होरा से माता, नवमांश से भ्राता, त्रिंशांश से बन्धु (रिश्तेदार), द्वादशांश से पुत्र तथा राशिस्वामी से पत्नी के शुभाशुभ का विचार करना चाहिए ॥५१॥

यदि ये वर्गेश गुणयुक्त हों तो उनसे सम्बन्धित सम्बन्धी जनों को सुख होता है । यदि वे दोषयुक्त हों तो उन सम्बन्धियों को कष्ट होता है ॥५१½॥

गुणदोषकथनम्

दोषा दुर्बलतानिष्टस्थितिपापान्वयादिकाः ॥ ५२॥
इष्टभावस्थितिर्वीर्यं सद्योगेक्षे च तद्गुणाः ।

दुर्बलता, अनिष्टस्थान स्थिति, पापयुति इत्यादि ग्रहों के दोष होते हैं ॥५२॥

अच्छे भाव में स्थिति, बली होना, शुभ ग्रहों से युति, शुभ ग्रहों से दृष्ट होना—ये ग्रहों के गुण हैं ॥५२½॥

द्रेष्काणादिफलम्

द्रेक्काणाद्यधिपैरेव कैश्चिदेवं निरूप्यते ॥ ५३॥
त्रिस्फुटेऽर्कादिभिर्युक्ते पित्रादीनामशोभनम् ।
चतुष्पदांशके भे वा त्रिस्फुटं पापयुग्यदि ॥ ५४॥
वाच्यश्चतुष्पदां नाश एवं युक्त्या विचिन्त्यताम् ॥ ५५॥

द्रेष्काणादि के स्वामियों के अनुसार भी कुछ विद्वानों ने फल कथन किया है ॥५३॥

यदि त्रिस्फुट सूर्यादि ग्रहों से युत हो तो जिसके वे कारक हैं उनको अशुभ फल होता है। यदि त्रिस्फुट चतुष्पद राशि या उसके अंशक में हो तो चतुष्पाद पशु मर जाते हैं ॥५४॥

इस प्रकार पालतू पशुओं के लाभ-हानि के विषय में युक्तिपूर्वक विचार कर फल कथन करना चाहिए ॥५५॥

तात्पर्य यह है कि फलकथन में ऊहापोह तथा विचार आवश्यक है ।

त्रिस्फुट-चन्द्रनक्षत्रादीनां फलम्

दिवसत्रितयादर्वाक्कलहो हेतुना विना ।
धनहीनस्य वृद्धस्य भूसुरस्य समागमः ॥ ५६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अग्निभीतिस्ततो नाशः पात्रस्य वसनस्य वा।
ततः क्षतशरीरस्य रोगिणो वा समागमः ॥ ५७॥
ततः सर्पागमः शुद्धविप्रस्यागमनं ततः।
नाशश्चतुष्पदां यद्वा दासस्य पतनं ततः॥ ५८॥
समीपे कस्यचिन्मृत्युर्व्याधिताष्टमगे विधौ।
भृङ्गाद्यैर्दीपहानिर्वा लक्षणानि मृतेर्नव ॥ ५९॥
दस्रादिनवताराणां त्रिस्फुटे तु त्रिकोणगे।
त्रिस्फुटांशस्य राशेर्वा त्रिकोणेन्दौ तदुद्भवः ॥ ६०॥

अश्विनी आदि नौ नक्षत्रों के तीन त्रिकोण हैं। इनमें यदि त्रिस्फुट चन्द्र से परस्पर त्रिकोण में हो तो उन नौ नक्षत्रों के अनुसार जो फल होता है वह क्रमशः दिया जा रहा है— (१) अकारण तीन दिन तक लड़ाई-झगड़ा, (२) निर्धन एवं बूढे ब्राह्मण (विद्वान्) का आगमन, (३) अग्निभय, (४) पात्रनाश, वस्त्रनाश, (५) क्षतशरीर वाले व्यक्ति का आगमन, (६) सर्प तथा शुद्धाचार युक्त ब्राह्मण का आगमन, (७) पशुओं की मृत्यु अथवा नौकर को चोट लगना, (८) पड़ोस के व्यक्ति या रिश्तेदार की मृत्यु तथा (९) भृंग या पतिंगे द्वारा दीपक बुझना (या बल्ब का फ्यूज हो जाना) आदि लक्षण तब होते हैं जब चन्द्रमा अष्टम भाव में हो ॥५६-६०॥

ग्रहाणां रोगाः (पुनरुक्तिः)

ज्वरस्तापस्तनौ मूर्ध्नि विशेषेणोष्णतेजसः।
अतिसारः सुधा भानोर्भूमिपुत्रस्य तु व्रणः ॥ ६१॥
ज्ञस्य वाङ्मनसोः स्तम्भः पारवश्यं च नेत्रयोः।
वेदना सकलाङ्गेषु धीभ्रमश्च गुरोः स्मृतः ॥ ६२॥
शोफः शुक्रस्य मन्दस्य सङ्कोचः करपादयोः।
राहोस्तु पतनं केतोर्व्याधिर्व्रण उदाहृतः ॥ ६३॥

सूर्यादि ग्रहों से क्रमशः (१) ज्वरताप, शिरोपीडा, (२) अतिसार, (३) व्रण, (४) वाणी एवं मन की जकड़न, (५) वेदना तथा बुद्धिभ्रम, (६) शोथ, (७) हस्तपादजड़ता, (८) पतन तथा (९) व्रण—ये रोग होते हैं ॥६१-६३॥

ये तीनों श्लोक इसी अध्याय के ३७वें श्लोक में कही बात को दोहरा रहे हैं।

रुग्णस्य मृत्युकथनम्

त्रिस्फुटेन समेतस्य त्रिस्फुटांशकपस्य वा।
रोगिणो यदि रोगः स्यान्मरणं तस्य निश्चितम् ॥ ६४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति को त्रिस्फुट से युक्त ग्रह से सम्बन्धित रोग हो अथवा त्रिस्फुट के नवांशेश ग्रह की बीमारी हो तो रोगी की मृत्यु निश्चित होती है ॥६४॥

पुनः दशाकथनम्

दशामपहृतिं छिद्रमानीय त्रिस्फुटोडुनः ।
एष्याभिर्घटिकाभिस्तैर्वत्सरान्तः फलं वदेत् ॥ ६५॥

त्रिस्फुट स्थित नक्षत्र के भोग्य घटी-पलों से दशासाधन करें तथा अपहार एवं छिद्र का विचार कर फलकथन करें ॥६५॥

यही बात पूर्व के श्लोक ३९ में कथित है ।

अशुभफलकथनम्

त्रिस्फुटोडुसमूलेशा आरूढानिष्टभावगाः ।
तदीशा नीचगा मूढा मान्दीशाश्चाशुभप्रदाः ॥ ६६॥

यदि त्रिस्फुट अधिष्ठित नक्षत्रेश विपत्नक्षत्रेश, प्रत्यरिनक्षत्रेश अथवा वधनक्षत्रेश के साथ आरूढ राशि में या त्रिक्भाव में हो और जिस भाव में हो उसका स्वामी नीचस्थ, अस्तंगत हो तथा मान्दीश भी इसी प्रकार का हो तो अशुभ फल मिलता है ॥६६॥

अत्र प्रश्नदशानयने पक्षान्तरं लिख्यते

प्रश्नोडुत्रिस्फुटाभ्यां विधिवदुडुदशां मान्दिनाऽपि प्रतीपं
यातार्भिर्नाडिकाभिर्नयतु तिसृषु वै गृह्यतां तासु चैका ।
प्रश्ने यात्रानुरूपा शुभतदितरदे चाब्दिके मासिके वा
खेटाब्दे वासराः स्युस्त्रिगुणितविहता वैव नेया दशेन्दोः ॥ ६७॥

॥ इति प्रश्नमार्गे षष्ठोऽध्यायः ॥

पूर्व में कथित विधि से प्रश्नकालीन नक्षत्र तथा त्रिस्फुट नक्षत्र के भोग्य के अनुसार नक्षत्रदशा निकालें । इसी प्रकार गुलिक जिस नक्षत्र में स्थित हो उससे भी दशा ज्ञात करें । प्रश्न के शुभाशुभ फल विचारने में इन तीनों में जिसकी दशा अनुरूप (फिट बैठती) हो उस दशा को फलकथन के लिए ग्रहण करें । वर्ष या मास के लिए फल का विचार करने में वार्षिक या मासिक दशा लगानी चाहिए । वार्षिक दशा में विंशोत्तरी दशा में वर्णित ग्रहों की वर्षसंख्या को त्रिगुणित करने पर दिन निकल आते हैं (देखें—श्लोक ३९ की व्याख्या) । मासिक दशा में विंशोत्तरी की ग्रहदशा वर्षों में चार से भाग देने पर दिन प्राप्त होते हैं । अथवा एक मत यह भी है कि प्रश्ननक्षत्र के भुक्त भोग्य से दशा साधन करें ॥६७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मासिक दशा में दिनादि प्रदर्शक चक्र

दशेश-ग्रहाः	केतु	शुक्र	सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	नवग्रहों के दिनादि का योग
दिन	१	५	१	२	१	४	४	४	४	३०
घटी	४५	०	३०	३०	४५	३०	०	४५	४५	०

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का छठा अध्याय पूर्ण हुआ ।।६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ सप्तमोऽध्यायः

अथाष्टमङ्गलफलान्युच्यन्ते

वामस्थेन फलं भूतं वर्तमानन्तु मध्यतः।
दक्षिणस्थेन भावीनि फलानि च विनिर्दिशेत्॥ १॥

अष्ट मंगल के वाम भाग से भूतकालिक फल, मध्य भाग से वर्तमानकालिक फल तथा दक्षिण भाग से भविष्यकालीन फल कहना चाहिए ॥१॥

इस ग्रन्थ के अध्याय ४ श्लोक ३८-३९ में अष्टमंगल का विवरण है। अष्टमंगल में आठ-आठ की गिनती से कौड़ी गिनते हैं। पहले उसके पाटे के तीन भागों में १०८ कौड़ियों के तीन भाग अन्दाज से करके रख देते हैं, फिर आठ-आठ करके प्रत्येक भाग की कौड़ी गिनते हैं। आठ-आठ की गिनती के कारण ही यह अष्टमंगल कहलाता है। कपर्दिका मंगलसूचक होती है।

देहे अष्टमङ्गलभागानां कल्पना

अधोमध्योर्ध्वभागेषु वपुषो दक्षिणादयः।
युग्मसंख्यावपुर्भागे ग्रहोक्तव्याधिमादिशेत्॥ २॥

मानव-शरीर के अधोभाग, मध्यभाग तथा ऊर्ध्वभाग में क्रमशः दक्षिण मध्य तथा उत्तर भाग की कल्पना करें। शरीर के जिस भाग में युग्म (सम=Even) संख्या की कपर्दिका शेष रहे उस भाग में व्याधि होती है ॥२॥

अष्टमंगल के द्वारा इस विधि से रोग प्रश्न का उत्तर देते हैं। १-३-५-७ ये विषम (ओज) संख्या तथा २-४-६ ये युग्म होती हैं।

अष्टमङ्गलफलके ग्रहादीनां कल्पना

स्थानेषु त्रिषु चैकादिशेषे स्युर्भास्करादयः।
ध्वजाद्या गरुडाद्याश्च पञ्चभूतानि च क्रमात्॥ ३॥
अर्कारजीवविच्छुक्रमन्दचन्द्राहयः क्रमात्।
ध्वजधूमहरिश्वोक्षखरमातङ्गवायसाः॥ ४॥
तार्क्ष्यमार्जारसिंहश्वाह्याखुद्विपशशास्तथा।
ध्वजसिंहौ मही दन्तिवृषौ जलमयौ मतौ॥ ५॥
धूमो वह्निः खरो वायुः श्वकाकौ वियदात्मकौ॥ ६॥

अष्टमंगलफलक में तीनों स्थानों पर एक आदि कपर्दिका शेष बचने पर शेष की संख्यानुसार सूर्यादि अष्ट ग्रह, ध्वज आदि अष्ट आय, गरुडादि जीव, पृथ्वी आदि महाभूतों का विचार क्रमशः करना चाहिए ॥३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एकादि शेष रहने पर क्रमशः सूर्य, मंगल, गुरु, बुध, शुक्र, शनि, चन्द्र तथा राहु—ये ग्रह होते हैं। ध्वज, धूम, सिंह, श्वान, ऊक्ष, खर, मातङ्ग तथा वायस—ये आठ आय होते हैं ॥४॥

इसी प्रकार गरुड, मार्जार, सिंह, श्वान, अहि, आखु (मूषक), हाथी तथा शशक—ये आठ जीव एकादि शेष से जानना चाहिए। ध्वज तथा सिंह आयों का पृथ्वीतत्त्व, गज तथा वृष का जलतत्त्व, धूम्र का अग्नितत्त्व, खर का वायुतत्त्व तथा श्वान एवं वायस का आकाशतत्त्व होता है ॥५-६॥

वराटिकाशेषाङ्कोपरि ग्रहादिबोधकचक्रम्

१	२	३	४	५	६	७	शून्य	**वराटिका शेषअंकेषु**
रवि	भौम	गुरु	बुध	शुक्र	शनि	चन्द्र	राहु	**ग्रह**
ध्वज	धूम (धूम्र)	सिंह (हरि)	श्वान (शुनक)	वृष (उक्ष)	खर (गर्दभ)	मातंग (गज)	वायस (ध्वांक्ष) (काक)	**आय**
पृथ्वी (भूमि)	अग्नि (पावक)	पृथ्वी	आकाश	जल (आप)	वायु	जल	आकाश	**तत्त्व (हंसक)**
गरुड	मार्जार (बिडाल)	सिंह	श्वान (कुत्ता)	सर्प (अहि)	मुषक (आखु)	गज (हाथी)	शश (खरगोश)	**जीव**

ग्रहाणां फलम्

अभीष्टार्थागमं कीर्तिं जयं भूपतिमाननम्।
सभाजनपदग्रामसत्कृतिं कुरुते रविः ॥ ७॥
चोरभूपायुधाग्निभ्यो भयं स्कन्दाच्च भैरवात्।
कलहज्वरपित्तासृक्शिरोनेत्रगदान् कुजः ॥ ८॥
गुरुदैवतविप्राणां प्रसादजशुभागमम्।
दुकूलहेमदन्त्यश्वसुताप्तिं कुरुते गुरुः ॥ ९॥
श्वगोमृगादितो भीतिं विष्णुकोपं विचर्चिकाम्।
त्वग्रोगान् सन्निपातञ्च कुरुते शीतरश्मिजः ॥ १०॥
भूषणाम्बरशय्याप्तिं स्त्रीसुखं मृष्टभोजनम्।
कृषिगोमहिषीलाभं कुरुते भृगुनन्दनः॥ ११॥
वातशूलामयं चोरदुर्जनेभ्यो भयं शनिः।
कुरुते मरणाद् भीतिं दुर्ग्रहाणाञ्च पीडनम्॥ १२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वेश्मसौख्यं मनःप्रीतिं सुहृत्स्वजनसङ्गमम् ।
जलोत्थसस्यपानान्ननार्याप्तिं पूर्णचन्द्रमाः ।। १३।।
कुष्ठपामादिकान् रोगान् नेत्रपादभवानपि।
विषभीतिं च नीचानां विरोधं कुरुते फणी।। १४।।

सूर्य—अभीष्ट पदार्थ का लाभ, ख्याति, विजय, शासन से सम्मान, सभा (विधानसभा, लोकसभा, पंचायत आदि), तथा जनपद आदि में सम्मान (चुनाव में जीत) आदि देता है ।।७।।

मंगल—चोर (डाकू), राज्यशासन, शस्त्र आदि से भय, स्कन्द तथा भैरव देवताओं का कोप, झगड़ा, ज्वर, पित्तविकार, रक्तविकार, शिरा:शूल, नेत्ररोगादि करता है ।।८।।

बृहस्पति—गुरुजनों, देवताओं तथा ब्राह्मणों की कृपा प्राप्त कराता है । आशीर्वाद प्राप्त होता है; वस्त्राभूषण, स्वर्ण आदि की प्राप्ति, हाथी-घोड़ा वाहनादि की प्राप्ति कराता है ।।९।।

बुध—कुत्ता (सियार आदि), साँड़, नीलगाय, हिरन आदि से भय, भगवान् विष्णु के कोप तथा अकोंता आदि का सूचक है ।।१०।।

शुक्र—वस्त्राभूषण, शय्या आदि की प्राप्ति कराता है । स्त्री का सुख मिलता है । मधुर भोजन की प्राप्ति होती है । कृषि, गाय, भैंस तथा घी-दूध का सुख मिलता है ।।११।।

शनि—वातविकार की पीड़ा, चौर, डाकू तथा गुण्डों से भय करता है तथा मृत्युभय देता है एवं दुष्ट ग्रहों से पीडा प्राप्त होती है ।।१२।।

पूर्णचन्द्र—गृहसुख देता है, मन में खुशी रहती है । मित्रों तथा बान्धवों का समागम होता है । जलीय पदार्थों से लाभ होता है । पेय पदार्थ, अन्नादि तथा स्त्री का सुख होता है ।।१३।।

राहु—इससे कुष्ठ, पामा (खुजली), नेत्ररोग, पादरोग (बिंबाई आदि), एलर्जी, विष रोग करता तथा नीच जनों से विरोध करता है ।।१४।।

आयानां फलम्

आरोग्यमर्थलाभञ्च लभते शत्रुनाशनम्।
पुत्रलाभञ्च नियमाद् ध्वजसन्दर्शनान्नरः।। १५।।
चित्तदुःखं महाव्याधिं शत्रुपीडां निरर्थताम्।
स्थानभ्रंशं विवादञ्च लभते धूमदर्शनात् ।। १६।।
नीरोगत्वं सुतप्राप्तिं मनःप्रीतिं धनागमम् ।
द्विजभूपालसम्मानं लभते सिंहदर्शनात् ।। १७।।
विप्रवासं भयञ्चैव द्रव्यनाशं रुजन्तथा ।
अपमृत्युं विवादञ्च निर्दिशेत् श्वप्रदर्शनात् ।। १८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्त्रीलाभं पुत्रलाभं च धनलाभं गृहं सुखम् ।
लभते चायुरारोग्यं वृषसन्दर्शनान्नरः ।। १९।।
द्विषदागमनं रोगं स्थाननाशं धनक्षयम् ।
कार्यहानिं मनःक्लेशं लभते खरदर्शनात् ।। २०।।
स्त्रीभोगं धनधान्याप्तिं सुहृदां सङ्गमं सुखम् ।
भूपालरत्नलाभञ्च कथयेद् गजदर्शनात् ।। २१।।
स्थानभ्रंशं सुहृन्नाशं स्थाननाशं महाभयम् ।
जीवनाशमरे मृत्युं लभते काकदर्शनात् ।। २२।।

(१) ध्वज आय के सन्दर्शन से आरोग्य, अर्थलाभ, शत्रुनाश, पुत्रलाभ नियमतः होता है ।।१५।।

(२) धूम आय के दर्शन से पृच्छक को चित्त में खेद होता है । कोई भयानक रोग पीड़ा देता है । शत्रु से पीडा होती है तथा पृच्छक धनहीन होकर घर-द्वार छोड़कर भटकता है । मुकदमेबाजी होती है ।।१६।।

(३) सिंह आय के दर्शन से पृच्छक को निरोगता, पुत्रप्राप्ति, मन में प्रसन्नता होती है । धन का आगमन, राज्यशासन तथा विद्वानों द्वारा सम्मान की प्राप्ति होती है ।।१७।।

(४) श्वान आय के दर्शन से दूर की यात्रा होती है, भय, धनहानि तथा रोग से पीड़ा होती है । अपमृत्यु (दुर्घटना) होती है । झगड़ा तथा मुकदमेबाजी होती है ।।१८।।

(५) वृष आय के दर्शन से स्त्रीलाभ, पुत्रलाभ, धनलाभ होता है । गृहस्थी का सुख प्राप्त होता है । उसका स्वास्थ्य उत्तम रहता है तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है । नया भवन बनता है एवं वाहनसुख की प्राप्ति होती है ।।१९।।

(६) खर आय के दर्शन से शत्रु आता है; रोगपीड़ा, स्थानहानि, धनहानि, असफलता और मन में क्लेश होता है ।।२०।।

(७) गज आय के दर्शन से पत्नी का सुख मिलता है । धन-धान्य की प्राप्ति होती है । मित्रों का समागम तथा सुख होता है । राज्यपक्ष से अलंकरण आदि की प्राप्ति होती है ।।२१।।

(८) काक (ध्वांक्ष) आय के दर्शन से स्थानान्तर या पदावनति होती है । आवास छूट जाता है । मित्रों से अनबन हो जाती है । महाभय होता है । किसी जीव की मृत्यु होती है ।।२२।।

सर्पादि जीवानां फलम्

सर्पादयः क्रमान्मध्ये चत्वारो दक्षिणे पुनः ।
तार्क्ष्यादयश्च चत्वारो यदि ते मरणप्रदाः ।। २३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एवं क्रमात्स्थितेष्वेषु मार्जारस्याखुभक्षणम्।
चकोरश्येनपूर्वाणामुरगग्रहणं तथा।। २४।।
शशस्य ग्रहणं मांसखण्डं वादाय चागमः।
कुक्कुरस्य गृहे प्रष्टुरेतन्मरणलक्षणम्।। २५।।

यदि सर्पादि चार जीव अर्थात् सर्प, मूषक, गज, शश ये चारों जीव यदि मध्यभाग में हों तथा गरुडादि चार जीव अर्थात् गरुड, मार्जार, सिंह तथा श्वान यदि दक्षिण भाग में हों तो मरणप्रद होते हैं ।।२३।।

इस क्रम से यदि सर्पादि एवं गरुडादि जीव स्थित होते हैं तो मार्जार मूषक को खा लेता है । चकोर एवं बाज आदि (गरुड़ की जाति के पक्षी) सर्प को पकड़ लेते हैं । यदि शश (खरगोश) को मुँह में दबाकर या मांस के टुकड़े को लेकर यदि श्वान पृच्छक के घर में प्रवेश करे तो मृत्यु का सूचक होता है ।।२४-२५।।

मध्यभागे आयानां फलम्

ओतौ मध्यस्थिते वाच्यं प्रष्टुस्तल्लङ्घनादिकम् ।
सारमेये ततो भीतिर्व्याघ्रादिभ्योऽथवा भयम्।। २६।।
मूषिके मूषिकैर्वस्त्रशयनादिनिकृन्तनम् ।
वायसे वायसस्पर्शः सकृत्पातोऽस्य वा तनौ ।। २७।।
खरे चतुष्पदाद्भीतिर्धूमे तु भयमग्निजम्।
एतत्तु सकलं प्रष्टू रोगाद्यशुभसूचकम्।। २८।।

यदि वराटिकाफलक के मध्य भाग में मार्जार आय हो तो बिल्ली आते समय प्रश्नकर्ता के मार्ग का उल्लंघन करती है तथा श्वान आय होने पर कुत्ता, व्याघ्र, सियार, वृक आदि जीवों से भय होता है ।।२६।।

यदि मध्य भाग में मूषक (आखु) आय हो तो चूहे वस्त्र, शय्या (सोफासेट इत्यादि) कुतर जाते हैं । वायस (काक) आय होने पर या तो कौआ पृच्छक के शिर पर बैठता है या अचानक ऊपर गिर पड़ता है ।।२७।।

यदि मध्य भाग में खर आय हो तो पशुओं से भय होता है । धूम आय होने पर अग्निभय होता है । उपरोक्त सभी लक्षण पूछने वाले अथवा सम्बन्धित व्यक्ति को रोग तथा अशुभ फल के सूचक होते हैं ।।२८।।

वराटिकाफलके दक्षिणे मध्यभागे च ग्रहाणां फलम्

एकस्य यदि वैर्यन्यो मध्यदक्षिणसंस्थयोः।
खेटयोरुभयत्रापि पापौ चेच्चाशुभं वदेत्।
सुहृदावुभयत्रापि पापावपि शुभप्रदौ।। २९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि वराटिकाफलक (कौड़ी रखने का पाटा) के दक्षिण तथा मध्य भाग में एक ग्रह दूसरे का शत्रु हो अथवा दोनों भागों में पापग्रह बैठे हों तो अशुभ फल बताना चाहिए। परन्तु यदि इन दोनों भागों में स्थित पाप ग्रह आपस में मित्र हों तो शुभ फल देने वाले होते हैं ॥२९॥

पञ्चभूतानां फलम्

भूतेषु शुभदा पृथ्वी तथैवापः प्रकीर्तिताः ।
वह्निर्वायुस्तथाकाशस्त्रयोऽमी चाशुभप्रदाः ॥ ३० ॥
एकत्र स्यादग्निः परत्र तोयञ्च मध्यदक्षिणयोः ।
यदि तर्हि विनिर्देश्यं प्रष्टू रोगोऽथवा मरणम् ॥ ३१ ॥

पञ्च तत्त्वों में पृथ्वीतत्त्व तथा जलतत्त्वों का फल शुभ होता है । आकाश, वायु तथा अग्नि ये तीनों तत्त्व अशुभ फल देते हैं ॥३०॥

यदि मध्य एवं दक्षिण भागों में एक में अग्नि तथा दूसरे में जल तत्त्व हों तो पूछने वाले को रोग अथवा मृत्यु भय होता है ॥३१॥

तिथ्यादि साधनम्

एकस्थानदशस्थानशतस्थानतया पुनः ।
स्थानत्रयं प्रकल्प्यातो नीलभक्तावशेषतः ॥ ३२ ॥
शुक्लप्रतिपदाद्याः स्युस्तिथयः सारशेषतः ।
तारावाराः सप्तशेषात् प्रियशेषात्तु राशयः ॥ ३३ ॥
नवभक्तावशेषात्तु विज्ञेयाः स्युर्नवग्रहाः ।
तथैव पञ्चभूतानि पञ्चभक्तावशेषतः ॥ ३४ ॥

वराटिकाफलक पर दक्षिणी भाग में वराटिकाओं की जो संख्या हों उसे एकस्थानीय (इकाई), मध्य भाग की संख्या को दशस्थानीय (दहाई) तथा वाम भाग की संख्या को शतस्थानीय (सैकड़ा) मान कर त्रिकाल फल ज्ञात करने के लिए तीनों स्थानों पर नील (३०) का भाग दें । एकादि शेष से शुक्ल पक्ष की प्रतिपदादि तिथियाँ समझना चाहिए। उक्तसंख्या में २७ का भाग देने पर एकादि शेष के अनुसार अश्विन्यादि नक्षत्र जानना चाहिए । सात का भाग देकर वार, बारह का भाग देकर मेषादि राशियाँ नौ से भाग देकर नवग्रह जान लेना चाहिए । उसी प्रकार पाँच के भाग देकर पृथ्वी आदि पञ्च महाभूतों का ज्ञान होता है ॥३२-३४॥

मान लीजिए—वराटिकाओं को आठ से विभाजित करने पर दक्षिणी भाग में ५ वराटिका, मध्यभाग में ३ तथा उत्तरी भाग में ७ वराटिका शेष हों तो यह संख्या ७३५ होती है । इसमें ३० का भाग देने पर लब्धि २४ तथा शेष १५ हुए, अतः शुक्ल प्रतिपदा से गिनने पर पूर्णिमा तिथि प्राप्त हुई ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अब नक्षत्र जानने के लिए ७३५ में सार (२७) का भाग दिया तो लब्धि २७ तथा शेष ६ रहे, अतः अश्विनी से गिनने पर छठा नक्षत्र आर्द्रा हुआ ।

वार जानने के लिए ७३५÷ ७ शेष शून्य=७ अतः रवि से गिनने पर सातवाँ शनिवार आया ।

राशियाँ जानने के लिए प्रिय (१२) का भाग दिया तो ७३५÷ १२ लब्धि ६१ शेष ३ अतः मिथुन राशि हुई । अब ग्रह जानने के लिए नौ का भाग दिया तो शेष ६ अतः शुक्र ग्रह प्राप्त हुआ ।

महाभूत जानने के लिए ५ का भाग देने पर शेष शून्य=५ रहा अतः पाँचवाँ भूत आकाश प्राप्त हुआ ।

तिथ्यादीनां फलम्

प्रष्टुष्टमो भवेद्राशिः प्रष्टुर्निष्टाश्च तारकाः ।
यदि चेदिह वक्तव्यं पृच्छकस्याशुभं ध्रुवम् ।। ३५।।
एभिस्तिथ्यादिभिर्योगा मृत्युदग्धादयो यदि ।
प्रष्टुर्विपत्तिरादेश्या सुधायोगादयः शुभाः ।। ३६।।

यदि पूर्वोक्त विधि से ज्ञात राशि (अष्टमंगल विधि से ज्ञात) पृच्छक की जन्मराशि से अष्टम हो और नक्षत्र पृच्छक के जन्मनक्षत्र से अनिष्ट (विपत्, प्रत्यरि, वध आदि) हो तो निश्चित ही पूछने वाले को अशुभ फल मिलता है ।।३५।।

यदि इन तिथ्यादि में मृत्युयोग तथा दग्ध योग बने हों तो प्रश्न पूछने वाले को संकट कहना चाहिए । यदि अमृत आदि योग बनें तो शुभ फल का निर्देश करना चाहिए ।।३६।।

मृत्यु योग—रविवार को अनुराधा, सोमवार को उत्तराषाढा, मंगलवार को शतभिषा नक्षत्र, बुधवार को अश्विनी, गुरुवार को मृगशिरा नक्षत्र हो, शुक्रवार को श्लेषा तथा शनिवार को हस्त नक्षत्र होने पर मृत्यु योग होता है ।

मृत्यु तिथियाँ—रविवार को नन्दा, सोमवार को भद्रा, मंगलवार को नन्दा, बुधवार को भद्रा, गुरुवार को रिक्ता, शुक्रवार को भद्रा तथा शनिवार को पूर्णा तिथि होने पर मृत्युदा होती हैं ।

दग्ध योग—रवि को भरणी, सोम को चित्रा, मंगल को उ.षा., बुध को धनिष्ठा, गुरु को उ. फा., शुक्र को ज्येष्ठा तथा शनि को रेवती होने पर दग्ध योग होता है ।

दग्धा तिथि—रवि को १२, सोम को ११, मंगल को ५, बुध को ३, गुरु को ६, शुक्र को ८ तथा शनि को १ तिथि होने पर दग्ध तिथि होती है ।

अष्टमंगल विधि से प्राप्त तिथ्यादि में इन योगों की उपस्थिति निषिद्ध है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अमृतसिद्धि—रव्यादि सात वारों को क्रमशः हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, अनुराधा, पुष्य, रेवती तथा रोहिणी नक्षत्र होने पर अमृतसिद्धि योग होता है । यह शुभफल का सूचक होता है ।

अष्टमङ्गले अवशिष्टसंख्याफलम्

स्थानत्रयेऽपि युग्माः स्युर्यदि संख्या मृतिर्भवेत् ।
वाममध्यमयोर्युग्मा यदि स्यान्महती रुजा ।। ३७।।
संख्यां मध्यगतां हत्वा शुभेन विभजेद्दिनैः ।
निश्शेषे मरणं प्रष्टुर्द्विशेषे सुतपञ्चता ।। ३८।।
स्वजनापच्चतुः शेषे षट्शेषे पृच्छकामयः ।
ओजसंख्यासु शिष्टासु सुखारोग्यादिसम्भवः ।। ३९।।

वराटिकाफलक पर तीन भागों में विभक्त संख्याओं में आठ-आठ के क्रम से वराटिकाएँ निकालने पर यदि तीनों स्थानों में युग्म (सम) संख्या हो तो मृत्यु होती है । यदि वाम भाग या मध्यम भाग में एक में युग्म (सम) संख्या में वराटिका शेष रहें तो भयंकर रोग होता है ।।३७।।

मध्य भाग स्थित शेष संख्या को ४५ (शुभ) से गुणा कर दिन (आठ) से भाग दें, यदि शून्य शेष बचे तो पृच्छक की मृत्यु होती है । दो शेष बचने पर संतति की मृत्यु होती है । चार शेष रहने पर किसी स्वजन को कष्ट होता है । ६ शेष रहने पर पृच्छक को रोग होता है । विषम संख्या में शेष हो तो शुभ एवं आरोग्य होता है ।।३८-३९।।

संख्याकथन—इस ग्रन्थ में अधिकांश स्थलों पर संख्या का कथन "कटपयादि" विधि से किया गया है जैसा कि जैमिनि सूत्रादि में वर्णित है ।

निर्याणशनिः

न्यस्य स्थानत्रयं द्वाभ्यां वामस्थं मध्यगं त्रिभिः ।
चतुर्भिर्दक्षिणं स्थानं हत्वा पक्षः सितो यदि ।। ४०।।
चलाङ्गं दैवतं कृष्णे पक्षे क्षिप्त्वा हरेद् भुजैः ।
फलराशिगते जीवे शिष्टं प्रियनगैर्नतैः ।। ४१।।
हत्वा वेदाप्तराश्यादि गते च रविजे मृतिः ।। ४२।।

अष्टमंगल की शेष संख्या को तीन स्थानों पर रखें । यदि उस समय शुक्लपक्ष हो तो वाम भाग की अवशिष्ट संख्या दो से, मध्य की संख्या को तीन से, दक्षिण भाग की संख्या को चार से गुणा करें ।।४०।।

गुणनफल में चलांग (३३६) जोड़ें तथा भुज (४८) का भाग दें । यदि कृष्ण पक्ष हो तो पूर्वोक्त गुणन फल की क्रिया कर उसमें दैवत (६४८) जोड़ें, फिर ४८ का भाग दें । जो शेष बचे उसे प्रिय (१२), नग (३०) तथा नत (६०) से गुणा करें । फिर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुणनफल में वेद (८४) का भाग दें तो राशि-अंश-कला-विकलादि प्राप्त होंगे। यही निर्याण शनि होगा। इस निर्याण शनि के राशि-अंश-कला पर जब जीव (गुरु) गोचर में भ्रमण करते हुए पहुँचेंगे तब पृच्छक की मृत्यु होगी। जब शनि इन राश्यादि पर गोचर में भ्रमण करेगा तब भी वह मृत्युकारक होगा ॥४१-४२॥

उपसंहारः

अष्टमङ्गलमित्युक्तं संक्षेपेण गुरूदितम्।
गुरुभक्त्येश्वरं ध्यायन् वदेत्सत्यं भवेद् ध्रुवम्॥ ४३॥

॥ इति प्रश्नमार्गे सप्तमोऽध्यायः ॥

इस प्रकार यहाँ गुरु द्वारा बताये गये अष्ट मंगल का संक्षेप में उपदेश किया गया है। गुरु की भक्तिपूर्वक अपने इष्टदेव का ध्यान करते हुए दैवज्ञ यदि इसका फलकथन करेगा तो निश्चित ही उसका फल सत्य होगा ॥४३॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का सातवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥७॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथाष्टमोऽध्यायः

अथारूढादिफलमुच्यते

आरूढोदयलग्नांशछत्रस्पृष्टाङ्गराशयः ।
चन्द्राधिष्ठितराशिश्च चिन्त्याः षट् प्रश्नकर्मणि ॥ १॥
एषां सदसद्योगादारोग्यसरोगतादि शुभमशुभम् ।
अशुभशुभावस्थाया बलवत्वात्प्रष्टुरुक्तमिति शास्त्रे ॥ २॥

प्रश्नकर्म में (१) आरूढलग्न, (२) उदयलग्न, (३) प्रश्नलग्न का नवांश, (४) छत्रलग्न, (५) स्पृष्टाङ्ग राशि तथा (६) चन्द्राधिष्ठित राशि—इन छह राशियों का विचार करना चाहिए ॥१॥

इन छह राशियों के शुभ योग होने पर आरोग्यादि शुभ फल होता है । अशुभ योग होने पर रोगादि अशुभ फल होता है । यदि शुभाशुभ दोनों प्रकार का योग हो तो बल के तारतम्य से फलकथन करना चाहिए । ऐसा प्रश्नशास्त्र में कहा गया है ॥२॥

स्पृष्टाङ्गराशिकथनम्

यदङ्गराशिः संस्पृष्ट आरूढ उदितोऽथवा ।
तस्मिन् पापयुते ब्रूयात्तदङ्गे रुग्व्रणादिकम् ॥ ३॥

आरूढलग्न या प्रश्नलग्न के समय पर पूछने वाला अपने जिस अंग को स्पर्श करे उस अंग की राशि के अनुसार रोग, व्रण आदि कहना चाहिए ॥३॥

शरीर में राशियों का निवास मेषादि क्रम से (१) शिर, (२) मुख, (३) भुजद्वय, (४) हृदय, (५) उदर, (६) कटि, (७) वस्ति, (८) गुह्य, (९) ऊरुद्वय, (१०) जानु, (११) पिंडलीद्वया तथा (१२) पैरों में होता है ।

स्पृष्टाङ्ग राशिचक्र

स्पृष्ट अंग	शिर	मुख	भुजद्वय	हृदय	उदर	कटि
क्रमांक	१	२	३	४	५	६
राशि	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्पृष्ट अंग	वस्ति	गुप्तांग	ऊरु	घुटना	पिण्डली	चरण
क्रमांक	७	८	९	१०	११	१२
राशि	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन

शुभफलम्

आरूढोदयपेन्द्वर्का अपि तद्युक्तराशिपाः ।
तुङ्गांशे बलवन्तश्चेत् पूर्णावस्थान्तु पृच्छताम् ।। ४।।

यदि आरूढलग्न के स्वामी, उदयलग्नेश, चन्द्र तथा सूर्य ये चारों उच्च राशि, उच्चनवांश, बलयुक्त हों तो पृच्छक धन, सन्तति तथा वैभव से परिपूर्ण स्थिति वाला है ऐसा कहना चाहिए ।।४।।

अशुभफलम्

एते बलविहीनाश्चेद्रिक्तां च कथयेद् दशाम् ।
नीचार्यंशगतास्ते चेदनिष्टफलदा दशा ।। ५।।

यदि पूर्वोक्त ग्रह निर्बल हों तो प्रश्नकर्ता की परिस्थिति रिक्त (निर्धन, साधनहीन, विपन्न) होती है । यदि उक्त ग्रह नीच राशि, नीच नवांश में हों तो अनिष्ट फल देते हैं ।।५।।

पुनश्च अशुभफलम्

आरूढेशे बलविरहिते रन्ध्रपे वीर्ययुक्ते
तस्मिन् काले विपदतितरां जायते पृच्छकस्य ।
आरूढेशः शुभपतिरपि प्राप्तवीर्यौ विवीर्या
यत्रार्यायुर्व्ययभपतयः सर्वभाग्यागमोऽत्र ।। ६।।

यदि प्रश्नकाल में आरूढेश निर्बल हो तथा अष्टमेश बलवान् हो तो पूछनेवाला संकटग्रस्त होता है । यदि आरूढेश तथा नवमेश दोनों ही बलवान् हों; साथ ही षष्ठेश, अष्टमेश तथा द्वादशेश ये तीनों विवीर्य (निर्बल) हों तो सभी प्रकार से भाग्य साथ देता है ।।६।।

ग्रहाणां सप्तावस्थाः

अवस्थासप्तकद्वन्द्वं ग्रहाणामस्ति तत्समा ।
भवेच्च पृच्छकावस्था प्रोक्तं शास्त्रान्तरे तथा ।। ७।।
समबन्धुनिजर्क्षस्वत्रिकोणोच्चारिनीचभे ।
सप्तावस्था ग्रहाणां स्युरतिबाल्यादयः क्रमात् ।। ८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अतिबालश्च बालश्च कुमारो युवभूमिपौ।
वृद्धो मृत इति स्थानभेदतः क्रमशो दशाः ।। ९।।

प्रश्नशास्त्र में ग्रहों की सात अवस्थाएँ कही गयी हैं । ग्रहों की अवस्था के अनुसार ही पृच्छक की परिस्थितियाँ होती हैं ।।७।।

(१) समराशि, (२) मित्रराशि, (३) स्वराशि, (४) मूलत्रिकोण, (५) उच्चराशि, (६) शत्रुराशि तथा (७) नीच राशि स्थिति के अनुसार क्रमशः (१) बाल, (२) अतिबाल, (३) कुमार, (४) युवा, (५) भूप, (६) वृद्ध तथा (७) मृत अवस्थाएँ होती हैं ।।८-९।।

ग्रहाणां सप्तावस्थाचक्रम्

समराशि	मित्र-राशि	स्वराशि	मूल-त्रिकोण	उच्च राशि	शत्रुराशि	नीचराशि	**राशिस्थिति**
(१)	(२)	(३)	(४)	(५)	(६)	(७)	**सप्तावस्था के नाम**
बाल	अतिबाल	कुमारावस्था	युवा	भूपति	वृद्ध	मृत	

मतान्तरेण ग्रहावस्थाकथनम्

सूर्यादुदितमात्रो यः सोऽतिबालो भवेद् ग्रहः।
दिनानि सप्त बालः स्यात्कुमारः स्यादतः परम्।। १०।।
युवा वक्रसमारम्भे वक्रगत्यां महीपतिः।
आसन्नास्तमयो वृद्धः सूर्यलुप्तकरो मृतः।। ११।।

पश्चिमी क्षितिज पर सूर्य के साथ अस्त जो ग्रह सद्यः उदित होता है उसे बाल कहते हैं । यह अवस्था सात दिन तक होती है (जैसे कि गुरु तथा शुक्र का बालत्व) । उसके बाद कुमार होता है । वक्रीगति प्रारंभ होने पर ग्रहराजा फिर भूपति होता है । सूर्य के साथ अस्त होने से सात दिन पूर्व से वृद्ध हो जाता है तथा अस्त हो जाने पर मृत हो जाता है । इस प्रकार दूसरे मत से ग्रहों की केवल पाँच ही अवस्थाएँ होती हैं ।।१०-११।।

अवस्थानिर्णयं तत्फलञ्च

एवं द्विधा ग्रहावस्था प्रोक्ता वाच्या तु पृच्छताम्।
आरूढलग्नछत्राणामीशेषु बलिनो दशा।। १२।।
अतिबालादिकानां ये स्वभावाः प्रथिता इह।
यूनः स्त्रीसक्ततेत्याद्यास्त एवेह दशा मताः।। १३।।

आरूढेश, प्रश्नलग्नेश तथा छत्रलग्न के स्वामी में जो ग्रह बलवान् हो उसकी अवस्था का विचार दोनों प्रकार की रीतियों से करना चाहिए और तदनुसार शुभाशुभ फल कहना चाहिए ।।१२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सामाजिक व्यवहार में अतिबालक का स्वभाव, युवक-युवती का स्वभाव अलग-अलग होता है वैसे ही ग्रहों की अवस्था के अनुसार प्राश्निक का भी स्वभाव होता है। बालक की खाने-पीने में तथा युवक की कामोपभोग में रुचि रहती है ॥१३॥

आरूढस्य उच्चनीचादि कथनम्

उच्चेराशावंशके वा स्थितो यो
वारेऽमुष्यारूढराशिस्तदुच्चः ।
यद्यारोग्यं दीर्घमायुश्च वाच्यं
प्रष्टुर्मृत्युर्वैपरीत्ये त्वमुष्मात् ॥ १४॥

यदि कोई ग्रह उच्च राशि या उच्च नवांश में स्थित हो; उसी ग्रह के वार में प्रश्न किया गया हो तथा उसी की राशि आरूढलग्न हो तो वह आरूढ भी 'उच्च' कही जायेगी, वह दीर्घायु तथा आरोग्य देने वाली होती है। विपरीत स्थिति में प्रश्नकर्त्ता की मृत्यु होती है ॥१४॥

मान लीजिए—सूर्य अपनी उच्च राशि मेष में है, प्रश्न रविवार के दिन किया गया है तथा आरूढ राशि सिंह है। इस स्थिति में आरूढ को उच्च माना जायेगा। इसके विपरीत यदि सूर्य तुला राशि में हो, प्रश्न का वार रविवार हो तथा आरूढलग्न सिंह हो तो आरूढ को 'नीच' माना जायेगा।

आरूढराशितः रोगज्ञानम्

सिंहे कुक्ष्यक्षिजो व्याधिरात्मपीडोष्णरुक्तथा ।
वक्षोजिह्वास्यरोगोरुच्यम्बुरोगास्तु कर्कटे ॥ १५॥
शिरोनेत्रभवव्याधिज्वरव्रणविचर्चिकाः ।
भौमभे बुधभे वायुरोधनासात्वगामयाः ॥ १६॥
आरूढे जीवभे बुद्धिभ्रमकर्णामयादयः ।
शुक्रभे व्यञ्जनोत्था रुगरुचिश्चाम्बुजो गदः ॥ १७॥
बुद्धिभ्रमोऽङ्गसादश्च मलया न हतिः शनेः ।
विचर्चिकाञ्च कण्डूतिं ब्रूयात्सर्पान्वितेक्षिते ॥ १८॥
आरूढे पापसंयुक्ते नियमेन वदेदिदम् ॥ १९॥

यदि आरूढ सूर्य की राशि सिंह में हो तो उदररोग, नेत्ररोग, हृदयरोग, मनोकष्ट,उष्णता, दाह आदि होते हैं।

यदि चन्द्र की राशि कर्क में आरूढ हो तो छाती, जीभ, मुख आदि में रोग होते हैं; अरुचि तथा जलोदरादि से कष्ट होता है ॥१५॥

आरूढ यदि मंगल की राशि (मेष-वृश्चिक) में हो तो शिरोरोग, नेत्ररोग, ज्वर, व्रण एवं अकोंता, छाजन आदि होते हैं। बुध की राशि (मिथुन-कन्या) में आरूढ होने पर वातविकार, नासारोग तथा चर्मरोग होते हैं ॥१६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि आरूढ गुरु की राशि (धनु-मीन) में हो तो बुद्धिभ्रम तथा कर्णरोग होते हैं। शुक्र की राशि (वृष-तुला) में आरूढ होने पर लिंग, अंडकोश आदि के रोग, नेत्ररोग, भोजन तथा पेय से उत्पन्न रोग, अरुचि, अजीर्णादि होते हैं ॥१७॥

यदि आरूढ शनि की राशि (कुंभ-मकर) में हो तो बुद्धिभ्रम, शरीर में टूटन, जकड़न, दुर्बलता, चलने-फिरने में कठिनाई आदि होते हैं; आलस्य रहता है। यदि आरूढ राशि में राहु बैठा हो या राहुदृष्ट हो तो छाजन, खुजली आदि होती हैं ॥१८॥

यदि आरूढ राशि पाप ग्रह से युत हो तो निश्चित ही उक्त रोग प्राश्निक को हो जाते हैं ॥१९॥

छत्र-विवेचन

इस अध्याय के प्रथम श्लोक में छत्र (छत्रराशि या छत्रलग्न) शब्द आया है। इसे समझ लेना आवश्यक है। दक्षिण भारतीय ज्योतिषियों में छत्रलग्न का विचार प्रचुरता से प्रचलित है। मुष्टिप्रश्न के विचार में छत्र का उपयोग अधिकता से किया जाता है। छत्र ज्ञान के लिए वीथी का ज्ञान आवश्यक है। ज्योतिष ग्रन्थों में ''छत्र'' ज्ञान की तीन विधियाँ हैं। ''ज्ञानप्रदीप'' नामक ग्रन्थ के अनुसार—

''प्रष्टुरारूढभं ज्ञात्वा तद्वीथीमवलोक्य च ।
आरूढाद्यावती वीथी तावती तूदयादिका ॥
तद्राशिश्छत्रमित्युक्तं शास्त्रे ज्ञानप्रदीपके ।
आरूढाद् भानुगां वीथीं परिगण्योदयात्तथा ॥
तावता राशिना छत्रमिति केचित्प्रचक्षते ।
मेषस्य वृषभं छत्रं मेषश्छत्रं वृषस्य च ॥
युग्मकर्कटसिंहानां मेषश्छत्रमुदाहृतम् ।
कन्याया मकरश्छत्रं तुलाया वृष उच्यते'' ॥

(१) **ज्ञानप्रदीप का मत**—प्राश्निक की आरूढलग्न से जितनी संख्या में उसकी वीथी हो उतनी ही संख्या उदयलग्न से आगे गिनने पर जो राशि हो वही छत्र होती है।

(२) **दूसरा मत**—आरूढलग्न से सूर्याधिष्ठित राशि की वीथी तक गिनने पर जो संख्या हो उतनी ही संख्या आगे गिने, जो राशि आवे वही छत्रराशि होती है। इस ग्रन्थ (प्रश्नमार्ग) में यही मत मान्य है।

(३) **तीसरा मत**—मेष का छत्र वृषभ है। वृष का छत्र मेष है। मिथुन, कर्क तथा सिंह का भी छत्र मेष है। कन्या का छत्र मकर है तथा तुला का वृष है। वृश्चिक का छत्र मिथुन, धनु का मिथुन, मकर का मिथुन, कुंभ का मेष तथा मीन का वृष है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तृतीय मत से छत्रज्ञान का चक्र (ज्ञानप्रदीप के अनुसार)

छत्रराशि	वृ.	मे.	मे.	मे.	मे.	म.	वृ.	मि.	मि.	मि.	मे.	वृ.
आरूढराशि	मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	क.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.

वीथी ज्ञान—ज्ञानप्रदीप के अनुसार लग्नराशियों की वीथी इस प्रकार है—मेष वीथी में वृषभादि चार राशियाँ उदित होती हैं । मिथुन वीथी में वृश्चिकादि चार राशियाँ उदित होती हैं । उक्षवीथी (वृषभवीथी) में मेष, मीन, तुला, कन्या ये राशियाँ उदित होती हैं ।

"उदीयन्तेऽजवीथ्यां तु चत्वारो वृषभादयः ।
युग्मवीथ्यामुदीयन्ते चत्वारो वृश्चिकादयः ।।
उक्षवीथ्यामुदीयन्ते मेषमीनतुलास्त्रियः"।

(ज्ञानप्रदीप २।२८)

वीथीज्ञानचक्र

मेषवीथी	मिथुनवीथी	वृषवीथी	वीथी का नाम
वृष २	वृश्चिक ८	मेष १	**वीथी में उदित राशियाँ**
मिथुन ३	धनु ९	मीन १२	
कर्क ४	मकर १०	तुला ७	
सिंह ५	कुम्भ ११	कन्या ६	

काल्पनिक उदाहरण (१) प्रथम मत से—इसमें आरूढलग्न की वीथी से छत्रज्ञान होता है । मान लीजिए—आरूढलग्न कर्क है, अब कर्क राशि की वीथी मेष है, अब कर्क से उसकी वीथी मेष तक गिनने पर उसकी संख्या १० हुई । अब यदि प्रश्नलग्न सिंह है तो सिंह से दस राशि गिनने पर वृष हुई अतः यही छत्रराशि है । (२) दूसरे मत के अनुसार आरूढ की वीथी से गणना न करके सूर्यराशि की वीथी से गणना करते हैं । मान लो आरूढलग्न मिथुन है तथा प्रश्नकालीन उदयलग्न तुला है तथा सूर्य सिंह राशि में हैं, अतः सिंह की वीथी मेष है । अब आरूढ मिथुन से मेष (वीथी) तक गिनने से ११ हुए। अब उदयलग्न तुला से ११ स्थान गिनने पर सिंह हुई, यही छत्रराशि है । इस ग्रन्थ में अध्याय ९ श्लोक ३४ में यही मत दिया गया है ।

आरूढात् मृत्युज्ञानम्

आरूढलग्नभांशानां मान्दिराशिनवांशयोः ।
योगो रोगप्रदस्तत्र बहुयोगो मृतिप्रदः ।। २० ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कलशमधः शिवकोणान्निशिचरतः सिन्धुकायमुपरिगतम्।
वेदान्तादनलाद्यं मारुतकोणात् परेषु तिर्यक्त्वम् ।। २०क।।

आरूढराशि, उदयराशि, आरूढनवांशराशि तथा उदयलग्ननवांशराशि इनमें यदि किन्हीं दो में गुलिक का योग हो तो रोगप्रद योग होता है । यदि अधिक के साथ गुलिक का योग हो तो मृत्युकारक होता है ।।२०।।

पूर्व दिशा की राशियाँ मेष-सिंह-मिथुन में कलश (ईशान कोण) से प्रारंभ कर नौ खण्डों की गणना करें । तुला-धनु-कुंभ में नैर्ऋत्य कोण से ऊपर खण्डों की गणना करें। कर्क, वृश्चिक तथा कन्या राशियों (वेदान्त राशियों) में अग्निकोण से गणना करें तथा शेष राशियों में तिर्यक् गणना करें ।।२०क।।

प्रश्नमार्ग की अनेक प्रतियों में यह श्लोक नहीं है । अतः यह श्लोक प्रक्षिप्त तथा अप्रासंगिक-सा जान पड़ता है । इस श्लोक के बढने से कुछ संस्करणों में इस अध्याय की श्लोक संख्या ६५ के स्थान पर ६६ है ।

आरूढे गण्डान्तफलम्

आरूढे वा विलग्ने वा गण्डान्तांशः सपापदृक् ।
उदेति चेद्भवेन्मृत्युरारूढाष्टमभे तथा ।। २१ ।।

यदि आरूढराशि, उदयराशि में या आरूढ से अष्टम भाव में यदि गण्डान्त (कर्क-वृश्चिक-मीन का अन्तिम नवांश) हो और उस पर पाप ग्रह की दृष्टि या युति हो तो मृत्यु होती है ।।२१।।

पङ्गु-कूपपतनयोगौ

आरूढे मीनभे प्रष्टा पङ्गुः स्यात्पापवीक्षिते ।
कूपादौ पतनं वाच्यमारूढेऽलिनि वेन्दुभे ।। २२।।

आरूढ में मीन राशि यदि पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो जातक पङ्गु (लूला) होता है। यदि आरूढ में वृश्चिक या कर्क राशि पापग्रहों से दृष्ट या युत हो तो कूपादि में पतन बताना चाहिए ।।२२।।

वृक्षादिकथनम्

प्राच्यादीत्युक्तवद्राशीनारूढादीन् न्यसेत् क्षितौ।
वृक्षादीन्निर्दिशेत्स्वोक्तान् केन्द्रगैश्च बलान्वितैः।। २३।।

राशिचक्र में पूर्वादि दिशाओं पूर्वकथित रीति से राशिचक्र में आरूढादि राशियों (आरूढ, उदयलग्न, अंगस्पृष्ट राशि, छत्र, चन्द्रराशि) का न्यास करे । यदि केन्द्रस्थान में बली राशियाँ हों तो उन राशियों के अनुसार वृक्षों का निर्देश करे ।।२३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहाणां वृक्षाः

गिरितरुकदलीकण्टकिवेणूनां क्रमुकनालिकेराणाम् ।
तालानाञ्च वनानि क्रमशोऽर्कात्स्वामिवत्तु राशीनाम् ॥ २४॥

विभिन्न राशियों के स्वामी सूर्यादि ग्रहों के अनुसार क्रमशः (१) गिरितरु (पर्वतीय वृक्ष), (२) केला, (३) काँटेदार वृक्ष, (४) बाँस, (५) सुपारी, (६) नारियल, (७)ताल वृक्षों का समुदाय बताना चाहिए । जिस राशि में कोई ग्रह न हो उसके स्वामी के अनुसार वृक्ष बतायें ॥२४॥

ग्रहों एवं राशियों के वृक्षों का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**ग्रह**
५	४	१-८	३-६	९-१२	२-७	१०-११	**राशि**
गिरितरु	कदली	कण्टकी	वेणु	क्रमुक	नारिकेल	ताल	**वृक्ष**

आरूढे ऊर्ध्वमुखादिराशीनां फलम्

आरूढस्योर्ध्ववक्त्रत्वं प्रष्टुरभ्युदयवृद्धिकृत् ।
आधोमुख्यं क्षयाय स्यात्तत्कृष्णीयादिषूदितम् ॥ २५॥
ऊर्ध्वमुखो यदि राशिर्होरा प्रश्ने नरस्य सिद्धिकरी ।
अन्ये विफले ज्ञेये शुभयुतदृष्टे शुभाख्ये च ॥ २६॥
ऊर्ध्वास्ये तनुगे प्रसूतगतकार्यारम्भिणां पृच्छता-
मौन्नत्यं महदर्थपौरुषयशःस्थानादिकानां भवेत् ।
यद्यारूढमधोमुखं भमखिलैर्ह्रीयेत वित्तादिभि-
स्त्यज्येतापि सुहृज्जनैरपि पतेद्वाहादितः पृच्छकः॥ २७॥
आरूढाधिपतिः शुभग्रहगृहे प्रश्ने यदि स्यात् स्थितः;
क्षोणीशामरमन्दिरादिषु मनोज्ञेषु स्थितिः पृच्छताम् ।
पापक्षेत्रगतः स चेदिह भवेन्म्लेच्छप्रदेशे स्थितिः,
सौम्यासौम्यदृगन्वयात्सदसतां योगश्च तत्रोह्यताम् ॥ २८॥

यदि आरूढ राशि ऊर्ध्वमुख हो तो प्राश्निक की उन्नति एवं बढती होती है । यदि अधोमुख राशि हो तो प्राश्निक की हानि होती है । ऐसा कृष्णाचार्य के ग्रन्थों में उल्लेख है ॥२५॥

कृष्णीय शास्त्र में जो राशि सूर्य से मुक्त हो वह ऊर्ध्वमुख होती है । सूर्य से युक्त राशि अधोमुख होती है । सूर्य से भोग्य (अग्रिम) राशि को तिर्यङ्मुख कहा गया है । यह राशियों के प्रचलित ऊर्ध्वाधोमुख विचार से भिन्न है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि प्रश्नसमय में ऊर्ध्वमुख राशि या उसकी होरा हो तो व्यक्ति को सफलता मिलती है। यदि अन्य राशि (अधोमुख या तिर्यङ्मुख राशि) हो तो कार्य में असफलताएँ मिलती हैं। यदि वे अधोमुख एवं तिर्यङ्मुख राशियाँ शुभ ग्रहों से युत या दृष्ट हों तो शुभफल होता है ॥२६॥

आरूढलग्न में ऊर्ध्वमुख राशि होने की स्थिति में प्रसव, कार्यारंभ तथा यात्रा सम्बन्धी प्रश्न का उत्तर उन्नति एवं सफलता कारक होता है; उन्हें आर्थिक लाभ होता है, उनका पराक्रम बढ़ता है, यशवृद्धि एवं पदोन्नति होती है। परन्तु अधोमुख राशि आरूढ में होने पर हानि होती है, मित्रों से मनमुटाव होता है तथा पृच्छक का ऊँचे स्थान या वाहन आदि से गिरने से पतन तथा अंगभंग होता है ॥२७॥

यदि प्रश्नसमय में आरूढेश शुभग्रहों की राशि में स्थित हो तो प्रश्नकर्त्ता का निवास शासकीय आवास, भव्य निवास या देवमन्दिरादि में होता है। यदि आरूढेश पाप ग्रह की राशि में हो तो प्राश्निक म्लेच्छ, चाण्डाल आदि के मकान में रहता है। आरूढेश जैसे ग्रह से युत या दृष्ट होता है उसी प्रकार के उतनी संख्या के स्त्री-पुरुष पृच्छक के साथ निवास करते हैं ॥२८॥

लग्ने आरूढे च शुभग्रहफलम्

शुभवर्गे लग्नगते लग्ने वा सौम्ययोगमायाते।
ब्रूयादभिमतसिद्धिं प्रष्टुः स्थानान्तरप्राप्तिम् ॥ २९॥
द्विपदे चतुष्पदे वा भवने लग्नोपगो ग्रहः पापः।
तिष्ठति तन्नाशकरो ज्ञेयः सौम्योऽपि वृद्धिकरः ॥ ३०॥

जब लग्न में शुभग्रहों का वर्ग या शुभग्रहों की स्थिति होती है तब प्राश्निक के अभीष्ट सिद्धि का कथन करना चाहिए। प्रष्टा को उत्तम पद या स्थान की प्राप्ति होती है ॥२९॥

उदयलग्न में यदि द्विपद (मिथुन-कन्या-तुला-धनु) या चतुष्पद (मेष, वृष, सिंह एवं मकर) राशि हो तथा उसमें कोई पापग्रह बैठा हो तो कार्यहानि होती है परन्तु शुभ ग्रह बैठने पर वृद्धि करता है ॥३०॥

सुवर्णफलम्

स्वर्णेनारूढविन्यस्तेनापि प्रष्टुः शुभाशुभम्।
ज्ञेयं शास्त्रान्तरेषूक्तं तदप्यथ निगद्यते॥ ३१॥
जलगन्धार्तवव्रीहितण्डुला भूतपञ्चकम्।
तन्मयं हि पुनर्ज्ञेयं जीव एव हि काञ्चनम्॥ ३२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुष्पाक्षतोपरि स्वर्णमुत्तानं पृच्छकायुषे ।
तिर्यङ्मृत्युकरं भूस्थं न्यक्तु बाधागदावहम्।। ३३।।

आरूढ पर रखे गये स्वर्ण से भी पृच्छक का शुभाशुभ विचार जानना चाहिए। यद्यपि यह सब शास्त्रान्तरों का विषय है तथापि उसे यहाँ भी कुछ लिखा जा रहा है ।।३१।।

जल, सुगन्धित पदार्थ, फूल, व्रीहि (अनाज) एवं चावल ये पंचमहाभूत के चिह्न हैं। सभी पाँचभौतिक होते हैं। काञ्चन भी जीव की स्थिति का सूचक है ।।३२।।

यदि पुष्पाक्षतों के ऊपर सुवर्ण ऊर्ध्वमुख है तो प्रश्निक दीर्घायु होता है। यदि भूमि में बने चक्र पर सुवर्ण तियङ्मुख हो तो रखने वाले को बाधा एवं रोगप्रदायक होता है ।।३३।।

वर्तमान में सोने के सिक्के की चित्त (ऊर्ध्व), पट्ट (अधः) आदि से इसे जान सकते हैं।

पुनश्च ऊर्ध्वादिफलकथनम्

ऊर्ध्वं पुष्पाक्षतानां निहितमिह भवेत्स्वर्णमूर्ध्वाननं चेत्
तत्काले वर्धनं स्याद् धनसुखयशसां पृच्छकस्योर्ध्वमूर्ध्वम् ।
तत्तत्राधोमुखं चेत्क्षय उपचयतः किञ्चिदारब्ध एवा-
थोर्ध्वास्यं चेदधस्तात्क्षयत उपचयारम्भणं तत्र वाच्यम् ।। ३४।।
सर्वाधोऽधोमुखं चेत्क्षय इह तु पुनश्चापि सर्वक्षयः स्या-
न्मध्यस्थे हेम्नि चोह्यं फलमपि सकलं प्राक्तयैवात्र रीत्या ।
दीर्घायुर्मृत्युनैस्वै उपचितधनता प्राग्दिगादिप्लवत्वे
स्वर्णस्याग्न्यादिकोणप्लवन इह पुनर्मृत्युरोगाद्यनार्थाः ।। ३५।।

यदि पुष्पाक्षतों पर रखा गया स्वर्ण (मुद्रा) ऊर्ध्वमुख (चित्त) हो तो प्रश्नसमय से ही प्राश्निक धन, सुख, यश से उत्तरोत्तर सम्पन्न होने लगता है। यदि वह स्वर्णमुद्रा अधोमुख (पट) हो तो प्रश्नकाल से ही धन, यश, सुख का क्षय होने लगता है। यदि वह स्वर्णमुद्रा पुष्पाक्षतों के नीचे ऊर्ध्वमुख हो तो उस समय क्षय हो चुके धन-सुख-यश की क्षीणता रुक कर उत्तरोत्तर वृद्धि प्रारंभ हो जाती है। यदि स्वर्णमुद्रा अक्षत-पुष्प आदि के नीचे अधोमुख हो तो प्रश्नसमय तक जो क्षय हो चुका होता है वह आगे बढ़ता हुआ पूर्ण नाश को प्राप्त होता है। यदि पुष्प एवं अक्षतों के मध्य स्वर्ण होने पर मिश्रित फल होता है। पूर्वादि चार दिशाओं की ओर स्वर्ण का लुढ़कना क्रमशः दीर्घायु, मृत्यु, निर्धनता तथा धनवृद्धि करता है। यदि स्वर्ण अग्निकोण आदि चारों कोणों की ओर लुढ़कता है तो मृत्यु, रोग, अनर्थ, असफता आदि फल होता है ।।३४-३५।।

आगे चक्र देखें। स्वर्ण के ढलान को प्लवन कहा है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आठों दिशाओं की ओर स्वर्णप्लवन का फल

पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान	दिशा
दीर्घायु	मृत्यु	मृत्यु	रोग	निर्धनता	अनर्थ	धनवृद्धि	निर्वेद	फल

अथ लग्नादिफलमुच्यते

मान्दीन्दूदयलग्नांशा मृत्युदेहासवश्चरे।
आयुरारोग्यदास्त्वैते रोगदैर्घ्यप्रदाः स्थिरे ॥ ३६॥
द्वन्द्वगास्संयुताश्चैते त्रयः प्रष्टुर्मृतिप्रदाः।
मोहदाः स्युर्मिथो दृष्टास्त्रिकोणस्था महारुजे ॥ ३७॥
योगदृष्ट्यादिसम्बन्धस्त्वायुषे प्राणदेहयोः।
देहमृत्योस्तु रोगाय प्राणमृत्योस्तु मोहकृत् ॥ ३८॥

मान्दि, इन्दु, उदयलग्न, उदयलग्ननवांश, मृत्युस्फुट, देहस्फुट तथा प्राणस्फुट ये सब यदि चरराशियों में हों तो आयुवृद्धि तथा आरोग्यप्रद होते हैं। यदि ये गुलिक, चन्द्र, प्रश्नलग्नादि स्थिर राशियों में हों तो दीघकालीन रोग देते हैं ॥३६॥

यदि ये गुलिकादि द्विस्वभाव राशियों में हों तथा प्राण, देह एवं मृत्यु ये तीनों एकत्र हों तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु कहना चाहिए। इनकी परस्पर दृष्टि मोहदायक तथा परस्पर त्रिकोण रोगप्रद होता है ॥३७॥

प्राण तथा देह का परस्पर सम्बन्ध (युति-दृष्टि त्रिकोण) दीर्घायुकारक होता है। देह-मृत्यु का सम्बन्ध रोगकारक होता है। प्राण तथा मृत्यु का सम्बन्ध मोहकारक होता है अर्थात् मूर्च्छा तथा दुर्बलता अथवा मृत्यु होती है ॥३८॥

षड्वर्गफलम्

क्षीणेन्द्वर्कसुतारतीक्ष्णमहसां वर्गा विलग्नस्थिता
मृत्युव्याधिधनक्षयाद्यशुभदाः प्रष्टुर्यदीमे विदुः।
धीसामर्थ्यकृतोऽथ पूर्णशशिनः शुक्रस्य वा वाक्पते-
रेते कुर्युररोगतार्थतनयप्राप्ताद्यभीष्टागमान् ॥ ३९॥

यदि क्षीणचन्द्र, शनि, मंगल तथा सूर्य इनका षड्वर्ग प्रश्नलग्न में हो तो प्राश्निक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु, धनहानि, रोग आदि अशुभ फल होते हैं। यदि बुध का षड्वर्ग हो तो बुद्धि एवं सामर्थ्य प्राप्त होता है। यदि पूर्णचन्द्र, गुरु, शुक्र इनमें से किसी का षड्वर्ग हो तो स्वास्थ्य, धन, सन्तति आदि अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति होती है ॥३९॥

उष्णघट्यादिफलम्

लग्ने तदीश्वरे वोष्णयुक्ते जूत्यादिपित्तरुक्।
दाहश्च भवनस्याथ सविषत्र्यंशनाडिके ॥ ४०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि प्रश्नलग्न या प्रश्नलग्नेश उष्ण घटियों में हो तो ज्वर, पित्तविकार, दाह आदि होते हैं। (उष्ण घटी का ज्ञान अध्याय ६ श्लोक ३४ की व्याख्या में देखिए)। यदि विषद्रेष्काण में प्रश्न किया जाये तो विष के कारण कष्ट होता है ।।४०।।

विषद्रेष्काण—मेष, कर्क, सिंह, कन्या, धनु तथा मकर इन छह राशियों का प्रथम द्रेष्काण (०°से १०° तक) विषद्रेष्काण होता है। वृश्चिक का तृतीय द्रेष्काण (२१वें अंश से ३०° तक) विषसंज्ञक होता है। शेष वृष, मिथुन, तुला, कुंभ तथा मीन इन पाँच राशियों का दूसरा द्रेष्काण (१०°के पश्चात् २०° अंश तक) विषद्रेष्काण कहलाता है।

लग्ननवांशफलम्

यद्राशिसंज्ञो लग्नांशः स राशिश्चेच्छुभान्वितः।
गतकालः शुभः प्रष्टुरशुभो यदि पापयुक् ।। ४१।।

लग्न का नवांश जिस राशि में हो वह राशि यदि शुभ ग्रहों से युत (वा दृष्ट) हो तो पृच्छक का बीता हुआ समय (गतकाल) शुभ बीत चुका होता है। यदि वह राशि पाप ग्रहों से युक्त हो तो बीता हुआ समय कठिनाई भरा होता है ।।४१।।

नवांशे चन्द्रादिफलम्

लग्नांशराशिगे चन्द्रे लोहपात्रक्षतिर्मृतेः।
लक्ष्मं मान्द्यंशराशिस्थे तथा मृद्भाण्डभञ्जनम्।। ४२।।

लग्न (प्रश्नकालीन उदयलग्न) के नवांश में यदि चन्द्रमा हो, ऐसे में यदि लोहे के पात्र टूटने लगें तो वे मृत्यु के सूचक होते हैं। इसी प्रकार नवांश में गुलिक की स्थिति होते हुए मृद्भाण्ड (मिट्टी के पात्र) टूटने लगें तो भी मृत्यु का सूचक होता है ।।४२।।

मृत्युप्राणदेहफलकथनम्

मृत्युप्राणशरीरराशिसहितैस्तद्वीक्षकैर्वा ग्रहै-
स्तत्तत्प्रोक्तपदार्थलाभविहति वाच्ये शुभायास्पदे।
संज्ञाध्यायदशाधनाप्तिकथनास्वन्यत्र वोक्ता हि ते;
ताम्राद्या नखपूर्वकास्तृणमुखाः पत्यास्य वा ते न चेत् ।। ४३।।

मृत्यु, प्राण, देहराशि (अध्याय ६ श्लोक ४४ में वर्णित) में बैठे हुए या उनके द्रष्टा ग्रहों के अनुसार (ग्रहों से सम्बंधित) पदार्थों का लाभ-हानि तथा शुभाशुभ फल प्राश्निक को बताना चाहिए। ग्रहों के इन पदार्थों का निरूपण संज्ञाध्याय, दशाध्याय, कर्माजीवाध्याय जो कि वराहमिहिर के बृहज्जातक में दिये गये हैं उनके अनुसार कहना चाहिए। ये 'ताम्राद्याः', 'नखपूर्वकाः' 'तृणमुखाः' श्लोकों में उस ग्रन्थ में दिये गये हैं। यदि पूर्वकथित मृत्यु, प्राण, शरीर की राशि में स्थित ग्रह या दृष्टा ग्रह न हों तो उनकी राशिस्वामियों के अनुसार फल कथन करना चाहिए ।।४३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बृहज्जातकोक्त ग्रहपदार्थों का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	ग्रह
रक्तश्याम (ताम्र)	गौर (श्वेत)	रक्तगौर	दूर्वा-श्याम	पीत	चित्रवर्ण	कृष्ण	कृष्ण	वर्ण (रंग)
अग्नि	जल	स्कन्द	विष्णु	इन्द्र	शची	ब्रह्मा	राक्षस	देवता
पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैर्ऋत्य	दिशा
क्रूर	शुभ क्षीण पाप	पाप	शुभ पापयुति पापी	शुभ	शुभ	पाप	पाप	शुभाशुभत्व
पुरुष	स्त्री	पुरुष	नपुंसक	पुरुष	स्त्री	नपुंसक	x	लिंग
अग्नि	जल	अग्नि	पृथ्वी	आकाश	जल	वायु	x	महाभूत
राजा	वैश्य	क्षत्रिय	शूद्र	विप्र	विप्र	अन्त्यज	विधर्मी	वर्ण (जाति)
सत्त्व	सत्त्व	तम	राजस	सत्त्व	राजस	तम	तम	गुण
चतुरस्त्र	वृत्ताकार	त्रिकोण पतला-कमर	मजाकियाँ	दीर्घ	घुँघराले बाल	पतला चिड़चिड़ा		आकार-स्वभाव

पुनश्च प्राण-मृत्यु-देहफलम्

लग्नेन्दुमानदानाभ्यामित्युक्तानामथो फलम् ।
प्राणमृत्युशरीराणामधुना समुदीर्यते ।। ४४।।
प्राणमृत्युशरीरेषु देहाधिक्ये रुजां शमः ।
प्राणेऽधिके महान् रोगो मृत्युश्चेदधिको मृतिः ।। ४५।।
मृत्यौ ज्येष्ठाहिपौष्णस्थे जन्मभस्थे च पञ्चता ।
मृत्युः प्राणश्च देहश्च क्रमवृद्धाः शुभप्रदाः।। ४६।।

पाँचवें अध्याय के १९वें श्लोक "लग्नेन्दुमानदानाभ्याम्" में प्रतिपादित प्राण, मृत्यु तथा देह का फल अब कहा जा रहा है ।।४४।।

प्राणस्फुट, मृत्युस्फुट तथा देहस्फुट इन तीनों में यदि देह के अंशादि अधिक होने पर रोगशान्ति होती है । यदि प्राण के अंशादि अधिक हों (या राश्यादि अधिक=आगे) तो कठिन रोग उत्पन्न होता है । मृत्यु के राश्यंशादि अधिक होने पर मृत्यु होती है ।।४५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि मृत्युस्फुट ज्येष्ठा, श्लेषा, रेवती या पृच्छक के जन्मनक्षत्र में पड़ें तो प्राश्निक का निधन होता है । यदि मृत्यु से प्राण अधिक हो तो तथा प्राण से देह अधिक हो तो शुभफल होता है ॥४६॥

प्रश्नलग्नेन्दुगुलिकनवांशानां फलम्

लग्नेन्दुगुलिकांशैरप्याधिक्यादिविचिन्तनम् ।
एतत्तु क्रियते कैश्चित्तदप्यथ विलिख्यते ॥ ४७ ॥
लग्नांशकेऽधिके वृद्धी रुजां चन्द्रांशके शमः ।
मान्द्यंशे मृतिराधिक्यं गतिभिर्घटिकादिभिः ॥ ४८ ॥
मृत्युकालसतां प्राणे मध्यगे तद्युतेक्षिते ।
प्रष्टुर्मरणमादेश्यं शुभदोऽस्येन्दुसङ्गमः ॥ ४९ ॥
आरूढेन तदीशेन लग्नलग्नांशकाधिपैः ।
इन्द्वंशेनेन्दुना युक्तौ मृत्युकालौ मृतिप्रदौ ॥ ५० ॥

कुछ आचार्य प्रश्नलग्न, चन्द्रमा तथा गुलिक के नवांशों की अधिकतादि से भी (अध्याय ६।४४ में वर्णित प्राण-मृत्यु-देह द्वारा) फल कथन करते हैं अतः उसे भी यहाँ लिखते हैं ॥४७॥

यदि लग्ननवांश (प्राण) की गत घटी=गतांश अधिक होने पर रोग बढ़ता है । चन्द्रांश अधिक होने पर रोग शान्त होता है, क्योंकि यह देह गुलिकांश से अधिक होने पर मृत्यु होती है ॥४८॥

मृत्यु, काल (अध्याय ५ श्लोक २३ के अनुसार) या अन्य पाप ग्रहों के बीच प्राण स्फुट हो या उनसे युत-दृष्ट हो तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति का मरण होता है । यदि प्राणस्फुट चन्द्रमा के साथ हो तो शुभ फल होता है ॥४९॥

आरूढराशि, आरूढेश, प्रश्नलग्न, प्रश्नलग्नेश, लग्ननवांश, लग्ननवांशेश, चन्द्र तथा चन्द्रनवांशेश इन सबसे पूर्वोक्त (अ. ५।२३) काल एवं मृत्यु संयुक्त हों तो मृत्युदायक होते हैं ॥५०॥

सूर्येन्दुराहुचक्रफलम्

लग्ने राहुयुते चौररिपुपीड़ा रवौ मृतिः ।
चन्द्रे देहव्यथाऽर्केन्दुराहुचक्रफलं त्विदम् ॥ ५१ ॥

अब विगत अध्याय ५ श्लोक २४ से २६ तक वर्णित सूर्येन्दुराहु चक्र का फल लिखा जा रहा है ।

लग्न में यदि राहु हो तो चोर-डाकू, तस्कर, जेबकतरे आदि से कष्ट होता है । सूर्य होने पर मृत्यु तथा चन्द्रमा होने पर शरीर में रोग होता है ॥५१॥

ध्यान रखें कि ये सूर्य, चन्द्र तथा राहु पंचांग में दिये हुए न होकर काल्पनिक हैं जिनका उपयोग केवल फलादेश के लिए हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालहोरानुसारेण प्रश्नफलकथनम्

कालहोराफलं वाच्यं प्रष्टुर्विस्मापनं परम्।
विश्वासार्थं स्वभारत्या तदप्यथ विलिख्यते ॥ ५२॥
सूर्यस्य कालहोरायां प्रश्नश्चेद् भूमिपागमः।
नार्यागमः शशाङ्कस्य भूमिपुत्रस्य शस्त्रिणाम् ॥ ५३॥
बौध्यां पारशवायानमथवा विद्वदागमः।
गुरोर्विप्रवरायानं भृगोर्वेश्याङ्गनागमः ॥ ५४॥
मन्दस्य वणिगायानं भृत्यबौद्धागमोऽथवा।
केन्द्रगाश्चेदमी खेटा नियमेन वदेदिदम् ॥ ५५॥

प्राश्निक को विस्मित कराने के लिए तथा उसे अपनी (ज्यातिषी की) वाणी पर विश्वास कराने के लिए कालहोरा के अनुसार प्रश्नशास्त्र में जो फल कहा गया है उसे भी यहाँ लिखा जा रहा है ॥५२॥

यदि प्रश्नसमय सूर्य की कालहोरा हो तो प्रश्नस्थल या प्राश्निक के घर प्रश्नोपरान्त राजा या शासकीय अधिकारी आदि का आगमन होता है । चन्द्र की कालहोरा में नारी का आगमन होता है । मंगल की कालहोरा में शस्त्रधारियों का आगमन होता है ॥५३॥

बुध की कालहोरा में माली या विद्वान् का आगमन होता है । गुरु की कालहोरा के प्रश्न में ब्राह्मण का आगमन होता है तथा शुक्र की कालहोरा में वेश्या या उसके तुल्य स्त्री का आगमन होता है ॥५४॥

शनैश्चर की कालहोरा में व्यापारी या दुकानदार का आगमन होता है अथवा नौकर, श्रमिक, श्रमण या बौद्धभिक्षु का आगमन होता है । जब ये कालहोरा के स्वामी ग्रह प्रश्न-कुण्डली में प्रश्नलग्न से केन्द्र में बैठने पर ऊपर कहा फल सुनिश्चित रूप से घटित होता है ॥५५॥

कालहोरा जानने की विधि इस ग्रन्थ के अध्याय ३।२ की टीका में देखिए । यहाँ कालहोरा फल का चक्र दिया जा रहा है—

प्रश्नकाल में कालहोरा के फल का चक्र

कालहोरा	सूर्य का	चन्द्र का	भौम का	बुध का	गुरु का	शुक्र का	शनि का
फल	प्रशासक या शासक का आगमन	नारी का आगमन	शस्त्रधारी का आगमन	वर्णसंकर या पारशव या विद्वान् का आगमन	विप्रागमन	वेश्यागमन	वणिक्, भृत्य, श्रमिक, श्रमण या भिक्षु का आगमन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्लोक ५४ में बुध की कालहोरा में 'पारशव' शब्द का प्रयोग है जिसका अर्थ शूद्र स्त्री में ब्राह्मण द्वारा उत्पन्न पुत्र होता है—

"यं ब्राह्मणस्तु शूद्रार्यां कामादुत्पादयेत्सुतम् ।
सपारयन्नेव शवस्तस्मात्पारशवः स्मृतः" ॥

(मनु० ९।१७८)

चन्द्रनवांशफलम्

यद्राशिसंज्ञश्चन्द्रांशः स राशिश्चेच्छुभान्वितः।
भावी कालः शुभो वाच्यः पापयुक्चेदशोमनः।। ५६।।
जीवस्सुतप्रदो विप्रवरकृन्नीचभांशगः ।
शुक्रो वस्त्राङ्गनादायी विवादे जयकृद् बुधः।। ५७।।
पूर्णचन्द्रो मनोहारि द्रव्यलाभं प्रयच्छति।
देवभूमिपयोः कोपं कुर्यादर्कोऽथ भूमिजः ।। ५८।।
वृथैव विग्रहं भूमिविवादञ्च समावहेत् ।
सूर्यपुत्रः कृषिप्रेष्यपश्वादीनां विनाशकृत् ।। ५९।।
चण्डलापच्छिरोरोगविषसर्पभयं फणी ।
प्रेतबाधां शिखी कुर्यान्मान्दिश्चूर्णाद्युपद्रवम् ।। ६०।।
बुधः पापयुतश्चेत्स विवादे परिभूतिकृत् ।
क्षीणचन्द्रो मनःपीडां करोति परिपृच्छताम्।। ६१।।

चन्द्रमा जिस राशि के नवांश में हो उस राशि में यदि शुभ ग्रह स्थित हो तो भविष्य काल में शुभ फल मिलेगा ऐसा कहना चाहिए। यदि चन्द्रनवांश की राशि पाप युक्त हो तो अशुभ फल होता है ।।५६।।

यदि चन्द्रनवांश की राशि में गुरु हो तो पुत्रप्रद होता है। यदि वह गुरु नीचनवांश (मकरनवांश) में हो तो ब्राह्मण से शत्रुता कराता है। उस राशि में शुक्र होने पर वस्त्राभूषण तथा स्त्री–लाभ कराता है। बुध की स्थिति चन्द्रनवांश वाली राशि में हो तो वाद–विवाद-मुकदमे में जीत होती है ।।५७।।

यदि पूर्ण चन्द्रमा चन्द्रनवांश में हो तो सुन्दर मन को अच्छी लगने वाली वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। सूर्य यदिचन्द्र नवांश की राशि में हो तो देवता तथा राज्य–शासन का कोप देता है। मंगल यदि चन्द्रमा स्थित नवांश की राशि में हो तो लड़ाई-झगड़ा तथा भूमि सम्बन्धी विवाद उत्पन्न करता है। शनि खेती–वाड़ी, नौकर–चाकर, पशु आदि को नष्ट करता है ।।५८-५९।।

यदि चन्द्र जिस नवांश में हो उस नवांश वाली राशि में राहु बैठा हो तो चण्डालाप (गर्मागरम बातचीत) से शिरदर्द उत्पन्न करता है अथवा चण्डाल स्वभाव के लोगों से कष्ट

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देता है । केतु प्रेतबाधा उत्पन्न करता है । गुलिक अभिचार आदि उपद्रवों से कष्ट देता है (जैसे घर में या द्वारा पर कोई दवा, सिन्दूर, चूर्ण आदि से तांत्रिक प्रयोग या टोटका कर जावे) ॥६०॥

यदि बुध पापयुक्त होकर चन्द्रनवांश वाली राशि में बैठा हो तो विवाद में पराजय होती है । यदि चन्द्रमा क्षीण हो तो पृच्छक को मानसिक व्यथा देता है ॥६१॥

मान लीजिए—चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ५।७°।३'।१५'' हैं, अतः चन्द्रमा मीनराशि के नवांश में हुआ । अब यदि मीनराशि के किन्हीं भी अंशों पर यदि गुरु बैठा है तो वह पुत्रप्रद फल देगा ।

चन्द्रफलपरिपाककालकथनम्

कालः प्रोक्तांशमासोऽत्र लग्नांशेऽपि विधिस्त्वयम् ॥ ६२॥

अब चन्द्रमा फल कितने समय में प्रदान करेगा इसे कहते हैं—चन्द्रमा जिस संख्या के नवांश में हो उतनी संख्या मासों की होती है, उतने मास में फल मिलेगा । जैसे पूर्व चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ५।७°।३'।१५'' है, यह तीसरे नवांश में है अतः तीन मास में फल मिलेगा ऐसा जानें । लग्ननवांश का फल समय जानने के लिए भी इस विधि का उपयोग किया जा सकता है ॥६२॥

चन्द्रक्रियाफलकथनम्

प्रश्नकालसुधाभानुक्रियाणां सदृशं फलम् ।
प्रष्टुर्वक्तव्यमित्युक्तं जीवनैतद् विलिख्यते॥ ६३॥
क्रमाच्चन्द्रक्रियाः पञ्च पञ्च मेषादिराशिषु ।
प्रकल्प्य तत्समं ब्रूयात् सर्वकार्येषु तत्फलम्॥ ६४॥
प्रश्नकाले गुणश्चेन्द्वोः शुभो यदि शुभप्रदः।
तथा चाशुभकर्मस्थे चन्द्रो प्रश्नोऽशुभप्रदः॥ ६५॥

॥ इति प्रश्नमार्गेऽष्टमोऽध्यायः ॥

—*—

चन्द्रमा की साठ क्रियाओं का वर्णन ज्योतिष ग्रन्थों में मिलता है; उन क्रियाओं के अनुसार भी प्रश्नकर्ता के प्रश्न का उत्तर देना चाहिए । ऐसा बृहस्पति का कथन है, उसे भी यहाँ लिखते हैं ॥६३॥

मेषादि बारह राशियों में छह-छह अंश के अन्तर से प्रत्येक राशि में पाँच-पाँच क्रियाओं की कल्पना करके उन क्रियाओं के सदृश ही फल कहना चाहिए ॥६४॥

यदि प्रश्नकालीन चन्द्रमा की क्रिया शुभ हो तो शुभ फल होता है, यदि चन्द्रमा अशुभ क्रिया वाला होता है तो फल भी अशुभ मिलता है ॥६५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रक्रिया-ज्ञानविधि

इस ग्रन्थ में चन्द्रक्रिया का ज्ञान कैसे हो—यह नहीं बताया है। चन्द्र की ६०क्रियाएँ, १२ अवस्थाएँ तथा ३६ वेलाएँ भी होती हैं जिनका विचार प्रश्नकुंडली, जन्मकुंडली तथा मुहूर्त में भी किया जाता है।

इनके ज्ञानार्थ फलदीपिका (४/१२) में कहा है—

"जन्मर्क्षविघटीनीतैर्ज्ञानाङ्गैर्नयनैर्भजेत् ।
लब्धाश्चन्द्रक्रियावस्था वेलाख्यास्तत्फलं क्रमात्" ॥

अर्थात् चन्द्रक्रिया ज्ञान के लिए प्रश्नकालीन नक्षत्र के भयात में ६० का भाग देने से लब्धिसंख्या तुल्य चन्द्रक्रिया होती है। भयात के पल बनाकर भाग देना चाहिए।

उक्त भयात पलों में तीन सौ का भाग देने से लब्धि में चन्द्र की अवस्था ज्ञात होती है तथा उन्हीं में एक सौ का भाग देने पर चन्द्र की वेला ज्ञात होती है।

चन्द्र-क्रियाफल

चन्द्र की क्रियाओं का फल फलदीपिका में निम्न प्रकार से है—(१) स्थानभ्रष्ट, (२) तपस्वी, (३) परस्त्रीरत, (४) द्यूतरत, (५) गजारूढ, (६) सिंहासनारूढ, (७) शासक, (८) शत्रुनाशक, (९) सेनाधिकारी, (१०) गुणी, (११) निष्प्राण, (१२) छिन्नमूर्धा।

(१३) छिन्नहस्तपाद, (१४) बन्धनस्थ, (१५) विनष्ट, (१६) राजपद, (१७) वेदपाठी, (१८) शयन, (१९) सच्चरित्र, (२०) धर्माचारी, (२१) सत्कुलीन, (२२) निधिमान्, (२३) विद्वानों के कुल में उत्पन्न, (२४) व्याख्यानदाता।

(२५) शत्रुनाशक, (२६) रोगी, (२७) पराजित, (२८) स्वदेशत्यागी, (२९) भृत्य, (३०) धनहीन, (३१) सभासद, (३२) सुमन्त्रक, (३३) परमहीभर्ता, (३४) सपत्नीक, (३५) गजत्रस्त, (३६) भीरु।

(३७) अतिभयभीत, (३८) गुप्तावासी, (३९) अन्नदाता, (४०) अग्निवेष्टित, (४१) भूखा, (४२) अन्नभोजी, (४३) भ्रमणकर्त्ता, (४४) मांसभोजी, (४५) क्षतपीड़ित, (४६) विवाहित, (४७) धृतकन्दुक, (४८) द्यूतरत।

(४९) शासनकर्त्ता, (५०) दुःखित, (५१) शय्यास्थित, (५२) शत्रुओं से सेवित, (५३) मित्रों से सेवित, (५४) योगी, (५५) भार्यासहित, (५६) मिष्टान्नभोजी, (५७) दुग्धपायी, (५८) सत्कर्मी, (५९) स्वस्थ तथा (६०) सुखी।

ये चन्द्रमा की साठ अवस्थाएँ अपने नाम के अनुरूप फल करती हैं। जन्म, प्रश्न तथा मुहूर्त में इनका फल कहना चाहिए।

चन्द्रावस्थाओं का फल निम्न प्रकार से है—

"आत्मस्थानो[१]त्प्रवासो महितनृप[२]सहितो, दास[३]ता, प्राणहानिः,
भूपाल[४]त्वं स्ववंशोचित[५]गुणनिरतो, रोग[६] आस्थान[७]वत्त्वम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भीतिः[८] क्षुद्व्याधितत्वं[९], युवतिपरिणयो[१०], रम्यशय्यानुषक्तिः[११]
मृष्टाशित्वं[१२] च गीता इति नियमवशात्सद्भिरिन्दोरवस्था'' ॥

(फलदीपिका ४/१६)

चन्द्रवेलाफल—(१) शिरःशूल, (२) मुदितता, (३) यज्ञकर्म, (४) सुखासीन, (५) नेत्ररोग, (६) सुखत्व, (७) वनिता-विहार, (८) तीव्र ज्वर, (९) स्वर्णाभूषण, (१०) अश्रुमोक्ष, (११) विषभक्षण, (१२) संभोग, (१३) उदररोग, (१४) जलक्रीड़ा, (१५) क्रोध, (१६) नृत्य, (१७) घृतभक्षण, (१८) निद्रा, (१९) दानकर्म, (२०) दन्तपीड़ा, (२१) कलह, (२२) यात्रा, (२३) उन्मत्तता, (२४) जल में तैरना, (२५) विरोध, (२६) स्वच्छास्नान, (२७) क्षुधा, (२८) भय, (२९) शास्त्राध्ययन, (३०) स्वैराचार, (३१) गोष्ठी, (३२) युद्धकर्म, (३३) पुण्यकर्म, (३४) पापकर्म, (३५) क्रूरकर्म तथा (३६) हर्ष।

''जातके च मुहूर्ते च प्रश्ने चन्द्रक्रियादयः ।
सम्यक् फलप्रदास्तस्माद् विशेषेण विचिन्तयेत्'' ॥

(फ०दी० ४/२०)

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का आठवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥८॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ नवमोऽध्यायः

विषयप्रवेशः

आयुर्विवाहसन्तानप्रभृतिप्रश्नकर्मसु ।
साधारणफलाः प्रायः समयाद्या इतीरिताः ।। १ ।।

अब इस ग्रन्थ में आयु, विवाह, सन्तान सम्बन्धी प्रश्नों के सामान्य फल विचार की बातों को कहा है ।।१।।

आयुर्विचारणा

तत्कालजैर्निमित्तैः प्रष्टारूढोदयेन्दुगुलिकाद्यैः ।
आयुः प्रथमं चिन्त्यं स्वस्थातुरविषयभेदमवगम्य ।। २ ।।

तात्कालिक शकुन, आरूढ राशि, उदय राशि, चन्द्र राशि, गुलिकादि से सर्वप्रथम प्रश्नकर्त्ता की आयु का विचार करें तथा स्वस्थ एवं रोगी पुरुष के भेद को भी समझना चाहिए ।।२।।

आयुर्दायप्रयोजनम्

आयुः पूर्वं परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत् ।
अनायुषान्तु मर्त्यानां लक्षणैः किं प्रयोजनम् ।। ३ ।।
इत्यादिभिस्तु वचनैः पूर्वमायुर्निरूपणम् ।
कर्तव्यमिति लग्नाष्टमेशप्रभृतिभिर्ग्रहैः ।। ४ ।।

सबसे पहले आयु का विचार करे पश्चात् अन्य प्रकार का फलादेश करे, क्योंकि जिनकी आयु समाप्त है उनके भविष्य कथन का क्या प्रयोजन होगा ? इस प्रकार के वचनों के निर्देश के कारण पूर्व में लग्नेश तथा अष्टमेश आदि ग्रहों से आयु का निर्णय कर लेना चाहिए ।।३-४।।

स्वस्थातुरस्य निर्णयकथनम्

आयुरेव विशेषेण प्रथमं चिन्त्यतेऽधुना ।
स्वस्थमुद्दिश्य वा प्रश्न एष वातुरमित्ययम् ।। ५ ।।
विवेको विहगैः कार्य इति शास्त्रान्तरोदितम् ।। ६ ।।

आयु का विचार करने के पश्चात् पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति स्वस्थ है अथवा आतुर (रोगी) है ? ऐसा विचार ग्रहों की स्थिति के अनुसार करें ।।५-६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वस्थातुरविचारसूत्राणि

लग्नेशो यदि केन्द्रगः खलु बली राशौ चरे चांशके
प्रश्नः स्वस्थगतोऽथ रिःफरिपुगो लग्नाधिपश्चेत्स्थिरे ।
निर्वीर्यश्च महागदार्तविषया पृच्छाथ मिश्रः स चेत्
त्तोयर्द्धिक्षयवन्मुहुः प्रशमनं वृद्धिश्च वाच्ये रुजाम् ।। ७।।

(१) यदि प्रश्नलग्नेश बली होकर केन्द्र में स्थित हो या वह चरराशि या चरनवांश में हो तो प्रश्न स्वस्थ व्यक्ति के विषय में हुआ करता है ।

(२) यदि लग्नेश निर्बल ६-१२ भाव में या स्थिर राशि में बैठा हो तो किसी भयंकर रोग से ग्रसित व्यक्ति के बारे में प्रश्न है ऐसा जानना चाहिए ।

(३) यदि लग्नेश बली होकर केन्द्र में हो परन्तु स्थिर राशि में हो या चर राशि का होकर ६-१२ भाव में हो तो यह मिश्रित योग है, अतः इसमें रोग कभी घटेगा फिर कभी बढ़ जायेगा ऐसी स्थिति रहती है ।।७।।

प्रश्नलग्नेशतः आयुर्विचारणम्

तुङ्गस्थिते तनुपतौ सधनः सवीर्यो,
जेता द्विषां खलु भवेत्प्रथमानतेजाः ।
प्रष्टाऽभिमानसहितोऽथ निजत्रिकोणे,
वासो विभूषणलसत्तनुराप्तसौख्यः ।। ८।।
बन्धार्गृहे निजगृहे च विनष्टवैरी
भार्यातनूजधनबन्धुभिरिद्धमोदः ।
वैर्यृक्षगे रुगनिशं सुतमित्रभार्या-
नाशश्च भूमिपतिपावकचोरपीडा ।। ९।।
नीचस्थिते रिपुनिपीडनतोऽन्यदेश-
यानं पदाच्च चलनं धनहानिदैन्ये।
मूढे सपापगुलिके च नृपारिहेतो-
वैकल्यवानितरदेशगतो मृतो वा ।। १०।।

यदि लग्नेश उच्च राशि में स्थित हो तो प्रश्नकर्त्ता धनवान, बलंवान्, शत्रुजित, बढ़ते हुए तेज–प्रतापवाला (दिनोंदिन उन्नति करने वाला) तथा स्वाभिमानी होता है। यदि लग्नेश मूलत्रिकोण राशि में हो तो प्राश्निक को उत्तम वस्त्राभूषणों की प्राप्ति होती है तथा वह सुखी होता है ।।८।।

यदि लग्नेश मित्रराशि या स्वराशि में बैठा हो तो प्राश्निक के शत्रु नष्ट होते हैं और वह पत्नी, पुत्र, धन तथा बन्धु–बान्धवों के साथ मौजमस्ती करता है । यदि वह शत्रुराशि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में हो तो प्रश्नकर्त्ता को चिरकालीन रोग, पुत्रहानि, कलत्र–हानि तथा मित्रों की हानि होती है और राज्यशासन, चोर-डाकू, अग्नि-बिजली आदि से कष्ट होता है ।।९।।

यदि लग्नेश नीच राशि में बैठा हो तो शत्रु से परेशान पृच्छक को अपना स्थान छोड़कर भागना पड़ता है, पैदल चलना पड़ता है, धनहानि तथा दीनता होती है । यदि लग्नेश अस्त, पापग्रहों के साथ या गुलिक के साथ हो तो शत्रु या राजा के भय से दूरवर्ती स्थान में या तो गुमनाम होकर रहता है अथवा मृत्यु हो जाती है ।।१०।।

लग्नेशाष्टमेशयोः संयुक्तफलम्

लग्नेशोऽष्टमपश्च नीचगृहगौ यद्वास्तगौ चेदुभौ,
प्रष्टा भग्नमनाः सुखेन रहितः पीडार्तदेहस्सदा ।
स्वल्पायुश्चलितः पदादपि निजादूर्ध्वाङ्गरोगार्दितो,
योगेष्वप्यशुभेषु सत्सु कथयेत्केमद्रुमाद्येष्विदम् ।। ११ ।।

यदि लग्नेश तथा अष्टमेश दोनों ही ग्रह नीच राशि में अथवा अस्तङ्गत हो तो प्राश्निक खिन्न मनवाला, सुखहीन, देहपीड़ा से युक्त, अल्पायु, पैदल चलनेवाला, ऊर्ध्वाङ्ग (शिर, नाक, मुख, आँख, कण्ठ के) रोगों से पीड़ित रहता है । यदि केमद्रुम योग हो तो भी यही फल होता है ।।११।।

कष्टयोग (१)

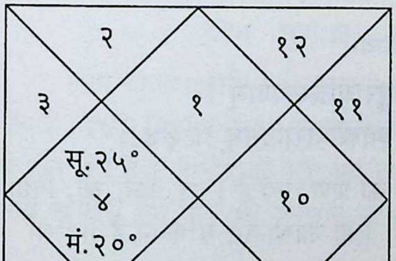

कष्टयोग (२)

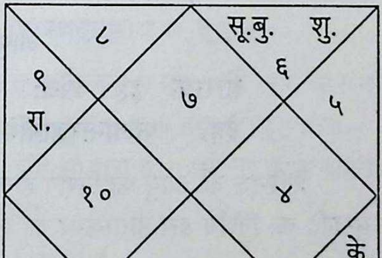

दीर्घायुयोगाः

लग्नाधिपश्च मृतिपश्च मिथः समेतौ,
यद्वा स्वतुङ्गनिजगेहसुहृद्गृहस्थौ ।
लग्नेशशुक्रधिषणाश्च धनत्रिकोण-
केन्द्रस्थिता विदधते खलु दीर्घमायुः ।। १२ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) यदि लग्नेश एवं अष्टमेश दोनों ही एक साथ बैठे हों अथवा (२) दोनों अलग-अलग स्वराशि, उच्च राशि या मित्रराशियों में बैठे हों अथवा (३) लग्नेश, शुक्र तथा गुरु ये तीनों ग्रह धनभाव (द्वितीय), त्रिकोण (५,९) तथा केन्द्र में बैठे हों तो दीर्घायु होती है ॥१२॥

मृत्युकरा योगाः

प्रष्टुस्तारात्रिकोणे स्थितवति गुलिके जन्मचन्द्राष्टमे वा,
नक्षत्रेशे च मान्द्याश्रितभवनपतौ सत्यपि प्रष्टरि स्वे ।
स्थातर्यप्यष्टमर्क्षे निहित इह पणे चात्र या जन्मतारा,
प्रश्नोडुर्मान्दिगोडुत्रितयपतिषु वा षट्स्वपि स्वस्थमृत्युः ॥ १३॥

इस श्लोक में मृत्यु के छः योग दिये गये हैं—

(१) प्राश्निक के जन्मनक्षत्र से त्रिकोण में गुलिक हो अथवा (२) जन्मलग्न या जन्मचन्द्र से अष्टम भाव में गुलिक हो अथवा (३) गुलिकेश ही पृच्छक का जन्मनक्षत्रेश (विंशोत्तरी मत से) हो अथवा (४) पृच्छक का जन्मनक्षत्रेश अष्टम भाव में बैठा हो अथवा (५) यदि पृच्छक राशिचक्र के अष्टम भाव में या जन्मलग्न के अष्टम भाव में स्वर्ण स्थापित करे अथवा (६) जन्मनक्षत्रेश, प्रश्ननक्षत्रेश तथा गुलिकनक्षत्रेश—ये जन्मलग्न से अष्टम भाव में (प्रश्नकुण्डली में) बैठे हों तो स्वस्थ (भले-चंगे) व्यक्ति की भी मृत्यु होती है ॥१३॥

आयुष्यप्राधान्यम्

होराया इह जीवः स्यात्प्रष्टुरायुर्न्निरूपणम् ।
देहः फलान्तरज्ञानमिति शास्त्रान्तरोदितम् ॥ १४॥

प्राश्निक की आयु का निर्णय होरास्कन्ध का प्राण तत्त्व है । पुत्र, धन, स्त्री, विद्या, सुखादि का निर्णय इस होरास्कन्ध का शरीर है; ऐसा शास्त्रान्तरों में कथन है ॥१४॥

द्वे प्रयोजने

आयुश्च लोकयात्रा च शास्त्रेऽस्मिन् द्वे प्रयोजने।
निश्चेतुं को नु शक्नोति वसिष्ठो वा बृहस्पतिः ॥ १५॥
किम्पुनर्मनुजास्तत्र विशेषात्तु कलौ युगे ।
लोकयात्रापरिज्ञानं शरीरं कथ्यते बुधैः ॥ १६॥
आयुषस्तु परिज्ञानं होराय जीव उच्यते ॥ १७॥

ज्योतिषशास्त्र के दो प्रयोजन प्रमुख है—एक तो आयु का निर्णय तथा दूसरी लोकयात्रा (जीवन में घटित होने वाले सुख-दुःख, भोग, हानि आदि) का ज्ञान । इन दो तथ्यों का निर्णय कौन कर सकता है ? या तो वसिष्ठजी या बृहस्पतिजी ही कर सकते हैं;

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तब भला इस घोर कलियुग में बेचारे मनुष्य की क्या क्षमता है कि वह इन दोनों का निर्णय कर सके (इस वाक्य के द्वारा ज्योतिषशास्त्र के ज्ञान की गंभीरता की ओर संकेत है)। विद्वानों ने लोकयात्रा के परिज्ञान को ही होराशास्त्र का शरीर बताया है और आयुतत्त्व का ज्ञान इस शास्त्र का जीव है ॥१५-१७॥

आयुर्निर्णयस्य पञ्च साधनानि

लग्नं विलग्नपतिमृत्युतदीशचन्द्राः
प्रष्टुरायुषोऽवगमने खलु साधनानि।
तेषां शुभाशुभदृगन्वयवीर्यवत्ता
निर्वीर्यतादिगुणदोषवशाद्विचिन्त्यम् ॥ १८॥

(१) लग्न भाव, (२) लग्नेश, (३) अष्टम भाव, (४) अष्टमेश तथा (५) चन्द्रमा ये प्राश्निक की आयु जानने के पाँच साधन हैं। इन पाँचों का शुभयुत, शुभदृष्ट तथा बलवान् होना ये तीन गुण हैं। पापयुति, पापदृष्टि तथा निर्बलता ये तीन इन पाँच साधनों के दोष हैं। इनका विचार करना चाहिए ॥१८॥

लग्नाष्टमयोर्गुणदोषाश्च

पापान्तरस्थितिशुभेतरदृष्टियोगा
दोषा गुणास्त्रय इमे वपुषः शुभानाम्।
स्वेशस्य सङ्गमदृशौ च गुणौ भवेतां
दोषा गुणाश्च खलु लग्नवदष्टमस्य ॥ १९॥

लग्न का पापकर्त्तरी में होना, पापदृष्ट होना तथा पापयुति में होना—ये लग्न के तीन दोष हैं। इसके विपरीत उसका शुभकर्त्तरी में होना, शुभयुति में होना तथा शुभदृष्ट होना—ये तीन गुण हैं। लग्नेश की युति एवं लग्न पर दृष्टि भी गुण है। इसी प्रकार से अष्टम भाव के दोषों एवं गुणों को समझना चाहिए ॥१९॥

लग्नेशस्य गुणदोषौ

पापान्वयेक्षणशुभेतरमध्यवास-
मौढ्यारिनीचभगमास्तनुपस्य दोषाः।
तुङ्गात्मबन्धुभवनस्थितिसौम्ययोग-
वीक्षान्तरस्थितिविलोमगमा गुणाः स्युः ॥ २०॥

लग्नेश की पापयुति, पापकर्तरी में स्थिति, पापदृष्टि में स्थिति, मूढता (अस्त होना), शत्रुक्षेत्री होना, नीच राशिगत होना—ये उसके दोष होते हैं। इसके विपरीत उच्च राशि में बैठना, मित्रक्षेत्री होना, सौम्य ग्रहों से युत होना, शुभदृष्ट होना, शुभमध्यत्व में होना तथा विलोम गति (वक्री) होना—ये लग्नेश के गुण हैं ॥२०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्नपस्य गुणा दोषास्तुल्याः स्युर्मृतिपस्य च ।
केन्द्रस्थितिर्मृतीशस्य दोषो लग्नपतेर्गुणः ॥ २१॥

अष्टमेश के गुण-दोष लग्नेश के गुण-दोषों की भाँति ही होते हैं, परन्तु अष्टमेश यदि केन्द्र में बैठा हो तो अशुभ है तथा यदि लग्नेश केन्द्र में बैठा हो तो शुभ होता है ॥२१॥

चन्द्रस्य गुणदोषौ

चन्द्रस्यारिमृतिव्ययस्थितिरसन्मध्यस्थितीक्षान्वयाः,
क्षीणत्वं तनुगत्वमत्र निजनीचाप्तिश्च दोषा इमे ।
पूर्णत्वं शुभमध्यवासयुतिदृग्देवेड्यकेन्द्रस्थिता
स्थानं तुङ्गगृहे युतिश्च गुरुणा साङ्गे विशेषाद् गुणाः ॥ २२॥

चन्द्रमा की अरि (६), मृति (८) तथा व्यय (१२) भाव में स्थिति होना, पापमध्यत्व, पापदृष्ट होना, पापयुति होना, क्षीणता, लग्न में (मेष, वृष, कर्क को छोड़कर) बैठना, नीच राशि (वृश्चिक) में बैठना—ये उसके दोष हैं । इसके विपरीत चन्द्रमा की पूर्णता, शुभमध्यत्व, शुभयुति, शुभदृष्ट होना, गुरु के साथ केन्द्र में स्थिति, स्वराशि में स्थित होना, उच्च राशि में होना, गुरु के साथ किसी भी राशि या स्थान मे होना—ये विशेष गुण होते हैं ॥२२॥

वराहमतम्

त्र्यायारिष्वसदा वासो दीर्घायुष्यकृदीरितः ।
वराहमिहिरेणैव पद्येन गुरुशादिना॥ २३॥

वराहमिहिर के अनुसार यदि पापग्रह ३-६-११ स्थानों में बैठते हैं तो दीर्घायुकारक होते हैं । यह बात वराहमिहिर ने "गुरुराशिसहिते कुलीरलग्ने" इस पद्य में कही है ॥२३॥

उक्तञ्च सारसङ्ग्रहे

लग्नं मूर्धोदयं चेच्छुभपतिनिहितं वीक्षितं चाखिलानां
दीर्घायुष्यप्रदं स्यान्निधनमपि तथैवान्यभावा विचिन्त्यः ।
रन्ध्रेशो लग्नपो वा यदि बलसहितौ चानयोर्वाधिमैत्री,
चारूढश्चोर्ध्ववक्त्रः समयजलसमृद्धः स मूर्धोदयाख्यः ॥ २४॥

यदि कर्कलग्न में गुरु तथा चन्द्रमा हों, बुध तथा शुक्र केन्द्र में बैठे हों । शेष पापग्रह ३-६-११ स्थानों में हों तो दीर्घायु योग होता है । यदि मूर्धोदय (शीर्षोदय) लग्न हो तथा वह शुभग्रहों से युत-दृष्ट हो तो दीर्घायु योग होता है । यदि अष्टमेश या लग्नेश बलवान् हों, उनमें मैत्री हो, उस समय आरूढ राशि ऊर्ध्वमुख हों, समय जलसमृद्ध हो या शीर्षोदय हो तो दीर्घायु होती है (चन्द्रोदय से छः घण्टे पश्चात् तक का समय लहरों की तीव्रता के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कारण जलसमृद्धि का समय कहा जाता है। चन्द्रोदय से ४५ घटी (१८ घण्टे तक) समुद्र में जलस्तर बढ़ा रहता है, अतः ६ से १८ घण्टे के अन्तर में (१२ घण्टे की अवधि) में जलवृद्धि रहती है। इसे ही ज्वार कहते हैं। जब जलस्तर नीचे को उतरता है तब उसे जलक्षय अर्थात् भाटा कहते हैं)। अन्य भावों का फल भी इसी प्रकार ऊहापोह पूर्वक विचार कर कहना चाहिए। जलसमृद्धि युक्त समय को मूर्धोदय समय कहते हैं ॥२४॥

रोगीमृत्युयोगाः

द्रेक्काणाः फणिभूषणा मृतिकराः, कोलाभगृध्राननाः
सक्रूरा यदि शीतगौ निधनगे हीनस्य च व्याधिना।
रन्ध्रे शीतकरो भवेन्मृतिकरः पृष्ठोदयो लग्नगः
पापः केन्द्रमृतिस्थिताश्च मृतिदा रोगार्दितानां नृणाम् ॥ २५॥

प्रश्नलग्न में सर्प, कोलास्य या गृध्र द्रेष्काण यदि पापग्रहों से युक्त हों तथा चन्द्रमा अष्टम भाव में बैठा हो तो रोगरहित व्यक्ति की भी मृत्यु हो जाती है। यदि लग्न में पृष्ठोदय राशि हो तथा चन्द्रमा अष्टम भाव में बैठा हो तो मृत्युदायक होता है ॥२५॥

सर्पद्रेष्काण—कर्क राशि का दूसरा व तीसरा द्रेष्काण, वृश्चिक का प्रथम तथा मध्यम द्रेष्काण तथा मीन का तृतीय द्रेष्काण—ये कुल पाँच द्रेष्काण सर्प संज्ञावाले हैं।

कोलास्यद्रेष्काण—कर्क का प्रथम द्रेष्काण होता है।

पक्षिद्रेष्काण—इसको गृध्रानन द्रेष्काण भी कहते हैं। तुला तथा मिथुन का द्वितीय द्रेष्काण, कुम्भ तथा सिंह का प्रथम द्रेष्काण ये चार पक्षिद्रेष्काण कहलाते हैं।

इन द्रेष्काणों में कुछ मतान्तर भी हैं परन्तु बहु प्रचलित मत यहाँ दिया गया है।

आरूढलग्नस्य महत्त्वम्

तत्कालोदयराशिः प्रष्ट्वारूढश्च लग्नशब्दोक्तौ।
कृष्णीयादिषु कथितं ताभ्यां द्वाभ्यां फलं हि वाच्यम्॥ २६॥
भूमिष्ठं स्थिरचक्रं चरति तथाकाश एव चरचक्रम्।
चक्रद्वितयेन फलं प्रश्नादौ पृच्छतां वाच्यम् ॥ २७॥

तात्कालिक उदयलग्न एवं प्राश्निक की आरूढ राशि इन दोनों को कृष्णीय आदि शास्त्रों में लग्न कहा गया है; अतः इन दोषों से ही फलकथन करना चाहिए ॥२६॥

लग्नचक्र दो प्रकार के हैं, एक तो भूमि पर स्थित स्थिरराशिचक्र है जो दैवज्ञ के चारों ओर माना गया है और दूसरा आकाश में स्थित चरराशिचक्र है (जो निरन्तर भ्रमण करता रहता है)। प्रश्न के समय इन दोनों से पृच्छक को फल बताना चाहिए ॥२७॥

आयव्ययभावाभ्यां फलकथनम्

उदयारूढर्क्षाभ्यां शुभाऽशुभं प्रष्टुरादिशेद्वद्वत्।
दैवविदो व्ययभाभ्यां तदायभाभ्यां तथैव दूतस्य॥ २८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथोदयारूढभयोर्ध्वयोस्तदा बलान्वितात् द्वादशभावजं फलम् ।
तथात्मपित्रादिपदार्थकारकैरपि ग्रहैरर्कमुखैर्विमृश्यते ।। २९।।

जिस प्रकार उदयलग्न तथा आरूढलग्न से प्राश्निक को फल कहा जाता है उसी प्रकार द्वादश भाव तथा एकादश भाव को लग्न मानकर फल कहना चाहिए ।।२८।।

उदयलग्न, आरूढलग्न इनमें से जो बली हो उसी से प्रश्नकाल में द्वादश भावों का फलकथन करे । उसी प्रकार पित्तादि के कारक सूर्यादि ग्रहों से फलकथन करना चाहिए ।।२९।।

प्रश्नस्य द्वौ भेदौ

प्रश्नः खलूदयारूढप्राधान्येन द्विधा मतः ।
भास्करोदयवेलायां सञ्चरत्यपि पृच्छके ।। ३०।।
पृच्छके विद्यया युक्ते यात्रादिचरकर्मसु ।
उदयेन फलं ब्रूयादेवमादिषु दैववित् ।। ३१।।
कर्मान्ते च दिनान्ते च शयिते पृच्छके निशि ।
प्रदेशे जनसम्पूर्णो मुष्टौ चान्तर्गृहस्य च ।। ३२।।
विषये स्थावराणामित्यादिष्वारूढराशिना ।
चिन्त्यमत्रोभयत्रापि स्वं स्वं छत्रं तदुच्यते ।। ३३।।

उदयलग्न एवं आरूढलग्न दोनों की प्रधानता से प्रश्न भी दो प्रकार का होता है। सूर्योदय वेला में पृच्छक के चलते–फिरते हुए प्रश्न पूछने पर, जब पृच्छक स्वाध्याय में रत हो या यात्रादि करते समय दैववेत्ता (ज्योतिषी) को उदयलग्न से ही फल कहना चाहिए ।।३०-३१।।

पृच्छक के कार्य–समापन समय में दिन–समापन होने पर या पृच्छक के सो जाने पर, रात्रि में, प्रश्नस्थल पर जनसम्मर्द (भीड़) होने पर या मुष्टि प्रश्न किये जाने पर, पृच्छक के घर के भीतर प्रश्न होने पर या स्थावर के विषय में प्रश्न किये जाने पर प्रश्नों के उत्तर आरूढलग्न से ही देना चाहिए ।

आरूढलग्न तथा उदयलग्न दोनों की ही अलग-अलग अपनी-अपनी छत्र राशि होती है, उससे भी फल का विचार करना चाहिए ।।३२-३३।।

वीथीसह छत्रलग्नमपि कथ्यते

मार्तण्डे वृषतोऽलितश्च चतुरो राशीनतोऽन्यांस्तथा;
प्राप्तेऽजो मिथुनं क्रमेण च वृषो वीथ्योऽथ यावान्भवेत्।
आरूढादुदयोऽथ वीथिभवनात्तावद्भवेच्छत्रभं
ग्राह्यं स्यात्स्थिरचक्र एतदद्‌ढे लग्नांशकश्छादकः।। ३४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वीथी—सूर्याधिष्ठित राशियों की वीथियों का विचार इस प्रकार करे कि 'वृषतो'=वृष राशि से, अलितो=वृश्चिक राशि से चार-चार राशियों की तथा शेष बची चार राशियों की क्रमश: मेष वीथी, मिथुन वीथी तथा वृष वीथी—ये तीन वीथियाँ होती हैं। वृष से चार कौन-सी ? वृष, मिथुन, कर्क तथा सिंह इनकी मेष वीथी है। अलि (वृश्चिक) से चार कौन सी ? वृश्चिक, धनु, मकर तथा कुम्भ इन चार की मिथुन वीथी है। शेष अन्य चार कौन सी ? मेष-मीन-कन्या-तुला इन चार की वृष वीथी है।

एक हिन्दी टीकाकार ने इस श्लोक के ''वृषतोऽलितश्च'' का अर्थ वृष से तथा तुला से कर दिया है जो कि समीचीन नहीं है, क्योंकि अन्य ग्रन्थों में भी तुला राशि मिथुन वीथी में न होकर मेष वीथी में है (अध्याय ८ श्लोक १९ की टीका के अन्त में छत्र–विवेचन पर टिप्पणी देखिए)।

वीथी से छत्रलग्न का ज्ञान किया जाता है। आरूढ से उदय लग्न तक जितनी राशियाँ हों वीथी की राशि से उतनी ही संख्या आगे गिनने पर छत्रलग्न आता है। इस प्रकार से स्थिर चक्र में छत्रराशि का ज्ञान करना चाहिए। यह आरूढ का छत्र होता है।

उदयलग्न का छत्र—चरचक्र में उदयलग्न के नवांश की राशि ही उसकी छत्र राशि होती है।

विशेष—प्रश्नमार्ग में आरूढ से जितनी राशि अन्तर पर उदयलग्न हो उतनी ही राश्यन्तर तक वीथी से गणना करते हैं जबकि ज्ञानप्रदीप में यह गणना उदयलग्न से की जाती है। दोनों विधियों में यह अन्तर है।

<table>
<tr><td>१२</td><td>१
राहु</td><td>२
वीथी</td><td>श.
३
उदय लग्न</td></tr>
<tr><td>११
मं.</td><td colspan="2" rowspan="2">उदाहरण (श्लोक ३४ के अनुसार)
राशिचक्र
प्रश्न दिनांक ५ अक्टूबर २००३ ई.
(विजयादशमी संवत् २०६० वि.)
प्रश्न समय रात्रि १० बजकर ५ मि. (भा.मा. स.) इष्ट ३९।५० उदयलग्न मिथुन १° आरूढ से उदयलग्न ६ राशि के अंतर पर है। सूर्य कन्या राशि का है अत: उसकी वीथी वृष है। वृष से ६ राशि आगे गिनने पर तुला छत्रलग्न हुई।</td><td>४</td></tr>
<tr><td>आरूढ
१०
चन्द्र</td><td>५
गु.</td></tr>
<tr><td>९</td><td>८</td><td>केतु
७
छत्र</td><td>६
सूर्य, बु.,
शु.</td></tr>
</table>

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आरूढस्य प्रधानताकथनम्

निरन्तरोद्यतां भानां कस्याप्यस्त्युदयः सदा ।
तथाप्यारूढवाञ्छा यत्ततोऽस्यैव प्रधानता ।। ३५।।

आकाश में भचक्र (Zodiac) के भ्रमण करने से पूर्वी क्षितिज में हर समय कोई लग्न उदित रहता है परन्तु फिर भी प्रश्नफल जानने में आरूढ के बिना काम न चलने से उसकी आवश्यकता रहती है, अतः आरूढ की प्रधानता है ।।३५।।

प्रश्नमार्ग के रचयिता का यह अपना स्वयं का दृष्टिकोण है जिसके अनुसार प्रश्न विचार में आरूढ का अधिक महत्त्व है, क्योंकि आरूढ में पृच्छक का अन्तःकरण प्रकट होता है ।

पञ्चोपकरणानां फलम्

एतेषु दोषरहितेषु गुणान्वितेषु
नीरोगताद्यखिलसौख्यमनल्पमायुः ।
दोषान्वितेषु विगुणेषु मृतिश्च रोग-
दैर्घ्यादिकन्तु गुणदोषविमिश्रितेषु ।। ३६।।

यदि लग्नादि पञ्चोपकरणों (लग्न, लग्नेश, अष्टम, अष्टमेश तथा चन्द्रमा) के दोषमुक्त तथा गुणयुक्त रहने पर नीरोगता आदि सम्पूर्ण सुख तथा दीर्घायु की प्राप्ति होती है । यदि ये दोषयुक्त तथा गुणमुक्त हैं तो मृत्यु होती है । दोष तथा गुणें के मिश्रण से पृच्छक या तत्सम्बन्धित को दीर्घकालीन रोग होता है ।।३६।।

दीर्घायुर्योगाः

लग्नं देहोऽष्टमो जीवस्तयोरधिपयोर्बलम् ।
अन्योऽन्यदृष्टियोगौ च दीर्घाय प्रष्टुरायुषे ।। ३७।।
लग्नाधिपश्च जीवश्च शुक्रश्चारूढकेन्द्रगः ।
एकैकोऽप्यायुषे प्रष्टुः किमु द्वौ किम्पुनस्त्रयः ।। ३८।।
अन्योऽन्यकेन्द्रगेष्वेषु दीर्घमायुरितीतरे ।। ३९।।

लग्न देह तथा अष्टम भाव जीव होता है, अतः इन दोनों (देह+जीव) के स्वामियों का बल, अन्योऽन्य दृष्टि संयोग तथा युति आदि हो तो प्राश्निक को दीर्घायु प्राप्त होती है ।।३७।।

यदि लग्नेश, बृहस्पति तथा शुक्र इन में से कोई भी एक आरूढ लग्न से केन्द्र में हो तो प्राश्निक को आयुष्य देने वाला होता है और कहीं दो-तीन ग्रह केन्द्र में हों तो फिर कहना ही क्या? ।।३८।।

यदि उक्त ग्रह परस्पर एक-दूसरे की राशि में हों तो भी दीर्घायु कहना चाहिए ।।३९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मिश्रितयोगौ

सौम्यस्त्रिकोणधनकेन्द्रभवाष्टमस्था
दीर्घायुषे सहजषड्भवगाश्च पापाः।
अन्यत्रगा मरणरोगकराश्च ते स्यु-
र्मान्दिर्मृतौ मृतिकरोऽपि गुणेषु सत्सु।। ४०।।

यदि शुभ ग्रह त्रिकोण (५-९), धनभाव (२), केन्द्रभाव (११) तथा अष्टम में हों तथा पाप ग्रह तीसरे, छठे तथा एकादश भाव में हों तो दीर्घायुकारक होते हैं। यदि इस क्रम से ग्रह न होकर भिन्न या विपरीत भावों में बैठे हों तो मृत्यु या रोग देते हैं। आठवें भाव में गुलिक मृत्युकारक होता है ।।४०।।

एकादश भाव ऐसा है जिसमें शुभ तथा पाप सभी प्रकार के ग्रह शुभ फल देते हैं, इसीलिए दोनों ग्रहों का भाव (ग्यारहवें) स्थान में होना कहा गया है।

दोषप्रदाने गुलिको बलीयान्

सर्वेषामपि पापानां मान्दिर्दोषप्रदाधिकम्।
सोऽतिदोषकरो योगदृग्वर्गवशतः शनेः।। ४१।।

सम्पूर्ण पापग्रहों में सर्वाधिक दोषप्रद गुलिक होता है। यदि उसके साथ शनि की युति हो या शनि के षड्वर्ग में गुलिक हो तो वह और भी अधिक दोषकारक हो जाता है ।।४१।।

बृहज्जातकस्य अध्ययनम्

वराहमिहिरो होरा षष्ठाध्यायेऽभ्यधत्त यान्।
योगान् मृतिकरान् सद्यस्तत्संवादो विचिन्त्यताम्।। ४२।।

आचार्य वराहमिहिर ने अपने होरा (बृहज्जातक) के छठे अध्याय में जिन मृत्युकारक योगों का, सद्यो मृत्युकारक योगों का उल्लेख किया है उनके आधार पर भी विचार कर फल कहना चाहिए ।।४२।।

अरिष्ट योग—आचार्य वराह ने निम्न योग दिये हैं—

(१) सूर्यबिम्ब के आधा अस्त होने के पश्चात् डेढ़ घटी (३६ मिनट) बाद तक तथा इतना ही पूर्व से सन्ध्या समय होता है। इस समय यदि चन्द्र की होरा (राश्यर्ध) लग्न में हो तथा पाप ग्रह लग्नराशि के अन्तिम भाग (नवांश) में हो तो बालक की मृत्यु होती है।

(२) चन्द्र तथा तीन पापग्रहों के साथ विभिन्न केन्द्रों में बैठा हो तो अरिष्टकारक होता है।

(३) कुण्डली में पूर्व चक्रार्ध (लग्न से षष्ठ भाव तक) में पापग्रह हों तथा उत्तरार्ध में शुभग्रह हों तथा लग्न में कीटराशि (कर्क या वृश्चिक) हो तो शीघ्र मृत्यु होती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(४) द्वादशभाव में २९° पर पाप ग्रह मार्गी स्थिति में हो अथवा छठे भाव का पाप ग्रह भावराशि के अन्त में बैठकर सप्तम भाव में जाने को उद्यत हो तो मृत्यु योग होता है।

(५) द्वितीय या अष्टम भाव में वक्री पाप ग्रह मृत्युकारक है।

(६) लग्न तथा सप्तम दोनों में पापकर्तरी योग मृत्युदायक होता है।

(७) लग्न तथा सप्तम में पाप ग्रह हों, चन्द्र शुभ ग्रहों से अदृष्ट तथा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो मृत्यु होती है।

(८) क्षीण चन्द्र बारहवें हो, लग्न तथा अष्टम में पाप ग्रह हो तथा सभी केन्द्रस्थान शुभग्रह से रहित हों तो मृत्युकारक हैं।

(९) पापयुक्त चन्द्र ७।८।१२।१ भावों में से किसी में शुभ ग्रहों से अदृष्ट हो, शुभ ग्रह केन्द्र में न हों तो मृत्युप्रद हैं।

(१०) छठे-आठवें पापदृष्ट चन्द्र से सद्यः मृत्यु होती है।

(११) लग्न में क्षीण चन्द्र तथा केन्द्र एवं अष्टम में पाप ग्रह हों तो शीघ्र मृत्यु होती है।

(१२) यदि पाप ग्रहों के मध्य होकर चन्द्र ४-७-८ भावों में हो तो मृत्युकारक होता है।

(१३) चन्द्रमा किसी भी राशि के अन्त्य नवांश में हो तथा शुभ दृष्टि से रहित है तथा पाप ग्रह त्रिकोण में हों तो मृत्युकारक होते हैं।

(१४) लग्न में चन्द्र तथा सप्तम में पाप ग्रह मृत्युकर होते हैं ।

(१५) शनि द्वादश में, सूर्य नवम में तथा मंगल अष्टम में बृहस्पति की दृष्टि से रहित हों तो अरिष्टकर हैं।

बृहज्जातक में और भी योग हैं, यहाँ पर पाठकों के लाभार्थ केवल इतने ही दिये जा रहे हैं।

अथ जातकवशादायुर्निरूप्यते

ग्रहचारदशाप्रश्नफुलसंवादसम्भवे ।
सत्येव फलमादेश्यं शुभाशुभमसंशयम्।। ४३।।
इत्येतया तु शास्त्रोक्त्या प्रश्नजातकयोरिह।
संवादश्चिन्त्य इत्यायुश्चिन्त्यन्ते जातकेन च।। ४४।।

संशय रहित फलकथन हेतु दैवज्ञ को ग्रहगोचर, विंशोत्तरी दशा, प्रश्नकुण्डली का फल इन सब के मत से समन्वयपूर्वक शुभाशुभ विचार करना चाहिए ।।४३।।

इस शास्त्रोक्ति के अनुसार प्रश्नशास्त्र तथा जातक इन दोनों में संवाद स्थापित करके पृच्छक की आयु का निश्चय करना चाहिए ।।४४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्वकर्मफलकथनम्

पूर्वकर्मफलं भोक्तुं जन्तोर्यदिह जीवनम् ।
आयुस्तत्कर्मशक्त्यास्य दीर्घमध्याल्पतादिकम् ।। ४५।।
अवश्यमनुभोक्तव्यं यत्किञ्चित्फलमस्ति चेत् ।
येन केनापि योगेन न भुक्त्वायं म्रियेत तत् ।। ४६।।

पर्व जन्मों में किये गये शुभाशुभ कर्मों का फल भोगने के लिए ही जीव इस लोक में जन्म लेता है । इस जीवन काल (Lifespan) को ही आयु कहते हैं । प्रारब्धादि के अनुसार ही उसे दीर्घायु, मध्यमायु या अल्पायु प्राप्त होती है ।।४५।।

पूर्वकृत कर्मों का फल प्राणी को अवश्य ही भोगना पड़ता है, वह अच्छा-बुरा कैसा भी हो सकता है । जिस किसी भी प्रकार से उक्त कर्मफल को भोगने के उपरान्त ही इस प्राणी की मृत्यु होती है ।।४६।।

योगनिर्वचनम्

शास्त्रान्तरोदितं योगशब्दनिर्वचनं तथा ।
योगस्वरूपसंख्याश्च तत्प्रकारोऽथ लिख्यते ।। ४७।।
ग्रहाणां स्थितिभेदेन पुरुषान् योजयन्ति हि ।
फलैः कर्म समुद्भूतैरिति योगाः प्रकीर्तिताः ।। ४८।।

शास्त्रान्तरों में योग शब्द की व्याख्या की गई है, अतः अब यहाँ पर योग का स्वरूप, संख्या तथा प्रकार का वर्णन किया जा रहा है ।।४७।।

ग्रहों की स्थिति भेद से जो पुरुषों को फल प्राप्त होते हैं तथा पुरुष कर्मों में प्रवृत्त होते हैं वह प्रवृत्ति भी पूर्व कर्मों का परिणाम होती है, अतः उनको योग कहते हैं ।।४८।।

षड्विधा योगाः

स्थानतो भावतः खेटैः स्थानभावनभश्चरैः ।
स्थानभावसमायोगाद्भावखेचरयोगतः ।। ४९।।
योगाः स्युः षड्विधाः स्थानखेचराभ्यान्तु सप्तमः ।

(१) स्थान से, (२) भाव से, (३) ग्रहों से, (४) स्थान (राशि), भाव तथा ग्रह इन तीनों से, (५) स्थान तथा भाव दो के मिलने से, (६) भाव एवं ग्रह के संयोग से छः प्रकार के योग होते हैं तथा (७) स्थान एवं ग्रहों के संयोग से कुल सात प्रकार के योग निर्मित होते हैं ।

स्थानादिकथनम्

उच्चमूलत्रिकोणादिग्रहाणां स्थानमुच्यते ।। ५०।।
भावा लग्नादयः प्रोक्ताः खेचरा भास्करादयः ।
भावस्थानग्रहैः प्रोक्ते योगे ये योगहेतवः ।। ५१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तेषां बली यः कर्ता स्यात् स एवास्य फलप्रदः ॥५२॥

ग्रहों की उच्चराशि, मूलत्रिकोणराशि, स्वराशि, मित्रराशि, शत्रुराशि, नीचराशि आदि ग्रहों के स्थान कहलाते हैं। लग्न से द्वादश भाव पर्यन्त बारह भाव तथा सूर्यादि नवग्रह होते हैं। भाव, स्थान (राशि) तथा ग्रह इन तीनों में से किन्हीं भी दो के द्वारा निर्मित होने वाले योगों में जो योग हेतु (कारण) हुआ करते हैं उनमें जो बलवान् हो उसी के द्वारा योग का फल प्राप्त होता है ॥५०-५२॥

ग्रहशील-चक्र

श्री	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु
अन्तर्राष्ट्रीय चिह्न	☉	☽	♂	☿	♃	♀	♄	☊	☋
स्वक्षेत्राणि	सिंह	कर्क	मेष वृश्चिक	मिथुन कन्या	धनु मीन	वृषभ तुला	मकर कुंभ	कन्या	मीन
उच्चक्षेत्राणि	मेष	वृषभ	मकर	कन्या	कर्क	मीन	तुला	मिथुन	धनु
उच्चभाग	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	१५	१५
नीचक्षेत्राणि	तुला	वृश्चिक	कर्क	मीन	मकर	कन्या	मेष	धनु	मिथुन
नीच भाग	१०	३	२८	१५	५	२७	२०	१५	१५
मूलत्रिकोण	सिंह	वृषभ	मेष	कन्या	धनु	तुला	कुम्भ	कर्क	मकर
एकपाद दृष्टि	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	३।१०	०	३।१०	३।१०
द्विपाद दृष्टि	५।९	५।९	५।९	५।९	०	५।९	५।९	५।९	५।९
त्रिपाद दृष्टि	४।८	४।८	०	४।८	४।८	४।८	४।८	४।८	४।८
संपूर्ण दृष्टि	७	७	४।७।९	७	५।७।९	७	३।७।१०	७	७
तत्त्व	तेज	जल	तेज	भूमि	आकाश	जल	वायु	जल वायु	आकाश तेज
दिशाबल	पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	नैर्ऋत्य	नैर्ऋत्य
स्थानबल	दशम	चतुर्थ	दशम	प्रथम	प्रथम	चतुर्थ	सप्तम	—	—
कालबल	मध्याह्न	अपराह्न	मध्याह्न	प्रातः	प्रातः	अपराह्न	सायं.	सायं.	सायं.
वातादि दोष	पित्त	वात कफ	पित्त कफ	त्रिदोष	कफ वात	वात कफ	वात	—	—
लिंग	पुरुष	स्त्री	पुरुष	नपुंसक	पुरुष	स्त्री	नपुंसक	पुरुष	पुरुष
मित्र ग्रह	चं. मं. गु.	र. बु.	र. गु. चं.	र. रा. शु.	र. चं. मं.	बु. रा. श.	बु. रा. शु.	बु. शु. श.	बु. शु. श.
सम ग्रह	बु.	मं. शु. गु. श.	शु. श.	मं. श. गु.	श. रा.	मं. गु.	गु.	गु.	गु.
शत्रु ग्रह	श. रा. शु.	रा.	बु. रा.	चं.	बु. शु.	र. चं.	र. चं. मं.	र. चं. मं.	र. चं. मं.

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगायुश्च दशायुश्च

योगायुश्च दशायुश्चेत्यायुर्वै द्विविधं नृणाम्।
योगोक्तमायुर्योगायुश्च दशाः कृतम् ।। ५३।।

(१) योगायु तथा (२) दशायु इस प्रकार से मानवों की आयु दो प्रकार की बताई गई है। योगों के अनुसार जो आयु आती है उसे योगज आयु भी कहते हैं तथा विंशोत्तरी आदि दशाओं द्वारा निकाली गयी आयु को दशायु कहते हैं ।।५३।।

योगायुर्भेदाः

योगायुः षड्विधं योगैः षड्विधैस्तान् वदाम्यथ।
सद्योरिष्टा अरिष्टाख्या योगारिष्टाह्वयास्तथा ।। ५४।।
मध्यदीर्घमितायुर्दा इति योगास्तु षड्विधाः ।

योगों के भेदानुसार योगायु छः प्रकार की होती है—(१) सद्योरिष्टायु, (२) अरिष्टायु, (३) योगोरिष्टायु, (४) मध्यमायु, (५) दीर्घायु तथा (६) अमितायु—ये आयु के ६ भेद हैं ।।५४-५४१/२।।

योगायुर्वर्षाणि

सद्योरिष्टाह्वया योगा वत्सरान्तर्मृतिप्रदाः ।। ५५।।
रव्यब्दान्तररिष्टाख्या नापेक्षन्ते दशामिमे ।
योगारिष्टाह्वया द्व्यष्टवत्सरान्तर्मृतिप्रदाः ।। ५६।।
अब्दानां सप्ततेरन्तर्योगा ये मध्यमायुषः ।
दीर्घायुषश्शतस्यान्तर्दशापेक्षान्वितास्त्रयः ।। ५७।।
शताधिकसमा जीवेद्योगे जातोऽमितायुषि ।
आयुर्दायविधिं योगा नापेक्षन्तेऽमितायुषः ।। ५८।।
एते योगास्तु विज्ञेयाः सारावल्यादिशास्त्रतः ।
त्रिविधञ्च पुनस्त्वायुर्दीर्घमध्याल्पतावशात् ।। ५९।।

जब सद्योरिष्ट योग हो तो एक वर्ष के भीतर मृत्यु होती है । (२) अरिष्ट योगों में बारह वर्ष के भीतर मृत्यु होती है । ये दोनों प्रकार के योग विंशोत्तरी दशा की अपेक्षा नहीं करते (अपितु अपना स्वतंत्र फल दे देते हैं ।) (३) रिष्ट योग (योगारिष्ट) बत्तीस वर्ष के भीतर मृत्युप्रद होता है ।।५५-५६।।

मध्यमायु योग में सत्तर वर्ष के भीतर मृत्यु होती है । दीर्घायु में एक सौ वर्ष आयु होती है । ये तीनों (रिष्टायु, मध्यायु एवं दीर्घायु) योग विंशोत्तरी दशा के अनुसार घटित होते हैं ।।५७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जब सौ वर्ष से अधिक व्यक्ति जीवित रहता है तब उसे अमितायु कहते हैं । अमितायु योग के लिए भी आयुर्दाय की विधि (जैमिनि मत आदि) की आवश्यकता नहीं होती ॥५८॥

इन आयुयोगों का सारावल्यादि ग्रन्थों में भी अध्ययन करना चाहिए । उनमें दीर्घायु, मध्यमायु तथा अल्पायु ये तीन भेद कहे गये हैं ॥५९॥

त्रिविधायुर्योगद्वयम्

लग्नजन्मपयोः शत्रू निजाष्टमपती यदि ।
समौ वा यदि वा बन्धू स्वल्पमध्यचिरायुषः ॥ ६० ॥
चन्द्रांशेशस्य तद्भूषा नवांशेशोऽथवा रवेः ।
लग्नेशो वापि यद्येवं स्वल्पमध्यचिरायुषः ॥ ६१ ॥

जब जन्मलग्नेश तथा जन्मचन्द्रराशिपति तथा उन दोनों की अपने अष्टमेशों से शत्रुता हो तो अल्पायु होती है । यदि वे दोनों सम हों तो मध्यमायु होती है तथा उन दोनों की आपस में मैत्री होने पर दीर्घायु होती है (यह मैत्री पञ्चधा मैत्री से विचारना चाहिए) ॥६०॥

चन्द्रमा जिस नवांश में हो उससे चौंसठवें नवांश का स्वामी ग्रह यदि चन्द्रनवांशेश का शत्रु हो तो अल्पायु, सम हो तो मध्यमायु तथा मित्र हो तो दीर्घायु होती है ॥६१॥

यहाँ शत्रु शब्द से अतिशत्रु तथा मित्र से अतिमित्र का भी ग्रहण करें । इनके कारण फल में तारतम्य का भी विचार करें । यथा अतिशत्रु होने पर अल्पायु में भी कुछ कमी होगी तथा अतिमित्र होने पर दीर्घायु में कुछ वृद्धि होगी ।

आयुर्दैर्घ्यकरा गुणाः

अथ केचन लिख्यन्तेऽत्रायुर्दैर्घ्यकरा गुणाः ।
बलवत्वं विलग्नेन्द्वोः शुभयोगः शुभेक्षणम् ॥ ६२ ॥
केन्द्रत्रिकोणरन्ध्रार्थेष्वनयोः शुभसंस्थितिः ।
त्रिषडायेष्वसद्वासो विशेषेण गुरूदयः ॥ ६३ ॥
गुरुचन्द्रमसोर्योगः केन्द्रलग्नपतेः स्थितिः ।
जन्मेशसंस्थितिश्चात्र बलवत्वं तयोर्द्वयोः ॥ ६४ ॥
अनयोरायसंस्थानमायुर्दैर्घ्यकरा गुणाः ॥ ६५ ॥

अब इन श्लोकों में आयु बढ़ाने वाले गुण लिखे जो रहें हैं—(१) प्रश्नलग्न या जन्मलग्न तथा प्रश्नचन्द्र या जन्मचन्द्र का बली होना, (२) इन पर शुभग्रहों की दृष्टि, (३) इनकी ग्रहों से युति, (४) इनके स्वामियों के साथ शुभ युति, (५) इनके स्वामियों पर शुभ दृष्टि, (६) इनके स्वामियों की केन्द्रत्रिकोण, द्वितीय तथा अष्टम भावों में स्थिति,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(७) केन्द्रत्रिकोण तथा २-८ भावों में शुभ ग्रहों की स्थिति, (८) ३-६-११ भावों में पापग्रहों की स्थिति, (९) लग्न या विशेषकर चन्द्र के साथ गुरु की स्थिति, (१०) गुरु-चन्द्र की युति या केन्द्र योग, (११) लग्नेश की केन्द्र में स्थिति, (१२) चन्द्रराशीश की केन्द्रस्थिति, (१३)लग्नेश का बली होना तथा (१४) जन्मचन्द्रराशीश का बली होना, (१५) इन दोनों (लग्नेश तथा चन्द्रश का) का ग्यारहवें भाव में बैठना—ये आयु को बढ़ाने वाले गुण हैं ॥६२-६५॥

आयु:क्षयकरा दोषा:

आयुषोऽल्पत्वदा दोषा विलिख्यन्तेऽत्र केचन ।
बलहानिर्विलग्नेन्द्वोः पापदृष्टिसमन्वयौ ॥ ६६॥
लग्नजन्मेशयोर्मौढ्यं स्थितिश्चारिव्ययाष्टमे ।
अनयोरपि दौर्बल्यं परिवेषोपरागयोः॥ ६७॥
सन्ध्यायां दिक्प्रदाहादि दुर्निमित्तेषु वा जनिः ।
राशीनां मृत्युभागेषु सन्धिष्वपि तथा जनिः ॥ ६८॥
पीनं धनं खरः क्रूरो मन्त्ररत्नं वनं गिरौ।
दिव्यनारीवरा नित्यं मृत्युभागा अजादिषु ॥ ६९॥
मृत्युभागस्थचन्द्रस्य स्थितिः केन्द्रेषु वाष्टमे ।
केन्द्रायुर्मृत्युभागस्थविधोश्चासत्समन्वयः ॥ ७०॥
चन्द्रो रम्यो लयो मित्रे भूरिकार्यं चिरं भयम् ।
गोपमात्रे मनोरम्यं मृत्युभागा विधोरजात् ॥ ७१॥
ग्रहदृष्टस्य चन्द्रस्य स्थितिरष्टमषष्ठयोः ।
शुभानां वक्रिभिः पापैर्दृष्टानां चात्र संस्थितिः॥ ७२॥
केन्द्रत्रिकोणरन्ध्रेषु तथैवाशुभसंस्थितिः।
आयुरल्पत्वदा दोषा इति केचित्प्रकीर्तिताः॥ ७३॥

अब इन आठ श्लोकों में आयु को अल्प करने वाले कुछ दोषों का निर्देश किया गया है—

(१) जन्म-प्रश्नलग्न तथा चन्द्र की बलहीनता, (२) लग्न तथा चन्द्र पर पाप ग्रहों की दृष्टि, (३) लग्न में तथा चन्द्र के साथ पाप युति, (४) लग्नेश तथा जन्मचन्द्रेश की मूढ़ता (अस्तंगत) होना, (५) लग्नेश तथा चन्द्रेश की ६-८-१२ भावों में स्थिति, (६) लग्नेश तथा जन्मचन्द्रेश का दौर्बल्य, (७) सन्ध्या काल में सूर्य-चन्द्र का दिग्दाह दिखाई पड़ना, (८) जन्म के समय अशुभ शकुन होना, (९) राशियों के मृत्युकारक अंशों में जन्म होना, (१०) राशिसन्धि में जन्म होना अर्थात् गण्डान्त में जन्म होना, (११) चन्द्रमा का अपने मृत्युकारक अंशों में स्थित होकर केन्द्र या अष्टम भाव में बैठना, (१२) मृत्युकारक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अंशों में चन्द्रमा की पापग्रहों के साथ स्थिति, (१३) पापग्रह से दृष्ट चन्द्रमा ६-८ भाव में बैठा हो, (१४) वक्री पाप ग्रहों के द्वारा दृष्ट शुभ ग्रहों का ६-८ भावों में बैठना और (१५) केन्द्र, त्रिकोण तथा अष्टम भाव में पाप ग्रहों का बैठना—ये आयु को क्षीण करने वाले कुछ दोष कहे गये हैं ।

मेषादि लग्नों के मृत्युकारक अंश क्रमशः १, ९, २२, २२, २५, २, ४, २३, १८, २०, २४, १० हैं । इसी तरह चन्द्रमा की मेष आदि बारह राशियों के मृत्यु भाग क्रमशः २६-१२-१३-२५-२४-११-२६-१४-१३-२५-५-१२ हैं ।।६६-७३।।

यहाँ दिये गये ''राशीनां मृत्युभागेषु'' से लेकर ''इति केचित्प्रकीर्तिताः'' तक के श्लोक केरल-निवासी पडुमनाइ चोमाद्रि (पद्मनाभ सोमयाजी) द्वारा रचित ग्रन्थ ''जातकादेशमार्ग'' के तीसरे अध्याय के श्लोक संख्या १२ से लेकर १६वें श्लोक तक दिये गये हैं ।

वक्तव्य—लग्न के मृत्युभागों की टीका में इस ग्रंथ के अंग्रेजी तथा हिन्दी टीका- कारों ने मेष राशि के लिए १ अंश लिखा है जबकि यहाँ ''जातकादेशमार्ग'' ग्रन्थ में ८ है । इसका कारण है वहाँ 'हीनं' पाठ है जबकि प्रश्नमार्ग में 'पीनं' पाठ है अतः ''कटपयादि पद्धति'' से इसका अर्थ १ का अंक ही होगा । कर्क राशि के लिए एक हिन्दी टीकाकार ने २१ तथा अंग्रेजी टीकाकार ने २३ का अंक दिया है । मुझे लगता है कि यह मुद्रण की त्रुटि है, क्योंकि ''क्रूरो'' शब्द में 'क्र' तथा 'र' वर्ण है, क्र के अन्त में उच्चारण 'र' का है अतः इसका अर्थ २२ की संख्या है, न २१ है और न २३ है ।

गुणदोषानां प्रभावकथनम्

दीर्घायुषो गुणेषु स्युः सत्सु दोषेष्वनायुषः ।
काल्प्यमायुर्विमिश्रेषु तेषामल्पाधिकत्वतः ।।७४।।

गुणों की अधिकता से दीर्घायु तथा गुणाल्पता से अल्पायु होती है । गुण-दोषों के मिश्रण की न्यूनाधिकता के अनुसार ही आयु का निर्णय करना चाहिए ।।७४।।

उपसंहारः

एवं प्रश्नवशाच्च जातकवशात् कृत्वायुषो निर्णयं
निर्णीते मरणेऽस्य रोगसमयौ वाच्यावथो रोगिणाम् ।
निर्णीतं यदि जीवितं तु शमनारम्भादिकं वा रुजां
सन्दिग्धं यदि तद्द्वयं तदुचितं ब्रूयात्सुधीर्लक्षणम् ।।७५।।

।। इति प्रश्नमार्गे नवमोऽध्यायः ।।

—*—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार से प्रश्नशास्त्र तथा जातकशास्त्र दोनों के आधार पर आयु का निर्णय करके रोगियों की मृत्यु का समय निर्धारित करना चाहिए, रोग की अवधि का निर्णय तथा जीवित रहने की संभावना का वर्णन करना चाहिए। रोग शमन होगा या नहीं यह भी बताना चाहिए या पुन: रोग प्रारंभ होगा यह भी विचार करना चाहिए। यदि मिश्रत योगों के कारण सन्दिग्ध स्थिति हो तो सोच-समझकर उचित उत्तर बुद्धिमत्तापूर्वक देना चाहिए ।।७५।।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय'
हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का नौवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।९।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ दशमोऽध्यायः

अथ मरणकालश्चिन्त्यते

प्रश्नेनापि च जातकेन च मृतेश्चिन्त्यं हि कालादिकं
तत्र प्राक्समयो गदश्च जनुषा देशश्च सञ्चिन्त्यते।
कार्यं कालविचिन्तनं खलु मृतेर्योगैर्दशान्तर्दशा
मन्दाचार्यदिनेशशीतकिरणस्थानैर्विलग्नेन च ।। १।।

प्रश्नशास्त्र एवं जातकशास्त्र इन दोनों से मृत्युसमय का विचार करना चाहिए। सर्वप्रथम रोग की अवधि, मृत्यु का समय तथा मृत्यु किस स्थान पर होगी इसका विचार करना चाहिए। इसके लिए योगों, दशाओं, अन्तर्दशाओं, शनि, गुरु, सूर्य, चन्द्र लग्न इनकी स्थिति से मृत्युकाल का विचार करें ।।१।।

दशायोगयोस्तारतम्यकथनम्

योगेषु सत्सु योगोक्तवत्सरान्ते मृतिर्भवेत्।
दशापेक्षान्विते योगे तत्संवादोऽपि चिन्त्यताम् ।। २।।

योगों की विद्यमानता में योगोक्त वर्षों में मृत्यु होती है। दशापेक्षी योगों की विद्यमानता में दशा एवं योगों के फल में संवाद (समन्वय) स्थापित करना चाहिए ।।२।।

दशापहारादिकथनम्

दशापहारचारेषु ग्रहाणां दोषदायिषु ।
मरणं निर्दिशेन्नृणां योगाभावे त्वयं विधिः ।। ३।।

यदि कुण्डली में कोई योग न हो तो उनके अभाव में ग्रहों के दोषप्रद दशापहार तथा गोचर संचार से भी मृत्युकाल कहना चाहिए ।।३।।

अथ दोषदा दशापहारा उच्यन्ते

लग्नाद्वा यदि जन्मतो मृतिपती मृत्युस्थतद्वीक्षकौ,
मन्दः क्रूरदृगाणपो गुलिकपस्तैर्युक्तराश्यंशपः ।
राहुश्चैषु सुदुर्बलो जनुषि यो भावेनभीष्टे स्थितः
पापालोकितसंयुतोऽस्य हि दशा वान्तर्दशा मृत्युदा ।। ४।।

अब इस श्लोक में "दशापहार" का कथन करते हैं। वे ग्रह तथा राश्यादि तत्त्व जो अपनी दशा में जातक के प्राणों का अपहरण कर लेते हैं, "दशापहार" या "दशापहारक" कहे जाते हैं—"ये स्वदशान्तर्दशायां जातकस्य प्राणमपहरन्ति ते दशापहारकाः भवन्ति"। दशापहार कौन-कौन से होते हैं यह नीचे बताते हैं—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) जन्मलग्न या जन्मकालीन चन्द्रराशि से आठवें भाव का स्वामी अष्टम में ही बैठा हो अथवा वह जन्मलग्न तथा जन्मराशि को देखता हो तो इन दोनों की (जन्मलग्नेश या चन्द्रेश तथा अष्टमेश) की दशान्तर्दशा मृत्युदायक होती है । (२) शनि, लग्न से बाईसवें द्रेष्काण को खर द्रेष्काण कहते हैं उसका स्वामी, गुलिक स्थित राशि का स्वामी ये दशापहारक होते हैं । (३) इन तीनों की नवांश राशियाँ तथा उनके स्वामी भी दशापहारक होते हैं । (४) राहु भी दशापहारक होता है । इस प्रकार इनकी संख्या तेरह के लगभग होती है । इनमें से दुर्बल होकर जो भी दु:स्थान में स्थित हो वह दशापहारक होता है । इनकी दशान्तर्दशा मृत्युप्रद होती है ।।४।।

दशापहारसूचक चक्र

	दशापहारका:
१	चन्द्र से अष्टम भाव का स्वामी
२	लग्न से अष्टम भाव का स्वामी
३	चन्द्र से अष्टम में स्थित ग्रह
४	लग्न से अष्टम में स्थित ग्रह
५	चन्द्र से अष्टम स्थान का द्रष्टा ग्रह
६	लग्न से अष्टम भाव का द्रष्टा ग्रह
७	चन्द्र से बाईसवें (खर) द्रेष्काण का स्वामी ग्रह
८	लग्न से बाईसवें द्रेष्काण का स्वामी ग्रह
९	दशापहारक ग्रहों की अधिष्ठित राशियों के स्वामी
१०	दशापहारक ग्रहों के नवांशों के स्वामी ग्रह
११	शनिपुत्र गुलिक अधिष्ठित राशि का स्वामी
१२	कालपुरुष का दु:ख मृत्यु का स्थिरकारक शनि
१३	आकस्मिक दुर्घटनाओं का कारक राहु

पापानां दशावसतिरशुभा

पापानां चेद्दशायामपहृतिरसतां चिन्तनीयोऽत्र मृत्यु-
र्गोमासर्क्षेश्वराणामपि निजजनिभाद्दोषद: पाककाल: ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्वित्रादीनां दशानां युगपदवसितिर्यत्र कालः स कष्टः
सर्वासाञ्च दशानामवसितिरशुभा दोषदानां विशेषात् ।। ५।।

यदि पाप ग्रहों की महादशा में पाप ग्रहों की अन्तर्दशा हो तो मृत्यु हो सकती है। यदि जन्मनक्षत्र से गो, (३) मा (५) तथा स (७) इन नक्षत्रों के स्वामियों की दशा हो तो उनका पाककाल (अन्तर्दशा) कष्टप्रद होता है ।

यदि विंशोत्तरी, योगिनी, कालचक्र दशा, अष्टोत्तरी तथा चरराशि दशा आदि में से दो या तीन दशाओं के अनुसार समय बुरा हो अथवा एकाधिक दशाओं का अवसान एक ही साथ हो तो यह अशुभ होता है। सभी दशाएँ अपने अवसान (समाप्ति) पर अशुभ फल देती हैं। विशेष रूप से दोष युक्त ग्रहों की दशाओं का अवसान काल अधिक अशुभ होता है ।।५।।

इस श्लोक में दिये गये गोमास शब्द का अर्थ कटपयादि रीति से ग=३, म=५ तथा स=७ होता है ।

अष्टमेशस्य दुष्टता

दोषो रन्ध्राधिपत्यादिजातः सर्वदशासमः।
दशासूड्भवास्वेव गोमासर्क्षाधिपत्यजः ।। ६ ।।

अष्टमेशत्व दोष, अष्टमस्थ दोष, अष्टमेशाधिष्ठित राशिस्वामी दोष—ये सभी दशाएँ समान रूप से अशुभ फल देती हैं। परन्तु विपत्तारा, प्रत्यरितारा तथा वधताराओं के दोषों को केवल नक्षत्रदशाओं (विंशोत्तरी, अष्टोत्तरी, पंचोत्तरी, योगिनी आदि) में ही मानना चाहिए ।।६।।

जैमिनिसूत्र तथा बृहत्पाराशरहोराशास्त्र में अनेक प्रकार की दशाओं का वर्णन है।

नीचस्थमूढानां दशाऽशुभत्वम्

दशा नीचस्थमूढानां नियमेन मृतिप्रदा।
कालचक्रदशायास्तु विशेषोऽथ निगद्यते ।। ७।।

जो ग्रह नीच राशियों में स्थित हों उनकी तथा अस्तंगत ग्रहों की दशा निश्चित ही मृत्युप्रद होती है। अब आगे कालचक्र दशा को विशेष रूप से वर्णित करते हैं ।।७।।

अथ कालचक्रदशा

मीनाद्वृश्चिकभं व्रजेद्यदि तदा षष्ठादथो कर्कटं
सिंहाद्वा मिथुनं ततोऽपि हरिभं चापाच्च मेषन्तथा।
कष्टा स्यादिह तत्प्रवेशसमयः कष्टा दशा चोत्तरा,
चारो राश्यनतिक्रमेण शुभदो राश्यन्तरस्थोऽशुभः।। ८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्र दशा में ग्रहों की दशा न होकर राशियों की दशा होती है । इसका क्रम भी विचित्र है अतः जब कभी मीन से वृश्चिक राशि की दशा आती है या कन्या के उपरान्त कर्क की दशा आती है या सिंह से मिथुन की या मिथुन से सिंह की दशा आती है, धनु से मेष की दशा आती है तो इन दशाओं का प्रवेश काल कष्टकारी होता है । इसी प्रकार इन दशाओं का समाप्ति काल भी कष्टप्रद होता है ।

परन्तु कालचक्र दशा मे जब राशिक्रम का अतिक्रमण न करते हुए अनुलोम (मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वुश्चिक, धनु, मकर, कुंभ, मीन—यह अनुलोम क्रम है) या प्रतिलोम क्रम (मीन, कुंभ, मकर, धनु, वृश्चिक, तुला आदि यह प्रतिलोम क्रम है) से जब दशा का संचार होता है तो दशाफल शुभ होता है ।।८।।

तात्पर्य यह है कि सीधे या उल्टे क्रम की कोई भी दशा हो परन्तु यदि उसमें बीच की राशि छूटती नहीं है तो ऐसे क्रम की दशा शुभ होती है ।

सव्यापसव्यनक्षत्रकथनम्

देहो दक्षिणतारासु वाक्योक्तेष्वादिमं गृहम् ।
जीवः स्यादन्तिमो राशिर्विपरीतं हि वामभे ।। ९।।

केरल के ज्योतिषियों में प्रचलित परंपरागत सूत्रों का वाक्य कहते हैं; उनके अनुसार दक्षिण नक्षत्रों (सव्यमार्गी नक्षत्रों) में प्रथम राशि देह तथा अन्तिम राशि जीव होती है । इसके विपरीत वाम नक्षत्रों (अपसव्यमार्गी नक्षत्रों) में प्रथम राशि जीव तथा अन्तिम राशि देह होती है ।।९।।

आचार्य मन्त्रेश्वर ने स्वरचित ग्रन्थ फलदीपिका के बाईसवें अध्याय (मिश्रदशाध्याय) में सर्वप्रथम कालचक्र दशा का ही वर्णन किया है । तदनुसार आगे चक्र में कालचक्र दशा की राशियाँ तथा वर्षादि का चक्र लिखा जा रहा है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा सव्य (दक्षिण) मार्ग

नक्षत्र	चरण	देहाधिप	दशा की राशियाँ, उनके वर्ष तथा क्रम संचार									सर्वायु वर्ष	जीवाधिप	अंश
अश्वि., पुन., हस्त, मूल, पू. भा.	१	मंगल	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	कर्क २१	सिंह ५	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	धनु १०	१००	गुरु	मेष
	२	शनि	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	कर्क २१	सिंह ५	मिथुन ९	८५	बुध	वृष
	३	शुक्र	वृष १६	मेष ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	८३	बुध	मिथुन
	४	चंद्र	कर्क २१	सिंह ५	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	धनु १०	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	८६	गुरु	कर्क
भरणी, पुष्य, चित्रा, पू.षा., उ.भा.	१	मंगल	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	कर्क २१	सिंह ५	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	मीन १०	१००	गुरु	सिंह
	२	शनि	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	कर्क २१	सिंह ५	कन्या ९	८५	बुध	कन्या
	३	शुक्र	तुला १६	वृश्चिक ७	धनु १०	मकर ५	कुंभ ४	मीन १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	८३	बुध	तुला
	४	चन्द्र	कर्क २१	सिंह ५	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	८६	गुरु	वृश्चिक
कृत्तिका, श्लेषा, स्वाति, उ.षा., रेवती	१	मंगल	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	कर्क २१	सिंह ५	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	धनु १०	१००	गुरु	धनु
	२	शनि	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	कर्क २१	सिंह ५	मिथुन ९	८५	बुध	मकर
	३	शुक्र	वृष १६	मेष ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	८३	बुध	कुंभ
	४	चन्द्र	कर्क २१	सिंह ५	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	धनु १०	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	८६	गुरु	मीन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा अपसव्य (वाम) मार्ग

नक्षत्र	चरण	जीवाधिप	दशा की राशियाँ, उनके वर्ष तथा संचार क्रम									सर्वायु वर्ष	देहाधिप	अंश
रोहिणी, मघा, विशाखा, श्रवण	१	गुरु	धनु १०	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	सिंह ५	कर्क २१	८६	चन्द्र	वृश्चिक
	२	बुध	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	वृश्चिक ७	तुला १६	८३	शुक्र	तुला
	३	बुध	कन्या ९	सिंह ५	कर्क २१	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	धनु १०	मकर ४	कुम्भ ४	८५	शनि	कन्या
	४	गुरु	मीन १०	मेष ७	वृष १६	मिथुन ९	सिंह ५	कर्क २१	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	१००	मंगल	सिंह
मृग., पू.फा., अनु., धनिष्ठा	१	गुरु	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	सिंह ५	कर्क २१	८६	चंद्र	कर्क
	२	बुध	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	धनु १०	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	मेष ७	वृष १६	८३	शुक्र	मिथुन
	३	बुध	मिथुन ९	सिंह ५	कर्क २१	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	८५	शनि	वृष
	४	गुरु	धनु १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	सिंह ५	कर्क २१	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	१००	मंगल	मेष
आर्द्रा, उ.फा., ज्येष्ठा, शतभिषा	१	गुरु	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	धनु १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	सिंह ५	कर्क २१	८६	चन्द्र	मीन
	२	बुध	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	धनु १०	मकर ४	कुंभ ४	मीन १०	मेष ७	वृष १६	८३	शुक्र	कुंभ
	३	बुध	मिथुन ९	सिंह ५	कर्क २१	कन्या ९	तुला १६	वृश्चिक ७	मीन १०	कुंभ ४	मकर ४	८५	शनि	मकर
	४	गुरु	धनु १०	वृश्चिक ७	तुला १६	कन्या ९	सिंह ५	कर्क २१	मिथुन ९	वृष १६	मेष ७	१००	मंगल	धनु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बृहज्जातकोक्त ग्रहों की जीवराशि तथा देहराशियों में स्थिति का फल

भानुः करोति विविधापदमर्थनाश-
मार्तिज्वरारिजनभीतिपदच्युतिञ्च ।
पित्तार्त्तिगुल्मग्रहणीक्षयकर्णरोगं
पश्चादिबन्धुमरणं सहजादिनाशम् ॥१॥
चन्द्रः स्वबन्धुजनसङ्गमकन्यकाप्ति-
मारोग्यभूषणसुखाम्बरराज्यपूज्यम् ।
दानक्रियादिसुरभूसुरपुण्यतीर्थ-
स्नानार्चनं मृदुसुखान्नसुखं करोति ॥२॥
भौमः करोति तनुतापरुगग्निचोर-
भीतिं स्वबन्धुकलहं सहजादिनाशम् ।
क्षेत्रार्थनाशपदविच्युतियुद्धनीतिं
गुल्मार्शकुष्ठविषशत्रुभयं कुमित्रम् ॥३॥
सौम्यः करोति सुहृदाप्तिमहत्प्रसाद-
विज्ञानशीलनिगमागमशास्त्रबोधम् ।
स्त्रीपुत्रदारनृपभूषणगोगजाश्व-
लाभं विवेकधनबुद्धियशोऽभिवृद्धिम् ॥४॥
जीवः करोति विविधार्थसुखं महत्त्वं
राज्याभिषेकमवनिप्रभुपूजनाद्यम् ।
स्त्रीपुत्रलाभसुखभूषणभोजनार्थ-
मारोग्यकीर्तिविजयञ्च परोपकारम् ॥५॥
शुक्रः करोति रतिलाभसुखाङ्गनादि-
चित्राम्बरार्थपशुवाहनरत्नलाभम् ।
गानक्रियानटनगोष्ठिमहत्प्रतापं
सत्कीर्तिदानविभवं सुजनैः समाजम् ॥६॥
मन्दः करोति कलहं तनुकृच्छ्रमृत्यु-
बन्ध्वग्निमार्तिरिपुभूतभयं विषार्तिम् ।
मानार्थहानिमभिमानकलत्रपुत्र-
नाशं गृहार्थकृषिवाणिजगोविनाशम् ॥७॥
राहौ देहेऽरिपीडाऽऽत्मबन्धुकष्टपरिभ्रमन् ।
पक्षाघातादिपीडाञ्च राजनीतिं वदेन्नृणाम् ॥८॥
केतौ चौराग्निपीडादिरक्तस्रावादिपीडनम् ।
दारिद्र्यं बन्धुनाशं च स्थाननाशं धनक्षयम् ॥९॥

वाक्य—श्लोक ९ में वाक्योक्त शब्द का प्रयोग है, नीचे श्री वैद्यनाथ दीक्षित के जातकपारिजात से वाक्य उद्धृत किये जा रहे हैं—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सव्यचक्रवाक्यानि

पौरङ्गावो मता सहोधी ॥१॥	नक्षत्रदासी चर्वणग: ॥२॥
रूपोत्रक्षुर्निधारयङ्गम् ॥३॥	वाणीचस्थन्दधिनक्षत्रम् ॥४॥
हंसश्च वशाम्बरपत्रम् ॥५॥	क्षुत्राधिकरगोभी मा च ॥६॥
सुदधिनक्षत्रज: सित: ॥७॥	वामाङ्गारकोत्रक्षुनिधि: ॥८॥

अपसव्यवाक्यानि

धनक्षेत्रपराङ्गमिव ॥१॥	तासादत्रक्षुर्निधर्दासा ॥२॥
चर्मी भोगीरायधनर्क्षम् ॥३॥	त्रयोरागीमाभेतासह ॥४॥
त्रक्षुनिधिर्दास्तमेव ॥५॥	गिरायुर्धनक्षत्रपर: ॥६॥
गोमावाची सदात्रिक्षुन्ने ॥७॥	धीज: सितोमिवाङ्गारिका ॥८॥

इन सोलह सूत्रों में कालचक्र दशा की राशियों का क्रम वर्णित हैं।

गणना-विधि—सर्वप्रथम जन्मनक्षत्र ज्ञात करें, फिर उसका चरण ज्ञात करें। नक्षत्र के चरण का भोग ज्ञात करें। पूरे नक्षत्र का जो सर्वर्क्ष (भभोग) होता है उसका एक चौथाई एक चरण का मान होता है। अस्तु, नक्षत्रचरण के कुल मान के तुल्य पूर्णायु दशा वर्ष होते हैं। अब पीछे दी गयी सारिणी में देखें कि जन्मनक्षत्र सव्य है या अपसव्य। नक्षत्र- चरण का कुल मान पलात्मक बना लें। इसी प्रकार नक्षत्रचरण के जितने घटी-पल जन्म- समय तक बीत गये हैं वह भी ज्ञात कर लें। उसके पल बना लें, फिर चरण के भुक्त के पलों से दशावर्षों का गुणा कर चरण के कुल मान से भाग दें। लब्धि में भुक्त वर्ष प्राप्त होंगे। शेष को १२ से गुणा कर पुन: चरण मान के पलों से भाग देने पर लब्ध मास होंगे। फिर शेष को ३० से गुणा कर पुन: चरण के पलों से भाग देने पर दिन ज्ञात होते हैं। पूर्णायुवर्षो में भुक्त वर्षादि घटा दें तो भोग्य वर्षादि ज्ञात होंगे।

मान लीजिये—जन्मनक्षत्र अश्विनी है। इसका भयात ३७ घटी ३० पल तथा भभोग ६० घटी है। अश्विनी सव्य (दक्षिण) नक्षत्र है। इसके भयात ३७ घटी ३० पल से ज्ञात हुआ कि तीसरे चरण का जन्म है, चरण भुक्त ७ घटी ३० पल है तथा चरण भोग १५ घटी है। पीछे कालचक्र दशा सव्य मार्ग की सारिणी में अश्विनी नक्षत्र के तृतीय चरण के सामने दशा के सर्वायु वर्ष (पूर्णायु वर्ष) ८३ हैं। इसका देहाधिप शुक्र तथाा जीवाधिप बुध है। चरण भुक्त ७ घटी ३० पल के पल बनायें तो ४५० पल हुए। इसी प्रकार चरण भोग १५ घटी के ९०० पल हुए। अब ४५० चरण भुक्त के पल में दशा के वर्ष ८३ से गुणा कर ९०० पल का भाग दिया तो $\frac{४५०\times८३}{९००}$ तो ४१ वर्ष ६ माह भुक्त प्राप्त हुए। इनको पूर्णायु वर्ष ८३ में घटानें पर ४१ वर्ष ६ माह भोग्य शेष रहे। अब सारिणी में देखा तो अश्विनी तृतीय चरण के सामने वृष के १६ वर्ष+मेष के ७ वर्ष+कुंभ ४ वर्ष+मकर ४ वर्ष=कुल ४१ वर्ष हुए। आगे धनु के १० वर्ष हैं, उनमें ० वर्ष छह माह भुक्त हुए तो कुल भुक्त ४१ वर्ष ६ माह हुए। अब धनु के ९ वर्ष ६ माह शेष (भोग्य)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हैं । इसके आगे धनु+८ वर्ष ६ माह +मेष ७ वर्ष+वृष १६ वर्ष+मिथुन ९ वर्ष=४१ वर्ष ६ मास हुए । इसके आगे अश्विनी के चौथे चरण की दशा की राशियों के वर्ष तब तक लिखते रहें जब तक लगभग ८३ वर्ष हो जायें । चन्द्रस्पष्ट के राशि-अंश-कला पर से सारिणियों द्वारा भोग्य वर्षादि की सरलतम विधि अध्याय १६ के अन्त में देखें ।

देहजीवयोगफलम्

देहजीवेशयोरेकस्यासद्योगो गदप्रदः ।
द्वयोस्सह स चेन्मृत्युर्दशा चेदशुभा दृढम् ।। १० ।।

यदि पाप ग्रहों की युति-दृष्टि का प्रभाव देहराशि या जीवराशि पर अथवा देहाधिप या जीवाधिप पर हो तो रोगोत्पादक है । यदि दोनों एक साथ पापपीड़ित हैं तथा कालचक्रदशा में उनमें से किसी की दशा आवे तो उस काल में मृत्यु होती है ॥१०॥

निर्याण शनि

परागपर्ययेष्वार्कैरल्पमध्यचिरायुषाम् ।
मरणं निर्दिशेन्नृणां चतुर्थेऽपि चिरायुषाम्।। ११ ।।

शनि ग्रह की प्रथम साढ़े साती में अल्पायु जातक की द्वितीय साढ़े साती में, मध्यमायु जातक की तृतीय साढ़े साती पूर्ण होने पर दीर्घायु की तथा चौथी में अमितायु की भी मृत्यु हो जाती है ॥११॥

गुलिकेन मरणकालज्ञानम्

मान्दित्रिकोणगे मन्दे मरणं रात्रिजन्मनाम् ।
दिनभेह भुवामस्तत्रिकोणस्थेऽस्य भांशयोः ।। १२ ।।

जब गुलिक स्थित राशि या उसकी नवांश स्थित राशि के त्रिकोण में शनि आता है तो उनका जन्म रात्रि मे या स्त्री-राशियो में होता हैं उन जातकों की मृत्यु होती है । दिन में उत्पन्न या पुरुष-राशि मे उत्पन्न जातकों की सप्तम में या सप्तम के त्रिकोण में शनि आने पर मृत्यु होती है ॥१२॥

मन्दस्य गोचरे मरणम्

मन्दरन्ध्रेशयोरंशराश्योर्वार्की त्रिकोणगे ।
अर्कारूढगृहस्यार्थरिःफयोर्वा त्रिकोणगे ।। १३ ।।
द्वात्रिंशत्र्यंशपो यस्मिन् भवने जन्मनि स्थितः ।
तत्त्रिकोणगते वार्कौ निर्दिष्टं मरणं नृणाम् ।। १४ ।।

जब शनि के नवांश की राशि से त्रिकोण में शनि हो अथवा अष्टमेश के नवांश राशि से त्रिकोण में गोचर का शनि हो तब मृत्यु होती है । सूर्याधिष्ठित राशि से दूसरे, बारहवें, नौवें या पाँचवें में शनि हो तो मृत्यु कहनी चाहिए ॥१३-१४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जीवस्य मृत्युकारकगोचरकथनम्

लग्नत्र्यंशेश्वराक्रान्तराशेर्जीवे त्रिकोणगे ।
कालहोरेश्वराक्रान्तराशेर्वा मरणं नृणाम् ।। १५।।
यो राशिः सूर्यजाक्रान्तस्तद्धनस्य व्ययस्य वा ।
बृहस्पतिस्त्रिकोणस्थो मरणाय भवेन्नृणाम् ।। १६।।

लग्न का त्र्यंशेश्वर (द्रेष्काणेश) जिस राशि में बैठा हो उस राशि के त्रिकोण में गोचर वश गुरु होने पर अथवा जन्म के काल होरा का स्वामी जिस राशि में हो उससे त्रिकोण में गुरु होने पर मनुष्यों की मृत्यु हो जाती है ।।१५।।

जिस राशि पर शनि की स्थिति है उससे धन या व्यय में जब गोचर का गुरु त्रिकोण में आता है तो मनुष्यों के लिए मृत्युकारक होता है ।।१६।।

पुनश्च गुरुगोचरकथनम्

देहजीवेशयोर्योगराशिगोऽपि बृहस्पतिः ।
पापग्रहाश्च तत्रस्था नृणां मरणदायिनः ।। १७।।
राशेर्मन्दाधिरूढस्य तृतीयायात्मजादिषु ।
यत्र स्वदर्शन नूनं तत्रस्थो मृतिदो गुरुः ।। १८।।

लग्नेश तथा अष्टमेश के स्पष्ट को जोड़िये, योगफल मे जो राश्यादि आवें उन पर जब गोचरभ्रमणवाशात् गुरु आवे तथा पाप ग्रह भी उस स्थान पर हों तो मानवों को मृत्यु-प्रदायक होते हैं ।।१७।।

जिस राशि पर कुण्डली में शनि बैठा हो उससे ३-६-५-११ इन स्थानों पर गुरु की थोड़ी-बहुत दृष्टि हो तो उन स्थानों में जब गोचर का गुरु जाता है तब मृत्यु होती है ।।१८।।

सूर्यगोचरे मरणकथनम्

अष्टमेशाश्रितं राशिमावहत्यहिमत्विषि ।
जन्मतारं विलग्नस्थतारकां वा मृतिर्वदेत् ।। १९।।

अष्टम भाव का स्वामी जन्मकुण्डली में जिस राशि में बैठा हो उस राशि पर गोचर का सूर्य आने पर अथवा जन्मचन्द्र के नक्षत्र या जन्मलग्न के नक्षत्र पर गोचर का सूर्य आवे तो मृत्यु होती है ।।१९।।

अनुष्ठानपद्धतेर्मतम्

आत्मार्कांशकभत्रिकोणसहिते सूर्ये चरस्थः स चेत्
यद्यर्कः स्थिरभेष्टमेशनवभागेशर्क्षकोणस्थिते ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्नेशस्थनवांशराशिसहिते तस्य त्रिकोणेऽथवा,
सूर्ये मृत्युमुशन्ति यद्युभयगः सायं भवेज्जन्मनि ।। २०।।

यदि जन्मकालीन सूर्य चरराशि में हो तब सूर्य के द्वादशांश की राशि से त्रिकोण में गोचर में सूर्य के आने पर मृत्यु होती है । यदि जन्मपत्री में सूर्य स्थिरराशि में हो तथा अष्टमेश के नवांशेश स्थित राशि से त्रिकोण में गोचर भ्रमण का सूर्य पहुँचने पर मृत्यु होती है । यदि जनन समय द्विस्वभाव राशि का सूर्य हो तो लग्नेश स्थित नवांश की राशि में अथवा उससे त्रिकोण में गोचर का सूर्य मृत्युकारक होता है ।।२०।।

चन्द्रगोचरे मरणम्

सूर्याश्रितर्क्षगे चन्द्रे रन्ध्रेशाश्रितवेश्मनः ।
त्रिकोणोपगते वेन्दौ राह्वारूढोडुनस्तथा।। २१।।
रन्ध्रेशाधिष्ठितोडौ वा निर्दिष्टं मरणं नृणाम् ।। २२।।
धनेशाश्रितराशेर्वा तस्य सप्तमभस्य वा ।
त्रिकोणस्थे धनेशांशराशिगे वा विधौ मृतिः ।। २३।।
निजजन्मनि यस्मिन्भे गुलिकस्तत्रगे विधौ ।
रोगारम्भस्तदस्तस्थे मरणं दृढमादिशेत् ।। २४।।

जन्मकुण्डली में सूर्य जिस राशि में स्थित हो उसमें या फिर अष्टमेश जिस राशि में बैठा हो उस राशि से त्रिकोण में या राहु-अधिष्ठित नक्षत्र से त्रिकोण के नक्षत्र में अथवा अष्टमेशाधिष्ठित नक्षत्र में मनुष्यों की मृत्यु होती है ।।२१-२२।।

द्वितीयेश जिस राशि में बैठा हो उससे या उसकी सप्तम राशि से त्रिकोण में चन्द्रमा होने पर मृत्यु होती है । अथवा द्वितीयेश के नवांशस्वामी की राशि में चन्द्रमा का भ्रमण होने पर मृत्यु होती है ।।२३।।

जन्मकाल में गुलिक जिस राशि में स्थित हो उस राशि में चन्द्रमा के पहुँचने पर रोग प्रारंभ होता है और उससे सातवीं राशि में चन्द्र का गोचर भ्रमण होने पर सुनिश्चित ही मृत्यु कहना चाहिए ।।२४।।

प्रमाणगुलिकेन मृत्युविचारः

प्रमाणगुलिकानीतिस्तद्वशान्मन्दजीवयोः ।
सूयेन्द्वोश्च स्थितिर्मृत्यौ शास्त्रोक्ताथ निगद्यते ।। २५।।

प्रमाण गुलिक का साधन करें और उसके अनुसार शनि-गुरु, सूर्य-चन्द्रमा इनकी स्थितिवशात् ग्रन्थों में जो कहा गया है उसे अब आगे कहते हैं ।।२५।।

प्रमाणगुलिकानयनम्

जातस्याह्नि स षड्गृहो गतनिशा मान्दिः प्रमाणाह्वयो
रात्रौ प्राग्दिनमान्दिरेव न परं तद्राशिनाथालये।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मान्दोऽमुष्य नवांशपाश्रितगृहे मृत्युप्रदायी गुरु-
र्भानुर्द्वादशभागपाश्रितगृहे त्रिंशांशपर्क्षे शशी ।। २६।।

पूर्व में जो गुलिकस्पष्ट की विधि बताई है (अध्याय ५ श्लोक १४-१५-१६) उसके अनुसार गुलिक स्पष्ट कर उसमें छः राशि जोड़ने से "प्रमाणगुलिक" स्पष्ट होता है। रात्रि में जन्मे जातकों का यह प्रमाण गुलिक "प्राग्दिनगुलिक" होता है। इसी प्रकार दिन में जन्मे जातकों का प्रमाण गुलिक "विगतनिशागुलिक" होता है। इस प्रमाणगुलिक की राशि में शनि मृत्युदायक (गोचर में आने पर) होता है। प्रमाणगुलिक के नवांशेश की राशि में गुरु, द्वादशांशेश की राशि में सूर्य तथा त्रिंशांशेश की राशि में चन्द्रमा भी मृत्युदायक होता है ।।२६।।

प्रमाणगुलिक वास्तव में गुलिकस्पष्ट का सप्तम भाव मात्र ही होता है। गुलिक के सप्तम भाव को प्रमाणगुलिक कहते हैं। जिस प्रकार से राहु से सदैव छः राशि के अन्तर पर केतु हाता है इसी प्रकार गुलिक से छः राशि के अन्तर पर "प्रमाणगुलिक" होता है। यह भी फलित को प्रभावित करता है।

प्रमाणगुलिकेन अरिष्टकथनम्

मन्दजीवाऽर्कचन्द्राणां प्रोक्तेष्वेतेषु राशिषु ।
मृतिदा स्वाष्टवर्गेषु हीनाक्षभवनस्थितिः ।। २७।।

शनि, गुरु, सूर्य तथा चन्द्रमा के अष्टक वर्गो में जिन राशियों में चार रेखाओं से कम हों वे अशुभ होती हैं। इन राशियों में जब गोचर का शनि भ्रमण करेगा तब मृत्यु होगी। गुरु के अष्टक वर्ग में अल्परेखा युक्त राशियों में गुरु का भ्रमण मृत्युकारक होगा। शनि की अल्परेखा वाली राशियों में शनि का गोचर भ्रमण अशुभफलप्रद है। सूर्याष्टक वर्ग में जिन राशियों में रेखाल्पत्व होगा उनमें सूर्य का गोचर भ्रमण अशुभ होता है। इसी प्रकार चन्द्रमा भी अपने अष्टक वर्ग में अल्प रेखा वाली राशियों में संचार करते समय मृत्यु का कारण होता है ।।२७।।

अथ प्रकारान्तरेण मन्दादीनां स्थितिरुच्यते

मन्देनास्य दृगाणरन्ध्रतपनांशेशैर्युतिऽर्के पृथग्
राशिर्योऽस्य तदस्तभस्य यदि वा प्राप्ते त्रिकोणं क्रमात् ।
चन्द्रे तीक्ष्णकरे गुरौ रविसुते योगांशभस्थेषु वा,
मृत्युस्तेष्वथ तैर्निजांशगुणितैः संवाद ईक्षस्विह ।। २८।।

शनि तथा उसकी द्रेष्काण राशि का स्वामी, शनि की नवांश राशि का स्वामी, तथैव शनि की द्वादशांश राशि का स्वामी—इन ग्रहों के स्पष्ट में अलग-अलग सूर्यस्पष्ट को जोड़ने से इनके योगस्फुट ज्ञात होते हैं। इन योगस्फुटों से सप्तम राशि या त्रिकोण राशि में सूर्य-चन्द्र-शनि के संचारित (गोचर भ्रमण) होने पर अथवा शनि, गुरु, सूर्य, चन्द्र के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राशिरहित अंशादि के योग करने पर जो राश्यादि प्राप्त हों उनके तुल्य राशि में या इस योग में स्थित नवांश राशि में इन ग्रहों का गोचर होता है तब मृत्यु होती है । इनमें संवाद (समन्वय) भी स्थापित कर लेना चाहिए ॥२८॥

अथ सर्वग्रहाणां मरणकालस्थितिरुच्यते

द्वेधा न्यस्य विहङ्गमस्फुटमजाद्यातांशसंख्याहते,
तत्रैकत्र कलीकृतादितरतस्तत्रांशकस्योद्यतः।
निघ्नाद्यातकलाभिरानखहृता लिप्ताः समायोजयेत्
तत्रायतगृहे भवेत्स मरणे शुद्धेऽथवा चक्रतः ॥ २९॥

सूर्यादि किसी भी ग्रह को दो स्थानों में रखे, एक स्थान में मेषारंभ बिन्दु से जितने नवांश व्यतीत हो चुके हों उनकी संख्या से व्यतीत राश्यादि का गुणा करें तथा दूसरे स्थान में वर्तमान नवांश की जितनी गत कला हों (अंशों की भी कला बना लें) उनकी संख्या से गुणा करें । फिर दूसरे स्थान पर आनख (खनआ=२००) अर्थात् दो सौ की संख्या से भाग देवें । इस प्रकार की क्रिया करने पर प्रथम स्थान की राश्यादि लब्धि में दूसरे स्थान की कलादि लब्धि को जोड़ दें । इस प्रकार प्राप्त राशि-अंश-कला-विकला पर पूर्वकथित सूर्य-चन्द्र, शनि-गुरु का जब गोचर भ्रमण होता है तब मृत्यु होती है ॥२९॥

उदाहरण—संवत् २०६० वि. भाद्र-शुक्ल अष्टमी दिनांक ३ सितंबर सन् २००३ शनिवार को प्रातः साढ़े पाँच बजे शनि का स्पष्टराश्यादि २।१६°।५३'।११ हैं, राश्यादि २।१६°।४०'।०" तक २३ नवांश बीत चुके हैं अतः इन व्यतीत नवांश के राश्यादि २।१६।४०।० में २३ का गुणा किया तो राश्यादि ५२।२३°।२०" प्राप्त हुए । राशिसंख्या १२ से अधिक होन से उसमें १२ का भाग दिया तो राश्यादि २।२३°।२०' शेष रहे । अब दूसरे स्थान पर राश्यादि २।१६।४० से जो अधिक कलाएँ थीं अर्थात् १३'।११" उनको भी गतनवांश संख्या २३ से गुणा किया तो ३०३' हुई, इसमें २०० से भाग दिया तो कलादि १'।२० प्राप्त हुए, इन्हें प्रथम स्थान के फल राश्यादि ४।२३°।२०'।० में जोड़ दिया तो राश्यादि ४।२३°।२१'।२०" यह शनि का निर्याण स्फुट हुआ । जब इस पर शनि गोचर में जायेगा तब मृत्यु होती है ।

इस गणितीय प्रक्रिया में ज्योतिषियों में मतभेद पाया जाता है ।

अष्टकवर्गेण मृत्युकालज्ञानम्

आत्मारूढादर्थरिस्फत्रिकोणे-
ष्वत्यल्पाक्षे मन्दिरे स्वाष्टवर्गे।
न्यूनालोके चाखिलानां ग्रहाणां
सञ्चारः स्यान्मृत्युदोऽनर्थदो वा ॥ ३०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रह जिस राशि में बैठा हो उससे द्वितीय, द्वादश तथा त्रिकोण में जो राशि हैं अष्टक वर्ग में यदि उनमें रेखाल्पता है तो उन राशियों में जब उस ग्रह का (जिसके अष्टक वर्ग में कम रेखा है) गोचरवश संचार होने पर विपत्तियाँ, कष्ट तथा मृत्यु होती हैं ।।३०।।

अथ मरणलग्नमुच्यते

विलग्नादष्टमो राशिरष्टमेशाश्रितश्च यः ।
लग्नेशांशकराश्योर्यो रन्ध्रराशी इतीह ये ।। ३१।।
चत्वारस्तत्त्रिकोणेषु लग्नगेऽन्यतमे मृतिः ।
यद्वा लग्नांशकर्क्षस्य लग्नेशभवतस्य वा ।। ३२।।
मरणं निर्दिशेन्नृणां चतुर्थभवनोदये ।। ३३।।
द्वित्रिसंवादतः स्पष्टमादेश्यमिति यत्र भे ।
लक्षणानि बहून्यत्र वाच्या मान्दादयः स्फुटम् ।। ३४।।
परस्परं च संवादं मन्दादीनां निरीक्ष्य च ।
पञ्चतासमये तेषां सम्यङ्निश्चिनुयात्स्थितिम् ।। ३५।।

जन्मलग्न से अष्टम राशि, जिस राशि में अष्टमेश बैठा हो वह राशि, लग्ननवांश से अष्टम नवांश राशि, लग्नेश की राशि—इन चारों राशियों या इनकी त्रिकोण राशियों में से एक भी राश्यादि लग्न में हो तो मृत्यु होती है । अथवा लग्न के नवांश की राशि या लग्नेश जिस राशि में बैठा है उससे चौथी राशि लग्न में होने पर मृत्यु होती है ।।३१-३३।।

दो या तीन प्रकार से निर्याण का विचार करें तथा बहुमत से निर्याण राशि का निर्णय करना चाहिए । मृत्युकारक ग्रहों के अनेक योग हैं, मन्दादि ग्रहों के अनेक निर्याण स्फुटों का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है, अतः बहुमत जिस के साथ हो उसके अनुसार विचार करें । मृत्यु के समय का निर्णय करें ।।३४-३५।।

प्रश्नेनापि च वक्तव्यो मृतिकालस्ततो मृतौ ।
मन्दार्यार्कविधुस्थानलग्नादिकमथोच्यते ।। ३६।।

प्रश्नलग्न कुण्डली से भी मृत्युकाल का विचार करें । उसमें शनि, गुरु, चन्द्र तथा लग्न की स्थिति के अनुसार फल कहा जा रहा है ।।३६।।

प्रश्नेन मृत्युकालविचारः

मान्द्यंश राशिगो मन्दो गुरुर्लग्नांशराशिगः ।
आरूढराशिगो भानुर्मान्दिराशिगतः शशी ।। ३७।।
एते मृतिप्रदाः प्रष्टुः संवादश्चेत्परस्परम् ।। ३८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नकालीन गुलिक जिस नवांश में हो यदि उसमें शनि बैठा हो या गोचर भ्रमण वश पहुँचे। इसी प्रकार प्रश्नलग्न के नवांश की राशि में गुरु का गोचर हो, आरूढराशि में सूर्य का गोचर भ्रमण तथा गुलिक राशि में चन्द्र का गोचर भ्रमण मृत्युकारक होता है। इनके फल में समन्वय करना चाहिए ॥३७-३८॥

दूतवाक्यान्मृत्युकालनिर्णयम्

दूतवाक्यान्त्यवर्णोक्तराशिगेऽत्यन्तदोषदे ।
मन्दगुर्वर्कचन्द्रेषु मृतिस्तद्भवनोदये ॥ ३९॥

दूत द्वारा बोले गये वाक्य के अन्तिम वर्ण से राशि का ज्ञान करें, जो राशि प्राप्त हो उस राशि में शनि, गुरु, सूर्य तथा चन्द्र में से कोई अधिक दोषप्रद ग्रह बैठा हो तो उस राशि के लग्न के समय मृत्यु होती है ॥३९॥

अन्तिमवर्णाल्लग्नज्ञानम्

द्रामिला द्वादशाचः स्युर्वर्गाद्यन्ता यरान्विताः ।
मेषादिषु क्रमाद्योज्याः शेषा मेषादिषट्स्वपि ॥ ४०॥

द्रविड भाषा (तमिल) को 'द्रमिल' भी कहते हैं। इसमें केवल ३० ही वर्ण होते हैं। अ-आ-इ-ई-उ-ऊ-ऋ-ऌ-ए-ऐ-ओ-औ ये बारह स्वर क्रमशः मेषादि द्वादश राशियों के द्योतक होते हैं। जैसे यदि किसी दूत द्वारा वाक्य का अन्तिम वर्ण यदि 'ई' हो तो कर्क लग्न समझना चाहिए। व्यंजनों में तमिल में प्रत्येक वर्ग में दो ही वर्ण होते हैं, अतः क, ङ, च, ञ, ट, ण, त, न, प, म, य, र ये बारह अक्षर भी क्रमशः मेषादि राशियों के द्योतक होते हैं। शेष बचे ल, व, ळ, ऴ, ऱ तथा ऩ ये मेष से लेकर कन्या तक की छह राशियों के द्योतक होते हैं।

यह ग्रन्थ जहाँ लिखा गया है वहाँ की भाषा में प्रश्न करने पर इन तीस अक्षरों से काम चल जाता था परन्तु उत्तर भारतीय भाषा-भाषियों का काम इनसे नहीं चल सकता और इन क्षेत्रों के ज्यातिषयों को इस विधि में कठिनाई है। तमिल में तीन प्रकार के ल हैं। पुरानी तमिल में तीनों प्रकार के शकारों (श-ष-स) तथा 'ह' का अभाव है। इसका क्या समाधान हो? ख, ग, घ, छ, ज, झ, ठ, ड, ढ, थ, द, ध—इनके वाक्यान्त में आने पर लग्न का निर्णय कैसे हो?

समाधान—मेरी समझ में इसका समाधान इस प्रकार है—तमिल वर्णमाला में क-ख-ग-घ इन चारों को लिखने के लिए केवल 'क' अक्षर हैं। ह के स्थान पर भी क अक्षर का प्रयोग प्राचीन तमिल में था। "अकुहविसर्जनीयानां कण्ठः" संस्कृत व्याकरण के अनुसार 'इ' कण्ठ्यवर्ण हैं। अतः उत्तर भारतीयों के लिए लग्न-ज्ञानार्थ चक्र लिखा जा रहा है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राशीनां वर्णसूचकचक्रम्

संख्या	लग्न का नाम	दूत द्वारा उच्चारित वाक्य के अन्तिम वर्ण (अक्षर)		
१	मेष	अ	क (ख, ग, घ, ह)	ल
२	वृष	आ	ङ	व
३	मिथुन	इ	च (छ, ज, झ)	ळ
४	कर्क	ई	ञ	ळ
५	सिंह	उ	ट (ठ, ड, ढ)	र
६	कन्या	ऊ	ण	न
७	तुला	ऋ	त (थ, द, ध)	
८	वृश्चिक	ऌ	न	
९	धनु	ए	प (फ, ब, भ,)	
१०	मकर	ऐ	म	
११	कुंभ	ओ	य	
१२	मीन	औ	र	

रोगवृद्धियोगः

लग्नांशराशिगे चन्द्रे प्रष्टू रुग्वर्धनं यदि ।
स्वांशराशिगते मोहो मृतिर्मान्द्यंशराशिगे ।। ४१।।

प्रश्नलग्न जिस नवांश में हो उसमें यदि चन्द्र स्थित हो और यदि उस समय रोग बढ़ता है तो चन्द्रराशि के नवांश की राशि में मूर्च्छा होती है। गुलिक के नवांश की राशि में चन्द्रमा के आने पर मृत्यु होती है ।।४१।।

चन्द्रमान्द्यंशकौ युक्तौ यदि तद्राशिगे विधौ ।
मोहः सत्यर्कमान्द्यंशयोगे तत्र गते मृतिः ।। ४२।।

यदि प्रश्नकाल में चन्द्रमा जिस नवांश में बैठा हो उसी में गुलिक भी स्थित हो और गोचर में उस राशि में चन्द्र के आने पर यदि रोगी को मूर्च्छा (बेहोशी) आई हो तो सूर्य एवं गुलिक के नवांश की राशि में गोचर में चन्द्रमा के जाने पर रोगी की मृत्यु होती है ।।४२।।

यमकण्टकेन मृत्युकथनम्

लग्नेन्दू मानदानाभ्यामित्यानीतस्फुटत्रये ।
यमकण्टकमायोज्य योडुस्तस्यां च पञ्चता ।। ४३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्व में अध्याय ५ श्लोक १९ के ''लग्नेन्दुमानदानाभ्यां'' श्लोक से प्राणस्फुट, देहस्फुट तथा मृत्युस्फुट निकालकर उसी में यमकण्टक के राश्यादि जोड़ दें। इन चारों के योग से जो राशि-अंश-कला-विकला प्राप्त हों वे जिस नक्षत्र में हों उसी नक्षत्र में गोचर में सञ्चरण करता हुआ चन्द्रमा जब पहुँचता है तब पञ्चता (मृत्यु) होती है ॥४३॥

यमकण्टक-स्पष्ट की विधि—यदि दिन का जन्म या प्रश्न हो तो दिनमान के ८ भाग करें, उन अष्टमांश के घटी-पलों को उस दिन के वार के सामने (इसी ग्रन्थ के अध्याय ५ श्लोक १६ की टीका में जो ध्रुवांक चक्र है) उसमें जो ध्रुवांक दिया है उससे गुणा करें तो यमकण्टक का इष्टकाल घटी-पलों में मिलेगा। यदि रात में यमकण्टक निकालना हो तो रात्रिमान के अष्टमांश से उस वार के रात्रिध्रुवक से गुणा करें, जो घटी-पल प्राप्त हों उन्हें दस दिन के दिनमान में जोड़ दें तो रात्रिकालीन यमकण्टक का इष्टकाल प्राप्त होता है। इस पर से लग्नस्पष्ट की भाँति क्रिया करने पर राश्यादि यमकण्टक स्पष्ट होगा।

यमकण्टक को ही यमघण्टक भी कहते हैं।

गुलिकनक्षत्रे त्रिकोणे वा गोचरफलम्

गुलिकोडुत्रिकोणस्थस्तथा रन्ध्रेशराशिगः।
मृत्युदोऽर्कस्तथा मान्दिनक्षत्रञ्च मृतिप्रदम् ॥ ४४॥

गुलिक नक्षत्र से त्रिकोण नक्षत्र में यदि सूर्य का गोचर हो अथवा अष्टमेश या उसके त्रिकोण की राशि में सूर्य का भ्रमण हो तो मृत्युप्रद होता है। स्वयं गुलिक का नक्षत्र भी मृत्यु करता है ॥४४॥

किसी भी नक्षत्र से दसवाँ तथा उन्नीसवाँ नक्षत्र त्रिकोण होता है। वास्तव में पहला, दसवाँ, उन्नीसवाँ ये तीनों नक्षत्र जन्मतारा कहलाते हैं। ये तीनों आपस में १२०° पर होने से त्रिकोण कहे जाते हैं।

त्रिस्फुटनक्षत्रेण मृत्यु-अवधिज्ञानम्

त्रिस्फुटस्थोडुतो यावत् त्रिकोणमुरगोडुनः।
तावद्वत्सरमासाहर्नाडिकान्ते भवेन्मृतिः ॥ ४५॥
लग्नेशस्य तदंशेशे बन्धुमित्राहिताद्यरौ।
स्वभप्रतीपतो मान्दिर्दिनरात्रौ मृतिप्रदः ॥ ४६॥

त्रिस्फुट जिस नक्षत्र में हो उससे श्लेषा, ज्येष्ठा तथा रेवती नक्षत्र जितनी संख्या आगे हो उतने वर्ष-मास या घटी के उपरान्त मृत्यु होती है ॥४५॥

यदि लग्न का नवांशपति लग्नेश का अधिमित्र हो तो लग्न से लग्नेश जितने नक्षत्रों के अन्तर पर हो उतने वर्ष या उतने मास या उतनी घटियों में मृत्यु होती है ॥४६॥

प्रकारान्तरेण मृत्युवर्षादिज्ञानम्

एष्यनाडीसमाहर्मासाब्दान्ते लग्नचन्द्रयोः।
बलीयसो नवांशस्य दोषाधिक्याल्पतावशात् ॥ ४७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्नांशैष्यविनाडीभिः समाहर्मासवत्सरैः ।
मृतिर्लग्नपतेः शत्रौ समे बन्धौ तदंशपे ।। ४८।।
मृत्युप्रदनवांशैष्यविनाड्यश्च मृतिप्रदाः ।
प्रोक्तवल्लग्नपारातिसमबन्धौ तदंशपे ।। ४९।।

प्रश्नलग्न तथा प्रश्नचन्द्र में जो बली हो उसके नवांश की भोग्य घटियों के तुल्य दिन, मास या वर्ष में मरणसूत्र के दोष की अधिकता या दोषाल्पता के आधार पर मृत्यु बतानी चाहिए ।।४७।।

इस श्लोक की व्यावहारिक संगति कठिन बैठ रही है, चन्द्रमा मध्यम मान से एक राशि में लगभग १३५ घटी रहता है अत: उसका एक नवांश पन्द्रह घटी (मध्यम मान से) भोगता है । परन्तु लग्न का मध्यम मान मात्र पाँच घटी होता है, अत: इसके ३०० पलों में नौ का भाग देने से (३००÷९ =) ३३ पल २० विपल एक नवांश का समय रहता है जो एक घटी से भी कम है । यह १३ मि. २० सेकण्ड होता है । अत: लग्न यदि बली हुआ तो उसकी भोग्य घटी नहीं अपितु पलों के अनुसार ही अनुमान कर बताना होगा कि रोगी कितने वर्ष, मास या दिन जीवित रहेगा । यदि प्रश्न का उत्तर सामान्य अशुभ हो तो वर्षों की अवधि बतावें परंतु बहुत अशुभ हो तो बुद्धि के अनुसार दिन या घटी में अवधि बतानी चाहिए ।

लग्न का नवांशेश लग्नेश का शत्रु-सम या मित्र है, उसके ही अनुसार दिनों, मासों या वर्षों में मित्रता होती है । इसमें लग्ननवांश के भोग्य पलों से हिसाब लगावें ।।४८।।

मान लीजिये—नवांश के भोग्य पल दस है, अब यदि नवांशेश लग्नेश का शत्रु है तो दस दिनों में मृत्यु होगी, यदि सम है तो १० मासों में मृत्यु होगी और यदि मित्र है तो दस वर्षों में मृत्यु होगी ।

श्लोक ४७ में भी लग्नेश के प्रसंग में पलों के अनुसार ही वर्षादि की अवधि निर्धारित करना समीचीन है ।

इसी प्रकार नवांशेश लग्नेश का शत्रु, सम या मित्र हो तो नवमांश के भोग्य पल तुल्य दिन-मास-वर्ष का हिसाब लगाना चाहिए ।।४९।।

अनुष्ठानपद्धतेर्मतम्

क्रूराहिमृत्युगुलिकादिषु यावति स्यात्
लग्नांशकात्प्रभृति कष्टतमो नवांशे ।
तत्कष्टभाववशतः खलु तावतीषु
वाच्यो गतासु दिनमाससमासु मृत्युः ।। ५०।।

क्रूर ग्रह (शनि-मंगल-राहु आदि), सर्पद्रेष्काण, गुलिक एवं त्रिस्फुट इत्यादि मृत्युकारक तत्त्व लग्न के नवांश से जितने नवांश आगे हों उस समय रोगादि के कष्ट की न्यूनाधिकता को देखकर उतने दिन-मास-वर्ष आदि में मृत्यु कहनी चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनश्च

कष्टोऽहिमृत्युगुलिकादिषु यत्र राशौ,
तत्कालजं निधनदं यदि वा निमित्तम्।
तस्य त्रिकोणजुषि कष्टतमे तद्वानीं
चन्द्राऽर्कजीवरविजेषु मृतिर्विचिन्त्या ।। ५१।।

जिस राशि में मान्दि आदि कष्टप्रद ग्रह बैठे हों उससे त्रिकोण स्थित राशि में चन्द्र अथवा सूर्य अथवा गुरु अथवा शनि कोई भी ग्रहगोचर में आवे तथा प्रश्नकाल में कोई मृत्युदायक शकुन भी उपस्थित हो तो ऐसे अवसर पर मृत्यु का विचार करना चाहिए ।।५१।।

पुनरपि

लग्नारूढपयोर्द्वयोर्बलवतः प्रारभ्य यस्मिन् गृहे,
नक्षत्रेऽथ दृगाणके नु भवति प्रश्ने नवांशेऽपि वा।
वृक्षादेः पतनाद्यनिष्टमसुमत्प्राणप्रणाशोऽपि वा
स्थानं वा गुलिकादिकस्य भविता तावद्दिनादौ मृतिः ।। ५२।।

लग्नेश तथा आरूढेश में जो बली हो उसकी राशि, नक्षत्र, द्रेष्काण और नवांश से गणना करें । वृक्षादि गिरने जैंसे अशुभ शकुन होने पर शकुनकालीन लग्न की राशि, नक्षत्र, द्रेष्काण तक गणना करनी चाहिए । अथवा फिर मान्दि आश्रित राशि तक गणना करें । इस गणना से प्राप्त संख्या के बराबर दिनादि में मृत्यु होती है ।।५२।।

पुनश्चापि

आरूढोदययोरष्टमेष्टमेशाश्रितालये ।
पिण्डाष्टकवर्गे हीनाक्षे राशौ वा लग्नगे मृतिः।। ५३।।
श्लोकस्यास्योत्तरार्धं यत्तज्जन्मविषयं तथा।
स्वभप्रतीपतो मान्दिरत्यर्धं च पुरोदितम् ।। ५४।।

आरूढ लग्न से अष्टम राशि, आरूढ के अष्टमेशों से अधिष्ठित राशि और सर्वाष्टक वर्ग में जो राशि अल्परेखा वाली हो वह राशि यदि लग्न में हो उस लग्न में मृत्यु होती है ।।५३।।

इस श्लोक के उत्तरार्ध में अष्टक वर्ग का निरूपण होने से यह जातकशास्त्र का विषय है । यदि गुलिक दिनसंज्ञक राशि में (विषम राशि में) हो तो रात्रि में मृत्यु होती है परन्तु गुलिक यदि रात्रि संज्ञक राशि (सम राशि में) है तो दिन में मृत्यु होती है ।।५४।।

पुनरपि कैश्चिन मरणकालग्रहस्थितय उच्यन्ते

द्वादशजन्माष्टमगाः पुंसां दिननाथभौमशनिजीवाः ।
वित्तक्षयं प्रवासं रोगान् जनयन्ति भीतिं वा ।। ५५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रस्तु निधनं प्राप्तः सप्तमं बुधलोहितौ ।
द्वादशं भास्करः षष्ठं भृगुपुत्रः समाश्रितः ।। ५६ ।।
तृतीयं देवमन्त्री च राहुकेतुशनैश्चराः ।
जन्मस्थाः प्राणसन्देहं कुर्वन्त्येते न संशयः ।। ५७ ।।
प्रथमे च चतुर्थे च सप्तमे चाष्टमे व्यये ।
क्रूरग्रहाः प्रदीप्यन्ते दीप्तपावकसन्निभाः ।। ५८ ।।
चतुर्थे निधने चान्त्ये चन्द्रो नित्यमरिष्टकृत् ।
शुभः शशी च जन्मस्थो न स्याज्जन्मदिनं तथा ।। ५९ ।।

लग्न में, द्वादश में तथा अष्टम में स्थित शनि, मंगल, सूर्य तथा गुरु ये ग्रह क्रमशः धननाश, प्रवास, बीमारी तथा भय उत्पन्न करते हैं । अर्थात् इन स्थानों में शनि वित्तहानि, मंगल यात्रा, सूर्य रोग तथा गुरु भय उत्पन्न करता है ।।५५।।

जन्मकुण्डली में लग्न से अष्टम चन्द्र, सप्तम में बुध तथा मंगल, बारहवें में सूर्य, छठे में शुक्र, तीसरे में गुरु तथा लग्न में राहु, केतु या शनि में से कोई ग्रह हो तो प्राणों के लिए सन्देह के सूचक होते हैं ।।५६-५७।।

जन्मलग्न, चतुर्थ भाव, सप्तम भाव, अष्टम भाव एवं बारहवें भाव में यदि क्रूर ग्रह बैठ जायें तो मानों इन भावों में जलती हुई अग्नि रख दी गयी हो अर्थात् वे इन भावों को जला डालते हैं ।।५८।।

इसी प्रकार चौथे, आठवें, बारहवें भाव में चन्द्रमा नित्य अरिष्टकारक होता है । यदि जातक के जन्मदिन पर चन्द्रमा जन्मलग्न, जन्मचन्द्रराशि में आ जाये तो यह गर्भ योग होता है जिसका फल अशुभ होता है ।।५९।।

४-८-१२ भाव का चन्द्र लौह पाद का होता है, अतः बालारिष्ट उत्पन्न करता है । यह गोचर में भी अशुभफल देता है ।

अध्यायोपसंहारः

इत्थं विचिन्त्य निश्चित्य ससंवादं परस्परम् ।
खेचराणामवस्थानं समयः कथ्यतां मृतेः ।। ६० ।।

।। इति प्रश्नमार्गे दशमोऽध्यायः ।।

—*—

इस प्रकार विभिन्न रीतियों एवं मतों में समन्वय स्थापित कर ग्रहों की स्थिति के अनुसार मृत्यु समय का कथन करना चाहिए ।।६०।।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का दसवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।१०।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथैकादशोऽध्याय:

अथ मरणनिमित्तान्युच्यन्ते

क्रमेण मरणं वह्निसलिलायुधजूर्तिभिः ।
अज्ञातरोगतृट्क्षुद्भिरर्काद्यैरष्टमस्थितैः ॥ १॥

यदि सूर्यादि ग्रह लग्न से अष्टम भाव में हों तो क्रमशः अग्नि, जल, शस्त्र, जूर्ति (जूड़ी=ज्वर), अज्ञात रोग, तृषा (मधुमेह) तथा क्षुधाजन्य रोगों से मृत्यु होती है ॥१॥

अष्टमस्थ ग्रह से रोग–मृत्युसूचक चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**ग्रह** (Planets)
अग्नि बिजली पित्त	जलोदर प्लूरिसी शोथ जलवृषण	शस्त्राघात रक्तविकार फोड़े रक्तपित्त	ज्वर मस्तिष्क-ज्वर	जटिल रोग	एड्स प्रमेह गुप्तरोग	भूख फक्करोग सूखारोग क्षय	**मृत्युकारक रोग** Diseases

अष्टमद्रष्टाग्रहैर्मृत्युकथनम्

दृष्टेऽष्टमे तु सूर्याद्यैस्तत्प्रोक्तास्थ्यादिजामयैः ।
मृत्युर्यद्वाथ तत्प्रोक्तपित्तवह्न्यादिसम्भवः ॥ २॥
अस्थि रक्तं च मज्जा त्वग्वसा शुक्रञ्च वस्त्रसा ।
एवं हि धातवः सप्त सूर्यादीनां प्रकीर्तिताः ॥ ३॥

सूर्यादि ग्रह यदि अष्टम भाव पर दृष्टि डालते हों तो उन ग्रहों की धातुओं में विकृति होने से रोग उत्पन्न होते हैं और उन्हीं से मृत्यु होती है ॥२॥

सूर्यादि सातों ग्रहों की क्रमशः (१) अस्थि (Bones), रक्त (Blood), (३) मज्जा (Bone marrour), (४) त्वचा (Skin), (५) वसा एवं मांस (Fat & Muscles) (६) शुक्र (Semen) तथा (७) वस्त्रसा (तन्त्रिका= Nerves)—ये सात धातुएँ हैं ॥३॥

ग्रहधातु–द्योतक चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**ग्रह**
हड्डी	रक्त	रक्तकण हीमोग्लाबिन	चर्म	चर्बी (मेद)	वीर्य	तंत्रिकाए	**धातुएँ**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहाणां त्रिदोषकथनम्

पित्तं वातकफौ पित्तं वातपित्तकफाः कफः।
कफवातौ च वातश्च सूर्यादीनां प्रकीर्तिताः ।। ४।।

(१) सूर्य का पित्त दोष, (२) चन्द्रमा का वात-कफ, (३) मंगल का पित्त, (४) बुध का त्रिदोष (वात+पित्त+कफ=तीनों का एकत्र सन्निपात), (५) गुरु का कफ, (६) शुक्र का कफ-वात तथा (७) शनि का वात दोष बतलाया गया है ।।४।।

कालाङ्गेषु रोगविचारः

कालाङ्गेष्वष्टमो राशिर्ग्रहो वाष्टमवीक्षकः ।
जन्मकाले स्थितौ यत्र तत्राङ्गे तद्गदोद्भवः ।। ५।।

जन्मलग्न से अष्टम भाव की राशि का स्वामी या अष्टम को देखने वाला ग्रह जन्म-कुण्डली में जिस भाव में बैठता है उसके शारीर अंग में रोग उत्पन्न होता है ।।५।।

कालपुरुष अंगविभाग हेतु पीछे अध्याय ८ श्लोक ३ की टीका देखिए ।

खरद्रेष्काणे मृत्युः

ग्रहयोगेक्षणाभावे निधने निधनाधिपः ।
द्वाविंशत्र्यंशपो वापि स्वगुणैर्मरणप्रदः।। ६।।
धातवश्च त्रिदोषाश्च प्रोक्ता वह्न्यादयो गुणाः।। ७।।

अष्टम भाव में ग्रह युति एवं दृष्टि के अभाव में अष्टमेश या खरद्रेष्काणेश (२२वाँ द्रेष्काण) अपने गुणों से मृत्युप्रद होते हैं । अस्थि आदि धातुएँ, वात-पित्त-कफ दोष— इनके अग्नि आदि गुण ग्रहों के होते हैं ।।६-७।।

धातुविकारतो मृत्युकथनम्

मन्दे सूर्यादिसंयुक्ते तेषां योऽस्थ्यादिरीरितः।
रोगेण तत्र जातेन पुरुषस्य भवेन्मृतिः।। ८।।

यदि शनि सूर्यादि ग्रहों से युत हो तो सूर्यादि ग्रहों के जो धातु एवं दोष कहे गये हैं उनसे रोग पैदा होते हैं । उन्हीं से रोगी की मृत्यु होती है ।।८।।

मन्दोपरि ग्रहाणां दृष्टिफलम्

भानुना वासृजा दृष्टे दक्षाङ्गेरुरसृग्भवः।
अतिसारो निशाभर्त्रा वेपथुश्चन्द्रसूनुना ।। ९।।
गुरुणा श्वयथुः पादे दक्षिणाङ्गे च वेदना।
क्षयः शोफश्च शुक्रेण कासश्वासादि नेक्षिते ।। १०।।
राहुणा सन्धिसादादि मान्दिनोन्मादसम्भवः।
मूर्च्छा द्राघीयसी मन्दे यमकण्टकवीक्षिते ।। ११।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अरूरर्धप्रहारेण समासन्ने सुनिर्गमे।
कालदृष्टे रवेः पुत्रे नृणां सञ्चरतां मृतिः ।। १२।।

यदि सूर्य अथवा मंगल की शनि पर दृष्टि हो तो शरीर के दाहिने भाग में रक्तविकार या व्रण होता है । यदि चन्द्रमा की दृष्टि शनि पर हो तो अतिसार (दस्त-पेचिश) होता हैं । यदि बुध की दृष्टि हो तो वेपथु (शरीर में कम्पन तथा शिथिलता) होती है । यदि गुरु की दृष्टि हो तो पैरों में तथा शरीर के दक्षिण भाग में वेदना होती है । शुक्र की दृष्टि शनि पर होने से क्षयरोग तथा खाँसी-श्वास रोगादि होते हैं ।।९-१०।।

यदि राहु की दृष्टि शनि पर हो तो सन्धिशोथ (आमवात=गठियावात) होता है। गुलिक की दृष्टि हो तो उन्माद उत्पन्न होता है । यमकण्टक की दृष्टि होने पर लम्बे समय तक चलने वाली बेहोशी होती है । यदि अर्धयाम की शनि के साथ युति हो तो घाव होते हैं । इसी प्रकार यदि काल नामक उपग्रह की दृष्टि शनि पर होती है तो चलने-फिरने में (हृदयाघात से) रोगी की मृत्यु होती है ।।११-१२।।

यमकण्टक का साधन—यमकण्टक का साधन गुलिक की भाँति ही होता है, उसकी विधि अध्याय १० श्लोक ४३ की व्याख्या में बतायी जा चुकी है ।

काल-साधन—दिन के जन्म या प्रश्न में दिनमान के अष्टमांश से काल के दिन-वार-ध्रुवांक का गुणा करें (ध्रुवांक अध्याय ५।१६ में दिये हैं) । इस प्रकार से कालेष्ट घट्यादि प्राप्त होगा, उससे लग्नस्पष्ट की भाँति काल स्पष्ट करें । यदि रात में करना हो तो रात्रिमान के अष्टमांश से जन्म या प्रश्न वार के रात्रि ध्रुवांक से गुणा करें । गुणनफल को दिनमान में जोड़ने से रात्रिकालीन काल उपग्रह का इष्टकाल होगा । इससे लग्नस्पष्ट की भाँति कालस्पष्ट होगा ।

अर्धयाम-साधन—अर्धयाम को भी जिस वार का जन्म या प्रश्न हो दिन में दिन के वारानुसार ध्रुवांक से तथा रात्रि में रात्रि के वारानुसार ध्रुवांक से दिनमान या रात्रिमान के अष्टमांश से गुणा करते हैं । दिन में वही गुणनफल से प्राप्त घटी-पल अर्धयाम का इष्टकाल होता है, परन्तु रात्रि में ध्रुवक से दिनमान के अष्टमांश का गुणा कर कर उसमें दिनमान जोड़ना पड़ेगा तब रात का अर्धयाम इष्ट होगा । इस इष्टकाल पर से उसी प्रकार अर्धयाम के राशि-अंश-कला-विकला निकाले जैसे कि जन्मकालीन इष्टकाल से जन्मलग्न के राशि-अंश-कला-विकला निकालते हैं ।

मृत्युः सुखपूर्वकं भवति न वेति? प्रश्नः

मान्द्यारूढनवांशकामगृहगाः सौम्याः सुमृत्युप्रदाः
पापस्तत्र गतास्तु दुर्मृतिकरास्तेष्वर्क उर्वीपतेः ।
क्षीणेन्दुः सलिले युधि क्षितिसुतः सूर्यात्मजो वञ्चनात्
राहुः पन्नगदंशनान्मरणदो यद्वा विषस्पर्शनात् ।। १३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मान्द्यारूढ नवांशराशि (जिसमें गुलिक स्थित हो) से सातवें भाव में यदि शुभ ग्रह हों तो स्वाभाविक मृत्यु होती है। यदि गुलिकारूढ नवांश राशि से सप्तम भाव में पाप ग्रह हो तो दुर्मृत्यु (अपमृत्यु=दुर्घटनादि) होती है। यदि उक्त भाव में सूर्य हो तो राजदण्डादि से मृत्यु होती है। यदि क्षीण चन्द्रमा हो तो जल के कारण मृत्यु होती है। यदि मंगल हो तो युद्ध, लड़ाई-झगड़ा-बलवा आदि से मृत्यु होती है। यदि शनि हो तो वञ्चना (छल-कपट से) मृत्यु होती है। यदि राहु हो तो विषप्रयोग (भौतिक, रासायनिक, जैविक या वानस्पतिक किसी भी प्रकार का हो सकता है) से मृत्यु होती है ॥१३॥

मन्दाधिष्ठितद्रेष्काणतो मृत्युज्ञानम्

जूर्त्या तोयविकारतश्च पिटकाद्युष्णा मयैर्वायुना;
गुल्माङ्गोत्थितवेदनाभिरधिकं शोफप्रमेहक्षयैः।
कासश्वाससमीरितो मृतिरिनादीनां शनौ त्र्यंशगे;
त्र्यंशेशा यदि तेऽहिवीक्षितयुता मृत्युर्विषोत्थामयैः॥ १४॥

यदि शनि सूर्य के द्रेष्काण में हो तो जूर्ति (जूड़ी, ज्वर) से मृत्यु होती है। यदि शनि चन्द्र के द्रेष्काण में हो तो तोय-विकार (जलोदर, उरस्तोय, जलवृषण तथा शोथ) से मृत्यु होती है। मंगल के द्रेष्काण में हो तो फोड़े-फुंसी आदि से, यदि शनि बुध के द्रेष्काण में हो तो वायुविकार (पेटगैस) से तथा गुरु के शारीरिक पीड़ा के कारण मृत्यु होती है। यदि शनि शुक्र के द्रेष्काण में स्थित हो तो शोफ (Dropsy), प्रमेह (वीर्यविकार, मधुमेह, बहुमूत्र, एल्ब्युमिनोरिया, सुजाक, फिरंग, एड्स आदि) तथा क्षयरोग (Pulmonary Tuberculosis) से मृत्यु होती हैं। यदि उस द्रेष्काण में राहु की दृष्टि या युति हो तो विष से मृत्यु होती है ॥१४॥

मन्दनवांशे मृत्युः

सौम्यानामंशराशीन् गतवति रविजे स्वर्क्षतुङ्गादिके वा;
जीवर्क्षस्थे विशेषान्म्रियत इह गृहे पुत्रमित्राद्युपेतः।
नीचारात्यालयस्थे रविभुवि रहितो बन्धुभिर्दुःखितःसन्;
सर्पत्र्यंशेऽत्र तिष्ठत्यहिगुलिकसमेतेक्षिते सर्पदष्टः॥ १५॥

यदि शनि सौम्य ग्रहों की राशि नवमांशादि में स्थित हो अथवा स्वराशि या उच्चराशि में हो अथवा फिर गुरु की राशि (धनु-मीन) में हो तो वह व्यक्ति अपने पुत्र-मित्रादि बान्धवों से घिरा हुआ अपने घर में (अथवा अस्पताल में भी) मृत्यु को प्राप्त होता है। इसके विपरीत यदि शनि नीच, शत्रु राशि या नवांश में बैठा हो तो जातक बान्धवों से रहित अकेला दुःखी होता हुआ मृत्यु को प्राप्त होता है। यदि शनि सर्पद्रेष्काण में अहि (राहु) या गुलिक से युत या दृष्ट हो तो उसकी मृत्यु सर्पदंश, वृश्चिकदंश या अन्य विषप्रयोग से होती है ॥१५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन्देन सह ग्रहाणां युतिफलम्

मन्दे भौमयुतेऽथवा रवियुते क्षेत्रस्थिते चानयो-
र्भूते वह्निमये स्थितेगुगुलिकोपेतेक्षितेऽग्नौ मृतिः ।
एवम्भूतशनौ जलग्रहयुते तप्ताम्बुपातादिभि-
र्दोषेऽसत्युदितेम्बुभूतखचरक्षेत्रान्विते वारिणि ।। १६।।

यदि शनि के साथ मंगल अथवा सूर्य की युति हो या फिर शनि इन दोनों की राशियों में (सिंह, मेष, वृश्चिक) में स्थित हो अथवा अग्नितत्त्व की राशियों (मेष, सिंह, धनु) में गुलिक तथा राहु से युत या दृष्ट हो तो जातक की मृत्यु अग्नि के द्वारा होती हैं। यदि राहु एवं गुलिक द्वारा युत-दृष्ट शनि जलीय ग्रहों (चन्द्र एवं शुक्र) से भी संयुक्त हो तो खौलते हुए पानी से मृत्यु होती है। यदि शनि की युति केवल जलीय ग्रहों से हो तथा अन्य मंगल, राहु, शनि गुलिक से न हो तो जिस स्थान में जलचर पक्षियों का निवास बहुलता से हो तो उस स्थान में व्यक्ति की मृत्यु होती है ।।१६।।

पश्वादिभिर्मृत्युकथनम्

त्र्यंशे कोलमुखे स्थिते मृगगणैर्गृध्राननेे पक्षिभि-
स्तत्राप्यस्तु बलोनता गुलिकयोगेक्षादिकं भास्करे ।
नेष्टस्थानगताश्च मान्दिगृहपाः सूर्यादयो दुर्बला-
स्तातान्मातृसहोत्थबन्धुतनयस्त्रीभ्यः स्वतो मृत्युदाः ।। १७।।

यदि उक्त शनि कोलमुख संज्ञक द्रेष्काण हो तो जातक का मरण हिंसक पशुओं से होता है। यदि शनि गृध्रानन (पक्षिसंज्ञक) द्रेष्काण में हो तो मृत्यु पक्षियों द्वारा होती है (ये पक्षी मांसाहारी होते हैं)। अब यदि इन दोनों योगों में शनि के साथ गुलिक या राहु भी हो तो योग अधिक प्रबल होता है। यदि गुलिकेश सूर्यादि ग्रह होकर नेष्टस्थान (६-८-१२) में बैठे हों तो क्रमश: (१) जनक, (२) जननी, (३) सहोदर, (४) मित्र, (५) सन्तति, (६) स्त्री तथा (७) स्वयं के द्वारा (आत्महत्या) मृत्यु होती है ।।१७।।

दुर्बलमन्देन सह गृहयुत्यादिभिर्मृत्युकथनम्

दौर्बल्यादियुते शनौ क्षितिभुवा युक्तेक्षिते पञ्चता;
चामुण्ड्यादिनिपीडयारगुलिकोपेतेऽसिबाणादिभिः ।
मन्दे मान्दिविवस्वदीक्षितयुते कोपेन शम्भोस्तदी-
यावासाहितवासभूतकृतया जूर्त्या मृतिं निर्दिशेत् ।। १८।।

यदि दौर्बल्यादि दोषों से युक्त शनि मंगल से युत या दृष्ट हो तो जातक की चामुण्डादि देवियों के प्रकोप से मौत होती है। यदि शनि गुलिक तथा विवस्वान् (सूर्य) से युत-दृष्ट हो तब शम्भु (शिवजी) के कोप अथवा उनके भूत-प्रेतादि गणों के प्रकोप से मरण होता है, उस पीड़ा में ज्वर भी उत्पन्न होता है ।।१८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नलग्नान्मृत्युदायकयोगानां कथनम्

मृत्युरोगनिमित्तानि कथितानीति जातकात् ।
अथ मृत्युप्रदा रोगाः कथ्यन्ते प्रश्नलग्नतः ।। १९ ।।

अभी तक (इस अध्याय में) जातकशास्त्रानुसार मृत्यु के कारणों को बताया गया है । अब यहाँ से आगे प्रश्नशास्त्र के अनुसार मृत्यु के निमित्तों को लिखते हैं । इनका विचार प्रश्नलग्न से करें ।।१९।।

मरणप्रदरोगानां प्रतिनिधिग्रहाः

वीक्षिते योऽष्टमं खेटस्तस्य रोगस्तु मृत्यवे ।
तदभावेऽष्टमस्तस्य द्वयाभावे तदीशितुः ।। २० ।।

अष्टम स्थान के द्रष्टा ग्रह का रोग मृत्यु देता है । द्रष्टा ग्रह के अभाव में अष्टमस्थ ग्रह का रोग तथा दोनों के अभाव में अष्टमेश-जन्य रोग मृत्यु करता है ।।२०।।

सूर्यादिनवग्रहाणां रोगाः

अत्यग्निं वेदनामन्तर्ज्वरं चार्कोऽथ चन्द्रमाः ।
छर्दिमूर्ध्वानने तिर्यग्वक्त्रे मूत्रादिबन्धनम् ।। २१ ।।
अतिसारं तृषं चाधोवक्त्रे शोफन्तु सर्वगः ।
उष्णप्रसरणं दाहं रक्तक्षोभभवं व्रणम् ।। २२ ।।
भूमिजोऽथ बुधः कुर्याच्छीतज्वरमतिभ्रमौ ।
सन्निपातरुजञ्चाथ गुरुर्बुद्धेरनार्जवम् ।। २३ ।।
अजीर्तिं श्वयथुञ्चाथ दाहं मोहञ्च भार्गवः ।
तृष्णारुचिसमस्ताङ्गतोदांस्तरणिनन्दनः ।। २४ ।।
वायुक्षोभमहिर्मान्दिर्हिक्कामपि सिरोद्भवम् ।
सूर्यादिगुलिकान्तानामिमे रोगाः प्रकीर्तिताः ।। २५ ।।

यहाँ २१ से २५वें श्लोक तक सूर्यादि ग्रहों से जो रोग उत्पन्न होते हैं उनका वर्णन इस प्रकार है—

(१) सूर्य शरीर या भीतरी अंगों में तीव्र जलन, पीड़ा तथा अन्तर्ज्वर (भीतर ही भीतर मन्द बुखार) उत्पन्न करता है ।

(२) चन्द्रमा यदि ऊर्ध्वमुख राशियों में स्थित हो तो वमन होता है (सूर्य द्वारा छोड़ी हुई राशि=सूर्य द्वारा भोगी जा चुकी राशि को उर्ध्वमुख कहा जाता है । अ. ८ श्लोक २५ से २७ की व्याख्या देंखें) ।

यदि चन्द्रमा तिर्यङ्मुख राशि में हो तो मूत्रकृच्छ्र (पेशाब में जलन) आदि उत्पन्न करता है । सूर्य जिस राशि में हो उससे दूसरी राशि तिर्यङ्मुख होती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि चन्द्रमा अधोमुख राशि में हो तो अतिसार, प्यास आदि उत्पन्न करता है । सूर्य स्थित राशि को अधोमुख कहते हैं । यह स्थिति अमावस्या के समीप होती है ।

शेष नौ राशियों में चन्द्रमा हो तो शोफ (Dropsy) उत्पन्न करता है ।

(३) मंगल शरीर में जलन, उष्णता, रक्तप्रकोप, रक्तपित्त, रक्तस्राव (Bleeding) तथा घाव करता है ।

(४) बुध शीतज्वर, मतिभ्रम (मानसिक रोग) आदि बौद्धिक रोग उत्पन्न करता है ।

(५) गुरु के कारण सन्निपात (त्रिदोष) जन्य विकार, बुद्धि में मन्दता या कुटिलता, अजीर्ण (भोजन का पाचन न होना) तथा श्वयथु (सूजन) उत्पन्न होती है ।

(६) शुक्र अजीर्ण जलन, मूर्च्छा तथा प्रमेहादि रोग पैदा करता है ।

(७) शनि प्यास, अरुचि तथा वातजन्य पीड़ा करता है ।

(८) राहु वायुविकार, उत्तेजना आदि पैदा करता है ।

(९) गुलिक (मान्दि) हिचकी तथा सिटाकुटिलता (नसों का टेढ़ापन) उत्पन्न करता है अथवा तंत्रिका के रोग पैदा करता है ।

इस प्रकार ये सूर्यादि ग्रहों के रोग कहे गये हैं ॥२१-२५॥

जातकोक्तरोगाणामपि विचारकथनम्

सूर्याद्यैर्भास्करादीनामंशैर्वा त्रिस्फुटे युते ।
ये रोगा मृत्युदाः प्रोक्ताश्चिन्तयेदिह तानपि ।। २६ ।।

पूर्व में (जातकशास्त्रानुसार) सूर्यादि ग्रहों एवं शन्यादि के नवांश से तथा त्रिस्फुट आदि की युति के अनुसार जिन रोगों का वर्णन किया जा चुका है और जिन मृत्युकारक योगों का वर्णन किया जा चुका है उनका भी यहाँ (प्रश्नकुण्डली में) विचार करना चाहिए ॥२६॥

रोगवृद्धिकालिकचन्द्रेण मृत्युः

चन्द्रे लग्नांशराशिस्थे वृद्धिमेति मनागपि ।
आमयो यो भवेदेष मरणायैव पृच्छताम् ।। २७ ।।

प्रश्नकालीन लग्ननवांश की राशि पर गोचर का चन्द्र आने पर यदि कोई रोग थोड़ा भी बढ़ता है तो वह रोग पृच्छक या सम्बन्धित की मृत्यु करता है ॥२७॥

शकुनादिविचारः

लग्नमान्द्यंशकाभ्यां यदुदितं पात्रभञ्जनम् ।
त्रिस्फुटस्थोडुना यच्च लक्ष्म तच्चेह चिन्त्यताम् ।। २८ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पूर्व में (अ.८ श्लोक ४३) लग्न तथा गुलिक के नवांशों द्वारा जो पात्रों का टूटना आदि लक्षण वर्णित हैं तथा त्रिस्फुट के नक्षत्र द्वारा (अध्याय ६ श्लोक ३५) जो लक्षण बताये हैं उन सभी का विचार प्रश्नकुण्डली के द्वारा भी करना चाहिए ॥२८॥

तात्पर्य यह है कि जातक तथा प्रश्न दोनों से विचार कर सटीक निर्णय करें ।

कण्ठाभरणमतम्, मृत्युपतिफलम्

मृत्युपतिर्यदि भानुः प्रबलजनस्यागमो विगृह्य भवेत् ।
आसन्ने सति मरणे प्रष्टुः स्यात्कोऽपि कलहो वा ॥ २९॥
चन्द्रश्चेद् वनितागमो यदि कुजः कांक्षा गुडक्षीरयो-
र्वक्तव्यामयिनोऽथवा खलु वदेदानीतिमात्रानयोः।
आयानं विदुषो बुधो यदि गुरुर्विप्रस्य शुक्रो यदि
व्यापद् विप्रचतुष्पदां यदि शनिः स्याद्दुष्टनीचागमः॥ ३०॥
मृत्युश्चेत्सफणियुक्स वा शिखियुतो भिक्षाशि सर्पागम-
स्तस्मिन् केतुयुते भवेच्च पतनं तत्रारचन्द्रान्विते ।
ब्रूयाद् भाजनभञ्जनं मरणलक्ष्माथायुरारोग्यदे
प्रश्ने रुक्छमलक्ष्म चैतदुदितं देहा सुनाथादिभिः॥ ३१॥
छर्दिः शोफातिसारो मरणकरगदास्त्रिस्फुटांशेब्जभृग्वो-
र्धाम्न्यूर्ध्वास्याद्य भेदाद्दिनकरकुजयोरुष्णसञ्चारदाहौ ।
चेतोवाक्स्तम्भनं वा विद इह तु गुरोर्धीभ्रमोपेतवाणी-
रोधः श्वासस्य वायोः स्खलनमपि शनेर्दृष्टियुक्तैश्च तैस्तैः ॥ ३२॥

यदि सूर्य मृत्युपति (मृत्यु-राशिस्वामी) हो तो किसी झगड़ालू व्यक्ति का आगमन मृत्युस्थल पर होता है अथवा रोगी या जातक की मरणासन्न स्थिति में कोई लड़ाई-झगड़ा होता है ॥२९॥

यदि प्रश्नकुण्डली में चन्द्रमा मृत्युपति हो (मृत्युस्फुट में जो राशि है उसका स्वामी हो) तो मरणस्थल पर स्त्री का आगमन होता है । यदि मृत्युस्फुट का स्वामी मंगल हो तो रोगी को मीठी खीर या दूध एवं गुड़ की इच्छा होती है । अथवा कोई व्यक्ति मृत्युस्थल पर मिठाई आदि लेकर आता है । यदि बुध मृत्युपति हो तो वहाँ पर किसी विद्वान् का आगमन होता है । यदि गुरु मृत्युपति हो तो कोई ज्ञानी आध्यात्मिक ब्राह्मण आता है । यदि शुक्र मृत्युपति हो तो (कोई राजसी प्रकृति का) भी ब्राह्मण का आगमन होता है । शनि के मृत्युपति होने पर दुष्ट तथा नीच स्वभाव के लोगों का आगमन मृत्युस्थल पर होता है ॥३०॥

यदि मृत्युस्फुट राहु युक्त हो अथवा केतु युक्त हो तो मरणस्थल पर कोई भिखारी आता है या वहाँ कोई सर्पादि जन्त आता है । केतु युक्त होने पर ऊँची जगह से गिरना भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता है (अथवा मुर्दा गिर पड़ता है)। यदि मृत्युस्फुट मंगल तथा चन्द्रमा से युक्त होता है तो पात्रादि टूटते हैं। ये सब मृत्युकालीन लक्षण हैं।

यदि प्रश्न में आयु तथा आरोग्य का विचार अपेक्षित हो तो देहस्फुट तथा प्राणस्फुट के स्वामी ग्रहों से विभिन्न ग्रहों की युति के आधार पर रोगशान्तिकालीन लक्षणों को कहना चाहिए ॥३१॥

तात्पर्य यह है कि यदि सूर्यादि ग्रहों के मृत्युपति होने पर मृत्यु समय के जो लक्षण कहे गये हैं उन्हीं लक्षणों के आधार पर यदि वे ग्रह देहपति या प्राणपति हों (देहस्फुट या प्राणस्फुट के स्वामी हों अथवा देहस्फुट एवं प्राणस्फुट में उन ग्रहों की स्थिति हों तो रोग शान्ति के समय पूर्वोक्त लक्षण (श्लोक २९ से ३१ तक के) घटित होंगे।

अब इस बत्तीसवें श्लोक में त्रिस्फुट नवांश का फल कहते हैं—यदि चन्द्र या शुक्र की राशियों (कर्क-वृष-तुला) में त्रिस्फुट का नवांश हो तो (इस अध्याय के श्लोक २१ में वर्णित) ऊर्ध्वमुख आदि भेद के आधार पर छर्दि (उबकाई=जी मिचलाना), शोफ (पानी की सूजन=शरीर में पानी भर जाना) तथा अतिसारादि रोग होते हैं। यदि त्रिस्फुट का नवांश सूर्य एवं मंगल की राशियों में से किसी में (१-५-८) है तो उष्णता तथा दाह से मृत्यु होती है। बुध की राशि में त्रिस्फुट नवांश होने पर मन्द बुद्धि तथा वाणी का अवरोध होकर मृत्यु होती है। त्रिस्फुट नवांश में गुरु की राशि होने पर बुद्धिभ्रम तथा मूकता से मृत्यु होती है। शुक्र की राशि में त्रिस्फुट नवांश होने से श्वास-कासादि से मृत्यु होती है। शनि के नवांश का त्रिस्फुट वायुरोगों से मृत्यु करता है। उन ग्रहों से त्रिस्फुट नवांश के दृष्ट तथा युक्त होने पर भी इसी प्रकार का फल कहना चाहिए ॥३२॥

विशेषसंज्ञानां कथनम्

प्राणो लग्ननवांशश्चन्द्रनवांशः समीरितो देहः।
गुलिकनवांशो मृत्युः कालः स्यात् त्रिस्फुटस्यांशः॥ ३३॥

इस प्रसंग में लग्न के नवांश को प्राण, चन्द्र के नवांश को देह, गुलिक के नवांश को मृत्यु तथा त्रिस्फुट के नवांश को काल समझना चाहिए ॥३३॥

मरणस्थलकथनम्

मृत्युः स्याच्चरभे विदेश उभये मार्गे स्वदेशे स्थिरे;
ग्राम्यारण्यजलात्मके तु निधने ग्रामे जलेष्वन्तिके।
स्वच्छम्लेच्छनतोन्नतेषु सदसत्क्षेत्राध ऊर्ध्वानने;
दीपादीनपि निर्दिशेज्जननवद्धेनाष्टमेनामुना॥ ३४॥

अब इस श्लोक से (३४ से ३९ तक) जातक सम्बन्धी विचार हैं, अतः इन योगों का विचार जन्मकुण्डली में करना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि जन्मकुण्डली में अष्टम भाव में चर राशि हो तो मृत्यु घर से दूर स्थान में होती है । यदि अष्टम भाव में द्विस्वभाव राशि हो तो मार्ग में मृत्यु होती है । यदि अष्टम भाव में स्थिर राशि हो तो स्वदेश में (अपने घर या स्थान पर) मृत्यु होती है । यदि उक्त स्थान पर ग्राम्य राशि (वृष, कन्या, कुंभ) हो तो मृत्यु गाँव या नगर में होती है । यदि अरण्य राशि (मिथुन, तुला, मकर) अष्टम भाव में हो तो मृत्यु वन या हाट के समीप या पेड़-पौधों के निकट एकान्त स्थल में होती है । जलचर राशि (कर्क, वृश्चिक, मीन) अष्टम भाव में हो तो जलीय स्थल के समीप मृत्यु होती है (मेष-सिंह-धनु ये पर्वतचारी राशियाँ हों तो ऊँचे स्थान=छत या चारपाई आदि पर मृत्यु समझनी चाहिए) । अष्टम भाव में शुभ ग्रह होने पर शुभ स्थान में, पाप ग्रह होने पर अस्वच्छ स्थान में मृत्यु होती है । इसी प्रकार ऊर्ध्वमुख राशि यदि अष्टम में हो तो ऊँचे स्थान पर मृत्यु होती है । जैसे सूतिकाध्याय (बृहज्जातक) में दीपक का विचार है उसी प्रकार से अष्टम भाव (जन्मकुण्डली का) को लग्न मानकर दीपक का विचार करना चाहिए ॥३४॥

लग्नांशलग्नेशतो मरणस्थलकथनम्

स्वजन्मनि विलग्नांशपत्योः प्राण्याश्रितेन च ।
राशिना स्वपराध्वादिप्रदेशेषु वदेन्मृतिम् ॥ ३५॥

जन्मलग्नेश तथा लग्ननवांशेश में जो बली हो वह जिस राशि में बैठा हो उस राशि के चरादि लक्षणों ग्राम्यादि संज्ञा के अनुसार मृत्यु किस स्थान पर होगी यह बताना चाहिए ॥३५॥

पुनश्च तत्फलकथनम्

स प्राणी चेदन्यखेटैः समेतः सन्दृष्टो वा तेषु वीर्यान्वितस्य ।
लग्नांशाधीशस्य वा देहभाजां देवाम्ब्वादिस्थानभेदेषु मृत्युः ॥ ३६॥
लग्नलग्नेशयुग्दृष्टा वास्ति चेत्कश्चनामुना ।
जीर्णसंस्कृतदेहादौ मरणं कैश्चनेरितम् ॥ ३७॥

यदि उपर्युक्त ग्रह बलवान् (लग्नेश या लग्ननवांशेश) होकर अन्य ग्रहों से युत या दृष्ट हो तो उन युतिकर्त्ता ग्रहों में से जो बली हो उसके लग्नेश-नवांशेश से पुराने घरों में कूपादि की स्थिति कहनी चाहिए, वहाँ मृत्यु होती है ॥३६॥

लग्नारूढ, लग्नेशयुक्त, लग्नदर्शी, लग्नेशदर्शी इन चारों ग्रहों में जो ग्रह बली हो उससे पुराने घरों में कूपादि की स्थिति है ऐसा कहना चाहिए, ऐसा कुछ आचार्यों का मत है ॥३७॥

पुनश्च मरणस्य शुभाशुभत्वम्

ज्ञात्वा कालादि सर्वं तदशुभशुभते चापि बुध्वाथ तेषां;
सर्वेषां चेच्छुभत्वं गदशमनमरं दीर्घमायुश्च वाच्यम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्वेषाञ्चाशुभत्वं यदि मृतिरचिरान्मिश्रतायान्तु तेषां,
मन्दं शान्ती रुजां वा मृतिरधिकतया स्यात्सतां चासताञ्च ।। ३८।।

मृत्यु का समय तथा उसकी शुभता-अशुभता का निश्चय करें । यदि शुभ फल की अधिकता हो तो रोगशान्ति होगी तथा दीर्घायुष्य है ऐसा कहें । यदि अशुभ फल की अधिकता हो तो शीघ्र मृत्यु होती है । यदि मिश्रित स्थित हो तो न्यूनाधिकता के अनुसार फलकथन करें ।।३८।।

अध्यायोपसंहार:

एवं निरूप्य निर्णीते मरणे सति पृच्छताम् ।
तस्य कालञ्च रोगांश्च देशांश्चेति विनिर्दिशेत् ।। ३९।।

।। इति प्रश्नमार्गे एकादशोऽध्याय: ।।

—*—

इस प्रकार से निरूपण करते हुए पृच्छक की मृत्यु का निश्चय कर लेने पर मृत्यु का समय, रोग तथा मृत्यु का स्थान बताना चाहिए ।।३९।।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय'
हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का ग्यारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।११।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ द्वादशोऽध्यायः

अथ रोगविशेषा उच्यन्ते

निर्णीते सति जीवने खलु रुजां शान्त्यै चिकित्सां वदे-
दज्ञातेषु गदेषु दुष्करतरा सा चापि यस्मात्ततः।
कर्तव्यो गदतत्त्वबोध इह तद्बोधाय भेदा रुजां;
कथ्यन्ते खलु तत्र रोगशमने कार्याः क्रियाश्चोचिताः।। १।।

पूर्व में कथित सूत्रों से जीवनावधि (Life span) का निर्णय कर उत्पन्न रोग की शान्ति हेतु चिकित्सा बतानी चाहिए। क्योंकि रोगनिदान के बिना चिकित्सा असम्भव कार्य है, एतदर्थ रोगों के भेद जानने के लिए गदतत्त्वबोध (रोगनिदान-विज्ञान=Diagnosis of diseases) का अध्ययन करना चाहिए। अब रोगशान्ति के इस अध्याय में रोगप्रतिकार के उचित उपाय बतलाये जा रहे हैं ।।१।।

ज्योतिष तथा आयुर्वेद का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध—प्राचीन काल में वैद्यजन ज्योतिषशास्त्र का तथा दैवज्ञ जन आयुर्वेदशास्त्र का अध्ययन करते थे। आचार्य सुश्रत तथा अग्निवेश दोनों ने ही वैद्य को बहुश्रुत होना चाहिए ऐसा कहा हैं। बहुश्रुत का अर्थ है अनेक शास्त्रों (विषयों) का जानकार होना। दक्षिण भारत में विशेषकर केरल प्रदेश ज्योतिष और आयुर्वेद के गढ़ रहे हैं। यही कारण है कि फलित के गूढ़ रहस्यों का प्रतिपादन करने वाले ग्रन्थ केरलीय विद्वानों द्वारा लिखे गये हैं। केरल की पञ्चकर्म चिकित्सा की तो भारतवर्ष में सर्वत्र धाक है। इस अध्याय के प्रथम श्लोक में ज्योतिषी को आयुर्वेद के निदानशास्त्र का अध्ययन करने की सलाह दी गयी है।

ग्रहस्थितिवशाद् रोगज्ञानम्

तत्तदुक्तामया वाच्या अनिष्टस्थानगैर्ग्रहैः।
इष्टस्थितैस्तथारोग्यं तदेवाथ निगद्यते ।। २।।

जो ग्रह कुण्डली में अनिष्ट स्थानों में बैठे हों उनसे उनके रोगों का कथन करना चाहिए तथा जो ग्रह शुभस्थानों (केन्द्र-त्रिकोणादि) में बैठे हों उनसे आरोग्य को बताना चाहिए ।।२।।

ग्रहाणां शुभाशुभस्थितिः

पापा लाभतृतीयगाः सहजवैर्यन्त्याष्टमेभ्योन्यगाः;
सौम्या मान्दिरपि त्रिकोणमृतिकेन्द्रेभ्योपरत्र स्थितः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्वेऽमी कथयन्त्यनामयतनुं प्रष्टारमेवं स्थिता;
रोगग्रस्तकलेवरं च कथितेभ्योऽन्यत्र ते संस्थिताः ।। ३।।

प्रश्नलग्न अथवा जन्मलग्न से पापग्रह ग्यारहवें, तीसरे भावों में हों, शुभग्रह ३-६-८-१२ इन स्थानों को छोड़ कर शेष आठ भावों में कहीं भी बैठे हों । गुलिक भी त्रिकोण (९-५), अष्टम तथा केन्द्र (१-४-७-१०) स्थानों को छोड़कर अन्य किसी भी भाव में स्थित हों तो पृच्छक तथा जातक स्वस्थ एवं निरोग होगा ऐसी सूचना मिलती है । यदि ग्रहों की स्थिति इससे विपरीत हो तो कुण्डली में रोगग्रस्त होने का संकेत जानना चाहिए ।।३।।

सुस्थ–दुःस्थसंज्ञा

आरोग्यदा ग्रहा यत्र सुस्थसंज्ञास्तु तत्रगाः ।
रोगदा तत्र ये दुःस्थास्तदुक्तं सारसंग्रहे ।। ४।।

पूर्वोक्त श्लोक ३ में जिन भावों में ग्रह आरोग्यकारक होते हैं उनमें ग्रहों की स्थिति "सुस्थ" संज्ञक होती हैं तथा जिन भावों में बैठने से ग्रह रोगकारक होते हैं उनकी संज्ञा "दुःस्थ" होती है । यह सारसंग्रह नामक ग्रन्थ का कथन है ।।४।।

तात्पर्य यह है कि ग्रह की आरोग्यदायक स्थिति "सुस्थ" तथा रोगप्रद स्थिति "दुःस्थ" कहलाती है ।

पुनश्च दुःस्थ–सुस्थसंज्ञाकथनम्

षष्ठान्त्याष्टमदाम्बुलग्ननमापत्येषु ये दुर्बलाः;
पापाः षष्ठमृतिव्ययेष्वपि शुभा दुःस्था भवन्ति ग्रहाः ।
लग्नेशाध्यरयोतिरोगमृतिदा दुःस्थेषु सुस्थाश्च ते-
ऽनुक्तस्थानगताः शशाङ्कसहिताः स्वं स्वं फलं कुर्वते ।। ५।।

यदि दुर्बल पापग्रह छठे, आठवें, बारहवें, सातवें, चौथे, लग्न में, नौवें तथा पाँचवें भावों में बैठें तो "दुःस्थ" संज्ञक होते हैं । इसी प्रकार यदि शुभ ग्रह ६-८-१२ भावों में बैठें तो उनकी भी "दुःस्थ" संज्ञा होती है । जो ग्रह लग्नेश के अधिशत्रु हाते हैं तथा जो ग्रह "दुःस्थ" (दुःस्थिति) हैं वे ग्रह चिरकालीन रोग (Chronic diseases) देते हैं और मृत्युकारक होते हैं । इन स्थानों के अतिरिक्त स्थानों में स्थित तथा चन्द्र के साथ बैठे ग्रह "सुस्थ" संज्ञक होते हैं वे अपने नामके अनुरूप फल देते हैं ।।५।।

शरीरे रोगाधिष्ठानज्ञानम्

द्विणमृत्युव्ययसंस्थितैस्तदुदितान् व्याधीन् वदेल्लग्नवद् ;
द्रष्ट्रा तत्सहितेन वा तनुगतैस्तद्द्रष्टृभिर्वा ग्रहैः ।
ऊर्ध्वास्ये चरभे गलोपरि गलात्तिर्यङ्मुखे च स्थिरे;
द्वन्द्वेऽधोमुखगेऽप्यधः कटितटात् लग्नस्थिते व्याधयः ।। ६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दूसरे, आठवें, बारहवें भावों में बैठे ग्रहों से इन स्थानों के द्रष्टा ग्रहों से और द्रष्टा के साथ बैठने वाले ग्रहों से, इसी प्रकार लग्न में बैठे तथा लग्नद्रष्टा ग्रहों के अनुसार उन ग्रहों से सम्बन्धित रोगों को कहना चाहिए। ऊर्ध्वमुख राशि (सूर्य से बारहवीं) और चर राशि का लग्न होने पर कण्ठ से ऊपर (ऊर्ध्वजत्रु) रोग होता है। तिर्यङ्मुख (सूर्य से द्वितीय राशि) राशि तथा स्थिर राशि के लग्न में कण्ठ से लेकर कटि पर्यन्त रोग होता है। अधोमुख (सूर्ययुक्त राशि) तथा द्विस्वभाव राशि के लग्न होने पर कटि से नीचे के शरीर भाग में विकार होता है ॥६॥

ऊर्ध्व-मध्य-अधोभाग में रोगप्रदर्शक चक्र

(१) ऊर्ध्वभाग (गले से ऊपर)	(२) मध्यभाग गले से कमर के बीच	(३) अधोभाग (कमर से पैरों तक)	**शरीरभाग**
ऊर्ध्वमुख राशि (सूर्य से बारहवीं) तथा चर राशि	तिर्यङ्मुख राशि (सूर्य से दूसरी राशि) तथा स्थिर राशि	अधोमुख राशि (सूर्य से युक्त राशि) तथा द्विस्वभाव राशि	**लग्न की राशि का प्रकार**

शरीरे सूर्यादिग्रहाणामङ्गकथनम्

सूर्यादीनां कुक्षिहृन्मूर्धवक्षांस्यूरू वक्त्रं जानुनी चाङ्घ्रियुग्मम्।
अङ्गानि स्युर्व्याधयोऽङ्गे ग्रहाणां वक्तव्या दौर्बल्यदौस्थ्यादिभाजाम् ॥ ७॥

सूर्यादि ग्रहों का क्रमशः शरीर के (१) कुक्षि, (२) हृदय, (३) मूर्धा (शिर), (४) वक्ष (छाती), (५) ऊरु (कमर से घुटने तक का भाग), (६) वक्त्र (मुख), (७) जानु (घुटने) तथा (८) अङ्घ्रिद्वय (दोनों पैर)—इन अंगों पर अधिकार होता है ॥७॥

ग्रहों के शरीराङ्गों पर प्रभाव का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	**ग्रह**
कुक्षि (पेट)	हृदय	मूर्धा (शिर)	वक्ष (छाती)	(कमर से घुटनों तक) ऊरु	वक्त्र (मुख)	जानु (दोनों घुटने)	अङ्घ्रि (दोनों पैर)	**शरीर के अंग**
Stomach & Abdomen	Heart	(Head)	Chest	Thighs	Face and Mouth	Knees	Feet	**Organs**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्वादशभावानां शरीराङ्गकथनम्

वराङ्गपूर्वावयवा निधेया लग्नादिभावेष्वधिपेषु चैषाम् ।
सक्रूरभावग्रहसंस्थमङ्गं सव्याधिकं प्रष्टृजनस्य वाच्यम् ।। ८।।

जन्मलग्न, प्रश्नलग्न तथा आरूढलग्न से लग्नादि द्वादश भावों में शिर आदि शरीराङ्गों की कल्पना करनी चाहिए । जो भाव तथा भावस्वामी क्रूर ग्रह से युक्त हो वह भाव शरीर के जिस अंग का प्रतिनिधित्व करता हो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति के उसी शरीरांग में व्याधि बतानी चाहिए ।।८।।

स्पृष्टाङ्गराशितः रोगविचारः

स्पृष्टेन राशिना प्रष्ट्रा चारूढेनोदयेन च ।
रोगस्थानं वदेदुक्तमारूढविषय हि तत् ।। ९।।

प्रश्नकर्ता अपने शरीर के जिस अंग का स्पर्श करे उस अंग से सम्बन्धित राशि अंग में रोग होता है । इसी प्रकार का विचार आरूढ लग्न से करना चाहिए ।।९।।

द्वादश भावों एवं भावेशों के शरीरांग-प्रभावद्योतक चक्र

भाव	भावेश	शरीरांग (वराह के मत से)
लग्न	लग्नेश	शिर (वराङ्ग)
द्वितीय	द्वितीयेश	मुख (आनन)
तृतीय	तृतीयेश	बाहु
चतुर्थ	चतुर्थेश	हृदय
पंचम	पंचमेश	उदर
षष्ठ	षष्ठेश	कटि
सप्तम	सप्तमेश	वस्ति
अष्टम	अष्टमेश	गुह्य
नवम	नवमेश	ऊरु
दशम	दशमेश	जानु
एकादश	एकादशेश	जङ्घा (पिंडली)
द्वादश	द्वादशेश	चरण

सारसंग्रहमतेन त्रिदोषविभागः

प्रोक्तस्त्रिदोषसम्बन्धो वराहमिहिरोदितः ।
ग्रहाणां प्रागथेदानीं वच्म्युक्तं सारसङ्ग्रहे ।। १०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पहले वराहमिहिरोक्त ग्रहों का त्रिदोषकथन बताया जा चुका है, अब सारसंग्रह के अनुसार त्रिदोष का वर्णन ग्रहों के अनुसार किया जा रहा है ॥१०॥

ग्रहाणां वातादिदोषाः

पित्तं वायुयुतं करोति दिनकृद्वातं कफं शीतगुः
पित्तं भूमिसुतस्तथा शशिसुतो वातञ्च पित्तं कफम् ।
जीवो वातकफौ सिताऽनिलकफौ वातञ्च पित्तं शनिः;
क्षीणेन्दुः स्थिरराशिनाथकथितं पूर्णः कफं तोयभे ॥ ११॥

सूर्य से वात+पित्त विकार, चन्द्र से वात+कफजन्य रोग, मंगल से पैत्तिक रोग, बुध से त्रिदोषज (वात+पित्त+कफ) रोग, गुरु से वात+कफ (द्विदोषज) विकार, शुक्र से वात+कफ (द्विदोषज) रोग तथा शनि से वात+पित्त जन्य विकार उत्पन्न होते हैं। क्षीण चन्द्र जिस राशि में बैठता है उसके स्वामी के अनुसार रोग करता है। पूर्ण चन्द्र जलराशि में कफरोग करता है ॥११॥

सारसंग्रह के इस मत के अनुसार केवल मंगल से एकदोषज रोग होता है, बुध से त्रिदोषज तथा शेष ग्रहों से द्विदोषज रोग उत्पन्न होते हैं।

रोगाणाम् ऋतुसम्बन्धकथनम्

रोगान्कुर्युर्ग्रहाः स्वोक्तपञ्चभूतवशादपि ।
तत्कालाश्चर्तवः स्वोक्तास्तथा शास्त्रान्तरोदितम्॥ १२॥

ग्रह अपने (मेदिनी ज्यातिष के प्रभावानुसार) पाञ्चभौतिक प्रभाव से ऋतुओं को उत्पन्न करते हैं, अतः ऋतुओं के कारण भी ऋतुजन्य रोग उत्पन्न होते हैं—ऐसा शास्त्रान्तरों में कहा गया है ॥१२॥

ग्रहाणां दुःस्थानस्थितिवशाद्रोगकथनम्

दुस्थयोरर्कभूसून्वो रोगाः स्युः पित्तसम्भवाः ।
शुक्रेन्द्वोर्जलजा मन्दे वातजा ज्ञे त्रिदोषजाः ॥ १३॥
बाधिर्याद्या नभोजाता अनिष्टस्थानगे गुरौ ।
अनिष्टगा निजान् रोगान् कुर्युर्निजनिजर्तुषु ॥ १४॥

दुःस्थान (६-८-१२) में स्थित सूर्य एवं मंगल पित्तजन्य रोग उत्पन्न करते हैं। यदि उक्त स्थानों में शुक्र तथा चन्द्र बैठे हों तो शरीर में जल तत्व की वृद्धि से होने वाले रोग उत्पन्न होते हैं। शनि की दुःस्थान स्थिति (६-८-१२में) से वातविकार, बुध की स्थिति से त्रिदोषज रोग तथा गुरु के अनिष्ट स्थानों में होने पर आकाश तत्त्व की विकृति से बाधिर्य (Deafness) आदि व्याधियाँ होती हैं। अनिष्ट स्थानों में बैठे ग्रह अपने-अपने रोगों को अपनी-अपनी ऋतुओं में उत्पन्न करते हैं ॥१३-१४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) वसन्त का स्वामी शुक्र, (२) ग्रीष्म का स्वामी सूर्य-मंगल, (३) वर्षा का स्वामी चन्द्र, (४) शरद् का स्वामी बुध, (५) हेमन्त का स्वामी गुरु तथा (६) शिशिर का स्वामी शनि होता है । इस प्रकार ऋतुजन्य रोगों में भी ग्रहों की भूमिका ही होती हैं ।

ग्रन्थान्तरमतम्

रोगदायिषु खेटेषु तत्तत्प्रोक्तेषु धातुषु ।
अपि रोगोद्भवो वाच्यः प्रोक्तं ग्रन्थान्तरे तथा ।। १५।।
दुःस्थितास्थ्यादिधातुस्थो रोगिणां रोग ईर्यताम् ।
रोगप्रश्नेऽथवा रोगदाश्रितांशपधातुगः ।। १६।।

रोगप्रद ग्रह शरीर की अपनी-अपनी अस्थि आदि सप्त धातुओं को विकृत कर रोग उत्पन्न करते हैं । ऐसा ग्रन्थान्तरों में बताया गया है ।।१५।।

प्रश्नकुण्डली में रोगप्रश्न के विचार में दुःस्थान में स्थित ग्रह की जो धातु है उसमें रोग उत्पन्न होता है । अथवा रोगकारक ग्रह जिस अन्य ग्रह के नवांश में बैठा हो उस ग्रह से सम्बन्धित धातु की विकृति से रोग करता है । ऐसा बताना चाहिए ।।१६।।

रोगाणां भेदाः

सन्ति प्रकारभेदाश्च रोगभेदनिरूपणे ।
ते चाप्यत्र विलिख्यन्ते यथा शास्त्रान्तरोदिताः ।। १७।।
रोगास्तु द्विविधा ज्ञेया निजागन्तुविभेदतः ।
निजाश्चागन्तुकाश्चापि प्रत्येकं द्विविधाः पुनः ।। १८।।
निजा शरीरचित्तोत्था दृष्टादृष्टनिमित्तजाः ।
तथैवागन्तुकाश्चैवं व्याधयः स्युश्चतुर्विधाः ।। १९।।

रोगों का वर्गीकरण इस प्रकार है—शास्त्रान्तरों (आयुर्वेदीय ग्रन्थों; यथा-चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, भेलसंहिता, काश्यपसंहिता, अष्टाङ्गसंग्रह, अष्टाङ्गहृदय, माधवनिदान आदि) में रोग अनेक प्रकार के बताये हैं उनको अब आगे लिखा जा रहा है ।।१७।।

निज तथा आगन्तुज भेद से रोग दो प्रकार के होते हैं, फिर इन दोनों में से प्रत्येक के दो-दो भेद हैं ।।१८।।

(१) निज रोग (क) शारीरिक (Physical तथा (ख) चित्तोत्थ (मानसिक=Mental disease) दो प्रकार के होते हैं । (२) आगन्तुज रोग (क) दृष्ट निमित्तजन्य (जिनके कारण का प्रत्यक्ष पता रहता है), (ख) अदृष्ट निमित्तजन्य (जिनके कारण का प्रत्यक्षतः पता नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लगता, यथा भूत-प्रेतादि) इस वर्गीकरण से दो प्रकार के होते हैं। इस प्रकार रोग चार प्रकार के होते हैं ॥१९॥

रोगों का वर्गीकरण

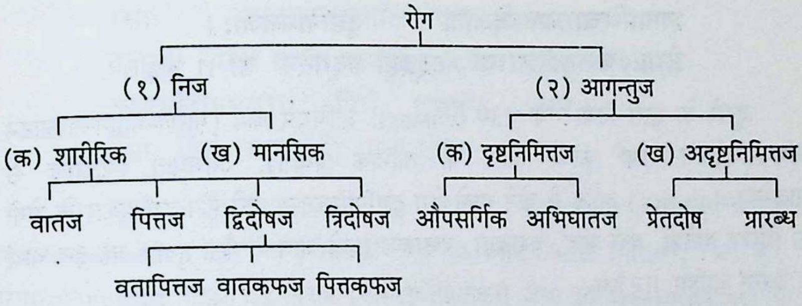

शारीरिकरोगा:

वातपित्तकफोद्भूता: पृथक्संसर्गजास्तथा।
सन्निपातभवाश्चैते शारीरा: कीर्तिता गदा: ॥२०॥

(१) वातदोष से, (२) पित्तदोष से, (३) कफदोष से, (४) वात तथा पित्त के मिश्रण से, (५) वात-कफ के मिश्रण से, (६) पित्त-कफ के मिश्रण से तथा (७) वात+पित्त+कफ तीनों दोषों के मिश्रण (सन्निपात) से जो रोग रोग उत्पन्न होते हैं उन्हें शारीरिक रोग कहा जाता है (क्योकि ये शरीर में उत्पन्न दोषविकृति से पैदा होते हैं) ॥२०॥

शारीरिकरोगा:

अष्टमेन तदीशेन तद्द्रष्ट्रा तद्गतेन वा।
विज्ञातव्या: स्युरेतेषां वीर्यतस्तत्कृता गदा: ॥२१॥

शारीरिक रोगों (Somatic diseases) का विचार अष्टमेश, अष्टम भाव, अष्टमद्रष्टा ग्रह तथा अष्टमस्थ ग्रह से होता है। इनमें जो बली ग्रह होता है वह अपना रोग उत्पन्न करता है ॥२१॥

मानसिकरोगा:

क्रोधसाध्वसशोकादिवेगजातास्तु मानसा:।
ज्ञेया रन्ध्रमनोनाथमिथो योगेक्षणादिभि: ॥२२॥

क्रोध, साध्वस (भय=Fear), शोक (Sorroue) आदि मानसिक वेगों को धारण करने से मानसिक रोग होते हैं। इन मनोरोगों का विचार अष्टमेश तथा चतुर्थेश की युति एवं दृष्टिसम्बन्धादि से करनी चाहिए। कुछ विद्वानों ने मनोनाश का अर्थ पञ्चमेश ग्रहण किया है जो कि समीचीन नही है, क्योंकि चतुर्थ स्थान हृदय का तथा पंचम स्थान मन का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है अत: मानसिक रोगों में पञ्चम भाव की भूमिका महत्त्वपूर्ण है । अत: अष्टमेश तथा पञ्चमेश के सम्बन्ध में विचार करना भी उचित है ॥२२॥

दृष्टनिमित्तजरोगाः

शापाभिचारघातादिजाता दृष्टनिमित्तजाः ।
ज्ञेयाः षष्ठतदीशाभ्यां तद्द्रष्ट्रा तद्गतेन वा ॥ २३॥

दूसरे के द्वारा दिया गया शाप (curses), अभिचार कर्म (मारण-मोहन-उच्चाटन स्तंभन-विद्वेषण तथा कृत्या आदि के तान्त्रिक प्रयोग), अभिघात (शस्त्रादि से आक्रमण=Injuries) आदि से होने वाले रोग दृष्टनिमित्तजन्य होते हैं । इस प्रकार के रोगों का विचार षष्ठेश, षष्ठ भाव, षष्ठद्रष्टा, षष्ठारूढ (छठे भाव में बैठा हुआ) ग्रह इन चारों से करना चाहिए ॥२३॥

अदृष्टनिमित्तजरोगाः

रन्ध्रेशषष्ठसम्बन्धे शापाद्याः प्रबलाश्च ते ।
अदृष्टहेतुजा ज्ञेया बाधकग्रहसम्भवाः ॥ २४॥

पूर्व में कथित जो दृष्टनिमित्तज रोग हैं उनमें यदि षष्ठेश तथा अष्टमेश का सम्बन्ध हो तो वे रोग उग्र हो जाया करते हैं । जो अदृष्टनिमित्तज रोग (unknown causes disease) हैं वे बाधक ग्रहों के कारण उत्पन्न होते हैं । वे पूर्व जन्म के प्रारब्ध से हुआ करते हैं । इनमें अनेक बार चिकित्सकों द्वारा किसी कारण का पता नहीं चल पाता है ॥२४॥

प्रश्नेन रोगनिर्णयः

दृष्टं वा यच्छ्रुतं द्रव्यं प्रश्नकाले यदृच्छया।
तद्वशाच्च रुजां भेदा ज्ञेया ग्रन्थान्तरे तथा ॥ २५॥
यस्य रोगस्य यद्द्रव्यमपथ्यं तस्य वीक्षणे ।
श्रवणे वास्य विज्ञेयः स रोगो रोगचिन्तने ॥ २६॥

प्रश्नकाल में अकस्मात् जो पदार्थ देखा जाय अथवा जिसके बारे में अचानक चर्चा या उसका नाम सुनाई पड़े तो उस पदार्थ की उपयोगिता या सम्बन्ध के आधार पर रोग किस प्रकार का तथा कौन-सा है? यह विचार करना चाहिए । यह कथन ग्रन्थान्तरों में हैं ॥२५॥

जिस रोग का जो अपथ्यकारक द्रव्य है वह द्रव्य यदि प्रश्नकाल में देखने या सुनने को मिले तो उसके अनुसार भी रोग का निश्चय करना चाहिए ॥२६॥

मान लीजिए—दैवज्ञ के पास रोग से सम्बन्धित प्रश्न पूछा गया और उसी समय कोई व्यक्ति दुकान से नमक की थैली लेकर आवे तो समझना चाहिए कि जलोदर, उरस्तोय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(Pleurisy), तोयशीर्ष (Hydrocephalus), जलवृषण (Hydrocele) तथा जलीय शोथ (Dropsy) आदि जलतत्त्व के रोग हैं, क्योंकि नमक इसमें अपथ्य (हानिकर) होता है।

अत्राष्टाङ्गहृदयम्

रसाः स्वाद्वम्ललवणतिक्तोषणकषायकाः।
तत्राद्या मारुतं घ्नन्ति त्रयस्तिक्तादयः कफम् ॥ २७॥
कषायतिक्तमधुराः पित्तं पुष्णन्ति चेतरे।
वातः पित्तं कफश्चेति त्रयो दोषाः समासतः॥ २८॥

(१) मधुर (मीठा=Sweet), (२) अम्ल (खट्टा=Sour), (३) लवण (नमकीन=Saltish), (४) तिक्त (नीम की तरह का स्वाद=Acid, Bitter), (५) कटु (चरपरा=Pungent) तथा (६) कषाय (कसैला=फिटकरी जैसा स्वाद=Astringent) ये पदार्थों के रस (स्वाद=Taste) होते हैं। इनमें मधुर, अम्ल, लवण ये वातनाशक होते हैं। तिक्त, कटु तथा कषाय ये कफनाशक होते हैं। कषाय, तिक्त तथा मधुर रस पित्त को शान्त करते हैं।

इसी प्रकार मधुर, अम्ल, लवण रस कफ को बढ़ाते हैं। तिक्त, कटु, कषाय रस वायु को बढ़ाते हैं। अम्ल, लवण, कटु रस पित्त को बढ़ाते हैं। वात-पित्त-कफ ये तीन दोष होते हैं ॥२७-२८॥

छः रसों द्वारा तीन दोषों के शमन-प्रकोपक का चक्र

वात (वायु)	पित्त (अग्नि)	कफ (जल)	दोष
मधुर अम्ल लवण	मधुर तिक्त कषाय	तिक्त कटु कषाय	**क्षयकारक (शामक) रस**
तिक्त कटु कषाय	कटु अम्ल लवण	मधुर अम्ल लवण	**वृद्धिकारक (प्रकोपक) रस**

ग्रहदोषानुसारेण रोगोत्पत्तिः

यस्य ग्रहस्य यो दोषः पित्तादिष्विह कीर्तितः।
तेन रोगे तु वक्तव्ये वाच्यस्तद्दोषजो गदः॥ २९॥

पूर्व में इस ग्रन्थ में ग्रहों के जो वातादि दोष बताये गये हैं उनके अनुसार ही रोग-कारक ग्रह रोगोत्पन्न करते हैं ॥२९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्य-मंगल पित्तरोग, शनि वायुरोग, चन्द्र कफरोग करता है। इसी प्रकार का अन्य ग्रहों से जानना चाहिए। श्लोक २७।२८ के विचार अष्टांगहृदय अ. १ श्लोक १४-१६ में तथा अष्टाङ्गसंग्रह अध्याय १ श्लोक ३५-३६ में दिये गये हैं।

पापालोकिताद्यानां ग्रहाणां रोगकारकत्वम्

पापालोकितयोराद्यैर्योगैर्होरादिषूदितैः ।
अपि ज्ञेया रुजां भेदाः प्राग्जन्मदुरितोद्भवाः ॥ ३०॥

ग्रहों की पाप युति, दृष्टि, पूर्वजन्म के पापों से उत्पन्न रोग—इन सब रोगभेदों के ज्ञान के लिए होराशास्त्र (बृहज्जातकादि) का अध्ययन करना चाहिए ॥३०॥

उन्मादकरयोगानुच्यते

लग्नस्थे धिषणे दिवाकरसुतो भौमोऽथवा द्यूनगो;
मन्दे लग्नगते मदात्मजतपः संस्थो महीनन्दनः ।
मूर्तौ लग्नशशीन्दुजौ कृशशशी मन्दश्च रिष्फस्थितौ;
पापोपेतकृशामृतांशुरुदयाय स्वान्तधर्मोपगः ॥ ३१॥
अस्ते पापयुतो मान्दिर्वित् त्रिषष्ठाष्टमान्त्यगः ।
उन्माददायिनो योगा एवमष्टौ समीरिताः ॥ ३२॥
कारणमुन्मादानामुन्मत्तानां तथैव चेष्टाद्यम् ।
कथ्यत इह तद्भेदास्तत् खलु शास्त्रान्तरेषु निर्दिष्टम् ॥ ३३॥
हर्षेच्छाभयशोकादेर्विरुद्धाऽशुचिभोजनात् ।
गुरुदेवादिकोपाच्च पञ्चोन्मादा भवन्त्यथ ॥ ३४॥
त्रिदोषजाः सन्निपाता आगन्तव इति स्मृताः ॥ ३४½॥

(१) यदि लग्न में गुरु तथा सप्तम भाव में शनि हो तो उन्माद रोग होता है।

(२) यदि लग्न में बृहस्पति तथा सप्तम में मंगल हो तो उन्माद होता है।

(३) यदि लग्न में शनि हो तथा मंगल त्रिकोण एवं सप्तम भाव में बैठा हो तो उन्मादकारक होता है।

(४) यदि लग्न में क्षीण चन्द्र तथा चन्द्रपुत्र बुध हों तो उन्मादकारक योग होता है।

(५) जब क्षीण चन्द्र तथा शनि दोनों की युति व्ययभाव में हो;

(६) जब क्षीण चन्द्र पापयुत होकर लग्न, एकादश, नवम भाव में हों तो उन्मादकर योग होता है।

(७) सप्तम भाव में गुलिक के साथ अन्य पापग्रह बैठे हों तो भी उन्मादकर योग होता है।

(८) ३-६-८-१२ स्थानों में पापग्रहों से युक्त बुध भी उन्मादकारक होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार यहाँ पर आठ योग दिये गये हैं जिनमें उन्माद उत्पन्न होता है ॥३१-३२॥

उन्माद के भेद—कारकों के भेद से उन्मादग्रस्त व्यक्ति की चेष्टाएँ विविध प्रकार की होती हैं। उन लक्षणों से ही यह जाना जाता है कि यह उन्माद का कौन-सा भेद है, अतः शास्त्रान्तरों (आयुर्वेदीय ग्रन्थों) से उन भेदों का वर्णन यहाँ किया जाता है ॥३३॥

हर्ष, इच्छा, भय, शोक आदि से तथा विरुद्ध (उल्टा-सीधा) अपवित्र भोजन करने से, गुरु जन, देवता आदि के प्रकोप से पाँच प्रकार का उन्माद होता है। इस प्रकार इसके वातज, पित्तज, कफज, सन्निपातज तथा आगन्तुज ये मुख्य भेद हो जाते हैं ॥३४॥

वातोन्मादलक्षणम्

हसनास्फोटनाक्रन्दगीतनर्तनरोदनम् ॥ ३५॥
अस्थानमङ्गविक्षेपस्ताम्रा मृदुकृशा तनुः ।
जीर्णे बलञ्च वाग्बह्वी वातोन्मादस्य लक्षणम् ॥ ३६॥

अकारण ही हँसना, ताली बजाना, चिल्लाना, गाना, नाचना, रोने लगना, बिना कारण के हाथ-पैरों को फटकारना (फेंकना या चलाना), शरीर का ताम्रवर्ण तथा दुबला हो जाना, कमजोर (जीर्ण) होने पर भी शरीर में बहुत ताकत होना तथा अधिक बोलना—ये सभी वातज उन्माद के लक्षण होते हैं ॥३५-३६॥

पित्तोन्मादलक्षणम्

संरम्भामर्षवैदग्ध्यमभिद्रवणतर्जनम् ।
छायाशीतान्नतोयेच्छा रोषः पीतोष्णदेहता ॥ ३७॥

संरंभ (उत्तेजना=हुल्लड़ मचाना), क्रोध, वैदग्ध्य (विशेष विद्वत्ता की बातें करना), अभिद्रवण (दूसरों पर आक्रमण कर बैठना), छाया में बैठने की इच्छा होना, शीतल भोजन तथा शीतल पेय की इच्छा होना, रोष (शरीर पर रोशनी=चमक-सी दिखना), शरीर का स्पर्श में गर्म तथा पीत वर्ण होना—ये पित्तोन्माद के लक्षण हैं ॥३७॥

कफोन्मादलक्षणम्

नारीविविक्तप्रियता, निद्राऽरोचौ मनाग्वचः ।
लाला छर्दिर्बलं भुक्तौ नखादिषु च शुक्लता ॥ ३८॥

स्त्री के साथ एकान्त की इच्छा, नींद की अधिकता, अरुचि (Anorexia), मन ही मन बोलना या कम बोलना, मुँह से लार गिरना, उबकाई आना, भोजन के बाद बढ़ना, नख, नेत्र आदि का सफेद होना—ये कफज उन्माद के लक्षण हैं ॥३८॥

कफज उन्माद भोजन के बाद बढ़ता हैं अथात् भोजन से बल पकड़ता है " बलं भुक्तौ" का यही अर्थ है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सन्निपातजोन्मादः

एताः पित्तकफोन्मादचेष्टाः श्लोकोदिताः क्रमात् ।
सम्मिश्रलक्षणो वर्ज्य उन्मादः सान्निपातिकः ।। ३९।।

ऊपर पित्तज, कफज उन्माद के लक्षण बताये हैं । सन्निपातोन्माद में वात-पित्त-कफ इन तीनों का मिश्रण (सन्निपात) होने से तीनों के लक्षण होते हैं । इसकी चिकित्सा असाध्य होती है अतः इसे भगवान् भरोसे छोड़ देना चाहिए ।।३९।।

सन्निपातज में चिकित्सा विधि परस्पर विरुद्ध होती है अतः इसे त्याज्य कहा है । माधवनिदान में भी कहा है—

"यः सन्निपातप्रभवोऽतिघोरः;
सर्वैः समस्तैः स च हेतुभिः स्यात् ।
सर्वाणि रूपाणि बिभर्ति तादृग्
विरुद्धभैषज्यविधिर्विवर्ज्यः" ।।
(मा.नि. २०।१३)

आगन्तुकोन्मादः

आगन्तवो ग्रहा ज्ञेयास्ते तु देवासुरादयः ।
अमर्त्या बलवाग्ज्ञानविक्रमादिसमन्विताः ।। ४०।।

देवता, असुर आदि आगन्तव कहे जाते हैं । ये अमर होते हैं तथा शारीरिक शक्ति, वाक्शक्ति, ज्ञानशक्ति तथा पराक्रम से युक्त होते हैं । इनके प्रकोप से उत्पन्न उन्माद आगन्तव होता है ।।४०।।

आगन्तुकोन्माद के माधवनिदान में (१) मनोविघातज उन्माद, (२) विषजोन्माद, (३) भूतोन्माद, (४) देवजुष्टोन्माद, (५) असुरोन्माद, (६) गन्धर्वजुष्टोन्माद, (७) यक्ष-जुष्टोन्माद, (८) पितृजुष्टोन्माद (९) नागजुष्टोन्माद, (१०) राक्षसजुष्टोन्माद तथा (११) पिशाचजुष्टोन्माद—इतने भेद बताये हैं तथा इनके अलग-अलग लक्षण वर्णित किये हैं ।

आगन्तुक ग्रहों का आक्रमण काल—ये देवता-असुरादि मनुष्यों पर किस समय आक्रमण करते हैं यह बात भी माधवनिदान (आयुर्वेदीय ग्रन्थ) में इस प्रकार बताई है । पाठकों के लाभार्थ उसे यहाँ लिखते हैं—

"देवग्रहाः पौर्णमास्यामसुराः सन्ध्ययोरपि ।
गन्धर्वाः प्रायशोऽष्टम्यां यक्षाश्च प्रतिपद्यथ ।।
पित्र्याः कृष्णक्षये हिंस्युः पञ्चम्यामपि चोरगाः ।
रक्षांसि रात्रौ पैशाचाश्चतुर्दश्यां विशन्ति हि" ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अर्थात् देवग्रह पूर्णिमा के दिन, असुर दोनों सन्ध्याकालों में, गन्धर्व अष्टमी के दिन, यक्ष प्रतिपदा के दिन, पितृग्रह अमावस्या को, नाग ग्रह पञ्चमी तिथि को, राक्षस ग्रह रात में, पिशाच ग्रह चतुर्दशी तिथि के समय मनुष्यों में प्रवेश करते हैं (इन समयों में उन्माद की वृद्धि=उग्रता भी इनकी पहिचान करा देती है) ।

मानव देह में ये ग्रह कैसे आवेश करते हैं?

इसका उत्तर भी माधवनिदान (२०।२९-३०) में इस प्रकार दिया है—

''दर्पणादीन्यथा छाया शीतोष्णं प्राणिनो यथा ।
स्वमणिं भास्करार्चिश्च यथा देहञ्च देहधृक् ।।
विशन्ति च न दृश्यन्ते ग्रहास्तद्वच्छीरीरिणः ।
प्रविश्याशु शरीरं हि पीडाङ्कुर्वन्ति दुःसहाम्'।।

अर्थात् जिस प्रकार दर्पण आदि में छाया प्रवेश कर जाती है । सूर्यकान्त मणि में सूर्यकिरणों का प्रवेश होता है तथा शरीर में प्राण प्रविष्ट होते एवं निवास करते हैं परन्तु दिखते नहीं हैं; इसी प्रकार ये आगन्तुक ग्रह भी प्रवेश करते हैं तथा घोर पीड़ा उत्पन्न करते हैं ।

कई आचार्य इन ग्रहों के सेवकों द्वारा पीड़ा उत्पन्न होती है ऐसा मानते हैं ।

उन्मादस्य चिकित्सा

वातोन्मादे स्नेहपानं पित्तोन्मादे विरेचनम् ।
श्लैष्मिके नस्यवमनमागन्तुष्वखिलाः क्रियाः ।। ४१ ।।
सर्वे नश्यन्ति चोन्मादा जपहोमादिकर्मतः ।। ४२ ।।

वातज उन्माद में स्नेहपान (औषध सिद्ध घृत) पिलाना चाहिए । पित्तोन्माद में विरेचन (जुलाब) देना चाहिए । कफोन्माद में नस्य (नाक में दवा डालना) देना उचित हैं । आगन्तुजोन्माद में स्नेहनादि सभी आवश्यक क्रियाएँ करनी चाहिए ।।४१।।

जप, होम आदि अनुष्ठान करने से सभी प्रकार के उन्माद ठीक हो जाते हैं ।।४२।।

उन्मादप्रतिपादने सम्प्रदायभेदकथनम्

सम्प्रदायविशेषोऽस्ति पूर्वाचार्यैरुदाहृतः ।
उन्मादकारणादीनां कथने स च लिख्यते ।। ४३ ।।

उन्माद के कारणादि में एक दूसरा दृष्टिकोण भी कुछ आचार्यों ने प्रतिपादित किया है उसे भी यहाँ लिखते हैं ।।४३।।

उन्मादस्य दश हेतवः

विषमाशुचिभोजनोपवासैर्भयवैराग्यमुधाक्रुधाभिचारैः ।
गुरुपावकदेवतापवादैस्त्रिविधोन्माद उदाहृतस्त्रिदोषैः ।। ४४ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दशेति हेतवो भ्रान्तौ देशहेतुभवा अपि ।
त्रिदोषजाः स्युरुन्मादाः पित्तजे बन्धनं भवेत् ।। ४५।।

(१) विषम भोजन करना—दही-मूली, दूध-मछली, दही-सिरका, समान मात्रा में घी-शहद ये विषम या विरुद्ध भोजन हैं । उन्माद का यह प्रथम कारण है ।

(२) अशुचि भोजन—अपवित्र, दूसरे का जूठा, बासी, तामसी, बिना धुला, मिट्टी-कीचड़ादि में सना आदि भोजन ।

(३) उपवास—अधिक मात्रा में भूखा रहना, व्रतोपवास करना ।

(४) भय—किसी बात का भय मन में बैठना अथवा काल्पनिक भय (विभय=Phobia) होना ।

(५) वैराग्य—सांसारिक भोगों के प्रति अरुचि = अनिच्छा होना ।

(६) मुधाक्रुधा—व्यर्थ का क्रोध करना, अधिक क्रोध करना ।

(७) अभिचार—शत्रु द्वारा मंत्र-तंत्र का उपयोग कराना मूठ आदि ।

(८) गुरुजन-निन्दा, (९) यज्ञकर्म (अग्नि) की निन्दा तथा (१०) देव-निन्दा ये दस भ्रान्ति (उन्माद = पागलपन = Insanity) के कारण हैं ।

उन्माद त्रिदोषज भी होता है । पित्तज उन्माद में पागल व्यक्ति को बाँधना पड़ता हैं ।।४४-४५।।

ग्रहयोगवशात् उन्मादहेतूनां कथनम्

चन्द्रशुक्राष्टमाधीशा गोचरेतरगा यदि ।
विषमाष्ट्युपवासोत्थ उन्माद इति निर्दिशेत् ।। ४६।।
केतुमान्द्यहियुक्तेषु चैतेष्वशुचिभुक्तिजः ।
सपापे पञ्चमे भीतिवैराग्योत्थः स भूमिजे ।। ४७।।
क्रोधजोऽथाभिचारोत्थः षष्ठगेष्वशुभेषु सः ।
गुर्वादिशापसम्भूतः पापे नवमसंस्थिते ।। ४८।।
कल्याणपञ्चगव्याज्यसेवाद्येषु विधीयताम् ।। ४९।।

यदि गोचर के अतिरिक्त (जन्मकुण्डली, प्रश्नकुण्डली में भी) चन्द्र, शुक्र एवं अष्टमेश इतर (शुभेतर=अनिष्ट) स्थानों में हों तो विषम-भोजन, उपवास आदि के कारण उन्माद होता है ।।४६।।

यदि चन्द्र-शुक्र-अष्टमेश ये ग्रह केतु, गुलिक तथा राहु से युक्त हों तो अपवित्र भोजन खाने से उन्माद (पागलपन) पैदा होता है । यदि पञ्चम भाव में पापग्रह हों तो भय तथा वैराग्य के कारण उन्माद होता है ।

यदि छठे भाव में अशुभ ग्रह हों तथा पंचम में मंगल हो तो क्रोध के कारण उन्माद होता है । यदि पाप ग्रह नवम भाव में हों तो गुरु आदि के शाप से उन्माद पैदा होता है ।।४७-४८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उन्माद की चिकित्सा में पञ्चगव्य घृत, कल्याण घृत आदि आयुर्वेदोक्त योगों का सेवन करना चाहिए ॥४९॥

कल्याण घृत—उन्माद को दूर करने के लिए आयुर्वेदीय ग्रन्थों में इस घृत की बड़ी प्रशंसा है। चक्रदत्त-उन्मादचिकित्सा श्लोक १३ तथा योगरत्नाकर में कहा है—

"कल्याणकं महद्वापि दद्याद्वा चैतसं घृतम्।
तैलं नारायणञ्चापि महानारायणन्तथा"॥

जिज्ञासुओं के लिए कल्याण घृत का योग "अष्टाङ्गहृदय" से दिया जा रहा है—

"वरा विशाला भद्रैला देवदार्वेलबालुकैः॥
द्विसारिवा द्विरजनी द्विस्थिरा फलिनीततैः।
बृहतीकुष्ठमञ्जिष्ठानागकेसरदाडिमैः॥
वेल्लतालीसपत्रैलामालतीमुकुलोत्पलैः।
सदन्तीपद्मकहिमैः कर्षांशैः सर्पिषः पचेत्॥
प्रस्थं भूतग्रहोन्मादकासापस्मारपाप्मसु।
पाण्डुकण्डुविषे शोषे मोहे मेहे गरे ज्वरे॥
अरेतस्य प्रजसि वा दैवोपहतिचेतसि।
अमेधसि स्खलद्वाचि स्मृतिकामेऽल्पपावके॥
बल्यं माङ्गल्यमायुष्यं कान्तिसौभाग्यपुष्टिदम्।
कल्याणकमिदं सर्पिः श्रेष्ठं पुंसवनेषु च"॥

(अष्टाङ्गहृदय-उत्तरस्थान ६।२६-३१)

अर्थात् त्रिफला, इन्द्रायण, बड़ी इलायची, देवदारु, एलवालुक, सारिवा, कृष्णसारिवा, हल्दी, दारुहल्दी, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, प्रियङ्गु, तगर, कटेरी, कूठ, मजीठ, नागकेसर, अनारदाना, वायविडंग, तालीसपत्र, छोटी इलायची, मालतीपुष्प, कमलपुष्प, दन्ती की जड़, पद्माख तथा लालचन्दन—इनमें से प्रत्येक एक कर्ष (दस-दस ग्राम), गाय का घी एक प्रस्थ (एक लीटर) तथा इन सबका चौगुना जल डालकर लोहे की मोटी तलीवाली कलईदार कड़ाही में धीमी आँच पर पकायें। जब केवल घी मात्र शेष रह जाय, जल समाप्त हो जाय तब उतार कर चौघरिया वस्त्र या फिल्टर से छान लें और काँच पात्र (मर्तबान=मृद्भाण्ड) में भरकर रख लें। इसे योग्य वैद्य के निर्देशन में बनायें तथा रोगी को सेवन करायें। मात्रा १० ग्राम प्रातः-सायं मिश्री मिलाकर गुनगुने गोदुग्ध के साथ सेवन करावें। यह कल्याण घृत भूत, ग्रह, उन्माद (पागलपन), अपस्मार (मिरगी), स्मृति, ह्रास, बुद्धि की कमी, अनिद्रा आदि में कल्याण करता है।

पञ्चगव्य घृत—इसका सरल योग चक्रदत्त तथा योगरत्नाकर में निम्न प्रकार से है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"गोशकृद्दध्यम्लक्षीरमूत्रैः समैर्घृतम् ।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम्" ।।

अर्थात् जितना गाय का घी हो उतना ही गाय का खट्टा दही, उतना ही गाय का गोबर का रस (कपड़े से छाना हुआ), उतना ही गोमूत्र तथा उतना ही गोदुग्ध लेकर मन्दाग्नि पर पकायें । घृत मात्र शेष रहने पर उतार लें । प्रत्येक द्रव्य को एक-एक लीटर लेना सुविधाजनक होगा । इसे योग्य वैद्य के निर्देशन में निर्माण करें तथा उसी के निर्देशन में सेवन करायें । मात्रा ३० ग्राम या आयु-बल के अनुसार मिश्री तथा उष्ण गोदुग्ध के साथ प्रातः-सायं ।

ब्राह्मीघृत—ब्राह्मी के स्वरस में पुराना गोघृत, वच, कूठ तथा शंखपुष्पी का कल्क—इन सब में शुद्ध गोघृत मिलायें तथा चौगुने जल में डालकर पकायें । इसके सेवन से उन्माद तथा अपस्मार (मिरगी) आदि नष्ट होते हैं ।

"ब्राह्मीरसे वचाकुष्ठशङ्खपुष्पीभिरेव च।
पक्वं पुरातनं सर्पिः अपस्मारहरं ध्रुवम्" ।।
(योगरत्नाकर (चक्रदत्त) २१।३०)

इस योग में सभी द्रव्यों को समान भाग लेना चाहिए । मात्रा १० ग्राम प्रातः-सायं मिश्री तथा गुनगुने दूध से चिकित्सक के निर्देशानुसार दें । यह योग अष्टाङ्गहृदय में भी है—

महापैशाचिक घृत (चरक-चिकित्सास्थान १४।५०-६०)

"जटिलां, पूतनाकेशीं, चारटीं मर्कटीं वचाम् ।
त्रायमाणां जयां वीरां चोरकं कटुरोहिणीम् ।।
कायस्थां शूकरीं छत्रामतिच्छत्रां पलङ्कषाम् ।
कटम्भरां वृश्चिकालीं स्थिराञ्चाहृत्य तैर्घृतम् ।।
महापुरुषदन्ताञ्च वयस्थां नाकुलीद्वयम्।
महापैशाचिकं नाम घृतमेतद्यथाऽमृतम् ।।
सिद्धं चातुर्थिकोन्मादग्रहापस्मारनाशनम् ।
बुद्धिस्मृतिकरञ्चैव बालानाञ्चाङ्गवर्धनम्" ।।

यही योग चक्रदत्त में भी है—जटामांसी, बड़ी हरड़, भूतकेशी, नील, क्रौंच के बीज, त्रायमाण, अरणी, क्षीरकाकोली, भटेउर, कुटकी, गुर्च, वाराहीकन्द, सौंफ, सोयाबीज, गुग्गुलु, शतावर, ब्राह्मी, रासना, गन्धरास्ना, मालकाँगुनी, बिछुआ तथा सरिवन—इनका कल्क बनाकर कल्क से चौगुना घी लेकर, घी से चौगुना जल डाल कर कड़ाही में पकायें । इसके सेवन से उन्माद, ग्रहदोष, अपस्मार शान्त होते हैं । यह बुद्धि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तथा स्मरणशक्ति बढ़ाता है। इसे १० ग्राम की मात्रा में मिश्री मिलाकर गरम दूध से प्रातः-सायं वैद्य की देखरेख में सेवन करायें। योगरत्नाकर में भी यह योग है ॥

हिंग्वाद्य घृत (अ.हृ.उ.६।२)—हींग, कालानमक, सोंठ, कालीमिर्च, पीपर—प्रत्येक आठ तोला (लगभग १००-१०० ग्राम) इनका कल्क (चटनी) बनायें। घी ६ सेर ३२ तोला (लगभग ६ किलो), गामूत्र २५ किलो लेकर पकायें। यह उन्माद तथा अपस्मार नाशक है। मात्रा ५ से १० ग्राम गरम दूध से।

अथापस्मारलक्षणमुच्यते

मन्दे रन्ध्रगतेऽहौ च त्रिकोणे बलिनो शुभाः।
योगाऽपस्मारदो भानुर्भौमश्च गददो यदि ॥५०॥

यदि अष्टम भाव में शनि, त्रिकोण में राहु हो, शुभ ग्रह बली हो तथा सूर्य-भौम छठे-बारहवें हों तो अपस्मार (मिरगी) रोग उत्पन्न करते हैं। इसे अंग्रेजी में एपिलेप्सी (Epilepsy) तथा अरबी में "सरअ" कहते हैं ॥५०॥

भिन्नो द्वादशभिर्भेदैरपस्मारः स्वरूपतः।
स च तस्य च भेदास्ते निगद्यन्ते स्वरूपतः॥५१॥

यद्यपि अपस्मार की व्याधि का स्वरूप बाहर से एक जैसा दिखता है परन्तु उसके बारह भेद होते हैं। अब उसके भेदों को कहा जा रहा है ॥५१॥

अपस्मारलक्षणम्

विस्रस्ताङ्गः पतति सहसा भूतले नष्टसंज्ञः;
फेनोद्गारी रसति परुषं सन्नकायश्चिराय।
व्यावृत्ताक्षो दशति दशनं पीतवर्णः प्रमादी
तोयासक्तो विकृतवदनः स्यादपस्मार एव॥५२॥

इस व्याधि में पीड़ित व्यक्ति का शरीर ढीला होकर अचानक गिर पड़ता है, उसे मूर्च्छा आ जाती है। उसके मुँह से फेन (झाग) निकलता है। गले से कठोर ध्वनि निकलती हैं (खर्राटे से आते हैं)। शारीरिक अंग कठोर तथा आड़े-तिरछे हो जाते हैं। दाँत कटकटाता है। उसका रंग पीला-सा पड़ जाता है। आँख की पुतलियाँ या तो ऊपर को चढ़ जाती हैं या फिर चौतरफा तेजी से घूमती हैं। रोगी बेखबर रहता है। पानी पीने की इच्छा अधिक होती है। चेहरा विकृत हो जाता है। इन लक्षणों से जानना चाहिए कि ये रोग अपस्मार है ॥५२॥

अपस्मारस्य दूतयः

श्वसना मलिना निद्रा जृम्भिकानशना तथा।
त्रासिनी मोहिनी चाथ रोदनी क्रोधनी तथा॥५३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तापनी शोषणी चैव ध्वंसिनी चेति कीर्तिताः ।
दूत्यो द्वादश विख्याता अपस्मारस्य सुप्रियाः ।। ५४।।
एताः समस्ता व्यस्ता वा संश्रयन्ति नरं किल।
व्याख्यानार्थवतीं चेष्टां तत्राभिव्यञ्जयन्ति च ।। ५५।।

अपस्मार की बारह दूतियाँ हैं । ये रोगपीड़ित व्यक्ति की बारह चेष्टाएँ होती हैं । ये सदैव प्रिया जैसे अपने पति को नहीं छोड़ती उसी प्रकार से पीड़ित व्यक्ति को पकड़े रहती हैं । बारह दूतियों के नाम निम्नांकित हैं—

(१) श्वसना—पीड़ित व्यक्ति की साँस जोर से शब्द सहित आती है ।

(२) मलिना—रोगी अपने शरीर से कफ, मल, मूत्र, वीर्य, पसीना आदि त्यागता रहता है अत: उसका शरीर मलिन रहता है ।

(३) निद्रा—रोगी नींद की भाँति अचेत रहता है (Narcolepsy) ।

(४) जृंभिका—रोगी बार-बार जंभाई लेता है (yawning) ।

(५) अनशना—इस दूती के कारण रोगी बिना कुछ खाये-पिये पड़ा रहता है ।

(६) त्रासिनी (fearfulness)—इसके कारण रोगी भयभीत रहता है ।

(७) मोहिनी (Beguling)—इसके कारण रोगी के गले से आवाज आती है । कानों में बाजे से बजते हैं ।

(८) रोदिनी (wailing)—इसके कारण रोगी चीत्कार करता है । आह भरता है ।

(९) क्रोधनी (Angry)—क्रोध उत्पन्न करती है ।

(१०) तापनी—शरीर का ताप बढ़ता है तथा रोगी उत्तेजित हो जाता है ।

(११) शोषणी (Drying up)—इसके कारण मांसपेशियाँ सिकुड़ती हैं ।

(१२) ध्वंसिनी—इसके कारण रोगी को स्वयं गंभीर चोट लग जाती है तथा वस्तुएँ भी संपर्क में आने पर टूट जाती हैं (Destruction) ।।५३-५४।।

आयुर्वेदीय ग्रन्थ माधवनिदान में इसके चार भेद—१. वातज, २. पित्तज, ३. कफज, ४. त्रिदोषज (यह असाध्य होता है) हैं—

"तम:प्रवेश: संरम्भो दोषोद्रेको हतस्मृतेः ।
अपस्मार इति ज्ञेयो गदो घोरश्चतुर्विध:"।। (२१।२)

लक्षणों की सौम्यता एवं उग्रता के अनुसार आधुनिक चिकित्सकों ने इसके दो भेद किये हैं—

(क) लघु-अपस्मार (Petit Mal)—इसका दौरा थोड़े समय तक ही रहता है । लक्षण भी उग्र नहीं होते हैं ।

(ख) गुरु-अपस्मार (Grand Mal)—इसमें रोग के लक्षण अधिक दिनों में शान्त होते हैं तथा लक्षण भी उग्र होते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऊपर कही गयी दूतियाँ अपस्मारग्रस्त रोगी के शरीर को अपना आश्रय बना लेती हैं और जैसा उनका नाम है उसी प्रकार चेष्टा रोगी के शरीर में उत्पन्न करती हैं ॥५५॥

अपस्मारे अनुष्ठानम्

शमायादावपस्मारे कूष्माण्डीबलिमाहरेत् ।
सुदर्शनेन जुहुयात्तिलैः क्रोधाग्निनाऽथवा ॥ ५६॥
प्रत्यक्षरसहस्रेण घोरापस्मारशान्तये ॥ ५७॥

सर्वप्रथम अपस्मार की शान्ति हेतु कूष्माण्डी बलि करना चाहिए । सुदर्शन (मन्त्र, कवच या शतक) या क्रोधाग्नि मंत्रों से उनके अक्षरों की संख्या को एक सहस्र (एक हजार) से गुणा कर जो संख्या हो उतना हवन करें ॥५६।५७॥

कूष्माण्डी बलि—इसमें जीवित प्राणी के स्थान पर कूष्माण्ड अर्थात् कुम्हड़ा (पेठा) के फल की बलि दी जाती है । रुद्रयामल तंत्र में कहा है—

''छागाभावे तु कूष्माण्डं श्रीफलं वा मनोहरम् ।
वस्त्रसंवेष्टितं कृत्वा छेदयेच्छुरिकादिना'' ॥
'ब्राह्मणेन सदा देयं कूष्माण्डं बलिकर्मणि'।

कालिकापुराण के अनुसार बलिदान करते समय कर्त्ता का मुख उत्तर तथा बलि का मुख पूर्व में होना चाहिए । कूष्माण्ड फल का डण्ठल से विपरीत दिशा का भाग मुख होता है । इसमें पुष्प लगा रहता है ।

बलिदान मंत्र—''कूष्माण्डं बलिरूपेण मम भाग्यादुपस्थितः।
प्रणमामि ततः सर्वं रूपिणं बलिरूपिणम् ॥
चण्डिकाप्रीतिदानेन अपस्मारविनाशनम् ।
चामुण्डाबलिरूपाय बले तुभ्यं नमोऽस्तु ते'' ॥

''ॐ ऐं ह्रीं श्रीं'' इस मन्त्र से कूष्माण्ड के शिर पर पुष्प रखना चाहिए । फिर ''ॐ हुं फट्'' इस मन्त्र से खड्ग की पूजा करे, फिर बलि पर प्रहार करे । फिर यह मन्त्र पढे—

''ॐ ह्रीं ऐं ह्रीं कौशिकीति रुधिरेणाप्यायताम्'' ।

कूष्माण्डी होम—कूष्माण्डी बलि के पश्चात् फिर कूष्माण्ड मंत्रों से हवन करना चाहिए । कूष्माण्ड मंत्र इस प्रकार हैं—

(१) ॐ यद्देवावहेउनदेवासश्च कृमाव्ययम् ॥

अग्निर्मातस्मादेन सो विश्वान्मुञ्चत्वंऽह सः ॥ स्वाहा ॥ इदं अग्नये न मम ।

(२) ॐ यदि दिवा यदि नक्त मेनाꣳसि च न कृमाव्ययम् । वायुर्मातस्मादेन सो विश्वान्मुञ्चत्व९ स्वाहा ॥ इदं वायवे न मम ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(३) ॐ यदि जाग्रद् यदि स्वप्नऽएना॑ंसि च कृमाव्ययम् ।

सूर्यो मातस्मादेन सो विश्वान्मुञ्चत्व॑ह सः ।। स्वाहा ।। इदं सूर्याय न मम । ये तीन मंत्र कूष्माण्डसूक्त कहलाते हैं । इनके द्वारा आहुतियाँ (प्रत्येक के द्वारा १०८) देकर फिर स्विष्टकृत होम करें । गोदान तथा दक्षिणा दान करें । इस कार्य को किसी विद्वान् ब्राह्मण द्वारा सांगतापूर्वक (पूर्णाहुति, दिक्पाल-क्षेत्रपालादि पूजन एवं बलि पूर्वक सम्पन्न करायें ।

अपस्मारचिकित्सा

दृष्टा ग्रन्थान्तरे प्रश्नविषयेऽपस्मृतौ हिताः ।
लिखितास्त्वत्र लिख्यन्ते चिकित्सा अपि काश्चन ।। ५८।।

ग्रन्थान्तरों तथा प्रश्नग्रन्थादि में अपस्मार के विषय में जो औषधोपचार वर्णित है उनमें से यहाँ भीं कुछ लिखता हूँ ।।५८।।

नस्यप्रयोगः

सिन्धूत्थवृश्चिकालीकुष्ठकणाभार्ङ्गिभिः कृतं चूर्णम् ।
नसि योजयेत्तु शस्तं तीव्रापस्मारशान्तये पुंसाम् ।। ५९।।

सैंधानमक, पुनर्नवा (सोंठ), कूठ, छोटी पीपर, भारंगी इनके चूर्ण का नस्य देने से मिरगी के दौरे में लाभ होता है ।।५९।।

अपस्मारनाशकघृतम्

ब्राह्मीरसे घृतवचाभयशङ्खपुष्प-
धात्रीसमुद्भवरसे मधुकान्वितञ्च ।
सिद्धार्थहिङ्गुसहिते वृषबस्तमूत्रे
पानादिना हरति सर्पिरपस्मृतिञ्च ।। ६०।।

ब्राह्मी के स्वरस में मीठ वच, शंखपुष्पी, अभय (उशीर=खस), धात्री (आँवला) का स्वरस तथा महुवा इनका क्वाथ कर फिर गोघृत मिलाकर सिद्ध घृत में हींग, बैल का मूत्र या बकरे का मूत्र मिलाकर पीने से अपस्मार दूर होता है ।।६०।।

पुनश्चापस्मारनाशकघृतम्

त्रिवृद्विडङ्गत्रिफलाग्निविश्वव्याघातसिन्धूत्थकणैर्यथावत् ।
ब्राह्मीरसे सर्पिरिदं प्रशस्तं पुंसामपस्मारविनाशनाय ।। ६१।।

निशोथ, वायविडंग, त्रिफला, चित्रक, सोंठ, सैंधानमक इन सबको ब्राह्मी के रस में पीसकर कल्क बनायें । फिर चौगुने गोघृत तथा चौगुने पानी में डालकर पकायें । इस प्रकार सिद्ध घृत से अपस्मार रोग दूर होता है ।।६१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपस्मारे विशेषघृतम्

मञ्जिष्ठाऽग्निविडङ्गकुष्ठरनीमुस्तात्रिवृच्छारिवा-
दार्वीतिक्तकशङ्खपुष्पसहितैरेलावचायष्टिभिः ।
पाठामागधिसंयुतं घृतमिदं गव्येषु सिद्धं नृणां
तीव्रापस्मृतिदोषविस्मृतिहरं कुष्ठापहं कान्तिदम् ।। ६२।।

मंजीठ, चित्रक, वायविडंग, कूठ, कोयल, मोंथा, निशोथ, सारिवा, दार्वी (दारुहल्दी), चिरायता, शंखपुष्पी, छोटी इलायची, वच, मुलैठी, पाढ़ल, छोटी पीपल—इन सबके साथ सिद्ध किया हुआ घृत मृगी की तीव्रता (Acute stage) को दूर करता है। मतिभ्रम तथा कुष्ठ रोग भी दूर होता है। शरीर की कान्ति बढ़ती है ।।६२।।

इन सब पदार्थों को चौगुने जल में डालकर ही पकाना चाहिए।

भक्तविरोधरोगप्रदयोगः

पापग्रहेक्षितं लग्नं रन्ध्रं रविजवीक्षितम्।
रन्ध्रेशो विबलो योग एष भक्तविरोधकृत् ।। ६३।।

जब पापग्रहों की लग्न पर दृष्टि हो, अष्टम भाव पर शनि की दृष्टि हो, अष्टमेश निर्बल हो तो भक्तविरोध रोग को उत्पन्न करने वाला योग होता है ।।६३।।

भक्तविरोध—यहाँ भक्तविरोध का अर्थ भगवान् के भक्तों का विरोध नहीं है अपितु यहाँ भक्त का अर्थ भात या भोजन है। पानी में डालकर पकाया हुआ कोई भी अन्न भक्त कहलाता है। यहाँ भक्त का अर्थ भोज्य पदार्थ है। यह एक ऐसा रोग या लक्षण होता है जिसमें भूख नहीं लगती और भोजन करने की इच्छा समाप्त हो जाती है। इसीलिए इसे आयुर्वेदीय ग्रन्थों में भक्तविरोध, भक्तद्वेष, अन्नद्वेष, अरुचि, भक्तोपघात, क्षुधानाश, अन्नविद्वेष, भक्तविद्वेष आदि कहते हैं। वैसे तो यह लक्षण अल्पकाल के लिए अनेक रोगों में पाया जाता है परन्तु जब दीर्घ काल तक भूख न लगे तब यह स्वतंत्र रोग भी होता है। सामान्य रूप में इसे loss of appetite कहते हैं परन्तु इस श्लोक का रोग अंग्रेजी में एनोरेक्सिआ नर्वोसा कहा जाता है (Anorexia Nervosa)।

प्रमेहरोगयोगः

लग्ने पापेक्षिते लग्ननाथे नीचारिराशिगे।
शुक्रयुक्तेक्षितं रन्ध्रमेषयोगः प्रमेहकृत् ।। ६४।।

यदि लग्नेश पाप ग्रहों से दृष्ट होकर नीच या शत्रु राशि में बैठा हो तथा अष्टम भाव पर शुक्र की दृष्टि या युति हो तो यह योग प्रमेह रोग उत्पन्न करता है ।।६४।।

मूत्र में विभिन्न प्रकार के पदार्थों का उत्सर्जित होना प्रमेह कहलाता है; जैसे मधुमेह, शुक्रमेह, हारिद्रमेह, रक्तमेह आदि।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोगविचारनिर्देशनम्

सिंहे कुक्ष्यक्षिजेत्याद्यैर्व्याधयो येऽत्र कीर्तिताः ।
आरूढविषये पूर्वं चिन्तयेदिह तानपि ।। ६५।।

इस ग्रन्थ में आरूढ विचार के प्रसंग में (आठवें अध्याय में) "कुक्ष्यजे" इत्यादि श्लोक के द्वारा जो शरीरांगों के रोगों का निर्देश है उनका विचार यहाँ भी करना चाहिए ।।६५।।

प्रश्नानुष्ठानपद्धतिनिर्देशकथनम्

मूर्तिभेदा रुजां भेदाः प्रश्नानुष्ठानपद्धतौ ।
प्रोक्ता दुःस्थविहङ्गानां लिख्यन्तेऽत्र च ते तथा ।। ६६।।

प्रश्नानुष्ठानपद्धति नामक ग्रन्थ में ग्रहों के जो मूर्तिभेद तथा रोगभेद बताये हैं उन्हें यहाँ कहा जाता है ।।६६।।

आगे जो श्लोक दिये जा रहे हैं वे फलदीपिका (मंत्रेश्वरकृत) में भी हैं ।

सूर्यरोगाः

पित्तोष्णज्वरतापदेहतपनापस्मारहृत्क्रोडज-
व्याधीन्वक्ति रविर्दृगात्यरिभयं त्वग्दोषमस्थिस्त्रवम् ।
कुष्ठाग्न्यस्त्रविषार्तिदारतनयव्यापच्चतुष्पाद्भयं;
चौरक्ष्मापतिधर्मदैवफणभृद्भूतेशभूताद्भयम् ।। ६७।।

पित्तप्रकोप, उष्णता, ज्वर, तापमान का कुछ अधिक होना या अधिक गर्मी का अनुभव होना, अपस्मार (मिरगीरोग), हृद्रोग (हृदय की धड़कन बढ़ना, घटना, अनियमितता, हृदय का दर्द, रक्तचाप, हृदयाघात, घबराहट आदि), क्रोड (पेट) की बीमारियाँ, नेत्ररोग, शत्रुकृत पीडा, त्वचा के रोग, अस्थिक्षीणता (फक्करोग, अस्थिमृदुता आदि), चौपायों से पीड़ा, कुष्ठरोग, अग्नि, बिजली, बन्दूक तथा जैविक, वानस्पतिक एवं रासायनिक विष से पीड़ा, चोरों-डाकुओं से पीड़ा, शासकवर्ग से कष्ट, धर्मभीरुता, दैव, सर्प, भगवान् शंकर एवं भूत-प्रेत आदि का भय—यह सब सूर्य के रोग हैं ।।६७।।

चन्द्रजन्यरोगाः

निद्रालस्यकफातिसारपिटकाः शीतज्वरं चन्द्रमाः,
शृङ्ग्यब्जाहतिमग्निमान्द्यकृशतायोषिद्व्यथाकामलाः ।
चेतश्शान्तिमसृग्विकारमुदकाद्भीतिञ्च बालग्रहात्;
दुर्गाकिन्नरधर्मदैवफणभृद् यक्षाच्च पीडां वदेत् ।। ६८।।

निद्रा की अधिकता, आलस्य की अधिकता, कफजन्य रोग (खाँसी, श्वास, जुकाम-निमोनियां आदि), अतिसार (दस्त-पेचिश आदि), फोड़े-फुंसी होना, शीतज्वर (मलेरिया,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बुखार, सींगवाले पशुओं से कष्ट, जलचर प्राणियों से होने वाले कष्ट, अग्निमांद्य (Dyspepsia. Indigestion), कृशता (शरीर का दुबला होना), स्त्रियों को या स्त्रियों से होने वाले कष्ट या रोग, कामला-पाण्डु (Anemia, jaundice), चित्त की अशान्ति (चंचलता एवं मानसिक रोग), रक्तविकार (रक्ताल्पता, हीमोग्लोबिन की कमी, लोहे की कमी, रक्तहीनता आदि), जल से भय लगना, बालग्रहों के विकार (पूतना आदि), दुर्गादि देवियों द्वारा उत्पन्न रोग, किन्नरों एवं यक्षों से कष्ट, सर्पों से भय, धर्मजन्य तथा दैवजन्य व्याधियाँ—ये सब चन्द्रमा के रोग हैं ।।६८।।

दैवव्याधियाँ—दैव का अर्थ भाग्य या पूर्वजन्म का प्रारब्ध होता है अत: जो कर्मज व्याधियाँ हैं उन्हें ही दैवव्यापत् कहते हैं । जैसा कि कहा है—

"यथाशास्त्रन्तु निर्णीतो यथाव्याधिचिकित्सितम् ।
न शमं याति यो व्याधि: स ज्ञेय: कर्मजो बुधै: ।।
पुण्यैश्च भेषजै: शान्तास्ते ज्ञेया: कर्मदोषजा: ।
विज्ञेया दोषजास्त्वन्ये केवला वाऽथ सङ्करा:" ।।

(योगरत्नाकर)

"रोगा: कर्मोद्भवा: केचिद् केचिद्दोषसमुद्भवा: ।
कर्मदोषोद्भवा: केचिद् एवं रोगास्त्रिधा स्मृता: ।।
ये रोगा नैव शाम्यन्ति कृते ह्यौषधकर्मणि ।
धर्मेणैवोपशाम्यन्ति ते रोगा: कर्मजा: स्मृता: ।।
प्रायश्चित्तेऽपि विहिते न शाम्यन्ति विनौषधम् ।
ये दृष्टहेतुसम्भूतास्ते रोगा दोषजा: स्मृता: ।।
पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते ।
तच्छान्तिरौषधैर्दानैर्जपहोमार्चनादिभि:" ।।

धर्मज व्याधियों के कारण सूर्य तथा चन्द्रमा होते हैं ।

भौमजन्यरोगा:

तृष्णासृक्कोपपित्तज्वरमनलविषास्त्रार्तिकुष्ठाक्षिरोगान्;
गुल्मापस्मारमज्जाविहतिपरुषतापामिकादेहभङ्गान् ।
भूपारिस्तेनपीडासहजसुतसुहृद्वैरयुद्धं विधत्ते,
रक्षोगन्धर्वघोरग्रहभयमवनीसूनुरूर्ध्वाङ्गरोगम् ।। ६९ ।।

मंगल से निम्न रोग उत्पन्न होते हैं—

(१) तृष्णा = बहुत अधिक प्यास लगना अर्थात् Polydipsia) ।
(२) असृक्कोप—रक्तप्रकोप, रक्तपित्त, नाक-मुख आदि से खून गिरना ।
(३) पित्तज्वर—पित्त के प्रकोप से होने वाला बुखार ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(४) अनलपीड़ा—अग्नि, बिजली आदि से होने वाली पीड़ा ।

(५) विषपीड़ा (Poisoning)—स्थावर-जंगमादि विषों से ।

(६) अस्त्रार्ति—हथियार से चोट तथा घाव लगना ।

(७) कुष्ठ—अनेक प्रकार के कुष्ठरोग ।

(८) अक्षिरोग—नेत्रों में होने वाली तमाम बीमारियाँ ।

(९) गुल्म—पेटगैस, बायगोला तथा ट्यूमर आदि ।

(१०) अपस्मार (Epilepsy)—मृगी के दौरे ।

(११) मज्जाविहति—अस्थियों के भीतर मज्जा (Marrow) होती है, वह रक्त के निर्माण में सहयोग करती है । मज्जा की कमी से रक्त-निर्माण भी कम होता है ।

(१२) परुषता—शरीर में कठोरता आ जाती है । ऊतकों का लचीलापन समाप्त हो जाता है ।

(१३) पामिका—खुजली, अकौंता, छाजन, एक्जिमा आदि ।

(१४) देहभङ्गान्—शरीर के अंगों का कटना, फटना तथा टूट जाना देहभंग कहलाता है ।

(१५) भूप (शासक वर्ग)—पुलिस आदि से कष्ट ।

(१६) शत्रुजन्य पीड़ा । (१७) स्तेनपीड़ा = चोरों से भय । (१८) भाइयों, पुत्रों तथा वैरियों से लड़ाई छिड़ना । (१९) राक्षसों (आतंकवादियों) से पीड़ा । (२०) घोर ग्रह (दुष्टात्माओं) से पीड़ा—ये सब मंगल से उत्पन्न होते हैं ॥६९॥

बुधकृतरोगाः

भ्रान्तिर्दुर्वचनं दृगामयगलघ्राणोत्थरोगान् ज्वरं;
पित्तश्लेष्मसमीरजं विषमपि त्वग्दोषपाण्ड्वामयान्।
दुःस्वप्नञ्च विचर्चिकां निपतनं पारुष्यबन्धश्रमान्;
गन्धर्वक्षितिहर्म्यवासिमयुभिर्ज्ञो वक्ति पीडां खगैः ॥७०॥

१. भ्रान्ति—इस शब्द के अन्तर्गत सभी प्रकार के मनोरोग (Mental diseases), मनोदैहिक रोग (Psychosomatic diseases) आ जाते हैं । जैसे—मूढ़ता (Idiocy), शोकोन्माद (Malancholia), एकोन्माद (Mono-mania), चरित्रोन्माद (Moralmania), चौर्योन्माद (Kleptomania), मद्यपानोन्माद (Dipsomania), प्रज्वालनोन्माद (Pyromania), परवधोन्माद (Homicidalmania), आत्महत्योन्माद (Sucidal mania), कामोन्माद (Erotomania), विस्मृति (Dementia or confusional insanity), प्रलापोन्माद (Acute Deliorous mania), नाड़ीदौर्बल्य (Neurasthenia), गदोद्वेग (Hypochondriasis), मनोविदलता (Schizophrenia), विभय (Phobia), अवस्तुबोधन (Halucination), व्यामोह (Delutions), उत्साह-विषादमनोविकृति (Manic-depressive psychosis), विषाद या अवसाद (Depression), विषादात्मक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(Depressive stupar), स्थिरव्यामोह (Paranoia), अभावोन्माद (Amentia), निद्राचार (Somnambulism) आदि अनेक मनोभाव तथा रोग लक्षण आ जाते हैं ।

२. दुर्वचन—गाली देना, निन्दा करना, झूठा आरोप लगाना, दोषारोपण करना, लिखित या मौखिक बुराई या आलोचना करना ।

३. दृगामय—आँखों की सभी प्रकार की बीमारियाँ ।

४. गलघ्राणामयादि (Ear, nose and throat disease) ।

५. ज्वर—सम्पूर्ण प्रकार के बुखार (Achexias) ।

६. पित्त-श्लेष्म-समीरणम्—तीनों दोषों के मिश्रण वाले रोग ।

७. विषजन्य रोग (Toxic and poisonous effects) ।

८. त्वग्दोष (Disorders of skin) त्वचा के सम्पूर्ण रोग ।

९. पाण्डु (Anemia)—विशेषरूप से बौद्धिक चिन्तन से उत्पन्न ।

१०. दुःस्वप्न = डरावने एवं भयानक सपने देखना ।

११. विचर्चिका (Eczema & psoriasis) = चिन्ताजन्य अकौंता ।

१२. निपतनम् (मानसिक अवसाद आदि) या अचानक गिर जाना ।

१३. पारुष्यबन्ध—वाणी आदि में कठोरता, कारावास का भय ।

१४. श्रम—थकावट होना, दुर्बलता का अनुभव करना ।

१५. गन्धर्वक्षितिपीड़ा = गाने-बजाने वालों से कष्ट ।

१६. हर्म्यवासि (Hermaphrodites)—हिजड़ों से कष्ट होना ।

१७. पक्षीपीड़ा—पक्षियों से होने वाला कष्ट ।

ये सब बुध के रोग हैं ॥७०॥

जैवरोगाः

गुल्मान्त्रज्वरशोकमोहकफजश्रोत्रार्तिमेहामयान् ;
देवस्थाननिधिप्रपीडनमहीदेवेशशापोद्भवम् ।
रोगं किन्नरयक्षदेवफणभृद्विद्याधराद्युद्भवं;
जीवः सूचयति स्वयं बुधगुरू कृष्णापचारोद्भवम् ॥ ७१ ॥

देवगुरु बृहस्पति—गुल्म, आन्त्रज्वर (Typhoid and Paratyphoid fevers), शोक (Sorrow), मोह (ज्ञान का अभाव), कफरोग, कानों की बीमारियाँ, बीस प्रकार के प्रमेह, देवस्व के दुरुपयोग से होने वाले रोग, ब्राह्मणों के शाप द्वारा उत्पन्न रोग, किन्नरों, यक्षों तथा नागों के प्रकोप से उत्पन्न रोग, विद्याधरों (ऐन्द्रजालिक = जादूगरों) के प्रकोप से उत्पन्न रोग स्वयं विष्णु भगवान् गुरु के माध्यम से तथा बुध के माध्यम से रोग उत्पन्न करते हैं ॥७१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुक्रजन्यरोगाः

पाण्डुश्लेष्ममरुत्प्रकोपनयनव्यापत्तितन्द्रीश्रमान्;
गुह्यास्यामयमूत्रकृच्छ्रमदनव्यापत्तिशुक्लस्नुतिः ।
वासस्त्रीकृषिदेहकान्तिविहतिं शोफामयं योगिनी-
यक्षीमातृगणाद्भयं प्रियसुहृद्भङ्गं सितः सूचयेत् ।। ७२।।

पाण्डुरोग, श्लेष्मरोग (कफविकार), वातरोग, नेत्ररोग, तन्द्रा (सुस्ती), श्रम (थकावट), गुप्तरोग (योनि, लिंग, गर्भाशय, डिम्बग्रन्थियों, डिम्बप्रणालियों, शुक्र = Seman के रोग), मूत्रकृच्छ्र (Dysuria), कामरोग = यौनरोग (Sexual diseases), शुक्लस्नुति (एलर्जी इत्यादि), स्त्रीकष्ट या स्त्रियों के संसर्ग से होने वाले कष्ट, कृषिहानि, देहकान्ति की हानि, शोफ (शरीर में पानी भरकर सूजन आ जाना); योगिनी, यक्षी, मातृगण इनके कोप से उत्पन्न कष्ट, मित्र-बिछोह जन्य कष्ट—इन सबको शुक्र ग्रह सूचित करता है ।।७२।।

शनिजन्यरोगाः

वातश्लेष्मविकारपादविहतीरापत्तितन्द्रीश्रमान्;
भ्रान्तिं कुक्षिरुगन्तरुष्णभृतकध्वंसं च पश्वाहतिम् ।
भार्यापुत्रविपत्तिमङ्गविहतिं हृत्तापमर्कात्मजो;
वृक्षाश्मक्षतिमाह कश्मलगणैः पीडां पिशाचादिभिः ।। ७३।।

(१) वातश्लेष्म विकार—वात तथा कफ के प्रकोप से होने वाले रोग ।

(२) पादविहती—पैरों का निष्क्रिय हो जाना, टूट जाना, कट जाना, पक्षाघात (Paralysis) हो जाना, ऊरुस्तम्भ होना (Spastic paraplegia) आदि ।

(३) अकल्पित विपत्तियों को आपत्ति कहते हैं ।

(४) तन्द्री—निद्रा की अधिकता=अधिक सोना, नींद में रहना ।

(५) श्रम—शारीरिक थकान (Exhaustion) एवं मानसिक थकान (Fatigue) ।

(६) भ्रांति—मानसिक बीमारियाँ तथा परेशानियाँ ।

(७) कुक्षिरुक्—पेट के विकार, कब्ज, अतिसार, अफरा आदि ।

(८) अन्तरुष्ण—शरीर के भीतरी भागों (आशयों में) जलन होना ।

(९) भृतकध्वंस—नौकरों की हानि, उनके द्वारा कष्ट की प्राप्ति होना ।

(१०) पश्वाहति—भैंस आदि पशुओं का मर जाना ।

(११) भार्याविपत्ति—दुःस्थानगत शनि से पत्नी को कष्ट, रोग आदि होता है ।

(१२) पुत्रविपत्ति—अष्टम भावगत शनि की पूर्ण दृष्टि पुत्रभाव पर होने से पुत्र को कष्ट प्राप्त होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१३) अंगविहति—शरीर का अंग भंग होना या किसी अंग का नष्ट हो जाना; जैसे वाणी का अवरोध, कानों में बहिरापन, नाक के सूँघने की शक्ति में कमी होना, दृष्टि शक्ति कम होना या त्वचा का सुन्न हो जाना—ये सब अङ्गविहति के लक्षण हैं।

(१४) हृत्ताप—मन का खिन्न हो जाना, विषादग्रस्त हो जाना।

(१५) वृक्ष से आघात—शनि के विकृत होने पर पेड़ से गिरना या पेड़ का अपने ऊपर गिर जाना होता है। कभी-कभी आँधी आदि के कारण पेड़ों के बाग-बगीचे ही नष्ट हो जाते हैं।

(१६) अश्मक्षति—इसका अर्थ जातक को पत्थर या ढेले से चोट पहुँचना होता है।

(१७) कश्मल गणों से पीड़ा—दुष्टात्माओं को कश्मल गण कहते हैं। इनसे पीड़ा पहुँचती है।

(१८) पिशाचादि पीड़ा—भूत-प्रेतादि से कष्ट होता है।

ये सब शनि से होने वाले रोगादि हैं ॥७३॥

राहुजन्या पीडा

स्वर्भानुस्तनुतापकुष्ठविषमव्याधीन् विषं कृत्रिमं;
पादार्तिं च पिशाचपन्नगभयं भार्यातनूजापदम्॥ ७३१/२॥

राहु के कारण शरीरताप, कुष्ठ (चर्मरोग), असाध्य एवं रहस्यात्मक रोग जिसका निदान न हो सके, विषम विकार, पैरों में कष्ट; पिशाच, सर्प आदि से कष्ट; अकारण तथा अवास्तविक भय (राहु से अनेक प्रकार के विभय = फोबिया होते हैं) स्त्री तथा पुत्रों पर आकस्मिक विपत्तियाँ आती हैं ॥७३१/२॥

केतुजन्यं गुलिकजन्यं च पीडाकथनम्

ब्रह्मक्षत्रविरोधशत्रुजभयं केतुस्तु संसूचयेत्।
प्रेतोत्थञ्च गदं विषं च गुलिकः सर्पार्त्तिमाशौचकम्॥ ७४॥

केतु से ब्राह्मण एवं क्षत्रिय से विरोध, शत्रुओं से भय, प्रेतबाधा तथा विषभय होता हैं। गुलिक से सर्पो से पीड़ा तथा प्रदूषण एवं गन्दगी से उत्पन्न होने वाले रोग होते हैं ॥७४॥

रोगकारको विशेषयोगः

बाधां वक्ति पिशाचजां दशमगो मन्दोऽथ सर्पेक्षितो;
दीक्षाघ्राणभवं विषञ्च गुलिको देहाष्टमस्थानगः।
पापाः षष्ठगतास्तथोदररुजं रन्ध्रास्तगारो ज्वरं;
लग्नास्तोपगतोऽप्यजीर्णजरुजं चन्द्रोऽरिपीडां रिपौ॥ ७५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दशम भाव में शनि की स्थिति पिशाचबाधा का संकेत देती है । यदि गुलिक लग्न में या अष्टम भाव में राहु के द्वारा दृष्ट होकर बैठा हो तो विषाक्त पदार्थ के सूँघने से (जहरीली गैस आदि या क्लोरोफार्म या ईथर जैसे पदार्थों के सूँघने से) कष्ट होता है । छठे भाव में स्थित पाप ग्रह उदररोग देते हैं । यदि मंगल सप्तम या अष्टम भाव में बैठा हो तो ज्वरोत्पादक होता है । लग्न का मंगल अरुचि तथा अजीर्ण करता है । इसी प्रकार अष्टम भाव का मंगल ज्वर के साथ अरुचि भी उत्पन्न करता है । छठे भाव का चन्द्रमा शत्रुपीडा देता है ।।७५।।

ग्रहाश्रितराशितो रोगकथनम्

ग्रहाश्रितभभावान्यग्रहयोगेक्षणादिकम् ।
दौस्थ्याधिक्यं च सञ्चिन्त्य सर्वं वाच्यमथोचितम् ।। ७६।।

ग्रह से आश्रित राशि (जिस राशि में ग्रह बैठा हो), अन्य ग्रहों के साथ उसका योग तथा दृष्टि सम्बन्ध—इन सबका विचार करें । यदि अशुभ प्रभाव अधिक होगा तो रोग उत्पन्न होगा ऐसा यथोचित कहना चाहिए ।।७६।।

त्रिरेकादशं विहाय पापस्थितिफलम्

लाभतृतीयौ हित्वा परत्र पापा स्थिता भवन्ति यदि ।
रोगवतैव प्रष्ट्रा भाव्यं तत्प्रोक्तदोषतो नियतम् ।। ७७।।

यदि ३-११ भावों को छोड़कर शेष दस स्थानों में पाप ग्रह कहीं भी बैठे हों तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति पूर्व कथित दोषों के कारण अवश्य ही रुग्ण होता है ।।७७।।

अङ्गानां प्रतिनिधिभावकथनम्

कादीति कन्दृगित्याभ्यां प्रष्टुरङ्गानि चिन्तयेत् ।
पापदृष्टयुते गात्रे व्रणरोगादिकं वदेत् ।। ७८।।

इस श्लोक में बृहज्जातक अध्याय ५ के २३वें श्लोक के अन्तिम चरण "कादि-विलग्नविभक्तगात्रः" तथा चौबीसवें श्लोक का सन्दर्भ दिया है । इनमें बतायें द्रेष्क्काणानुसार शरीर के अंग-विभाग में पाप ग्रहों की युति-दृष्टि होने पर रोग होता है ।।७८।।

बृहज्जातक का पूरा श्लोक निम्न प्रकार है—

"कन्दृक्छोत्रनसाकपोलहनवो वक्त्रं च होरादय-
स्ते कण्ठांसकबाहुपार्श्वहृदयक्रोडानि नाभिस्ततः ।
बस्तिः शिश्नगुदे ततश्च वृषणावूरू ततो जानुनी;
जङ्घाङ्घ्रीत्युभयत्र वाममुदितैर्द्रेष्काणभागैस्त्रिधा" ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्रेष्काणानुसार शरीर के प्रतिनिधि भावों का चक्र
(जातक में ग्राह्य)

भाव	प्रथम द्रेष्काण (दस अंश तक)	द्वितीय द्रेष्काण (बीस अंश तक)	तृतीय द्रेष्काण (तीस अंश तक)
(१) लग्न	शिर (Head)	ग्रीवा (कण्ठ=गर्दन)	वस्ति (तलपेट) (Abdoman)
(२) दूसरा	दाहिना नेत्र	दाहिना कन्धा	शिश्न (Penis) योनि
(३) तीसरा	दाहिना कान	दाहिना हाथ	दाहिना अण्डकोश
(४) चौथा	दाहिना नासाछिद्र (right nostril)	दाहिनी काँख	दाहिनी ऊरु (घुटने से ऊपर का भाग)
(५) पाँचवाँ	दाहिना कपोल	दाहिनी और का छाती का भाग	दाहिना घुटना
(६) छठा	ठोड़ी का दक्षिण भाग	पेट का दक्षिण भाग	दाहिनी पिण्डली (घुटने से नीचे पैर का भाग)
(७) सातवाँ	मुख	नाभि (टुण्डी)	चरण (पंजे)
(८) आठवाँ	ठोड़ी का बाँया भाग	पेट का वामभाग	बाँयी पिंडली
(९) नवम	बाँया गाल	छाती का बाँया भाग	बाँया घुटना
(१०) दसवाँ	बाँया नासाछिद्र (नथुनां)	बाँयी काँख	बाँयी ऊरु (कमर से घुटने तक)
(११) ग्यारहवाँ	बाँया कान	बाँया हाथ	बाँया अण्डकोश
(१२) बारहवाँ	बाँया नेत्र	बाँया कन्धा	गुदा

लग्न से छठे भाव तक शरीर तक शरीर का दाँया भाग सातवें भाव से मुख से लेकर पैरों तक शरीर को दो भागों में बाँटने वाली पट्टी तथा आठवें से बारहवें भाव तक शरीर का बाँया भाग ग्रहण करते हैं ।

प्रश्नशास्त्रीय अङ्गविभागः

चरोर्ध्ववक्त्रशीर्षोदयादीनां लग्नगत्वतः।
ककण्ठवस्तिपूर्वाङ्गं ग्रहणं न दृगाणतः ।। ७९।।

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्नशास्त्र में द्रेष्काण से अङ्गविभाग नहीं कहते अपितु प्रश्नकुण्डली में चर राशि तथा ऊर्ध्वमुख राशि या शीर्षोदय राशि होने पर कण्ठ से ऊपर के अंगों का ग्रहण करते हैं। स्थिर राशि या तिर्यङ्मुख राशि या उभयोदय होने पर शरीर के मध्य भाग का तथा द्विस्वभाव राशि या अधोमुख राशि होने पर या पृष्ठोदय होने पर शरीर के अधोभाग (बस्ति से नीचे) ग्रहण करते हैं ॥७९॥

प्रश्नशास्त्रानुसार अंग-विभाग का चक्र

शरीर भाग	लग्न की स्थिति (तीन प्रकार से)	शरीराङ्ग	श्लोक ८१वें अनुसार प्रयोज्य विधि
(१) ऊर्ध्व-भाग	(क) चर राशि होने पर/या (ख) ऊर्ध्वमुख (सूर्यमुक्त) राशि/या (ग) शीर्षोदय राशि हो	शिर, आँखें, कान, नाक, गाल, ठोड़ी तथा मुख	(क) लग्नववांश के संवाद में (ख) लग्ननवांश के असंवाद में (ग) सूर्य के निर्बल होने पर
(२) मध्य-भाग	(क) स्थिर राशि/ (ख) तिर्यङ्मुख (सूर्यभोग्य) (ग) उभयोदय (मीन)	कण्ठ, कन्धे, दोनों भुजाएँ, वक्षःस्थल, हृदय, पेट, नाभि तक	(क) राशिनवांश के संवाद में (ख) लग्ननवांश के विसंवाद में (ग) सूर्य के निर्बल होने पर
(३) अधो-भाग	(क) द्विस्वभाव राशि (ख) अधोमुख राशि (सूर्य युक्त) (ग) पृष्ठोदय राशि	नाभि से नीचे, गुप्ताङ्ग, गुदा, दोनों टाँगें, पैर	(क) लग्ननवांश के संवाद में (ख) दोनों के विसंवाद में (ग) सूर्य की निर्बलता में

लग्नतः नवांशतोऽपि विचारणा

राश्यंशयोश्चरादित्वसंवादे तु चरादिभिः ।
तदभावेन च ज्ञाते चांश ऊर्ध्वाननादिभिः ॥८०॥

यदि लग्न राशि तथा उसके नवांश दोनों ही चर राशिगत हों या दोनों स्थिर राशिगत हों या दोनों ही द्विस्वभाव राशिगत हों तब असन्दिग्ध रूप से चर-स्थिर-द्विस्वभाव के अनुसार ही शरीर के ऊर्ध्व, मध्य एवं अधोभाग का प्रतिनिधित्व कहना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परन्तु जब लग्नराशि तथा नवांशों में विसंवाद हो अर्थात् लग्नचर में तो नवांश स्थिर या द्विस्वभाव में हो या लग्न स्थिर में तथा नवांश चर या द्विस्वभाव में हो तब ऊर्ध्वमुख, अधोमुख तथा तिर्यङ्मुख राशियों के अनुसार ही निर्णय करना उचित है ॥८०॥

अर्कस्य निर्बलतायां किं कर्तव्यम्?

अत्यन्तविबलोऽर्कोऽङ्गग्रहणं कोदयादिभिः ।
नीचांशस्त्रीतुलान्त्याद्या त्र्यंशेष्वर्कोऽतिदुर्बलः ॥ ८१॥

यदि सूर्य किसी भी राशि में नीचनवांश (तुलानवांश) का हो । अथवा कन्या के अन्तिम तथा तुला के प्रथम द्रेष्काण में हो (कन्या के २०° के पश्चात् तुला के १०° पर्यन्त) तो यह सूर्य अत्यन्त निर्बल होता है । प्रश्नकुण्डली में सूर्य यदि इन कथित निर्बल स्थितियों में हो तब राशियों के अंगविभाग को तीसरे प्रकार से करना चाहिए । तब यह देखना चाहिए कि प्रश्नलग्न की राशि शीर्षोदय है ? पृष्ठोदय है ? अथवा उभयोदय है ? इस प्रकार प्रश्नलग्न से अंगविभाग निर्णय की तीन विधियों का कब किसे लागू किया जाय यह स्पष्टीकरण हुआ ॥८१॥

कृष्णीयशास्त्रमतम्

विलग्नादिषु काद्यङ्गविन्यासोऽथ निगद्यते ।
कृष्णीये तु यथा ग्राह्यः स एव प्रश्नकर्मणि ॥ ८२॥

कृष्णीयम् या कृष्णकलिका जो कि कृष्णाचार्य का ग्रन्थ है उसके अनुसार ही प्रश्नशास्त्र में अंगों का विन्यास ग्रहण करना उचित है ॥८२॥

कृष्णीयाङ्गविभागकथनम्

होरोत्तमाङ्गसंस्था दक्षिणवामावनागतातीतौ ।
कर्णाक्षिनासिकापुटकपोलहनवोऽथ वक्त्रान्ताः ॥ ८३॥
ग्रीवांसभुजौ पार्श्वे पृष्ठे हृदयोदरे कटिश्चान्त्या ।
नाभिर्वस्तिगुदाण्डा मुष्का पूर्वादयो द्वौ द्वौ ॥ ८४॥

इसमें लग्न के व्यतीत भाग तथा भोग्य (शेष) भाग ऐसा विभाजन करके विचार करते हैं । प्रश्नलग्न के भोग्यांश दक्षिण भाग में तथा भुक्तांश वाम भाग में स्थित होते हैं । कान, नाक, गाल, ठोड़ी, मुख, गर्दन, भुजाएँ, दोनों पसली, पीठ, हृदय, उदर, कटि, नाभि, वस्ति, गुदा तथा अण्डकोश—ये सब दाहिने-बाँये दो हिस्सों में विभाजित रहते हैं ॥८३-८४॥

विशेष बात यह है कि शरीर के ऊर्ध्व, मध्य तथा अधोभागों में अलग-अलग बारह भावों का प्रतिनिधित्व दक्षिण तथा वाम विभाजन के साथ होता है । लग्न के भोग्यांश का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तात्पर्य सप्तम भाव स्पष्ट तक तथा भुक्तांश उसके उपरान्त लग्नस्पष्ट तक होता है। आगे के चक्र से स्पष्ट है।

कृष्णाचार्य के मत से शरीराङ्ग-विचार चक्र

(१) ऊर्ध्वभाग (कंठ से ऊपर)	(२) मध्यभाग (कंठ से नाभि तक)	(३) अधोभाग (नाभि से पैरों तक)	शरीर के दक्षिणांगों के प्रतिनिधि भाव	शरीर के वामाङ्गों के प्रतिनिधि भाव
शिर	ग्रीवा (कण्ठ)	नाभि	लग्न के भोग्यांश	लग्न के भुक्तांश
कान	स्कन्धद्वय	गुप्ताङ्ग	द्वितीय भाव	द्वादश भाव
नेत्र	पार्श्व	अण्डकोश	तृतीय भाव	एकादश भाव
नासापुट	वक्ष	ऊरु (कमर से घुटने तक)	चतुर्थ भाव	दशम भाव
कपोल	पृष्ठ (पीठ)	घुटने (जानुद्वय)	पञ्चम भाव	नवम भाव
हनु	उदर	जङ्घाद्वय (घुटनों से नीचे)	षष्ठ भाव	अष्टम भाव
मुख	कटि	चरण	सप्तम भाव के भुक्तांश	सप्तम भाव के भोग्यांश

प्रश्ने जातकोक्त अङ्गविचारस्य निषेधः

"कन्दृक्श्रोत्रेति होरायां वराहमिहिरोदितः।
योऽङ्गेषु भावविन्यासो ग्राह्य एव स जातके ॥८५॥

आचार्य वराहमिहिर ने अपने श्लोक "कन्दृक्श्रोत्र....." में शरीरांग विभाग की जो विधि द्रेष्काणानुसार दी है वह केवल जातक के लिए ही उपयोगी है, प्रश्न के लिए नहीं। उसका विचार केवल जन्मकुण्डली में ही होना चाहिए ॥८५॥

अध्यायोपसंहारः

रोगभेदानिति ज्ञात्वा चिकित्सामुचितां वदेत्।
तीव्रे कर्मविपाकोक्तप्रायश्चित्तञ्च शान्तये॥ ६८॥

॥ इति प्रश्नमार्गे द्वादशोऽध्यायः ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दैवज्ञ को चाहिए कि वह रोग के भेदों को जानकर उसकी समुचित चिकित्सा बतायें। तीव्र एवं कर्मज व्याधि होने पर कर्मविपाकसंहिता के अनुसार उपाय करें ॥८६॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय'
हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का बारहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ॥१२॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ त्रयोदशोऽध्याय:

अथ रोगारम्भावसानकाल: निरूप्यते

लग्नादितोडुतश्चन्द्रो यावत्युडुनि संस्थित: ।
तस्मात्तावति नक्षत्रे रोगारम्भमुदीरयेत् ।। १।।
यद्वा मान्दिनवांशस्य द्वादशांशर्क्षगे विधौ ।
मान्दीन्दुयोगभे वैष ग्राह्यं प्रष्टुरनिष्टभम् ।। २।।
दूतवाक्याद्यवर्णोक्तराशिगेऽत्यन्तदोषदे ।
चन्द्राऽर्कगुरुमन्देषु रोगारम्भमुदीरयेत् ।। ३।।

प्रश्नलग्न के नक्षत्र से जितने नक्षत्र पर चन्द्रमा का नक्षत्र (दिननक्षत्र = प्रश्नकालीन चन्द्रनक्षत्र) उस नक्षत्रों के आगे उतनी ही संख्या वाले नक्षत्र (चन्द्रनक्षत्र) में रोगारंभ होता है ।।१।।

मान लीजिए—प्रश्नलग्न मेष २८°।२०' पर है तथा चन्द्रमा शतभिषा नक्षत्र पर हो तो मेष के अट्ठाईस अंश तथा दस कला पर लग्न का नक्षत्र कृत्तिका हुआ । कृत्तिका से शतभिषा तक गिना तो बाइसवाँ नक्षत्र हुआ । अब चन्द्रनक्षत्र शतभिषा से बाईसवीं संख्या गिनी तो ज्येष्ठा नक्षत्र आया । इसका अर्थ यह हुआ कि प्रश्न के दिन से पहले जिस दिन ज्येष्ठा नक्षत्र था उसी दिन से रोग का प्रारंभ हुआ है । अब इसे और अधिक स्पष्ट किया जा रहा है ।

मान लीजिये—किसी ने भाद्र-शुक्ल चतुर्दशी संवत् २०६० विक्रमी मंगलवार को कन्या लग्न के २६°।१५' पर प्रश्न किया गया । उस दिन धनिष्ठा नक्षत्र (चन्द्र नक्षत्र) है। अब लग्न का नक्षत्र २६°।१५' पर चित्रा है । चित्रा से धनिष्ठा तक गिना तो दसवाँ नक्षत्र हुआ । पुन: धनिष्ठा से दस नक्षत्र आगे गिना तो मृगशिरा हुआ । अब पंचांग देखा तो संवत् २०६० की अनन्त चतुर्दशी मंगलवार (दिनांक ९ सितम्बर सन् २००३ ईस्वी के पहले मृगशिरा नक्षत्र भाद्र-कृष्ण दशमी शुक्रवार (दिनांक २२/८/२००३) को है, रोग उसी दिन से आरंभ हुआ ऐसा जानना चाहिए ।

(१) मान्दि जिस नवांश में हो उसके नक्षत्र में या मान्दि के द्वादशांश नक्षत्र में चन्द्रमा जब गोचर में होता है अथवा (२) गुलिकस्पष्ट तथा चन्द्रस्पष्ट का योग करें, यह योग जिस नक्षत्र में हो उसी नक्षत्र में रोग प्रारंभ होता है । (३) अथवा प्राश्निक के अनिष्ट नक्षत्रों (विपत्तारा, प्रत्यरितारा, वधतारा) में रोगारंभ होता है ।।२।।

गुलिकस्पष्ट के नवांश का नक्षत्र जानने के लिए राश्यादि स्पष्ट के केवल अंश बना कर उन्हें नौ से गुणा कर ३६० का भाग दें, जो शेष बचे उतने अंश पर नक्षत्र देखें कौन-सा है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार गुलिकस्पष्ट का द्वादशांश नक्षत्र जानने के लिए अंशात्मक गुलिकस्पष्ट को बारह से गुणाकर ३६० का भाग दें, जो शेष रहे उतने अंश पर जो नक्षत्र हो वह द्वादशांश का नक्षत्र होगा।

मान लीजिए—गुलिकस्पष्ट राश्यादि ४।१७°।३०'।३५'' है। यह सिंह राशि के १७ अंश, ३० कला तथा ३५ विकला पर है। इसको अंशात्मक बनाने के लिए राशिसंख्या ४ को ३० से गुणा किया तो १२०° (एक सौ बीस अंश) हुए। इनको सत्रह अंशों में जोड़ने पर १३७° (एक सौ सैंतीस अंश) हुए। १३७ अंशादि १३७°।३०'।३५'' को नौ से गुणा किया तो गुणनफल अंशादि १२३७°।३५'।१५'' हुआ। अंशों में ३६० का भाग दिया, तो लब्धि ३ को छोड़ दिया, अंशादि १५७°।३५'।१५'' की राश्यादि ५।२७°।३५'।१५'' हुए। इसमें चित्रा नक्षत्र आया अत: चित्रा का चन्द्रमा रोगकारक होगा।

इसी प्रकार ४।१७।३०।३५ को बारह से गुणा करें। सुविधा के लिए अंशादि १३७।३०।३५×१२ = अंशादि १६५०°।०'' अंशों में ३६० से भाग दिया तो लब्धि ४ प्राप्त हुई, इसे छोड़ दिया तथा शेष अंशादि २१०।७' = राश्यादि ७।०°।७' हुए जो कि विशाखा नक्षत्र में है अत: विशाखा का चन्द्रमा भी रोग-उत्पादक होगा।

दूत के वाक्यों से रोग का प्रारंभ जानना—प्रश्नकर्त्ता ने जो प्रथम अक्षर का उच्चारण किया हो वह अक्षर जिस राशि को सूचित करे वह राशि यदि गोचर में दोषकारक चन्द्र-सूर्य-गुरु तथा शनि के द्वारा आक्रान्त हो तो उस समय रोग उत्पन्न होता है ॥३॥

यह सूत्र प्रश्नकुण्डली के व्यवहार में कुछ अव्यावहारिक ही प्रतीत होता है, क्योंकि गोचर में शनि पूरे ढाई वर्ष तथा गुरु पूरे एक वर्ष रहता है, अत: दैवज्ञ के रोग प्रारंभ की तिथि एक वर्ष या अढाई वर्ष बतानी होगी।

रोगारम्भदिशाज्ञानम्

यदाशाभिमुखो रोगी दृश्यते दूत एव वा।
रोगारम्भणमेतस्यां दिशि प्रष्टुरुदीर्यताम् ॥ ४॥

प्रश्न के समय रोगी-दूत या पृच्छक सबसे पहले जिस दिशा में दिखलाई दे उसी दिशा में पृच्छक के रोग के प्रथम लक्षण प्रकट होते हैं ॥४॥

रोगारम्भप्रहरकथनम्

ऐन्द्रीतो दिशि यावत्यां दूतः पृच्छति संस्थितः।
यामे तत्समसंख्ये स्यात् प्रष्टुर्व्याधिसमुद्भवः ॥ ५॥

ऐन्द्री (इन्द्र की दिशा=पूर्व) से आरम्भ कर जिस दिशा में दूत या रोगी बैठा हो उसी दिशा संख्या वाले प्रहर में रोग उत्पन्न होता है—ऐसा पृच्छक को बताना चाहिए ॥५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दिशाएँ—(१) पूर्व, (२) आग्नेय, (३) दक्षिण, (४) नैर्ऋत्य, (५) पश्चिम, (६) वायव्य, (७) उत्तर तथा (८) ईशान। इसी प्रकार चार प्रहर दिन में तथा चार प्रहर रात में होते हैं। पाँचवाँ प्रहर रात का प्रथम प्रहर होता है। एक प्रहर साढ़े सात घटी या ३ घण्टे को होता है। मान लो—दूत ने ईशान दिशा में बैठकर प्रश्न किया है तो यह आठवीं दिशा है अतः आठवें प्रहर में (रात के अंतिम प्रहर) में रोग की सूचक है।

रोगारम्भकाले समुपस्थितजनानां संख्याकथनम्

यावन्तो व्याधिते सन्ति निमग्ननयना जनाः।
व्याध्यारम्भेऽन्तिकस्थाः स्युस्तावन्तः सदृशाश्च तैः ॥ ६॥

प्रश्नकाल में जितनें लोगों की रग्ण या दूत पर दृष्टि होती है उतने ही जन रोगारम्भ काल में रोगी के समीप रहते हैं। रोगी को देखने वाले जन जितनी आयु तथा रंग-रूप के होते हैं उसी के अनुसार दूत या रुग्ण के समीप लोग उपस्थित रहते हैं ॥६॥

रोगस्य कालावधिकथनम्

रोगेशाश्रितराशौ तद् भुक्तभोक्तव्यभागतः।
रोगस्य गतगन्तव्यकालाधिक्याल्पते वदेत् ॥ ७॥

रोगेश (षष्ठेश तथा अष्टमेश) जिस राशि में बैठे हों उसके भुक्त-भोग्य के अंशों के अनुसार रोग कितने दिन पहले से है और कितने दिनों तक आगे रहेगा यह बताना चाहिए ॥७॥

रोगारम्भे दिवारात्रिकथनम्

षष्ठाधिपे दिवावीर्ये यद्वा षष्ठगते ग्रहे।
दिवारम्भश्च वृद्धिश्च रोगाणामन्यथा निशा॥ ८॥

यदि षष्ठेश दिवाबली ग्रह हो अथवा षष्ठ भाव में कोई दिवाबली ग्रह बैठा हो तो ''रोग दिन में आरंभ हुआ था'' ऐसा कहे। इसके विपरीत यदि षष्ठेश रात्रिबली ग्रह हो किं वा षष्ठभाव में रात्रिबली ग्रह की स्थिति हो तो रोगारंभ रात्रि में होता है ॥८॥

ग्रहों का दिवा-रात्रिबल—सूर्य-गुरु-शुक्र ये तीनों ग्रह दिवाबली होते हैं। चन्द्र, मंगल तथा शनि रात्रिबली होते हैं। बुध दिन में भी बली होता है तथा रात्रि में भी अतः यदि बुध षष्ठेश हो या षष्ठ में बैठा हो तो रोग दिन-रात में किसी भी समय या दोनों संध्या समय में उत्पन्न होता है।

उक्तञ्च कण्ठाभरणे

आरूढाद् भवने तु यावति गदस्थानाधिपः संस्थितो
मासे तावति वह्निभास्वदुडुवारे वाथ रुग्जायते।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यावत्प्रश्नभतोरिपाप्तमुडु तावन्तं गदारम्भणे
ब्रूयात्कालमनेन भुक्तनवभागघ्नं गदेशस्य वा ।। ९।।

आरूढ लग्न की राशि से जितनी राशि के अन्तर पर गदस्थानाधिपति (रोगेश=षष्ठेश) बैठा हो उतने ही मास पूर्व से ही रोग उत्पन्न होता है । अथवा आरूढ से षष्ठेश जितने नक्षत्र आगे हो उतनी संख्या को प्रश्नकालिक सूर्यनक्षत्र से पड़ने वाले सूर्यनक्षत्र (पीछे की ओर) से रोग होता है (सूर्यनक्षत्र तेरह दिन चलता है) । अथवा प्रश्ननक्षत्र (प्रश्नलग्न का नक्षत्र) से षष्ठेश का नक्षत्र जितनी संख्या आगे हो उतनी संख्या पर ही पीछे जो दिननक्षत्र था उस पर रोगारंभ कहना चाहिए ।

अथवा प्रश्न के समय षष्ठेश के जितने नवांश व्यतीत हुए हो उतने काल पूर्व से रोगारंभ कहना चाहिए ।।९।।

स्पष्टीकरण—(१) मान लीजिए—प्रश्न मेष के २७° पर है तथा आरूढ सिंह लग्न में है । प्रश्नलग्न का नक्षत्र कृत्तिका होगा । आरूढ़ के अंश भी प्रश्नलग्न तुल्य माने जायेंगे, अत: उसका नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी होगा । प्रश्नलग्न में नौवाँ नवांश है । बुध यहाँ षष्ठेश है, बुध जो वृश्चिक राशि में बैठा है यह आरूढ से चार राशि आगे हैं अत: बुध से चार राशि गिना तो वृश्चिक-धनु-मकर तथा कुंभ ये चार संख्या हुई, अत: चार मास से रोग चल रहा है । यह निष्कर्ष निकला कि रोग चार मास पूर्व से चल रहा है ।

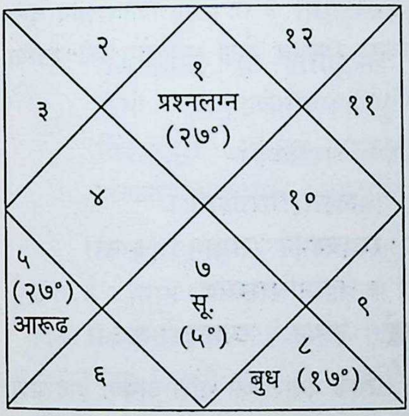

(२) आरूढ लग्न से बुध (ज्येष्ठा) सात नक्षत्र आगे है, अब प्रश्नकालीन सूर्य चित्रा में है अत: चित्रा से ज्येष्ठा तक नक्षत्र संख्या पाँच है, अत: लगभग ५ सूर्य नक्षत्र पहले (लगभग ६७ दिन पूर्व) रोग का प्रारंभ समझना चाहिए ।

(३) प्रश्नलग्न कृत्तिका नक्षत्र में है, उससे षष्ठेश स्थित नक्षत्र चित्रा है जो कि बारहवाँ है, अत: चित्रा से बारहवाँ नक्षत्र पूर्वाभाद्रपद है अत: रोगारंभ पूर्वाभाद्रपद में हुआ समझें ।

(४) षष्ठेश बुध १७° पर है अत: वह छठे नवांश मिथुन हुआ, पाँच नवांश भुक्त हो चुके हैं अत: पाँच मास पूर्व रोग प्रारंभ हुआ है; ऐसा कहना चाहिए ।

षष्ठेशाश्रितराशिचन्द्रतो रोगज्ञानम्

षष्ठेशाश्रितराशिस्थे चन्द्रे वा रोगसम्भवः ।
शमनं वा रुजां वाच्यं सुखेशाश्रितराशिगे।। १०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्न षष्ठेश जिस राशि में हो उस राशि में जब गोचर का चन्द्रमा होता है तब रोगारंभ होता है तथा सुखेश (चतुर्थेश) जिस राशि में होता है उस राशि में चन्द्र का गोचर संचार होने पर रोग का शमन होता है ॥१०॥

लग्नेशस्य चन्द्रस्य वा पापसम्बन्धाद्रोगारम्भं शमनञ्चाह

लग्नस्याधिपतेश्च तस्य शशिनो वा पापयोगेक्षणं;
यत्राभूत्समये तदामयसमारम्भः समादिश्यताम् ।
सौम्यानां युतिरीक्षणञ्च भविता तेषां त्रयाणां यदा;
रोगाणां शमनं तदाथ शमनारम्भस्तदेकान्वये ॥ ११॥

रोगारंभ उस समय होता है जब लग्न, लग्नेश या चन्द्रमा (प्रश्नकालीन) का पाप ग्रहों के साथ युति या दृष्टि सम्बन्ध हुआ था ।

भविष्य में जब भी प्रश्नलग्न की राशि प्रश्नलग्नेश के साथ या प्रश्नकालीन चन्द्र के साथ जब शुभग्रहों का युति-दृष्टि से सम्बन्ध स्थापित होगा तब रोग की शान्ति (Recovery) होगी ऐसा बताना चाहिए ॥११॥

लग्ननवांशद्वादशांशवशाच्च रोगोपशमकथनम्

लग्नोदितनवांशस्य द्वादशांशगराशिगे ।
मान्दिराशिमतिक्रान्ते वेन्दौ स्याच्छमनं रुजाम् ॥ १२॥
अष्टमेन्दु पुरोधाय यदि चेद्व्याधिसम्भवः ।
अतियातेऽष्टमं राशिं शशाङ्कं शमनं रुजाम् ॥ १३॥

जब चन्द्रमा प्रश्नकालीन लग्न की राशि, उसके नवांश की राशि अथवा द्वादशांश की राशि में जाता है (गोचर में) तब रोग का शमन होता है । अथवा चन्द्र जब गुलिक वाली राशि को लाँघ जाता है तब होता है ॥१२॥

यदि जन्मकालीन चन्द्र से अष्टमस्थ गोचर के चन्द्रमा में रोगारंभ हो तो प्रश्नकालीन लग्न या चन्द्र राशि से अष्टमस्थ राशि के चन्द्र को आगे बढ़ जाने पर रोगोपशमन होगा ऐसा बतायें ॥१३॥

मान लीजिए—किसी का जन्मलग्न वृश्चिक है, अष्टम भाव में मिथुन राशि में चन्द्र जब गोचर में था तब रोग हुआ, अतः अब प्रश्नलग्न जो कि सिंह है उससे आठवीं राशि मीन से आगे जब चन्द्र निकल जायेगा तब रोगशान्ति होगी ।

अत्रानुष्ठानपद्धतिः

दुःस्थखेटवशतो रुजागमं सुस्थखेटवशतः शमं वदेत् ।
मन्त्रनृत्तबलिपूजनौषधैर्देवताभजनधातुपोषणैः ॥ १४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दुःस्थानामतिदोषमाश्रितगृहं प्राप्तेषु चन्द्रादिषु;
व्याध्यारम्भ इहातिदुःस्थखगसम्बन्धीशकोपोद्भवः ।
सुस्थानामपि तद्वदिष्टतमखेटाधिष्ठितक्षीश्रिते-
ष्विन्द्वाद्येषु तदीयदेवभजनाच्छान्तिश्च वाच्या रुजाम् ।। १५।।

जब अनिष्ट स्थान में स्थित ग्रह रोग का सूचक हो तब यदि शुभ स्थान में स्थित ग्रह रोगशान्ति के सूचक हों ऐसी स्थित में मन्त्र, बलिदान, पूजा, होम, दान तथा औषधोपचार से रोगशान्ति होती है ॥१४॥

दुःस्थान स्थित ग्रहों में जो ग्रह अति दोषप्रद हों उनसे आश्रित राशि में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र आदि ग्रहों के पहुँचने पर रोगारंभ होता है । यह रोग अति दोषप्रद ग्रह के स्वामी देवता के प्रकोप से होता है । ऐसा बतानाा चाहिए ॥१५॥

रोगारम्भनक्षत्रात् रोगशान्तिकथनम्

वैश्वे सौम्ये च मासादुपरि तु वसुभब्रध्नशूर्पेषु पक्षाद् ;
रोगी चित्राप्रचेतोयमहरिषु सुखं विन्दते रुद्रसंख्यात् ।
विंशादङ्क्षो मघायां गुरुभगसुरसूबुध्निवेधस्सु भूभृत्-
संख्यान्मूलाश्वियुक्ते हुतभुजि नवमान्मित्रपूष्णोस्तु कृच्छ्रात् ।। १६।।

उत्तराषाढा तथा मृगशिरा इन नक्षत्रों में यदि रोग उत्पन्न हो तो एक मास में शान्त होता है । वसुभ (धनिष्ठा), हस्त तथा विशाखा इन नक्षत्रों में उत्पन्न रोग एक पक्ष (पन्द्रह दिन) के उपरान्त शान्त होता है । चित्रा, रोहिणी, भरणी एवं श्रवण इन नक्षत्रों में उत्पन्न रोग ग्यारह दिन में ठीक हो जाता है । मघा में उत्पन्न रोग २० दिनोपरान्त; पुष्य, पुनर्वसु, पूर्वाफाल्गुनी, रोहिणी तथा उत्तराभाद्र में उत्पन्न रोग सात दिन के बाद ठीक होता है । मूल, अश्विनी तथा कृत्तिका का रोग नौ दिन में शान्त होता है तथा अनुराधा एवं रेवती में बड़ी कठिनता से शान्त होता है । यह नक्षत्रों में उत्पन्न रोग की अवधि का कथन है ॥१६॥

नक्षत्रोत्पन्न रोगावधि चक्र

एक मास के उपरान्त	पक्षोपरान्त	ग्यारह दिनों के उपरान्त	नौ दिनों के उपरान्त	सात दिनों के उपरान्त	बीस दिनों के उपरान्त	कठिनाई से
उ.षा., मृगशिरा में	धनिष्ठा, हस्त, विशाखा में	चित्रा, शतभिषा, भरणी, श्रवण में	मूल, अश्विनी, कृत्तिका में	पुष्य, पू.फा., पुनर्वसु, रोहिणी में	मघा में	अनुराधा, रेवती में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मृत्युप्रदनक्षत्राणि तिथयश्च

ज्येष्ठासमीरोरगरौद्रपूर्वात्रयेषु न प्राणिति जातरोगः।
छिद्रासमेतेषु सपापवारेष्वाग्नेयवस्वन्तकवारुणेषु ।। १७।।
अष्टमीपर्वरिक्तासु पापवारे त्रिजन्मभे।
गोमासाष्टमचन्द्रेषु रोगारम्भो मृतिप्रदः ।। १८।।

ज्येष्ठा, स्वाति, आश्लेषा, आर्द्रा, तीनों पूर्वा—इन सात नक्षत्रों में उत्पन्न रोग मृत्युदायक होता है । छिद्रा तिथियों (४, ९, १४, ६, ८, १२) में पाप ग्रहों के वार में कृत्तिका, धनिष्ठा, भरणी तथा शतभिषा में उत्पन्न रोग भी घातक होता है । इन नक्षत्रों के साथ पाप वार (मंगल, शनि, रवि) तथा छिद्रा तिथियों का संयोग मृत्युदायक होता है ।।१७।।

अष्टमी, पर्वतिथियाँ (अमावस्या तथा पूर्णिमा), पापग्रह का वार, त्रिजन्म नक्षत्र (१-१०-१९), जन्मनक्षत्र से तीसरा, पाँचवाँ तथा सातवाँ नक्षत्र इनमें उत्पन्न रोग कष्टप्रद तथा मृत्युदायक होता है ।।१८।।

स्कन्दपुराणोक्त शीतलास्तोत्र—जिन व्यक्तियों के परिवारों में फोड़ा-फुंसी, बद, गूमड़े, कैंसर, गलगण्ड, गण्डमाला, विसर्पादि बहुतायत से होते हैं उनके कल्याणार्थ शीतलास्तोत्र यहाँ दिया जाता है । इसका नित्य श्रद्धाभक्ति सहित पाठ करने से इन सब व्याधियों का प्रतिषेध होता है—

शीतलास्तोत्रम्

"ॐ नमः शीतलायै । स्कन्द उवाच—
भगवन्देव देवेश शीतलायाः स्तवं शुभम् ।
वक्तुमहस्य शेषेण विस्फोटकभयापहम् ।।१।।
।। ईश्वर उवाच ।।
वन्देऽहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् ।
यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ।।२।।
शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद् दाहपीडितः।
विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य विनश्यति ।।३।।
यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा पूजयते नरः ।
विस्फोट कभवं घोरं भयं तस्य न जायते ।।४।।
शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हरसि दुस्तरान् ।
विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ।।५।।
गलगण्डग्रहा रोगा ये चान्ये रुजान्नृणाम् ।
त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यान्ति संक्षयम् ।।६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

न मन्त्रो नौषधं किञ्चित् पापरोगस्य विद्यते ।
त्वमेका शीतले धात्री नान्यां पश्यामि देवताम् ॥७॥
मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृत्पद्मसंस्थिताम् ।
यस्त्वा सञ्चिन्तयेद् देवी तस्य मृत्युर्न जायते ॥८॥
अष्टकं शीतलादेव्या: य: पठेन्मानव: सदा ।
विस्फोटकभयं घोरं कुले तस्य न जायते ॥९॥
श्रोतव्यं पठितव्यञ्च श्रद्धाभक्तिसमन्वितै: ।
उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥१०॥
शीतलाष्टकमेवेदं न देयं यस्य कस्यचित् ।
दातव्यं हि सदा तस्मै भक्तिश्रद्धान्वितश्च य: ॥११॥

॥ इति स्कन्दपुराणोक्तशीतलाष्टकम् ॥

शूलचक्रम्

अर्कारूढेऽस्य धीमान्यपुत्रभे वा रुगागम: ।
यदि मृत्युर्भवेत्सार्कतारकोभयपार्श्वयो: ॥ १९ ॥
त्रिषु त्रिषु च धीमान्यपुत्रपार्श्वगतोडुषु ।
रुग्वृद्धि: परिशिष्टेषु द्वादशस्वथ जीवति ॥ २० ॥

सूर्यारूढ (सूर्याधिष्ठित) नक्षत्र वाले दिननक्षत्र में या धी (९) = उससे नौवें नक्षत्र में या मान्य (१५) = पन्द्रहवें अथवा पुत्र (२१) = इक्कीसवें नक्षत्र में यदि रोग उत्पन्न हो तो मृत्यु होती है । इन तीनों नक्षत्रों के आगे-पीछे वाले नक्षत्रों अर्थात् ८वें, १०वें, १४वें-१६वें तथा २०वें-२२वें इन छ: नक्षत्रों को मिलाकर ३+३+३+१ = दस नक्षत्रों में भी रोग उत्पन्न हो तो भी मृत्यु होती है । सूर्य से छब्बीसवें, सत्ताईसवें, अट्ठाईसवें से तीन पूर्ववर्ती तथा सूर्याधिष्ठित से तीन पश्चाद्वर्ती दूसरा, तीसरा तथा चौथा ये छ: नक्षत्र रोगोत्पन्न होने पर बढ़ाते हैं परन्तु मृत्यु नहीं होती । शेष बारह नक्षत्रों में (अभिजित् सहित) रोगी जीवित रहता है ॥१९-२०॥

शूलचक्र

मृत्युकारक	मृत्यु नहीं पर रोगवृद्धिकर	आरोग्यकर	फल
पहला ८-९-१० १४-१५-१६ २०-२१-२२	२६-२७-२८ २-३-४	५-६-७ ११-१२-१३ १७-१८-१९ २३-२४-२५	सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से रोगोत्पादक चन्द्रनक्षत्र की संख्या अभिजित् सहित

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मान लीजिए—किसी ने जब प्रश्न किया तब सूर्य अश्विनी नक्षत्र में था तो घातक (मृत्युकारक नक्षत्र) अश्विनी, पुष्य, श्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति, विशाखा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित्—ये दस नक्षत्र चन्द्रर्क्ष होंगे। रोगवृद्धिकारक—पूर्वाभाद्र, उत्तराभाद्र, रेवती, भरणी, कृत्तिका तथा रोहिणी—ये छः नक्षत्र चन्द्रर्क्ष होंगे। शेष में रोग उत्पन्न हो तो आरोग्यकारक होंगे।

मृत्युयोगः

तारावारतिथीनां मृतिदानां शूलचक्रभानाञ्च।
जन्मप्रभृतीनां वा मृतिर्ध्रुवं सङ्गमे तु पञ्चानाम् ।। २१।।

यदि (१) नक्षत्र (तारा), (२) वार, (३) तिथि, (४) शूलचक्र तथा (५) जन्मनक्षत्र ये पाँचों ही रोगारम्भ समय में मृत्युदायक हों तो निश्चय ही सम्बन्धित की मृत्यु होती है ।।२१।।

यहाँ नक्षत्र से तात्पर्य पूर्व में श्लोक १६-१७ में कहे गये नक्षत्रों से हैं तथा जन्म-नक्षत्र से ३-५-७ वें नक्षत्र का अर्थ है।

बालातुरस्य विचारः

रोगारम्भणतारकान्तगणने जन्मर्क्षतो या भवेत्;
संख्या तां त्रिगुणां हरेज्जलधिभिः शेषैः फलानि क्रमात्।
एकद्वित्रिचतुर्भिराशु मरणं मृत्युः शनैर्जीवनं;
कृच्छ्राज्जीवनमप्रयत्नत इदं प्राग्द्वादशाब्दाच्छिशोः ।। २२।।

बारह वर्ष तक का बालक या बालिका यदि रुग्ण हो जाय तो उसके जन्मनक्षत्र से रोगारम्भ नक्षत्र तक गणना करें, जो संख्या हो उसे तीन से गुणा करें। गुणनफल में चार का भाग दें। शेषानुसार फल-विचार करें। यदि एक शेष बचे तो शीघ्र मृत्यु होती है। दो शेष बचने पर रोग धीरे-धीरे बढ़ता है फिर देर से मृत्यु होती है। तीन शेष बचने पर संघर्ष पूर्ण जीवन व्यतीत करना पड़ता है तथा शून्य शेष रहने पर बिना प्रयास के भी जीवन सुरक्षित रहता है ।।२२।।

रोगावधिकथनम्

षष्ठेशे मन्दगतौ स्थिराश्रिते वा रुजां शनैः शमनम्।
शीघ्रगतौ चरयाते शमनं रोगस्य न चिरेण।। २३।।

यदि षष्ठेश अपनी मध्यम गति से कम गति (मन्दगति) हो अथवा स्थिर राशि में स्थित हो तो रोग की शान्ति धीरे-धीरे होती है। यदि षष्ठेश ग्रह शीघ्रगति (मध्यम से अधिक) हो या चर राशि में हो तो रोगशान्ति शीघ्र ही होती है ।।२३।।

वक्तव्य—एक हिन्दी टीकाकार ने इस श्लोक का अर्थ ही उलट दिया है, उनके अनुसार मन्द गति या स्थिर राशि में षष्ठेश होने से रोग का शमन शीघ्र हो जाता है। किन्तु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शीघ्र गति या चर राशिगत होने पर शीघ्र अच्छा नहीं होता। पता नहीं यह अर्थ उक्त विद्वान् टीकाकार ने कैसे कर दिया है। जबकि मूल में बहुत स्पष्ट है कि स्थिर राशि में "रुजां शनैः शमनम्" तथा चर राशि में "शमनं रोगस्य न चिरेण" अर्थात् रोग का शमन चिरकाल में नहीं होता यानी शीघ्र होता है।

चिरकालीनरोगकथनम्

पापानामुदयश्च मध्यवसतिर्लग्नस्य लग्नेशितु-
दौर्बल्यं कथितं द्वयं च हिमगोस्तच्चोभयं क्षीणता।
रिःफारातिमृतिष्वपूर्णहिमगोस्तत्र स्थितिश्चासतां;
केनाप्यामयदैर्घ्यमेषु बहुभिर्वक्तव्यमेतैः किमु ॥ २४॥

(१) यदि लग्न में पापग्रह बैठे हों, (२) लग्न पापकर्त्तरी (पाप ग्रहों के मध्य) हो, (३) लग्नेश निर्बल हो, (४) लग्नेश का पाप ग्रहों के बीच होना, (५) लग्नेश की पाप ग्रहों से युति, (६) चन्द्रमा की क्षीणता, (७) पूर्ण चन्द्र का ६-८-१२ भावों में बैठना, (८) चन्द्र से ६-८-१२ में पाप ग्रहों की स्थिति, (९) पूर्ण चन्द्र की पाप मध्य में स्थिति इनमें से दो-तीन या अधिक योग प्रश्नकुंडली में हों तो रोग चिरकालीन होता है। जितने योग अधिक होंगे उतनी ही बीमारी अधिक लम्बे समय तक चलेगी। एक योग में कम लम्बे समय तक, दो में मध्यम लम्बे समय तक तथा अधिक योगों की उपस्थिति में तो उसकी चिरकालीन स्थिति के विषय में कहना ही क्या? ॥२४॥

अथ प्रायश्चित्तम्

प्रायश्चित्तं दुःशमनरोगशमनाय तत्तदुदितमपि।
कार्यं सर्वेष्ववदत् स्वग्रन्थे सायणस्य वचनमिदम्॥ २५॥
यथा कार्येषु सामग्री दृष्टादृष्टोभयात्मिका।
तथोक्ता रोगनाशेषु प्रायश्चित्तौषधात्मिका॥ २६॥

आचार्य सायण ने अपने ग्रन्थ में कहा है कि कठिन रोगों के शमन के लिए उन के लिए शास्त्रों में कहे गये ढंग से प्रायश्चित्त करना चाहिए ॥२५॥

किसी भी कर्म को सम्पन्न करने के लिए जिस प्रकार दृष्टादृष्ट दोनों तरह की सामग्री का उपयोग करते हैं उसी भाँति रोग दूर करने के लिए चिकित्सा के दो रूप होते हैं— (१) औषध चिकित्सा तथा (२) प्रायश्चित्त चिकित्सा ॥२६॥

औषधापचार, परिचर्या, धन आदि से सहयोग यह दृश्य सामग्री है तथाा मंत्र, तंत्र, आशार्वाद आदि ग्रहण करना यह अदृष्ट सामग्री है।

प्रश्नकुण्डल्यां रोगनाशका ग्रहयोगाः

परिपूर्णतनुश्चन्द्रो लग्नोपगतो निरीक्षितो गुरुणा।
गुरुशुक्रौ केन्द्रे वा पीडार्त्तस्तत्र सुखितः स्यात् ॥ २७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपचयसंस्थश्चन्द्रः सौम्याः केन्द्रत्रिकोणधनमृतिगाः ।
लग्नं वा शुभदृष्टं सुखितस्तत्रातुरो वाच्यः ।। २८।।

(१) यदि लग्न में पूर्ण चन्द्रमा बैठा हो तथा गुरु से दृष्ट हो तो रोग अच्छा हो जाता है । अथवा (२) गुरु-शुक्र दोनों केन्द्र में बैठे हो तो भी रोगी स्वस्थ हो जाता है ॥२७॥

यदि चन्द्रमा प्रश्नलग्न से उपचय स्थानों (तीसरे, छठे, दसवें, ग्यारहवें) में बैठा हो तथा शुभ ग्रह केन्द्र, त्रिकोण, धनभाव तथा अष्टम भाव में बैठे हों तो आतुर व्यक्ति स्वस्थ हो जाता है । इसमें अथवा लग्न (प्रश्नलग्न) शुभ ग्रहों से दृष्ट हो तो भी रोगी शीघ्र चंगा होता है ॥२८॥

आप्तवचनात् कर्मजव्याधिकथनम्

जन्मान्तरकृतं पापं व्याधिरूपेण जायते।
तच्छान्तिरौषधैर्दानैर्जपहोमार्चनादिभिः ।। २९।।

पूर्व के जन्मों में किया हुआ कर्म इस जन्म में रोग के रूप में उत्पन्न होता है, उसकी शान्ति औषधि, दान, जप, होम, पूजा आदि से होती है ॥२९॥

देवादीनां प्रकोपकथनम्

रोगार्तानामिह तु बहुधा कल्प्यते रोगहेतु-
र्भूतावेशाद् ग्रहगतिवशाद् वातपित्तादिकोपात् ।
एतत्तथ्यं त्रिविधमुदितं प्रायशः स्वीयपाप्मा;
रोगोत्पत्तेर्भवति हि नृणां हेतुरेकस्त्रिधा स्यात् ।। ३०।।

रोगपीड़ित होने के अनेक कारणों को माना जाता है । जैसे कि भूतादि का आवेश, ग्रहगति, वात-पित्तादि का कोप परन्तु इन तीनों का कारण तो वास्तव में पूर्वजन्म कृत पाप कर्मों के फल का विपाक ही होता है । यह पाप ही इन तीन रूपों में फल देता है ॥३०॥

ग्रहाणां प्रबलताकथनम्

दुष्टे चारे ग्रहाणां भवति तनुभृतां पीडनं दुर्ग्रहाणां;
जायन्ते तेन दोषत्रितयचलनतस्तद्भवा व्याधिभेदाः ।
सर्वेषामेव तेषां खलु निजदुरितं प्राक्तनं हेतुरेकः;
प्रायश्चित्तञ्च तत्कथितमपि चिकित्सास्तु रोगोपशान्त्यै ।। ३१।।

जब ग्रह गोचरभ्रमण वश अशुभ स्थानों में गमन करते हैं तो उन्हीं के कारण भूत-पिशाचादि की पीड़ा होती है तथा उन्हीं के कारण वात-पित्त-कफ की विकृति होकर रोगोत्पन्न होते हैं (आधुनिक एलोपैथी चिकित्सा तथा विकृतिविज्ञान के अनुसार रोग जीवाणुओं के कारण भी उत्पन्न होते हैं परन्तु इसका कारण भी ग्रहों की अनिष्टता ही जानना चाहिए) पर इन सबका प्रबलतम कारण पूर्वजन्म कृत पापकर्म ही होते हैं । इसीलिए विभिन्न रोगों की शान्ति के लिए प्रायश्चित्त करना चाहिए ॥३१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पापभेदकथनम्

पापभेदश्च तत्प्रायश्चित्तभेदाश्च विस्तरात् ।
सायणेनोदिताः कर्मविपाके ग्रन्थ आत्मनः ।। ३२।।

सायणाचार्य ने अपने कर्मविपाक ग्रन्थ में पापों के भेद तथा उनके भेद, प्रायश्चित्त तथा उपायादि का विस्तार से वर्णन किया है ।।३२।।

राजयक्ष्मादिरोगाणां कर्मजहेतुकथनम्

राजयक्ष्मादिरोगाणां ब्रह्महत्यादि कारणम् ।
वस्त्रदानादिकं प्रायश्चित्तं तद्विगितीरिता।। ३३।।

राजयक्ष्मादि रोगों का कारण पूर्वजन्म में की गई ब्रह्महत्या होती है । उसे वस्त्रादि दान द्वारा शान्त करने का विधान कहा गया है ।।३३।।

कर्मविपाकः

कर्मविपाकं वक्ष्याम्यध्यायेऽस्मिन् खलु त्रयोविंशे ।
ज्ञात्वा तस्मात्तत्प्रायश्चित्तं विधीयतां रुक्षु ।। ३४।।

इस ग्रन्थ के तेईसवें अध्याय में कर्मविपाक कहा जायेगा, उससे प्रायश्चित्त को जानकर रोगमुक्ति के इच्छुक उसे करें ।।३४।।

रोगमुक्त्यर्थमुपायकथनम्

औषधं पथ्यमाहारं तैलाभ्यङ्गं प्रतिश्रयम्।
रोगिभ्यः श्रद्धया दद्याद्रोगी रोगनिवृत्तये।। ३५।।

एक रोगी व्यक्ति के रोग को ठीक करने के लिए औषधदान (Medical Treatment), पथ्य (हितकर भोजन, विश्राम आदि), तैलाभ्यङ्ग (औषधसिद्ध तेलों की मालिश) तथा प्रतिश्रय (उचित नींद एवं विश्राम) इनकी व्यवस्था रोगी की श्रद्धा एवं विश्वासानुसार दें ।।३५।।

मृत्युञ्जयहवनम्

मृत्युञ्जयहवनं खलु सर्वरुजां शान्तये विधेयं स्यात् ।
सर्वेष्वपि होमेषु ब्राह्मणभुक्तिस्तथा तथाप्तवचः ।। ३६।।
तीव्रज्वराभिचारादिशान्तिदं हवनं मतम् ।
मृत्युञ्जयाख्यमन्त्रेण नैव केवलमायुषम् ।। ३७।।
तीव्रज्वरे तीव्रतराभिचारे; सोन्मादके दाहगदे च मोहे ।
तनोति शान्तिं न चिरेण होमः सञ्जीवनश्चाष्टसहस्रसंख्यः ।। ३८।।

सभी प्रकार के रोगों की शान्ति के लिए मृत्युञ्जय हवन का विधान है । सभी हवनों में ब्राह्मणभोजन कराना चाहिए ऐसा आप्त लोगों का कथन है ।।३६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तीव्रज्वर एवं अभिचार (तांत्रिक मांत्रिक कष्टदायक प्रयोग जिन्हें दूसरे रोगी के अनिष्ट हेतु करते हैं) की शान्ति इस हवन से होती है ऐसा कहा गया है। केवल मृत्युञ्जय मंत्र के द्वारा किये गये हवन से ही आयु की वृद्धि तथा आयु की रक्षा होती है (अन्य उपाय से नहीं) ॥३७॥

तीव्रज्वर, तीव्र अभिचार में, उन्माद (पागलपन) तथा सभी प्रकार के मनोरोगों में, शरीर में होने वाली जलन की बीमारी में तथा मूर्च्छादि में मृत्युञ्जय (संजीवनी मंत्र) को यदि आठ हजार की संख्या में कराया जाय तो शीघ्र ही रोगशान्ति होती है ॥३८॥

मृत्युञ्जय मन्त्र–

"ॐ हौं जूं सः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः॥
ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥
ॐ भूर्भुवः स्वः सः जूं हौं ॐ।"

अध्यायोपसंहार:

शान्तिके पौष्टिके चापि वशीकरणकर्मणि ।
हुतसंख्यासमानं स्यादुत्तमं द्विजभोजनम् ॥ ३९॥

॥ इति प्रश्नमार्गे त्रयोदशोऽध्यायः ॥

—*—

शान्तिक कर्म (जो रोग-पीड़ा शान्ति के लिए किये जाते हैं), पौष्टिक कर्म (जो शरीर की पुष्टि एवं सफलता के लिए किये जाते हैं) तथा वशीकरण (दूसरों को प्रभावित करने तथा अपने व्यक्तित्व को आकर्षक बनाने एवं लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए किया जाने वाला कर्म)—इनमें होम की संख्या के तुल्य ही ब्राह्मणभोजन कराना उत्तम रहता है ॥३९॥

किसी भी होम का सामान्य शास्त्रीय विधान यह है कि जितनी आहुतियों का हवन हो उसका दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन, मार्जन का दशांश ब्राह्मण भोजन कराना चाहिए। जैसे हवन यदि सवा लाख (१,२५,०००) की संख्या में हो तो १२,५०० तर्पण, १२५० मार्जन तथा १२५ की संख्या में ब्राह्मण भोजन करायें। मृत्युञ्जय मंत्र का जितनी संख्या में जप हो उससे दशांश का ही हवन होता है अतः जब जप की संख्या सवा लाख होगी तो हवन मात्र बारह हजार पाँच सौ का ही होगा। अनेक विद्वानों का मत है कि हवन का दशांश ब्राह्मण भोजन करायें।

तात्पर्य यह है कि यह सब अपने सामर्थ्य के अनुसार करायें।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड कृत 'पाथेय' हिन्दी व्याख्या युक्त प्रश्नमार्ग का तेरहवाँ अध्याय समाप्त हुआ ॥१३॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ चतुर्दशोऽध्यायः

अथ भावा निरूप्यन्ते

वाच्याः सुतादयो भावाः परोक्षस्यापि पृच्छतः ।
सुवाचास्ते वयो ज्ञात्वा यस्तदपि कथ्यते ॥ १॥

भावफल विचार के पूर्व जिस व्यक्ति के सम्बन्ध में शुभाशुभ फल कहना है उसकी वय (Age) कितनी है—यह ज्ञात होना आवश्यक है, तभी द्वादश भावों के विचार से फल कहा जा सकता है । अतः पृच्छक की अवस्था जानने की रीति का वर्णन किया जा रहा है ॥१॥

वयोज्ञानविधिः

लग्नेशे क्षितिजे च बालहिमगौ ना पञ्च संवत्सराः;
पूर्णाः प्रष्टुरथेन्दुजेष्टभृगुजे षट्संयुता वा दश ।
त्रिंशद्देवगुरौ रवौ दशगुणा शैलाश्च वृद्धोडुपे;
प्रष्टा वृद्धतरोऽर्कजे फणिनि वा चैषां तथैवोदये ॥ २॥

कभी-कभी पृच्छक प्रश्न पूछने नहीं आता अपितु उसका दूत बनकर उसका निकटतम व्यक्ति दैवज्ञ के समीप आकर प्रश्न पूछता है, ऐसे में जो वास्तविक पृच्छक है उसकी आयु जानने की विधि यहाँ बतलाई गयी है—

यदि प्रश्नकुण्डली में लग्नेश मंगल या बालचन्द्रमा (शुक्लद्वितीया-तृतीया का) है तो पृच्छक की वय पाँच वर्ष से भी कम जानना चाहिए । पूर्ण चन्द्र या बुध लग्नेश हो तो आठ वर्ष का होता है । शुक्र यदि लग्नेश है तों पृच्छक की आयु १६ वर्ष के भीतर ही होगी । गुरु के लग्नेश होने पर पृच्छक की वय तीस वर्ष की होती है । सूर्य तथा वृद्ध चन्द्रमा (कृष्ण एकादशी के पश्चात्) में से कोई यदि लग्नेश है तो प्रष्टा सत्तर वर्ष के भीतर का है । यदि शनि लग्नेश है अथवा राहु लग्न में बैठा है तो पृच्छक की आयु सत्तर वर्ष से अधिक जानना चाहिए । इन ग्रहों की लग्न में स्थिति से भी प्राश्निक की आयु का ज्ञान करना चाहिए ऐसा भी कहते हैं ॥२॥

अनेक विद्वानों ने वृद्ध चन्द्र के लग्नेश होने या लग्न में बैठने पर सत्तर वर्ष से अधिक आयु है ऐसा अर्थ किया है ।

लग्नतो विचारणीया विषयाः

देहस्य सौष्ठवं स्वास्थ्यं स्थितिः श्रेयो यशःसुखम् ।
जयो वपुश्च तत्सर्वं चिन्तनीयं विलग्नतः ॥ ३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शरीर का सौन्दर्य, गठन, स्वास्थ्य, प्राश्निक की स्थिति, श्रेय, यश, सुख, विजय (प्रभाव), शरीर की बनावट इत्यादि का विचार लग्न से करना चाहिए ॥३॥

द्वितीयभावाद् विचारणीया विषयाः

भर्तव्यमखिलं वित्तं वाणी चक्षुश्च दक्षिणाम्।
विद्याश्च विविधा ह्येतत् सर्वं चिन्त्यं द्वितीयतः ॥ ४॥

भर्तव्य (भरण-पोषण की सामग्री = अन्न-वस्त्रादि), धन, वाणी, नेत्र (दाहिना), विविध प्रकार की विद्याएँ तथा कलाओं का विचार द्वितीय से करना चाहिए ॥४॥

तृतीयतो विचारणीया विषयाः

धैर्यं वीर्यञ्च दुर्बुद्धिः सहोदरपराक्रमौ ।
दक्षकर्णसहायौ च चिन्तनीयं तृतीयतः ॥ ५॥

धीरज, पराक्रम, दुर्बुद्धि, भाई-बहिन, सामर्थ्य, दाहिना कान तथा भाई आदि का सहयोग इन सब का विचार तीसरे भाव से करना चाहिए ॥५॥

चतुर्थभावतो विचारणीया विषयाः

माता सुहृन्मातुलभागिनेयौ;
क्षेत्रं सुखं वाहनमासनञ्च ।
लालित्यमम्भः शयनञ्च वृद्धिः
पश्वादिकं जन्मगृहं चतुर्थात् ॥ ६॥

माता, मित्रवर्ग, भानजा, खेत, बगीचा, सुख, वाहन, आसन, लालित्य, जल, शयन (पलंग आदि), वृद्धि, पालतू पशु, जन्मस्थल आदि सबका विचार चतुर्थ स्थान से करना चाहिए ॥६॥

पञ्चमभावात् किं विचारणीयम्

प्रज्ञा प्रतिभा मेधा विवेकशक्तिः पुरातनं पुण्यम् ।
मन्त्रामात्यतनूजाः पञ्चमभात्सौमनस्यमपि चिन्त्यम् ॥ ७॥

प्रज्ञा (विशेष बुद्धि), प्रतिभा (सामान्य बुद्धि), मेधा (स्मरणशक्ति), विवेकशक्ति, पूर्वजन्म के पुण्य, परामर्श, मंत्र (सलाह), सलाहकार, सन्तान इन सबका विचार पञ्चम भाव से करना चाहिए ॥७॥

षष्ठभावात् किं विचारणीयम्

तस्करारातिविघ्नाधिव्याधयश्च तनुक्षतिः ।
मरणं वारिशस्त्रेण चिन्तनीयं हि षष्ठतः ॥ ८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तस्कर (चार-डाकू-जेबकतरे आदि), अराति (शत्रु), विघ्न (Obstacles), आधि (मानसिक रोग), व्याधि (शारीरिक रोग), तनुक्षति (शरीरिक चोट), शत्रु एवं शस्त्रादि के द्वारा मृत्यु इन सबका विचार छठे भाव से करना चाहिए ॥८॥

सप्तमभावात् किं विचारणीयम् ?

विवाहमदनालोकभार्याभर्तृसमागमाः ।
शय्यास्त्रीसद्मनष्टार्थमैथुनान्यपि सप्तमात् ॥ ९॥

विवाह, कामेच्छा, पत्नी एवं पति के सम्बन्ध, शय्या, पत्नी, नष्ट धन (चोरी गया, गुम हुआ माल) तथा मैथुनादि का विचार सप्तम भाव से करते हैं ॥९॥

अष्टमभावात् किं विचारणीयम्

सर्वप्रणाशो विपदोपवादो हेतुप्रदेशौ मरणस्य दासः ।
मठाधिकं वेश्म गदाश्च विघ्ना विचिन्तनीयाः पुनरष्टमेन॥ १०॥

सर्वनाश (हर प्रकार की बर्बादी = Ruin of everything), विपत्तियाँ, अपवाद (बदनामी आदि), मृत्यु के कारण, मृत्यु का स्थान, दास (भृत्य, नौकर-चाकर), मठ (आश्रमादि), घर, रोग तथा विघ्नबाधाओं का विचार आठवें भाव से करना चाहिए ॥१०॥

नवमवेश्मात् किं चिन्तनीयम्

भाग्यधर्मदयापुण्यतपस्तातसुतात्मजाः ।
दानोपासनसौशील्यगुरवो नवमादमी ॥ ११॥

भाग्य, धर्म, दया, पुण्य, तप, पिता, पौत्र, दान, उपवास, आसन, सुशीलता (सच्चरित्रता) तथा गुरुओं (गुरुजनों) का विचार नवम भाव से करना चाहिए ॥११॥

दशमभावात् चिन्तनीयानि

देवालयनगरसभामार्गालयदाससर्वकर्माणि ।
आज्ञालम्बनमेतत्सर्वं चिन्त्यं हि दशमेन॥ १२॥

मन्दिर, नगर, सभा, मार्ग के किनारे के विश्रामगृह, धर्मशाला (यात्रीप्रतीक्षालय आदि), दास (नौकर), सदावर्त आदि के स्थान, आज्ञा, आजीविका के साधन, विनय इन सबका विचार दशम भाव से करना चाहिए ॥१२॥

एकादशभावात् विचारणीया विषयाः

सर्वाभीष्टागमो ज्येष्ठभ्राता, जाता निजात्मजाः ।
वामकर्णोऽर्थलाभश्च चिन्त्या ह्येकादशेन वै ॥ १३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सभी इच्छित पदार्थों की प्राप्ति, बड़ा भाई, उत्पन्न संतति, बाँया कान तथा धनलाभ इन सबका विचार ग्यारहवें भाव से करना चाहिए ॥१३॥

द्वादशभावात् विचारणीया विषयाः

पापं व्ययञ्च पतनं निरये वाममम्बकम् ।
स्थानभ्रंशञ्च वैकल्यं द्वादशेन विचिन्तयेत् ॥ १४॥

पाप, खर्च, चारित्रिक पतन, दुर्गति, वामनेत्र, स्थानभ्रंश (पद, प्रतिष्ठा, आवास आदि का हाथ से निकल जाना), बेचैनी या असफलता आदि का विचार बारहवें भाव से करना चाहिए ॥१४॥

भावों से और अधिक विचार के लिए उत्तरकालामृत आदि ग्रन्थों को देखना चाहिए ।

केन्द्रभावानां विशेषविचारः

चिन्त्यं सङ्क्रमणं लग्नाच्छयनं हि चतुर्थतः ।
सप्तमेनोपवेशश्च चिन्त्या दशमतः स्थितिः ॥ १५॥
हिबुकेनाथ सलिलं नद्यागमनं तु सप्तमेनैव ।
दशमेन वृष्टिपतनं ब्रूयादुदयेन तत्त्रितयेन ॥ १६॥

लग्न से जातक-संक्रमण (गतिविधियाँ, क्रियाकलाप, घूमना-फिरना आदि) का विचार करें । चतुर्थ भाव से शयन तथा आराम-विश्राम का विचार करें । सप्तम भाव से बैठने तथा दशम भाव से खड़े होने का विचार करना चाहिए ॥१५॥

चतुर्थ भाव से भूमिगत जल के सुख का, सप्तम भाव से नदी या नहर के जल का, दशम भाव से आकाशीय जल का तथा लग्न से इन तीनों का फल कहना चाहिए ॥१६॥

हिबुक—चतुर्थ भाव के लिए प्रयुक्त यह शब्द संस्कृत के "शिवक" शब्द का अपभ्रंश है जिसमें 'श' के स्थान पर 'ह' हो गया है । शिवक का अर्थ खूँटा (कीला या शंकु) होता है जिसके ठोकने से कूपारंभ की क्रिया प्रारंभ की जाती थी । कूपजल का विचार चतुर्थ से ही होता है अतः इसका नाम 'शिवक' स्थान है जो अपभ्रंश रूप में हिबुक है ।

द्वादशभावात् भुक्तिप्रश्नराज्ञप्रश्नस्य विचारकथनञ्च

विशेषाः सन्ति भावानां भुक्तिप्रश्ने च भूपतेः ।
ते चाप्यत्र विलिख्यन्ते लग्नाद्या द्वादश क्रमात् ॥ १७॥

जब भोजन तथा राजा से सम्बन्धित प्रश्न दैवज्ञ को पूछा जाता है तो द्वादश भावों से इन दोनों प्रश्नों का विशेष विचार करते हैं वह आगे लिखा जाता है ॥१७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कुण्डली द्वारा केन्द्रों से विशेष विचार का चक्र

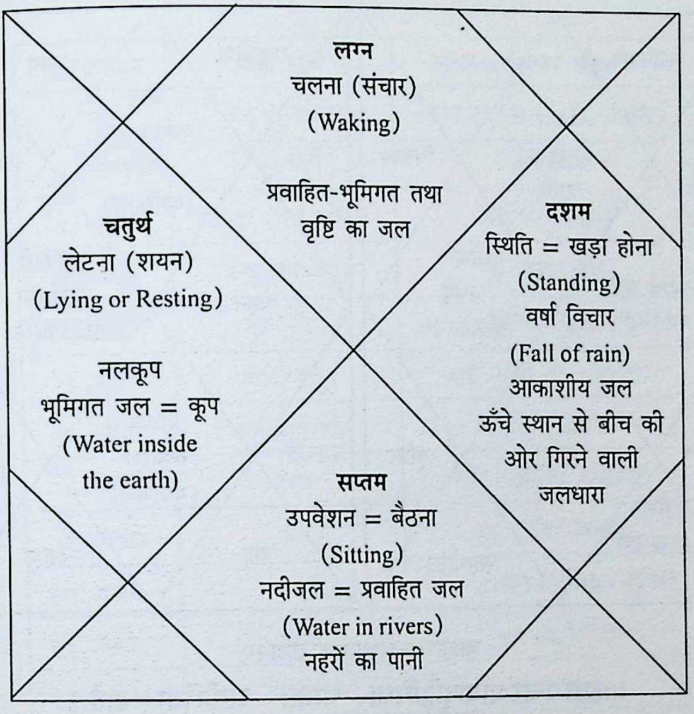

भोजनप्रश्ने विशेषः

मूर्तिरमत्रं भक्ष्यं भोज्यं भोजयितृभाव उपदेशः ।
सेचनमन्नं सहभुक्पूर्तिकथा शयनमपि विलग्नात् ।। १८।।

जब भोजन से सम्बन्धित प्रश्न हो तो लग्नादि भावों से क्रमशः (१) भोजन करने वाले का शरीर, (२) अमत्र (भोजन हेतु पात्र तथा भोक्ता की भोजन करने की शक्ति), (३) भक्ष्य (dishes), (४) भोज्य (Menu), (५) भोजयितृ भाव (भोजन कराने वाले की भावना), (६) व्यञ्जन, (७) अन्नसेचन, (८) सहभोक्ता, (९) तृप्ति, (१०) भाजनावसरे चर्या, (११) विश्राम तथा (१२) पाचन—इन सबका विचार करना चाहिए।

राज्ञः प्रश्ने विशेषः

मूर्तिः कोशो धात्विनो वाहनानि मन्त्रः शत्रुर्मार्ग आयुर्मनश्च ।
व्यापारश्च प्राप्तिरप्राप्तिरेवं लग्नाद्भावा भूमिभर्तुर्विचिन्त्याः ।। १९।।

राजा से सम्बन्धित प्रश्न में लग्नादि द्वादश भावों से क्रमशः राजा का शरीर, राजकोशालय, सेना, वाहन, परामर्श, शत्रु-विचारधारा, आयु, शासक की चित्तवृत्ति, शासनप्रणाली, राजस्व तथा अप्राप्ति का विचार करते हैं ।।१९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भोजनप्रश्ने भावविचार:

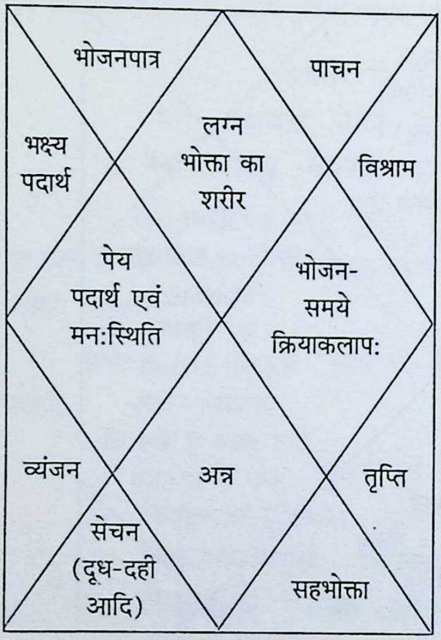

भूपतिप्रश्ने द्वादशभावविचार:

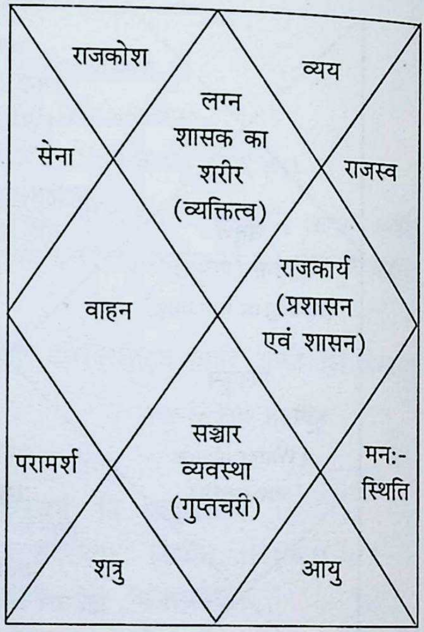

बाह्याभ्यन्तरभावानां कथनम्

बाह्याभ्यन्तरभावाद्द्विविधा भावा: समीरिता ह्येते ।
बाह्या: खलु तन्वाद्या ज्ञेया: पुनरान्तरास्तु कल्याद्या: ।। २० ।।

(१) बाह्य तथा (२) आभ्यन्तर भेद से भाव दो प्रकार के होते हैं । इन बाह्य भावों के नाम तनु आदि तथा आभ्यन्तर भावों के नाम कलि आदि हैं ।।२०।।

भावों का यह द्विविध वर्गीकरण ग्रन्थकार ने आचार्य वराहमिहिर के ग्रन्थ बृहज्जातक के अनुसार किया है । जो बाह्य भाव (External) हैं वे स्थूल तत्त्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं, उन्हें तन्वादि नाम दिया है । यथा—

"होरादयस्तनुकुटुम्बसहोत्थबन्धु-
पुत्रारिपत्निमरणानि शुभास्पदाया: ।
रिष्फाख्यमिति ·············" ।।

(बृहज्जातक १।१५)

भावों की जो आभ्यन्तर संज्ञा (Internal) है वह कुण्डली से सूक्ष्म तत्त्वों का विश्लेषण करती हैं । ये व्यक्ति के भीतरी गुण होते हैं । वराह ने अगले ही श्लोक में इनका उल्लेख किया है—

"कल्यस्वविक्रमगृहप्रतिभाक्षतानि,
चित्तोत्थरन्ध्रगुरुमानभवव्ययानि" ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बस इन्हीं दो प्रकार के वर्गीकरण की ओर ग्रन्थकर्ता ने इङ्गित किया है ।

चक्र

भावक्रमांक	बाह्य संज्ञा	आभ्यन्तर संज्ञा
१. प्रथम	तनु = शरीर	कल्य (प्रभात, मंगल, स्वस्थ)
२. द्वितीय	कुटुम्ब	स्व (धन)
३. तृतीय	सहोदर (भाई-बहिन)	विक्रम (पराक्रम)
४. चतुर्थ	बन्धु (मित्रवर्ग)	गृह (गृहणशक्ति)
५. पंचम	पुत्र-पुत्रियाँ	प्रतिभा (बुद्धि)
६. षष्ठ	अरि (शत्रु)	क्षत (दुःख की अनुभूति)
७. सप्तम	पत्नी एवं पति	चित्तोत्थ (कामदेव)
८. अष्टम	मरण	रन्ध्र (चारित्रिक दुर्बलता)
९. नवम	शुभ	गुरु (पवित्र विचार)
१०. दशम	आस्पद	मान (प्रतिष्ठा)
११. एकादश	आय	भव (कर्मफल)
१२. द्वादश	रिःफ	व्यय (ह्रास)

उभयविधविचारणाकथनम्

यद्यल्लग्नादिभिश्चिन्त्यं तत्तत्स्वामिसमागमे।
आभ्यन्तरं भवेत्सर्वं विज्ञेयं बाह्यमन्यथा ।। २१।।

जब भाव अपने स्वामी से सम्बन्ध बनाते हैं अर्थात् भावेश अपने भाव में बैठता है तब आभ्यन्तर तत्त्वों का फल प्राप्त होता है । जब भाव में भावस्वामी की स्थिति न हो तो उसको बाह्य भाव जानना चाहिए ।।२१।।

मान लीजिए—यदि सप्तमेश सप्तम भाव में हो तब सप्तम भाव आभ्यन्तर होगा और उससे वयक्ति की कामेच्छा तथा कामसम्बन्धों का विचार होगा । अन्यथा स्थिति में उससे स्थूल तत्त्वों जैसे पति-पत्नी का ही विचार होगा ।

आङ्गानां प्रतिनिधिभावाः

मूर्धास्यगलस्कन्धा हृदयोदरबस्तिदेशगुह्यानि ।
ऊरू जानू जङ्घे पादौ भावाः क्रमाद्विलग्नाद्याः ।। २२।।

लग्न से आरंभ कर द्वादश भावपर्यन्त सभी भाव क्रमशः (१) शिर, (२) मुख, (३) गला, (४) कन्धे, (५) हृदय, (६) उदर, (८) बस्ति, (८) गुप्ताङ्ग, (९) ऊरु (कमर के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जोड़ से घुटने तक पैर का हिस्सा), (१०) जानु (घुटने), (११) जङ्घा (दोनों पिंडलियाँ) तथा (१२) दोनों पैर—इन अंगों का प्रतिनिधित्व करते हैं ॥२२॥

अङ्गानां ह्रस्वदैर्घ्यकथनम्

अङ्गानां ह्रस्वदीर्घत्वं लग्नाद्याश्रितराशिभिः।
वाच्यं तत्कथने प्राय एवेदमुपयुज्यते ॥ २३॥

लग्न में यदि ह्रस्व राशि होगी तो अंग छोटे होंगे, यदि लग्न में दीर्घ राशि होगी तो अंग दीर्घ होंगे । इस प्रकार से फलादेश करें ॥२३॥

सारावली के अनुसार राशियों की ह्रस्वता–दीर्घता का चक्र

ह्रस्व राशियाँ	सम राशियाँ	दीर्घ राशियाँ	**आकार**
मेष, वृष, कुंभ, मीन	मिथुन, कर्क, धनु, मकर	सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक	**राशियों के नाम**

भावानां ह्रासवृद्धिकथनञ्च

लग्नराशिः स्वयं द्रष्टा तत्सम्बन्धिधनादयः।
द्वितीयाद्यन्यभावास्तत् पुष्टिहानी शुभाशुभैः ॥ २४॥

लग्नराशि प्रश्नकर्त्ता का द्वितीय भाव उसके धन का तथा अन्य भाव भी इसी प्रकार प्रतिनिधित्व करते हैं । इन भावों में शुभ ग्रह होने से वृद्धि तथा पाप ग्रह होने से उस भाव का ह्रास होता है ॥२४॥

षट्पञ्चाशिकामतम्

यो यो भावः स्वामिदृष्टो युतो वा
सौम्यैर्वा स्यात्तस्य तस्याभिवृद्धिः ।
पापैरेवं तस्य भावस्य हानि-
र्विज्ञातव्या प्रश्नतो जन्मतो वा ॥ २५॥

जो भाव अपने स्वामी ग्रह से युत अथवा दृष्ट हो तो अथवा शुभ ग्रहों से युत वा दृष्ट हो तो उस भाव की वृद्धि होती है । जो भाव पाप ग्रहों से युत/दृष्ट हो तो उस भाव की हानि होती है । इस भाँति प्रश्नकुण्डली या जन्मकुण्डली से भावों की ह्रास-वृद्धि का विचार करना चाहिए ॥२५॥

आर्यासप्ततिमतम्

यो यो भावः प्रभुणा युक्तो दृष्टोऽथवा भवेत् प्रश्ने ।
गुरुबुधशुक्रैरेवं वक्तव्यं तस्य तस्य शुभम् ॥ २६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह श्लोक आचार्य भट्टोत्पल की आर्यासप्तति से लिया गया है जिसके अनुसार जो-जो भाव अपने स्वामी से युत अथवा दृष्ट हो अथवा गुरु, बुध, शुक्र से युत या दृष्ट हो तो उस-उस भाव सम्बन्धी शुभ फल होगा ॥२६॥

यस्मिन् यस्मिन् भावे द्विर्दादशसप्तमे स्थिताः सौम्याः ।
तस्मिन् तस्मिन् वृद्धिर्दशमचतुर्थस्थितैस्तद्वत् ॥ २७॥

जिस-जिस भाव में शुभ ग्रह स्थित हो अथवा उस-उस भाव के द्वितीय तथा द्वादश भाव में तथा सप्तम में सौम्य ग्रह बैठे हों तो उस भाव की वृद्धि होती है। इस प्रकार उस भाव से दशम तथा चतुर्थ भाव में बैठे शुभ ग्रह भी उस भाव की वृद्धि करते हैं ॥२४॥

भावफलस्य नाशकथनम्

षष्ठाष्टमरिष्फेशा भावाः परिभवः शुभाश्च भावहनः ।
भावतदीश्वरकारकदुर्बलता चास्ति तद्वादाप्तवचः॥ २८॥

जिस-जिस भाव या भावेश के साथ ६-८-१२ इन भावों के स्वामी बैठेंगे उस भाव के फल की हानि होगी। इसी प्रकार उस भावेश के शत्रु ग्रह भी उस भावेश के भाव के फल की हानि दृष्टि एवं युति द्वारा करते हैं। भाव, भावेश तथा भावकारक यदि निर्बल हों तो भी उस भाव के फल की हानि होती है। ऐसा आप्त विद्वानों का कथन है ॥२८॥

पुनश्च भावफलह्रासकथनम्

षष्ठं द्वादशमष्टमं च मुनयो भावाननिष्टान् विदु-
स्तन्नाथान्वितवीक्षिता तदधिपा ये वा च भावाः स्वयम् ।
तत्रस्थाश्च यदीश्वरास्त्रय इमे नश्यन्ति भावा नृणां;
जाता वा विफला विनष्टविकलास्तत्रातिकष्टोऽष्टमः ॥ २९॥

ज्योतिषशास्त्रमर्मज्ञ मुनियों ने छठे, बारहवें तथा आठवें भावों को अनिष्ट फलप्रद बताया है। इन तीनों भावों के स्वामी जिस भाव में बैठते हैं या उसे देखते हैं या जिन भावों के ये स्वामी हैं वे भाव, उनके भावेश और इन त्रिक स्थानों में बैठने वाले ग्रह जिन स्थानों में बैठते हैं वे सभी भाव विफल, विनष्ट तथा विकल हो जाते हैं। इनमें आठवाँ भाव सर्वाधिक कष्टप्रद है ॥२९॥

तात्पर्य यह है कि ६-८-१२ भावों के स्वामी जिन भावों से सम्बन्ध बनाते हैं वे भाव अच्छा फल नहीं देते हैं। इन भावों में जिन अन्य भावों के स्वामी बैठ जाते हैं वे भाव भी अशुभ फलदायक हो जाते हैं।

पुनरपि भावनिर्बलताकथनम्

भावाधीशे च भावे सति बलरहिते च ग्रहे कारकाख्ये
पापान्तस्थे च पापैररिभिरपि समेतेक्षिते नान्यखेटैः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पापैस्तद्बन्धुमृत्युव्ययभवनगतैस्तत्त्रिकोणस्थितैर्वा
वाच्या तद्भावहानिः स्फुटमिह भवति द्वित्रसंवादभावात् ।। ३० ।।

(१) यदि किसी भाव के भावेश, भाव तथा भावकारक निर्बल हों या (२) दो पाप ग्रहों के मध्य हों या (३) पाप ग्रहों एवं अपने शत्रु ग्रहों से दृष्ट होने पर तथा शुभ ग्रहों से अदृष्ट होने पर उस भाव के फल का ह्रास होता है ।

इसी प्रकार उस भाव से चौथे, आठवें या बारहवें भाव में पाप ग्रह होने पर भी उस भाव की हानि होती है । इन योगों में जब दो या तीन योग कुण्डली में विद्यमान हों तो उस भाव की हानि होती है । किसी भी भाव के त्रिकोण में भी पाप ग्रह उसके शुभ फल को न्यून करते हैं ।।३०।।

ग्रहाणां कारकत्वम्

तातश्चात्मप्रभावो द्युमणिरथ मनोमातरौ शीतरश्मि-
र्भ्राता सत्त्वञ्च भौमः क्षितिरपि वचनं ज्ञानमिन्दोस्तनूजः ।
धीचित्पुत्राङ्गसौख्यं सुरगुरुरबलाभोगयानानि शुक्रो;
मृत्युर्व्याधिश्च दुःखं शनिरिह गदितो दासभृत्यादिकोऽपि ।। ३१ ।।

(१) सूर्य पिता तथा आत्मप्रभाव का कारक है । (२) चन्द्रमा माता तथा मन का कारक है । (३) भ्राता तथा सत्त्व का कारक मंगल है । (४) बुध ज्ञान तथा वाणी का कारक है । (५) गुरु बुद्धि, मननशक्ति, पुत्रसुख का कारक है । (५) शुक्र स्त्री-भोग, वाहन आदि का कारक है । (७) शनि मृत्यु, दुःख, रोग, दास, भृत्य आदि का कारक है ।।३१।।

कारकत्वप्रयोजनम्

आत्मादयो गगनगैर्बलिभिर्बलवत्तराः ।
दुर्बलैर्दुर्बला ज्ञेया विपरीतं शनेः स्मृतम् ।। ३२ ।।
अर्कांशे सौर्यां स्वयं तातश्चाद्युदितसर्ववस्तूनाम् ।
कारकतार्कादीनां विज्ञेया पोषणे तथा हनने ।। ३३ ।।
भाग्याद्यभीष्टभावेशोऽप्यशुभो भावपुष्टिकृत् ।
"लग्नात्पुत्रे"ति पद्ये तद्वराहमिहिरोदितम् ।। ३४ ।।

यदि कुण्डली में आत्मादि तत्त्वों के कारक ग्रह बलिष्ठ हों तो उनके तत्त्व भी बलिष्ठ होते हैं, परन्तु यदि कारक दुर्बल हों तो उनसे सम्बन्धित विषय भी दुर्बल होते हैं । परन्तु शनि के सम्बन्ध में विपरीत स्थिति है । शनि निर्बल होने पर शुभ फल देता है तथा बली होने पर अशुभ ।।३२।।

मान लीजिये—किसी कुण्डली में सूर्य बली है अतः यह आत्मा तथा पिता का कारक होने से आत्मबल बढ़ा रहेगा तथा पिता का सुख मिलेगा, उसकी सम्पत्ति भी प्राप्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होगी परन्तु यदि शनि बली हो तो उसके दु:ख, नौकर-चाकर आदि का कारक होने से इन तत्त्वों की हानि होगी।

बृहज्जातक में "अर्कांशे" श्लोक तथा सौर्यास्वं एवं "तातश्चात्म" इत्यादि श्लोकों में जो सूर्यादि ग्रहों के कारकत्व का वर्णन है उन कारकों से सम्बन्धित वस्तुएँ कारकों के बली होने से बढ़ती हैं तथा निर्बल होने से घटती हैं ॥३३॥

भाग्य आदि शुभ भावों का स्वामी भले ही कोई पाप ग्रह क्यों न हो वह अपने भाव की तथा जिन भावों में बैठता या जिन्हें देखता है उनकी पुष्टि करता है। इस बात को श्री वराहमिहिर ने "लग्नात् पुत्र" इत्यादि श्लोक में कहा है ॥३४॥

"अर्कांशे"त्यादि श्लोक अध्याय १० का दूसरा श्लोक है। सौर्यादि श्लोक बृहज्जातक अ. ८ का १२वाँ है।

'लग्नात् पुत्रकलत्रभे' अनिष्टाध्याय (२३) का प्रथम श्लोक है।

फलप्राबल्यकथनम्

शुभदानां प्राबल्ये शुभपौष्कल्यं पुनश्च दोषकृताम्।
वैबल्ये दोषाणां पौष्कल्यं वदति तद्वदभियुक्तः॥ ३५॥
पञ्चमसंस्थः पापः पुत्रविनाशं करोति बलहीनः।
सौम्यं सुतं विधत्ते बलसहितश्चाष्टमाधिपं हित्वा॥ ३६॥

कुण्डली में यदि शुभ ग्रह प्रबल हों तो शुभ फल अधिकता से मिलता है तथा अशुभ ग्रहों के निर्बल होने पर पूर्ण रूप से अशुभ फल देते हैं ॥३५॥

जैसे कि पञ्चम भाव में यदि निर्बल पाप ग्रह हो तो पुत्र का नाश करता है। अष्टमेश को छोड़कर अन्य भावेश यदि शुभ ग्रह है तथा वह बली होकर पंचम भाव में बैठा हो तो पुत्र देता है ॥३६॥

अष्टमेश के अतिरिक्त षष्ठेश तथा द्वादशेश भी वर्जना चाहिए, क्योंकि ये अष्टमेश की अपेक्षा थोड़े ही कम दोष वाले हैं।

शुभाशुभफलस्य पूर्णतामाह

येन ग्रहेण यत्प्रोक्तं अशुभं वा शुभं फलम्।
बली चेत्स शुभं पूर्णमशुभं दुर्बलो यदि॥ ३७॥

बली ग्रह अपनी युति, दृष्टि, योग या भावेश होने का पूरा शुभाशुभ फल प्रदान करता है। यदि वह बली ग्रह शुभ है तो अपना पूर्ण शुभ फल देता है। यदि वह बलवान् ग्रह अशुभ है तो वह अपना पूर्ण अशुभ फल देता है ॥३७॥

फलविरोधे तारतम्यकथनम्

भावेष्विष्टेषु वर्गोत्तमनिजरिपुभेष्वास्थितो यो ग्रहोऽसौ;
पूर्णं मध्यं तथाल्पं दिशति शुभफलं स्वोदितं पृच्छकानाम्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भावेष्विष्टेतरेष्वप्यशुभमपि तथा पुष्टमध्याल्परूपं;
वैरिस्वीयांशवर्गोत्तमगत उदितं द्रव्यनाशामयाद्यम् ।। ३८।।

जो भी ग्रह इष्ट भावों में वर्गोत्तमनवांश, स्वनवांश, शत्रुनवांश में होगा तो वह अपना शुभ फल पूर्ण, मध्य तथा अल्पमात्रा में देगा। यदि वह ग्रह अनिष्ट भावों में क्रमेण शत्रुनवांश, स्वनवांश तथा वर्गोत्तमनवांश में होगा तो वह धनहानि, मानहानि, कष्टादि फल को क्रमशः पूर्ण मात्रा में, मध्यम प्रमाण में तथा अल्प मात्रा में देगा ।।३८।।

तात्पर्य यह कि शुभ भावों में स्थित वर्गोत्तमनवांश का पूर्ण फल, स्वनवांश का मध्यम फल तथा शत्रुनवांश का अल्प फल मिलता है परन्तु अनिष्ट भावों में स्थित ग्रह का बुरा फल, वर्गोत्तम में अल्प, स्वनवांश में मध्य तथा शत्रुनवांश का पूर्ण फल मिलता है। इष्टानिष्ट भावों की व्याख्या हेतु आगे ४४वाँ श्लोक देखें।

भावफलस्यानुभूतिः

स्वामी कारकखेचरश्च बलिनौ यस्येष्टभावस्थितौ;
सम्पूर्णानुभवक्षमश्च नियतं भावः स नृणाम्भवेत् ।
रिःफारातिमृतिस्थितौ च विबलौ यत्कारकाधीश्वरौ;
भावोऽयं नहि सम्भवेदपि नृणां कस्यानुभूतौ कथा ।। ३९।।

जिस भाव का स्वामी तथा कारक ग्रह दोनों ही बली हों, यदि वह शुभ भावों में बैठे हों तो निश्चय हीं मनुष्यों को उस भाव के सम्पूर्ण फल का अनुभव होगा। परन्तु जिन भावों के स्वामी तथा कारक ग्रह छठे, आठवें या बारहवें भावों में बलरहित होकर बैठे हों तो वे भाव जातक या पृच्छक को फल की अनुभूति करा ही नहीं सकते, उनमें फलानुभूति की क्या चर्चा करना ? ।।३९।।

अनिष्टस्थखेटानां भावे न फलानुभूतिः

स्वोच्चाभीष्टगृहेषु कारकपती रन्ध्राद्यनिष्टस्थितौ;
यद् भावस्य स सम्भवेदविमलो नास्यानुभूतिर्नृणाम् ।
नीचाद्याश्रयतोऽबलौ शुभतरे लाभादिभावे स्थितौ;
यद्भावाधिपकारकौ स विकलोऽप्यस्यानुभूतिर्भवेत् ।। ४०।।

इष्ट भावों के स्वामी ग्रह तथा कारक ग्रह उच्चादि स्थिति में होकर भी यदि ६-८-१२ स्थानों में बैठें हों तो वह भाव का फल तो प्रतीत होगा लेकिन जातक या प्राश्निक को उन भावों के फलों का अनुभव नहीं हो पायेगा।

किन्तु जो भावेश और कारक नीचादि स्थित में निर्बलत्व को प्राप्त होकर शुभतर (मध्यम शुभ) लाभादि भावों में बैठा हो तो उसके भावफल की अनुभूति निर्बल होने पर भी होती है ।।४०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

फल की अनुभूति (सरसवाद) के लिए भावेश तथा कारकों का अनिष्ट स्थान में न होना अवश्यक है, अन्यथा बली होने पर भी उनके फल का अनुभव जातक या पृच्छक को नहीं हो सकता ।

मिश्रितानुभूतिः

नाथकारकयोरेको बलवाननिष्टभावगः ।
अन्योन्यथेति मिश्रत्वेऽप्युक्तरीत्योह्यतां फलम् ।। ४१।।

भावेश एवं भावकारक दोनों में से एक बली होकर इष्ट भावों में बैठा हो परन्तु दूसरा बलहीन होकर अनिष्ट स्थान में हो तो फलानुभूति मिश्रित होगी अर्थात् कुछ होगी कुछ न होगी । इस स्थिति में व्यक्ति को फल का कुछ-कुछ पता अवश्य ही चलता है ।।४१।।

इस स्थिति में दैवज्ञ को ऊहापोहपूर्वक फल कहना चाहिए ।

पुनश्च भावानुभूतिकथनम्

भावात्तदीश्वरे सुस्थे भावसम्पन्न चान्यथा ।
लग्नादनुभवश्चैवं चिन्त्यतामिति केचन ।। ४२।।

भाव से यदि भावेश (तथा कारक) यदि सुस्थान में होता है तो उस भाव की पुष्टि होती है । नहीं तो यदि भावेश अनिष्ट स्थानगत होगा तो पुष्टि नहीं होगी ।

कुछ विद्वानों का कथन है कि लग्न से ही इष्ट स्थान में ग्रह हो तो फल की अनुभूति होती है तथा अनिष्ट स्थान में भावेश होने पर फलानुभूति नहीं होती ।।४२।।

ग्रन्थान्तरमतम्

यस्य यस्य विलग्नेन सम्बन्धो लग्नपेन वा ।
दृग्योगकेन्द्रगत्याद्यैः स स भावोऽनुभूयते ।। ४३।।

जिस भाव या भावेश का लग्न, लग्नेश से दृष्टि-युति या केन्द्रस्थिति का सम्बन्ध हो तो उस भाव के फल का अनुभव होता है ।।४३।।

ग्रहाणाम् इष्टानिष्टभावाः

सौम्यानां व्ययमृत्युशत्रुसहजा नेष्टा अभीष्टाः परे;
पापानामभिमातिसोदरभवा इष्टा अनिष्टाः परे ।
भावेष्वेषु हि मुख्यता तु वपुषो धर्मात्मजौ तत्समौ;
तेषु त्रिष्वधिकं शुभाशुभफलं विद्यात्सतां चासताम् ।। ४४।।

अब इष्टानिष्ट भावों को परिभाषित करते हैं—

शुभ ग्रहों के लिए बारहवाँ, आठवाँ, तीसरा तथा छठा भाव नेष्ट भाव होते हैं । जबकि पाप ग्रहों के लिए तीसरा, ग्यारहवाँ तथा छठा भाव इष्ट होते हैं । शेष अनिष्ट होते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन सभी भावों में लग्न ही मुख्य भाव है तथा पाँचवें, नौवें भाव का महत्त्व लग्न के ही समान है अतः इन तीनों भावों में शुभ ग्रहों का शुभ फल अधिक होता है तथा पाप ग्रह इन तीन भावों में अधिक पाप फल देते हैं ।।४४।।

ग्रहस्थितिवशाद् द्रव्याणां लाभहानिकथनम्

ताम्रहेमादिवस्तूनां स्वोक्तानां लाभदा अपि ।
रुक्प्रदत्वात्तु रोगादिप्रश्नेऽनिष्टा रिपौ खराः ।। ४५।।

सूर्यादि निज धातुओं ताम्रादि का लाभ छठे भाव में बैठने पर कराते हैं । यही ग्रह रोगादि प्रश्न पूछे जाने पर अपनी धातुओं (अस्थि आदि) से सम्बन्धित रोग भी उत्पन्न करते हैं ।।४५।।

लघुजातकमतम्

पुष्णन्ति शुभा भावान् मूर्त्यादीन् घ्नन्ति संस्थिताः पापाः ।
सौम्याः षष्ठेऽरिघ्नाः सर्वे नेष्टा व्ययाष्टमगाः ।। ४६।।

लग्नादि भावों में स्थित शुभ ग्रह भावों को पुष्ट करते हैं तथा पाप ग्रह लग्नादि भावों में स्थित होकर उन्हें नष्ट करते हैं । शुभ ग्रह यदि छठे भाव में हों तो शत्रुनाशक होते हैं। सभी ग्रह आठवें तथा बारहवें भावों में अशुभ फल देते हैं ।।४६।।

प्रश्ने दशाफलोपयोगः

दशाफलानि यान्युक्तान्यशुभानि शुभानि वा।
प्रश्नेऽपि तानि वाच्यानि दुःस्थे सुस्थे च खेचरे।। ४७।।

ग्रहों की दुःस्थान-सुस्थान स्थितिवशात् जो दशाओं के फल जातक में वर्णित हैं उनको प्रश्नकुण्डली के फल में भी समायोजित कर कहना चाहिए ।।४७।।

प्रश्ने जातकोपयोगकथनम्

इष्टानिष्टगतत्वेन शुभाशुभफलप्रदे ।
ग्रहे सत्यखिलं योज्यं संज्ञाध्यायसमीरितम् ।। ४८।।

जातकग्रन्थो में संज्ञाध्याय में ग्रहों के शुभाशुभ स्थान के फलों को कहा गया है, उनका उपयोग भी प्रश्नकुण्डली में करना चाहिए ।।४८।।

भावविपत्ति चाङ्गरोगानां कथनम्

मूर्त्याद्या निजरन्ध्रपेन शनिना वा स्युर्यदा संयुताः;
स्वस्वारिव्ययरन्ध्रपापहतयस्तत्स्थस्य वा चेत्तदा ।
तत्तद्भावविपत्तिरस्ति नियमादेवं वराङ्गादिषु;
ब्रूयादङ्घ्रियुगान्तिमेषु च वपुभागेषु रोगान्सुधीः ।। ४९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जब अष्टमेश या शनि गोचर भ्रमण में प्रश्नकाल में प्रश्नकुण्डली के किसी भाव में चल रहे होते हैं या उस भाव का स्वामी अष्टमेश या शनि से युक्त होकर ६-८-१२ भावों में से किसी भाव में बैठा हो तो उस भाव से विचारणीय विषयों पर विपत्ति आती है अर्थात् उस भाव के फल की हानि होती है ।

इसी भाँति पूर्व में कथित अंगों के प्रतिनिधि भावों से यदि आठवें भावों का स्वामी या शनि उनमें बैठा हो तो प्राश्निक की देह के उस अंग में रोग कहना चाहिए ।।४९।।

मान लीजिए—प्रश्न काल में तृतीयेश अपने भाव से अष्टम भाव में अष्टमेश तथा शनि से युक्त होकर बैठे तो बहिन या भाइयों को विपत्ति तथा कष्ट प्राप्त होता है । इसी प्रकार तृतीय भाव वक्ष तथा भुजाओं का प्रतिनिधि भाव है अतः अनिष्ट स्थान स्थित ग्रहों से इन अंगों में रोग भी कहना चाहिए ।

ऊहापोहकथनम्

लग्नाद्यैर्वाच्यमसत्सद्योगे सति फलं समुच्चित्य।
सौकर्यार्थं प्रष्टुः फलनिर्देशस्य कथ्यते तदनु ।। ५० ।।

लग्नादि भावों में जब शुभाशुभ दोनों प्रकार के ग्रह स्थित हों तो उनके फल को समेकित करके ही पृच्छक को बताना उचित है । आगे फल-निर्देश की रीति सुविधा के लिए वर्णित की जा रही है ।।५०।।

लग्नस्थितग्रहाणां शुभाशुभफलम्

पापे लग्नगते पराजयशिरोरुग्दुःखदुष्कीर्तयः;
स्थानभ्रंशधनक्षयाखिलशरीरास्वास्थ्यदुःखासिकाः ।
सौम्ये लग्नगते सुखस्थितिजयारोग्यार्थसम्पत्तयः,
कीर्तिस्थानविशेषलब्धिरिति विज्ञेयं फलं पृच्छताम् ।। ५१ ।।

यदि लग्न में पाप ग्रह हो तो मुकदमे में असफलता तथा वाद-विवादादि में भी पराजय होती है, शिरदर्द बना रहता है, दुःख प्राप्त होता है तथा चारों ओर दुष्कीर्ति (बदनामी) फैलती है । पृच्छक को अपना स्थान या ग्राम-नगर छोड़ना पड़ता है । धन की हानि होती है तथा शारीरिक स्वास्थ्य चौपट हो जाता है । असि (तलवार) के आघात का दुःख झेलना पड़ता है ।

यदि लग्न में शुभ ग्रह विराजमान हो तो सुख प्राप्त होता है; कार्यों, मुकदमे एवं प्रतियोगी परीक्षादि में सफलता मिलती है, सम्पत्ति बढ़ती है, चारों ओर कीर्ति फैलती है, विशेष पद की प्राप्ति होती है तथा रहने के लिए अच्छा आवास मिलता है ।।५१।।

द्वितीयभावे अशुभशुभग्रहाणां फलम्

पापे वित्तगते स्वपूर्वनिचितद्रव्यक्षयो वक्त्ररुक् ;
भर्तव्यामयदक्षिणाम्बकरुजो दुष्टोक्ति पात्रक्षतिः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सौम्ये वित्तगते पुरार्जितधनानामेव वृद्ध्युद्भवः;
पात्राप्तिर्भरणीरयञ्जनसुखं प्रष्टेति यायात्फलम् ।। ५२।।

यदि वित्तभाव (द्वितीय) में पाप ग्रह स्थित हो तो पृच्छक के पूर्व में कमाये हुए तथा पैत्रिक धन का नाश होता है । मुख में कोई रोग होता है, भर्तव्य (कुटुम्बीजन) को रोगादि या जीविका के साधन की हानि होती है, दाहिने नेत्र में रोग होता है । वाणी में गाली, निन्दा तथा अपशब्द निकलते हैं । बर्तनों की वारदाने की, सन्दूकों आदि की टूट-फूट होती है या ये चोरी चले जाते हैं ।

यदि द्वितीय भाव में पाप ग्रह बैठे हों तो बाप-दादा की सम्पत्ति तथा स्वार्जित संचित धन में वृद्धि होती है । आय के नये साधन उत्पन्न होते हैं । पत्रों (बर्तन, घरेलू उपकरण, बोरा, सन्दूक, थैला, अटैची आदि) की प्राप्ति होती है । कुटुम्बीजनों का सुख प्राप्त होता है अथवा मनोरंजन के साधनों की उपलब्धि होती है । यह सुख पृच्छक को प्राप्त होता है ।।५२।।

वक्तव्य—किसी-किसी प्रति में "भरणीयरञ्जनसुखम्" इस प्रकार का पाठ भी है ।

तृतीयस्थग्रहाणां फलम्

पापे भ्रातृगते सहायविगमः सोदर्यरोगादिकं;
वक्षःकन्धरदक्षिणश्रवणरुग्धीदौष्ट्यधैर्यक्षयाः ।
सौम्ये भ्रातृगते सहोदरसहायारोग्यलाभादिकं;
सद्बुद्धेरुदयश्च धैर्ययुतिरित्येतत्फलं पृच्छताम् ।। ५३।।

यदि तृतीय भाव में पाप ग्रह हो तो सहायकों की हानि होती है, सहोदरों को रोगादि होता है । पृच्छक के छाती, कण्ठ, दाहिने कान आदि में रोग होता है । बुद्धि में मलिनता रहती है । धैर्य की हानि या अभाव होता है अर्थात् जल्दबाज होता है ।

यदि तृतीय भाव में शुभ ग्रह की स्थिति हो तो प्राश्निक को अपने सहोदरों का सहयोग मिलता है । वह स्वस्थ रहता है । उसमें सद्बुद्धि का उदय होता है, वह धैर्यवान् होता है ।।५३।।

चतुर्थस्थग्रहाणाम्फलम्

मातुर्मातुलभागिनेयसुहृदां गोवेश्मशय्यासन-
क्षेत्राणामपि वाहनस्य च विपद् हृद्देशरुक्चासुखम् ।
कूपाद्यम्बुविदूषणं सुखगते पापे शुभे वाहनं;
क्षेत्रं गोशयनासनानि सुखमित्येषां हि लाभो भवेत् ।। ५४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जब चतुर्थ भाव में पाप ग्रह होता है तब माता, मामा, भानजा, मित्रवर्ग, गाय, भैंस, घर-मकान, वाहन, शय्या, आसन, खेती-बाड़ी, बाग-बगीचा इन सब पर विपत्ति आती है। हृदय रोग तथा तनाव बढ़ता है। कूप, हेण्ड पम्प, जेट पम्प आदि खराब हो जाते हैं।

यदि चतुर्थ भाव में शुभ ग्रह की स्थिति हो तो इन वस्तुओं का सुख होता है। वाहन, खेत, प्लाट, गाय-बैल, शयन, आसन आदि का लाभ तथा सुख होता है ॥५४॥

पञ्चमभावस्थग्रहाणां फलम्

पापे पञ्चमगेऽस्य दोषवशतो मौढ्यादिना रुङ्मृति-
र्वापत्यस्य पुराणपुण्यविलयो वेद्या मनःकुण्ठता।
क्रोधामात्यरुगादिकं त्वथ शुभे पुत्रस्य लाभोऽथवा-
ऽरोग्यं धीप्रतिभोदयश्च मनसस्तुष्टिश्च पुण्योदयः॥ ५५॥

यदि पञ्चम भाव में पाप ग्रह बैठा हो तो उसके दुष्प्रभाव से मूर्च्छा (बेहोशी) या पागलपन आदि से मृत्यु होती है। अथवा पुत्रों के पूर्वकृत पुण्यों का नाश होता है तथा मन कुण्ठित रहता है। क्रोध की अधिकता रहती है। बीमारियाँ परेशान करती हैं।

यदि शुभ ग्रह पञ्चम भाव में बैठे हों तो पुत्र लाभ तथा सन्तान की उन्नति होती है। बुद्धि प्रखर रहती है। मन में सन्तोष तथा प्रसन्नता होती है। पूर्व कृत पुण्यों का उदय होता है ॥५५॥

षष्ठस्थग्रहाणां फलम्

पापे षष्ठगते तु षष्ठभवनोक्ताङ्गे व्रणस्योद्भव-
श्चौरारिव्यसनं च नाभिकटिरुग्विघ्नोद्भवः कर्मसु।
पापस्यास्य च दोषसम्भवगदः सौम्ये च शत्रुक्षयो;
रोगाणामभवः सतान्तु शमनं प्रष्टुः समादिश्यताम्॥ ५६॥

यदि छठे भाव में पाप ग्रह हों तो षष्ठभवनोक्त अंग (यदि छठे भाव में मेष हो तो सिर में, वृष हो तो मुख में, मिथुन होने पर बाहु में, कर्क होने पर छाती में, सिंह होने पर पेट में, कन्या होने पर बस्ति में, तुला होने पर गुप्तांग में, वृश्चिक में कमर में, धनु में कमर से नीचे पैरों में, मकर में घुटनों में, कुंभ राशि होने पर पिंडलियों में तथा मीन राशि होने पर पैरों में) में रोग या व्रण, घाव आदि होता है। चोरों-डाकुओं, जेबकतरों तथा शत्रुओं से पीड़ा होती है; संकट आते हैं, नाभि एवं कमर में बीमारियाँ होती हैं। कार्य करने में बाधाएँ सामने आ जाती हैं। पाप ग्रह से सम्बन्धित रोग उत्पन्न होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि षष्ठ स्थान में शुभ ग्रह विराजमान हों तो उनके प्रभाव के कारण शत्रुओं का नाश होता है। रोग दूर होते हैं, स्वास्थ्य अच्छा रहता है; यदि रोग होता भी है तो वह शीघ्र शान्त हो जाता है। यह सब प्रष्टा को बताना चाहिए। छठे भाव के शुभ ग्रह से प्रायः लोग पृच्छक के साथ शत्रुता करते ही नहीं हैं, यदि करते भी हैं तो शीघ्र शान्त भी हो जाते हैं ॥५६॥

छठा भाव रोग, शत्रु तथा ऋण का होता है। इनमें अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है, एक के बढ़ने पर दूसरा भी बढता है।

सप्तमभावगतग्रहफलम्

पापे सप्तमगे कलत्रमरणं रोगो वियोगोऽस्य वा;
भर्तुर्वा गमनान्तराय उदियात्स्युर्मूत्रकृच्छ्राण्यपि।
सौम्ये सप्तमगे विवाहघटननष्टार्थलाभः सुदृग् ;
भोगावाप्तिविदेशयानसुहृदयानादिकं स्यात्फलम् ॥ ५७॥
मदने पापसमेते दाहादिकमपि गृहस्य भार्यायाः।
बलवच्छुभसंयुक्ते गृहकरणं सम्भवेच्च जायायाः ॥ ५८॥

यदि सप्तम भाव में पाप ग्रह हों तो पृच्छक की पत्नी की मृत्यु होती है। अथवा पत्नी का वियोग (बिछोह) होता है। अथवा यदि प्रष्टा स्वयं स्त्री हो तो उसके पति की मृत्यु होती है या अन्य प्रकार से पति से पृथक् रहना पड़ता है या पति-पत्नी को रोग हो जाता है। यात्रा में अन्तराय (विघ्न-बाधा) आते हैं। उसे वस्ति (मूत्राशय) के विकार या मूत्रकृच्छ्रादि रोग (वृक्कविकार = Nephrotic syndrome) आदि उत्पन्न होते हैं।

यदि सप्तम भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो विवाह होता है। नष्ट द्रव्य (चोरी, डकैती, जेबकटी या गुम होने से गया धन) वापस मिलता है। सुन्दर (रमणीय) भोग प्राप्त होते हैं (मनोरंजन के साधन जुटते हैं)। दूर देश की यात्रा होती है। मित्रों एवं बान्धवों का दूर देश से आगमन (मिलन) होता है, वाहन-प्राप्ति होती है ॥५७॥

सप्तम में पापग्रह की स्थिति से पत्नी तथा घर में आग लगती है, पर साथ ही यदि बली शुभ ग्रह सप्तम में हो तभी स्त्री घर में रह पाती है और वह घर-गृहस्थी चलाती है ॥५८॥

अष्टमस्थाने ग्रहफलम्

पापे रन्ध्रगते तु दासजनरुक्प्रत्यूहगुह्यामया;
लोकैर्विग्रहणं धनादिहरणं चोरैर्नृपैर्वारिभिः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रोगाश्चारुचिपूर्वकाः स्युरपि च स्याच्छङ्कनीया मृतिः;
सौम्ये रन्ध्रगते तु रोगविरहो दैर्घ्यं तथा चायुषः ।। ५९।।
अपवादो मठापत्तिरपि पापेऽष्टमस्थिते ।
मठाद्यालयसम्पत्तिमपि कुर्याच्छुभोऽत्रगः ।। ६०।।

जब प्रश्नकुण्डली में अष्टम भाव में पाप ग्रह बैठे हों तो नौकरों पर विपत्ति आती है । उन्हें रोग हो जाता है । कामों में प्रत्यूह (विघ्न=रुकावट) उत्पन्न होते हैं । गुप्त रोगों से पीड़ा होती है । लोगों (जनसामान्य तथा पड़ोसियों) से विग्रह (लड़ाई-झगड़ा-मुँहवाद) होता है, धन की हानि होती है । चोरों या शत्रुओं द्वारा धनादि का अपहरण होता है । अथवा राज्यशासन को कर या अर्थदण्ड के रूप में बड़ी रकम का भुगतान करना पड़ता है । अथवा शासन द्वारा पट्टे आदि पर दी गई भूमि आदि वापस ले लीं जाती है । भोजन के प्रति अरुचि (भक्तविरोध=Anorexia) होती है । अपमृत्यु होती है । मृत्यु का भय रहता है ।

ग्रह यदि अष्टम भाव में बैठा हो तो दीर्घायु होती है । मतान्तर से शनि का अष्टम भाव में बैठना भी दीर्घायुकारक होता है ।।५९।।

जब प्रश्नकुण्डली में अष्टम भाव में पापग्रह हों तो बदनामी प्राप्त होती है । मठ पर आपत्ति आती है । इस स्थान पर बैठा शुभ ग्रह मठ को सम्पत्ति दिलवाता है ।।६०।।

नवमस्थितग्रहाणां फलम्

पापे धर्मस्थिते स्याद्गुरुजनपितृपौत्रादिरुग्भाग्यहानि-
र्वेद्यं धर्मेश्वरानुग्रहसुकृततपोहानयो निष्कृपत्वम् ।
सौम्ये धर्मस्थिते स्याद्गुरुपितृमनसश्चेश्वराणां प्रसादो
वृद्धिर्भाग्यस्य धर्मस्य च शुभतपसामार्द्रता पौत्रसौख्यम् ।। ६१।।

जब नवम भाव में पाप ग्रह स्थित हों तो गुरुजनों, पिता, पौत्र आदि को रोग से कष्ट होता है । भाग्य सहयोग नहीं करता है । आशीर्वाद देने की क्षमता वाले धर्मपुरुषों का अनुग्रह प्राप्त नहीं होता, उनके तपोबल भी क्षीण हो जाते हैं, उनकी कृपा प्राश्निक को प्राप्त नहीं होती ।

यदि नवम भाव में शुभ ग्रह बैठे हों तो गुरु, पिता, वृद्ध तथा पूज्य जनों का आशीर्वाद प्राप्त होता है । भाग्य की वृद्धि होती है । धर्म में रुचि होती है । शुभ फल की प्राप्ति होती है । तपस्या शान्तिपूर्वक सम्पन्न होती है । पौत्र का सुख होता है । मन प्रसन्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहता है । तात्पर्य यह है कि इस स्थिति में व्यक्ति के मन के काम, क्रोध, लोभ, अहंकार तथा मोह दूर हो जाते हैं, वह सरल एवं शुचि रहता है ॥६१॥

दशमभावगतग्रहफलम्

पापे कर्मगते तु कर्मविहतिर्दुष्कीर्तिराज्ञाक्षति-
र्दासालम्बनयोर्विनाशमपि स्याज्जानुरुक्प्रोषणम् ।
सौम्ये पद्धतिमण्डपामरगृहाद्युत्पादनं कर्मणा-
माज्ञालम्बनयोश्च सिद्धिरपि दासावाप्तिकीर्त्युद्गमौ ॥ ६२॥

कर्मभाव में पाप ग्रह के बैठने पर पृच्छक के कार्य असफल होते हैं । उसकी अपकीर्ति (बदनामी) होती है । उसके अधीनस्थ पुत्र, पौत्र, पत्नी, नौकर, विभागीय कर्मचारी उसकी बात नहीं मानते (अवमानना) हैं । नौकर तथा सहयोगी जन साथ छोड़ जाते हैं । घुटनों में कष्ट रहता है । परिवार से दूर रहना पड़ता है ।

यदि दशम भाव में शुभ ग्रह हों तो पद्धति (गली, मार्ग, पथ) का निर्माण, देवमन्दिर, घर आदि का निर्माण होता है । आश्रित जनों एवं नौकरों का सुख होता है । आज्ञा का पालन होता है । कार्यों में सफलता मिलती है तथा नौकर-चाकर प्राप्त होते हैं । चारों ओर कीर्ति फैलती है ॥६२॥

दुष्कीर्तिराज्ञाक्षतिः—इसका विग्रह है—दुष्कीर्तिः + आज्ञाक्षतिः = दुष्कीर्ति फैलना तथा आज्ञा की हानि होना, परन्तु एक हिन्दी टीकाकार ने इसका अर्थ "राजा से हानि" लिखा है; यह असमीचीन है क्योंकि "कीर्ति" शब्द संस्कृत व्याकरण के अनुसार "कीर्तिः" (विसर्गयुक्त) लिखा जाता है । अतः विसर्ग का "र" हो गया है । अस्तु वहाँ "राज्ञाक्षतिः" न होकर "आज्ञाक्षतिः" है ।

लाभभावगतग्रहफलम्

पापे लाभे स्थितवति सुतज्येष्ठयोरामयाद्यं;
जङ्घावामश्रवणरुगमुष्योक्तताम्रादिलाभः ।
सौम्येदुःखप्रशमनसमस्तेप्सिताप्त्यर्थलाभाः;
संज्ञाध्यायादिषु तदुदितस्यापि लाभागमाद्यम् ॥ ६३॥

ग्यारहवें भाव में स्थित पाप ग्रह से पुत्र एवं बड़े भाई को रोग होता है (पुत्र का भाव पाँचवाँ है अतः उस पर ग्यारहवें भाव में स्थित ग्रह की दृष्टि पड़ती है । ग्यारहवाँ भाव बड़े भाई का होता है) । जङ्घा (पिंडली=घुटने से नीचे तथा चरणों के ऊपर का भाग) एवं वाम कर्ण (left Ear) में बीमारी होती है तथा ग्रह से सम्बन्धित ताम्रादि धातु का लाभ होता है । ग्यारहवें भाव में शुभ ग्रह होने पर दुःख एवं कष्टों का नाश होता है । व्यक्ति को सम्पूर्ण

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मनोवांछित पदार्थ मिलते हैं। धनलाभ होता है। संज्ञाध्याय आदि में कही गई वस्तुओं का लाभ होता है ॥६३॥

व्ययभावस्थग्रहफलम्

पापे द्वादशगे तु दुर्व्ययपदभ्रंशाङ्घ्रिवामाक्षिरुक् ;
पाताः पापमतिप्रवृद्धमिति वक्तव्यं फलं पृच्छताम्।
सौम्ये द्वादशगे व्ययो वितरणप्रायो न दुष्टव्ययः;
पापानामभवः सतान्तु शमनं चेत्यादिकं स्यात्फलम् ॥ ६४॥

बारहवाँ भाव व्यय भाव है, इसमें पाप ग्रह होने पर दुर्व्यय (व्यर्थ का अनावश्यक उल्टे-सीधे कर्मों में खर्च = Squandering of money) होता है। पदच्युति होती है। पैरों तथा बाँयी आँख में रोग होता है। ऊँचे स्थान से गिरना होता है। बुरे कर्म में प्रवृत्ति रहती है। प्रमाद बढ़ता है।

बारहवें भाव में शुभ ग्रह होने पर व्यक्ति वितरक (दान) करता है। उसका व्यय अच्छे कामों में होता है। व्यक्ति से बुरे कार्य नहीं होते हैं। वह अपनी गलतियों को सुधार लेता है। उसके अन्तःकरण में सद्‌विचारों का उदय होता है, वह सद्बुद्धि से युक्त रहता है ॥६४॥

विशेषनिर्देशः

सदसत्सामान्यफलं लग्नादिष्विति पुनर्विशेषफलम्।
शूरस्तब्ध्याद्युदितं होरायामिह विचिन्त्य वाच्यमिह ॥ ६५॥

यहाँ लग्न से लेकर बारह भावों तक का फल सामान्य रूप में कहा गया है। बृहज्जातक में भावफल वर्णन में जो "शूरस्तब्धो" इत्यादि ग्यारह श्लोकों में फल कहा है उसका भी विचार कर पृच्छक को बताना चाहिए ॥६५॥

द्वादशभावेषु गुलिकफलम्

होरायां नोदितं मान्देर्विलग्नादिस्थितेः फलम्।
विलिख्यते तदप्यत्र दृष्टं ग्रन्थान्तरे क्वचित्॥ ६६॥

वराहमिहिर ने अपने होरा में गुलिक की लग्नादि बारह भावों में स्थिति का फल नहीं दिया है। अतः उसे यहां (आवश्यक होने के कारण) ग्रन्थान्तरों (ज्योतिषशास्त्र के दूसरे ग्रन्थों) में से यहाँ दिया जा रहा है ॥६६॥

लग्नाच्चतुर्थभावपर्यन्तं गुलिकफलम्

रोगी क्षताङ्गो गुलिके तनुस्थे निन्द्याभिभाषी धनगे विवेषः।
सोत्थं द्विषन् भ्रातृगते सशौर्यः सुखादिहीनः सुखगेऽरिभीतिः ॥ ६७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्न में मान्दि होने पर पृच्छक या जातक रोगी, घायल एवं व्रणयुक्त शरीर वाला होता है । द्वितीय भाव के गुलिक वाला दूसरों की आलोचना, निन्दा आदि करता है; गालियाँ बकता है एवं वस्त्रहीन होता है । यदि तीसरे भाव में गुलिक हो तो सहोदरों से द्वेष करता है परन्तु पराक्रमी होता है । चतुर्थ भाव के गुलिक से सुखविहीन होता है तथा शत्रुओं से भयभीत रहता है ।।६७।।

पञ्चमात्सप्तमपर्यन्तगुलिकफलम्

गुर्वादिनिन्दा कृदनात्मजः स्याच्छूली सुतस्थे रिपुगे निजद्विट् ।
विषेक्षणो वंशविदूषणश्च, कलत्रहन्ता मदगेऽतिकामः ।। ६८।।

पञ्चम भाव में गुलिक होने से गुरुजनों की निन्दा करने वाला तथा सन्तानहीन होता है । उसे उदरशूल (colic) बना रहता है । षष्ठभावस्थ गुलिक होने पर स्वयं से द्वेष करने वाला, विषाक्त दृष्टि (बुरी नजर वाला=जिसकी दृष्टि से लोगों या वस्तुओं को नजर लग जाती हो) तथा अपने वंश का नाम डुबाने वाला होता है) । सप्तम भाव में गुलिक होने पर वह अपनी पत्नी की हत्या कर देता है तथा अति कामुक होता है ।।६८।।

अष्टमभावाद् दशमपर्यन्तगुलिकफलम्

धीमान्बहुव्याधिरनायतायुर्विषाग्निशस्त्रैर्मृतिरष्टमस्थे ।
धर्मस्थिते धर्मतपोमनूनः खस्थे सुकीर्तिः परकार्यसक्तः ।। ६९।।

अष्टम भाव में स्थित मान्दि होने पर बुद्धिमान् एवं अनेक रोगों से युक्त होता है । वह अल्पायु होता है तथा उसकी मृत्यु अग्नि, विष तथा शस्त्र से होती है । नवम भाव में गुलिक होने पर जातक धर्मकार्य, तप (व्रतोपवासादि) तथा मन्त्रज्ञान से रहित होता है । यदि गुलिक दशम भाव में हो तो जातक विख्यात होता है तथा परोपकार में संलग्न रहता है ।।६९।।

एकादशे द्वादशे च गुलिकफलम्

कुर्याच्च पौरुषयुतो धनवाहनार्था-
नैश्वर्यवान्भवगते बहुभृत्ययुक्तः ।
दुःस्वप्नवांश्च कुनखी विकलो व्ययस्थे;
लग्नादिभावगतमान्दिफलं प्रदिष्टम् ।। ७०।।

ग्यारहवें भाव में गुलिक होने पर जातक या प्राश्निक पौरुष वाला (हिम्मती), धनवान् , अनेक वाहनों वाला, धनार्जन करने वाला, ऐश्वर्यशाली तथा अनेक भृत्यों से युक्त होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बारहवें में गुलिक होने पर जातक या पृच्छक को डरावने स्वप्न दिखते हैं, उसके नाखून विकृत होते हैं । वह व्याकुल तथा विकल अंगों वाला होता है ।

इस प्रकार यह बारहों भावों में गुलिक (मान्दि) की स्थिति का फल कहा गया ॥७०॥

ग्रहफले सत्याचार्यमतम्

लग्नादिगता वपुराद्युपचयहानी शुभाऽशुभाः कुर्युः ।
विपरीतं षष्ठमृतिद्वादशगाः कथितमिति हि सत्येन ॥ ७१॥

लग्नादि बारह भावों में स्थित शुभ एवं पाप ग्रह क्रमशः उन भावों के फल का उपचय (वृद्धि) तथा ह्रास (हानि=कमी) करते हैं, लेकिन ६-८-१२ भावों में ये ग्रह विपरीत फल करते हैं अर्थात् शुभ ग्रह इनके फलों को कम करते हैं तथा पाप ग्रह बढ़ाते हैं । यह सत्याचार्य का मत है ॥७१॥

गुलिकादि के स्पष्ट करने की विधि—ये गुलिकादि उपग्रह संख्या में पाँच हैं— गुलिक, यमकंटक, अर्धयाम, मृत्यु तथा काल । इनके स्पष्ट करने की विधि इस ग्रन्थ के अध्याय ५ के श्लोक १४ से १६ तक की व्याख्या में तथा अध्याय ११ के श्लोक ११-१२ की व्याख्या में देखें ।

अन्य उपग्रहों के फल—इस ग्रन्थ में केवल गुलिक का ही फल निरूपित है, शेष चार (यमकण्टक, अर्धयाम, मृत्यु एवं काल) के सामान्य भावफल नहीं लिखे हैं । उपयोगी होने से उनका संक्षेप यहाँ हिन्दी भाषा में (पाठकों के लाभार्थ) दिया जाता है—

यमकण्टक का भावफल—जिस प्रकार गुलिक अशुभ फल करने में बलवान् है उसी प्रकार शुभ फल प्रदान करने में "यमकण्टक" है—"दोषप्रदाने गुलिको बलीयान् शुभप्रदाने यमकण्टकः स्यात्" ।

"गुलिक" का फल शनि के समान तथा "यमकण्टक" का भावफल बृहस्पति (गुरु) के समान हाता है—"गुरुवद्यमकण्टके" । यदि गुलिक के साथ यमकण्टक भी हो तो गुलिक का दोष कम हो जाता है । कुण्डली में यमकण्टक द्वितीय, पञ्चम, सप्तम, नवम तथा एकादश भावों में शुभ फल देता है; लग्न, तृतीय तथा दशम में मध्यम फल देता है; छठे, आठवें तथा बारहवें में अल्प शुभ होता है; यह अन्य ग्रहों के शुभ फल को बढ़ाता है ।

अर्धयाम—इसे अर्धप्रहर भी कहते हैं, इसका फल बुध के सदृश होता है— "अर्धप्रहरे बुधवत्फलम्" ।

मृत्यु—इसका फल मंगल की भाँति होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

काल—काल का फल राहु की तरह होता है—"काले तु राहुवत्" ।

धूमाद्यप्रकाशग्रहाणां फलम्

धूमादिपञ्चदोषाणां विलग्नादिषु संस्थितौ ।
फलं यल्लिख्यते तच्च समं प्रश्ने च जातके ।। ७२।।

धूम आदि पंच दोषों (अप्रकाश ग्रहों) के द्वादश भावों का फल लिखा जा रहा है। उसका उपयोग जातक तथा प्रश्न में समान रूप से करना चाहिए ।।७२।।

अप्रकाश ग्रहों के स्पष्ट करने की विधि—(१) जो तात्कालिक स्पष्टसूर्य पञ्चाङ्ग में से साधन किया हो उस निरयण दृग्गणितीय सूर्य के राश्यादि में चार राशि, तेरह अंश तथा बीस कला (राश्यादि ४।१३°।२'०।००") जोड़ने से धूम स्पष्ट हो जाता है ।

(२) बारह राशि अर्थात् मण्डल (राश्यादि ११।२९°।५९'।६०') में से धूमस्पष्ट को घटा दें तो शेष राश्यादि पातस्पष्ट होता है । इसे **व्यतिपात** भी कहते हैं ।

(३) पातस्पष्ट में केवल छः राशि जोड़ने से **परिधि** या **परिवेष** स्पष्ट होता है ।

(४) परिधि (परिवेष) को बारह राशि (भचक्र) में से घटा देने पर **इन्द्रधनु** या **चाप** स्पष्ट होता है ।

(५) इन्द्रधनु (चाप) में शून्य राशि, सोलह अंश तथा चालीस कला जोड़ने से **उपकेतु** स्पष्ट होता है । इसी को ध्वज, शिखि या केतु भी कह दिया जाता है जो कि पंचांग के केतु से बिलकुल अलग है । दक्षिण भारतीय दैवज्ञ अंशादि १६°।४०' के स्थान पर सत्रह अंश जोड़ते हैं ।

ध्यान रहें, उपकेतुस्पष्ट में एक राशि जोड़ने पर पूर्ववत् तात्कालिक सूर्यस्पष्ट आ जाता है जो कि गणित के शुद्ध होने का प्रमाण होता है । साथ ही धूम तथा इन्द्रचाप में परस्पर छः राशि का अन्तर होता है । इसलिए यदि धूम में छः राशि जोड़ दें तो भी इन्द्रचाप स्पष्ट हो जाता है । इसी प्रकार तात्कालिक सूर्य में एक राशि कम करने पर उपकेतु स्पष्ट होता है । इस प्रकार से गणित की शुद्धता की जाँच की जा सकती है ।

उदाहरण—तात्कालिक सूर्यस्पष्ट राश्यादि—५।४°।३५'।२२" है, इसमें राश्यादि ४।१३°।२०'।०" जोड़ने से राश्यादि ९।१७°।५५'।२२" यह धूम नामक अप्रकाश ग्रह स्पष्ट हुआ । धूम को बारह राशि में से घटाया तो राश्यादि २।१२°।४'।३८' यह पातस्पष्ट प्राप्त हुआ । इसमें ६ राशि जोड़ने पर राश्यादि ८।१२°।४'।३८" यह परिधि (परिवेष) स्पष्ट प्राप्त हुआ । इसे बारह राशि में से घटा दिया तो राश्यादि ३।१७°।५'५।२२" यह इन्द्रचाप (इन्द्रधनु) स्पष्ट हुआ । इसमें राश्यादि ०।१६°।४०'।०" जोड़ने पर राश्यादि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४।४°।३५'।२२" यह उपकेतु स्पष्ट हुआ । इसमें एक राशि जोड़ा तो राश्यादि ५।४°।३५'।२२" यह तात्कालिक सूर्यस्पष्ट ज्यों का त्यों आ गया जो कि गणना की शुद्धता का प्रमाण है ।

द्वादशभावेषु धूमफलम्

कूपे स्यात्पतनं तनौ यदि वचस्खालित्यमर्थे स्थितः;
पङ्गुर्भ्रातरि सोदरः सुरगृहं रक्षेत्सुखे मातुलः ।
क्रुद्धः पञ्चमभेऽरिभे खलु भवेद्व्याघ्रेण दष्टो मुखे;
याति भ्रष्टतया मदे तु निधने धूमः क्षतः शस्त्रतः ।। ७३ ।।
धर्मे स्वल्पतपाः खभेशनिहतिर्लाभे लभेतेतरद्;
वेश्मापि प्रवसेद्व्ययेऽथ .... ।

(१) लग्न में धूम होने पर कूपादि में गिरना होता है । (२) द्वितीय में धूम की स्थिति से वाणी में हकलाहट उत्पन्न होती है । (३) तृतीयभावस्थ धूम सहोदर को लूला (पङ्गु) बनाता है । (४) पञ्चम के धूम से जातक या पृच्छक का मामा किसी मन्दिर का पुजारी या महन्त या कार्यकारी न्यासी होता है । (५) पंचम का धूम क्रोधी बनाता है । (६) छठे भाव के धूम से व्याघ्रादि पशुओं से कष्ट होता है । (७) सप्तमस्थ धूम से जातक या पृच्छक अभक्ष्य पदार्थों का भक्षण करता हैं । (८) आठवें भाव में धूम हो तो शस्त्र से आघात होता है । (९) नवें भाव का धूम तपस्या तथा धार्मिकता में कमी करता है । (१०) दशम का धूम स्वामी का नाश करता है । (११) लाभभाव में होने पर नये आवास को प्राप्त कराता है । (१२) द्वादशस्थ धूम के कारण जातक को घर से बाहर प्रवास करना पड़ता है ।।७३-७३१/२।।

द्वादशभावेषु व्यतिपातफलम्

.... तनुगः स्याच्चेद्व्यतीपातकः ।
श्वित्री वाचि स कौशलः सहजभे गानी सुखेऽश्वागमो
दुःखं पुत्रभवं सुतेऽरिभवने छिद्रावहोस्तेऽधनः ।। ७४ ।।
वेत्ता सर्वकला मृतौ तपसि भाग्योनौ नभस्यग्निभी-
र्लाभे भूपतिसत्कृतो व्ययगृहे भ्रष्टोऽथ सर्पान्मृतिः ।

(१) लग्न में पात होने पर जातक को श्वित्र नामक चर्मरोग (Lucoderma) होता है । (२) दूसरे भाव का व्यतीपात वाक्पटु बनाता है । (३) तृतीय भाव के व्यतिपात से गाने में कुशल (संगीतज्ञ) होता है । (४) चौथे भाव में व्यतीपात नामक अप्रकाश ग्रह हो तो वाहन लाभ होता है । (५) पञ्चम भाव में यह सन्तति कष्ट देता है । (६) छठे भाव का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पात जातक में अनेक चारित्रिक एवं नैतिक दुर्बलताएँ पनपने देता हैं। (७) सप्तमस्थ पात निर्धन बनाता है। (८) आठवें व्यतिपात से पृच्छक को अनेक कलाओं में निपुण जानना चाहिए। (९) नवम भाव का पात भाग्यहीनता देता है। (१०) दशम का व्यतिपात अग्नि (बिजली आदि) से भय देता है। (११) लाभभाव का व्यतीपात शासन पक्ष से सम्मानित कराता है तथा (१२) व्ययभाव के व्यतिपात से सर्पादि से मृत्यु होती है ॥७४-७५½॥

लग्नादिद्वादशभावेषु परिवेषफलम्

लग्नस्थे परिवेषनाम्नि निधिकृत्स्वे भ्रान्तिमान् सोदरे;
वासो नात्मगृहे सुखे मनसि बद्धोऽन्तस्थचोरो रिपौ ॥ ७५॥
काणोऽस्ते क्षतिरायुधेन निधने गुर्वाद्यभक्तो गुरौ;
ह्यौदार्यं दशमे भवे तु जलवाग्दीर्घामयो द्वादशे ।

(१) लग्न में परिवेष (अप्रकाशक ग्रह) बैठा हो तो व्यक्ति की मृत्यु सर्पदंश से होती है। (२) धनभाव में जातक धनी होता है, उसे खजाना मिलता है। (३) तृतीय के कारण व्यक्ति मानसिक रोगी होता है। (४) चतुर्थ का परिवेष इधर-उधर भटकाता है। (५) पंचम भाव में व्यक्ति को बन्धन या कारावास होता है। (६) रिपुभाव में परिवेष के बैठने से वह अपने घर में ही चोरी करता रहता है। (७) सप्तम भाव में यदि परिवेष हो तो व्यक्ति का एक नेत्र विकृत होता है। (८) अष्टम भाव का परिवेष शस्त्राघात करता है। (९) धर्मभाव में परिवेष के कारण गुरुजनों, साधु-सन्तों में भक्ति नहीं होती। (१) दशमस्थ परिवेष व्यक्ति को उदार तथा परोपकारी बनाता है। (११) भव (एकादश) में परिवेष से व्यक्ति धाराप्रवाह नहीं बोल पाता है। (१२) व्यय भाव में होने पर लम्बी बीमारी होती है जो बहुत दिनों तक रहती है ॥७५-७५½॥

द्वादशेषु भावेषु इन्द्रचापफलम्

वातव्याध्यवशीकृताखिलतनुर्वृत्रारिचापोदये;
बाधिर्यं वचसि, द्विजन्मवधपूर्वाकृत्यकृद् विक्रमे ॥ ७६॥
वेश्मस्थे गणरक्ष्यहा मनसि वाग्भीमन्त्रवादावुभौ;
षष्ठे शत्रुभयं मदेऽङ्गविकलो भार्यानुभूतिश्च नो ।
बद्धो भूरितराशया प्रकटयन् जाड्यञ्चरेदष्टमे;
बन्धाद्वात्मजतो मृतिस्तपसि खे स्वल्पाम्बरः शीघ्रभुक् ॥ ७७॥

(१) यदि लग्न में इन्द्रचाप हो तो वातव्याधि (Nevous diseases) उत्पन्न करता है। (२) दूसरे भाव में होने पर बाधिर्य (Deafness) करता है। (३) तीसरे भाव का इन्द्रचाप ब्राह्मणों, साधुओं की हत्या के लिए जातक को प्रेरित करता है। (४) यदि चौथे भाव में इन्द्रधनु हो तो सार्वजनिक सम्पत्ति को दादागीरी या माफिया के सहयोग से हड़पकर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसका दुरुपयोग करता है। (५) पंचम भाव का इन्द्रधनु पृच्छक को धर्मभीरु तथा मन्त्रशास्त्र का जानकार बनाता है। (६) छठे भाव में चाप के होने पर शत्रुओं से भय होता है। (७) सप्तम का चाप विकलाङ्ग या नपुंसक बनाता है तथा ऐसे व्यक्ति को पत्नीसुख का अनुभव ही नहीं होता है। (८) मृत्युभाव में 'धनु' के होने पर स्वयं मूर्ख की भाँति होकर भी दूसरों को अपने चमत्कारों से मूर्ख बनाता हुआ धोखाधड़ी करता है। (९) नवम भाव में जब इन्द्रधनु हो तो जातक की बन्धन से अथवा सन्तति के द्वारा मृत्यु होती है। (१०) दशम भाव का इन्द्रचाप हो तो जातक पर पहनने के लिए थोड़े से वस्त्र ही होते हैं ॥७६-७७॥

लाभे भूरि पराक्रमश्च मृगयासक्तो व्यये प्रोषणं;

(११) लाभभाव में इन्द्रधनु हो तो जातक अधिक साहसी तथा आखेट (Hunting) का शौकीन होता है। (१२) बारहवें भाव के इन्द्रचाप से राजा द्वारा देश निकाला होता है ॥७७$^{१}/_{४}$॥

उपकेतुफलम्

कोपाद्भूमिपतेरथोदयगते केतौ विकेशोऽग्रतः।
दौर्बल्यं गिरिसानुनासिकवचा वाग्भीश्च सोत्थेद्द्वयं;
वेश्मस्थे सुरभिः सदा हृदि नरः शूली वधूर्युग्मसूः ॥ ७८॥
अन्धो रुद्धमरुन्म्रियेत परगेहेरौ मदे मोषणाद् ;
रन्ध्रस्थं विषभोजनात्तपसि विक्रान्तश्च दुर्मृत्युभाक् ।
वृक्षेणाभिहतो निपत्य तरुतो वा खे मृतिम्प्राप्नुयाद्;
आये शेवधिभाग्व्यये शयनसौख्याभावदुःखव्ययाः ॥ ७९॥

(१) यदि उपकेतु प्रश्नलग्न या जन्मलग्न में हो तो जातक के शिर के बाल सामने की ओर से झड़ना प्रारंभ होते हैं। (२) वह दुबला-पतला होता है तथा नाक के स्वर में बोलता है। (३) तीसरे भाव के उपकेतु से जातक अत्यधिक संवेदनशील होता है तथा सानुनासिक भी बोलता है। (४) चौथे भाव में उपकेतु जातक को सुगंधित पदार्थों के प्रति अधिक आकर्षित कराता है। (५) पंचम भाव के केतु से पुरुष जातक के पेट में दर्द रहता है तथा स्त्री जातक हो तो जुड़वा सन्तान उत्पन्न करती है। (६) छठे भाव में होने पर जातक या पृच्छक कमजोर दृष्टि वाला होता है तथा पराये घर में साँस रुकने से मरता है। (७) सप्तम भाव में उपकेतु हो तो व्यक्ति मोषण (लूटपाट) द्वारा मरता है। (८) अष्टम भावस्थ उपकेतु में विषाक्त भोजन या विषभक्षण (poisoning) से मृत्यु होती है। (९) नवम भाव में उपकेतु हो तो मृत्यु से संघर्ष करता हुआ जीवन में पराक्रम दिखाता हुआ अपमृत्यु (दुर्घटना या हत्या) से मरता है। (१०) दशम का उपकेतु वृक्ष से गिराकर या विमान से मारता है। (११) ग्यारहवाँ उपकेतु गड़ा धन देता है। (१२) द्वादशस्थ केतु दुःख तथा अपव्यय देता है ॥७८-७९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुलिकादि उपग्रहाणां द्वादशभावे फलचक्रम्

भाव	गुलिक (मान्दि)	यमकण्क (यमघण्ट)	अर्धयाम (अर्धप्रहर)	मृत्यु	काल
१.	क्षत-विक्षत शरीर वाला, फोड़े एवं घाव आदि	दीर्घायु, सच्चरित्र	विद्वान्	व्रणयुक्त	रोगी
२.	अशिष्टभाषी, नग्न शरीर रहने वाला	धनवान्	धनी	कुटिल	कुतर्की
३.	भ्रातृद्वेषी, शौर्यवान्	कृपण	दुर्जन	विक्रमी	पराक्रमी
४.	सुखविहीन, शत्रुभय	सुखी	सुखी	दुःखी	दुःखी
५.	गुरुनिन्दक, अश्रद्धालु	बुद्धिमान्, प्रतापी	परामर्शदाता	सन्ततिकष्ट	दुर्भाग्यवान्
६.	निजद्वेषी, पतनशील, विषदृष्टि	कामुक	दुश्चरित्र	शत्रुजित्	बलवान्
७.	पत्नीहन्ता, अतिकामी	विख्यात	धर्मज्ञ	स्त्रीपीड़ा	अपवित्र (मलिन)
८.	बहुव्याधिग्रस्त, बुद्धिमान्	अल्पायु	गुणी (विदेशयात्रा)	रोगी	रोगी
९.	धर्महीन, श्रद्धाहीन	पुत्रवान्	पुत्रवान्	पापी	दीन
१०.	यशस्वी, परोपकारी	सुकृति	विक्रमी	सुखी	अभिमानी
११.	धनी, वाहन युक्त	धनी	धनी	धनाढ्य	म्लेच्छादि से लाभ
१२.	कुनखी दुःस्वप्नदृष्टा विकलांग	दरिद्र	जड़, मूर्ख	पतित	दुर्व्ययी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धूमादि अप्रकाशक ग्रहों के द्वादश भाव में फल का चक्र

भाव	१ धूम (धूम्र)	२ पात (व्यतिपात)	३ परिधि (परिवेष)	४ इन्द्रचाप (चाप)	५ उपकेतु (ध्वज)
१.	कूपादि में पतन होना	कुष्ठादि चर्मरोग (सफेद दाग)	सर्पदंश	वातविकार	आगे की ओर से सिर में गंजापन
२.	स्खलित वाणी होना	वाक्पटुता	निधिप्राप्ति	बहिरापान (कानों में)	दुर्बल तथा सानुनासिक वाणी
३.	सहोदर की पङ्गुता	गायनप्रवीण (संगीतज्ञ)	मनोरोगी	ब्रह्मघाती	नाक के स्वर में जोर से बोलने वाला
४.	मामा का मठाधीश होना	वाहन लाभ	परगृहवासी	परधनाप-हारक	सुगन्धियों का शौकीन
५.	क्रोधी	सन्ततिकष्ट	बन्धनयुक्त	धर्मभीरु, लज्जाशील	हृच्छूली (पु.), युग्मप्रसूता (स्त्री)
६.	बाघ आदि हिंसक पशु से कष्ट	बुरी आदतें नशे की लत	घर में ही चोरी करने वाला	शत्रु से भयभीत	अन्धा, परगेह में मृत्यु हो
७.	अभक्ष्य पदार्थ खाने वाला	निर्धनता	एकाक्ष	अविवाहित (स्त्रीसुख रहित)	डाकुओं द्वारा मृत्यु
८.	शस्त्राघात	बहुकलाविद्	शस्त्राघात	मायावी	विषभक्षण
९.	तपहीनता	भाग्यहीन	गुरुजनों के प्रति श्रद्धा-हीन	बन्धन से या पुत्र द्वारा मृत्यु	अपमृत्यु
१०.	स्वामी का नाश	अग्निभय, विद्युद्भय	उदारता	वस्त्रहीन	पतन से मृत्यु
११.	भवनप्राप्ति	राजसम्मान	वाणी में जड़ता	मृगयाशील	निधिप्राप्ति
१२.	प्रवास	भ्रष्टाचारी	दीर्घ रोगी	राजकोप से पीड़ित	अपव्यय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भावानां फलपाकसमयकथनम्

लाभनाशादिकं सर्वभावानां यदिहोदितम् ।
कदा तत्सम्भवेदित्याकांक्षया काल उच्यते ।। ८० ।।
फलाप्तिः कल्प्यते येन तस्य कालोऽयनादिकः ।
तद्भुक्तांशकसंख्याघ्नस्तत्सिद्धौ समुदीर्यताम् ।। ८१ ।।

सभी भावों के वृद्धि एवं हानि का फल कब प्राप्त होगा ? इस आकांक्षा के कारण अब आगे फलप्राप्ति का समय कहा जा रहा है ।।८०।।

जिस ग्रह से फलप्राप्ति होनी हो उस ग्रह के अयनादि काल अर्थात् अयन, ऋतु, मास, पक्ष, क्षण को उस ग्रह की नवांश संख्या से गुणा कर जो समय प्राप्त हो उस समय में उक्त फल घटित होगा यह बताना चाहिए ।।८१।।

स्पष्टीकरण—ग्रहों के कालादि को बृहज्जातक में बताते हुए कहा है (बृहज्जातक अध्याय २।१४ में)—

"अयनक्षणवासरर्तवो मासोऽर्धञ्च समाश्च भास्करात् ।" अर्थात् सूर्य का फल अयन में, चन्द्रमा का क्षणों में, मंगल का दिनों में, बुध का ऋतुओं में, गुरु का मासों में, शुक्र का पक्षों में तथा शनि का वर्षों में प्राप्त होता है । क्षण का अर्थ यहाँ एक मुहूर्त (४८ मिनट या दो घटी) होता है ।

अब जो ग्रह फल देने वाला है वह किस संख्या वाले नवांश में है यह देख लें । यदि वह ग्रह सूर्य है तो प्रथम नवांश में एक अयन में, द्वितीय नवांश में हो तो दूसरे अयन में तथा तीसरा नवांश होने पर तीसरे अयन में फल देगा ऐसा समझना चाहिए । एक अयन का समय छः मास होता है । चन्द्रमा यदि पाँचवें नवांश में है तो वह ५ मुहूर्त (पाँचवें क्षण) में फल देगा । यह समय मध्यम होता है । स्पष्ट समय जानने के लिए फलदाता ग्रह के जितने नवांश बीते हों (भुक्त हो चुके हों) उन को ग्रह के अयनादि समय से गुणा करें । फिर जितनी कलाएँ वर्तमान नवांश की बीती हों उनसे अयनादि काल का गुणा कर उस गुणनफल में २०० (दो सौ) का भाग देने से फलप्राप्ति का स्पष्ट समय ज्ञात हो जाता है । दो सौ का भाग इसलिए देते हैं कि एक नवांश ३°।२०' (तीन अंश तथा बीस कला) में दो सौ कलाएँ होती हैं । सुविधा के लिए आगे की सारणी का उपयोग करें । (सारिणी १-२-३ का) ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहफल-समयबोधक
सारिणी क्रमांक – १

ग्रह	सूर्य (अयन)		चन्द्र (मुहूर्त)		मंगल (दिन)		बुध (ऋतु)		गुरु (मास)		शुक्र (पक्ष)		शनि वर्ष	
गत नवांश	वर्ष	मास	घटी	पल	दिन	घटी	वर्ष	मास	वर्ष	मास	मास	दिन	वर्ष	मास
एक	०	०६	२	००	१	००	०	२	०	१	०	१५	१	००
दो	१	००	४	००	२	००	०	४	०	२	१	००	२	००
तीन	१	०६	६	००	३	००	०	६	०	३	१	१५	३	००
चार	२	००	८	००	४	००	०	८	०	४	२	००	४	००
पाँच	२	०६	१०	००	५	००	०	१०	०	५	२	१५	५	००
छह	३	००	१२	००	६	००	१	००	०	६	३	००	६	००
सात	३	०६	१४	००	७	००	१	२	०	७	३	१५	७	००
आठ	४	००	१६	००	८	००	१	४	०	८	४	००	८	००
नौ	४	०६	१८	००	९	००	१	६	०	९	४	१५	९	००

उदाहरण—(१) संवत् २०६० विक्रमी शकाब्द १९२५ आश्विन कृष्ण तृतीया शनिवार दिनांक १३ सितम्बर सन् २००३ को किये गये प्रश्न में सूर्य का फल समय ज्ञात करो। प्रश्न समय पर सूर्यस्पष्ट राश्यादि ४।२५°।५९'।५५'' है।

यह सूर्य आठवें नवांश में है। इसके सात नवांश बीत चुके हैं। सातवाँ नवांश २३°।२०' पर समाप्त होता है। अतः सूर्य के अंशादि २५°।३९'।५५'' में से गतनवांश सात के २३°।२०' घटाया तो अंशादि २°।३९'।५५'' प्राप्त हुए। अब हमने सारिणी १ में से गतनवांश सात के सामने सूर्य का फल देखा तो ३ वर्ष ६ मास प्राप्त हुए। अब सारिणी क्रमांक २ में से दो अंश का फल ३ मास तथा १८ दिन प्राप्त हुए। अब हमें ३९'।५५'' (थोड़े अन्तर में ४० कला) का फल प्राप्त करना है तो सारिणी क्रमांक ३ में से दस कला से प्राप्त (सूर्य के कोष्ठक में) ९ दिन प्राप्त हुआ। इसे चालीस कला के फल के लिए चौगुना किया तो ३६ दिन = १ मास ६ दिन मिले = सारिणी क्र. १ से गतनवांश सात का फल = ३ वर्ष + ६ मास १० दिन + ;; ;; क्र. २ से वर्तमान नवांश के दो अंश का फल = ० वर्ष, ३ मास, १८ दिन ;; ;; क्र. ३ से वर्तमान नवांश की गत कला ४० का फल = ०, १ मास, ०६ दिन = सब का योग = ३ वर्ष, १० मास, २४ दिन। यही तीन वर्ष, दस मास, चौबीस दिन बाद सूर्य का फल मिलेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहों के फल का समय जानने की सारिणी - २
(नवांश के अंशफलज्ञानार्थ)

ग्रह (फल समय)	सूर्य (६मास)		चन्द्र (१२० पल)		मंगल (साठ घटी)		बुध (साठ दिन)		गुरु (तीस दिन)		शुक्र (पन्द्रह दिन)		शनि (३६० दिन)	
नवांश के गतांश	मास	दिन	घटी	पल	घटी	पल	मास	दिन	मास	दिन	दिन	घटी	मास	दिन
१अंश	१	२४	०	३६	१८	००	०	१८	०	९	४	३०	३	१८
२अंश	३	१८	१	१२	३६	००	१	०६	०	१८	९	००	७	०६
३अंश	५	१२	१	४८	५४	००	१	२४	०	२७	१३	३०	१०	२४
३°/२०	६	००	२	००	६०	००	२	००	१	००	१५	००	१२	००

ग्रह के वर्तमान नवांश के गतांशों का फल इस सारिणी क्रमांक दो (२) में देखें। फिर आगे की सारिणी क्रमांक तीन (३) से कलाओं का फल प्राप्त कर क्रमांक १ के फल में जोड़ें।

ग्रहों क़ा फल समय जानने की सारिणी - ३
(कलाओं के फल ज्ञानार्थ)

ग्रह (फल समय)	सूर्य (अयन)		चन्द्र (क्षण= दो घटी)		मंगल (दिन= ६०घटी)		बुध (ऋतु= दो मास)		गुरु (मास)		शुक्र (पक्ष)		शनि (वर्ष)	
नवांश की गत कला	दिन	घटी	पल	विपल	घटी	पल	दिन	घटी	दिन	घटी	घटी	पल	दिन	घटी
एक	०	५४	०	३६	०	१८	०	१८	०	९	४	३०	१	४८
दो	१	४८	१	१२	०	३६	०	३६	०	१८	९	००	३	३६
तीन	२	४२	१	४८	०	५४	०	५४	०	२७	१३	३०	५	२४
चार	३	३६	२	२४	१	१२	१	१२	०	३६	१८	००	७	१२
पाँच	४	३०	३	००	१	३०	१	३०	०	४५	२२	३०	९	००
छह	५	२४	३	३६	१	४८	१	४८	०	५४	२७	००	१०	४८
सात	६	१८	४	१२	२	०६	२	०६	१	०३	३१	३०	१२	३६
आठ	७	१२	४	४८	२	२४	२	२४	१	१२	३६	००	१४	२४
नौ	८	०६	५	२४	२	४२	२	४२	१	२१	४०	३०	१६	१२
दस	९	००	६	००	३	००	३	००	१	३०	४५	००	१८	००

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उदाहरण (२)—मान लीजिए—प्रश्न या जन्मकाल में शनि फलदायक ग्रह है, शनिस्पष्ट राश्यादि २।१७°।४१'।११'' है । अब शनि का नवांश जाना तो छठा नवांश है । इसके पाँच नवांश बीत चुके हैं अतः शनि का समय एक वर्ष होता है सो १×५ = ५ वर्ष हुए । अब छठा नवांश १६°।४०' पर समाप्त हुआ है अतः इसको शनिस्पष्ट के १७°।४१'।११'' में से घटा दिया तो शेष अंश १°।१'।११'' प्राप्त हुए । इनमें ११'' को छोड़ दिया, क्योंकि इससे विशेष समयान्तर नहीं होना है । अब सारिणी क्रमांक २ में से शनि के सामने एक अंश का फल देखा तो ३ मास १८ दिन प्राप्त हुआ । फिर एक कला के सामने सारिणी क्रमांक ३ में से शनि का फल देखा तो १ दिन ४८ घटी प्राप्त हुए । इन दोनों फलों के साथ गत नवांश फल की सारिणी क्रमांक १ से प्राप्त फल ५ वर्ष भी जोड़ दिये तो कुल योग ५ वर्ष ३ मास, १९ दिन तथा ४८ घटी हुआ । इतने समय के बाद ही शनि का फल प्राप्त होगा । वैसे स्थूल रूप से कहा जा सकता था कि छठे नवांश में शनि है अतः ६ वर्ष के भीतर फल प्राप्त होगा । गत नवांशों का फल सारिणी क्रमांक १ से देखें ।

अब विश्वास के लिए इसे गणित द्वारा ज्ञात करें । चूँकि पाँच नवांश गत हैं अतः ५ वर्ष समय प्राप्त हुआ । वर्तमान नवांश में एक अंश तथा एक कला भुक्त है । इनकी कला बना ली तो ६१ कला हुई । ६१ से शनि का काल एक वर्ष है, इसके मास १२ से कला का गुणा किया तथा गुणनफल में २०० से भाग दिया । ६१×१२ = गुणनफल ७३२, इसमें २०० का भाग देने पर लब्धि ३ मास हुए । शेष १३२ में ३० का गुणा किया तो गुणनफल ३९६० हुआ । इसमें २०० का भाग दिया तो लब्धि १९ दिन प्राप्त हुए । शेष १६० में ६० का गुणा किया तो गुणन फल ९६०० हुआ । इसमें पुनः २०० का भाग देने पर लब्धि ४८ घटी प्राप्त हुई, शेष शून्य बचा । इन ३ मास १९ दिन तथा ४८ घटी को गतनवांश के फल ५ वर्षों में जोड़ने पर वर्षादि ५।३।१९।४८ प्राप्त हुए । इतना ही फल सारिणी से बिना झंझट के प्राप्त हुआ, अतः सुविधा के लिए सारिणी का ही उपयोग कीजिए ।

जयपराजयप्रश्ने अवधिज्ञानम्

लग्ने यावानुदेत्यंशस्तत्संख्याघ्नोऽयनादिकः ।
कालो वाच्योंऽशकेशस्य कार्ये वैरिजयादिके ।। ८२।।

वाद-विवाद, जय-पराजय के प्रश्न में जब फलप्राप्ति के समय ज्ञान की आवश्यकता हो तो फलप्रणेता भावेश या ग्रह के नवांश की संख्या से ग्रह के अयनादि काल को गुणा करें । उतने समय के उपरान्त ही फल प्राप्त होगा ।।८२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इस प्रकार से ज्ञात समय मध्यम समय होगा, स्पष्ट समय जानने के लिए वर्तमान नवांश के अंश एवं कलाओं से फल प्राप्त कर भी उक्त फल में जोड़ना चाहिए। सुविधा के लिए सारिणियों का प्रयोग करें।

रोगादिसमयज्ञानम्

लग्नाद्यावति भे पापस्तावत्यब्देऽह्नि मासि वा।
पक्षे क्षणेऽयने वर्तौ लग्नेशस्योचिते व्यथा॥ ८३॥

व्यथा के प्रश्न में प्रश्नकालीन लग्नेश का समय अयन, वर्ष, ऋतु, मास, पक्ष, दिन या मुहूर्त जिस इकाई में हो उसे ग्रहण करें। फिर उसको लग्न से जितनी राशि के अन्तर पर पाप ग्रह बैठा हो उतनी राशिसंख्या से गुणा करें तथा उतने समय के पश्चात् रोगादि होगा, ऐसा बतायें॥८३॥

मान लीजिए—धनु लग्न है तथा चौथे भाव में पाप ग्रह मीन राशि में बैठा है, अतः लग्नेश गुरु के समय की इकाई एक मास है और लग्न से चौथी राशि में पाप ग्रह बैठा है इसलिए १×४ = ४ मास में व्यथा उत्पन्न होगी।

मतान्तरेण शुभाशुभसमयज्ञानम्

अन्येनापि प्रकारेण कालो गन्थान्तरोदितः।
शुभाशुभफलप्राप्तौ स च सम्प्रति लिख्यते॥ ८४॥

शुभाशुभ फल के समय का निर्धारण करने के लिए ग्रन्थान्तरों में अन्य पद्धतियों का भी वर्णन मिलता है। उसका विवेचन भी अब आगे करते हैं॥८४॥

अचिरेण चिरेण वा फलाप्तिकथनम्

भावाद्भावपतौ तु दृश्यदलगे तद्भावलाभोऽचिरात्
तत्रादृश्यगते शनैरिति भिदाभावात्पुनस्तत्पतिः।
राशौ यावति तत्समे तु दिवसे मासेऽथवा भावना-
ऽथारूढालयगेऽथवा हिमकरे भावस्य लाभो भवेत्॥ ८५॥

जिस भाव का स्वामी दृश्य चक्रार्ध (सप्तमस्पष्ट से लग्नस्पष्ट तक) में हो उसका फल शीघ्र प्राप्त होता है तथा जिसका स्वामी अदृश्य चक्रार्ध में (लग्नस्पष्ट के अंशादि से सप्तम स्पष्ट के अंशादि तक) हो उस भाव का फल चिरकाल में मिलता है।

भाव से भावेश जितनी राशि आगे होता है उतने दिन या मासों में फलप्राप्ति होती है (यह भी मत है)।

भावेश जिस राशि में हो उस राशि में जब चन्द्रमा गोचर में भ्रमण करता हुआ पहुँचता है तब फल मिलता है॥८५॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकारान्तरेण समयज्ञानम्

लग्नं वा फलदातृगेहमथवा तस्योच्चभं वा यदा;
यायादिन्दुरिनोऽथवाथ फलदो वाच्यं तदा तत्फलम् ।
भूते वा समये भविष्यति यदा लग्नस्य पापान्वय-
स्तत्कालेऽशुभमादिशेच्छुभसमायोगे शुभं पृच्छताम्।। ८६।।

लग्न अथवा फलदाता ग्रह की जो राशि प्रश्नकुण्डली में है जब उस राशि में गोचर-भ्रमणवश चन्द्र का संचार हो तब फल मिलता है अथवा जब फलदाता ग्रह की उच्चराशि में गोचर का चन्द्रमा पहुँचता है तब फल मिलता है । इसी प्रकार सूर्य के गोचर भ्रमण से भी फल कहना चाहिए । वह भी फलदाता ग्रह की राशि में अथवा उच्च राशि में जब संचार करता है तब उस ग्रह से मिलने वाला फल प्राप्त होता है ।

शुभ-अशुभ फल—जिस किसी काल में गोचर संचार करते समय प्रश्नलग्न या जन्मलग्न की राशि पर पाप ग्रह पहुँचते हैं तो व्यक्ति को अशुभ फल की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार लग्न राशि पर गोचर भ्रमण में जब शुभ ग्रहों का संचार होता है तब व्यक्ति को शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥८६॥

लग्न से गोचरफल—इस श्लोक के उत्तरार्ध से यह सिद्ध है कि गोचर फल का विचार केवल चन्द्र राशि से ही नहीं अपितु लग्नराशि से भी करना चाहिए ।

पुनः मतान्तरेण फलसमयज्ञानम्

फलप्रदानसमयाः सर्वेषां व्योमचारिणाम् ।
विद्यन्ते केचनान्येऽपि लिख्यन्ते तेऽपि सम्प्रति ।। ८७।।

सूर्यादि नव ग्रहों के फल देने के कुछ और भी प्रकार अन्य विद्वानो ने बताये हैं उन्हें भी यहाँ लिखते हैं ॥८७॥

नक्षत्रादौ खेचराणां फलम्

कालः स्वर्क्षदिनर्तवो निजगृहस्थार्केन्दुजीवादयः;
सर्वेषां स्वदशानिजापहृतयः स्वीयोदयादावपि ।
खेटानां रविचन्द्रयोरयनमप्यत्रोत्तरं दक्षिणं;
दातुं स्याद्गुणदोषसम्भवफलं सर्वं बुधैरुह्यताम् ।। ८८।।

(१) सभी ग्रह अपना फल निज नक्षत्र, निज वार तथा निज ऋतु में देते हैं । (२) इसी प्रकार सभी ग्रह अपनी दशान्तर्दशा में (जन्मकुण्डली के अनुसार) फल देते हैं । (३) सूर्यादि ग्रह राशियों में प्रविष्ट होते हैं तथा उदय के समय भी फल देते हैं । इनमें सूर्य-चन्द्र मुख्य हैं । ये अपने अयनों में फल देते हैं । सूर्य उत्तरायण की राशियों में तथा चन्द्रमा दक्षिणायन की राशियों में फल देता है । इस प्रकार विद्वानों को ग्रहों के गुण-दोषों के प्रकट होने का समय बताना चाहिए ॥८८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ग्रहों के नक्षत्रादि का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्रह
कृत्तिका उ.फा. उ.षा.	रोहिणी हस्त श्रवण	मृगशिरा चित्रा धनिष्ठा	आर्द्रा स्वाति शतभिषा	पुनर्वसु विशाखा पू.भा.	पुष्य अनु. उ.भा.	श्लेषा ज्येष्ठा रेवती	मघा मूल अश्विनी	पू.फा. पू.षा. भरणी	नक्षत्र (विंशोत्तरी)
रविवार	सोमवार	मंगलवार	युक्त ग्रह का वार या शनि	गुरुवार	शनिवार	बुधवार	युक्त ग्रह का वार या मंगल	शुक्रवार	वार
ग्रीष्म	वर्षा	ग्रीष्म	साथी ग्रह की ऋतु	हेमन्त	शिशिर	शरद्	साथी ग्रह की ऋतु	वसन्त	ऋतु

विस्तरेण फलकथनम्

दशाफलादिनेष्टानिष्टादिना चोक्तमत्र यत् ।
संक्षेपेण तदेवेह विस्तरेण निगद्यते ।। ८९।।

पूर्व श्लोकों में ग्रहों के दशादि फल का संकेत संक्षेप में ही बताया गया है । अब उनके इष्ट फल (शुभफल) तथा अनिष्ट फल (अशुभ फल) को विस्तारपूर्वक (आगे) वर्णन किया जा रहा है ।।८९।।

सूर्यस्य अनिष्टेष्टफलम्

मार्तण्डेऽनिष्टसंस्थे नृपशिवपितृकोपादि हृत्क्रोडनेत्र-
व्याध्यस्थिस्त्रावपित्तामयशिखिपशुभीताम्रनाशात्मपीडाः ।
इष्टस्थे सात्त्विकत्वं शिवपितृनृपतिप्रीतयस्ताम्रलाभ-
श्चार्थाप्तिः कम्बलाध्वाटनतृणकनकाद्यौषधैश्चोद्यमः स्यात्।। ९०।।

जब सूर्य (इसी अध्याय के श्लोक ४४-४५ में कहे अनुसार) अनिष्ट स्थान में होता है तो शासन-प्रशासन, भगवान् शिव, पितृगण आदि के कोप से कष्ट होता है । हृदय, क्रोड (शरीर का मध्य भाग) तथा नेत्रों में रोग होता है । अस्थिस्राव (Phosphaturia), पित्तविकार, अग्नि-विद्युत् आदि का भय तथा पशुओं से भय होता है । ताम्रादि धातुओं की हानि होती है तथा आत्मा को पीड़ा होती है ।

जब सूर्य (श्लोक ४४-४५ के अनुसार) शुभ (इष्ट स्थान) होता है तब जातक या प्रश्नकर्त्ता का स्वभाव सात्त्विक हो जाता है । वह भगवान् शंकर, पितृगण के प्रति श्रद्धालु होता है । उसे सत्तापक्ष की अनुकूलता से लाभ होता है । स्वर्ण-ताम्रादि धातुओं का लाभ होता है । धन की प्राप्ति, कम्बलादि ऊनी वस्त्रों की प्राप्ति होती है । उसे भ्रमण, तृण (भूषा आदि), स्वर्ण, औषधि आदि के व्यवसाय से लाभ होता है । ये सभी शुभ फल मिलते हैं ।।९०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रस्य अनिष्टेष्टस्थानयोः फलम्

कोपो राज्ञ्या जनन्या रुगपि कफसमीरास्त्ररुग्वीर्यवत्स्वै-
वैरं कोपश्च दौर्गः कृषिधनयशसां संक्षयोऽनिष्टगेऽब्जे।
राज्ञीदुर्गाप्रसूनां मुदणुतिलगुडाच्छादनाज्यद्विजस्त्री-
गोनौरत्नादितोऽर्थः कृषिधनयशसां वृद्धिरिष्टस्थितेऽब्जे।। ९१।।

जब चन्द्रमा अनिष्ट स्थान गत (श्लोक ४४-४५ के अनुसार) होता है तब शासक पक्ष के कोप से पीड़ा होती है। जातक या प्रष्टा की माता बीमार पड़ती है। वात, कफ तथा रक्त विकार से पीड़ा होती है। शत्रुओं का बल बढ़ता है। महिला अधिकारियों के प्रकोप से शासन से सम्बन्धित प्रकरणों में बाधा आती है। अपने से अधिक शक्तिशाली परिचित जनों से टकराव होता है। दुर्गा तथा देवियों का प्रकोप होता है। खेती, बाग-बगीचा, चल-अचल सम्पत्ति तथा यश एवं सम्मान की हानि होती है।

यदि चन्द्रमा (इसी अध्याय के ४४-४५ श्लोकानुसार) इष्टस्थान में बैठा हो तब शुभ फल होता है। रानी (महिला अधिकारी) तथा दुर्गादि देवियों की कृपा प्राप्त होती है। अणु (साँवा, ककुनी, कोदों आदि धान्य), तिल, गुड़, वस्त्र तथा घी आदि का लाभ होता है या इनके व्यवसाय से लाभ होता है। ब्राह्मण, स्त्री, गाय, भैंस, नौकाव्यापार (जलमार्ग एवं समुद्री व्यापार) इन सब से आर्थिक लाभ होता है। कृषि एवं पशुधन की वृद्धि होती है। चारों तरफ ख्याति फैलती है। उच्चस्तरीय लोगों से परिचय एवं सम्पर्क सूत्र बढ़ते हैं ।।९१।।

अनिष्टेष्टस्थभौमफलम्

प्रद्वेषः सोदराद्यैः क्षितिक नकविनाशोऽग्निचौरारिभीतिः
सेनानीरक्तकोपज्वरनयनरुजापात्रशस्त्राङ्गभङ्गाः ।
भौमेऽनिष्टस्थितेऽस्मिन् पुनरितरगते भूमिहेमायुधाप्तिः;
सेनानीतुष्टता स्याद्धनमरिवधतो भ्रातृतो भूपतेश्च।। ९२।।

श्लोक ४४-४५ के अनुसार अनिष्ट स्थान गत मंगल हो तो भूमि, स्वर्ण आदि की हानि होती है। चोरों-डाकुओं, जेबकतरों, आतङ्कवादियों तथा शत्रुओं से भय होता है। सेनानी (सैनिक - पुलिस, सुरक्षा गार्ड तथा स्वामी कार्तिकेय) का प्रकोप होता है। शरीर से खून बहता है (रक्तपित्त आदि रोग होते हैं)। नेत्रों में पीड़ा होती है। बर्तन टूट-फूट जाते हैं या गुम हो जाते हैं (खिड़की तथा दरवाजों में टूट-फूट भी होती है)। शस्त्राघात से शरीर का कोई अंग घायल हो जाता है या अंग-भंग (Amputation) हो जाता है। हथियार भी टूट जाते हैं। ज्वर से तथा पित्तप्रकोप से पीड़ा होती है। सहोदरों से मनमुटाव हो जाता है तथा लड़ाई-झगड़े होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परन्तु जब मंगल विपरीत स्थिति में होता है अर्थात् इष्ट स्थानों में उसकी स्थिति प्रश्नकुण्डली या जन्मकुंडली में होती है तब भूमि तथा हथियारों की प्राप्ति होती है या इन से लाभ होता है। स्कन्द एवं पुलिस तथा सहोदरों से सम्बन्ध सुधर जाते हैं। शत्रु की पराजय से धन प्राप्त होता है राज्य-शासन तथा भाइयों से सहयोग मिलता है ॥९२॥

अनिष्टानिष्टस्थबुधफलम्

ज्ञेऽनिष्टस्थे तु कोपो हरियुवनृपयोर्दुर्वचस्तस्करार्ति-
स्तत्रेऽष्टस्थेऽश्वहेमक्षितिसुहृदवनीदेवगुर्वर्थलाभाः ।
अर्थो दौत्याच्च शिल्पैः स्तुतिरपि विदुषां वर्धनं बुद्धिवृत्तेः;
सिद्धिर्धर्मक्रियाणां लिपिगणितधनं गोपसूनुप्रसादः ॥ ९३॥

यदि (४४-४५वें श्लोकानुसार) बुध अनिष्ट स्थान में बैठा हो तो पृच्छक या जातक को विष्णु, युवा व्यक्तियों एवं सत्तापक्ष से परेशानी होती है। वह असभ्य भाषा बोलता है। उसके भौंड़े मजाक से लोग रुष्ट हो जाते हैं। उसे चोरों उठाइगीरों, डाकुओं, जेबकतरों आदि से कष्ट प्राप्त होता है।

यदि बुध कुण्डली में इष्ट स्थान में बैठा हो तो दौत्यकर्म (दलाली, बिचौलिया, प्रतिनिधि, मध्यस्थ, वकील, मुख्तार आम आदि कार्य) से धनलाभ होता है। तब जातक प्रोपर्टी डीलर जैसे कार्यों से मुनाफा कमाता है। उसे अनेक प्रकार के शिल्प (गणित, कम्प्यूटर, मुद्रण, टंकण, ज्योतिष आदि) से धन मिलता है। बौद्धिक कार्य तथा विद्वानों के सहयोग से उसकी उन्नति होती है। कार्यों में सफलता मिलती है। धार्मिक कृत्य, लेखन, प्रकाशन, लेखा-जोखा (Account) तथा भगवान् कृष्ण (विष्णु) की कृपा से धन मिलता है ॥९३॥

अनिष्टानिष्टस्थिते गुरुफलम्

जीवेऽनिष्टस्थिते स्याच्छ्रवणतनयरुग्विप्रदेवप्रकोपो;
वैरं वा धर्महीनैः पुनरितरगते वर्धनं धीगुणानाम् ।
नित्यं यज्ञेन वेदाध्ययनमनुजपैर्भूपतेश्चार्थलाभो;
लाभो दायादहेमाम्बरहयकरिणां विप्रदेवप्रसादः ॥ ९४॥

जब बृहस्पति (इस अध्याय के श्लोक ४४-४५ के अनुसार) अनिष्ट स्थिति में होता है तब कानों की बीमारियाँ (बाधिर्य, कर्णशूल, कर्णकण्डू, कर्णनाद, कर्णक्ष्वेड, कर्णशोथ, कर्णस्राव, कर्णमूलशोथ = Mrcps आदि) होती हैं। सन्तान बीमार रहती है। ब्राह्मणों के प्रकोप से कष्ट होता है। धर्महीन तथा नास्तिक लोगों से टकराव होता है। इसी प्रकार पाखंडियों से भी वैर बढ़ता है।

यदि गुरु इतर स्थिति (इष्ट स्थानगत) में हो तो बौद्धिक क्षमता बढ़ती है, सच्चरित्रता दृढ होती है। नित्य प्रति यज्ञ-होम, वेदाध्ययन, पुराणाध्ययन तथा जपादि कार्य होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन कार्यों तथा अनुष्ठानादि से लाभ होता है। राज्य-शासन, नेताओं तथा विशिष्ट व्यक्तियों का सहयोग मिलता है। बन्धुजनों, रिश्तेदारों से स्वर्ण, आभूषण, वस्त्रादि की प्राप्ति होती है, ब्राह्मणों तथा देवताओं की कृपा प्राप्त होती है, वाहन-प्राप्ति होती है तथा ज्ञान-समृद्धि बढ़ती है ॥९४॥

अनिष्टेष्टगते शुक्रफलम्

शुक्रेऽनिष्टस्थिते स्त्रीजनगदवसनापायलक्ष्मीवियोगाः;
शोकः स्नेहान्निषादक्षितिपति सचिवद्वेषगोरुप्यनाशः।
इष्टस्थे रूप्यवस्त्राभरणमणिनिधिस्त्रीविवाहार्थलाभः;
श्रद्धा गीते क्रियादिष्वपि च महिषगोमित्रमृष्टान्नलाभाः ॥ ९५॥

जब शुक्र कुण्डली में अनिष्ट स्थानगत हो तो स्त्रीजनों को रोगादि से कष्ट होता है। वस्त्रों का अपाय (हानि) होती है। लक्ष्मी (धन, यश, विद्या, स्वास्थ्य आदि) से वियोग होता है। स्नेहीजनों से शोक मिलता है तथा निषादों (अपराधी जातियों), शासनपक्ष एवं अधिकारी वर्ग से सम्बन्ध बिगड़ने के कारण गाय, भैंस आदि पशु तथा रुपयों की हानि होती है।

यदि वही शुक्र (इसी अध्याय के ४४-४५ श्लोकानुसार) इष्टस्थान में (कुण्डली में) बैठा हो तो रुपया-पैसा-सोना-चाँदी का लाभ होता है। वस्त्राभूषणों की प्राप्ति होती है। इसी प्रकार मणि, रत्न तथा गड़ा हुआ धन प्राप्त होता है या नौ निधियों में से कोई निधि प्राप्त होती है। घर में मंगल कार्य होते हैं, घर में वधू का आगमन होता है। भजन, कीर्तन, मंगल गीत, मंगलवाद्य का कार्यक्रम चलता रहता है। इन कार्यों के उद्यम से भी गाय-भैंस, मित्र तथा मिठाइयों की प्राप्ति होती है ॥९५॥

निधि—इस ग्रन्थ में अनेक प्रसंगों में निधि शब्द का उल्लेख है। निधि का सामान्य अर्थ गड़ा धन (दफीना) है। दूसरे कुबेर के नौ खजानों को निधि कहते हैं जो निम्न हैं—

"महापद्मश्च पद्मश्च शङ्खो मकरकच्छपौ।
मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव" ॥

अर्थात् (१) महापद्म, (२) पद्म, (३) शंख, (४) मकर, (५) कच्छप, (६) मुकुन्द, (७) कुन्द, (८) नील तथा (९) खर्व—ये नौ निधियाँ हैं। मार्कण्डेय पुराण के ६५ (पैंसठवें) अध्याय में निधियों की संख्या आठ ही है। परन्तु वहाँ प्रत्येक निधि का विस्तृत विवरण है तथा उसे प्राप्त करने वाले की सम्पन्नता तथा कार्यों का वर्णन है।

अस्तु, ग्रह के अधिक बली होने पर इस प्रकार की निधि व्यक्ति को प्राप्त होती है।

अनिष्टेष्टगते शनिफलम्

मन्देऽनिष्टस्थिते स्यादनिलकफरुजाज्ञानचौर्यादिकोप-
व्यापत्तन्द्रीश्रमास्त्रीभृतकतनुभुवां भर्त्सनं व्यङ्गतेर्ष्या।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इष्टस्थे दुःखनाशः परिणतवनिताभोगदासायसां पूः;
श्रेणी ग्रामाधिपत्यस्य च वरकमहिष्यादिकानां च लाभः ।। ९६।।

जब पूर्वोक्त ग्रहों की भाँति शनि अनिष्ट स्थान में स्थित हो तो पृच्छक (जातक) को वातविकार एवं कफविकार होते हैं । वह अज्ञानतावश गलतियाँ करता हैं जिससे उसकी चोरी हो जाती है । उसे मूर्खों की संगति से भी हानि होती है । वह सदैव तन्द्रा में रहता है अर्थात् सोया हुआ-सा रहता है । उसे शीघ्र ही थकान तथा काम से ऊब उत्पन्न हो जाती है । उसे स्त्रियों, नौकरों, पुत्र-पुत्रियों की भर्त्सना सहन करनी पड़ती है तथा उनके व्यङ्ग्य वचन सुनने पड़ते हैं । उसके शारीरिक अंगों में व्यंग उत्पन्न होते हैं तथा वह ईर्ष्यालु भी हो जाता है ।

यदि वही शनि (अ. १४ श्लोक ४४-४५ के अनुसार) इष्ट स्थान में (कुण्डली में) स्थित हो तो दुःखों का नाश होता है और सुखों की प्राप्ति होती है । विवाहिता स्त्री से सुख मिलता है । नौकरों-चाकरों तथा पुराने लोहे (कबाड़ी आदि के कार्य) से लाभ होता है । वह पूः (घर=आवास या मुहल्ला) या ग्राम या नगर का मुखिया होता है । श्रमिक जनों से उसकी मैत्री रहती है (चुनाव में खड़े होने पर उसे श्रमिक वर्ग के वाट प्रचुरता से मिलते हैं) । वरक (एक प्रकार का लोबिया=रमास तथा टिनशैड एवं छप्पर आदि) तथा भैंस आदि की प्राप्ति होती है ।।९३।।

राहोः केतोश्च फलम्

मन्दोदितं स्वाश्रितभेश्वरोक्तं
स्वोक्तञ्च राहोरथ भूमिजोक्तम् ।
स्वोक्तं निजाधिष्ठितराशिपोक्तं
केतोश्च वाच्यं त्रितयं फलानाम् ।। ९७।।

राहु का फल शनि की भाँति होता है । राहु जिस राशि में स्थित होता है उसके स्वामी के अनुसार फल देता है तथा स्वयं का स्वतंत्र फल भी देता है ।

इसी प्रकार केतु का फल मंगल की तरह होता है, वह जिस राशि में बैठता है उसके स्वामी के अनुसार फल देता है तथा अपना स्वतन्त्र फल भी देता है ।।९७।।

भविष्यकथनविधिः

दोषाः केवलमेव चेद्विपदतीवाराद्विनिर्दिश्यतां;
प्रश्ने केवलमेव चेत्खलु गुणा वाच्यास्तथा सम्पदः।
मिश्रत्वे गुणदोषयोरधिकतामालोच्य वाच्यं फलं;
यद्वा दोषजमेव भाग्यविकलाः प्रायोऽत्र लोका यतः ।। ९८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कुण्डली का विश्लेषण करने पर जब यह पाया जाय कि केवल दोष-ही-दोष हैं तो विरोधी जनों द्वारा अत्यन्त कष्ट होगा ऐसा कहना चाहिए; विपत्तियाँ भी अधिक आयेगीं। यदि कुण्डली में गुण-ही-गुण हों (शुभता-ही-शुभता हो) तो सभी प्रकार के सुख एवं सम्पत्ति प्राप्त होगी तथा सुगमतापूर्वक पृच्छक के कार्य सम्पन्न होंगे—ऐसा निर्देश करना चाहिए।

गुण-दोषों के मिश्रित होने पर ऊहापोहपूर्वक फलकथन करें। यदि दोषों की अधिकता हो तो व्यक्ति को कष्ट ही अधिक प्राप्त होंगे तथा सुख की कमी रहेगी। यदि कुंडली में गुण अधिक हों तथा दोष कम हों तो जातक (पृच्छक) को शुभ फल अधिक मात्रा में तथा अशुभ फल न्यून मात्रा में मिलेगा ऐसा बताना उचित है।

अथवा जनसाधारण तो अपना कष्ट पूछने ही अधिक आते हैं अत; उन्हें पूर्वजन्म कृत पापों के कारण प्राप्त दोषों एवं कष्टों को ही बताना चाहिए। सुखी व्यक्ति कभी दैवज्ञ के पास नहीं आता ॥९८॥

कुण्डल्यां दोषाणां प्रभावकथनम्

निर्याणं विषमामयो निजजनापायो गृहप्लोषणं
स्थानभ्रंशनरेन्द्रकोपजनविद्वेषार्थभूरिव्ययाः ।
चौरार्थापहृतिश्च मानविहतिर्दुष्कीर्तिरिवंविधा
वाच्याः स्युर्विपदो विलोक्य विहगान् भावांश्च दोषप्रदान् ॥ ९९॥

किसी भी कुण्डली में दोषप्रद ग्रहों एवं दोषयुक्त भावों से जो दुष्परिणाम मिलते हैं वे निम्नांकित हैं—

(१) मृत्यु, (२) गंभीर असाध्य रोग (Serious disease), (३) किसी निकटतम व्यक्ति का वियोग या क्षति, (४) गृहप्लोषण (आग लगने या अन्य कारण से आवासीय गृह की हानि होना), (५) स्थानभ्रंश (पदच्युति=Fall from position, or from designation or status), (६) राजकोप (wrath of the rulers), (७) जनविद्वेष (सर्व-साधारण तथा बन्धुजनादि का जातक के प्रति द्वेषभाव रखना), (८) अतिव्यय (धन, सम्पत्ति आदि की फिजूल खर्ची), (९) चोरी-डकैती या धोखाधड़ी से धननाश, (१०) माननाश (समाजिक अवहेलना को झेलना), (११) अपकीर्ति (झूठी बदनामी)—इस प्रकार की विपत्तियाँ एवं कष्ट ग्रहों एवं भावों के दोष से प्राप्त होते हैं ॥९९॥

कुण्डल्यां गुणानां प्रभावकथनम्

आरोग्यं नृपमाननं धनसमायानं सुहृत्सम्भवः
साफल्यं सकलक्रियासु सततं चित्तप्रसादोदयः ।
स्थानप्राप्तिजनानुरागसुयशःसन्तानलाभादयो
वाच्याः स्युः खलु सम्पदोऽभिमतभावोपेतखेटोचिताः ॥ १००॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) आरोग्य—कुण्डली में गुणों के प्रभाव से स्वास्थ्य उत्तम रहता है (Good health) ।

(२) राजसम्मान (Governmental Favours)—शासन पक्ष से अच्छे सम्बन्ध रहते हैं।

(३) धनसमायानम् (Gain of money)—अनेक स्त्रोतों से अनायास ही धनलाभ होता रहता है । उद्योग अच्छा चलता है ।

(४) सुहृत्सम्भवः —सच्चे मित्रों की अधिकता रहती है ।

(५) साफल्यम्—हर काम में सफलता मिलती है ।

(६) चित्तप्रसादः —सदैव चित्त प्रसन्न रहता है तथा मानसिक शान्ति (Mental Peace) बनी रहती है ।

(७) स्थानप्राप्ति—उच्च पदों की प्राप्ति उत्तरोत्तर होती रहती है ।

(८) जनानुराग—जनता में लोकप्रियता (Popularity) प्राप्त होती है और वह स्थायी रहती है ।

(९) सुयश—चारों तरफ उत्तम कीर्ति का प्रसार होता है ।

(१०) सन्तानलाभ—पुत्र तथा पुत्रियों का जन्म होता है, वे सद्गुणी होते हैं तथा पिता को सुखी करते हैं ।

ये सब कुण्डली में ग्रहों के गुणों से प्राप्त होता है । उनकी अनुकूल स्थिति के कारण होता है ॥१००॥

कर्मफलभेदाः

दृढादृढक्रियाप्तत्वाच्छुभाशुभफलं द्विधा ।
मनोवाक्कर्मजं तच्च त्रिविधं तद्भिदोच्यते॥ १०१॥

कर्म के दो भेद होते हैं—(१) दृढ तथा (२) अदृढ तथा (१) शुभ, (२) अशुभ। फिर (क) मनोकर्म, (ख) वाक्कर्म तथा (ग) कायकर्म इस प्रकार तीन भेद होते हैं ॥१०१॥

जो कर्म दृढता से फल देते हैं वे दृढ कर्म कहलाते हैं; जो अदृढ होते हैं जिनकी जड़ें गहरी नहीं होतीं उन्हें अदृढ कहते हैं ।

शुभकर्मों से शुभ फल की प्राप्ति तथा अशुभ एवं पाप कर्मों से कष्टों की प्राप्ति होती है ।

(क) मनोकर्म—मन में चलने वाले विचार ही मनोकर्म कहलाते हैं । मन में यदि अच्छे विचार चलते हैं तो उससे अच्छे मनोकर्म होते हैं । यदि मन में बुरे विचार चलते हैं तो अशुभ मनोकर्म हो सकते हैं । मनोकर्म शुभ हो या अशुभ यह या तो दृढ होगा या फिर अदृढ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(ख) वाक्कर्म—वाणी से दुर्वचन कहना, निन्दा करना, किसी को शाप देना, दोषारोपण तथा चुगली करना ये वाणी द्वारा होने वाले अशुभ कर्म हैं। इसी प्रकार दूसरों से प्रिय एवं हितकर वचन बोलना, अच्छे उपदेश करना, अपनी वाणी से दुःख में सान्त्वना देगा, कोमल वाणी से दूसरों के मन में शान्ति पहुँचाना ये वाणी के शुभ कर्म हैं।

ये भी दृढ तथा अदृढ किसी भी प्रकार के हो सकते हैं।

(ग) कायकर्म—शरीर से होने वाले अच्छे-बुरे कर्म ही कायकर्म कहलाते हैं। दूसरों की हिंसा अशुभ कायकर्म है तथा दूसरों की सेवा-सुश्रूषा, अन्नदान, औषधिदान, विद्यादान आदि शुभ कायकर्म हैं। ये भी या तो दृढ होंगे या अदृढ़।

इस प्रकार इस श्लोक में कर्म सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है।

चत्वारि कारणानि

छत्रारूढेन्दुलग्नव्ययरिपुमृतिगाः सद्ग्रहाः पापखेटा-
स्तेषां केन्द्रत्रिकोणेष्वपि यदि कथयेद्दुष्कृतं सम्प्रवृद्धम्।
कोपाद्देवस्य शापात्सितिविबुधभवाद्विद्विषां चाभिचारा-
ल्लोकाक्रोशाच्च तस्यादृढमपि दृढं चेति वेद्यं द्विधैतत्॥१०२॥

किसी भी पृच्छक के दृढ़-अदृढ़ अशुभ कर्मों के फल का संकेत छत्रलग्न, लग्न, आरूढलग्न तथा चन्द्रलग्न से; व्यय, षष्ठ तथा अष्टम भाव में बैठे शुभ ग्रहों से तथा पाप ग्रहों के केन्द्र या त्रिकोण भाव में बैठने से मिलता है। इस ग्रहस्थिति में पापकर्मजन्य फल की प्राप्ति होती है।

यह पापकर्मजन्य अशुभ फल उक्त योगों में क्रमशः (१) देवप्रकोप, (२) ब्राह्मणों का शाप, (३) शत्रु द्वारा अभिचार प्रयोग तथा (४) जनाक्रोश से होता है। इस अशुभ फल के दृढ़ तथा अदृढ़ ये दो भेद हैं॥१०२॥

दृढादृढसूचका ग्रहयोगाः

चेतोवाक्कर्मजं तद्द्विविधमपि विधोस्तत्र होरादिवर्गे
तिष्ठन् खेटः प्रदद्यात् दृढफलमदृढं भास्वतो गोचरस्थे।
खेटे पुण्यस्य पाकः पुनरितरगते कर्मणोऽन्यस्य वेद्य-
श्चित्ताद्ये तत्त्रिके यद्विबलखरयुतं तेन दोषानुभूतिः॥१०३॥

चेतो (मानसिक), वाक्कर्मज (वाचिक तथा शारीरिक) इस प्रकार के तीनों प्रकार के कर्मफल भी दृढ तथा अदृढ भेद से दो-दो प्रकार के होते हैं। जो फलदायक ग्रह बली होकर गोचरभ्रमण काल में चन्द्रमा के होरादि वर्ग (होरा, द्रेष्काण, सप्तमांश, नवांश, नवमांश, द्वादशांश आदि) में हो तो स्थायी तथा सुनिश्चित (दृढ) फल प्राप्त होता है। यदि वह

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

फलप्रदाता ग्रह सूर्य के षड्वर्ग में हो तो अनिश्चित (अदृढ) फल गोचर भ्रमण के समय देता है ।

जब फलदाता ग्रह सूर्य-चन्द्रमा के अतिरिक्त अन्य ग्रहों के षड्वर्ग में हो तब वह फल न दृढ होता हैं और न अदृढ़ अपितु अन्यों द्वारा दिया गया होता है । मानसिक (चैतसिक = चित्तजन्य) कर्मों का सूचक पंचम भाव होता है । वाक्कर्म का सूचक द्वितीय भाव होता है तथा कायकर्म का सूचक दशम भाव होता है । इन्हीं को चित्तादि तीन भाव कहा है । इन तीनों स्थानों में निर्बल पाप ग्रह बैठे हों तो पृच्छक या जातक को अपने दुष्कर्म की अनुभूति अवश्य होती है । यदि पंचम भाव पापयुक्त हो तो मानसिक पापकर्म के कारण, द्वितीय भाव पापयुक्त होने पर वाचिक पापकर्म से तथा दशम भाव में पाप ग्रह हो तो शारीरिक (कायिक) दुष्कर्म से अशुभ फल की अनुभूति होती है ।।१०३।।

पुनश्च त्रिविधदोषसूचका योगाः

चित्ते वाचि च कर्मणि त्रिषु खरोपेतेषु तैश्च त्रिभि-
र्जायन्ते दुरितानि कर्म सशुभं सासच्च चेतो वचः ।
यद्यत्र क्रियमाणकर्मसु मनः खेदाद्गिरानिष्टया
पापश्चेतसि वाक्च खं च शुभयुक्चेत्कर्म चाश्रद्धया ।। १०४।।
तद्दोषस्तनपापदेऽधिकतरः पापःपरं वाचि चेत्;
सौम्याः कर्मणि मानसे च दुरितं वाग्दोषतो जायते ।
तद्दोषोऽधिकमर्थहाथ रिपुनीचर्क्षे च मौढ्ये खरा-
स्तुङ्गस्वर्क्षसुहृद्ग्रहेष्वपि शुभा दोषे गुणे चाधिकाः ।। १०५।।

यदि पञ्चम भाव, द्वितीय भाव तथा दशम भाव इन तीनों में पाप ग्रह अधिष्ठित हों तो तीनों प्रकार के दुष्कर्मो के कारण कुण्डली में दोष होता है । यदि केवल पञ्चम तथा द्वितीय भावों में ही पाप ग्रह अवस्थित हों तथा दशम भाव में शुभ ग्रह विराजमान हों तो बिना मन के अनिच्छापूर्वक ही पाप कर्म किया गया है तथा केवल वाणी से ही दुष्कर्म हुआ है । यदि केवल पंचम भाव में पाप ग्रह हों तथा शेष द्वितीय एवं दशम में शुभग्रह हों तब अश्रद्धा एवं अरुचि के साथ पापकर्म हुआ है ऐसा जानना चाहिए ।।१०४।।

इस प्रकार का पापफल पुत्र या संतति को अधिक कष्ट देता है । यदि पाप ग्रह द्वितीय में तथा शुभ ग्रह पंचम भाव एवं दशम भाव में बैठे हैं तो वाग्दोष (वाणी के दोष) से दुष्कर्म बनता है, जिसके कारण पापफल उत्पन्न होता है । इस दोष के कारण अधिकाधिक धन की हानि होती है ।

जब पाप ग्रह अस्तङ्गत, नीचराशिगत तथा शत्रुराशिगत होता है तो अधिक दोषप्रद होता है परन्तु जब शुभ ग्रह उच्चराशि, स्वराशि तथा मित्रराशि (अधिमित्र) में होता है तो अत्यधिक शुभ फल देता है ।।१०५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ पित्रादिविषयं बन्धनादिकं किञ्चिल्लिख्यन्ते

सूर्यात्सप्तमधर्मधीष्वशुभभे पापौ पितुर्बन्धदौ;
कार्यादावृणतश्च बन्धनमिनप्राबल्यदौर्बल्यतः ।
सूर्यस्थर्कवशाच्च दूरसविधाद्यूह्यं नवांशैरपि;
स्याद्योगोऽयमिदं स्वकारकवशाद्योज्यं सुतादिष्वपि ।। १०६।।

यदि सूर्यकुण्डली में सूर्य से सातवें, नवें तथा पाँचवें भावों में पाप ग्रहों की राशि (मेष, वृश्चिम, मकर, कुंभ) हो तथा उनमें दो पापग्रह ही बैठे हों तो पृच्छक या जातक के पिता के बन्धन (कारावास आदि) के सूचक होते हैं । ग्रहों की प्रबलता से अपने किये दुष्कर्मों से बन्धन मिलता है । जब ग्रह निर्बल हों तो बन्धन का कारण ऋण न चुका पाने के कारण होता है ।

जिस राशि में सूर्य बैठा हो उसके अनुसार बन्धन निवासस्थान के समीप या दूर होगा इसका अनुमान करना चाहिए । यह राशि पर निर्भर करता है । इसी प्रकार सूर्य के नवांश से भी बन्धन का विचार दूर या निकट करना चाहिए । इसी प्रकार पुत्र, माता, भ्रातादि के बन्धन का विचार उनके कारण ग्रहों की स्थित राशि को लग्न मान कर किया जाना चाहिए । जैसे चन्द्रमा से माता के बन्धन का, मंगल के द्वारा अधिष्ठित राशि से भाई का, गुरु के द्वारा अधिष्ठित राशि को लग्न मानकर पुत्रादि के बन्धन का विचार करें ।।१०६।।

यदि सूर्य चर राशि में हो तो बन्धन योग होने पर पिता का बन्धन घर से बहुत दूर, स्थिर राशि में समीप तथा द्विस्वभाव में मार्ग में होता है ।

लग्नतः प्रष्टुर्बन्धनकथनम्

कृत्वा लग्नं रवेः स्थाने प्रष्टुर्बन्धोऽत्र कथ्यताम् ।
लग्ने चरस्थिरद्वन्द्वे बन्धो दूरान्तिकाध्वसु।। १०७।।

जिस प्रकार सूर्य से पिता के बन्धन का विचार किया है ठीक इसी प्रकार लग्न से पृच्छक के स्वयं के बन्धन का विचार करें । यदि लग्न से सप्तम, नवम तथा पञ्चम भावों में पाप ग्रहों की राशियों में दो पाप ग्रह विराजमान हों तो जातक को स्वयं ही बन्धन भोगना पड़ता है । यदि लग्न चर राशि में हो तो बन्धन दूरवर्ती स्थान में होता है । यदि लग्न स्थिर राशि में हो तो घर के समीप ही बन्धन होता है । यदि द्विस्वभाव राशि लग्न की राशि हो तो बन्धन मार्ग में होता है ।।१०७।।

वराहोक्तिकथनम्

वराहमिहिरेणापि स्वहोरायां समीरितम् ।
लक्षणं बन्धनस्याथ तदप्यत्र विलिख्यते ।। १०८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आचार्य वराहमिहिर ने भी अपने होराशास्त्र में बन्धन के योगों को बताया है अतः उसे भी यहाँ बताया जा रहा है ॥१०८॥

वराहोक्तबन्धनयोगाः

व्ययधनसुतधर्मगैरसौम्यैर्भवनसमाननिबन्धना विकल्प्या ।
भुजगनिगडपाशभृद्दृगाणैर्बलवदसौम्यनिरीक्षितैश्च तद्वत् ॥ १०९॥
वेश्याहेतुर्ऋणेन वा व्ययगते पापे धनस्थे पुन-
र्बन्धो राजकृतोऽथ दूषणवशात्पुत्रस्थिते कथ्यताम् ।
तद्धेतुर्नवमस्थिते पितृनिमित्तोऽयं यथा बध्यते;
मेषादिः खलु लग्नगो भुवि तथा पाशादिभिः पृच्छकः ॥ ११०॥

यदि पाप ग्रह व्यय (१२), धन (२), सुत (५) तथा धर्म (९) भावों (दो-दो) में पाप ग्रह होने से भावों में स्थित राशि के अनुसार बन्धन जानना चाहिए । (मेष एवं वृष राशियाँ पशु= चतुष्पद राशियाँ हैं अतः इनमें रस्सी = पाश से बन्धन होता है । मिथुन में हथकड़ी से, कर्क राशि में कोठरी में बन्द करते हैं । सिंह में निर्जन स्थान या जंगल में या कठघरे में बन्धन होता है । इस प्रकार राशि के वासस्थान एवं स्वरूप के अनुसार बन्धन का प्रकार कहना चाहिए ।

द्रेष्काण के स्वरूप के अनुसार भी बन्धन कहना चाहिए । यदि सर्प द्रेष्काण, निगड़ द्रेष्काण या पाशभृत् द्रेष्काण हों तो भी बन्धन इनके स्वरूप के अनुरूप ही होता है । इन द्रेष्काणों पर बली पाप ग्रहों की दृष्टि होना आवश्यक है । यदि इन २-१२-९-५ स्थानों में पापग्रह सम संख्या में हों तब ही बन्धन होता है अन्यथा नहीं ॥१०९॥

यदि बारहवें भाव में पाप ग्रह हों तो वेश्या के लिए ऋण लिया जाता है जिसको न चुका पाने के कारण ही बन्धन प्राप्त होता है । यदि द्वितीय भाव में पाप ग्रह हों तो सरकारी कानून के उल्लंघन के कारण बन्धन होता है । यदि पञ्चम स्थान में पाप ग्रह बैठे हों तो पुत्र के कारण बन्धन में पड़ना पड़ता है अथवा पुत्र ही पिता को बन्धन में रखता है । लग्न में स्थित मेषादि राशियों के अनुसार पृच्छक को पाशादि से बन्धन में रखा जाता है ॥११०॥

कृष्णीयमतेन बन्धनयोगाः

सौरद्रेक्काणे वा भुजङ्गपरिवेष्टितेऽथवा लग्ने ।
शशिसौराभ्यां दृष्टे बन्धनमिह वाच्यमादेशे॥ १११॥

यदि लग्न शनि के द्रेष्काण (मकर-कुंभ द्रेष्काण) में अथवा सर्प द्रेष्काण में हो अथवा लग्न शनि तथा चन्द्र से दृष्ट हो तो इन योगों में किसी के होने पर पृच्छक को बन्धन होता है ॥१११॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनश्च बन्धनयोगकथनम्

पापक्षेत्रेषु यमे त्रिकोणचतुरस्त्रसप्तमेषु गते ।
क्रूरैर्निरीक्ष्यमाणे बन्धोऽस्तीत्यादिशेत् क्षिप्रम् ॥ ११२॥

यदि कुण्डली में शनि पाप ग्रह की राशियों में त्रिकोण, चतुरस्त्र या सप्तम भाव में से किसी में भी स्थित हो तथा पाप ग्रहों से दृष्ट हो तो भी बन्धन होता है ॥११२॥

शनिराशिवशात् बन्धनकथनम्

अचिरेण चरे मोक्षः स्थिरभे मोक्षस्तु दीर्घकालेन ।
द्विशरीरगते सौरे मध्यमकालेन मोक्षः स्यात् ॥ ११३॥

यदि शनि चर (मेष-कर्क-तुला तथा मकर) राशियों में हो तो शीघ्र ही बन्धन से मुक्ति होती है । यदि शनि स्थिर (वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ) राशियों में हो तो देर में बन्धन से छूटता है । द्विस्वभाव राशियों का शनि अर्थात् मिथुन, कन्या, धनु तथा मीन में हो तो मध्य समय (न देर से न जल्दी ही) बन्धन से छूट जाता है ॥११३॥

कृष्णाचार्यमतेन शुभखेटानां फलम्

असतामशुभफलानां भेदः प्रोक्तस्तथैव सौम्यानाम् ।
भेदाऽभीष्टफलानामपि कृष्णीये विलिख्यते सोऽपि॥ ११४॥

जिस प्रकार से कृष्णाचार्य के ग्रन्थ में असद्ग्रहों का फल लिखा है उसी प्रकार उसमें शुभ ग्रहों का फल भी लिखा गया है; उसे भी आगे लिखते हैं । यथा—॥११४॥

शुभाशुभफलम्

भौमो रोगं कुरुते भोगं शुक्रस्त्वरोगतां सौम्यः ।
सौरो मरणं दिनकृन्नाशं चिरजीवनं जीवः ॥ ११५॥

उनके मत से मंगल रोगोत्पन्न करता है । शुक्र कामोपभोग तथा विलासिता देता है । बुध नीरोगता प्रदान करता है । शनि मृत्यु तथा मृत्युतुल्य कष्ट देता है । सूर्य बर्बादी कर देता है तथा गुरु दीर्घ जीवन देता है ॥११५॥

मृत्युकरा योगाः

द्यूनस्थौ कुजभानुजौ खलु रुजे स्यातां तयोः कस्यचिद्
योगोऽन्यस्य मदस्थितश्च मृतये रिःफोऽर्थसंस्थौ च तौ ।
पापाः स्युश्चतुरस्त्रगाश्च मृतिदाः प्राक्तं त्विदं चिन्तनं
भावानां तदधीशकारकविहङ्गानां त्रयाणामपि ॥ ११६॥

यदि रोगप्रश्न के समय प्रश्नकुण्डली में मंगल तथा शनि दोनों ही सप्तम भाव में बैठे हों या उन दोनों में से एक लग्न तथा दूसरा सप्तम भाव में हों अथवा मंगल एवं शनि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ये दोनों ही व्ययभाव में हों तो या दोनों ही द्वितीय भाव में हों तो पृच्छक या सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु होती है ।

इसी प्रकार लग्न तथा ४-८ भावों में बैठे पाप ग्रह पृच्छकादि को मृत्युदायक होते हैं । सप्तमादि भाव, सप्तमेशादि भावेश तथा उन भावों के कारण इन तीनों से भी पत्नी या पति आदि की मृत्यु जानना चाहिए ।

भाव, भावेश तथा भावकारक तीनों से ही विचार करना चाहिए ॥११६॥

कलहयोगाः

चन्द्रे पापयुतेऽथवा भृगुसुते कामेऽथवा वेश्मनि
स्त्रीभिः स्यात्कलहोऽथ बन्धुकलहः पापे भवेद् बन्धुगे ।
मातृक्लेशकरोऽशुभोऽस्तसुखगः सोम्येऽस्तगे बन्धुगः
पापश्चेदबलावशात् स्वजननीं प्रष्टाधिकं पीडयेत् ॥ ११७॥

(१) यदि चन्द्रमा अथवा शुक्र सप्तम अथवा चतुर्थ भाव में पाप ग्रहों के साथ बैठें तो स्त्री से कलह होता है ।

(२) यदि पाप ग्रह चतुर्थ में हों तो बन्धु-बान्धवों-मित्रों से कलह होता है ।

(३) सप्तम एवं चतुर्थ में स्थित पाप ग्रह माता के लिए क्लेशकारक होते हैं ।

(४) यदि बुध सप्तम भाव में बैठा हो तथा कोई पाप ग्रह चतुर्थ में हो तो पत्नी के बहकावे में आकर जातक अथवा पृच्छक अपनी माता को क्लेश देता है ॥११७॥

प्रष्टुर्वासस्थानज्ञानम्

विद्याद्दृश्यार्धमास्थानमदृश्यं विजनस्थलम् ।
लग्नाधिपः स्थितो यत्र तद्वासी पृच्छको भवेत् ॥ ११८॥

कुण्डली में दृश्यार्ध (सप्तमस्पष्ट से लग्नस्पष्ट तक) का भाग नगर या बड़ी बस्ती का प्रतिनिधित्व करता है तथा अदृश्यार्ध (लग्नस्पष्ट से सप्तमस्पष्ट तक) निर्जन स्थान या स्वल्प जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता है । प्रश्नलग्न का स्वामी यदि दृश्यार्ध में बैठा हो तो प्राश्निक नगर या जनसंमर्द वाले स्थान में निवास करता है । यदि प्रश्नलग्नेश या जन्मलग्नेश अदृश्य चक्रार्ध में बैठा हो तो प्रष्टा किसी छोटे ग्राम या अप्रसिद्ध निर्जन स्थान में रहता है । यह बताना चाहिए ॥११८॥

भावेशतः अन्यभावानां फलकथनम्

एवं धनादिभावानां स्पष्टताञ्च निगूढताम् ।
विद्यादीशैः प्रकाशत्वमपि सूर्येन्दुयोगतः ॥ ११९॥

जिस प्रकार से लग्नेश से पृच्छक के निवासस्थान का एवं अन्य गूढ तथ्यों का विचार करते हैं, इसी प्रकार द्वितीय-तृतीयादि भावों के स्वामियों से भी अन्य विषयों का विचार करना चाहिए ॥११९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सप्तमेशस्य उदाहरणम्

अदृश्यार्धस्थितेऽस्तेशे प्रष्टः स्याद्गूढकामता ।
स्पष्टकामो भवेत्प्रष्टा द्यूनेशे दृश्यभागगे ॥१२०॥

उदाहरण के लिए यदि सप्तमेश अदृश्य चक्रार्ध में बैठा हो तो प्रष्टा का प्रणय-व्यापार, प्रेमसम्बन्ध, व्यभिचार तथा रतिक्रीडा गुप्त रहते हैं । परन्तु यदि सप्तमेश दृश्य चक्रार्ध में हो तो रतिसम्बन्ध प्रकट (उजागर) होते हैं ॥१२०॥

चक्रार्धविभाजन

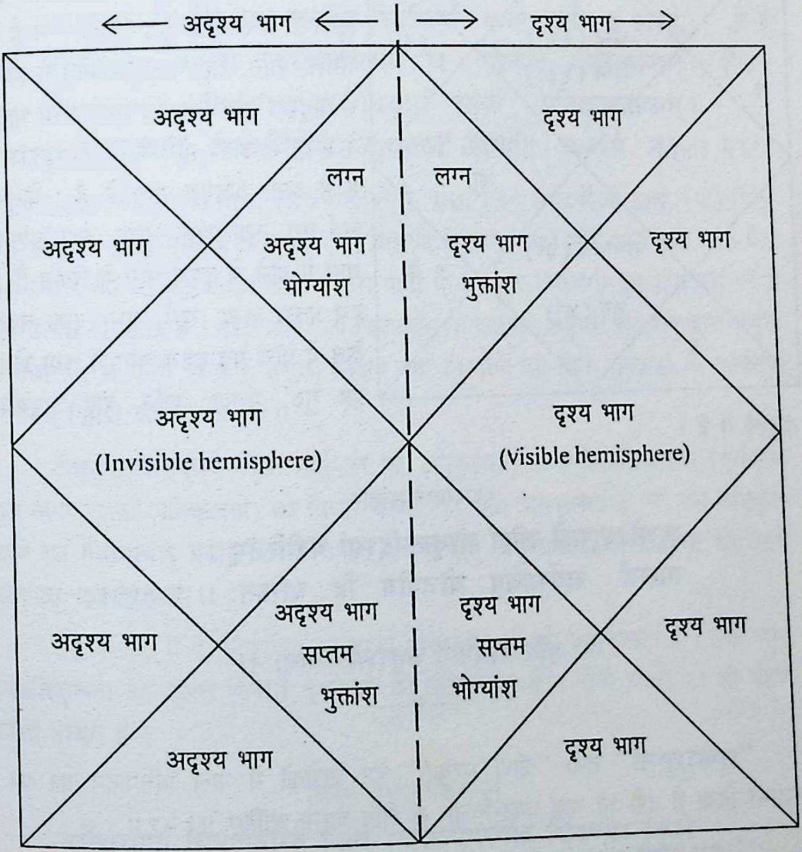

जो भावेश दृश्य चक्रार्ध में होता है उसका भावफल स्पष्ट होता है । अदृश्य चक्रार्ध में स्थित भावेश का फल अस्पष्ट होता है, उसका फल प्रकट न होकर गुप्त होता है । इसके साथ ही श्लोक ८५ में वर्णित यह सिद्धान्त भी ध्यान में रखें कि जो भावेश दृश्यार्ध में स्थित होता है उसका फल भी शीघ्र प्राप्त होता है तथा अदृश्य चक्रार्ध में भावेश की स्थिति होने पर उस भाव का फल विलम्ब से तथा शनैः-शनैः प्राप्त होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्न के भुक्तांशों में यदि कोई ग्रह हो तो वह दृश्य चक्रार्ध में होता है तथा लग्न स्पष्ट के बाद के अधिक अंशों में यदि कोई ग्रह हो तो वह अदृश्य भाग में होगा। सप्तम भाव का त्रिभाजन इसके विपरीत है, उसके भोग्यांशों में स्थित ग्रह दृश्य चक्रार्ध में तथा भुक्तांशों में स्थित ग्रह अदृश्य चक्रार्ध में होगा।

उदाहरण कुण्डली

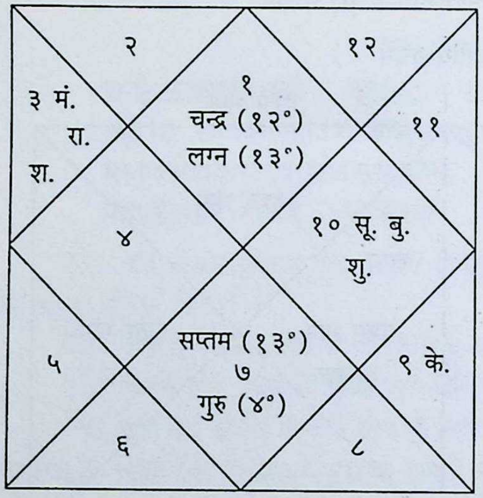

इस उदाहरण कुण्डली में चन्द्रमा लग्नस्पष्ट से एक अंश अधिक होने से भुक्तांशों में है अतः दृश्य चक्रार्ध में है। मंगल, शनि, राहु ये तृतीय भाव में होने से अदृश्य चक्रार्ध में हैं। गुरु सप्तम भाव के स्पष्ट से अल्प होने से उसके भुक्तांशों में है अतः अदृश्य भाग में है। केतु-सूर्य-बुध तथा शुक्र नवम तथा दशम भाव में होने से दृश्य भाग में स्थित हैं। इस प्रकार चन्द्र, सूर्य, बुध, शुक्र तथा केतु ये पाँच ग्रह दृश्य भाग में तथा शेष ग्रह गुरु, मंगल, शनि, राहु अदृश्य चक्रार्ध में हैं।

अध्यायोपसंहारः

शुभोऽशुभर्क्षे जीर्णं संस्कृतादिभ्यां यदीरितम्।
तत्सर्वं सर्वभावेषु योजनीयं हि युक्तितः ॥ १२१॥

॥ इति प्रश्नमार्गे चतुर्दशोऽध्यायः ॥

—*—

"शुभोऽशुभर्क्षे" तथा "जीर्णं संस्कृत" इन श्लोकों में फल प्रतिपादन का जो सिद्धान्त दिया है उसे भी यहाँ फल-विचार में लागू करना चाहिए ॥१२१॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड़ कृत "पाथेय" हिन्दी टीका का चौदहवाँ अध्याय समाप्त हुआ ॥१४॥

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ पञ्चदशोऽध्यायः

अथ दैवानुकूल्यादि निरूप्यते

देवैर्वा धर्मदेवैः फणिपितृगुरुभिर्ब्राह्मणैः प्रेतभूतैः;
पीडा या स्यात्कृता सा तदनु भवति या दृग्भवा वाग्भवा वा।
या स्यात्भूयो विषोत्था पुनरिह रिपुभिर्या कृता सा च तासां,
हेतुश्चापि क्रमेण प्रतिविधिरपि च प्रोच्यते पृच्छकानाम्।। १।।
दैवानुकूल्यं प्रतिकूलतां वा विचार्य सत्यां प्रतिकूलतायाम्।
तदानुकूल्याय विधिर्विधेयो यतस्ततः सम्प्रति कथ्यते तत्।। २।।

(१) देवताओं के द्वारा, (२) धर्मदेवों के द्वारा, (३) सर्पदेवों के द्वारा, (४) पितृ-देवों के द्वारा, (५) गुरुदेवों के द्वारा, (६) ब्राह्मणों के द्वारा, (७) भूतों द्वारा तथा (८) प्रेतों द्वारा व्यक्ति को जो कष्ट दिया जाता है उस पीड़ा के उपरान्त व्यक्ति में दृष्ट दोष एवं वाणी दोष उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार जो विषप्रयोग के कारण, शत्रुभय से, शत्रु द्वारा प्रयुक्त अभिचारादि से पीड़ा होती है उसका निदान तथा निवारण की विधि पृच्छकों के कल्याण के लिए लिखी जा रही है ।।१।।

दैवानुकूल्य (पूर्वजन्मकृत कर्मफल की अनुकूलता) तथा दैवप्रतिकूलता (पूर्वजन्म कृत कर्मफल की प्रतिकूलता) का विचार करके फिर यदि प्रतिकूलता हो तो उसे अनुकूल करने का विधिपूर्वक प्रयास करना चाहिए। इसी हेतु अनुष्ठानादि की विधियों को आगे कहा जा रहा है ।।२।।

इस श्लोक में दैवानुकूलता का दूसरा भाव देवताओं की अनुकूलता है। इसी तरह दैवप्रतिकूलता का दूसरा भावार्थ देवताओं की प्रतिकूलता है। दोनों भावों को ही ग्रहण करना उचित है।

धिषणानुकूलताकथनम्

सर्वेश्वराणां धिषणेऽस्ति नित्यं सान्निध्यमस्माद् धिषणोऽनुकूले ।
प्रायोऽनुकूलाःसकलाश्च देवास्तत्प्रातिकूल्ये सति नानुकूलाः ।। ३।।

इस श्लोक से चार अर्थ प्रकट हो रहे हैं और वे चारों ही प्रासंगिक हैं।

(१) प्रत्येक नक्षत्र के देवता होते हैं; जैसे अश्विनी के अश्विनीकुमार, भरणी के यम, कृत्तिका के अग्नि इत्यादि। ये देवता एवं नक्षत्र अभिन्न हैं अतः नवतारा विचार के अनुसार ३-५-७ ताराओं के स्वामी देवता जातक के लिए प्रतिकूल रहते हैं तथा शेष अनुकूल रहते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हैं। "धिषणम्" का अर्थ निवास है। देवता अपने नक्षत्रों में निवास करते हैं। अतः जन्म-सम्पत्-विपत् आदि के अनुसार दैवानुकूल्य का विचार करना चाहिए।

(२) "धिषणः" का अर्थ बृहस्पति होता है अतः दूसरा अर्थ है कि यदि कुण्डली में गुरु बली, शुभ तथा अनुकूल हो तो सभी ग्रह अनुकूल रहते हैं तथा सभी देवता भी अनुकूल रहते हैं। यदि कुण्डली में बृहस्पति प्रतिकूल होंगे तो सभी ग्रह या देवता भी अनुकूल फल देने में कमजोर पड़ेंगे। श्लोक ६ देखें।

(३) "धिषणा" का अर्थ बुद्धि होता है अतः "धिषणेनुकूले" का अर्थ बुद्धि के अनुकूल होने से है जिस जातक की बुद्धि अनुकूल (शुद्ध=सही) या अविकृत रहती है उसके लिए भाग्य भी अनुकूल रहता है क्योंकि महाभारत में कहा है—

"न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत्।
यं ते रक्षितुमिच्छन्ति बुद्ध्या संविभजन्ति तम्"॥

अर्थात् देवता डण्डा लेकर चरवाहे की भाँति व्यक्ति की रक्षा नहीं करते अपितु जिसे वे रक्षित करना चाहते हैं उसे उत्तम बुद्धि से युक्त कर देते हैं। गीता में भी भगवान् कहते हैं—"बुद्धिनाशात्प्रणश्यति" अर्थात् बुद्धिनाश होने पर व्यक्ति भी नष्ट हो जाता है। अतः जिसकी बुद्धि सही हो उसके लिए देव तथा दैव दोनों ही अनुकूल रहते हैं।

(४) "धिषणा" का अर्थ पृथ्वी भी होता है अतः जो व्यक्ति पृथ्वी का सम्मान करते हुए अपने आचरण से प्रदूषण नहीं फैलाता है तथा "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः" की धारणा अपने अन्तःकरण में रखता है उसके लिए सभी देवता अनुकूल रहते हैं। कुण्डली में पृथ्वी का प्रतिनिधि उदयलग्न होता है अतः इसका तात्पर्य यह भी है कि यदि लग्न बलवान् तथा शुभ है तो जातक या पृच्छक के लिए सभी देवता अनुकूल ही रहेंगे।

"धिषणः" शब्द संस्कृत की "धृ" धातु में 'क्यु' प्रत्यय तथा "धिष्" आदेश होने से बना है। यह शब्द पुल्लिंग है तथा इसका अर्थ गुरु या बृहस्पति है। नपुंसकलिंग में इसका रूप "धिषणम्" हो जाता है जिसका अर्थ निवास या आवास होता है। स्त्रीलिंग में इसका रूप "धिषणा" होता है जिसका अर्थ बुद्धि, वाणी, वक्तृता, स्तुति तथा पृथ्वी होता है।

ग्रहाणां देवरूपता (सूर्यचन्द्रयोः)

अर्कः शम्भुरुदाहृतोऽखिलगृहेष्वर्को यदि द्वन्द्वभे
द्रेक्काणे प्रथमे गृहोऽत्र कथितो विघ्नेश्वरो मध्यमे।
दुर्गा शीतकरो बली स विबलः काली स एवाबल-
श्चामुण्डीप्रमुखास्तमोगुणजुषो भौमालयस्थो यदि॥ ४॥

सूर्य द्विस्वभाव राशियों के प्रथम द्रेष्काण में गुह (इन्हें स्वामी कार्तिकेय, स्कन्द, षडानन, कुमार तथा सुब्रह्मण्य आदि भी कहते हैं) का रूप होता है। द्विस्वभाव राशियों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

के दूसरे द्रेष्काण में विघ्नेश्वर (गणेश) का रूप होता है । द्विस्वभाव राशियों के तीसरे द्रेष्काण तथा अन्य सभी राशियों के सम्पूर्ण भागों में सूर्य भगवान् शिव का प्रतिनिधित्व करते हैं ।

अब चन्द्रमा का देवत्व कहते हैं; बली चन्द्रमा दुर्गा का स्वरूप होता है । निर्बल चन्द्रमा काली का तथा मंगल की राशि में स्थित निर्बल चन्द्रमा चामुण्डा का स्वरूप या प्रतिनिधि होता है । तब यह तमोगुणयुक्त होता है ॥४॥

भौमस्य देवत्वम्

कुमारो भैरवादिर्वा स्वाश्रितर्क्षवशात्कुजः ।
चामुण्डीभद्रकाल्याद्याः स चेद् युग्मसमाश्रितः ।। ५।।

मंगल ग्रह कुण्डली में जिस प्रकार की राशि में बैठा होता है तदनुसार वह प्रतिनिधित्व प्रदर्शित करता है । जब वह विषम सात्त्विक राशियों (सिंह, धनु) में होता है तब कुमार (स्कन्द) का स्वरूप होता है । शेष सम राशियों में भैरव, चन्द्रकेश आदि का प्रतिनिधित्व करता है । देवता का उग्र तथा शान्त स्वभाव उसके द्वारा अधिष्ठित राशि की सत्त्वादि प्रकृति पर निर्भर करता है ॥५॥

(१) सात्त्विक राशियाँ—कर्क, सिंह, धन, मीन ये सात्त्विक स्वभाव हैं ।

(२) राजस राशियाँ—वृष, मिथुन, कन्या तथा तुला ये राजसिक हैं ।

(३) मेष, वृश्चिक (मंगल की राशियाँ) तथा मकर, कुंभ (शनि की राशियाँ) ये तमोगुणी या तामसिक राशियाँ हैं । इस प्रकार सूर्य-चन्द्र-गुरु की राशियाँ सात्त्विक, बुध-शुक्र की राशियाँ राजसिक तथा शनि-मंगल की तामसिक होती हैं ।

बुधजीवयोर्देवत्वम्

श्रीरामाद्यवतारविष्णुरितरक्षेत्रेषु चन्द्रात्मजो-
ऽप्यन्त्यत्र्यंशगतः स्थिरे तु भवने यद्येष गोपालकः।
त्र्यंशेऽन्यत्र स विष्णुरेव हि पुनर्जीवो महाविष्णुर-
प्युक्तोऽयं ह्यखिलेश्वरोऽत्र तु भिदा ज्ञेया ग्रहर्क्षान्वयात्।। ६।।

बुध चर एवं द्विस्वभाव राशियों में भगवान् विष्णु के अवतारों का प्रतिनिधि होता है । यदि बुध स्थिर राशि के अन्तिम द्रेष्काण हो तो वह गोपालकृष्ण होता है । स्थिर के अन्य द्रेष्काणों (प्रथम तथा द्वितीय) में होता है तो वह केवल विष्णु का ही प्रतीक होता है ।

गुरु को महाविष्णु कल्पित किया गया है । महाविष्णु के भेदों की कल्पना बृहस्पति की राशिस्थिति एवं ग्रहसंयोग के अनुसार करनी चाहिए । बृहस्पति अखिलेश्वर है ॥६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विवक्षा—श्लोक ३ में 'धिषणः' का मुख्यार्थ बृहस्पति ही ग्रहण करना समीचीन है, क्योंकि इस श्लोक में उसे 'अखिलेश्वर' कहा गया है जिससे सिद्ध है कि वह सभी देवों में श्रेष्ठ है, कुण्डली में उसकी अनुकूलता से सभी ग्रहों एवं देवताओं की अनुकूलता रहेगी।

भृगुमन्दयोर्देवत्वम्

अन्नपूर्णेश्वरी लक्ष्मीर्यक्षी वा भृगुनन्दनः।
मन्दः शास्त्रादिकं दैवं राहुः सर्वगणः स्मृतः।। ७।।

शुक्र ग्रह अन्नपूर्णा देवी का प्रतीक है (जिनकी कृपा से अन्नादि का भण्डार भरा रहता है), जब वह सात्त्विक ग्रहों (सूर्य-चन्द्र-गुरु) की राशि में हो तभी वह अन्नपूर्णेश्वरी (अन्नपूर्णा) का प्रतिनिधित्व करता है। जब वह राजस ग्रहों (बुध-शुक्र) की राशियों में होता है तब लक्ष्मी का प्रतीक हो जाता है। परन्तु जब वही भृगुनन्दन (शुक्रग्रह) तामसी ग्रहों (मंगल एवं शनि) की राशियों में बैठा हो तब वह यक्षिणी आदि का प्रतीक होता है।

शनि शास्त्रों को धारण करने वाला देवता है। राहु नागदेवता तथा नागजाति के देवों (सर्प, शेषनाग, काद्रवेय आदि) का प्रतीक होता है ।।७।।

ग्रहाणां बाधकस्थानादिजन्यपीडाकथनम्

बाधकाधीश्वरास्सन्तो यदि सूर्यादिखेचराः।
देवतानां निजोक्तानां पीडां ब्रूयुरनिष्टगाः।। ८।।

जब सूर्यादि ग्रह बाधक स्थानों के अधिपति होकर अनिष्ट स्थानों में बैठें तो उनके देवताओं के द्वारा पीडा पैदा होती है ।।८।।

ग्रहों के बाधक स्थान एवं राशियाँ इसी अध्याय में आगे श्लोक ११० तथा १११ में कहे गये हैं। सामान्यतः ग्रहों के लिए ६-८-१२ स्थान अनिष्टकर होते हैं। शुभ ग्रह को तीसरे भाव में भी कुछ आचार्यों ने अनिष्टप्रद माना है।

देवपीडाप्रतिकारकारादिकथनम्

कोपस्य कारणं कोपशमनाय प्रतिक्रिया।
देवतानां ग्रहारूढस्थानभेदादथोच्यते।। ९।।

अब देवों के प्रकोप का हेतु तथा कोपशान्त्यर्थ प्रतिक्रिया ग्रहों, आरूढ तथा स्थान भेद से कहे जा रहे हैं ।।९।।

व्ययभावस्थितिवशात्पीडाकथनम्

सूर्यादीनां ग्रहाणां व्ययभवनगतः पापखेटो यदि स्यात्
स्वोक्तानां देवतानां वपुषि विकलता डुण्डुभस्पर्शनं स्यात्।
संयोगे मान्दिराह्वोरथ रविजयुतौ जीर्णता वाशुचिर्वा;
योगे भौमस्य रक्षाविहतिरभिहता रक्षकस्वान्तभेदात्।। १०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रत्येक ग्रह को लग्न मानकर विचार करें। यदि उस ग्रह के व्ययभाव में कोई पाप ग्रह हो तो उन पूर्व में कथित देवताओं के प्रकोप के कारण जातक या पृच्छक के शरीर में विकलता उत्पन्न होती हैं।

यदि उस ग्रह से व्ययभाव में राहु, गुलिक होने पर डुण्डुभ (कुचलैंड या मटिया साँप) का स्पर्श होता है। उस स्थान से व्यय में यदि शनि हो तो शरीर में जीर्णता (बुढ़ापा) कमजोरी तथा अशुचिता होती है। यदि १२वें में मंगल हो तो रक्षकों (पहरेदारों), पुलिस या सुरक्षा गार्ड या शस्त्रधारी, हिंसक लोगों से मतभेद होता है ॥१०॥

इस श्लोक का अभिप्राय यह है कि यदि सूर्य से व्यय में कोई पापग्रह है तो उनसे सम्बन्धित देवता शिव, स्कन्द या गणपति की मूर्ति में विकलता आ गयी है अतः उसे ठीक करायें। अर्थात् शिवजी के लिंग या मूर्ति का जीर्णोद्धार करायें या गणेशजी या सुब्रह्मण्य की मूर्ति का जीर्णोद्वार आदि करायें। गुलिक या राहु का संकेत यह होता है कि डंडुभ सर्प के स्पर्श से मूर्ति अपवित्र हो गयी है उस कारण व्यक्ति को पीड़ा है। व्यय का शनि मूर्ति के पुरानी होने या फटने का संकेत है। मंगल यदि सूर्य से व्यय में है तो शिवजी (देवता) के रक्षक अपना दायित्व ठीक से नहीं निभा रहे हैं। इसी तरह से अन्य देवताओं के सम्बन्ध में कुण्डली से आँकलन करें। चन्द्रमा से व्यय में दुर्गाजी के कोप का कारण ज्ञात होगा।

देवबिम्बे दोषकथनं निवारणञ्च

लग्नस्थे पापयुक्ते सति खलु विहगे, बिम्बदोषोऽत्र वाच्यो,
बिम्बं भिन्नं हि तस्मिन् धरणितनुभुवा शुद्धिरेवान्यखेटैः।
बिम्बं तत्र प्रदेयं भवति खलु मदे खेचरेथालयस्थे;
जीर्णं वेश्मालयं तन्नवमथ कुरुतां दीयतां वान्यवेश्म॥ ११॥

यदि ऊपर बताया पाप ग्रह लग्न में हो तथा उसके साथ अन्य पाप ग्रह भी हो तो देवमूर्ति में दोष कहना चाहिए। मंगल की युति होने पर मूर्ति खण्डित हो जाती है, अन्य पाप ग्रह हों तो मूर्ति अपवित्र हो जाती है।

उपाय—देवता की प्रसन्नता के लिए नवीन प्रतिमा बनाकर शास्त्रोक्त विधि से उसकी प्राणप्रतिष्ठा करानी चाहिए

यदि बाधाकारक ग्रह चतुर्थ स्थान में हो तो देवमंदिर जीर्ण हो चुका होता है, उसे नया बनवाना चाहिए या उसी का उद्धार करायें ॥११॥

सप्तमभावाद्दोषज्ञानं निवारणञ्च

नृत्तं द्यूनगते कुजाऽर्कगृहगे खेटे प्रदीपः स्मृतः;
शुक्रेन्द्वालयगे तु पायसमपि क्षीरं घृतं वा पुनः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बौधे चन्दनमार्यमन्दिरगते माला प्रसूनानि वा,
मन्दर्क्षे खलु भूषणानि वसनं तत्तन्मुदे दीयताम् ।। १२।।

यदि पूर्वकथित ग्रह सप्तम भाव में हो तो देवता की प्रसन्नता के लिए नृत्य करना चाहिए (सप्तम भाव कामक्रीडा तथा नृत्यादि का सूचक होता है)। यदि वह पापग्रह मंगल या सूर्य की राशि में हो तो मन्दिर में दीपदान करना चाहिए। चन्द्र या शुक्र की राशि में होने पर घी, खीर, दूध आदि का भोग लगाना चाहिए। बुध की राशि में होने पर देवता को चन्दन अर्पित करना चाहिए। गुरु की राशि में पापग्रह होने पर पुष्प, माला आदि अर्पित करना चाहिए। शनि की राशि में होने पर वस्त्राभूषण अर्पित करना चाहिए ।।१२।।

अष्टमदशमभावाभ्यां दोषकथनम्

रन्ध्रगे कर्मसंस्थे च पूजा वा बलिकर्म वा।
गीतं वाद्यं च रिःफस्थे तत्तत्प्रीत्यै प्रदीयताम् ।। १३।।

यदि अष्टम भाव या दशम भाव में पाप ग्रह बैठा हो तो पूजा, बलि प्रदान करें। गीत, भजन-कीर्तन बारहवें स्थान में होने पर करना चाहिए ।।१३।।

ग्रन्थान्तरम्

लग्नादौ प्रतिबिम्बदानजपपूजाधामसन्तर्पणै
रुक्शान्तिः प्रतिकारनृत्तबलिदेवोपासनैश्च क्रमात्।
दन्तिस्कन्धसमर्पितेन बलिनाम्भस्तर्पणेनान्यगे;
बाधोक्तौ त तदीश्वरे न च ततः प्रोक्तं न किञ्चिद् व्यये ।। १४।।

(१) यदि बाधक ग्रह लग्न में हो तो मूर्ति बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा कराने से शान्ति होती है। मूर्तिदान भी कर सकते हैं।

(२) यदि द्वितीय भाव में बाधक ग्रह हो तो उस देवता के मंत्र का जप करें।

(३) यदि तृतीय में बाधक ग्रह हो तो उस देवता की विधिपूर्वक पूजा करायें।

(४) बाधक ग्रह के चतुर्थस्थ होने पर घर बनवाकर दान करें।

(५) पञ्चमस्थ बाधक ग्रह के लिए देवता के लिए तर्पण करें।

(६) छठे भाव के बाधक ग्रह से औषधोपचार करायें एवं बलिदान करें।

(७) सप्तमभावस्थ बाधक ग्रह से उत्पन्न पीड़ा के लिए नृत्य करायें।

(८) अष्टमस्थ बाधक ग्रह की पीड़ाशान्त्यर्थ बलिदान करें।

(९) नवमस्थ बाधक ग्रह की पीड़ानिवारणार्थ उस देवता की उपासना करें।

(१०) दशमभावस्थ बाधक ग्रह की पीड़ा दूर करने के लिए श्री गणेशजी के लिए लड्डुओं की बलि दें, हाथी को भरपेट भोजन दें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(११) ग्यारहवें भाव के बाधक ग्रह के लिए स्कन्द को बलि दें ।

(१२) बारहवें भाव के बाधक ग्रह की शान्ति हेतु देवता का अभिषेक करायें । यह अभिषेक केवल मन को समझाने के लिए ही है, क्योंकि १२ भाव में यदि बाधक ग्रह बैठें तो बाधा होती ही नहीं है ।।१४।।

सूर्यशान्तिः

अर्के वार्कगृहस्थे वा विहगेऽनिष्टसंस्थिते ।
देवाराधनमाधेयं पृच्छतां रोगशान्तये ।। १५ ।।

यदि सूर्य अनिष्ट स्थान में स्थित हो या अनिष्ट स्थान में सूर्य की राशि (सिंह) में बाधक ग्रह हो तो प्रष्टा को रोगशान्ति के लिए देवाराधन करना चाहिए । उस देवता की स्तुति, मंत्रजप तथा पुष्पाञ्जलि इत्यादि करना चाहिए ।।१५।।

सोमशान्तिः

चन्द्रे वा तद्गृहस्थे वा यवागूप्रतिपादनम् ।
शङ्खाभिषेकधाराद्यमपि देवे विधीयताम् ।। १६ ।।

जब अनिष्ट स्थान में चन्द्रमा बैठा हो या अनिष्ट स्थानगत चन्द्र की राशि में कोई बाधक ग्रह बैठा हो तो यवागू (हलुवा या लप्सी) से भोग लगाना तथा इसका दान किसी विद्वान् ब्राह्मण को करना चाहिए । शंख द्वारा गाय के कच्चे दूध से अभिषेक करें ।।१६।।

पञ्चताराग्रहाणां शान्तिकथनम्

देवे दीपसमर्पणं च हवनं भौमे च तत्क्षेत्रगे;
चान्द्रे तद्गृहगे च नृत्तकरणं जीवे तत्क्षेत्रगे ।
कर्तव्यं द्विजभोजनं च वितरेद् देवाय होमादिकं;
शुक्रे तद्गृहगे च रोगशमनायान्नं प्रदेयं बहु ।। १७ ।।
मन्दे मन्दगृहस्थे वा विहगेऽनिष्टसंस्थिते ।
नीचानामन्नदानं स्याद् भूदानं चार्तिशान्तये ।। १८ ।।

(१) यदि मंगल अनिष्ट स्थानगत हो या मंगल की राशि अनिष्ट स्थान में हो और उस राशि (मेष-वृश्चिक) में बाधक ग्रह हो तो दीपदान तथा हवन करना चाहिए ।

(२) यदि अनिष्ट स्थान में बुध या बुध की राशि (मिथुन-कन्या) में बाधक ग्रह हो तो नृत्य द्वारा देवता को सन्तुष्ट करायें ।

(३) यदि अनिष्ट स्थान में गुरु हो या गुरु की राशि में बाधक ग्रह बैठा हो तो ब्राह्मण भोजन तथा स्वर्णादि दान करना चाहिए तथा देवता के मंत्र से हवन करें । धनु-मीन गुरु की राशियाँ हैं ।

(४) यदि अनिष्ट स्थान में शुक्र हो या शुक्र की राशि हो और उसमें बाधक ग्रह बैठा हो तो रोगशान्ति के लिए प्रचुर मात्रा में अन्नदान करना चाहिए । वृष-तुला शुक्र की राशियाँ हैं ।।१७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि अनिष्ट स्थान में शनि या शनि की राशि (कुंभ-मीन) हो तथा उसमें बाधक ग्रह बैठा हो तो दासों, शूद्र वर्ग के लोगों एवं गरीबों को भोजन दान करें। इससे रोग की शान्ति होती है ॥१८॥

कुण्डल्यां देवकृपाज्ञानम्

लग्नस्थेषु ससत्स्विनादिषु वदेत्तद्देवताऽनुग्रहं;
प्रष्टॄणामथ बाधकालयगते धर्माधिपे प्राक्चिरम्।
यत्किञ्चित्समुपास्य दैवतममुष्योपेक्षया साम्प्रतं;
तत्कोपोऽस्ति भजेत दैवतमदो भद्रार्थमित्यादिशेत्॥ १९॥

जब लग्न में शुभ ग्रह बैठे हों और उन शुभ ग्रहों के साथ इनादि (सूर्यादि) ग्रहों में जो ग्रह युति कर रहा हो उसके देवता (इसी अध्याय के श्लोक ४ से ७ तक में वर्णित) की कृपा (अनुग्रह) पृच्छक पर होती है।

यदि धर्माधिप (नवमेश) बाधास्थान में हो तो इस जन्म या पूर्व जन्म में पृच्छक (जातक या सम्बन्धित व्यक्ति) ने देवता की सविधि उपासना नहीं की है अत: अब कर्म-विपाक वश उस देवता का प्रकोप हुआ है ऐसा बताना चाहिए। अत: कल्याण के लिए अब उस देवता की उपासना विधिपूर्वक तथा श्रद्धाभक्ति के साथ करें—ऐसी बात दैवज्ञ पृच्छक को समझा दें ॥१९॥

देवस्वहरणसूचकयोग:

बाधकाद्यहितस्थाननाथे लाभार्थगे ग्रहे।
तत्तद्दैवतकोप: स्याद्देवस्वस्यापहारत:॥ २०॥

देवस्थान की सम्पत्ति एवं आमदनी देवस्व या देवद्रव्य कहलाती है। यदि बाधक ग्रह या अनिष्ट स्थानों के स्वामी ग्रह (षष्ठेश-अष्टमेश) द्वितीय तथा एकादश स्थानों में बैठे हों तो जो ग्रह बैठा है उसके देवता का धन हरण करने से उसका कोप होता है ऐसा जानना चाहिए ॥२०॥

अनिष्टकारकधातु-मूल-जीवज्ञानम्

हेतुर्धातुरुदाहृतश्चरगृहे धातुग्रहे वोदिते;
मूलं मूलखगे स्थिरे द्वितनुभे जीवश्च जीवग्रहे।
मूलं भूमिमहीरुहाद्यमुदितं हेमादयो धातवो;
जीवा मर्त्यचतुष्पदप्रभृतयो राशेस्समानाश्च ते॥ २१॥

अब ऊपर जो देवस्व के अपहरण की बात कही गयी है जब वह बात पृच्छक को बताई जाती है तब उसे यह भी बताना पड़ता है कि देवता की जो संपत्ति दुरुपयोग में लाई गयी है वह सम्पत्ति (Mis appropriated properity of the deity) धातु है या मूल है या जीव है? वही यहाँ बताया गया है—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि प्रश्नलग्न चर राशि हो या अन्य होने पर उस पर धातुग्रहों (चन्द्र-मंगल-शनि-राहु) की दृष्टि हो या बैठा हों तो अपहृत देवस्व द्रव्य धातुवर्ग (Metalic) का है। यदि लग्नराशि स्थिर हो या उस पर मूलसंज्ञक ग्रह (सूर्य तथा शुक्र में से कोई) बैठा हो तो अपहृत द्रव्य मूल (Botanical plants etc.) वर्ग है जिसके कारण देवता का प्रकोप हुआ है। यदि प्रश्नलग्न द्विस्वभाव राशि हो या उसमें जीवसंज्ञक ग्रह (बुध या गुरु) बैठा हो तो अपहृत देवस्व का द्रव्य जीवसंज्ञक (गो, वृषभ, अश्व आदि) होता है जिसके कारण देवप्रकोप होता है।

छोटे-बड़े सभी वृक्ष मूल हैं। स्वर्णादि धातुएँ-उपधातुएँ, रत्नादि सब धातु द्रव्य हैं। चतुष्पदादि जीव होते हैं ॥२१॥

कृषिभूमि को भी मूल के अन्तर्गत मानना चाहिए।

जीवापहरणं कथं भवति ?

जीवे हेतौ स्वात्मना कल्पितानां पश्वादीनामीश्वरस्याप्रदानात् ।
कोपो देवस्यापहृत्याथवैषां जीवार्थं वागर्पितानर्पणाद्वा ॥ २२॥

जब कोई व्यक्ति किसी देवता के निमित्त पशु अर्पण का संकल्प कर ले परन्तु फिर उसे अर्पित न करे अथवा मन्दिर आदि की गाय, बैल, भैंस को अपने पास रख कर उनका उपयोग करे अथवा किसी मन्दिर को गोदान की घोषणा करके फिर उसको न दे तो उसे जीवापहरण का दोष लगता है ॥२२॥

उससे देवता का प्रकोप होता है।

धात्वपहरणं मूलापहरणञ्च कथं भवेत् ?

धातौ हेतौ देयहेमाद्यदानात्स्वीकाराद्वा देवसम्बन्धिनोऽस्य ।
मूले हेतौ भूमिधान्यादिकानां कोपो देवस्यापहाराद्यवद्यैः ॥ २३॥

(१) जब कोई व्यक्ति देवता को अर्पित करने के लिए स्वर्णादि धातु के दान का मानसिक संकल्प, देने के लिए हाँ कर देना या देने की घोषणा कर देने के पश्चात् उस धातु को नहीं देता या देवता के आभूषण, बर्तन-भाण्डे आदि को अपने निजी उपयोग में लेता है तो इस प्रकार के कारणों से देवधातु के अपहरण का दोष लगता है जिसके कारण देवता का प्रकोप होता है।

(२) इसी प्रकार जब कोई भूमिदान, अन्नदान आदि का मानसिक संकल्प, देने का मौखिक वादा करने के पश्चात् उसे नहीं देता है या देवता की कृषि योग्य भूमि में अपने लिए कृषि करता है, देवता के वृक्षादि को स्वयं के उपयोग में लाता है तो वह मूलापहरण का दोष लगता है जिसके कारण देवता का प्रकोप होता है ॥२३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

खेचराणां धातुमूलजीवज्ञानम्

चन्द्राराह्यसिताः सूर्यशुक्रौ ज्ञार्यौ चरादयः ।
धातुर्मूलं च जीवश्च क्रमेण ग्रहराशयः ।। २४।।

(१) धातुसंज्ञक—चन्द्र, आर (मंगल), अहि (राहु), असित (शनि) ये चारों ग्रह तथा चर राशियाँ (मेष, कर्क, तुला, मकर) ये सब धातुसंज्ञक हैं ।

(२) मूलसंज्ञक—सूर्य तथा शुक्र ये दोनों ग्रह तथा स्थिर राशियाँ मूलसंज्ञक होता हैं । वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ स्थिर हैं ।

(३) जीवसंज्ञक—ज्ञ (बुध) तथा आर्य (गुरु) ये दोनों ग्रह और द्विस्वभाव राशियाँ (मिथुन-कन्या-धनु-मीन) ये सब जीवसंज्ञक हैं ।

ग्रहराशियों का धातु-मूल-जीव विभाग चक्र

(१) धातु	(२) मूल	(३) जीव	**द्रव्यभेद**
चन्द्र, मंगल, राहु, शनि	सूर्य, शुक्र	बुध, गुरु	**ग्रह**
मेष, कर्क, तुला, मकर	वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ	मिथुन, कन्या, धनु, मीन	**राशियाँ**

कृष्णीयमतम्

चन्द्रारोरगसौरैर्धातुर्मूलं किलार्कशुक्राभ्याम् ।
जीवो जीवबुधाभ्यां मेषाश्विन्यादि धात्वादि ।। २५।।

कृष्णीय मत से चन्द्रमा, मंगल, राहु तथा शनि ये धातु हैं । सूर्य-शुक्र ये मूल हैं । जीव तथा बुध जीव हैं । मेष आदि राशियाँ एवं अश्विन्यादि नक्षत्र क्रमशः धातु, मूल, जीव के बोधक होते हैं ।।२५।।

कृष्णीय मत से नक्षत्रों के धातु-मूल-जीव का चक्र

भेद	**धातुसूचक**	**मूलसूचक**	**जीवसूचक**
नक्षत्र	अश्विनी, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, हस्त, विशाखा, मूल, श्रवण, पू.भा.	भरणी, मृगशिरा, पुष्य, पू.फा., चित्रा, अनुराधा, पू. षा., धनि., उ.भा.	कृत्तिका, आर्द्रा, श्लेषा, उ. फा., स्वाति, ज्येष्ठा, उ. षा., शत., रेवती

द्रव्यसंज्ञाविषये मतान्तरम्

जीवो जीवेन वाच्यः क्षितिसुतफणिनौ धातुदौ सर्वपक्षे;
धातुर्मूलं विकल्पाद्रविरवितनयौ द्वौ च धत्तो द्वयं च ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जीवो मूलञ्च तद्वद्बुधभृगुतनयौ धातुजीवौ शशाङ्को
धातुर्मूलञ्च जीवः क्रमश इह मता राशयो वै चराद्याः ।। २६।।

इस श्लोक में ग्रन्थकार ने अपने समय में ग्रहराशियों के धातु-जीव-मूल की मान्यता के सम्बन्ध में समीक्षा की है । उसमें राशियों के सम्बन्ध में विद्वानों में कोई मतभेद नहीं है परन्तु ग्रहों के सम्बन्ध में अनेक मत हैं । तदनुसार—

(१) बहुमत ने यह स्वीकार किया है कि गुरु जीव का प्रतिनिधि है तथा मंगल एवं राहु धातु हैं ।

(२) दूसरा मत है कि सूर्य केवल धातु है और शनि केवल मूल है ।

(३) तीसरे मत के अनुसार सूर्य एवं शनि दोनों ही ग्रह उभयात्मक हैं अर्थात् धातु एवं मूल दोनों का ही प्रतिनिधित्व सूर्य करता है तथा शनि भी धातु एवं मूल का एक साथ प्रतिनिधि है ।

इसी प्रकार से बुध जीव है तथा शुक्र मूल है परन्तु अन्य मत से बुध जीव तथा मूल दोनों हैं; उसी प्रकार से शुक्र भी जीव तथा मूल दोनों ही है और चन्द्रमा भी उभयात्मक है, यह धातु तथा मूल दोनों है ।

राशियाँ चरादि क्रम से धातु-मूल-जीव हैं ।।२६।।

धर्मदैवबाधाकथनम्

धर्मदैवकृता बाधा तदनु प्रोच्यतेऽत्र तु ।
अर्कः शम्भ्वादिभिः पद्यैस्तद्भिदा चावगम्यताम् ।। २७।।

धर्म-दैव कृत बाधा का वर्णन अब किया जाता है । उसके भेदों को इसी अध्याय में वर्णित "अर्क:शम्भ्वादि" श्लोकों (श्लोक ४-५-६-७) से जान लेना चाहिए ।।२७।।

चतुर्थभावभावेशौ धर्मदैवसूचकौ भवतः

बाधाधीशे गतवति सुखं बाधकस्थानसंस्थे;
वेश्मेशे वा सुखपतिगृहाधिष्ठिते बाधकेशे ।
वेश्मेशे वाप्यमुकगृहगे धर्मदैवस्य बाधा;
वाच्या प्रष्टुः पुनरधिकता लक्षणाधिक्यतोऽस्याः ।। २८।।

(१) यदि बाधाधीश (बाधास्थान का स्वामी) सुख भाव में बैठा हो, (२) अथवा सुखेश (चतुर्थेश) बाधा स्थान में बैठा हो, (३) अथवा चतुर्थेश बाधाधीश जिस राशि में बैठा है उसी में बैठा हो तब धर्म-दैव की बाधा होती है । यदि इनमें एक ही लक्षण हो तो बाधा सामान्य होगी परन्तु दो या तीन लक्षण होने पर बाधा प्रबल होगी ऐसा जानना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धर्मदैवबाधानिवारणार्थं पूजादिकथनम्

चतुर्थनाथस्य तु दैवतं यत्तस्यानुरूपं खलु धर्मदैवम् ।
तत्प्रीतये यत्क्रियते स्वपूर्वैः पूजादिकं तत्तु विधेयमत्र ।। २९।।

इस अध्याय में कथित श्लोक ४-७ के अनुसार चतुर्थेश का जो देवता हो उसे धर्मदैव मानकर उसकी प्रसन्नता हेतु पूर्ववर्ती आचार्यों की परम्परानुसार पूजा, बलि, आराधना आदि करनी चाहिए ॥२९॥

धर्मदैव—शिव, विष्णु, शक्ति, गणपति इनसे सम्बद्ध पारिवारिक देवता "धर्मदैव" कहलाते हैं । स्वामी कर्तिकेय एवं गणेश भगवान् शिव के परिवार में हैं । श्री हनुमान् जी.शिव एवं विष्णु दोनों के ही परिवार में गिने जाते हैं । दुर्गा, काली, चामुण्डा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि शक्ति के भेद हैं । श्रीराम, श्रीकृष्ण ये विष्णु के अवतार हैं । श्री भैरव काली के सेवक हैं । इसी प्रकार नन्दीश, गरुड आदि भी देवसेवक हैं । ये सभी "धर्मदैवों" के अन्तर्गत गिने जाते हैं । इन्हें हिन्दू धर्म में नित्य प्रति पूजा जाता है । इन्हें पारिवारिक देव (Family deity) भी कह सकते हैं ।

कोपहेतुज्ञानमावश्यकम्

कोपे हेतुः प्रतिविधिरमुष्यापि यो देवतानां ;
पूर्वं प्रोक्तः स इह सुधिया योजनीयोऽपि योज्यः ।
बाधासंस्थे शशिनि च रवौ धर्मदैवस्य बाधा;
वाच्या भक्त्या प्रतिसममिदं पूजनीयं समृद्ध्यै ।। ३०।।

देवपूजा का विधान दैवज्ञ को सोच-विचार कर पृच्छक की परिस्थिति के अनुसार कराना चाहिए तथा पहले ही बाधा का भलीभाँति निदान (Diagnosis) भी कर लेना उचित है ।

बाधास्थान में यदि सूर्य या चन्द्रमा स्थित हो तो धर्मदैव की बाधा सुनिश्चित होती है। इन ग्रहों में से यदि किसी की बाधास्थान में स्थिति हो तो प्रति वर्ष संवत्सर के दिन (नववर्षारंभ के दिन = चैत्रशुक्ल प्रतिपदा के दिन) सम्बद्ध धर्मदैवों की पूजा श्रद्धा-भक्ति सहित करना चाहिए तो समृद्धि बढ़ती है ॥३०॥

अथ सर्पबाधा निरूप्यते

जीवः सन्बाधकेशो व्ययमृतिरिपुगो यद्यहेः केन्द्रसंस्थः;
सर्पाणामुत्तमानां यदि स सुरगुरुर्मान्दिकेन्द्रेऽधमानाम् ।
पीडा वाच्याथ बाधाभवनमुपगते चोरगे सर्पबाधा;
तेषां हीनोत्तमत्वं शशिदिनकरयोर्योगवीक्षादिभिः स्यात् ।। ३१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) जब बाधाधीश होकर गुरु ६-८-१२ भावों में बैठा हो तथा राहु किसी केन्द्र-स्थान में बैठा हो तब ''सर्पबाधा'' होती है। यह बाधा उत्तम सर्पदेवों के द्वारा होती है।

(२) यदि बाधाधीश गुरु छठे, आठवें या बारहवें हो तथा गुलिक गुरु से केन्द्र में हो तब बाधा अधम कोटि के सर्पदेवों द्वारा होती है।

(३) यदि बाधास्थान में राहु स्थित हो तो सामान्य कोटि के सर्पदेवों से बाधा होती है।

(४) यदि बाधा भाव में स्थित राहु का सम्बन्ध किसी भी प्रकार से सूर्य से हो तो उत्तम कोटि के सर्पों से बाधा होती है।

(५) यदि बाधास्थान में स्थित राहु का सम्बन्ध चन्द्रमा से हो तो अधम कोटि के सर्पों से बाधा होती है।

सर्पबाधानिवारणार्थमुपायानां कथनम्

राहौ बाधकषष्ठरन्ध्रखगते कार्यो बलिः प्रीतये;
वेश्मस्थे खलु चित्रकूटकरणं गानक्रिया रिःफगे।
लग्नेऽस्ते च सुधापयोवितरणं नृत्तक्रिया वास्तगे;
स्थानेष्वेष्वपि कीर्तनात्प्रतिविधेर्बाधोच्यतां भोगिनाम् ॥ ३२॥

(१) जब राहु बाधक स्थान में या छठे, आठवें या दशवें भाव में हो तो सर्पों को प्रसन्न करने के लिए सर्पबलि करनी चाहिए।

(२) यदि राहु चतुर्थ भाव में हो तो चित्रकूटशिला (रंग-बिरंगा-चितकबरा पत्थर जिसे बोलचाल में चिलबटरा भी कहते हैं) की प्रतिष्ठा करानी चाहिए। (३) यदि राहु बारहवें भाव में हो तो नृत्य एवं गायन करना चाहिए। (४) यदि राहु लग्न या सप्तम भाव गत हो तो दूध का वितरण करना चाहिए। (५) सप्तम भावगत राहु के लिए नृत्यक्रिया करना भी समीचीन है। (६) छठे भावगत राहु के लिए केवल कीर्तन करना चाहिए, अन्य किसी अनुष्ठान की आवश्यकता नहीं है ॥३२॥

सर्वस्थानगतराहुजन्यसर्पदोषशान्तिकथनम्

स्थानेष्वप्यखिलेषु सर्पबलिरेवोदीर्यतां वा पुन-
स्तृप्यन्त्युत्तमभोगिनस्तु बलिना नीचास्तु गानादिभिः।
सर्वेषां बलिकर्मतुष्टिकरणं वक्तव्यमेवं हि वा
सर्पप्रीतिरवश्यमेव करणीयारोग्यपुत्राप्तये ॥३३॥

किसी भी दोषयुक्त या बाधास्थान में राहु बैठा हो परन्तु सर्पबलि अर्थात् नागबलि सर्पबाधा शान्ति हेतु उत्तम उपाय होता है, क्योंकि उत्तम कोटि के सर्प देवता नागबलि से प्रसन्न हो जाते हैं, जो हीन कोटि के होते हैं वे नाच-गाने के आयोजन से सन्तुष्ट होते हैं। इसलिए सभी कोटि के नागदेवों की प्रसन्नता हेतु नागबलि ही उत्तम उपाय माना जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अतः दैवज्ञ को उसी को करने का निर्देश अपने पृच्छक को करना चाहिए । सर्पकोप से सन्तति का मूलोच्छेद तथा अनेक प्रकार के संकट प्राप्त होते हैं । रोग, शोक तथा दारिद्र्यादि भोगने पड़ते हैं । सर्पकोपजन्य रोग बहुत ही हठीले तथा असाध्य किस्म के होते हैं । अतएव पितृऋण से मुक्ति हेतु पुत्रादि की प्राप्ति एवं आरोग्य प्राप्त्यर्थ नागबलि के अनुष्ठान से सर्पो को प्रसन्न करना चाहिए ।।३३।।

(सर्पसंस्कार एवं बलि हेतु आगे श्लोक ५० के पश्चात् का वक्तव्य देखें)

सर्पकोपस्य कारणानां कथनम्

अण्डानां चरगे किशोरफणिनां नाशोऽसुरे द्वन्द्वगे;
लग्नस्थे तदिदं द्वयं स्थिरगते बाधाकरो भूरुहाम् ।
कृत्वाण्डान्यहयश्च नीचफणिनां ताम्रेण हेम्ना मुदे;
देयान्युत्तमभोगिनां यदि नगा नष्टाश्च तान् स्थापयेत् ।। ३४।।

(१) जब कुण्डली में राहु चरराशिगत होता है तब व्यक्ति द्वारा पूर्व में सर्पों के अण्डों को नाश किया गया था जिसके कारण सर्पकोप हुआ है; यह बताना चाहिए । (२) यदि राहु द्विस्वभाव राशिगत हो तो पृच्छक ने पूर्व में साँप के बच्चों को मारा है जिसके कारण सर्पकोप हुआ है । (३) जब राहु स्थिर राशि में हो तो सर्पकोप का कारण जातक द्वारा वृक्षों की अवैध तथा अन्धाधुंध कटाई की गयी होती है जिसके कारण सर्प की बाँबी (निवासस्थान) नष्ट होने से उसके परिवार की हानि हो जाती है ।

उपाय—निम्न कोटि के सर्पो के लिए ताम्बे से तथा उच्च कोटि के सर्पों के लिए सोने के अण्डे एवं सर्पप्रतिमा बना कर सुपात्र विद्वान् ब्राह्मण को दान करना चाहिए । यदि बड़े नागों का नाश हुआ हो तो उनकी भी प्रतिमा बनवाना आवश्यक है ।।३४।।

वृक्ष काटने का पाप—अनावश्यक तथा मनमाने ढंग से वृक्ष काटना भी एक महान् पाप है । वृक्षों में उनके नीचे से लेकर ऊपर तक अनेक जीव-जन्तुओं का आश्रय होता है, अतः एक वृक्ष के ही कटने से अनेक जीव नष्ट होते हैं; अनेक वृक्षों के परिणाम का तो कहना ही क्या । यह टीकाकार ऐसे कई परिवारों को जानता है जिनके कर्त्ता-धर्त्ताओं ने जंगलों के काटने के ठेके लेकर जंगल कटवाये और उनके जीते जी ही उनके परिवारों पर अनेक आपत्तियाँ आईं तथा आज भी चल रही हैं ।

विशेषसम्प्रदायकथनम्

एकादश चरे लग्ने द्वन्द्वे सप्त स्थिरे नव ।
अण्डानि चाहयश्चेति सम्प्रदायविदां वचः ।। ३५।।

एक सम्प्रदाय के आचार्यों का कथन है कि यदि प्रश्नलग्न में चर राशि हो तो ग्यारह अण्डे स्वर्णादि के बनवाकर दान करें । यदि लग्न द्विस्वभाव हो तो सात अण्ड तथा स्थिर होने पर नौ अण्डे बनवाकर दान करना चाहिए ।।३५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनश्च सर्पकोपस्य अन्यकारणानि

राहुर्मान्दियुतस्तदस्तनवमापत्यस्थितो वा यदि,
प्रष्टुः स्यात्फणिबाधनं क्षितिसुतः केन्द्रे तु राहोर्यदि ।
बाधाहेतुरुदीर्यतां फणिगृहे क्षोणीरुहच्छेदनं
भूमेर्वा खननं विहिंसनमहेर्वल्मीकभेदोऽथवा ॥ ३६॥
यद्वोद्यानमहीरुहादिदहनं वा चित्रकूटच्छिदा;
राहोः केन्द्रगतः पुनर्यदि शनिर्मान्दिश्च नागालये ।
मूत्रोच्छिष्टशकृद्विसर्गकरणं निष्ठीवनं वान्तिके;
चण्डालोपगतिश्च सौरिभकरिप्रक्षोभणं वा पुनः॥ ३७॥

(१) यदि कुण्डली में राहु मान्दि के साथ हो अथवा (२) राहु मान्दि से पाँचवें, सातवें, नवें इनमें से किसी भी स्थान में स्थित हो अर्थात् राहु एवं मान्दि का समसप्तक या नवपंचम योग हो तो जातक को सर्पबाधा कहनी चाहिए ।

(२) यदि राहु एवं मंगल परस्पर केन्द्र में बैठे हों तो सर्पबाधा का कारण सर्प की बाँबी (वल्मीक=Abode of serpents) को नष्ट करना, बाँबी के समीप के वृक्ष काटना, भूमिखनन तथा साँप का मारना आदि होता है ॥३६॥

ऊपर के योग में अन्य कारण बाग-बगीचों को काटना, जलाना, उनमें खेती आदि प्रारंभ कर देना, चित्रकूट (विशेष प्रकार का पत्थर = चिलबटरा) को तोड़ना भी सर्पकोप का कारण होता है । यदि राहु से केन्द्र में शनि तथाा मान्दि दोनों हो तब सर्पकोप का कारण सर्प के निवास (बाँबी) में मूतना, जूठन डालना, उस पर कुल्ला करना, थूकना, वमन करना, मलत्याग करना आदि होता है । इसी प्रकार सर्पो की बाँबी के पास चण्डाल (हिंसक व्यक्ति) का जाना, वहाँ पर भैंसा, हाथी आदि को नहलाना आदि कार्य में उक्त योग में सर्पकोप का कारण होते हैं ॥३७॥

यहाँ यह शंका होती है कि श्लोक ३६ में सर्प की बाँबी के समीप चण्डाल का जाना सर्पकोप का कारण होता है तो यह कोप किस पर होगा ? चण्डाल पर या पृच्छक पर ? इसका उत्तर यह है कि चण्डाल पर तो होगा ही परन्तु जो व्यक्ति उसे बाँबी के पास भेजेगा तो भेजने वाला प्रेरक होने के कारण दोष का भागी होगा । क्योंकि चण्डाल अपने स्वभाव के अनुसार हिंसा करेगा तो सर्पों की हानि होगी । अब इसमें यदि अन्य व्यक्ति (पृच्छक या जातक) की प्रेरणा है तो उसका फल पृच्छक को भोगना ही पड़ेगा ।

पुनरपि सर्पकोपस्य कारणानां कथनम्

मान्दिः केन्द्रगतो यदीह फणिनो निष्ठीवनं मैथुनं ;
मूत्रोच्छिष्टशकृद्विसर्ग उत वा नागालये वान्तिके ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वृक्षाद्यं यदि चेत्प्रणष्टमिह तत् कार्यं पुनः पूर्ववत् ;
त्यक्तोच्छिष्टमलादिसम्भव इदं पुण्याहमप्याचरेत्।। ३८।।

यदि कुण्डली में राहु से गुलिक केन्द्रवर्ती हो तो सर्पबाधा का कारण नागालय (सर्पनिवास) के समीप थूकना, मैथुन करना, मूत्रत्याग, जूठन डालना, मलत्याग करना आदि होता है । यदि सर्प की बाँबी के समीपवर्ती वृक्षों को नष्ट किया गया हो तो उन्हें पुनः उस स्थान पर लगा देना चाहिए, उस स्थान की गन्दगी हटा देना चाहिए तथा उक्त स्थल को पूर्व की भाँति स्वच्छ एवं पवित्र कर दे । वहाँ पर स्वस्तिवाचन तथा पुण्याहवाचन करा देना चाहिए ।।३८।।

अथ पितृशापादिकं निरूप्यते

भौमर्क्षांशकयोरशीतकिरणो बाधागतश्चेत् पितुः;
शापेऽस्त्येव मुडुप्रभुर्यदि भवेच्छापं जनन्या वदेत् ।
पित्रोःशाप इनोडुनाथगृहयोश्चानिष्टगे स्यात् खरे;
शुश्रूषार्थसमर्पणादिभिरिह प्रीतिं विदध्यात्तयोः ।। ३९।।

यदि सूर्य (पितृकारक) बाधक स्थान में मंगल की राशि या नवमांश में बैठा हो तो पिता का शाप होता है ऐसा जानना चाहिए । यदि मातृकारक चन्द्रमा बाधक स्थान में मंगल की राशि या नवमांश में स्थित हो तो मातृशाप बताना चाहिए ।

इसी प्रकार यदि अनिष्ट स्थानों में कर्क-सिंह राशियों में से कोई हो और उसमें खर (पापग्रह) बैठा हो तो क्रमशः माता तथा पिता का शाप पीड़ा का कारण होता है । यह शाप पूर्वजन्म का होता है ।

इस शाप की शान्ति के लिए जीवित माता-पिता या उनके तुल्य ही पूज्य व्यक्तियों की सेवा-सुश्रूषा करनी चाहिए तथा परलोकवासी माता या पिता का प्रतिवर्ष तथा प्रति महालय में श्राद्ध करें ।।३९।।

देवद्विजानाञ्च शापकथनम्

पापश्चेद्बाधकस्थः सुरगुरुसहितस्तद्गृहे वा द्विजानां;
देवानां वास्ति शापो यदि रविभवने तद्युतो वात्र पापः ।
पूर्वेषां वा गुरूणां यदि स धरणिजस्तर्हि शापो महान् स्यात्;
प्रीतिं देवद्विजानां स्वगुरुजनमनः प्रीणनं चात्र कुर्यात् ।। ४०।।

(१) यदि बाधक स्थान में कोई पापग्रह या तो गुरु के साथ बैठा हो या फिर गुरु की राशि (धनु या मीन) में बाधक स्थान में ही बैठा हो तो देवताओं अथवा ब्राह्मणों का शाप होता है । (२) यदि बाधक स्थान में पाप ग्रह सूर्य की राशि सिंह में बैठा हो अथवा सूर्य के साथ ही बाधक स्थान में स्थित हो तो पूर्वजों (पिता, पितामह एवं प्रपितामह) का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शाप होता है या पूर्व के गुरुजनों (पितातुल्यों) का शाप होता है। यदि बाधकस्थानस्थ पाप ग्रह मंगल हो तो शाप बहुत उग्र होता है। इन शापों की शान्ति हेतु देवताओं, ब्राह्मणों एवं अपने गुरुजनों की सेवा-सुश्रूषा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहिए ।।४०।।

देवता तथा ब्राह्मणों का शाप एक ही योग में इसलिए कहा है कि ब्राह्मण भी पृथ्वी के देवता (भूसुर) होने से देव ही होते हैं।

गुर्वादिशापकथनम्

षष्ठेशो नवमे रिपौ नवमपः स्याच्चेत् पितुर्वा गुरोः;
पूर्वेषामथवात्मनः स्वदिषयं विज्ञेयमप्रीणनम्।
सूर्ये षष्ठगते तदीशसहिते वा वाच्यमेतत् पितु-
श्चन्द्रेणापि चतुर्थषष्ठपतितश्चैवं जनन्या वदेत्।। ४१।।

यदि कुण्डली में षष्ठेश नवम भाव में तथा नवमेश षष्ठ भाव में हो अर्थात् षष्ठेश एवं नवमेश में विनिमय (स्थानपरिवर्तन) सम्बन्ध हो तब पिता, गुरु अथवा पुराने पुरखों का शाप जानना चाहिए, उनकी अप्रसन्नता है ऐसा समझना चाहिए।

यदि सूर्य छठे भाव में अथवा सूर्य एवं षष्ठेश की युति कहीं पर भी होने पर पिता की अप्रसन्नता कहनी चाहिए। इसी प्रकार चन्द्रमा या चतुर्थेश इनमें से कोई भी या तो छठे भाव में बैठा हो अथवा षष्ठेश के साथ कहीं भी प्रश्नकुण्डली में स्थित हो तो माता की अप्रसन्नता प्रकट होती है ।।४१।।

इनकी शान्ति हेतु पूर्व में कथित उपायों का अवलंबन करना चाहिए।

प्रेतबाधाकथनम्

अब्ददीक्षादिलोपेन प्रेता याताः पिशाचताम्।
स्वजनान् बाधमानास्ते चरन्तीति खलु स्मृतिः।। ४२।।

मृत व्यक्ति का वार्षिक श्राद्ध, महालय श्राद्ध, अन्त्येष्टि, सपिण्डीकरण, दाहादि कर्म यदि विधिपूर्वक सम्पन्न न हों या उनका लोप हो जाय तो वह पिशाचत्व को प्राप्त होकर अपने पूर्व के परिवारजनों (उत्तराधिकारियों) को बाधा पहुँचाता है—ऐसा स्मृतियों (मनु, याज्ञवल्क्यादि) का कथन है ।।४२।।

प्रेतबाधासूचकग्रहयोगाः

बाधा प्रेतोद्भवा स्यात् स्थितिवति गुलिके बाधकेऽनिष्टभे वा;
तत्रारक्षांशसंस्थो यदि कुजसहितो मान्दिरारेक्षितो वा।
प्रेतः स्यादग्निशस्त्रप्रभृतिकृतमृतिर्मन्दसम्बन्ध एवं
मान्देश्चेत् प्रेत ऐष स्वविरहिततया दुःखितः सन् परेतः।। ४३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) यदि गुलिक की स्थिति बाधक स्थान या अनिष्ट स्थान में हो तो पृच्छक को प्रेतबाधाजन्य कष्ट होता है ।

(२) यदि बाधक या अनिष्ट स्थान में गुलिक मंगल की राशि (मेष-वृश्चिक) या मंगल के नवांश में हो तो अथवा मंगल से युत या दृष्ट हो तो प्रेतात्मा की मृत्यु शस्त्राघात से हुई थी जिसके कारण उसे प्रेतयोनि मिली है, ऐसा जानना चाहिए । अथवा दुर्घटनाजन्य मृत्यु के कारण वह प्रेत होता है ।

(३) यदि गुलिक शनि की राशि या नवांश में बैठा हो अथवा गुलिक एवं शनि की युति हो अथवा दोनों परस्पर दृष्ट हों तो इस स्थिति में मृत व्यक्ति दुःख एवं पीड़ा को झेलता हुआ मरा है—इस कारण वह प्रेत हुआ है, ऐसा जानना चाहिए अथवा वह धनहीन, बन्धुहीन होकर मरा है ऐसा जानना चाहिए ।।४३।।

दुर्मृत्युजन्यप्रेतोद्भवा बाधाः

प्राप्तो मृत्युमसौ भुजङ्गदशनाद्युक्तेक्षिते राहुणा,
नद्यादौ पतनेन तोयभवने मान्दौ सपापान्वये ।
सम्बन्धे गुलिकस्य चैवमसतां प्रेतास्तु दुर्मृत्यवो;
विज्ञेया गुलिकांशराशिवशतो वाच्या च पुंस्त्रीभिदा ।। ४४।।

(१) यदि बाधक स्थानगत गुलिक राहु से युत या दृष्ट हो तो प्रेतात्मा सर्पदंश जन्य मृत्यु के मरणोपरान्त प्रेत होता है ।

(२) यदि उक्त प्रकार का बाधक स्थानगत गुलिक जलचर राशियों में पाप ग्रह के साथ हो तो प्रेतत्व को प्राप्त व्यक्ति की मृत्यु नदी, तालाब आदि में गिरकर हुई थी ।

इस भाँति पाप ग्रहों से गुलिक के सम्बन्धों के अनुसार किस प्रकार की दुर्घटना में मरकर व्यक्ति प्रेतयोनि को प्राप्त हुआ है, इसकी जानकारी होती है । यदि गुलिक का नवांश विषम राशि का हो तो प्रेत पुरुष है, यदि समराशि का नवांश हो तो प्रेत स्त्री होता है । यह सब नवांश के आधार पर कहें ।।४४।।

पृच्छकस्य भ्रात्रादीनां प्रेतत्वज्ञानम्

मान्देर्भ्रात्रादिभावस्थितितदधिपतत्कारकेक्षान्वयाद्यैः
प्रेताः स्युः सोदराद्या स्थिरभवनगते मन्दजे प्रेत एषः ।
मृत्युं प्राप्तिस्त्विदानीं स यदि चरगतः प्राक्तनः सोऽथ मान्दौ
वेश्मस्थे तत्पतीक्षान्वयवति गृहसम्बन्धवान् नान्यथा चेत् ।। ४५।।

जब गुलिक तृतीय, चतुर्थ, छठे, नवें भाव में स्थित हो अथवा तृतीयेश, चतुर्थेश, षष्ठेश, नवमेश में से किसी के साथ युति या दृष्टि सम्बन्ध हो तो पृच्छक के सहोदर, माता, मामा तथा गुरु (पिता) क्रमशः प्रेत होते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि गुलिक स्थिर राशि में हो तो उक्त सम्बन्धी की मृत्यु सन्निकट अतीत में हुई थी ऐसा जानना चाहिए। यदि गुलिक चर राशि में हो तो सम्बन्धी की मृत्यु बहुत पहले ही हो चुकी होती है।

यदि गुलिक चौथे भाव में हो अथवा चतुर्थेश से युत या दृष्ट हो तो प्रेत पृच्छक के परिवार का ही होता है, यह बात सुनिश्चित है ॥४५॥

प्रेतस्य वयःकथनम्

प्रेतस्य बालता वाच्या मान्दौ राश्यादिसंस्थिते।
राश्यन्तस्थे जरन्नेव मध्यस्थे वय ऊह्यताम् ॥ ४६॥

गुलिक की राशि में स्थिति जिस भाग में हो उसी अनुपात में प्रेत की अवस्था कहनी चाहिए। यदि मान्दि दस अंशों से कम है तो बाल्यावस्था का प्रेत है। यदि दस से बीस अंशों में गुलिक की स्थिति है तब वह प्रेत मध्यावस्था (युवा तथा प्रौढ़ावस्था) का प्रेत है। राशि के अन्तिम भाग में गुलिक की स्थिति प्रेत की वृद्धावस्था सूचित करती है ॥४६॥

पुनश्च प्रेतावस्थाज्ञानम्

चन्द्राद्यालयतद्युक्ते मान्दावेकादिकं वयः।
प्रेतस्यैके स्वबाल्यादिवशादुडुपतेर्वयः ॥ ४७॥

इस श्लोक में दो अन्य मतों से प्रेत की अवस्था (Age) जानने की विधि बतलायी है—

(१) जिस ग्रह के साथ गुलिक हो उसके वर्षों के अनुरूप या जिस ग्रह की राशि में गुलिक हो उसके अनुरूप प्रेत की वय होती है। इसके लिए चन्द्रमा तथा कर्क राशि के लिए एक वर्ष, मंगल एवं मेष वृश्चिक के लिए दो वर्ष, बुध एवं मिथुन-कन्या के लिए नौ वर्ष, शुक्र अथवा वृष-तुला में से कोई भी हो तो बीस वर्ष, गुरु या धनु-मीन के लिए अठारह, सूर्य के लिए बीस (सिंहराशि के लिए भी) तथा शनि एवं उनकी राशियों मकर-कुंभ के लिए पचास वर्ष निर्धारित हैं। गुलिक जिस राशि में हो उसके वर्षप्रमाण ही प्रेत की आयु बतायें। यदि उसके साथ कोई ग्रह भी बैठा हो तो उस ग्रह अथवा ग्रहों के वर्ष भी उसमें जोड़कर प्रेत की आयु बतायें।

(२) कुछ एक विद्वान् कहते हैं कि चन्द्रमा की बाल, कुमार, युवा, प्रौढ, वृद्ध, मृत आदि अवस्था के आधार पर प्रेत की आयु बतानी चाहिए ॥४७॥

प्रेतस्य जातिवर्णज्ञानम्

प्रेतस्य जातिजिज्ञासा जायते यदि कुत्रचित्।
मान्द्याधिष्ठितराश्यंशजातिं तत्र विनिर्दिशेत् ॥ ४८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जब कोई पृच्छक यह पूछे कि किस जाति का प्रेत है तो गुलिक की राशि या नवांश राशि के आधार पर प्रेत की जाति बताना चाहिए। जो वर्ण राशि का हो वही वर्ण प्रेत का होता है ॥४८॥

ब्राह्मण राशियाँ—कर्क, वृश्चिक, मीन; क्षत्रिय राशियाँ—मेष, सिंह, धनु; वैश्य राशियाँ—वृष, कन्या, मकर; शूद्र राशियाँ—मिथुन, तुला, कुंभ होती हैं।

श्लोक ४७ में ग्रहों के अनुसार जिस "एकादिकं वय:" सूत्र का निर्देश किया गया हैं। वह निम्नलिखित श्लोक पर आधारित है—

"एकं द्वे नव विंशति, धृति कृति पञ्चाशदेषां क्रमात्
चन्द्रारेन्दुजशुक्रजीवदिनकृत् दैवाकरीणां समा:"॥

प्रेतबाधाशान्त्युपाया:

प्रेतबाधामिति ज्ञात्वा कार्यावश्यं प्रतिक्रिया।
आपन्नो यदि तत्प्रीतौ सम्पच्चात्राभियुक्तवाक् ॥ ४९॥
कोपः प्रेतस्य कुर्यात्तनयविहननं चामयादीननर्था-
स्तत्प्रीत्यै पार्वणाद्यं पितृगणमनसः प्रीणनं श्राद्धकर्म।
कुर्याच्च क्षेत्रपिण्डं तिलहवनमथो ब्राह्मणानाञ्च भुक्तिं
प्रीताः प्रेतास्त्वमीभिर्विदधति सकलाः सम्पदः सन्ततिञ्च ॥ ५०॥

जब "अमुक व्यक्ति को प्रेतबाधा है" यह निश्चय हो जाय तब उसके प्रतीकार हेतु प्रयास भी आवश्यक रूप से करना चाहिए। जब प्रेत प्रसन्न हो जाता है तो सारी आपत्तियाँ एवं विघ्न दूर हो जाते हैं तथा धन, सन्तति एवं विद्या की वृद्धि होती है। इस सम्बन्ध में श्रेष्ठ पुरुषों का कथन है कि—॥४९॥

जब प्रेत किसी पर कुपित होता है तो वह उसके पुत्रादि को नष्ट करता है तथा अनेक प्रकार के अनर्थकारी रोगों एवं संकटों को उत्पन्न करता है। अत: पीडा करने वाले प्रेतात्मा की सन्तुष्टि के लिए पूर्णिमा, अमावस्या तथा दोनों पक्षों की अष्टमी को पार्वण श्राद्ध करना चाहिए तथा अन्य प्रकार के श्राद्ध जो पितृगणों के मन को प्रसन्न करते हैं उन्हें करना चाहिए। तीर्थक्षेत्रों (अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, काञ्चीपुरी, उज्जैन तथा द्वारिकापुरी) एवं गया आदि स्थलों पर पिण्डदान करना चाहिए। तिलों से होम तथा सुपात्र ब्राह्मणों को भोजन करायें। इन उपायों से प्रेत प्रसन्न होकर सम्पूर्ण सम्पत्तियाँ तथा सुसन्तति प्रदान करता है ॥५०॥

सर्पसंस्कार एवं सर्पबलि—किसी व्यक्ति ने इसी जन्म में सर्पवध किया हो अथवा पूर्वजन्म का निश्चय प्रश्नकुण्डली या जन्मकुंडली द्वारा हो तो पूर्व के ३१वें श्लोक से लेकर श्लोक ३८ तक सर्प पूजा, बलि आदि का निर्देश है अत: निर्णयसिन्धु के अनुसार यहाँ पर संक्षेप में इस विधि को लिखा जा रहा है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सर्पसंस्कार—सर्वप्रथम सर्पसंस्कार करना चाहिए। इसके लिए पीली सरसो, पुराने जौ, गेहूँ तथा तिल की पिण्याक (पीना=खली) इन सबको पीसकर उसकी पिट्ठी से सर्प के आकार की प्रतिमा बना कर उसे शूप में रखकर सर्प से प्रार्थना करनी चाहिए। प्रार्थना के मंत्र इस प्रकार हैं—

"एहि पूर्वमृतो सर्प अस्मिन् पिष्टे समाविश।
संस्कारार्थमहं भक्त्या प्रार्थयामि समाहितः"॥

इस प्रार्थना के पश्चात् वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्धादि से उस आटे के बने सर्प को घर के बाहर ले जाये। फिर प्राणायाम करके यज्ञोपवीत धारण किये हुए ही सर्पसंस्कार का सङ्कल्प करे। फिर जल छिड़क कर भूमि को पवित्र करे। भूमि पर कुशा बिछा दे, फिर अग्नि एवं ईंधन रखकर चिता बनाये, उसमें 'प्रजापतये स्वाहा' तथा 'इन्द्राय स्वाहा' इन दो आज्याहुतियों से आहुति दें। फिर सर्प को सावधानी से उठाकर चिता में रख दें। स्रुव के द्वारा अग्नि में घी की तीन आहुतियाँ तीन व्याहृतियों (१) "ॐ भूः स्वाहा, (२) ॐ भुवः स्वाहा तथा (३) ॐ स्वः स्वाहा" से दें। फिर सर्प के मुख में शेष व्याहृतियों से हवन करें। शेष बचे घी को सर्प के शरीर पर चिता में ही छोड़ दें, फिर जल से चिता का अभ्युक्षण करें। जब सर्प जलने लगे तब निम्न वैदिक मंत्र पढें—

"ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु।
येऽन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः"॥

फिर निम्न क्षमाप्रार्थना करें—

"ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि कृतः सर्पवधो मया।
पूर्वजन्मनि वा सर्प तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि"॥

इसके पश्चात् दूध से अग्नि का प्रोक्षण करें। इसमें अस्थिसंचय नहीं किया जाता। स्नान कर आचमन कर घर में प्रवेश करें। तीन दिन तक अशौच मनायें व ब्रह्मचर्य पालन करें। चौथे दिन सचैल स्नान कर आठ ब्राह्मणों की (१) सर्प, (२) अनन्त, (३) शेष, (४) कपिल, (५) नाग, (६) कालिक, (७) शंखपाल तथा (८) भूधर इन नामों से "सर्पाय नमः" "अनन्ताय नमः" इत्यादि कह कर पूजा करें। तीसरे ब्राह्मण को "शेषाय नमः", चौथे को "कपिलाय नमः" इस प्रकार से पूजा करें। पूजा में गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप-दीप का प्रयोग करें। जैसा कि कहा है—

"गन्धपुष्पाक्षतैर्धूपदीपाद्यैरर्चयेद्द्विजान्।
घृतपायसभक्ष्यैश्च द्विजानष्टौ च भोजयेत्॥
एवं कृते विधानेन सर्पसंस्कारकर्मणि।
सर्पहिंसाकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः"॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसके उपरान्त सर्प पूजा एवं बलि करें।

सर्पपूजा एवं सर्पबलि—सर्पपूजा एवं बलिकार्य पञ्चमी तिथि में करना चाहिए। इसके लिए सोने का नाग बनवाकर उसे घी मिले दूध से भरे पात्र में रखकर 'ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो' मंत्र से पञ्चोपचार पूजन कर ब्राह्मण को दान करें—

"पञ्चम्यां पन्नगं हैमं स्वर्णेनैकेन कारयेत्।
क्षीराज्यपात्रमध्यस्थं पूज्यविप्राय दापयेत्"॥

दृष्टिबाधाकथनम्

अथ दृष्टिभवा बाधाः कथ्यन्ते तत्र ये नराः।
नार्योऽथवा ग्रहैर्बाध्याः शास्त्रोक्तान् कीर्तयामि तान्॥५१॥

अब दृष्टिबाधा (देवादि की नज़र लगना) से स्त्री-पुरुष (बालिका-बालक) जब दृष्टिबाधा से पीड़ित होते हैं तो उसे लोकभाषा में "देवता की नज़र लगना" कहते हैं। जिन्हें नज़र लग जाती है उनके लक्षण आगे के दो श्लोकों में वर्णित हैं॥५१॥

दृष्टिबाधाग्रसितपुरुषस्य लक्षणम्

लुब्धं क्रूरं भयार्तं हृषितमतिशठं पूर्ववैरानुबद्धं;
नष्टद्रव्यं वियुक्तं प्रतिहतमशुचिं प्राप्तकालं सरोगम्।
हासान्धं कान्तदेहं निधिविलयकरं कातरं भूषिताङ्गं
रात्रावेकाकिनं च स्मरमथनगणास्तं पुमांसं ग्रसन्ति॥५२॥

किस प्रकार के पुरुषों को दृष्टिबाधा होती है? यह "सारसंग्रह" नामक ग्रन्थ से कहा है—

(१) जो व्यक्ति अति लालची है। (२) जो क्रूर स्वभाव का है। (३) जो भयग्रस्त है। (४) जो अकारण अधिक हँसता है। (५) जो अतिशठ है। (६) जो अपने मन में किसी के प्रति पूर्व से ही वैरभाव बनाया है। (७) जिसका धन नष्ट हो गया है। (८) जिसका अपने प्रिय से बिछोह हो गया है। (९) जो प्रतिहत है (अपने प्रतिद्वन्द्वी से पिटा हुआ है तथा जिसके मन में बदले की भावना है)। (१०) जो अपवित्र तथा मलिन रहता हैं। (११) जो रोगी है। (१२) जो हँसने में मस्त रहता है। (१३) सुन्दर शरीर वाला है। (१४) जो अपनी सम्पत्ति गवाँ चुका है। (१५) जो धैर्यहीन है। (१६) जो गन्ध-माल्यादि से युक्त है या (१०) रात्रि में निपट अकेला है तो ऐसे व्यक्ति को भगवान् शंकर के गण ग्रसित कर पीड़ित करते हैं। उसे ही दृष्टि लगना कहते हैं।

दृष्टिबाधायोग्यस्त्रीलक्षणम्

तैलाभ्यक्तां प्रसूतामभिनवसुरतां मद्यपानानुरक्तां;
नग्नामुत्पन्नसत्त्वां स्मरशरविवशां मुह्यमानां विहारैः।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रथ्याशृङ्गाटकस्थामृतुसमययुतां पुंश्चलीकां रुदन्ती-
मेकान्तां कान्तदेहां स्त्रियमपि विषमा गुह्यकाः संस्पृशन्ति।। ५३।।

(१) तैलाभ्यङ्ग से युक्त, (२) सद्यःप्रसूता, (३) सद्यःसम्भुक्ता, (४) मद्यपान करती हुई, (५) नग्ना (अल्पवस्त्रादि में), (६) गर्भवती, (७) कामार्त्ता, (८) मुग्धा, (९) ऋतुमती, (१०) ऋतुस्नाता, (११) पुंश्चली, (१२) रोती हुई, (१३) एकान्त में बैठी हुई तथा (१४) सुन्दर शरीर वाली—इन स्त्रियों को विषम स्वभाव वाले गुह्यक नामक गण ग्रस लेते हैं ।।५३।।

यह श्लोक भी 'सारसंग्रह' नामक ग्रन्थ से ग्रन्थकार ने दिया है ।

ग्रहपीडाहेतवः

ग्रहाणां पीडने यानि कारणानीह तानि च ।
तेषां स्थानानि चोच्यन्ते परिहाराय दूरतः ।। ५४।।
अवमानमृणं वैरं विघ्नो भाग्यविपर्ययः ।
ईश्वराज्ञा च कल्प्यन्ते कारणं ग्रहपीडने ।। ५५।।

ग्रहपीडा किन कारणों से होती है, किन स्थानों से होती है तथा उनसे कैसे बचा जा सकता है ? यह सब कहते हैं । इन कारणों से दूर से ही बचना चाहिए ।।५४।।

(१) अवमानना, (२) ऋणग्रस्तता, (३) वैर, (४) विघ्न, (५) भाग्यविपर्यय तथा (६) ईश्वरेच्छा—इन छः कारणों से ग्रहों की पीड़ा होती है । व्यक्ति को ग्रहों के अपमान, वैर, विघ्नादि से बचना चाहिए ।

यहाँ ग्रहों से तात्पर्य भूत-प्रेत-पिशाचादि से है ।

ग्रहाणां वासस्थानानि

गुहाश्मकूटशैलाग्रवनोपवनसानुषु ।
सरिद्वापीसरकूपतटाकोदन्वतां तटे ।। ५६।।
सङ्गमे सरिदावर्ते गोकुले शून्यमन्दिरे ।
एकवृक्षे चितास्थाने प्रभ्रष्टे देवतागृहे ।। ५७।।
निधिदेशे रसक्षेत्रे विलद्वारे चतुष्पथे ।
ग्रामसीमान्तरे मातृस्थाने च क्षेत्रतीर्थयोः ।। ५८।।
आरामोद्यानयोः सौधे प्रासादाट्टालिकेषु च ।
क्रीडापरा वसन्त्येते स्थानेष्वेतेषु हि ग्रहाः ।। ५९।।

(१) गुहा—सुनसान गुफाओं में ग्रहादि प्रेतादि रहते हैं, (२) कूटाश्म—जो स्थान प्रतिध्वनि को गुंजाता है वह कूटाश्म है, (३) शैलाग्र—पहाड़ों की चोटी या शिखर आदि, (४) वन, (५) उपवन, (६) नदी, (७) बावड़ी, (८) जलाशय, (९) पोखर, (१०)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

झरने—इनके भीतर तथा किनारों पर, (११) नदियों के सङ्गम, (१२) नदियों के आवर्त (भँवर जो घुमावदार स्थानों पर होते हैं), (१३) गोशालादि में, (२४) सूने मकानों में, (१५) एक वृक्ष जो अकेला खड़ा हो, जिसके चारों ओर दूर तक वृक्ष न हो ऐसे वृक्ष पर, (१६) श्मशान में, (१७) टूटे-फूटे मन्दिर में, (१८) जहाँ धन गड़ा हो उस स्थान पर, (१९) कीचड़ वाले स्थान में, किसी बड़ी सुरंग के द्वार पर, (२०) चौराहे पर, (२१) ग्रामसीमा पर, (२२) देवी के मन्दिर, (२३) धर्मक्षेत्र, (२४) तीर्थस्थान, (२५) बाग-बगीचे, (२६) विशाल इमारत, (२७) हवेली तथा (२८) गगनचुम्बी अटारी—इन स्थानों पर ये प्रेत, भूत, पिशाच, गण इत्यादि क्रीडा करते हुए विचरण करते हैं ॥५६-५९॥

शास्त्रान्तरोक्तिः

संज्ञाः संख्याः स्वभावाश्च सन्ति शास्त्रान्तरोदिताः ।
बाधन्ते ये नरास्तेषां कथ्यन्ते तेऽप्यनन्तरम् ॥ ६०॥

शास्त्रान्तरों में पीड़ादायक ग्रहों के नाम, उनकी संख्या, उनके स्वभाव तथा उनके द्वारा मनुष्यों को पीड़ी देने वाली बाधाएँ—इनका भी वर्णन अब इसके बाद किया जा रहा है ॥६०॥

ग्रहाणां संख्या

पीडका ये मनुष्याणां ग्रहास्ते सप्तविंशतिः ।
अष्टादश महान्तस्तेषूच्यन्तेऽत्राखिलाश्च ते ॥ ६१॥

मनुष्यों को जो पीड़ादायक ग्रह हैं उनकी संख्या सत्ताईस हैं जिनमें अठारह ग्रह बहुत पीड़ादायक होते हैं तथा नौ ग्रह अल्प पीड़ा करने वाले हैं । उन सभी का वर्णन यहाँ किया जा रहा है ॥६१॥

यहाँ ग्रह शब्द का अर्थ आकाशीय पिण्ड या फलित ज्योतिष के ग्रह नहीं हैं अपितु यह भूतविद्या में वर्णित विशेष दुष्टात्माओं के नाम हैं । यहाँ ग्रह का अर्थ दुष्टात्मा है ।

अष्टादश महाग्रहाः

अमरा असुरा नागा यक्षा गन्धर्वराक्षसाः ।
हेद्रकश्मलनिस्तेजभस्मकाः पितरः कृशाः ॥ ६२॥
विनायकः प्रलापाश्च पिशाचान्त्यजयोनिजाः ।
भूताश्चेति समाख्याता अष्टादश महाग्रहाः ॥ ६३॥

(१) अमर, (२) असुर, (३) नाग, (४) यक्ष, (५) गन्धर्व, (६) राक्षस, (७) हेद्र (हेढ़), (८) कश्मल, (९) निस्तेज, (१०) भस्मक, (११) पितर, (१२) कृश, (१३) विनायक, (१४) प्रलाप, (१५) पिशाच, (१६) अन्त्यज, (१७) योनिज तथा (१८) भूत —ये अठारह महाग्रह होते हैं ॥६२-६३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नवसंख्यका लघुग्रहाः

अपस्मारो द्विजो ब्रह्मराक्षसोऽवनिभुग्विशौ ।
वृषलो नीचचाण्डालौ व्यन्तराश्च नव ग्रहाः ।। ६४।।

(१) अपस्मार, (२) द्विज, (३) ब्रह्मराक्षस, (४) अवनिभुक् (क्षत्रिय), (५) वैश्य, (६) वृषल, (७) नीच, (८) चाण्डाल तथा (९) व्यन्तराय—ये नौ लघुग्रह होते हैं ।।६४।।

अन्यानां ग्रहाणामपि कथनम्

रुद्रक्रोधोद्भवा एते ह्यन्ये च बहवो ग्रहाः ।
बलिकामा रन्तुकामा हन्तुकामा इति त्रिधा ।। ६५।।
एते ग्रहाः पुनर्ज्ञेयाः सौम्यताग्नेयतावशात् ।
द्विधा च तद्भिदा ज्ञेया ग्रहतत्स्थितिभेदतः ।। ६६।।

जिस समय भगवती सती ने शरीर त्याग दिया तब भगवान् शंकर के क्रोध से जो ग्रह उत्पन्न हुए वे यहाँ वर्णित हैं । इनके अतिरिक्त और भी बहुत-से ग्रह हैं, जो कि तीन प्रकार के होते हैं—

(१) बलिकामा—ये बलि की इच्छा करते हैं ।

(२) रन्तुकामा—ये रमण के इच्छुक होते हैं ।

(३) हन्तुकामा—इनकी इच्छा व्यक्तियों को मार डालने की होती हैं ।

इन ग्रहों के सौम्यता तथा उग्रता के अनुसार पुनः दो भेद होते हैं । इन सबको उन के स्थिति भेद से समझना चाहिए ।।६५-६६।।

हन्तुकामा ग्रह पीड़ित व्यक्ति की जीवनलीला ही समाप्त कर डालते हैं ।

अत्र ग्रन्थान्तरम्

बाधन्ते हन्तुकामाः कतिचन कतिचिद्देवता भोक्तुकामाः,
पुन्नारी रन्तुकामाः पुनरपि कतिचित्तासु या हन्तुकामाः ।
घ्नन्त्येवैता गृहीत्वा बलिमिह विभृजन्त्यत्र या भोक्तुकामा;
रन्तुं या बाधमाना अपि च बलिशतैर्नैव ता सन्त्यजन्ति ।। ६७।।

इन ग्रहों में जो हन्तुकामा होते हैं वे बाधा करते हैं । कुछ बलिद्रव्य (भोग-सवैया) आदि ग्रहण करने की इच्छा से बाधा करते हैं, वे भोक्तुकामा कहलाते हैं । कुछ ग्रह पुरुष या स्त्री के साथ सम्भोग करने की इच्छा से उसे पीड़ित करते हैं । लेकिन जो हन्तुकामा होते हैं वे तो पीड़ित व्यक्ति के प्राण ही हर लेते हैं । जो बलिकामा (भोक्तुकामा) होते हैं वे बलि से तृप्त होकर पीड़ित को मुक्त कर देते हैं और वह पीड़ा रहित हो जाता है । लेकिन जो रन्तुकामा होते हैं वे सौ बार भी बलि देने से पीड़ित व्यक्ति को नहीं त्यागते, वे तो उसके साथ रमण करते ही रहते हैं ।।६७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देवादिमहाग्रहेभ्यः पीडितानां लक्षणम्

देवग्रहादिभिः प्रोक्तं पीडितानां पृथक् पृथक् ।
लक्षणं तेन च ज्ञेया ग्रहभेदा हि तद्यथा ।। ६८ ।।

अमरादि ग्रहों से पीड़ित व्यक्तियों के लक्षणों का अब पृथक्-पृथक् वर्णन किया जा रहा है । उन लक्षणों के अनुसार ही पीड़ित व्यक्ति किस ग्रह से पीड़ित है यह जाना जा सकता है ।।६८।।

देवावेशितलक्षणम्

स्नातः सुगन्धस्तेजस्वी हृष्टो देवालये रतः ।
अल्पवागल्पविण्मूत्रः स्वल्पभुक्तिरकोपनः ।। ६९ ।।
गन्धमाल्यप्रियो धीरः सौम्यदृष्टिः सुरग्रही ।। ६९१/२ ।।

जो व्यक्ति अमर ग्रह (देवग्रह) से पीड़ित होता है वह स्नान द्वारा शरीर को स्वच्छ रखता हैं, सुगन्धित पदार्थों का शौकीन होता है । वह तेजस्वी दिखता हैं, उसका मन प्रसन्न रहता हैं । वह सदैव मन्दिर में पूजा-अर्चना में लगा रहता है, थोड़ा बोलता हैं । वह मल-मूत्र का त्याग बहुत अल्पमात्रा में करता हैं । वह भोजन भी कम करता हैं, उसे क्रोध आना ही बन्द हो जाता है । वह सुगन्धित मालाएँ धारण करने लगता है । सबसे प्रेम करता है। वह एकदम धैर्यवान् हो जाता है । उसके नेत्र सुन्दर दिखने लगते हैं । यदि व्यक्ति में अचानक इतने सारे परिवर्तन हो जायें, उसका पूर्व का स्वभाव बदल जाय तब उसे अमर (देव) ग्रह से पीड़ित समझना चाहिए ।।६९-६९१/२।।

असुरावेशितलक्षणम्

देवान्निन्दन् स्तुवन् दैत्यान् ब्रह्मा द्विड् जिह्मलोचनः ।। ७० ।।
दुष्टात्मा निर्भयो दृप्तो गर्वहासी स विस्मयः ।
मुद्रां बध्नन् प्रभूताशी सकम्पाङ्गोऽसुरग्रही ।। ७१ ।।

जब कोई पुरुष अचानक ही देवताओं की निन्दा, दैत्यों (दुष्टों) की प्रशंसा करने लगे; ब्राह्मणों, साधुओं से द्वेष करने लगे; जो जिह्मलोचन (विस्फारित नेत्रों वाला) हो जाय; दुष्टात्मा, निर्भय, घमण्डी, गर्व के साथ हँसने वाला, हँसी उड़ाने वाला, जिसकी मुखाकृति पर विस्मय का भाव हो (अथवा अजीबोगरीब मुखमुद्रा दिखलायी पड़ती हो), बहुत खाने वाला हो तथा जिसके अंग अचानक काँपते रहें उसे असुर ग्रह से पीड़ित समझना चाहिए ।।७०-७१।।

नागावेशितलक्षणम्

पानीयगुडदुग्धादिपिपासुः सृक्कणी लिहन् ।
भुवि प्रसर्पि रक्ताक्षः क्रोधालुरचले वसन् ।। ७२ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सकम्पाङ्गो दशन् दन्तान् पुष्पेच्छुर्नागपीडितः।

जिस व्यक्ति को शर्बत, गुड़, दूध आदि पीने की इच्छा बनी रहे; जो होंठों पर जीभ फेरने लगे, जिसे भूमि में लोट-पोट होना एवं सरकना अच्छा लगने लगे, जिसके नेत्र रक्तवर्ण हो, क्रोधातुर हो, जिसे पहाड़ो एवं गुफाओं में रहना अच्छा लगने लगे, जिसके अंग काँपते हों, जो दाँतों को किट-किटाता रहता हो तथा पुष्पों का इच्छुक बना रहता हो उसे नाग ग्रह से पीड़ित समझना चाहिए ।।७२१/२।।

यक्षग्रस्तस्य लक्षणम्

धीरस्त्यागी मनोगामी रक्तकल्पानलेक्षणः ।। ७३।।
भोगान्धो गन्धवाहाशी ज्ञेयो यक्षग्रही क्षमी ।। ७३१/२।।

जो व्यक्ति धैर्यशाली, त्यागी, जल्दी-जल्दी चलने वाला, रक्ताभ अग्नि सदृश नेत्रों वाला, भोग-विलास में मस्त रहने वाला, कभी-कभी बिना आहार के भी बना रहने वाला अथवा केवल गन्ध सूँघकर ही तृप्त होने वाला तथा क्षमाशील व्यक्ति यक्ष ग्रह से पीड़ित होता है ।।७३-७३१/२।।

गन्धर्वग्रसितलक्षणम्

अल्पवाग्गन्धमाल्यादिप्रियः सङ्गीतनर्तनः ।। ७४।।
पुलिनादौ वसन् जानन् परोक्षं मुखवाद्यकृत् ।
पिबन् क्षीरं हसन् क्रीडन् हृष्टो गन्धर्वपीडितः ।। ७५।।

"गन्धर्व" नामक ग्रह से पीड़ित व्यक्ति कम बोलता है । उसे सुगन्धित पदार्थ माला इत्यादि अच्छे लगते हैं । उसे नाचना, गाना, बजाना अच्छा लगता है । वह नदी किनारे रहना पसन्द करता है, वहाँ बालू में बैठना उसे खूब रुचता है । वह परोक्ष की बातों को (अपनी अन्तर्दृष्टि से) जान लेता है । अपने मुख से अनेक प्रकार की वाद्य ध्वनियाँ निकालता हैं अर्थात् बिना मुखवाद्य के ही बाजे जैसी ध्वनि निकालता है । वह दूध पीता है; हँसने, खेलने तथा मौज-मस्ती में रमा रहता है ।।७४-७५।।

राक्षसग्रहगृहीतलक्षणम्

प्रधावन्नात्ममांसानि खादन् मद्यासृजी पिबन् ।
शून्यग्रामोषितस्ताम्रो निर्लज्जो निष्ठुरः सरुट् ।। ७६।।
शौचद्वेषी निशाचारी बलवान् राक्षसग्रही ।

राक्षस ग्रह से पीड़ित व्यक्ति खूब तीव्र गति से दौड़ता है । वह अपना ही मांस नोचकर या काटकर खा लेता है । वह रक्त (Blood) तथा मद्य पीता है (वह सामने पड़ने वाले मनुष्य या जानवर का भी मांस खा जाता है और रक्त पी जाता है । समाचारपत्रों में ऐसी घटनाएँ पढ़ने को मिलती हैं, डॉक्टर तथा पुलिस ऐसे व्यक्तियों को पागल मान लेते

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हैं)। वह सुनसान बस्ती में रहता है, उसका रंग ताम्रवर्ण होता है, उसे किसी प्रकार की लज्जा नहीं आती। वह निर्दयी, शीघ्र क्रोधी होता है। उसे शौच (स्नान, मंजन, कुल्ला, वस्त्रों की स्वच्छता) से चिढ़ होती है। वह रात्रि में विचरण करता है। उसके शरीर में बहुत बल होता है ॥७६-७६½॥

इसी प्रकार के लक्षण माधवनिदान में "राक्षसजुष्टोन्माद" के दिये गये हैं—

"मांसासृक् विविधसुराविकोरलिप्सु-
निर्लज्जो भृशमति निष्ठुरोऽतिशूरः।
क्रोधालुर्विपुलबलो निशाविहारी,
शोचद्विड् भवति स राक्षसैर्गृहीतः" ॥

(मा.नि. २०।२४)

हेद्रपीड़ितलक्षणम्

स्मेरास्योऽधोमुखः किञ्चिदपश्यञ्छन्नमुष्टिकः॥ ७७॥
जानुन्यस्तशिराः क्रूरदृष्टिर्हेद्रग्रही नरः।

हेद्र ग्रह को संस्कृत में हेड्र तथा हेढ्र भी कहते हैं तथा ग्रामीण अञ्चलों में इसे 'हेड़' भी कहते हैं। इससे ग्रसित व्यक्ति के लक्षण निम्न प्रकार से हैं—

"जिसकी मुखमुद्रा विस्मयकारक (अजीबोगरीब) हो, जिसका मुख नीचे को लटका रहता है, जो सामने न देखता हो तथा अन्धे की भाँति चलता हो, जो अपनी मुट्ठियाँ भींचकर उन्हें वस्त्रों में छिपाये रखता हो, जो अपने घुटनों में सिर छिपाकर उकडूं बैठता हो तथा क्रूर दृष्टि वाला हो वह हेद्र ग्रह से पीड़ित होता है ॥७७-७७½॥

"हेड्रः" शब्द देववाणी संस्कृत की "हेड्र" धातु से बनता है जिसका अर्थ अवज्ञा करना या अपमान करना होता है। यह धातु अनुशासनहीनता को सूचित करती है। इसका अर्थ क्रोध तथा अप्रसन्नता व्यक्त करना भी होता है। यह अड़ियल, गुस्सैल, बिगड़ैल तथा अनियंत्रित स्वभाव से सम्बन्धित क्रियाओं को व्यक्त करती है। एक जनजाति जो "हेड़िया" कहलाती है, उसका भाषाशास्त्रीय सम्बन्ध इसी धातु से निकला है। अरबी भाषा का 'हैदर्' शब्द भी इसी धातु से निकला है जिसका अर्थ सिंह (शेर, बाघ) तथा "हटा देने वाला" होता है। भाषावैज्ञानिक परिवर्तनों के कारण द, ड, ढ़ ये तीनों वर्ण (अक्षर) एक से दूसरे में बदल जाते हैं।

कश्मलग्रहपीडितलक्षणम्

विट्पङ्कलेपी निःशौचो भस्मशायी रुदन् हसन्॥ ७८॥
स्त्रीद्रोही त्रासयन् जन्तून् सदाश्नन् कलहप्रियः।
रागी परार्थहृत् क्रुद्धः स्वल्पवाक्कश्मलग्रही॥ ७९॥

कश्मल ग्रह से गृहीत व्यक्ति शरीर में विष्टा, कीचड आदि लपेटे रहता है; शौच-सफाई नहीं रखता (मलत्याग के पश्चात् गुदादि को स्वच्छ नहीं करता)। राख में पड़ा रहता

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। कभी रोता है कभी हँसता है। स्त्रियों से द्वेष करता है। जीव-जंतुओं को अकारण त्रास देता रहता है। हमेशा कुछ-न-कुछ खाता-पीता रहता है। लड़ता-झगड़ता रहता है। वह रागी (आवेशयुक्त = भावनायुक्त =Sensual) होता है। दूसरों से वस्तुएँ छीन लेता हैं। शीघ्र क्रोधित होता है तथा कम बोलता है ॥७८-७९॥

निस्तेजग्रहलक्षणम्

निस्तेजा विह्वलः पश्यन्निर्निमेषणमब्रुवन् ।
परिहासितवेद्यश्च निस्तेजो ग्रहपीडितः ॥ ८० ॥

निस्तेज ग्रह से पीड़ित व्यक्ति के शरीर की कान्ति फीकी होती है। वह विह्वल होकर बिना कुछ बोले (चुपचाप) टकटकी लगाकर देखता रहता है। उसे देख कर हँसी आती है ॥८०॥

वक्तव्य—कुछ प्रतियों में "विह्वल:" के स्थान पर "विडल:" भी पाठान्तर है जिस का अर्थ इधर-उधर भटकने वाला होता है। इसी प्रकार "वेद्यश्च" के स्थान पर "वैद्यश्च" पाठ है जिस का अर्थ चिकित्सक होता है और "परिहासितवैद्यश्च" का अर्थ वैद्यों की हँसी उड़ाने वाला होता है।

भस्मकग्रहपीड़ितलक्षणम्

असङ्गतार्थवाग्द्वेषी शीताङ्गस्तिर्यगीक्षणः ।
भुक्तावतृप्तः कृष्णाङ्गो निर्मलो भस्मकग्रही ॥ ८१ ॥

भस्मक ग्रह से पीड़ित व्यक्ति असंगत बोलता है (अंट-शंट बकता है), सबसे द्वेष करता है। उसका शरीर ठण्डा रहता है। वह तिरछी नजर से देखता है। वह कितना भी भोजन क्यों न कर ले परन्तु तृप्त नहीं होता है। उसके शरीर का रंग काला होता है तथा साफ-स्वच्छ रहता है ॥८१॥

भुक्तावतृप्तः —इसका अर्थ है भोजन से तृप्त न होना। यह लक्षण कुछ अन्य शारीरिक तथा मनोदैहिक रोगों मे भी पाया जाता है अत: उनसे भी इसका भेद अच्छी तरह कर लेना आवश्यक है। जब भस्मक ग्रह के ऊपर वर्णित सभी लक्षण मिलते हों तभी व्यक्ति को भस्मक ग्रह से पीड़ित समझना चाहिए, अन्यथा किसी वैद्य-डॉक्टर को दिखाना ही श्रेयस्कर होगा। क्योंकि क्षुधाधिक्य तथा अतृप्ति का लक्षण दो अन्य रोगों में भी मिलता है। एक रोग को आयुर्वेद में भस्मक रोग (Bulimia) कहते हैं जो मधुमेह, कालाजार, कृमिरोग, गलगण्ड आदि रोगों का लक्षण होता है। दूसरा अतृप्ति रोग (Akoria) कहलाता है जो हिस्टीरिया या न्यूरस्थेनिया (अपतंत्रक एवं नाड़ीदौर्बल्य) के कारण होता है।

पितृग्रहपीडितलक्षणम्

दर्भेषु निर्वपन् पिण्डान् प्रेतानां सोदकक्रिया ।
तिलमांसगुडादीनि कांक्षन् शान्तः पितृग्रही ॥ ८२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पितृग्रह से पीड़ित व्यक्ति कुशों के ऊपर पिण्ड रखता है, प्रेतों को जल देता रहता है (तर्पण करता है) । उसे तिल, मांस तथा गुड़ अधिक रुचते हैं; इनकी उसे सदैव इच्छा रहती है । उसका स्वभाव शान्त होता है ॥८२॥

माधवनिदान में पितृजुष्टोन्माद के लक्षण इसी प्रकार हैं—

"प्रेतानां स दिशति संस्तरेषु पिण्डान् ;
शान्तात्मा जलमपि चापसव्यवस्त्रः ।
मांसेप्सुस्तिलगुडपायसाभिकामः
तद्भक्तो भवति पितृग्रहाभिजुष्टः" ॥

कृशग्रहपीडितलक्षणम्

एकान्तवासी शुष्काङ्गः प्रधावन् दारुणध्वनिः ।
पृष्टो न व्याहरन्भुक्तौ न तृप्यति कृशग्रही ॥ ८३॥

कृश ग्रह से पीड़ित व्यक्ति एकान्त में रहता है, उसका शरीर सूखकर काँटा हो जाता है । वह दौड़ता है तो ऐसा लगता है मानो कि उड़ रहा हो । उसकी आवाज कर्कश होती है, पूछने पर भी कुछ उत्तर नहीं देता है । उसे भोजन से तृप्ति नहीं होती है ॥८३॥

विनायकग्रहलक्षणम्

मार्जन् पादरजो मुञ्चन् शूत्कारान् छर्दयन् सदा ।
दन्तान् कटकटायन्यः स ग्रहः स्याद्विनायकः ॥ ८४॥

जो व्यक्ति विनायक ग्रह से पीड़ित होता है वह अपने पैरों की धूल झाड़ता रहता है, खूब डकारें लेता रहता हैं तथा उल्टियाँ करता रहता हैं । उसके दाँत कटकटाते रहते हैं ॥८४॥

प्रलापग्रहपीडितानां लक्षणम्

भञ्जन् गात्राणि शुष्काङ्गो नृत्यन् स्वस्थः सकृद्धसन् ।
बहुभुग्बहुभाषी च प्रलापग्रहपीडितः ॥ ८५॥

प्रलाप ग्रह से प्रभावित व्यक्ति अपने शरीर के अंगों को चटकाता है; उन्हें मोड़ता, मरोड़ता तथा पीटता है । उसका शरीर सूख जाता है । वह लापरवाहीपूर्वक कभी हँसता है, कभी नाचता है तथा बहुत खाता है और बहुत बोलता है ॥८५॥

पिशाचग्रहग्रस्तलक्षणम्

खररूक्षस्वरः शून्यभिन्नसेवी प्रलापकः ।
दुर्गन्धिश्चाशुचिर्लोलः पिशाचग्रहपीडितः ॥ ८६॥

पिशाच ग्रह से पीडित व्यक्ति कठोर तथा रूखी आवाज वाला होता है । वह ऐसे स्थान में रहना पसन्द करता है जो खण्डहर तथा उजाड़ हो, बकवास बहुत करता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दुर्गन्धित तथा मैला-कुचैला रहता है। उसे अपवित्र भोजन तथा रहन-सहन ही अच्छा लगता है ॥८६॥

पिशाचग्रस्त उन्माद रोगी के लक्षण भी बिलकुल ज्यों-के-त्यों माधवनिदान (२०।२५) में इसी प्रकार के हैं—

"उद्धस्तः कृशः परुषोऽचिरप्रलापी
दुर्गन्धो भृशमशुचिस्तथाऽतिलोलः।
बह्वाशी विजनवनान्तरोपसेवी
व्याचेष्टन् भ्रमति रुदन् पिशाचजुष्टः"॥

अन्त्यजग्रहपीडितानां लक्षणानि

तर्जयन् लोलरक्ताक्षो लुब्धो विट्पङ्कलेपकः।
बहुभुक्साङ्गकम्पश्च दीनवागन्त्यजग्रही॥ ८७॥

जो व्यक्ति अन्त्यज ग्रह से पीड़ित होता है वह लोगों को ताड़ना देता है, मारता-पीटता-फटकारता है, उसके नेत्र लाल रहते हैं। वह लोभी-लालची होता है। शरीर में गन्दगी तथा कीचड़ लपेटे रहता है। बहुत भोजन करता है। शरीर काँपता है तथा दीन वाणी बोलता है ॥८७॥

तात्पर्य यह है कि अन्त्यज ग्रह से पीड़ित व्यक्ति कभी आक्रामक हो उठता है और कभी दीन तथा विनम्र हो जाता है।

योनिजग्रहलक्षणम्

बहुभुक् चिन्तितज्ञानन् पिशिताशि चलेक्षणः।
निर्मर्यादो मेषगन्धः स्थिराङ्गो योनिजग्रही॥ ८८॥

जो पुरुष योनिज ग्रह से ग्रस्त होता है वह बहुत खानेवाला होता है। वह दूसरों के मन की बात को भाँप लेता है। वह कच्चा मांस खाने का शौकीन होता है। उसके नेत्र चंचल रहते हैं (तेजी से दाँये-बाँये घूमते रहते हैं)। वह लज्जा रहित तथा लोकमर्यादा से विहीन होता है। उसके शरीर से बकरे जैसी गन्ध आती है। उसके शरीराङ्ग जकड़े हुए रहते हैं ॥८८॥

भूतग्रहपीडितलक्षणम्

प्रहरन् जनमारोहन् वृक्षानुच्चापशब्दवाक्।
सर्वानुकारी विकृतो भवेद् भूतग्रही नरः॥ ८९॥

लोगों पर प्रहार करने वाला, ऊँचे पेड़ों पर चढ़ने वाला (अथवा ऊँचे स्थानों पर चढ़ने वाला), अपशब्द (गालियाँ) बकने वाला, हर किसी की नकल करने वाला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(अनुकरण करने वाला) या स्वांग (Mimicry) करने वाला तथा विकृत शरीर वाला व्यक्ति भूतग्रस्त होता है ॥८९॥

माधवनिदान (२०।१७) के अनुसार भूतोन्माद के लक्षण निम्न हैं—

"अमर्त्यवाग्विक्रमवीर्यचेष्टो ज्ञानादिविज्ञानबलादिभिर्यः ।
उन्मादकालोऽनियतश्च यस्य भूतोत्थमुन्मादमुदाहरेत्तम्" ॥

भूतोन्माद का समय अनिश्चित होता है ।

अपस्मारग्रहपीडितलक्षणम्

फेनोद्गारी विवृताक्षो निस्संज्ञः पतितो भुवि ।
सङ्कोचयन् कराङ्घ्र्यादि पीताङ्गो दशनान् दशन् ॥ ९० ॥

अपस्मार ग्रह से पीड़ित व्यक्ति के मुख से झाग निकलता है । उसकी आँखें फैली हुई हो जाती हैं । वह बेहोश होकर धरती पर या जहाँ कहीं भी गिर जाता है । अपने हाथ-पैरों को सिकोड़ता तथा दाँतों को कटकटाता है ॥९०॥

यह मृगी रोग (Epilepsy) नहीं है, क्योंकि अष्टाङ्गहृदय में आचार्य वाग्भट ने इसे स्कन्दापस्मार (विशाख) कहा है और इसके लक्षण निम्न प्रकार से दिये हैं—

"संज्ञानाशो मुहुः केशलुञ्चनं कन्धरानतिः ॥
विनम्य जृम्भमाणस्य शकृन्मूत्रप्रवर्तनम् ।
फेनोद्वमनमूर्ध्वेक्षा हस्तभूपादनर्तनम् ॥
स्तनस्वजिह्वासन्दंशसंरम्भज्वरजागराः ।
पूयशोणितगन्धश्च स्कन्दापस्मारलक्षणम्" ॥

(अष्टांगहृदय-उत्तरस्थान ३।९-११)

द्विजलक्षणं ब्रह्मराक्षसलक्षणञ्च

लब्धसंज्ञः पुनः स्वस्थः स्यादपस्मारवान्नरः ।
शुक्लमाल्याम्बरादीच्छुः पठन् वेदं कुशादिधृक् ॥ ९१ ॥
विप्रानुष्ठानकृच्छुद्धो भजन्देवान् द्विजग्रही ।
प्रायस्तुल्यक्रियो विप्रग्रहेण ब्रह्मराक्षसः ॥ ९२ ॥

(अपस्मार ग्रह से पीड़ित व्यक्ति होश में आकर पुनः ठीक हो जाता है ।)

अब द्विजग्रह के लक्षण बताते हुए कहते हैं कि श्वेत वस्त्र तथा माला इत्यादि का इच्छुक, कुशा धारण करने वाला तथा ब्राह्मणों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों को करने वाला व्यक्ति ब्रह्मग्रह से ग्रसित होता है ।

विप्र ग्रह (द्विज ग्रह) से मिलते-जुलते लक्षण ब्रह्मराक्षस में होते हैं ॥९१-९२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नृपग्रहपीडितलक्षणम्

रक्तपुष्पादिधृङ् नित्यं धावन्वल्गन् हसन् लिखन्।
सहिष्णुः क्षत्रचेष्टाकृद् गायन् गर्जन् नृपग्रही।। ९३।।

जो लाल रंग के फूलों की इच्छा करता हो; जो दौड़ता, नाचता, हँसता तथा कूदता हो, लिखता हो, सहनशील तथा क्षत्रियों जैसी चेष्टा करता हो। वीर रस के गीत गाता हो तथा गर्जना एवं हुकार करता हो उसे नृप ग्रह (क्षत्रिय ग्रह) से पीड़ित जानना चाहिए।।९३।।

वैश्यग्रहपीडितलक्षणम्

जृम्भमाणो हसन् क्रन्दन्नाक्रोशन् कर्षको वणिक् ।
नृत्यन्नवाच्यवाक्कुप्यन्दुर्विनीतो विशातुरः ।। ९४।।

जंभाई लेता हुआ, हँसता हुआ, रोता हुआ, चीखता-चिल्लाता हुआ, कृषि एवं वाणिज्य करने वाला, नाचनेवाला, गालियाँ बकने वाला, क्रोधित होने वाला तथा दुर्विनीत—इन लक्षणों से युक्त व्यक्ति वैश्य ग्रह से पीड़ित होता है ।।९४।।

वैश्य ग्रह को ही 'विश' ग्रह भी कहते हैं। तात्पर्य यह है कि जिसका कार्य व्यापार या दुकानदारी करना हो वह कोई अन्य कार्य करता हो; जैसे क्लर्क इत्यादि हो और अचानक बनिया जैसा आचरण करे तो उसे वैश्य ग्रह से पीड़ित समझें।

वृषलग्रहपीडितलक्षणम्

विण्मूत्रादिभुगव्यक्तवाङ्मेढ्रस्पृग् रुदन् हसन्।
विप्रद्विट् स्त्रीप्रियः साङ्गकम्पः स्याद् वृषलग्रही।। ९५।।

वृषल ग्रह से पीड़ित रोगी विष्टा-मूत्रादि का भक्षण करता है। उसके शब्द अस्पष्ट होते हैं अतः भाषा समझ में नहीं आती है। वह बार-बार अपने मेढ़ (लिंग = Penis) का स्पर्श करता है, कभी रोता है, कभी हँसता है। वह ब्राह्मणों से द्वेष करता है तथा स्त्रियों से प्रेम करता है। उसका शरीर काँपता रहता है ।।९५।।

शेषग्रहाणां मिश्रलक्षणम्

मिश्रचिह्ना स्मृता नीचचण्डालव्यन्तरा ग्रहाः।
मुञ्चामि किञ्चिद्देहीति ब्रुवन् गायन् हसन् मृदु ।। ९६।।

शेष ग्रहों में (नीच, चण्डाल तथा व्यन्तर) में मिश्रित या उनके नामों के अनुरूप लक्षण होते हैं।

सौम्य ग्रहों से पीड़ित व्यक्ति के मुख से "हमें कुछ दे दो तो इसे छोड़ दूँगा" इस प्रकार के वाक्य निकलते हैं। वे हँसकर, गाकर, मृदुतापूर्वक अपनी माँग रखते हैं (ऐसे ग्रहों से पीड़ित व्यक्ति शीघ्र स्वस्थ हो जाता है) ।।९६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हन्तुकामाग्रहाणां लक्षणानि

न मुञ्चामीति वागात्मप्रहर्ता परुषं वदन्।
सौम्याग्नेयग्रहावेतौ हन्तुकामं विवर्जयेत् ।। ९७।।
निपतन् वप्रवृक्षादेर्वह्न्यगाधाम्भसो विशन् ।
विधून्वन् मूर्धजान् हृष्टो वैद्यं पश्यन्प्रभाषितः ।। ९८।।
रुदन्नृत्यति रक्ताक्षो हन्तुकामग्रही नरः।

जो "नहीं छोड़ूँगा" इस प्रकार कहकर अपने शरीर को पीटने लगता है वह कठोर वचन वाला रोगी 'हन्तुकामा' ग्रह से पीड़ित होता है, उसे छोड़ देना चाहिए क्योंकि उसका उपचार असंभव है ।।९७।।

जो ऊँचे टीले-वृक्षादि से कूद पड़ता हो, अग्नि में तथा जल में कूद पड़ता हो, अपने शिर के केशों को बिखेरता हुआ, नोंचता हुआ, अकारण ही हँसने वाला, वैद्य-डाक्टर को देखकर जोर-जोर से बोलने वाला, रोते हुए नाचने वाला तथा लाल-लाल आँखों वाला रोगी "हन्तुकामा" ग्रह से पीड़ित हुआ करता है ।।९७-९८-९८१/२।।

बलिकामाग्रहलक्षणम्

पश्यन् समन्तादुद्विग्नः शूलदाहज्वरार्दितः।। ९९।।
क्षुत्तृष्णार्तः शिरोरोगी देहि देहीति यो ब्रुवन् ।

बलिकामा ग्रह से पीड़ित व्यक्ति चारों ओर देखता है, उद्विग्न रहता है , शूल तथा ज्वरादि लक्षणों से पीड़ित होता है । वह भूख-प्यास से व्याकुल होकर खाने-पीने को माँगता है तथा उसका शिर दर्द करता है ।।९९१/२।।

रन्तुकामाग्रहलक्षणम्

उद्विग्नः स्त्रीस्तनौ क्रीडन् प्रियवागनुपद्रवी ।। १००।।
स्नातो माल्याद्यलङ्कारी रतिं यो याचतेऽशुचिः।
बलिकामो रन्तुकामश्चैतौ साध्यौ तु मन्त्रिणा ।। १०१।।

जिसका मन उद्विग्न हो, जो स्त्री के शरीर (स्तनों आदि) से क्रीडा करता हो, प्रिय वचन बोलता हो, किसी प्रकार का उपद्रव (तोड़-फोड़, गाली-गलौज, शोर-शराबा, धमा-चौकड़ी आदि) न करता हो, अच्छी तरह स्नान करके गन्ध-माल्यादि से शरीर को सजाता हो, जो रति की कामना (संभोगेच्छा) प्रकट करता हो वह रन्तुकामा ग्रह से पीड़ित होता है ।

बलिकामी तथा रन्तुकामी इन दोनों ग्रहों से ग्रसित व्यक्ति का उपचार यदि तन्त्र-मन्त्र से किया जाय तो वह ठीक हो जाता है । अस्तु, इन दोनों प्रकार के ग्रहों से पीड़ितों का उपचार मंत्र-तंत्र के जानकारों से ही कराना चाहिए ।।१००-१०१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्लोक १०१ में "याचतेऽशुचिः" वाक्यांश का अर्थ है कि वह जब अपवित्र अवस्था में रहता है तो रति की याचना करता है, अन्यथा स्वच्छ अवस्था में रहते हुए वह रतिकामना नहीं करता ।

निदानपूर्वकचिकित्साकथनम्

चेष्टाभिरेवं पृथगीरिताभिर्विज्ञाय भूतान्यखिलानि मन्त्री ।
तेषां चिकित्सां विदधातु तत्तत् योग्याभिरव्यग्रमनाः क्रियाभिः ।। १०२।।

सर्वप्रथम व्यक्ति की चेष्टाओं से यह निश्चय करना चाहिए कि वह कौन-से ग्रह से पीड़ित है ? इसके पश्चात् ही मंत्री (मंत्र के जानने वाले वैद्य) उनकी चिकित्सा एकाग्रचित्त होकर देश-काल एवं पात्र का विचार करते हुए करें ।।१०२।।

तात्पर्य यह है कि जब तक बीमारी का निदान (Diagnosis) न हो तब तक उसका उपचार करना निरर्थक है । इसीलिए आयुर्वेद में कहा है—

"रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम् ।
ततः कर्म भिषक्कुर्यात् ज्ञानपूर्वं विचक्षणः ।।
व्याधेस्तत्त्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः ।
एतद् वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यः प्रभुरायुषः" ।।
(योगरत्नाकर)

ग्रहाणां खेटसम्बन्धः

ग्रहाणां पुनरेतेषां खेटसम्बन्ध ईर्यते ।
तथैव बाधकस्थानमपि शास्त्रान्तरोदितम् ।। १०३।।

जो आकाश में गमन करते हैं उन्हें खेट या खेचर (Planets) कहते हैं । वे लोगों को सुख-दुःख देते हैं, चराचर प्राणियों का ग्रहण (पकड़) करते हैं अतः ग्रह भी कहे जाते हैं । वे आकाश में चमकते तथा प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं । दूसरे वे अप्रत्यक्ष देव आदि ग्रह हैं जिनका वर्णन सत्ताईस के समूह में किया जा चुका है । अन्य भी देवग्रह हैं । इन सब ग्रहों का आकाशचारी ग्रहों से क्या सम्बन्ध है, उनके बाधक स्थान कौन-कौन से हैं उन सबका वर्णन अब किया जा रहा है ।।१०३।।

सारसङ्ग्रहात् खेचराणां ग्रहाः

भानो रुद्रगणोग्रदेवभुजगाधीशा विधोः किन्नरा
यक्षाद्या ग्रहपन्नगाः क्षितिसुतस्योग्रा हि रक्षोग्रहाः ।
भूता भैरवदेवताश्च शशिजस्याट्टालगाः किन्नरा
वागीशस्य शुभग्रहाः शुभतरा नागास्त्रिमूर्त्यादयः ।। १०४।।
यक्षीमातृभुजङ्गमा भृगुसुतस्यार्कात्मजस्याशुभा
भस्मारूक्षपिशाचकश्मलमुखा निस्तेजसंज्ञा ग्रहाः ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राहोस्सर्पपिशाचपन्नगभृतः प्रेतग्रहादुद्भवाः
केतोस्तेऽखिलदेहिनां विदधते रोगाननिष्टर्क्षगाः ।। १०५।।

(१) सूर्य के—रुद्रगण (भगवान् शिव के गण), उग्र देवगण तथा नागराज ये सब ग्रह हैं अर्थात् इनका संकेत सूर्य से मिलता है ।

(२) चन्द्र के—किन्नर, यक्ष, सर्प (सरकनेवाले) ये सब ग्रह हैं ।

(३) मंगल के—उग्रदेवता, राक्षस, भूत तथा भैरव आदि हैं ।

(४) बुध के—अट्टालिका में रहने वाले किन्नर ग्रह होते हैं ।

(५) गुरु के—गणेश, सौम्यनाग, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिवग्रह होते हैं ।

(६) शुक्र के—यक्षिणी, मातृगण तथा सर्पगण होते हैं ।

(७) शनि के—भस्मक, रूक्ष, पिशाच, चलमुख तथा निस्तेज नामक ग्रह होते हैं।

(८) राहु के—सर्प, पिशाच, पन्नग आदि ।

(९) केतु के—प्रेतग्रहादि ।

ये नव ग्रहों के ग्रह होते हैं ।।१०४-१०५।।

इनमें सभी खेटों में सर्प बताये गये हैं अत: उन सर्पदेवों का स्वभाव भी इन ग्रहों की प्रकृति के अनुसार पृथक् -पृथक् समझना चाहिए ।

बाधकस्थानगतग्रहपीडाकथनं सन्तानदीपिकातः

बाधकस्थानगे सूर्ये शैवभूतादिपीडनम् ।
चन्द्रे दुर्गाकृतं रोगं धर्मदेवकृतं गदम् ।। १०६।।
भौमे स्कन्दकृतं व्याधिं भैरवादिनिपीडनम् ।
सौम्ये गन्धर्वयक्षादिविमानस्थानवासिनाम् ।। १०७।।
जीवे ब्राह्मणशापञ्च देवानामपि कोपनम् ।
शुक्रे यक्षीकृतं रोगं ब्रह्मराक्षसपीडनम् ।। १०८।।
मन्दे तु भूतनाथानां शैवानां पीडनं तथा ।
राहौ सर्पकृतं रोगं केतौ चाण्डालदैवतम् ।। १०९।।
मान्दौ प्रेतकृतं रोगं प्रवदेन्मतिमान्नरः ।। ११०।।

सन्तानदीपिका के अनुसार यदि सूर्य (कुण्डली में) बाधक स्थान (श्लोक १११-११२ के अनुसार) में बैठा हो तो शिवजी के गणों तथा भूतगणों द्वारा पीड़ा होती है । यदि चन्द्रमा बाधकस्थान में हो तो दुर्गा के गणों एवं धर्मदेवों से रोगादि पीडा उत्पन्न होती है । यदि मंगल हो तो स्कन्द तथा भैरव आदि के द्वारा व्याधि उत्पन्न होती है । बुध के बाधकस्थानगत होने पर गन्धर्व, यक्ष तथा विमानस्थानवासी देवताओं का कोप होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरु के बाधक स्थान में बैठने पर ब्राह्मणशाप तथा देवकोप से रोगादि होते हैं। शुक्र इस स्थान में बैठकर यक्षी (यक्षिणी) तथा ब्रह्मराक्षस आदि के द्वारा रोगोत्पत्ति कराता है। शनि जब बाधकस्थान में स्थित हो तब शिवजी के भूतगणों द्वारा पीड़ा होती है। राहु की बाधकस्थान-स्थिति से सर्पदेवों द्वारा रोगादि कष्ट प्राप्त होता है। केतु इस स्थान में स्थित होकर चण्डालादि से कष्ट देता है। मान्दि (गुलिक) जब बाधक स्थान में हो तब बुद्धिमान् दैवज्ञ को प्रेतबाधा कहनी चाहिए ॥१०६-११०॥

बाधकस्थानगत ग्रहों से भूतादिपीडाबोधक चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	**बाधकगत ग्रह**
शैव-गण, भूत-गण	शाक्त-गण, धर्म-देव	स्कन्द, भैरव	गन्धर्व, यक्षगण, वैमानिक	ब्रह्म-शाप, देव-कोप	यक्षिणी, ब्रह्म-राक्षस	भूत-गण, शिव-गण	सर्प-गण	चण्डाल गण	**भूतादिबाधा-प्रद गण**

बाधकस्थानानि

आरूढराशौ चर आयराशौ स्थिरे तु बाधा नवमे विचिन्त्याः।
तथोभये कामगृहे त्रयाणां केन्द्रेषु चैषामिति केचिदाहुः ॥ १११॥

(१) यदि आरूढलग्न चर राशि है तो उस चर राशि से ग्यारहवीं राशि (भाव) बाधा स्थान होगा। (२) यदि आरूढ स्थिर राशि है तो उस राशि से नवम भाव बाधा स्थान है। (३) यदि आरूढलग्न की राशि द्विस्वभाव हो तो बाधास्थान कामगृह (सप्तम) स्थान उस राशि से होता है।

परन्तु कुछ विद्वानों का मत है कि तीनों प्रकार की राशियों अर्थात् चर, स्थिर एवं द्विस्वभाव में आरूढ स्थान से केन्द्रस्थान बाधास्थान होते हैं। इसके अनुसार यदि आरूढ चर है तो शेष तीन चर राशियाँ बाधक होंगीं। यदि आरूढ स्थिर है तो शेष तीन स्थिर राशियाँ बाधा भाव होंगीं। इसी प्रकार यदि आरूढ लग्न में द्विस्वभाव राशि है तो शेष तीन द्विस्वभाव राशियाँ बाधक स्थान होंगीं, क्योंकि वे केन्द्र में पड़ेगीं ॥१११॥

वक्तव्य—एक टीकाकार ने "त्रयाणां केन्द्रेषु चैषाम् इति केचिदाहुः" का अर्थ किया है उस राशि से तीन राशियाँ अर्थात् जैसे आरूढ यदि मेष हो तो वृष-मिथुन-कर्क ये बाधा स्थान होंगे। आरूढ यदि वृष हो तो मिथुन-कर्क-सिंह ये तीन बाधास्थान होंगे। इस अंग्रजी टीकाकार का मत समीचीन नहीं है, क्योंकि यहाँ प्रसंग चर-स्थिर-द्विस्वभाव का है अतः "त्रयाणां" का अर्थ होगा—"चर-स्थिर-द्विस्वभावानाम्" तथा "केन्द्रेषु चैषाम्" का अर्थ इनसे केन्द्र में।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राशीनां बाधकस्थानानि ।। (तृतीयमतम्)

कुम्भश्चराणामलिचापसिंहस्त्रीणामलिर्गोवृषभस्य नक्रः ।
कुम्भस्य कर्की मिथुनस्य धन्वी मीनस्य चापं खलु बाधकं स्यात् ।। ११२।।

सभी चर राशियों (मेष, कर्क, तुला, मकर) का बाधास्थान कुंभ राशि है । सिंह, कन्या, वृश्चिक, धनु इनका बाधास्थान वृश्चिक है । वृष राशि के लिए 'मकर' राशि बाधास्थान है । कुंभ के लिए कर्क बाधास्थान है । मिथुन का धनु तथा मीन का धनु बाधास्थान हैं ।।११२।।

पक्षत्रये प्राधान्यम्

बाधानिरूपणे पक्षास्त्रय इत्येषु गृह्यताम् ।
आदिमोऽन्त्यश्च सर्वत्र ग्राह्यो वा मध्यमः क्वचित् ।। ११३।।

ऊपर श्लोक १११ में बाधास्थान के दो मत दिये हैं, तीसरा मत श्लोक ११२ में दिया है । इन तीन में किस को माना जाय ? इसका उत्तर इस श्लोक में है, तदनुसार—

बाधा निरूपण हेतु ये तीन पक्ष वर्णित हैं । इन में पहला पक्ष तथा तीसरा पक्ष ही सब जगह विचार करें, जो दूसरा (बीच) पक्ष है—"त्रयाणां केन्द्रेषु चैषाम्" इसे तभी विचार करना चाहिए जब आदि एवं अन्तिम मत से निर्णय हो सके । इसीलिए ग्रंथकार ने मध्यम (दूसरे मत) के लिए क्वचित् शब्द का प्रयोग किया है ।।११३।।

बाधक राशिबोधक तीनों मतों का चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	राशि का नाम
११	१०	६	२	१	१२	५	४	३	८	७	६	प्रथम मत से राशि का अंक
११	१०	९	११	८	८	११	८	८	११	४	९	द्वितीय मत से राशि-अंक
४-७-१०	५-८-११	६-९-१२	१-७-१०	८-११-२	३-९-१२	१-४-१०	५-११-२	३-६-१२	४-१-७	५-८-२	३-६-९	तृतीय मत से राशि अंक

चक्र में सर्वमान्य मतों को प्रथम, द्वितीय में तथा गौण मत को तीसरे कोष्ठ में दिया है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पित्तोष्णेत्यादिविषये कथनम्

पित्तोष्णेत्यादयः श्लोकाः प्रश्नानुष्ठानपद्धतौ ।
ये प्रागुक्तविषये प्रोक्ताश्चिन्तयेदिह तानपि ।। ११४।।

"पित्तोष्णज्वरतापदहना....." इत्यादि श्लोक अध्याय १२ में दिये गये हैं उनका उपयोग भी यहाँ पर प्रश्नविचार एवं रोगाबाधा विचार से कर लेना चाहिए । वे श्लोक प्रश्नानुष्ठान पद्धति से उद्धृत किये गये हैं ।।११४।।

दृष्टिबाधायोगाः

बाधकाधिपतिर्लग्नं लग्नेशं वा यदीक्षते ।
त्रिदशादीक्षणेनापि बाधा स्याद्दृष्टिसम्भवा ।। ११५।।
बाधकस्थानगेऽस्तेशे तद्द्वयाधिपयोर्मिथः ।
योगे दृष्टौ च वक्तव्या बाधा दृष्टिसमुद्भवा ।। ११६।।

यहाँ पूर्व में कहे गये बाधास्थान का स्वामी यदि लग्न या लग्नेश को पूर्ण दृष्टि से देखता है तो दृष्टिजन्य बाधा होती है । यहाँ सप्तम के अतिरिक्त ग्रहों की दृष्टि ३-१०, ९-५ तथा ४-८ स्थानों पर भी होने से ग्रहों की बाधा होती है ।।११५।।

प्रत्येक ग्रह की तीसरे-दशवें स्थान पर एक चरण दृष्टि (१/४) होती है परन्तु शनि की पूर्ण दृष्टि ही इन स्थानों पर होती है । त्रिकोण (९-५) स्थानों पर प्रत्येक ग्रह की द्विपाद दृष्टि (आधी = १/२भाग) होती है परंतु गुरु इन स्थानों को पूर्ण दृष्टि से देखता है । इसी प्रकार चतुर्थ तथा अष्टम भावों पर प्रत्येक ग्रह अपने स्थान से त्रिपाद (३/४ भाग) दृष्टि डालता है परन्तु मंगल जहाँ होता है वहाँ से इन स्थानों पर पूर्ण दृष्टि डालता है । जैसा कि लघुपाराशरी का कथन है—

"पश्यन्ति सप्तमं सर्वे शनिजीवकुजादयः ।
विशेषतश्च त्रिदशत्रिकोणचतुरष्टमान् ।।"

इसीलिए श्लोक ११५ में "त्रिदशादीक्षणे वापि" का प्रयोग है । अतः वहाँ केवल सप्तम दृष्टि ही नहीं अपितु अन्य दृष्टियों से भी बाधा होती है, ऐसा जानना चाहिए । पूर्ण दृष्टि में बाधा पूरी होगी, शेष दृष्टियों में बाधा का प्रभाव उन दृष्टियों के प्रभाव के अनुसार ही होगा । त्रिपाद दृष्टि में तीन चौथाई प्रभाव, द्विपाद में आधा प्रभाव तथा एकपाद दृष्टि में दृष्टिजन्य बाधा का केवल चौथाई प्रभाव होता है ।

यदि सप्तम स्थान का अधिपति बाधास्थान में हो या वह बाधेश के साथ युति-दृष्टि का सम्बन्ध स्थापित कर ले तो भी दृष्टिजन्य बाधा होती है ।।११६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सन्तानदीपिकामतम् (देवदृष्टितो रुजा)

चरराशियुते लग्ने धरासुतयुते मदे ।
लग्ने सहितपापे च देवतादर्शनाद्रुजा ।। ११७।।

यदि प्रश्नलग्न में चरराशि हो तथा मंगल सप्तम भाव में बैठा हो तथा लग्न में पाप ग्रह हो या विकल्प से लग्नेश की पापयुति या दृष्टियुति हो तो देवता के दर्शन से पीड़ा होती है ।।११७।।

यहाँ "देवतादर्शनाद्रुजा" का मतलब है "देवग्रह" नामक ग्रह की दृष्टि व्यक्ति पर पड़ने से उसे पीड़ा हुई है । दृष्टिबाधा का यही अभिप्राय है ।

पिशाचदृष्टितो रुजाकथनम्

शुभेतरयुते लग्ने सप्तमस्थे शनैश्चरे ।
चन्द्रे पापग्रहैर्दृष्टे पिशाचालोकनाद्रुजा ।। ११८।।

यदि लग्न में पाप ग्रह तथा सप्तम भाव में शनि बैठा हो तथा चन्द्रमा पर पाप ग्रह की दृष्टि हो तो इस ग्रहयोग से व्यक्ति पर पिशाच की नजर पड़ने से दृष्टिबाधाजन्य कष्ट होता है ।।११८।।

ग्रहपीडाप्रयोजनज्ञानम्

लग्नेशबन्धुर्यदि बाधकेशो रन्तुं निहन्तुं यदि तस्य शत्रुः ।
भोक्तुं समश्चेद्ग्रहपीडनं स्यादेवं त्रिधा दैवविदो वदन्ति ।। ११९।।

(१) यदि बाधाधिपति ग्रह तथा लग्नेश में परस्पर मैत्री हों तो रमण करने के लिए ग्रहपीड़ा होती है । (२) यदि बाधकेश तथा प्रश्नलग्नेश में शत्रुता हो तो मारने के लिए (हन्तुकामा) पीड़ा होती है । (३) यदि प्रश्नलग्नेश का बाधकेश सम हो तो भोक्तुं (बलिभोग) के लिए ग्रहपीडा होती है । इस प्रकार दैवज्ञ जन तीनों प्रकार के प्रयोजनों को कहते हैं ।।११९।।

अन्यमतेन ग्रहपीडाप्रयोजनकथनम्

अन्ये तु लग्नेश्वरदृष्टयुक्ते रन्तुं निहन्तुं मृतिषष्ठपाभ्याम् ।
बाधाधिपेऽन्यैरिह भोक्तुमेवं ग्राह्यौ विरोधे सति पूर्वपक्षः।। १२०।।

अन्य दैवज्ञों के अनुसार (१) यदि बाधाधिपति लग्नेश से दृष्ट या युक्त हो तो रमणेच्छा से ग्रह की पीड़ा होती है । (२) यदि वह बाधकेश षष्ठेश तथा अष्टमेश दोनों से दृष्ट या युत हों तो मारणेच्छा से ग्रह की पीड़ा होती है । (३) यदि अन्य स्थान के स्वामियों से (लग्नेश, षष्ठेश तथा अष्टमेश इन तीनों को छोड़कर) बाधकेश का युति या दृष्टि सम्बन्ध हो तो बलिभोग के लिए ग्रहपीड़ा हुई है, ऐसा जानना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि इन तीनों पक्षों में परस्पर विरोध हो, सामंजस्य न हो तो श्लोक (११९ के अनुसार) पूर्व मत से ही निर्णय करना उचित है ।

मैथुनकाले दृष्टिपीडाकथनम्

शुक्रर्क्षगोऽथ तद्दृष्टो बाधकस्थानगो ग्रहः ।
यदि भार्योद्भवं विद्याद् भार्याभर्तृसमागमे ।। १२१ ।।

यदि बाधाभाव में शुक्र की राशि हो और उसमे पूर्वोक्त ग्रह स्थित हो या वह ग्रह शुक्र से दृष्ट हो तो पति-पत्नी के मैथुन समय में उस ग्रह की दृष्टिजन्य बाधा पत्नी को उत्पन्न हुई है ऐसा जानना चाहिए ।।१२१।।

बाधास्थलम्

बाधासम्भवदेशस्तु बाधकस्थानराशिना ।
वाच्यो मेषादिराशीनां प्रदेशान् कथयाम्यतः ।। १२२ ।।

जो राशि बाधास्थान में स्थित हो उस राशि के आगे कहे गये स्थानों में बाधा उत्पन्न होती है । आगे के श्लोकों में मेषादि द्वादश राशियों के स्थान बताये जा रहे हैं ।।११२।।

मेषवृषयोः स्थानानि

मेषस्य धात्वाकररत्नभूमिः कुल्याप्रदेशो भुजगालयश्च ।
पूर्वप्रदेशो वृषभस्य पश्चात् कृषीवलक्षेत्रसुरम्यभूमिः ।। १२३ ।।

मेष राशि के स्थान सोने, चाँदी, हीरा, माणिक्य, पन्ना आदि खनिजों की खदानें; संग्रह स्थान, नहरों के समीप की भूमि, साँपों के रहने के स्थान तथा पूर्व दिशा के देश होते हैं ।

वृष राशि के स्थान कृषि, भूमि, खेत, खलिहान तथा रमणीय भूमियाँ हैं ।।१२३।।

यहाँ वृष राशि के लिए व्यक्ति के निवास से दक्षिण की दिशा जाननी चाहिए, क्योंकि मेष की दिशा पूर्व कही गयी है ।

युग्मकर्कटयोः स्थानानि

उद्यानदेवालयरत्नभूमिर्यमस्य रम्यं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
देवाङ्गनावासतटाकरम्यं जलान्तिकं कर्कटकस्य राशेः ।। १२४ ।।

मिथुन राशि के स्थान बाग-बगीचे, देवालय, रत्नजटित स्थान या रत्न रखने के स्थान (जौहरियों की दुकानें) तथा रमणीय स्थान (मनोरंजन स्थल) आदि होते हैं । ऐसा विद्वानों का मत है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कर्क राशि के स्थान देवाङ्गनाओं (देवदासियों) के निवासस्थान या अप्सराओं के निवासस्थान, जलाशयों, सरोवरों के किनारे तथा जल के निकटवर्ती स्थान होते हैं ॥१२४॥

सिंहकन्ययोः स्थानानि

स्थानं मृगेन्द्रस्य तु तुङ्गदेशो गोक्षेत्रदेवद्विजवासभूमिः।
देवालयाश्वद्विपमन्दिराब्धिक्षेत्रेषु वासो वनितागृहस्य ॥ १२५॥

सिंह राशि के स्थान ऊँचे स्थान, उँची भूमियाँ, गायों के चरागाह, देवालय, ब्राह्मणों (मुनियों) की निवास की भूमियाँ तथा जंगल हैं। कन्या राशि के स्थान देवालय, घुड़साल (अस्तबल), गजशाला तथा समुद्रों एवं झीलों के तटवर्ती स्थान हैं ॥१२५॥

तुलादित्रयाणां स्थानानि

जूकस्य वीथ्यापणकाननेषु कीटस्य वल्मीकतटाकयोश्च।
अरामसेनागृहयुद्धभूमिसालेषु वासो नवमस्य राशेः॥ १२६॥

तुला के स्थान गली, सड़क, बाजार, मंडी, हाट, दुकान तथा वन होते हैं।

वृश्चिक राशि के स्थान सर्प की बाँबी तथा चींटियों के स्थान, तालाब के किनारे के स्थान हैं।

धनु राशि के स्थान सैनिक-छावनी, शस्त्रागार, युद्धभूमि, किले तथा परकोटे (अहाते) आदि होते हैं ॥१२६॥

मकरादित्रयाणां वासस्थानानि

नदीमुखारण्यनिषादवासेष्वेणस्य राशेर्घटभस्य तद्वत्।
श्वभ्राम्बुपूर्णामरमन्दिरेषु झषस्य वासः कथितो मुनीन्द्रैः॥ १२७॥

मकर तथा कुंभ के निवासस्थान समान ही हैं; नदी का मुख (मुहाना = जहाँ वह समुद्र में गिरती है), वन, निषादों (भीलों आदि) के निवास—ये सब मकर तथा कुंभ राशि के होते हैं।

मीन राशि के स्थान गहरी गुफाएँ, खड्डे, जलयुक्त स्थान तथा देवताओं के मंदिर—ये सब मुनियों ने मीन राशि के निवासस्थान बताये हैं ॥१२७॥

प्रश्नकुण्डली के बाधास्थान में जो राशि हो उस राशि के स्थानों में बाधा उत्पन्न हुई है ऐसा पृच्छक को बताना चाहिए।

अन्यमतेन संक्षेपेण राशीनां स्थानानि

वनं क्षेत्रं पुरं कुल्या शैलग्रामापणाः क्रमात्।
कूपकान्तारजलधितटाकसरितस्त्वजात् ॥ १२८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) वन, (२) खेत, (३) बस्ती (नगर), (४) नहर, (५) पर्वत, (६) ग्राम, (७) हाटबाजार, (८) कूप, (९) वन, (१०) समुद्र, (११) तालाब तथा (१२) नदी—ये क्रमशः मेषादि बारह राशियों के स्थान हैं ॥१२८॥

बारह राशियों के स्थानों का चक्र

राशियाँ	स्थान	राशियाँ	स्थान
मेष	वन (छोटा जंगल)	तुला	आपण (दुकान)
वृष	क्षेत्र (कृषि)	वृश्चिक	कूप (हेण्ड पंप)
मिथुन	पुर (नगर)	धनु	कान्तार (बड़ा जंगल)
कर्क	कुल्या (नहर)	मकर	जलधि (समुद्र)
सिंह	शैल (पहाड़)	कुंभ	तटाक (तालाब)
कन्या	ग्राम (गाँव)	मीन	सरिता (नदी)

अथ जिह्वादोषो निरूप्यते

बाधकेश्वरदृष्टो वा युक्तो वा यदि वाक्पतिः ।
तर्हि रोगं वदेन्नृणां जिह्वादोषसमुद्भवम् ।। १२९ ।।

यदि द्वितीयेश बाधकेश्वर से युक्त या दृष्ट हो तो मनुष्यों को जिह्वा दोष के कारण रोग उत्पन्न होता है ॥१२९॥

अशुद्ध उच्चारण, अशुद्ध स्वर में बोलना, गाना, पाठ करना, मंत्रोच्चारण करना तथा जीभ का लड़खड़ाना आदि जिह्वादोष हैं । इसके अतिरिक्त वाणी से दूसरे को कष्ट पहुँचाना भी जिह्वादोष ही है । इसके कारण रोग पैदा होते हैं; यही इस श्लोक में बताया है ।

पूतनादिबालग्रहाणां पीडाकथनम्

बालग्रहाभिधा बाधन्तेऽर्भकानेव केवलम् ।
प्रसिद्धाः पूतनाद्या ये तत्पीडाथ निगद्यते ।। १३० ।।

जो पूतना आदि नाम से प्रसिद्ध बालग्रह हैं वे केवल बालकों को ही पीड़ित करते हैं । अतः उनसे मिलने वाली पीड़ा के योग को भी कहा जा रहा है ॥१३०॥

बालपीडाकरौ योगौ

मन्दचन्द्रजयोरेको यद्वा मिथुननक्रयोः ।
बाधकस्थानसंस्थश्चेद् बालपीडां विनिर्दिशेत् ।। १३१ ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि शनि अथवा चन्द्रमा में से कोई भी एक ग्रह मिथुन या कुंभ राशि में होकर बाधकस्थान में बैठा हो तो पूतनादिक बालग्रहों की पीड़ा बालकों को होती है । अथवा इनमें से कोई ग्रह बाधकस्थान में हो तो भी पीड़ा होती है । केवल राशि के बाधक स्थानों में होने पर भी पीड़ा होती है । दोनों योग एक साथ होने पर पीड़ा अधिक होती है ॥१३१॥

बालग्रहों का विवेचन—यहाँ बालग्रहों का उल्लेख मात्र है, पाठकों की सुविधा के लिए उनका कुछ विवरण यहाँ तंत्र एवं आयुर्वेद के ग्रन्थों से दिया जा रहा है—

ये बालग्रह केवल बालकों को ही ग्रहण करते हैं । ये मनुष्य रूप में प्रकट हुए हैं। आचार्य भावमिश्र ने अपने ग्रन्थ भावप्रकाश में ग्रहों की संख्या नौ लिखी है । आचार्य वाग्भट ने बारह बालग्रहों का वर्णन किया है । उनके अनुसार—

"स्कन्दो विशाखो मेषाख्य: श्वग्रह: पितृसंज्ञित: ।
शकुनि: पूतना शीतपूतनाऽदृष्टपूतना ॥
मुखमण्डिकतद्वद् रेवती शुष्करेवती" ।

इनमें पुरुष-शरीरधारियों की संख्या पाँच तथा स्त्री-शरीरधारी ग्रह सात हैं—

"पुरा गुहस्य रक्षार्थं निर्मिता शूलपाणिना ।
मनुष्यविग्रहा पञ्च सप्त स्त्रीविग्रहा ग्रहा:"॥

(अष्टाङ्गहृदय-उत्तरस्थान अ. ३)

ग्रन्थों में पूतनाओं की संख्या बारह हैं वे एक ही ग्रह के बारह भेद मात्र हैं ।

बालग्रहों से ग्रसित के सामान्य लक्षण—जिस प्रकार गिरफ्तार होने वाला मनुष्य भय से बेहोश होता है उसी प्रकार बालग्रहों के लगते ही बालक भयभीत होकर होश-हवाश भूल जाता है । वह डरा हुआ-सा जान पड़ता है । उसे ज्वर हो जाता है । वह निरन्तर रुदन करता है, मुख से फेन आता है । उसकी दृष्टि ऊपर की ओर रहती है । वह दाँतों से होंठों को भींचता-चबाता है, माता का या अन्य दूध नहीं पीता है । उसकी आवाज भर्राने लगती है । नाखूनों से माता या सम्बन्धित व्यक्ति के शरीर को खुरचता है या भूमि को खुरचता है । यथा—

"तेषां गृहीष्यतां रूपं सततं रोदनं ज्वर: ॥
सामान्यं रूपमुत्रासजृम्भाभ्रूक्षेपदीनता: ।
फेनास्रावोर्ध्वदृष्ट्योष्ठदन्तदंशप्रजागरा: ॥
रोदनं कूजनं स्तन्यविद्वेष: स्वरवैकृतम् ।
नखैरकस्मात्परित: स्वातन्त्र्यङ्गविलेखनम्" ॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बालग्रहों के ग्रसित करने का कारण—श्री भगवान् शंकर ने स्वामी कार्तिकेय की रक्षा के लिए बालग्रहों को उत्पन्न किया और उनके भरण-पोषण हेतु कहा कि जिस घर में ईश्वराराधना न होती हो, पूजनार्चन, वन्दन तथा कीर्तन न होता हो; जिस घर में प्राणियों की हिंसा होती हो तथा जहाँ उन्हें दुःखित किया जाता हो; जहाँ देवता, माता-पिता, गुरुजन, साधु-सन्त, ब्राह्मणों का अनादर होता हो तथा जहाँ अतिथिसत्कार की परम्परा न हो; जिस परिवार में बड़े-बूढ़े, सास-ससुर आदि के साथ भोजन तथा व्यवहार में भेदभाव तथा अशिष्ट व्यवहार होता हो; जो घर मैला-कुचैला तथा अपवित्र हो—हे बालग्रहो ! तुम लोग उसी घर में जाकर वहाँ के बालकों को भक्षण किया करो। उसी दिन से बालग्रह छोटे बालकों को ग्रसित करने लगे हैं।

वैद्यकीय दृष्टि से इन दस हेतुओं के बालक में उपस्थित होने पर बालग्रह बालक को पकड़ते हैं—

(१) जब पेट तथा आँतों में विकार तथा उदर में वायुप्रकोप हो।
(२) दन्तोद्भव (Teething) अर्थात् दाँत निकलते समय।
(३) कृमि रोग—पेट में कीड़े होने पर (Worms)।
(४) मूत्रद्वारीय त्वचा का चिपक जाना।
(५) मूत्रोत्सर्ग में किसी कारण बाधा आने पर।
(६) कर्णयाक—कान में सूजन तथा मवाद होने पर।
(७) मृद्वस्थि (Ostomalacia and Rickts) में।
(८) शीतला, मसूरिका तथा रोमान्तिका (Measels) में।
(९) कुक्कुकास (Whooping cough) में।
(१०) तथा अपस्मार के पूर्वरूप में।

इन विकारों में अशुचिता के चलते बालग्रह पकड़ लेते हैं, अत: उन कारणों का पता लगाकर औषधोपचार कराना तथा प्रश्नकुण्डली के द्वारा बालग्रह का योग प्रतीत होने पर उनके प्रतिषेध की व्यवस्था करनी चाहिए।

द्वादश बालग्रह—यहाँ वाग्भटोक्त बारह बालग्रहों के लक्षण संक्षेप में दिये जा रहे हैं। उन लक्षणों को भलीभाँति देखकर, समझकर तथा परख कर यह निश्चय करें कि बालक को किस ग्रह ने ग्रसित किया है। प्रश्नकुण्डली या जन्मकुण्डली के लग्नादि बारह भावों में बैठे पाप ग्रहों से भी इनका निश्चय करने में सहयोग मिलता है।

(१) स्कन्द ग्रह के लक्षण—एक नेत्र में आँसू, शिरःकम्प, शरीर का आधा भाग लकवे की तरह, अंगों में जड़ता, पसीने की अधिकता, कन्धे झुके हुए, स्तनद्वेष,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दन्तचर्वण, त्रसित, रोदन, स्वरभंग, टेढा मुँह, लालास्राव, ऊर्ध्वदृष्टि; शरीर में मांस, रक्त तथा चर्बी जैसी गन्ध; उद्विग्नता, मुट्ठी भिंची हुई, मल बँधा हुआ, एक आँख, एक भौंह तथा एक तरफ की कनपटी हिलती है। नेत्र लाल होते हैं तथा बच्चा विकल होता है। यह ग्रह मारक है।

(२) स्कन्दापस्मार बालग्रह के लक्षण—बार-बार बेहोश होना, बालों को नोंचना, गर्दन झुकी हुई, अंग मरोड़कर जंभाई लेते हुए मलत्याग, मुँह से झाग, सूजन, ज्वर, अनिद्रा, शरीर में मवाद जैसी गन्ध आना—ये स्कन्दापस्मार के लक्षण हैं। इसी ग्रह को विशाख भी कहते हैं।

(३) नैगमेष ग्रहजुष्ट के लक्षण—अफारा, हाथ-पैर पटकना, झाग का वमन, प्यास की अधिकता, अतिसार, मुट्ठी भींचना, कराहना, चीत्कार, खाँसी, हिचकी, अनिद्रा, जड़ता, शरीर में बकरे जैसी गन्ध, ऊपर को देखकर हँसना, ज्वर, मूर्च्छा, आँखों पर सूजन—ये नैगमेष के चिह्न हैं।

(४) श्वग्रह के लक्षण—शरीरकंप, रोमाञ्च, स्वेद, नेत्रनिमीलन, बहिरापन, बहिरायाम (बालक का पीठ की ओर झुकना), गले में शब्द, दाँत चबाना, कुत्ते के समान चिल्लाना तथा शरीर में विष्ठा जैसी दुर्गन्ध आना ।

(५) पितृग्रह के लक्षण—रोमाञ्च, भय, रुदन, ज्वर, कास, अतिसार, वमन, जंभाई, प्यास की अधिकता, अंगों को सिकोड़ना तथा फैलाना, शरीर में मुर्दे जैसी गन्ध आना, मुट्ठी भींचना तथा आँखों से पानी आना—ये पितृग्रह के लक्षण हैं।

(६) शकुनि के लक्षण—अंगों में शिथिलता, दस्त (अतिसार), जीभ, तालु तथा गले के भीतर छाले होना, वेदना, पाक (मवाद पड़ना); रात में कोहनी, घुटने, अँगुलियों में छाले होना तथा दिन में उनका दब जाना; शरीर में जलचर पक्षी या गीध-चील जैसी गन्ध आना—ये सब शकुनिग्रह के लक्षण होते हैं।

(७) पूतना ग्रह के लक्षण—वमन, कम्प, तन्द्रा, रात्रिजागरण, हिचकी, अफारा, अतिसार (दस्त), प्यास, मूत्रावरोध, रोमांच, अंगों में शिथिलता तथा शरीर में कौए के समान गन्ध आती है।

(८) शीतपूतना के लक्षण—कम्पन, रुदन, प्यास, पेट में कुर्र-कुर्र की आवाज, अतिसार, तिरछी चितवन, शरीर में विस्रगन्ध आना, शरीर का एक पार्श्व (बगल) ठंडा तथा दूसरा गरम होता है—ये शीतपूतना के लक्षण हैं।

(९) अन्ध्यपूतना—ज्वर, कास (खाँसी), अनिद्रा, अतिसार (दस्त), विवर्णता (शरीर का रंग फीका होना), दुर्गन्ध, अंग सूखना, नेत्रदृष्टि कम होना, नेत्रपीड़ा, आँखों में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

खुजली, रोहे होना, सूजन, हिचकी, उद्वेग, स्तनद्वेष (दूध न पीना), शरीर में मछली जैसी खट्टी गन्ध आना ।

(१०) मुखमण्डिता के लक्षण—इसमें हाथ-पैर तथा मुख में अचानक सुन्दरता आ जाती है । पेट का रंग काला होता है, उस पर नसों का उभार होता है । बुखार आता है । अरुचि के कारण बालक दूध नहीं पीता है । अंगों में ग्लानि होती है । शरीर से गोमूत्र के समान गन्ध आती है ।

(११) रेवती ग्रह के लक्षण—जिस बालक के सम्पूर्ण शरीर में व्रण उत्पन्न हो जायें, जिनसे कीचड़ जैसी गन्ध आने लगे, व्रण से सदा रक्तस्राव होता रहे, मल पतला उतरे, ज्वर एवं दाह बना रहे तथा बालक सदैव बेचैन रहे ऐसे बच्चे को रेवतीग्रह से ग्रसित जानना चाहिए । वाग्भट ने रेवती ग्रह के लक्षण निम्न प्रकार से दिये हैं—

"रेवत्यां श्यावनीलत्वं कर्णनासाक्षिमर्दनम् ॥
कासहिध्माक्षिविक्षेपवक्रवक्त्रत्वरक्तता: ।
बस्तगन्धो ज्वरः शोषः पुरीषं हरितं द्रवम्" ॥

(१२) शुष्करेवती—जैसा कि नाम से ही विदित है कि इस ग्रह के ग्रसित होने से शरीर के सभी अंग सूखने लगते हैं । जब लक्षण अधिक बढ़ जायें तो शुष्करेवती ग्रह असाध्य हो जाता है ।

बारह प्रकार की पूतना—ग्रन्थों में बारह प्रकार की पूतनाओं के लक्षण दिये गये हैं जो कि वस्तुतः एक ही पूतना के भेद हैं । संक्षेप के लिए आगे चक्र दिया जा रहा है । इस पूतनाचक्र में बारह पूतनाओं के प्रकोप का समय, उसकी पूजा हेतु मूर्ति-निर्माण के द्रव्य, पूजासामग्री, बलि का संक्षिप्त विधान तथा समय, स्नान, पूजा, मंत्र तथा धूप विधान लिखा गया है । धूप का विधान तीन-तीन पूतनाओं में एक जैसा ही है ।

बलिदान विधि तीन दिनों तक लगातार करनी चाहिए । चौथे दिन पलाश, पीपल, बेलपत्र, गूलर (ऊमर) तथा कपित्थ (कैथ) के पत्तों को पानी में उबाल कर बालक को चक्र में लिखे मंत्र से स्नान करायें । स्नान तथा मूर्ति की पूजा के लिए एक ही मंत्र का प्रयोग करना चाहिए जो कि हर पूतना के सामने चक्र में लिखा है । स्नान के पश्चात् यथाशक्ति भिखारियों, कुत्तों आदि को मिष्टान्न तथा पक्वान्न खिलायें । फिर "ॐ द्यौः शान्तिरन्तरीक्षं शान्ति....."—इन मंत्रों को पढ़ते हुए पूजामंत्र पढ़कर कुशा के जल छींटे दें, इसे मार्जन कहते हैं । मार्जन के उपरान्त फिर आगे लिखे हुए रक्षामंत्र को पढकर बालक की चोटी या उसके स्थान का स्पर्श करें । इसे शिखास्पर्श कहते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्वादश पूतनाओं के निवारण का चक्र

किस समय कौन पूतना ग्रस्त करती है ?	मूर्ति निर्माणार्थ द्रव्य	पूजन द्रव्य	बलि विधान व समय (लगातार तीन दिन तक)	स्नान पूजा मंत्र	धूप
प्रथम दिन मास-वर्ष में योगिनी	नदी के दोनों किनारों की मृत्तिका	श्वेत चन्दन, तिलक, श्वेतपुष्प, ५ रंग की झंडी ५, ५ दीपक, ५ आटे के सतिये, कपूर, लोहवान	श्वेत भात, ५ पूर्ण पोली (सुहाली) १ प्रहर दिन चढ़े पूर्व दिशा में चौरास्ते पर रखना ।	ॐब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कन्दो वैश्रवणस्तथा । रक्षन्तु त्वरितं बालं मुञ्च मुञ्च कुमारकम् ॥	राई, खस,आक के फूल, बिल्ली और मनुष्य के बाल, निम्बपत्र, गौघृत
द्वितीय दिन मास-वर्ष में सुनन्दना	एक सेर चावलों का आटा	१०दीपक, १०झण्डी, पुष्प, चावलों के आटे के सतिये १०	भात एक सेर, आटे के पूड़े, मत्स्य व बकरे का मांस संध्या समय पश्चिम दिशा में चौरास्ते पर रखना ।	ॐनमश्चामुण्डायै विच्चे ह्रां ह्रां ह्रीं ह्रीं हूं हूं स्थानाद्राझया स्वाहा ।	
तृतीय दिन मास-वर्ष में पूतना	एक सेर चावलों का आटा	रक्त चन्दन, रक्त पुष्प, श्वेत ध्वजा, दीपक १०, गेहूँ के आटे के सतिए १०	एक सेर लाल भात, आधा सेर पूर्ण पौली पश्चिम दिशा में किसी वृक्ष के नीचे ।	सुनन्दना विधानोक्त	लहसुन, गोशृंग, साँप की काचली, नीम के पत्ते, पुरुष और बिल्ली के बाल, गोघृत
चतुर्थ दिन मास-वर्ष में मुखमंडिका	तिल-चूर्ण एक सेर	श्वेत पुष्प, श्वेत ध्वजा ५, दीपक, मिल सके तो अर्जुन वृक्ष के पुष्प	भात, सेर आटे के पूड़े, आधा सेर पूर्ण पौली सायं पश्चिम दिशा में वृक्ष के नीचे ।	सुनन्दना विधानोक्त	
पंचम दिन मास-वर्ष में बिडालिका	एक सेर चावलों का आटा	श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प, दीपक ५, श्वेत ध्वजा ५, गेहूँ के आटे के सतिये	श्वेत भात, ७ पूड़ियाँ सायंकाल पश्चिम दिशा में वृक्ष के नीचे ।	ॐभगवती ह्रीं ह्रीं ह्रीं हूं हूं मुञ्च रक्षां कुरु कुरु बलिं गृहाण अस्त्रं ठः ठः चामुण्डे सर्वारि चण्डिके ठः ठः स्वाहा ।	

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किस समय कौन पूतना ग्रस्त करती है ?	**मूर्ति निर्माणार्थ द्रव्य**	**पूजन द्रव्य**	**बलि विधान व समय (लगातार तीन दिन तक)**	**स्नान पूजा मंत्र**	**धूप**
षष्ठ दिन मास-वर्ष में, षट्कारिका	नदी के दोनों किनारों की मिट्टी	श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प, दीपक ५, श्वेत ध्वजा ५,	भात, ५ मिठाई, ५ सुहाली, ७ पूड़ियाँ १ प्रहर दिन चढ़े पूर्व में चौरास्ते पर ।	योगिनी विधानोक्त	कूठ, गुग्गल, राई, हाथीदाँत, घृत ।
सप्तम दिन मास-वर्ष में कालिका	चावल का आटा एक सेर	श्वेत चन्दन, श्वेत पुष्प, दीपक ५, श्वेत ध्वजा ५,	भात, ७ पूड़ियाँ सायंकाल पश्चिम में चौरास्ते पर मौन होकर ।	बिडालिका विधानोक्त	
अष्टम दिन मास-वर्ष में कामिनी	जल के दोनों किनारों की मिट्टी	रक्त चन्दन ५, रंग की झण्डी ५, दीपक ५,	गेहूँ की रोटी, मसूर की दाल, हरासाग, छागमांस संध्या में चौरास्ते पर ।	बिडालिका विधानोक्त	
नवम दिन मास-वर्ष में मदना	एक सेर गेहूँ का आटा	चन्दन, पुष्प ५, दीपक ५, रंग की झण्डी ५ ।	भात, मत्स्य मांस, पापडी, सुहाली उत्तर में प्रातः चौरास्ते पर ।	ॐनमो भगवते वासुदेवाय कृष्णाय मंडल बलिमादाय हन हन हुं फट् स्वाहा ।	गोशृंग, लसुन, साँप की कांचली, निम्बपत्र, मनुष्य और बिल्ली के बाल, राई, गोघृत
दशम दिन मास-वर्ष में रेवती	एक सेर गेहूँ का आटा	रक्त पुष्प २५, झंडी, २५ दीपक, २५ सतिये ।	गुड़ के घी भुने चावल, गौघृत सायं दक्षिण में चौरास्ते पर ।	ॐ नमो भवते वैश्वदेवाय हन हुं फट् स्वाहा ।	
एकादश दिन मास-वर्ष में सुर्दशना	काले उड़दों का आटा एक सेर	श्वेत पुष्प, २५ दीपक, २५ सफेद झण्डी, २५ आटे के सतिये ।	श्वेत भात, ७ पूड़े, सुहाली ७ सायं व प्रातः दक्षिण में चौरास्ते पर ।	ॐ नमो भगवते रावणाय चन्द्रहास व्रजहस्ताय ज्वल ज्वल दुष्टग्रहादीन्ॐ ह्रीं फट् स्वाहा	
द्वादश दिन मास-वर्ष में अद्भुता	चावलों का आटा एक सेर	१३ दीपक, १३झण्डी, १३ सतिये आटे के ।	सुहाली, पूड़े ७, पूड़ियाँ ७, मत्स्य मांस, पापडी, सांयकाल दक्षिण में चौरास्ते पर ।	ॐ नमो नारायणाय ज्वलद्ध-स्ताय हन हन शोषय२ मर्दय २ तापय२ हुं३ हन २ दुष्टानां ह्रां ह्रूं स्वाहा	

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शिखास्पर्श हेतु बालरक्षा मंत्र—

"ॐ रक्ष रक्ष महादेव नीलग्रीव जटाधर।
ग्रहैस्तु सहितो रक्ष मुञ्च मुञ्च कुमारकम् ॥
ॐ सर्वमातर इमं ग्रहं संह रतुं हुं रोदय-रोदय,स्फोटय-स्फोटय स्वाहा ।
गर्ज-गर्ज सः गृहाण-गृहाण, आमर्दय-आर्मदय, ह्रीम्-ह्रीम्
हन-हन एवं सिद्धि रुद्रो ज्ञापय स्वाहा" ॥

इस मंत्र के द्वारा सभी प्रकार के बालग्रहों को झाड़ देने से उनका प्रकोप शान्त होता है ।

बालग्रह एवं पूतनानाशक स्तोत्र (श्रीमद्भागवत–दशम स्कन्ध ६।२२–२९)

जब भगवान् कृष्ण ने पूतना को मार डाला तब गोपियाँ दौड़ती हुई गईं । उन्होंने बालकृष्ण को गोमूत्र से स्नान कराके, गोरज से उनके शरीर का उद्धूलन किया, फिर शरीर के बारह अंगों में भगवान् विष्णु के बारह नामों से गोबर लगाया, गाय की पूँछ को उनके शरीर पर फिराया, फिर आचमन करके उन्होंने निम्न मंत्रों को पढ़ा—

"अव्यादजोऽङ्घ्रिमणिमांस्तव जान्वथोरू;
यज्ञोऽच्युतः कटितटं जठरं हयास्यः ।
हृत् केशवस्त्वदुदर ईश इनस्तु कण्ठम् ;
विष्णुर्भुजं मुखमुरुक्रम ईश्वरः कम् ॥१॥
चक्र्यग्रतः सहगदो हरिरस्तु पश्चात् ,
तत्पार्श्वयोर्धनुरसी मधुहा जनश्च ।
कोणेषु शङ्ख उरुगाय उपर्युपेन्द्रः
तार्क्ष्यः क्षितौ हलधरः पुरुषः समन्तात् ॥२॥
इन्द्रियाणि हृषीकेशः प्राणान् नारायणोऽवतु ।
श्वेतद्वीपपतिश्चित्तं मनो योगेश्वरोऽवतु ॥३॥
पृश्निगर्भस्तु ते बुद्धिमात्मानं भगवान् परः ।
क्रीडन्तं पातु गोविन्दः शयानं पातु माधवः ॥४॥
व्रजन्तमव्याद् वैकुण्ठ आसीनं त्वां श्रियः पतिः ।
भुञ्जानं यज्ञभुक्पातु सर्वग्रहभयङ्करः ॥५॥
डाकिन्यो यातुधान्यश्च कूष्माण्डा येऽर्भकग्रहाः ।
भूतप्रेतपिशाचाश्च यज्ञरक्षो विनायकाः ॥६॥
कोटरा रेवती ज्येष्ठा पूतना मातृकादयः ।
उन्मादा ये ह्यपस्मारा देहप्राणेन्द्रियद्रुहः ॥७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्वप्नदृष्टा महोत्पाता वृद्धबालग्रहाश्च ये।
सर्वे नश्यन्तु ते विष्णोर्नामग्रहणभीरवः॥२९॥

इन मन्त्रों से जितने भी ग्रह, मातृका, देवता, राक्षस, भूत, यातुधान, डाकिनी, शाकिनी, चुड़ैल आदि हैं वे सब भगवान् के नाम से डरते हैं। इसलिए जब भी बालक पर कोई संकट आवे तो भगवान् के इन्हीं नाममंत्रों से बालक की रक्षा करनी चाहिए। उपर्युक्त मंत्रों को पढ़ते समय बच्चे के अंग-प्रत्यंग पर हाथों से स्पर्श करते रहें। नीचे के चक्र में शरीर के किस अंग पर किस नाम के उच्चारण के साथ स्पर्श करें यह दर्शाया गया है।

भगवान् विष्णु के नामों से अंगन्यास एवं रक्षा का चक्र

चरण (पैर)	जानु (घुटना)	ऊरु (जाँघ)	कटि (कमर)	जठर (पेट)	हृत् (हृदय)	वक्ष (छाती)	कण्ठ (गला)	बाहु (भुजाएँ)	मुख	कम् (शिर)	बालक के अंग
अजन्मा	मणिमान्	यज्ञपुरुष	अच्युत	हयग्रीव	केशव	ईश	सूर्य	विष्णु	उरुक्रम	ईश्वर	विष्णु के नाम

बालक के शरीर पर ११ बार गोमाता की पूँछ फिरा देनी चाहिए। इससे बालक को लगी हुई नजर-कुजर भी दूर हो जाती है। बस, अभिभावकों के मन में श्रद्धा होना भर आवश्यक है फिर देखिए इसका चमत्कार कि बालक कितना शीघ्र स्वस्थ होता है।

दशाङ्ग धूप—जो मंत्र नहीं पढ़ सकते, स्तोत्र पाठ नहीं कर सकते उनके लिए यह दशांग धूप बहुत ही उपयुक्त है। इसे वाग्भट ने अष्टांगहृदय-उत्तरस्थान अध्याय ३७ के श्लोक २७ में कहा है—

"वचाहिङ्गुविडङ्गानि सैन्धवं गजपिप्पली॥
पाठा प्रतिविषाव्योषं काश्यपेन विनिर्मितम्"।

अर्थात् वच, हींग, वायविडङ्ग, सैंधा नमक, गजपीपल, पाठा, अतीस, सोंठ, कालीमिर्च, छोटी पीपर—इन दस औषधियों को लेकर जौकुट करके चूर्ण बना लें; बहुत बारीक न करें मोटा ही रहने दें। यह दशांग धूप है। इसे थोड़ा गाय के घी से सानकर अग्नि के ऊपर डालें। इसका धुवाँ बालक के शरीर पर लगने से सभी प्रकार के बालग्रह पूतना, नजर तथा अथ अन्य दोष, भूत-प्रेतादि दूर होते हैं। यह मकड़ी आदि के विष को भी दूर करती है।

अथ विषभोजननिरूपणम्

मित्रे पुत्रे सप्तमे वाष्टमे वा मान्दौ वाहौ तिष्ठति क्ष्वेडभुक्तिः।
तत्रस्थे चारीश्वरेऽरिप्रयुक्ता विज्ञातव्या सा न चेद् दैवयोगात्॥१३२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) जब प्रश्नकुण्डली में चौथे, पाँचवें, सातवें अथवा आठवें भाव में अहि (राहु) या मान्दि स्थित हो तो व्यक्ति क्ष्वेड (विष =Poison) भक्षण करता है । (२) यदि उक्त चतुर्थ आदि स्थानों में से किसी स्थान में अरीश्वर (षष्ठेश) भी राहु या मान्दि (गुलिक) के साथ बैठा हो तो व्यक्ति को वह विष शत्रु द्वारा दिलवाया जाता है । (३) यदि षष्ठेश उस योग में सम्मिलित न हो तो दैवयोग से असावधानीवश ही विष शरीर में पहुँच जाता है ॥१३२॥

आरूढलग्नराशिवशात् विषाक्तद्रव्याणां कथनम्

आरूढे सिंहराशौ कटुकरसयुते नागवल्लीदलाद्ये;
भौमक्षेत्रे तथाज्ये मधुनि बुधग्रहे तक्रदध्नोः सितर्क्षे ।
क्ष्वेले वा कादले वा विषममरगुरोर्धाम्नि निक्षिप्य दत्तं;
पूपादौ मन्दगेहे लवणरसवति द्रव्य इन्दोर्द्रवे वा ॥ १३३॥

यदि आरूढ लग्न में सिंह राशि हो तो विष कटु रस वाले पदार्थ जैसे पान आदि (या कालीमिर्च, सोंठ युक्त पेय में) दिया जाता है । यदि मंगल की राशि आरूढ हो तो घी में मिलाकर, बुध की राशि में मधु डालकर, शुक्र की राशि में मट्ठा या दही में मिलाकर, गुरु की राशियाँ आरूढ में होने पर क्ष्वेल (दूध आदि तरल पदार्थ) या कादल (केले से बने पदार्थ या फलों की जेली=लोंजी आदि) में विष दिया जाता है । शनि की राशि यदि आरूढ में हो तो पुवा, (मालपुआ, डबल रोटी, पूड़ी, गुलगुला आदि) में मिला कर दिया होता है । यदि चन्द्रमा की राशि आरूढ हो तो किसी द्रव पदार्थ (Liquid substances) में मिलाकर दिया गया है, ऐसा जानना चाहिए ॥१३३॥

सर्वप्रथम प्रश्नकुण्डली से जहर दिया गया है यह निर्णय होने पर तब यह बताना उचित होगा कि किस पदार्थ में मिलाकर विष दिया गया है या किस भोजन के द्वारा भोजन विषाक्त (Food poisoning) हुई है, यह बताना चाहिए । आगे चक्र देखें ।

आरूढ राशि से विषाक्त खाद्य पदार्थ का ज्ञान

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	आरूढ राशिं
घी	मठा	मधु	द्रवपदार्थ	उष्णपेय (कटुरसयुक्त)	शहद	दही	घी	दूध	मालपुआ	गुलगुला	फलों का रस	विषाक्त पदार्थ

विषदातृप्रयोजनम्

लग्नेशारीशसम्बन्धे हिंसायै गरलार्पणम् ।
लग्नेशास्तेशसम्बन्धे स्याद्वशीकरणाय तत् ॥ १३४॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) यदि लग्नेश तथा षष्ठेश में युति, दृष्टि, स्थान-परिवर्तन आदि से सम्बन्ध हो तो विषादाता ने विष मारने के लिए दिया है, ऐसा बताना चाहिए। (२) यदि लग्नेश तथा सप्तमेश का परस्पर सम्बन्ध हो तो केवल वशीकरण हेतु ही विष का प्रयोग किया गया है, ऐसा जानना चाहिए (अरीश का अर्थ षष्ठेश होता है) ॥१३४॥

रोगाणां बाधाजन्यत्रिदोषजन्यभेदौ

दोषत्रितयसम्भूताः केवलं बाधया कृताः।
द्वैविध्यमिति रोगाणां तद्भेदः प्राङ्निगद्यते ॥ १३५॥

रोग या तो वात-पित्त-कफ (त्रिदोष) की विकृति से पैदा होते हैं अथवा केवल बाधा से। इस प्रकार उन दोनों प्रकार के रोगों को कहते हैं— ॥१३५॥

प्रश्नकुण्डलीत उभयविधभेदज्ञानकथनम्

आरूढे प्रबले वदन्ति सुधियो रोगोद्भवं बाधया;
प्राग्लग्ने प्रबले तथामयगणा वाच्यास्त्रिदोषोद्भवाः।
तद्वत् षष्ठपतौ बलिन्यपि गदान् बाधोद्भवान्निर्दिशेत्;
रन्ध्रेशेऽतिबले त्रिदोषजनिता रोगाः स्युरेवं द्विधा ॥ १३६॥

यदि आरूढ राशि बलवान् हो तो बाधाजन्य रोग होते हैं। यदि प्रश्नलग्न बलवान् हो तो शारीर दोषों (वात-पित्त-कफ) से रोग उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार यदि षष्ठेश बलवान् हो तो बाधा द्वारा रोग उत्पन्न हुआ है, ऐसा बताना चाहिए। यदि अष्टमेश अतिबलवान् हो तो विकार को त्रिदोषज समझना चाहिए। इस प्रकार रोग दो प्रकार के होते हैं ॥१३६॥

रोगकारकौ ग्रहौ

व्याधीनामीश्वरो ज्ञेयः षष्ठपो रन्ध्रपस्तथा।
बाधया सबलेऽरीशे रन्ध्रेशे रुक् त्रिदोषतः ॥ १३७॥

षष्ठेश तथा अष्टमेश रोगकारक (रोगाधीश) होते हैं। यदि अरीश (षष्ठेश) बलवान् होता है तो रोग का कारण बाधा होती है (जिसका उपचार मंत्र-तंत्र-अनुष्ठान से कराना चाहिए)। यदि अष्टमेश बली हो तो रोग का कारण त्रिदोष की गड़बड़ी होता है (जिसका उपचार वैद्यों से करायें) ॥१३७॥

शत्रुकृदभिचारयोगानां कथनम्

बाधेशस्यारिभे वा रिपुभवनपतेर्बाधकर्क्षे यदि स्याद्;
योगो वा दर्शनं वा पुनरथ यदि वा तौ मिथः क्षेत्रसंस्थौ।
बाधाधीशारिनाथावपि यदि सहितौ पश्यतोऽन्योऽन्यतो वा;
शत्रोस्तत्राभिचारं वदतु बहुतया लक्षणानां स भूयान् ॥ १३८॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) बाधाधीश छठे भाव में बैठा हो, (२) या षष्ठेश बाधास्थान में हो, या (३) षष्ठेश-बाधेश में दृष्टि सम्बन्ध हो, (४) षष्ठेश-बाधेश में स्थान-परिवर्तन (व्यत्यय = Exchange) हो या (५) दोनों में युति हो या (६) उनमें एकतर दृष्टि सम्बन्ध हो तो इनमें से कोई दो या अधिक योग यदि प्रश्नकुण्डली में विद्यमान हों तो शत्रु द्वारा अभिचार कर्म कराये जाने से बाधा होती है ॥१३८॥

क्षुद्रमहाभिचारयोः कथनम्

महाभिचारो वक्तव्यः शुभश्चेद् बाधकाधिपः।
पापश्चेत् क्षुद्र एष स्यादभिचार इति द्विधा ॥ १३९॥
महाभिचार एष स्याद्वैरिभिर्मारणादिकम्।
यत्कर्म क्रियते क्षुद्रो यत्कीलादि निखन्यते॥ १४०॥

(१) यदि बाधाधिपति शुभ ग्रह होता है तो शत्रु के द्वारा महाभिचार किया गया है, ऐसा बताना चाहिए। (२) यदि बाधेश पाप ग्रह हो तो क्षुद्राभिचार का प्रयोग हुआ है, ऐसा कहना चाहिए। इस प्रकार अभिचार दो प्रकार का होता है ॥१३९॥

वैरी के लिए जो मारणादि प्रयोग कराया जाता है वह महाभिचार कहा जाता है। इसी प्रकार शत्रु द्वारा अपने शत्रु के लिए जो पीड़ाकारक छोटे-मोटे तांत्रिक-मान्त्रिक प्रयोग होते हैं उन्हें क्षुद्राभिचार कहते हैं। कीलन इत्यादि प्रयोग क्षुद्राभिचारों की श्रेणी में आते हैं ॥१४०॥

मारण, उच्चाटन, विद्वेषण, स्तम्भन ये तांत्रिक प्रयोग महाभिचारों की श्रेणी में परिगणित किये जाते हैं।

अभिचारकर्तुर्जातिज्ञानम्

रिपोश्च तन्नियोगाद्यो मारणादिकृदस्य च।
जातिर्द्वयोश्च वक्तव्या तत्प्रकारोऽथ कथ्यते॥ १४१॥

अब यदि पृच्छक अभिचार कराने वाले शत्रु तथा जिसके द्वारा शत्रु ने अभिचार कराया है उस तान्त्रिक की जाति जानना चाहता है तो उसे जानने की पद्धति आगे कही जा रही है ॥१४१॥

षष्ठाष्टमयोर्जातिकथनम्

वर्णो यः षष्ठराशेः स भवति हि रिपोः षष्ठराशीशितुर्वा;
वाच्यो बाधाख्यराशेरथ तदधिपतेर्वापि वर्णः प्रयोक्तुः।
विप्रःस्यान्मीनराशिर्धरणिपतिरजो वैश्य उक्षा नृयुग्मं,
शूद्रः स्यात्स त्रिकोणं पुनरिह विहगा एव विप्रादिनोक्ताः॥ १४२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

षष्ठस्थान में जो राशि हो या षष्ठेश की जो जाति हो वही जाति अभिचार कराने वाले शत्रु की होती है । इसी प्रकार अष्टम भाव में जो राशि होती है या अष्टमेश ग्रह की जो जाति होती है वही जाति उस तांत्रिक या मांत्रिक की होती है जिसने कि वह अभिचार किया है ।

अब राशियों की जाति बताते हुए कहते हैं कि मीन राशि ब्राह्मण, मेष राशि क्षत्रिय, वृष राशि (उक्षा = ox) वैश्य तथा नृयुग्म (मिथुन) राशि शूद्र होती है । इनके त्रिकोणों की भी वही जातियाँ होती हैं ।

ग्रहों की जातियाँ आगे के "विप्रावसुरसुरेड्यो" (श्लोक १४७) के अनुसार जान लेना चाहिए ॥१४२॥

रिपोर्जातिसूचका योगाः

बाधकाधिपसम्बन्धो दृष्ट्या योगेन वा यदि ।
षष्ठभस्य रिपोर्वर्णः षष्ठराश्युदितं वदेत् ॥ १४३॥
बाधकस्थानतन्नाथयोगदृष्ट्यादयो यदि ।
षष्ठेशस्य रिपोर्वर्णस्तर्हि षष्ठाधिपोदितः ॥ १४४॥
षष्ठाधिपतिसम्बन्धो बाधकस्य गृहस्य चेत् ।
योगादिना प्रयोक्तुः स्याद्वर्णो बाधकमादितः ॥ १४५॥
बाधकेशस्य चेत्षष्ठषष्ठेशेक्षान्वयादयः ।
बाधकाधिपतेर्वर्णं प्रयोक्तुस्तर्हि निर्दिशेत् ॥ १४६॥

यदि बाधाधिपति छठे भाव में बैठा हो या छठे भाव को देख रहा हो तो षष्ठ स्थान में जो राशि है उसके अनुसार ही शत्रु की जाति होती है ॥१४३॥

यदि बाधाधिप का षष्ठेश के साथ युति, दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तो षष्ठेश ग्रह की जो जाति हो वही जाति शत्रु की जाति होती है ॥१४४॥

यदि षष्ठेश की दृष्टि या युति बाधक स्थान में हो तो बाधक स्थान में जो राशि हो उस राशि की जाति ही अभिचार करने वाले तांत्रिक की होती है ॥१४५॥

यदि बाधाधिपति छठे भावेश के साथ दृष्टि या युति द्वारा सम्बन्ध बनाये तो जो जाति बाधेश ग्रह की है वही जाति अभिचारकर्ता तान्त्रिक की हुआ करती है ॥१४६॥

वराहमतेन ग्रहाणां जातयः

विप्रावसुरसुरेड्यौ भौमार्कौ क्षत्रियौ शशी वैश्यः।
शूद्रस्तु बुधो मन्दश्चान्तरवर्णा वराहमिहिरमते॥ १४७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वराहमिहिराचार्य के मतानुसार देवगुरु तथा दैत्यगुरु अर्थात् बृहस्पति तथा शुक्र ये दोनों ब्राह्मण होते हैं, सूर्य तथा मंगल क्षत्रिय वर्ण के हैं, चन्द्रमा वैश्य है, बुध शूद्र है तथा शनि अन्त्यज जाति का है ॥१४७॥

मतान्तरेण ग्रहाणां वर्णाः

विप्रोत्तमः स्याद्गुरुरत्र शुक्रो विप्राधमोऽन्यग्रहराशियोगात् ।
भेदोऽनयोःस्यादथ सार्वभौमो भानुः कुजो माण्डलिकश्च वेद्यः ॥ १४८॥

गुरु श्रेष्ठ जाति का ब्राह्मण तथा शुक्र केवल अपनी राशि में ही श्रेष्ठ ब्राह्मण होता है; अन्य ग्रहों की राशि में शुक्र अधम ब्राह्मण होता है । इस प्रकार इन दोनों ब्राह्मण ग्रहों में भी जातिभेद है । सूर्य उत्तम राजा होता है तथा मंगल माण्डलिक (छोटा राजा) होता है ॥१४८॥

भूमिजोऽनुपवीति स्याद्राजतुल्योऽथ बोधनः ।
विद्वाननुपवीति स देवदास इतीर्यताम् ॥ १४९॥
उच्चादिनीचपर्यन्तं स्थानभेदाच्छनेरपि ।
देवदासादिचण्डालपर्यन्ता जातयः स्मृताः ॥ १५०॥

मंगल जनेऊ धारण नहीं करता । वह राजा समान होता है । बोधन (बुध) बिना जनेऊ का विद्वान् होता है तथा देवालय का सेवक होता है ॥१४९॥

उच्च राशि से लेकर नीच राशि तक शनि देवदास (देवताओं से सेवक) से लेकर चाण्डाल पर्यन्त जातियों का प्रतिनिधित्व करता है ॥१५०॥

मतान्तर से उच्चादि क्रम से शनि की जातियाँ

उच्चतम	उच्चतर	उच्च	मध्यम	नीच	नीचतर	नीचतम	**कोटि**
तुला २०°	कन्या वृश्चिक	सिंह धनु	कर्क मकर	मिथुन कुंभ	वृष मीन	मेष २०°	**शनि की राशिस्थिति**
देवदास	ब्राह्मण का दास	क्षत्रिय का दास	वैश्य का दास	शूद्रदास	अन्त्यज	चाण्डाल	**जाति**

माधवीयमतेन जातयः

विप्राह्वयौ गुरुसितौ नृपती कुजाऽर्कौ ।
वैश्यः शशी शशिसुतो वृषलोऽर्कजोऽन्त्यः ॥ १५१॥

माधवीय ग्रन्थ के मत से गुरु-शुक्र ब्राह्मण, मंगल तथा सूर्य राजा (क्षत्रिय), चन्द्रमा वैश्य, बुध वृषल तथा शनि अन्त्यज होता है ॥१५१॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कृष्णीयमतञ्च

विप्रौ भृगुर्देवगुरुः क्षत्रियभावो दिवाकरोर्वीजौ ।
वैश्यौ बुधचन्द्रमसौ शनैश्चरः शूद्रसङ्करकृतः ।। १५२।।

कृष्णीय मत से गुरु-शुक्र ये दोनों ब्राह्मण, सूर्य-मंगल क्षत्रिय, बुध तथा चन्द्रमा वैश्य तथा शनि शूद्र (संकर जाति) होता है ।।१५२।।

सारसमुच्चयमतञ्च

अर्कस्य शुक्रो राजो वा शूद्रो वा मण्डलाधिपः।
इन्दोर्विप्रोऽथवा वैश्यो भौमस्य द्विजशूद्रकौ ।। १५३।।
सौम्यस्य शूद्रो वैश्यो वा शनेः शूद्रोऽन्त्यजोऽपि वा।
जीवस्य विप्रः शुक्रस्य शूद्रो विप्रोऽथवा स्त्रियः ।। १५४।।
नीचारिमूढगैरेतैर्नीचजातिं विनिर्दिशेत् ।। १५५।। इति

सारसमुच्चय का कथन है कि सूर्य तथा शुक्र का शासन या प्रभाव सभी जातियों के राजाओं (मुखियों) पर होता है । चन्द्रमा का शासन ब्राह्मणों एवं वैश्यों पर होता है । मंगल का शासन ब्राह्मणों तथा शूद्रों पर होता है ।।१५३।।

बुध का शासन वैश्यों तथा शूद्रों पर होता है । शनि का शासन शूद्रों तथा अन्त्यज जातियों पर होता है । गुरु का शासन ब्राह्मणों पर तथा शुक्र का ब्राह्मणों तथा स्त्रियों पर भी होता है ।।१५४।।

जब ये ग्रह नीचराशि, शत्रुराशि में अथवा अस्तङ्गत हों तब इनकी जो जाति कही गई हैं उसमें भी गिरी हुई कोटि (निम्न कोटि या निम्न स्तर) की जाति कहना चाहिए ।।१५५।।

जाति में जाति का तात्पर्य है, जैसे उत्तम कोटि ब्राह्मण तथा अधम कोटि ब्राह्मण- यही कोटि सब जातियों में निर्धारित करना उचित है ।

शत्रुताहेतूनां विचारणा

शत्रुप्रयोक्तृवर्णोक्तावस्ति ग्रन्थान्तरञ्च तत्।
लिख्यते शत्रुताहेतुस्तत्रापि च मतान्तरम् ।। १५६।।

अब तक शत्रु तथा प्रयोक्ता की जाति का विचार ग्रन्थान्तरों के मत सहित यहाँ दिया जा चुका है, अब शत्रुता के कारण तथा उनके सम्बन्ध में मतान्तरों को लिखते हैं ।

शत्रुताहेतूनां सूचका ग्रहाः

षष्ठेशजातिं द्विषतोऽभिदध्यात् कर्मेशजातिं खलु कर्मकर्तुः।
हेतुञ्च षष्ठेशसमाश्रितर्क्षनाथानुरूपं तमिहाभिधास्ये ।। १५७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

षष्ठेश ग्रह की जो जाति है वह तो शत्रु की जाति होती है तथा कर्मकर्त्ता की जाति वह होती है जो दशमेश की जाति है । अब शत्रुता का हेतु (कारण) क्या है ? यह जानने के लिए यह देखें कि षष्ठेश (शत्रु) किस राशि में बैठा है । षष्ठेशाधिष्ठित राशि के स्वामी ग्रह के अनुसार शत्रुता का कारण निश्चित होता है । यह अब आगे के श्लोकों में कहा जा रहा है ॥१५७॥

शत्रुतासूचका ग्रहयोगाः

षष्ठेशो यदि भौमवेश्मनि बुधैर्हेतुर्महीत्युच्यते;
बौधे काञ्चनमार्यभे पणफलान्यच्छस्य रूप्यं तथा ।
वासो धान्यचतुष्पदाश्च शनिभे चण्डालदासायुधं;
चन्द्रे भाजनमम्बु वार्कभवने ताम्रञ्च मूलं फलम् ।। १५८।।

(१) यदि षष्ठेश भौम की राशि में हो तो विद्वानों के अनुसार शत्रुता का कारण भूमि होती है । (२) यदि षष्ठेश बुध की राशि में हो तो सोना-चाँदी के लिए शत्रुता होती है । (३) यदि षष्ठेश गुरु की राशि में हो तो फलों के लिए या फल के लेन-देन या व्यापार के कारण शत्रुता होती है । (४) यदि षष्ठेश अच्छ (शुक्र) की राशि में हो तो शत्रुता का हेतु रुपया (चाँदी आदि) होता है तथा वस्त्र, अनाज, पालतू पशु के कारण भी होती है ।

(५) षष्ठेश की स्थिति शनि की राशि में होने पर हथियार (शस्त्र), चण्डाल तथा सेवक आदि के कारण शत्रुता होती है । (६) यदि षष्ठेश चन्द्रमा की राशि में हो तो बर्तन, भाण्डे, जल आदि के कारण शत्रुता होती है । (७) यदि सूर्य की राशि में षष्ठेश बैठा हो तो शत्रुता का कारण मूल, फल तथा ताम्र धातु आदि हुआ करते हैं ॥१५९॥

शत्रुता का हेतुसूचक राशि-पदार्थों का चक्र

षष्ठेश द्वारा अधिष्ठित राशि	शत्रुता का हेतु	षष्ठेश द्वारा अधिष्ठित राशि	शत्रुता का हेतु
मेष	भूमि	तुला	चाँदी वस्त्र अन्न पालतू पशु
वृष	चाँदी वस्त्र धान्य पशु	वृश्चिक	भूमि
मिथुन	सोना	धनु	व्यापार फल
कर्क	बर्तन जल	मकर	चाण्डाल सेवक शस्त्र
सिंह	मूल जल	कुंभ	चाण्डाल सेवक आयुध
कन्या	सोना-आभूषण	मीन	व्यापारफल

शात्रवे मतान्तरम्

लग्नादिकेषु भावेषु यत्रास्ते बाधकेश्वरः ।
भावमेनं निमित्तीकृत्याभिचारं विनिर्दिशेत् ।। १५९।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लग्नादि द्वादश भावों में जिस किसी भी भाव में बाधाधिपति ग्रह बैठा हो उस भाव के निमित्त हेतु ही अभिचार तथा शत्रुता की गयी है, ऐसा जानना चाहिए ।।१५९।।

मान लीजिए—बाधाधिपति पञ्चम भाव में बैठा हो तो सन्तान के कारण शत्रुता होगी । यदि सप्तम भाव में बैठा हो तो पत्नी या पति या काम सम्बन्धों के कारण शत्रुता होगी । यदि नवम भाव में बैठा है तो गुरुजनों के कारण शत्रुता होगी । यदि धनभाव में बाधाधिपति बैठा हो तो शत्रुता का कारण धन है; ऐसा विचार कर उत्तर देना चाहिए ।

बाधाधिपस्थितिवशात् शत्रुताहेतुज्ञानपक्रम्

बाधेश की भावस्थिति	शत्रुता या अभिचार का हेतु	बाधेश की भावस्थिति	शत्रुता या अभिचार का हेतु
लग्न	शारीरिक बल, सौन्दर्य आदि	सप्तम	पत्नी-पति कामसम्बन्ध
द्वितीय	धन	अष्टम	गड़ा धन, रिश्वत
तृतीय	सहोदर एवं सहायक	नवम	धर्म, पिता
चतुर्थ	माता, भूमि, भवन	दशम	पिता, पद, सम्मान
पंचम	विद्या, सन्तति	एकादश	आय, चाचा
षष्ठ	मामा, ऋण	द्वादश	व्यय, दान आदि

पुनश्च मतान्तरम्

धात्वादिभखेटानामुदयेनारातिबाधकेशाभ्याम् ।
आश्रितभाभ्यामथवा धात्वाद्याः हेतवश्चिन्त्याः ।। १६० ।।

शत्रु किस कारण शत्रुता या अभिचार करा रहा है इसको जानने की तीसरी पद्धति यह है कि प्रश्नकुण्डली में (१) उदयलग्न, (२) लग्नस्थ ग्रह, (३) षष्ठेश, (४) बाधकेश (५) बाधकेश जिस राशि में बैठा है वह राशि, (६) लग्नेशाश्रित राशि तथा (७) षष्ठेशाश्रित राशि इनसे बाधा का हेतु धातु, मूल या जीव की पद्धति से विचार करना चाहिए ।।१६०।।

शत्रुर्निकटस्थो दूरस्थो वेति ज्ञानम्

शत्रुः पृच्छकसम्बन्धी वान्यो वा दूरगोऽपि वा ।
समीपस्थोऽथवेत्यादि तदन्विह विचिन्त्यते ।। १६१ ।।

जो शत्रु है वह पृच्छक का निकट सम्बन्धी है अथवा दूरस्थ या अन्य व्यक्ति है, समीप का है या दूरस्थ वासी है; यह जानने की विधि कहते हैं ।।१६१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्ञाताज्ञातशत्रुज्ञापका योगाः

शत्रुःस्यात्स्वजनश्चरे, स्थिरगृहे लग्ने सुहृच्छात्रवो;
द्वन्द्वे स्यादितरोऽथवा गृहपतौ षष्ठस्थिते बान्धवः ।
पुत्रेशे तनयादिकोऽथ मदपे भार्याथ धर्माधिपे;
पित्राद्या गुरवो भवन्ति रिपवः शापोऽथवैषामिह ।। १६२।।

यदि प्रश्नलग्न में चर राशि हो तो कोई निकट सम्बन्धी ही शत्रु होता है । यदि स्थिर राशिगत लग्न हो तो मित्र-मण्डली में से ही कोई शत्रु होता है । यदि लग्न में द्विस्वभाव राशि हो तो कोई अपरिचित या अज्ञात व्यक्ति शत्रु होता है ।

इसी प्रकार यदि गृहपति (चतुर्थेश) यदि षष्ठ भाव में बैठा हो तो कोई बान्धव ही शत्रु होता है । यदि पंचमेश षष्ठ भाव में बैठे तो पुत्रादि में कोई शत्रु होता है । सप्तमेश यदि शत्रुभाव में बैठा हो तो पति या पत्नी ही शत्रु होता है । यदि नवमेश षष्ठस्थान में बैठा हो तो पिता या गुरु ही शत्रु होते हैं अथवा इनका शाप प्राप्त होता है ।।१६२।।

रिपोः स्थानज्ञानम्

सहवासी स्थिरे लग्ने द्वन्द्वगेऽन्तिकदेशगः ।
चरे दूरगतः शत्रुर्ज्ञेयः स्निग्धजनोऽथवा ।। १६३।।

यदि लग्न में स्थिर राशियों में (वृष-सिंह-वृश्चिक-कुंभ) में से कोई भी राशि हो तब शत्रु पृच्छक के साथ ही रहने वाला होता है । यदि द्विस्वभाव राशि (मिथुन-कन्या-धनु-मीन) का लग्न हो तो शत्रु पड़ोस का ही रहने वाला होता है (यह पड़ोस निवासस्थान के चारों ओर हो सकता है ।) यदि लग्न में चर राशि हो तो शत्रु दूरवर्ती स्थान में रहता है । परन्तु वह दूरवर्ती होने पर भी पृच्छक का कोई स्नेही जन भी हो सकता है ।।१६३।।

शत्रोर्दिशाज्ञानम्

शत्रोर्दिग्रिपुनाथवैरिग्रहयोरेकस्य वर्णोक्तवद्
बाधाराशितदीशयोरितरदिग्वाच्या प्रयोक्तुस्तथा ।
प्रागाद्येत्यमुनोदिता विहगदिक्प्रागादितो राशिदिक्
तासां दूरसमीपमध्यगतताजाद्याप्तभांशैस्तयोः ।। १६४।।

शत्रु किस दिशा का रहनेवाला है यह छठे भाव तथा षष्ठेश से जिस प्रकार पूर्व में शत्रु की जाति बताई गई है (इसी अध्याय के श्लोक १४३ से १४७ तक) उसी प्रकार बाधाधिपति तथा बाधास्थान की राशि की जो दिशा हो वह मांत्रिक की तथा षष्ठस्थान तथा षष्ठेश की जाति के अनुसार ही शत्रु की दिशा का ज्ञान होता है । आगे श्लोक में ग्रहों तथा राशियों की दिशा बताई गयी है ।

अब शत्रु तथा प्रयोक्ता दूर, मध्य या समीप में निवास करता है इसकी जानकारी षष्ठेश तथा बाधकेश की स्थिति राशि तथा नवांश के चर-स्थिर-द्विस्वभाव के अनुसार जानना चाहिए ।।१६४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कब षष्ठेश तथा षष्ठ भाव से विचार करें तथा कब बाधकेश तथा बाधास्थान से विचार करें ? इसके लिए श्लोक १४० से १४३ तक देखें। षष्ठ-षष्ठेश शत्रुता का तथा बाधाराशि एवं बाधकेश में मांत्रिक की जाति तथा दिशादि का विचार करें।

अध्येताओं की सुविधा के लिए राशियों की जाति तथा दिशाओं का चक्र आगे दिया जा रहा है।

द्वादश राशियों की जाति एवं दिशा का चक्र

	राशि	दिशा	जाति
१	मेष	पूर्व	क्षत्रिय
२	वृष	दक्षिण	वैश्य
३	मिथुन	पश्चिम	शूद्र
४	कर्क	उत्तर	ब्राह्मण
५	सिंह	पूर्व	क्षत्रिय
६	कन्या	दक्षिण	वैश्य
७	तुला	पश्चिम	शूद्र
८	वृश्चिक	उत्तर	ब्राह्मण
९	धनु	पूर्व	क्षत्रिय
१०	मकर	दक्षिण	वैश्य
११	कुंभ	पश्चिम	शूद्र
१२	मीन	उत्तर	ब्राह्मण

यदि षष्ठेश-अधिष्ठित राशि या षष्ठ भाव में स्थित राशि चर है तो शत्रु या तांत्रिक बहुत दूर का रहने वाला होता है। यदि षष्ठस्थ राशि या षष्ठेशाधिष्ठित राशि स्थिर है तो शत्रु समीप ही रहता है। यदि षष्ठ राशि या षष्ठेशाश्रित राशि द्विस्वभाव है तो शत्रु मध्यम दूरी पर निवास करता है। इसी प्रकार से षष्ठ भाव के नवांश तथा षष्ठेश के नवांश से भी विचार करना चाहिए। इस प्रकार राशि एवं नवमांश दोनों से ही विचार करें। यदि दोनों भिन्न-भिन्न हों अर्थात् एक चर, दूसरा स्थिर या द्विस्वभाव हो तो राशि या नवमांश में जो अधिक बली हो उसके फल को कहना चाहिए।

सन्तानदीपिकात: अभिचारलक्षणानां कथनम्

चरे विलग्ने रिपुनाथदृष्टे, कुजे च लाभे स्थिरभे च धर्मे ।
द्वन्द्वेऽस्तराशौ प्रवदेन्नराणां रोगं रिपूणां कृतमाभिचारैः ॥ १६५॥

(१) यदि लग्न में चर राशि हो और उस पर रिपुनाथ (षष्ठेश) की दृष्टि हो तथा ग्यारहवें भाव में मंगल बैठा हो। अथवा (२) लग्न में स्थिर राशि होकर षष्ठेश से दृष्ट हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तथा नवम भाव में मंगल बैठा हो। अथवा (३) लग्न में द्विस्वभाव राशि होकर षष्ठेश से दृष्ट हो तथा सप्तम में मंगल बैठा हो तो शत्रु द्वारा प्रायोजित अभिचार से रोग उत्पन्न हुआ है। ऐसा बताना चाहिए ॥१६५॥

इन योगों में स्थिर लग्न वृश्चिक में योग नहीं बन सकता है, क्योंकि वृश्चिक लग्न में मंगल ही षष्ठेश होता है तथा मंगल ही नवम में बैठता है तो नवम में बैठे मंगल की पूर्ण दृष्टि वृश्चिक लग्न पर नहीं होती है। हाँ, यदि किसी भी प्रकार की आंशिक या पाद दृष्टि स्वीकार कर ली जाय तो अवश्य यह योग अवश्य ही घटित होगा।

होरानाथयुते भौमे लग्नकेन्द्रगतेऽथवा।
रिपुनाथे विलग्नस्थे चाभिचार उदीर्यताम्॥ १६६॥

अभिचार योग

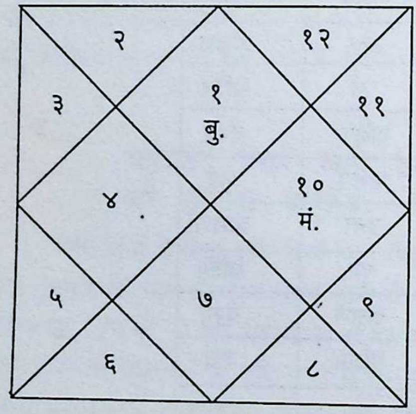

अभिचार योग

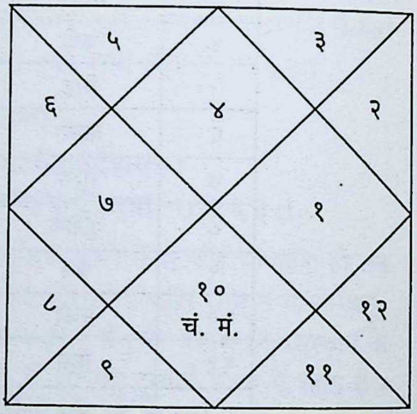

यदि षष्ठाधिपति लग्न में, केन्द्र में मंगल हो या लग्नेश तथा मंगल की युति लग्न में हो तो अभिचार होता है ॥१६६॥

शत्रुस्थानाधिपे लग्ने कर्मण्यस्तङ्गतेऽथवा।
लग्ने भौमयुते दृष्टे वाभिचार उदीर्यताम् ॥ १६७॥

(१) यदि शत्रुस्थान का स्वामी लग्न में, दशम में या सप्तम में बैठा हो तो अभिचार कहना चाहिए। (२) लग्न यदि भौम से युत वा दृष्ट हो तब भी अभिचार होता है ॥१६७॥

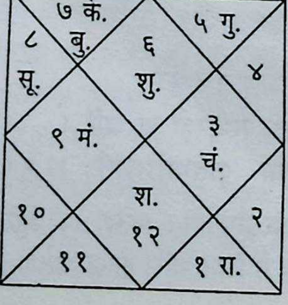

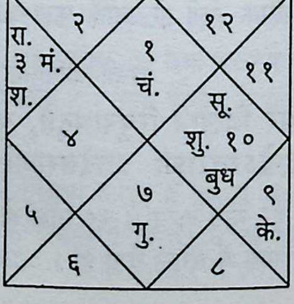

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

केतुजन्य अभिचारयोगः

सुखभावगते केतौ कर्मलग्नगतेऽथवा ।
लग्ने भौमयुते दृष्टे वाभिचार उदीर्यताम् ।। १६८।।

यदि केतु चतुर्थ, दशम या लग्न में हो अथवा लग्न पर भौम की दृष्टि हो तो अभिचार होता है ।।१६८।।

क्षुद्राभिचारयोगः

सुखभावगते केतौ कर्मलग्नगतेऽथवा ।
केन्द्रे मान्दिसमायुक्ते रोगः क्षुद्राभिचारजः ।। १६९।।

यदि केतु चौथे, दशवें या लग्न में हो अथवा केन्द्र में मान्दि बैठा हो तो रोग क्षुद्राभिचार जन्य होता है ।।१६९।।

वक्तव्य—श्लोक १६८ में केन्द्र में (सप्तम को छोड़ कर) केतु की स्थिति से अभिचार तथा पुनः श्लोक १६९ में उसी स्थिति से क्षुद्राभिचार कहा गया है, अतः दोनों एक-दूसरे के विरोधी योग होते हैं; अतः मेरी सम्मति में इन दोनों में "अथवा" का अर्थ 'च' लेना उचित होगा । इस प्रकार श्लोक १६८ का अर्थ होगा—"केतु सुखभाव में अथवा कर्मभाव में अथवा लग्न में हो तथा मंगल की लग्न पर दृष्टि या युति हो तो तब अभिचार कहना चाहिए ।

इसी प्रकार श्लोक १६९ का वास्तविक अर्थ है—

यदि केतु सुखभाव, कर्मभाव अथवा लग्न में हो तथा गुलिक केन्द्र में हो तब क्षुद्राभिचार होता है । यहाँ 'वा' शब्द को 'च' के अर्थ में ग्रहण करना चाहिए । 'वा' शब्द का अर्थ 'तथा' करने की परम्परा टीकाकारों में विद्यमान भी है ।

क्षुद्राभिचारयोगः

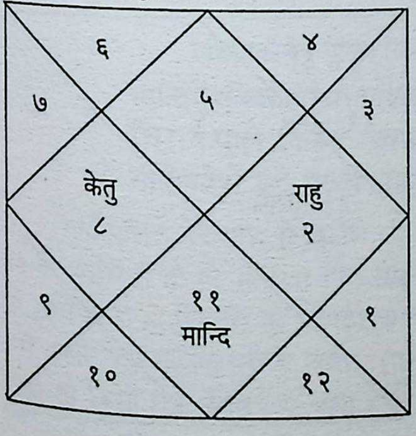

क्षुद्राभिचारयोगः

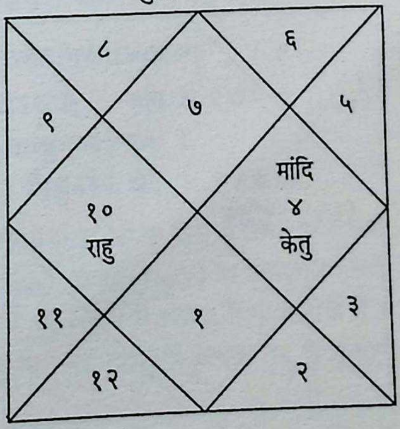

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अभिचारमुक्तिः

मारणोच्चाटनाद्यर्थं रिपुभिर्यद् विधीयते ।
चूर्णादिकं तदुद्धारप्रकारोऽथ निगद्यते ।। १७० ।।

शत्रुजन मारणादि प्रयोगों के लिए जिन चूर्ण आदि को बनवाते हैं उन से त्राण पाने की विधि भी अब कहते हैं ।।१७०।।

शत्रुलोग इन चूर्णों को किसी गुप्त स्थान पर लगा देते हैं । जैसे 'साही' नामक जन्तु का काँटा अगर किसी के घर की दीवाल या भूमि में छिपा दिया जाय तो उसके परिवार में नित्य लड़ाई-झगड़ा होता है । अतः ग्रहयोगों से इन हानिकर पदार्थों का पता लगाने की विधि बताई जा रही है ।

भूमिगत अभिचारद्रव्यकथनम्

उदयारूढचन्द्राणां गुलिके केन्द्रसंस्थिते ।
मन्दयुक्तेऽथ दृष्टे वा क्षुद्रं रिपुकृतं वदेत् ।। १७१ ।।

यदि लग्न (प्रश्नलग्न), आरूढ राशि तथा चन्द्रमा से केन्द्र में गुलिक हो तथा शनि से दृष्ट या युत हो तो शत्रु के द्वारा किया गया तुच्छ अभिचार धूलि या भूमि में मिलाया गया है, ऐसा जानना चाहिए (क्षुद्र का अर्थ धूलि भी होता है) ।।१७१।।

जलगताभिचारद्रव्यकथनम्

मान्दिश्चतुर्थराशौ वा चतुर्थांशेऽथवा स्थितः ।
यदि क्षुद्रं गृहे वाच्यं जलराश्यंशयोर्जले ।। १७२ ।।

यदि गुलिक चौथे भाव या चतुर्थ भाव के नवांश में स्थित हो तो घर के भीतर अभिचार पदार्थ है, ऐसा बताना चाहिए । यदि मान्दि चतुर्थ में जलचर राशि या जलचर नवांश में हो तों जल के भीतर क्षुद्राभिचार द्रव्य स्थित होता है ।।१७२।।

गृहेऽभिचारद्रव्ययोगः

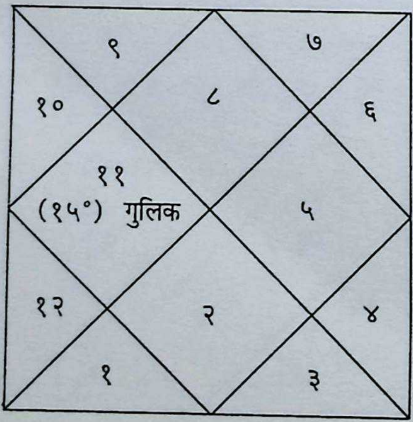

जलेऽभिचारद्रव्ययोगः

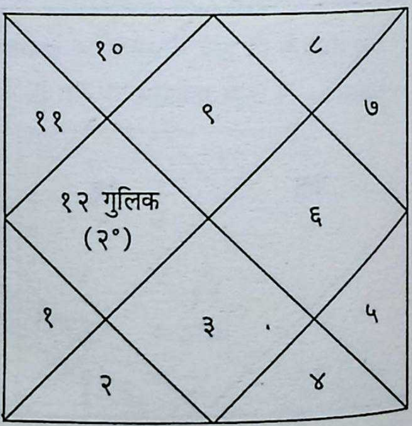

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्गोत्तमे चतुर्थस्थगुलिकप्रभाव:

वर्गोत्तमांशगे तस्मिन्नुभयत्र वदेदिदम् ।
मन्देन मान्दिना वापि युक्तेहौ सर्पसन्निधौ ।। १७३।।

(१) यदि उक्त चतुर्थ भावगत गुलिक वर्गोत्तम नवांश में हो तो घर एवं जल दोनों में अभिचार का प्रभाव कहना चाहिए । (२) यदि शनि या गुलिक इनमें से किसी के साथ राहु (अहि) की युति हो तो अभिचार बाँबी के समीप किया गया है (वहीं पर अभिचार द्रव्य को गाड़ दिया गया है या बाँबी में डाला गया है) ।।१७३।।

शनिगुलिकाभ्यां योगा:

तत्केन्द्रे चेद् रविवृक्षे, केदारे भूमिजो यदि ।
जीवश्चेद् गृह एव स्याच्छुक्रश्चेच्छयनालये ।। १७४।।

(१) वृक्ष के समीप अभिचार—यदि शनि या गुलिक से सूर्य केन्द्र में स्थित हो तो अभिचार द्रव्य वृक्ष के समीप छिपाया जाता है ।

(२) खेत में अभिचार द्रव्य—यदि शनि या गुलिक से केन्द्र में मंगल बैठा हो तो अभिचार पदार्थ खेत में छिपाया जाता है या पहाड़ पर छिपाया गया होता है । (केदार का अर्थ जलपूर्ण, खेत, चरागाह, आलवाल, पहाड़ तथा भगवान् शंकर होता है ।)

(३) घर में—यदि मन्द या मान्दि से केन्द्रस्थान में गुरु हो तो अभिचारित पदार्थ घर के भीतर स्थित होता है ।

(४) शयन कक्ष में यदि मन्द या मान्दि से शुक्र केन्द्रगत हो तो शयन कक्ष में अभिचार स्थित होता है ।।१७४।।

शनिगुलिकयो: केन्द्रसम्बन्ध:

मन्दश्चेन्मलमूत्रादि परिहारोचितावनौ ।

यदि गुलिक से शनि केन्द्र में स्थित हो तो अभिचार द्रव्य शौचालय (पाखाना = लेट्रीन), मूत्रालय या मोरी-परनाला आदि में छिपाया जाता है ।।१७४$^{1}/_{2}$।।

राशित्रिकोणेषु गुलिकस्थितिवशादभिचारद्रव्यज्ञानम्

मान्दिर्मेषत्रिकोणस्थस्तदंशस्थोऽथवा यदि ।। १७५।।
शिर:कपाले निहितं व्याघ्रस्याखुभुजोऽथवा ।
गोत्रिकोणे घटे वाच्यं वंशादौ मिथुनस्य चेत् ।। १७६।।

यदि गुलिक मेष राशि से त्रिकोण की राशियों (सिंह अथवा धनु) में स्थित हो अथवा मेष के नवांश में हो तो अभिचार द्रव्य सिंह (lion), व्याघ्र (Tiger) या आखुभुज (चूहों को खाने वाली = बिल्ली) की खोपड़ी या चमड़े की कटोरी में रखकर छिपाया होता है । इसी प्रकार यदि गुलिक वृष के त्रिकोण (कन्या या मकर राशि) में अथवा वृष के नवांश में हो तो किसी घड़े में छिपाया जाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि गुलिक मिथुन के त्रिकोण (तुला या कुंभ राशि) में हो अथवा मिथुननवांश में हो तो बाँस के भीतर क्षुद्राभिचार छिपाया जाता है ॥१७५-१७६॥

कर्कित्रिकोणसंस्थश्चेत्कपाले निहितं च तत् ।
मान्दौ संहारनक्षत्रस्थिते वाच्या हि पुत्रिका ॥ १७७॥
कीटराशिस्थिते यन्त्रं चतुरङ्घ्र्यंशकोऽस्थि च ।
एषां संख्या तु विज्ञेया मान्दिभुक्तांशकैस्समा ॥ १७८॥

यदि गुलिक कर्क के त्रिकोण (वृश्चिक-मीन) में स्थित हो तो अभिचार छिपाने का कपाल (कटोरा) नारियल का बना होता है । यदि गुलिक पृच्छक के संहार नक्षत्र में स्थित हो तो मनुष्य की आकृति का पुतला बना कर अभिचार किया जाता है । संहार नक्षत्र का अर्थ भरणी तथा आर्द्रा नक्षत्र भी होता है । कृत्तिका भी संहार नक्षत्र है, क्योंकि इसका स्वामी अग्नि होता है, जो कि सब कुछ जला डालता है ॥१७७॥

यदि कर्क या वृश्चिक राशि में गुलिक बैठा हो तो अभिचारित पदार्थ या तो यंत्र होता है अथवा किसी चतुष्पाद (चौपाया) की हड्डी होती है । इन यंत्रादि या हड्डी की संख्या गुलिक के भुक्त नवांशों के अनुसार जाननी चाहिए । यदि पाँच नवांश बीते हों तो इनकी संख्या ५ होगी । यदि ३ या ४ बीते हों तो उतनी ही संख्या कहनी चाहिए ॥१७८॥

अभिचारद्रव्यस्य दिशाज्ञानम्

मान्दिराश्यंशयोर्या दिग्देशं तामत्र निर्दिशेत् ।
एवं हि सम्प्रदायोऽत्र कश्चिदन्योऽथ कथ्यते ॥ १७९॥

गुलिक की राशि तथा गुलिक के नवांश की जो दिशा हो उस दिशा में अभिचार किया गया है, यह बताना चाहिए । ऐसा कथन एक सम्प्रदाय के विद्वानों का है । अब आगे अन्य प्रकार से भी अभिचार द्रव्य का स्थान कहा जा रहा है ॥१७९॥

विशेष—किसी-किसी प्रति में यह श्लोक नहीं है तथा कुछ अन्य श्लोकों की गणना में भी मतभेद है ।

गुलिक की त्रिकोण स्थिति से अभिचारपात्र ज्ञान का चक्र

गुलिक की त्रिकोण राशि	अभिचार द्रव्य छिपाया गया पात्र	गुलिक की त्रिकोण राशि	अभिचार द्रव्य छिपाया गया पात्र
मेष	व्याघ्रकपाल बिडालकपाल	तुला	बाँसपात्र
वृष	घड़ा	वृश्चिक	नारियल चतुष्पदास्थि
मिथुन	बाँस	धनु	व्याघ्रकपाल
कर्क	नारियल यंत्र	मकर	घड़ा
सिंह	व्याघ्रकपाल	कुंभ	पोला बाँस
कन्या	घड़ा	मीन	नारियल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मतान्तरेण बाधास्थानकथनम्

ऊर्ध्वास्ये बाधकाधीशे निहितं भूरुहोपरि ।
निखातं कावधो वक्त्रे तिर्यङ्गादनगःस चेत् ॥ १८०॥
पाषाणद्रुममध्यादिन्यस्तं चूर्णादिकं वदेत् ।
बाधेशतत्स्थराशिभ्यां द्रुमतत्स्थप्रदेशयोः ॥ १८१॥

(१) चूर्णादि वृक्ष के ऊपर—यदि बाधाधिपति ऊर्ध्वमुख राशि में बैठा हो तो चूर्णादि वृक्षादि के ऊपर रखे जाते हैं। जो राशि सूर्य द्वारा भोगकर हाल ही में छोडी जाती है वह ऊर्ध्वमुख राशि होती है।

(२)चूर्णादि भूमि में गड़ा हुआ—यदि बाधाधिपति अधोमुख राशि में हो तो बाधाकारक अभिचार प्रयुक्त पदार्थ भूमि में कहीं खोदकर गाड़ा जाता है। जिस राशि में सूर्य होता है वह राशि अधोमुख कहलाती है।

(३) चूर्णादि बीच में न ऊपर न नीचे—यदि बाधाधीश ग्रह तिर्यङ्मुख राशि में बैठा हो तो चूर्णादि को पत्थरों या वृक्षादि की शाखाओं में छिपाकर रखा जाता है।

बाधाधीश ग्रह की स्थित राशि से चूर्ण कहाँ पर रखा है, यह बताया गया है। इसके अतिरिक्त बाधाधिप जिस राशि में बैठा है उसके स्वामी से भी विचार करना चाहिए ॥१८०-१८१॥

जिस राशि को सूर्य भोगना चाहता है वह राशि तिर्यङ्मुख कहलाती है। वह राशि सूर्य से दूसरी होती है तथा सूर्य तिर्यङ्मुख राशि से बारहवाँ होता है। जैसे सूर्य यदि मेष में हो तो वृष राशि तिर्यङ्मुख होगी, मेष राशि अधोमुख होगी तथा मीन राशि ऊर्ध्वमुख होगी (सरलता के लिए आगे चक्र देखें)।

सूर्य की स्थिति से राशियों के मुखज्ञान का चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	सूर्य स्थित राशि
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	ऊर्ध्वमुख
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	अधोमुख
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	तिर्यङ्मुख

अथ वृक्षादिनाम उत्तमतादिज्ञानम्

शुभोऽशुभर्क्षा इत्येतेनोह्या चोत्तमनीचता ।
बाधकाधिपतिः स्वांशांत्रवांशे यावति स्थितिः ॥ १८२॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तत्संख्याः स्युर्द्रुमास्तत्र मध्यगांशकपोदिताः ।
तेषु बाधेशवृक्षो वा समीपे वास्य तत्स्थितम् ।। १८३।।

अब यह देखें कि बाधकेश स्थित राशि यदि शुभ है तो जिस वृक्ष में अभिचारित पदार्थ को रखा है वह उत्तम जाति का होगा । यदि वह राशि अशुभ राशि होगी तो वृक्ष भी हीन जाति तथा हीन प्रजाति का होगा । राशियों की शुभता उनके स्वामियों से जानना चाहिए ।

बाधाधिपति स्वनवांश से जितने नवांश आगे हो उतनी संख्या वृक्षों की । स्वनवांश तथा बाधकेश जिसमें बैठा है वह नवांश इन दोनों के मध्य जितने नवांश है । उनके स्वामी ग्रहों की रीति से वृक्षों की जाति जान लेनी चाहिए ।

अब इन बहुत-से वृक्षों में किस वृक्ष पर अभिचारित पदार्थ (यंत्र, चूर्ण, गुटका, पुतला, हड्डी आदि) रखा है उसकी पहचान कैसे करें ? तो इसके लिए बाधकेश ग्रह का जो वृक्ष हो उसके अनुसार वृक्ष बताना चाहिए । जैसे कि सूर्य तने के भीतर मजबूत काठ वाले वृक्षों का स्वामी होता है, अत: उसकी राशि के वृक्ष भी इसी प्रकार होंगें । चन्द्रमा लता-वल्लरी का स्वामी होने से कर्क राशि में वृक्षादि इसी वर्ग के होंगे ।

वृक्षों की उत्तमता का विचार "शुभोऽशुभर्क्षे रुचिरं कुभूमिजं" इत्यादि श्लोक के अनुसार करें । वृक्षों के प्रकार का विचार "अन्त:सारान् जनयसि रवि:" इस श्लोक के अनुसार करें ।।१८२-१८३।।

ग्रहों के वृक्षों के सम्बन्ध में विशेष स्पष्टीकरण

ग्रहों के वृक्षों के सम्बन्ध में प्रश्नज्ञानप्रदीप में कहा गया है—

"तृणानि ज्ञस्य भानोश्च वृक्षाश्चन्द्रस्य वल्लरी ।
गुरोरिक्षुर्भृगोश्चिञ्च भूरुहा: परिकीर्तिता: ।।
शनिर्भौमोरगाणां च क्तिक्तकण्टकभूरुहा:" ।

अर्थात् बुध तिनकों का स्वामी है । सूर्य भारी-भरकम वृक्षों का, चन्द्रमा लताओं का, गुरु ईख का, शुक्र इमली का स्वामी होता है । शनि, मंगल तथा राहु इनके वृक्ष नीम की तरह कड़वे तथा काँटेदार होते हैं ।

श्री मन्त्रेश्वर का मत—श्री मन्त्रेश्वर कहते हैं कि जो वृक्ष बहुत ऊँचे तथा अन्त:सार (काठ की अधिकता) वाले हों उन पर सूर्य का अधिकार होता है । लता-वल्ली पर चन्द्रमा तथा शुक्र का अधिकार होता है । गुल्मों (झाड़ियों) पर केतु तथा राहु का अधिकार है । कंटकीय वृक्षों पर शनि तथा मंगल का आधिपत्य विशेष रूप से है । फलदार वृक्ष देवगुरु बृहस्पति (वागीश) के अधिपत्य में है । बुध का प्रभाव अफल (फल रहित वृक्षों) पर है । पुष्पवाले वृक्ष तथा क्षीरी (दूधवाले) वृक्ष चन्द्रमा एवं शुक्र के अधिकार में है तथा औषधियाँ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रमा के वर्ग में आती हैं । रसविहीन दुर्बल वृक्ष शनि के अधिकार में हैं तथा राहु (अग) का साल वृक्ष पर अधिकार है । यथा—

"अन्तःसारसमुन्नतद्ररुणो वल्ली सितेन्दू स्मृतौ,
गुल्मः केतुरहिश्च कण्टकनगौ भौमार्कजौ कीर्तितौ ।
वागीशः सफलोऽफलः शशिसुतः क्षीरप्रसूनद्रुमौ,
शुक्रेन्दू विधुरौषधिः शनिरसा रागश्च सालद्रुमः"।।

(फलदीपिका २।३७)

यूँ तो सभी वृक्षों में पत्र-पुष्पादि होते हैं, जिसमें फलों की प्रधानता हो वह फलवाला वृक्ष माना जाय, जिसमें पुष्पों की प्रधानता हो उसे पुष्पवाला तथा जिसमें पत्तों की प्रधानता हो से पत्तों वाला, जिनमें काँटों की प्रधानता हो उन्हें काँटोंवाला मानना चाहिए । कटहल, केला, सेव, अमरुद, अनार ये फल प्रधान हैं । बरगद, पाकर, अशोक ये पत्र प्रधान हैं । मौलश्री, चमेली, गुड़हल, चम्पा आदि पुष्प प्रधान हैं । बबूल, बेर, करीर आदि कण्टक प्रधान हैं । महुआ, शीशम, सागोन, देवदार, चन्दन ये काष्ठ (अन्तःसार) प्रधान है ।

जलस्थानज्ञानम्

बाधेशे जलराशिस्थे सिन्धुनद्यादिकूलगम् ।
जले क्षिप्तं निखातं वा वाच्यमूर्ध्वाननादिभिः।। १८४।।

यदि बाधेश जलराशि में हो तो अभिचार पदार्थ सिन्धु (समुद्र), नदी, नहर आदि के किनारे होता है । अब यदि वह राशि ऊर्ध्वमुख है तो वह किनारे पर फैंक दिया गया है । यदि राशि अधोमुख है तो जल के नीचे भीतर उसे गाड़ दिया है । यदि बाधकेश स्थित राशि तिर्यङ्मुख हो तो पानी में फैंक दिया गया है, ऐसा बताना चाहिए ।

बाधकेशफलम्

अर्के वार्केण युक्ते वा बाधेशे देवसन्निधौ ।
चन्द्रे चन्द्रान्विते तोयप्रदेशे वाथ सोषरे ।। १८५।।

यदि बाधास्थान का स्वामी सूर्य हो अथवा बाधकेश सूर्य के साथ बैठा हो तो अभिचार की वस्तु देवमन्दिर के समीप दिपायी गई है । यदि चन्द्रमा बाधकेश हो अथवा चन्द्र से युक्त बाधेश हो तो जलीय प्रदेश या ऊषर भूमि में अभिचार द्रव्य चूर्णादि होता है ।।१८५।।

कुजे वा कुजयुक्ते वा श्मशाने वाग्निसन्निधौ।
युद्धोर्व्यां वैवमाद्येषु शशिजे वाथ तद्युते ।। १८६।।

यदि बाधकेश कुज हो अथवा बाधकेश कुज से युक्त हो तो चूर्णादि श्मशान (मरघट) या अग्नि (भट्ठी, चूल्हा, अलाव आदि) के समीप होता है । इसी प्रकार वह युद्ध के मैदान में भी हो सकता है ।।१८६।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विद्याभ्यासविहारोर्व्यामथ जीवे च तद्युते ।
देशान्ते कोशगेहे वा ततः शुक्रे च तद्युते ।। १८७।।

यदि (१) बुध बाधकेश हो या बाधकेश बुध से युक्त हो तो विद्यालय, बौद्धविहार या क्लब इत्यादि में वह चूर्णादि होता है ।

(२) यदि बाधकेश गुरु हो अथवा बाधकेश गुरु के साथ युत हो तो ग्राम, देश या घर की सीमा (Boundry wall), कोशगेह (कोषालय, बैंक, स्ट्राँगरूम, तिजोरी, सन्दूक, धन रखने की अलमारी, गुल्लक आदि) में चूर्णादि रखा गया है, ऐसा बताना चाहिए ।।१८७।।

शय्यागृहे वा ग्रामान्ते ततो मन्दे च तद्युते ।
उच्छिष्टादिपरित्यागस्थाने चूर्णादिकं स्थितम् ।। १८८।।

(१) शुक्र यदि बाधाधिपति हो अथवा बाधाधिप शुक्र से युत हो तो चूर्णादि वस्तु शयनकक्ष, ग्राम या कस्बे की सीमा (चुंगीनाका, बैरियर आदि) पर होती है ।

(२) यदि शनि बाधानाथ हो या बाधानाथ शनि के साथ हो तो चूर्णादि वस्तु धूरे पर, जूठन फैंकने वाले स्थान, कूड़ादान आदि में स्थित होती है ।।१८८।।

बाधकेशेन राहुकेतुगुलिकयुतिफलम्

युक्ते तस्मिन् राहुकेतुगुलिकैः सर्पसन्निधौ ।
दिगत्र रिपुनाथस्य वाच्या वा बाधकेशितुः ।। १८९।।
बाधकाधिपसंयुक्तराशेरप्यंशकस्य वा ।। १९०।।
अथत्रोद्धार्यमेव स्याद्बाधेशे चरराशिगे ।
उभयस्थे प्रयत्नेन, नोद्धार्यं स्थिरराशिगे ।। १९१।।

यदि बाधकेश राहु, केतु या गुलिक से युत हो तो चूर्णादि सर्प की बाँबी (वल्मीक) के समीप होते हैं ।

चूर्णादि की दिशा जानने के लिए षष्ठेश की दिशा, बाधकेश की दिशा या बाधकेश जिस राशि में बैठा हो उस राशि की दिशा अथवा बाधकाश्रित नवांश की दिशा का उपयोग करें । इनकी दिशा के अनुसार दिशा कहें ।।१८९-१९०।।

अब चूर्ण के उद्धार के विषय में कहते हैं कि यदि बाधकेश चर राशि में स्थित हो तो बिना प्रयास के चूर्ण का अनायास ही उद्धार हो जाता है । यदि बाधकेश द्विस्वभाव राशि में बैठा है तो पर्याप्त प्रयत्न करने पर खोज करने पर चूर्णादि मिल जाता है और फेंक दिया जाता है ।

यदि बाधकेश स्थिर राशियों (वृष, वृश्चिक, सिंह, कुंभ में से किसी में) में बैठा हो तो कितना ही प्रयत्न किया जाय परन्तु वह चूर्णादि अभिचार वस्तु खोजने पर भी हाथ नहीं आता है ।।१९१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बाधकेश ग्रह या युति के अनुसार चूर्णस्थल ज्ञान का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	गुलिक	ग्रह
देवालय	जलभूमि, ऊसर प्रदेश	अग्निस्थल, युद्धभूमि	विद्यालय, मनोरंजनालय, वकीलों का स्थान	कोषागार	शयनकक्ष	कूड़ादान	सर्पों का निवास	बाँबी बिल	बिच्छुओं का स्थान	**स्थान**

ज्योतिष ग्रन्थों में ग्रहों के वासस्थान निश्चित किये गये हैं, उन्हीं के अनुसार नष्ट वस्तु की प्राप्ति आदि बताई जाती है । फलदीपिका में ग्रहों के स्थान निश्चित करते हुए कहा है—

"शैवं धाम बहिप्रकाशकमरुद्देशो रवेः पूर्वदिक्;
दुर्गास्थानवधूजलौषधिमधुस्थानं विधोर्वायुदिक् ।
चौरम्लेच्छकृशानुयुद्धभुवि दिग्याम्या कुजस्योदिता;
विद्वद्विष्णुसभाविहारगणकस्थानान्युदीचीं विदुः ।।
कोशाश्वत्थसुरद्विजातिनिलयस्त्वैशानदिग्गीष्पते-
र्वेश्यावीथ्यवरोधनृत्तशयनस्थानं भृगोरग्निदिक् ।
नीचश्रेण्यशुचिस्थलं वरुणदिक्छास्तुः शनेरालयो;
वल्मीकाहितमो बिलान्यशिखि स्थानानि दिग्राक्षसः" ।।

इसके अनुसार सूर्य के स्थान शिवालय, शिवजी का खुला चबूतरा, सूर्यमन्दिर, खुला एवं सूर्य प्रकाश युक्त स्थान होते हैं ।

चन्द्रमा के स्थान देवी का मन्दिर, स्त्रियों का स्थान, जड़ी-बूटी, मधु, शर्बत, मुरब्बा आदि होते हैं ।

मंगल के स्थान—युद्धभूमि (सैनिकों के बैरिक, छावनी, पड़ाव, रिहर्सल के स्थान), चौरों-डाकुओं के स्थान, अग्नि वाले स्थान, शस्त्रागार आदि मंगल के स्थान हैं ।

बुध के स्थान—विष्णुमन्दिर (लक्ष्मीनारायण, रामजानकी, राधाकृष्ण के मंदिर), विद्वानों की सभा-संस्थाएँ, विश्वविद्यालय, ज्योतिषी, एकाउण्टेण्ट, कम्प्यूटर, मुनीम, कैल्कुलेटर आदि के स्थान; वाद-विवाद के स्थल आदि बुध के स्थल हैं ।

गुरु के स्थान—धन रखने के स्थान, विद्वान् ब्राह्मणों के घर, मठ आदि गुरु के स्थान हैं ।

शुक्र के स्थान—वेश्याओं के निवास, पर्देवाले स्थान (मुसलमानों के घर और अन्य भी जहाँ महिलाएँ पर्दे में रहती हों), नृत्यशाला, शयनागार आदि शुक्र के स्थल हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शनि के स्थान—जहाँ निम्न धन्धों के करने वाले होते हैं, श्रमिक वर्ग, कामगार, तैल आदि के स्थान, पुराने लोहे के कबाड़, बौद्धभिक्षुओं के स्थल ये सब शनि के स्थल हैं ।

राहु-केतु के स्थान—अंधेरी सुरंगे, बिल, बाँबी आदि राहु-केतु के स्थान हैं ।

इस प्रकार व्यापक रूप से विचार कर प्रश्न का उत्तर देने से ज्योतिषी तथा ज्योतिष दोनों के प्रति समाज में श्रद्धा जागती है ।

क्षुद्राभिचारशान्तिकथनम्

क्षुद्रं तत्स्थितिदेशं चैवं ज्ञात्वा तदुक्तविधिना तत् ।
त्यक्त्वा रक्ष्यं स्थलमथ महाभिचारप्रतिक्रियां वक्ष्ये ।। १९२।।

क्षुद्र (चूर्ण आदि) की स्थिति का पता लगाकर जो कुछ भी प्राप्त हो उसे उस स्थान से हटाकर फिकवा देना चाहिए । फिर मन्त्रशास्त्र की विधि से स्वस्तिवाचन तथा रक्षाविधान कराना चाहिए । अब महाभिचारों का उपचार कहा जा रहा है ।।१९२।।

महाभिचाराणां शान्त्युपायानां कथनम्

युक्त्वा षष्ठपतिं विलग्नपतिना यो राशिरत्रागतः,
सादित्यान्वितवीक्षितो यदि बलिं कुर्यादघोराह्वयम् ।
कार्यं चन्द्रमसा कपालहवनं स्याच्चक्रहोमं विदा;
कर्तव्यं प्रतिकारकर्म गुरुणा प्रोक्तं तदेवार्किणा ।। १९३।।

षष्ठेश के राशि-अंश-कला-विकला में लग्नेश के राशि-अंश-कला-विकला दोनों को जोड़ दें । यदि विकला साठ से अधिक हों तो उसे साठ से भाग देकर उसकी लब्धि (भजनफल) के अंक को कला में जोड़ दें, शेष को विकला के नीचे स्थापित कर दें । कलाओं के ६० से अधिक होने पर उनमें भी साठ का भाग देकर शेष को कला के नीचे तथा लब्धि को अंशों में जोड़ दें । अंशों का जोड़ यदि ३० या अधिक हो तो उनमें तीस का भाग दें, शेष को अंश के नीचे रखें तथा लब्धि को राशि में जोड़ दें । राशि यदि बारह से अधिक हों तो १२ का भाग दें, शेष को राशि के नीचे रखे तथा लब्धि को त्याग दें । इस योगफल को हम सुविधा के लिए "अभिचारस्फुट" कह सकते हैं । इस अभिचारस्फुट के अंशों पर जो ग्रह स्थित होगा उसके अनुसार ही महाभिचार की शान्ति हेतु उपाय बताया गया है ।

(१) अघोर बलि—यदि अभिचार स्फुट की राशि एवं अंशों पर सूर्य हो तो महाभिचार की शान्ति के लिए अघोर बलि करनी चाहिए ।

(२) कपालहोम—यदि अभिचार स्फुट की राशि पर चन्द्रमा हो तो तन्त्रशास्त्र की विधि से कपालहोम करना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(३) चक्रहोम—यदि अभिचार स्फुट के राश्यंशों पर बुध की स्थिति या दृष्टि हो तो चक्रहोम करना चाहिए ।

(४) प्रतिकार बलि—यदि अभिचार स्फुट की राशि गुरु से युत या दृष्टि हो तो प्रतिकार बलि करनी चाहिए ॥१९३॥

भूमिजेक्षितयुतथ योगभे भूतमारणबलिर्विधीयताम् ।
खड्गरावणबलिं करोतु वा कृत्तिकाबलिमथातनोतु वा ॥ १९४॥
शुक्रान्वितेक्षिते योगे प्रतिकारबलिक्रियाम् ।
करोतु शान्तये व्याधेर्बलिं वा भूतमारणम् ॥ १९५॥

(५) यदि अभिचार स्फुट के राश्यंशों पर मंगल की युति वा दृष्टि हो तो भूतमारण बलि करना चाहिए अथवा खड्गरावण बलि या कृत्तिका बलि करनी चाहिए ॥१९५॥

(६) यदि उक्त योग पर शुक्र की दृष्टि हो तो प्रतिकार बलि करना चाहिए ।

(७) शनि के लिए भूतमारण बलि करें (ये सब विधान विद्वान् तन्त्रवेत्ताओं के निर्देशन में ही करें ॥१९४-१९५॥

महाभिचार शान्ति का ग्रहानुसार उपाय-चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**अभिचारस्फुट से युक्त या दृष्टि युक्त ग्रह**
अघोर-बलि	कपाल-होम	कृत्तिका-बलि	चक्रहोम-	प्रतिकार-बलि	प्रतिकार-बलि	भूतमारण-बलि	**तांत्रिक उपाय श्लोक १९३-१९४-१९५ तथा १९६ के अनुसार**

उक्त प्रतिकारक उपाय सर्वसाधारण नहीं कर सकता । आजकल मंत्रविद्या के जानकार भी कम हैं, अधिकांश यह कार्य अशिक्षित, अर्धशिक्षित स्वार्थी लोग अर्थार्जन हेतु करते हैं । अत: कुछ सरल मंत्र यहाँ दिये जा रहे हैं जिनका प्रयोग किया जा सकता है ।

प्रेतादि झाड़ने का मंत्र—"ॐ नमो नारसिंहाय, हिरण्यकशिपुवक्ष:स्थल-विदारणाय, त्रिभुवनव्यापकाय, भूतप्रेतपिशाचडाकिनीकुलोन्मूलनाय स्तम्भोद्भवाय समस्त-दोषान् हर-हर, विसर-विसर, पच-पच, हन-हन, कम्पय-कम्पय, मथ-मथ, ह्रीम्-ह्रीम्, फट्-फट्, ठ:-ठ:, एहि-एहि रुद्र आज्ञापयति स्वाहा" ॥ इति मन्त्र:॥ (मंत्रमहार्णव पृ.६६३)

इस मंत्र को सिद्ध कर लें तथा अवसर आने पर सरसो पढ़-पढ़कर पीड़ित व्यक्ति पर फेंकने से प्रेतादि बाधा दूर होती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूतोपद्रवनाशक उड्डीश मंत्र—"ॐ नमो भगवते नारसिंहाय, घोर रौद्र महिषासुररूपाय, त्रैलोक्याऽम्बराय, रौद्रक्षेत्रपालाय, ह्रोम्-ह्रोम् क्रीम्-क्रीम् क्रीमिति ताडय-ताडय, मोहय-मोहय, द्रंभि-द्रंभि क्षोभय-क्षोभय, आभि-आभि, साधय-साधय, ह्रीं हृदये, आं शक्तये, प्रीतिललाटे बन्धय-बन्धय, ह्रीं हृदये स्तम्भय-स्तम्भय, किलि-किलि, ईं, ह्रीं, डाकिनि प्रच्छादय-प्रच्छादय, शाकिनीं प्रच्छादय-प्रच्छादय, भूतं प्रच्छादय-प्रच्छादय, प्रभूतं प्रच्छादय-प्रच्छादय स्वाहा, राक्षसं प्रच्छादय-प्रच्छादय, ब्रह्मराक्षसं प्रच्छादय-प्रच्छादय, सिंहिनीपुत्रं प्रच्छादय-प्रच्छादय डाकिनीग्रहं साधय-साधय, शाकिनीग्रहं साधय-साधय। अनेन मन्त्रेण डाकिनी-शाकिनी-भूत-प्रेत-पिशाचाद्यैकाहिक-द्व्याहिक-त्र्याहिक-चातुर्थिक-पञ्चवातिक-पैत्तिक-श्लैष्मिक-सान्निपातिक-केसरि-डाकिनी-ग्रहादीन् मुञ्च-मुञ्च स्वाहा। गुरु की शक्ति, मेरी भक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरीवाचा" ॥ इति मन्त्रः ॥ इसके प्रयोग का विधान—लोहे की छड़ से इक्कीस बार अथवा छप्पर के फूँस के तीले से झाड़ दें (ध्यान रहें, लोहे की सेल पीड़ित के लग न जाय केवल स्पर्श करायें)। (मंत्रमहार्णव पृ. ६६१)

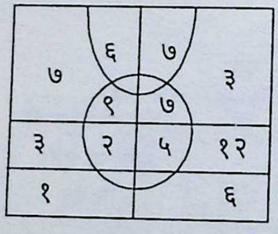

मूठ-उद्धार मंत्र—इसे कृत्या भी कहते हैं, जिन्हें शत्रु द्वारा मूठ मारने का भय हों वे इसे भोजपत्र पर लिखकर इसे कण्ठ या सिर में ताम्बे के तावीज में धारण करें। यंत्र धतूरे के रस से होली की रात्रि में नग्न होकर लिखें। (मंत्रमहार्णव पृ. ७१६)

दशमस्थानात् शान्त्युपायकथनम्

अथवा दशमेनैव राशिना तद्गतेन वा।
तद्दृष्टा वा विहङ्गेन विधीन्तामिमाः क्रियाः॥ १९६॥

यदि पूर्वाक्त योगराशि (अभिचारस्फुट) किसी भी ग्रह से युत या दृष्ट न हो तो आरूढ से जो दशम राशि से या आरूढ से दशम में स्थित ग्रह से या दृष्टा ग्रह से ये अघोर बलि इत्यादि क्रियाएँ करनी चाहिए ॥१९६॥

दूतोच्चारितवर्णात् उपायज्ञानम्

दूतोक्ताद्यक्षरे दीर्घे रोगशान्तिस्तु गानतः।
ह्रस्वे भोजनपूजाद्यैः संयुक्ते नृत्तकर्मणा॥ १९७॥

दूत या पृच्छक के द्वारा उच्चारित वाक्य या शब्द का प्रथम वर्ण यदि दीर्घ हो तो रोगशान्ति, भजन-कीर्तन या मंत्रपाठ, स्तोत्रपाठ से शान्त होता है। यदि आद्यक्षर ह्रस्व हो तो भोजन, नैवेद्य, प्रसाद, सवैया आदि से पूजा करने पर रोगशान्ति होती है। यदि प्रथम अक्षर संयुक्ताकर हो तो नृत्य द्वारा देवता को प्रसन्न करने से रोगशान्ति होती है ॥१९७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पृच्छकस्य दृष्टिवशात् शान्तिविधानम्

प्रोक्तः प्रतिक्रियाकर्तृभेदो दृष्ट्यापि पृच्छताम्।
प्रश्नानुष्ठानपद्धत्यां तत्प्रकारोऽथ कथ्यते।। १९८।।
व्याधेः शान्तिर्भवति मुखजैर्दक्षिणोर्ध्वावलोके;
प्रष्टुर्दृष्टाविह पुनरधो देवतागायकैश्च।
वामोर्ध्वाधः सुदृढनिहितप्रेक्षणे तु प्रशस्तै-
श्चण्डालानामपि तदधमैः सा निरुक्ता क्रमेण।। १९९।।

प्रश्नानुष्ठान पद्धति में दूत या पृच्छक की दृष्टि जिस दिशा में हो (प्रश्न पूछने के समय) उसके अनुसार भी रोगशान्ति का उपाय अनेक प्रकार से वर्णित किया गया है, उसे यहाँ बताते हैं—

जैसे ही पृच्छक या दूत ज्योतिषी के यहाँ प्रश्न पूछने जाय तो उसकी दृष्टि पर ध्यान देना चाहिए। यदि वह पृच्छक या दूत दाहिनी ओर तथा ऊपर की ओर दृष्टि करे तो वह रोग ब्राह्मणों के द्वारा मंत्रपाठ से शान्त होगा (ब्राह्मणों को मुखजः = मुख से उत्पन्न कहा है)। यदि दाहिने नीचे को दृष्टि हो तो देवताओं का गायन करने वाले लोगों के द्वारा रोग की शान्ति होती है। यदि बाईं ओर ऊपर को देखें और टक-टकी लगाकर देखे तो चण्डाल के द्वारा किये हुए उपायों से रोग शान्त होता है। परन्तु वे श्रेष्ठ चण्डाल होते हैं। यदि बाईं ओर नीचे को टकटकी लगाकर देखे तो अधम चण्डालों से रोगशान्ति होती है ।।१९८-१९९।।

पृच्छक की दृष्टि से बाधाशान्ति-उपाय का ज्ञान

दक्षिणोर्ध्वदृष्टि	दक्षिणाधोदृष्टि	वामोर्ध्वदृष्टि	वामोधोदृष्टि	दृष्टि
ब्राह्मणों द्वारा रोगशान्ति	देवगायकों द्वारा रोगशान्ति	श्रेष्ठ चांडालों द्वारा	निकृष्ट चाण्डालों द्वारा	रोग-निवारक

प्रष्टुरङ्गस्पर्शेन रोगशान्ति-उपायज्ञानम्

बाधाभेदोऽत्र विज्ञेयः स्पर्शनेनापि पृच्छताम्।
प्रायेण दृष्टिबाधायां खल्वेनदुपयुज्यते।। २००।।

पृच्छक या दूत के द्वारा अपने जिन अंगों का स्पर्श किया जाता है उनके अनुसार भी भूत-प्रेतादि बाधा के निवारण का उपाय बताया जाता है। वह भी प्रश्न ज्ञान में अधिक उपयोगी होती है ।।२००।।

अनुष्ठानपद्धतिमतम्

वक्षोललाटतलगुह्यतलानि नाभिं
प्रष्टा स्पृशेद्यदि वदन्ति हि देवतार्तिम्।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पार्श्वे कराङ्गुलिगले च भुजङ्गपीडां
भ्रूकर्णकक्षयुगलेषु पिशाचपीडाम् ।। २०१।।

(१) यदि पृच्छक या दूत अपने वक्ष (छाती), ललाट (माथा), गुह्य (गुप्तांग) तथा नाभि (टुण्डी = Navel) का स्पर्श करे तो देवता की पीड़ा होती है । (२) यदि पृच्छक अपनी पसली, बगल, हाथ की अँगुलियों, गला का स्पर्श करे तो सर्पकोप से पीड़ा जानना चाहिए । (३) यदि वह पृच्छक या दूत अपने शरीर के भ्रू (भौंह=Eye Brows), कर्ण (Eer), कक्ष (बगल या काँख=Armpits) इन अंगों का स्पर्श करे तो पिशाचजन्य पीड़ा समझनी चाहिए ।।२०१।।

बाधकगततन्नाथग्रहतो ज्ञेया हि देवताभेदाः ।
तदधिष्ठितराश्यंशैरपि भेदःस्यात् स कथ्यते तदनु ।। २०२।।

पीड़ाओं का भेद जानने के लिए कुण्डली के बाधास्थान में स्थित ग्रह द्वारा तथा बाधकेश की स्थिति का विचार करना चाहिए ।

बाधकेश तथा बाधास्थान स्थित ग्रह के नवांशों द्वारा भी देवपीड़ा जानी जा सकती है ।।२०२।।

बाधाधिपराशिनवांशद्वारा देवपीडाज्ञानम्

सौम्यर्क्षांशकयोः स्थितो यदि भवेद्बाधाधिपः स्वालये;
संस्थाप्यान्वहमर्चितोत्तमजनैर्बाधाकरी देवता ।
जीवर्क्षांशगयोः सुरालयगता मान्दे तु नीचार्चिता,
भीमोद्याननिवासिनी स यदि चेत्स्वांशेऽथवा स्वालये।।२०३।।

यदि बाधकेश बुध की राशि या नवांश में बैठा हो तो अच्छे उत्तम पुरुष जिन देवताओं की अपने घर में पूजा करते हैं, उन्हें प्रतिष्ठित रखते हैं उन देवताओं की बाधा होती है । (बाधा को खोर, खुरागर तथ टैंच भी कहते हैं)

यदि बाधकेश गुरु की राशि या नवांश में बैठा हो तो देवालयों (मन्दिरों) में विराजमान देवता की बाधा (खोर) होती है ।

यदि बाधकेश शनि की राशि या नवांश में हो तो नीच लोगों द्वारा पूजित देवता की बाधा (खोर) होती है । इसी प्रकार यदि बाधाधिप स्वराशि या स्वनवांश में हो तो भयंकर स्थान में रहने वाले देवता की खोर होती है । भयंकर स्थान से तात्पर्य घोर जंगल, नदी का किनारा, श्मशान आदि से है । इन स्थानों के घाटवाले, तालवाले, भैरव आदि की खुरागर (बाधा) होती है ।।२०३।।

दिवाकीर्त्यर्चिता वाच्या चामुण्डी सहकेतुना।
पञ्चमी बुधयुक्तेन तत्क्षेत्रस्थेन चासृजा ।।२०४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि मंगल बाधकेश हो और उसके साथ केतु भी बैठा हो तो दिवाकीर्ति लोगों (नाइयों) द्वारा पूजित चामुण्डी (कालिका) की खुरागर होती है ।

यदि मंगल बुध की राशि में या बुध युक्त होकर बैठा हो तो 'पञ्चमी' नामक देवता की 'खोरि' होती है ॥२०४॥

देवबाधा को बोलचाल की भाषा में टैंच, खोट, खोरि, खुरागर आदि कहते हैं । पञ्चमी के स्वामी नाग होते हैं, अतः पञ्चमी का अर्थ नागमाता ग्रहण करना चाहिए ।

भौमेन भैरवो घण्टाकर्ण इत्यादयः स्मृताः ।
वाच्या रक्तेश्वरी रक्तचामुण्ड्यतिभयङ्करी ।।२०५।।
काली चेत्यादयस्त्वोजयुग्मराश्यंशभेदतः ।
ओजयुग्मत्वभेदे तु भांशयोर्द्विविधा अपि।।२०६।।

यदि उक्त मंगल विषम राशि या विषम राशि के नवांश में स्थित हो तो भैरव, घण्टाकर्ण इत्यादि देवता बाधक होंगे । यदि उक्त मंगल समराशि या नवांश में बैठा हो तो रक्तेश्वरी या रक्तचामुण्डी नामक अति भयंकर काली देवता की खुरागर (बाधा) होती है ।

ये विषम तथा सम नवांश का भेद राशि तथा नवांश दोनों में ही विचारना चाहिए। यदि राशि या नवांश ओज (odd) अर्थात् विषम हो तो देवता पुरुष होता है । यदि सम (Even) हो तो स्त्री देवता होता है ॥२०५-२०६॥

दूत के अंगस्पर्श के आधार पर पीडाज्ञान का चक्र

वक्ष, ललाट, गुह्य या नाभि	पार्श्व,करांगुलि, कण्ठ	भ्रू, कर्ण, कक्षयुगल	**अंगस्पर्श श्लोक २०२ के अनुसार**
देवपीड़ा	सर्पपीड़ा	पिशाचपीड़ा	**पीड़ा**

बाधकेश की राशिनवांश स्थिति से पीड़ाज्ञान का चक्र

मंगल केतुयुक्त	बुध के साथ मंगल	बुध की राशि में बाधेश	गुरु की राशि में बाधेश	शनि की राशि में बाधेश	स्व-नवांश में बाधेश	विषमराशि नवांश में बाधेश	समराशि नवांश में बाधेश	**स्थिति**
दिवकीर्ति द्वारा पूजित चामुण्डी	नागमाता (पंचमी)	श्रेष्ठ पुरुषों के घर में पूजित प्रतिष्ठित देवता	देवालय में प्रतिष्ठित एवं पूजित देवता	नीच लोगों द्वारा पूजित देवता	भयंकर स्थान में स्थित देवता	पुल्लिंग देवता	स्त्रीलिंग देवता	**पीड़ा**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेषादि राश्याश्रितखेटानां फलकथनम्

मेषाद्याश्रयभेदान् मूर्तिर्विशेषा दिवाकरादीनाम् ।
कथ्यन्ते संक्षेपादिह खल्वन्यत्र विस्तरेणोक्ता।। २०७।।

सूर्यादि ग्रहों के पृथक्-पृथक् मेषादि राशि में बैठने पर कौन-कौन-से देवताओं का प्रकोप होता है उसे अन्य ग्रन्थों में विस्तार से कहा गया है, उसे यहाँ संक्षेप में कहते हैं ।।२०७।।

मेषादिराशिस्थसूर्यस्य देवता

भौमक्षेत्रगतो रविस्त्रिनयनः कीटे स्वयम्भूरजे;
मर्त्यैरुच्चत ऊर्ध्वमत्र तदधो देवः प्रतिष्ठापितः ।
यक्षी गोगत एष जूकगृहगः काली पुनः स्त्रीगतः;
श्रीरामाद्यवतारविष्णुरथ विष्णुस्त्वेष वीणागतः ।। २०८।।

मंगल की राशियों में यदि सर्य प्रश्नकुण्डली में, वृश्चिक (कीट) राशि में स्थित हो तो त्रिनयन (भगवान् शंकर) का तथा अज (मेष) में स्थित हो तो स्वयंभू (स्वयं उत्पन्न = शिवजी या ब्रह्मा) का द्योतक होता है ।

यदि रवि परमोच्च (मेषराशि में दस अंश) में हो तो उच्च लोगों द्वारा प्रतिष्ठापित ब्रह्मा का तथा यदि इससे अधिक (दस अंश से ऊपर) हो तो कनिष्ठ लोगों द्वारा स्थापित ब्रह्मा का सूचक होता है । यदि सूर्य गो (वृष) राशि में हो तो यक्षिणी का तथा जूक (तुला) राशि में हो तो काली का द्योतक होता है । यदि सूर्य स्त्री (कन्या) राशि में बैठा हो तो श्रीरामचन्द्रादि विष्णु के अवतारों का द्योतक होता है और यदि वीणा (मिथुन) राशि में हो तो श्री विष्णु भगवान् का द्योतक होता है ।।२०८।।

धर्मदैवञ्च नागाश्च भास्करः कर्कटस्थितः ।
सिंहस्थो देवता सा या पूज्यते नित्यमात्मना ।। २०९।।
गन्धर्वयक्षौ धनुषि स्थितोऽर्क-
स्तयोस्त्रियौ मीनगतस्तु भानुः ।
शास्ता पिशाचो मृगयाप्रधानः
किरातमूर्तिश्च शनेर्गृहस्थः ।। २१०।।

कर्कट राशि में स्थित रवि धर्मदैव तथा नागों का संकेतक होता है । सिंह का सूर्य नित्यप्रति पूजित होने वाले देवता का प्रतीक होता है ।।२०९।।

यदि सूर्य धनु राशि में स्थित हो तो गन्धर्व एवं यक्षों का प्रतीक तथा मीन में स्थित होने पर गन्धर्वी तथा यक्षिणी का प्रतीक होता है । शनि की राशियों में (मकर-कुंभ) में स्थित शनि शास्ता (बौद्ध भिक्षु या बौद्ध देवता) आखेट में रुचि रखने वाले पिशाचादि का द्योतक होता है । किरात भी मृगया प्रधान होते हैं ।।२१०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्वादश राशिस्थ सूर्य के देवताओं का चक्र

प्रश्नकुण्डली में सूर्याधिष्ठित राशि		देवता	प्रश्नकुण्डली में सूर्याधिष्ठित राशि	देवता
मेष	परमोच्च	उच्चवर्ण द्वारा स्थापित ब्रह्मा	तुला	काली
	१०° से ऊपर	निम्नवर्ण द्वारा स्थापित ब्रह्मा		
वृष		यक्षिणी	वृश्चिक	शिवजी
मिथुन		बाँस	धनु	गन्धर्व-यक्ष
कर्क		नारियल यंत्र	मकर	पिशाच-किरात
सिंह		व्याघ्रकपाल	कुंभ	शास्ता
कन्या		घड़ा	मीन	गन्धर्वी, यक्षिणी

मेषादिराशिस्थचन्द्रस्य देवता

चामुण्डी सुरसद्मगाजगशशी नीचार्चितः कीटग-
श्चामुण्डी यदि मेषगः स विबलो वाच्ये उभे ते अपि।
यक्षी शुक्रग्रहस्थितः शिशिरगुर्वा धर्मदैवं बुध-
क्षेत्रस्थस्तु विमानसुन्दर उत स्त्री वास्य पुंस्त्रीवशात्।। २११।।

यदि प्रश्नकुण्डली में चन्द्रमा मेष राशि में स्थित हो तो देवालय में प्रतिष्ठित चामुण्डी देवी का प्रतीक होता है । यदि वृश्चिक में हो तो नीच जनों द्वारा पूजित चामुण्डी का तथा मेष का चन्द्र यदि निर्बल हो तो दोनों प्रकार की चामुण्डी का संकेतक होता है ।

शुक्र की राशि (वृष तथा तुला) में स्थित चन्द्रमा यक्षिणी तथा धर्मदैव का, बुध की राशि (मिथुन-कन्या में) स्थित चन्द्रमा वैमानिक देव तथा विमानसुन्दरी का द्योतक होता है ॥२११॥

स्वगृहस्थः शशी नागो धर्मदैवं बली स चेत्।
सिंहराशिस्थितश्चन्द्रो भगवत्यन्यपूजिता ।। २१२।।
चापस्थो व्योमगन्धर्वस्तत्स्त्री मीनगतः शशी ।
प्रेतशूलपिशाचाद्याः शशी मन्दगृहस्थितः।। २१३।।

यदि प्रश्नकुण्डली में चन्द्रमा स्वराशि (कर्क) में हो तो बली होने से नाग तथा धर्मदैव का, सिंह में स्थित होने पर अन्य लोगों द्वारा पूजित भगवती का, धनु राशि में स्थित होने पर गन्धर्व का तथा मीन राशि में स्थित होने पर व्योमगन्धर्व की पत्नी का प्रतीक होता है । यदि चन्द्रमा शनि की राशियों (मकर-कुंभ) में स्थित हो तो प्रेत, शूल तथा पिशाच आदि देवताओं का प्रतीक होता है ॥२१२-२१३॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द्वादश राशीस्थ चन्द्रमा के देवता

प्रश्नकुण्डली में सूर्याधिष्ठित राशि		दैवत्य	प्रश्नकुण्डली में सूर्याधिष्ठित राशि	दैवत्य
मेष	बली	देवालयस्थ चामुण्डी	तुला	धर्मदेव
	निर्बल	चामुण्डी		
वृष		यक्षिणी	वृश्चिक	निम्नवर्ग से पूजित चामुण्डी
मिथुन		विमानसुन्दर	धनु	आकाशगन्धर्व(पु.)
कर्क	बली	धर्मदेव	मकर	प्रेत-पिशाच
	निर्बल	नाग		
सिंह		अन्यों द्वारा पूजित भगवती	कुंभ	शूलदेव
कन्या		विमानसुन्दर	मीन	आकाशगन्धर्व (स्त्री)

द्वादशराशिस्थभौमस्य देवता

स्याद् भूतराक्षसो ब्रह्मराक्षसो नरभोजिनी ।
बालप्रभक्षिणीत्याद्याः स्वर्क्षस्थः क्षितिनन्दनः ।। २१४।।

यदि प्रश्नाङ्ग में मंगल अपनी मेष राशि में बैठा हो तो भूत, राक्षस तथा ब्रह्मराक्षस का तथा वृश्चिक में बैठा हो तो नरभोजिनी तथा बालप्रभक्षिणी (स्त्रीदेवता) का प्रतीक होता है ।।२१४।।

भौमो भैरवयक्ष एतदबला शौक्रेऽथ बौधे स्थितो;
गन्धर्वो रतिकाम इत्ययमथो यक्षी च रुष्टो हरिः।
कर्किस्थः परदेवता भगवती वा कृष्णचामुण्ड्यसृक्;
सिंहस्थो वनदेवताश्च शिवभूताश्च रुष्टः शिवः ।। २१५।।

यदि मंगल तुला राशि (पुरुष राशि) में बैठा हो तो भैरव तथा यक्ष देवता का प्रतीक होता है । यदि वही मंगल वृष राशि (स्त्रीराशि) में बैठा हो तो भैरवी तथा यक्षी का प्रतीक होता है । यदि मिथुन राशि में मंगल हो तो गन्धर्व तथा रतिकाम देवता का तथा कन्या में यक्षिणी एवं विष्णु का प्रतीक होता है ।

यदि कर्क राशि में मंगल बैठा हो तो पराम्बा भगवती, कृष्णचामण्डा या रक्तचामुण्डा का प्रतीक होता है । यदि सिंह राशि पर मंगल हो तो वनदेवता, शिवगण, भूतगण आदि का संकेत देता है ।।२१५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धनुर्झषस्थः खलु कुक्षिशास्ता
स वीरभद्रोऽथ मृगे च कुम्भे।
निजोत्सवध्वंसनरुष्टदेवः
पराभिचारोद्भवदेवता च॥ २१६॥

यदि धनु राशि में मंगल हो तो कुक्षिशास्ता नामक देवता का तथा मीन राशि के मंगल में वीरभद्र नामक देवता का द्योतक होता है। यदि मंगल मृग (मकर) राशि में हो तो अपने उत्सव में बाधक बनने से कुपित देवता होता है तथा कुंभ राशि में यदि मंगल हो तो दूसरे के द्वारा कराये गये अभिचार (मारणादि कर्म) से उत्पन्न देवता के कोप से पीड़ा उत्पन्न होती है ॥२१६॥

मंगल के देवता

मंगलस्थित राशि	देवता	मंगलस्थित राशि	देवता
मेष	भूतराक्षस, ब्रह्मराक्षस	तुला	भैरव, यक्ष
वृष	भैरवी, यक्षिणी	वृश्चिक	नरभोजिनी, बालप्रभक्षिणी
मिथुन	नरसिंह तथा गन्धर्व यक्ष	धनु	कुक्षिशास्ता
कर्क	भगवती, कृष्णचामुण्डा, रक्तचामुण्डा	मकर	उत्सवबाधा से कुपित देवता
सिंह	वनदेवता, शिवगण, भूतगण	कुंभ	परकृत अभिचार से उत्पन्न देवता
कन्या	नारसिंही, गन्धर्वी, विष्णु, यक्षिणी	मीन	वीरभद्र

द्वादशराशिस्थबुधस्य देवत्वकथनम्

भौमक्षेत्रबुधो ज्वरो भृगुगृहे गन्धर्व एष स्वभे;
गन्धर्वोऽपि च किन्नरोऽथ हिमगोरम्भः पिशाचो गृहे।
सिंहे पन्नगकन्यका गुरुगृहे रुष्टद्विजप्रेरिता;
चामुण्डी कवची पिशाचयुगमाधाताश्रितं मन्दभे॥ २१७॥

यदि बुध मंगल की राशि में बैठा हो तो ज्वर देवता, शुक्र की राशि (वृष-तुला में) बैठा हो तो गन्धर्व देवता, अपनी राशि (मिथुन-कन्या) में बैठा हो तो किन्नर देवता, यदि चन्द्रमा की राशि (कर्क) में हो तो जलपिशाच (मसान या घटोई बाबा) देवता, यदि सिंह राशि में बुध हो तो नागकन्या देवता, गुरु की राशि (धनु-मीन) में रुष्ट विप्र द्वारा प्रेरित देवता चामुण्डी, कवची तथा यदि शनि की राशियों में बुध बैठा हो तो युद्धादि के देवता शूलपिशाचिनी तथा कवचपिशाचिनी होते हैं ॥२१७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बुध के देवता

बुधाधिष्ठित राशि	देवता	बुधाधिष्ठित राशि	देवता
मेष	ज्वर देवता	तुला	गन्धर्व
वृष	गन्धर्वी	वृश्चिक	ज्वर, जूड़ी
मिथुन	किन्नर	धनु	विप्रप्रेरित चामुण्डी
कर्क	जलपिशाच	मकर	शूलपिशाचिनी, कालपिशाचिनी
सिंह	नागकन्या	कुंभ	शूलपिशाच, कालपिशाच
कन्या	किन्नरी	मीन	द्विजप्रेरित चामुण्डी

बाधाधिपगुरोः राशिस्थितिवशात् देवता

भौमर्क्षे कुपितेशभूतनिवहो दुर्देवता चाभिचारोत्था;
भूमिसुरस्य भार्गवगृहे यक्षी च यक्षोऽप्युभौ ।
तीव्रापस्मृतिदौ गुरुबुधगृहे क्लीबात्मिका देवता,
विप्राणामपि चाभिचारजनिता वा देवकोपोद्भवा ।। २१८।।

जब गुरु बाधाधिप होकर या बाधास्थान की राशि में बैठकर मंगल की राशियों में हो तो शंकर भगवान् के क्रुद्ध गणों से या ब्राह्मणों के कुपित होने से उत्पन्न देवता पीड़ा करते हैं। यदि गुरु-शुक्र की राशियों में हो तो यक्षिणी तथा यक्षों की पीड़ा होती है और तीव्रापस्मार (Accute Epilepsy) उत्पन्न होती है। बुध के क्षेत्र में गुरु होने पर ब्राह्मणों के अभिचार से उत्पन्न अथवा देवताओं के कोप से उत्पन्न नंपुसक देवता कष्ट देते हैं ॥२१८॥

तुङ्गस्थः खलु देवताग्निगृहगा गन्धर्वमुख्यस्तथा;
सिंहस्थो नृपसेवकैरिह नृणामुद्दिश्य कान्तं स्त्रिया ।
नारीणाञ्च कृताभिचारजनिता दुर्देवता वाक्पति-
र्भस्माप्सङ्गिपिशाचकावधमगन्धर्वः शनेर्न स्वभे ।। २१९।।

यदि उक्त प्रकार का गुरु उच्चराशि में हो तो अग्निहोत्री विप्र के घर पर निवास करने वाले गन्धर्व मुख्य देवता पीड़ाकारक होते हैं। यदि गुरु सिंहराशिस्थ हो तो राजसेवकों के अभिचार से उत्पन्न देवता अथवा स्त्रियों द्वारा सौत के कारण पति के लिए किये गये अभिचार से उत्पन्न दुर्देवता पीड़ादायक होते हैं।

यदि शनि की राशि में गुरु हो तो भस्मपिशाच, अधम गन्धर्व आदि पीड़ादायक होते हैं। परन्तु यदि गुरु स्वराशि में हो तो बाधक होने पर भी किसी देवता की बाधा नहीं होती ॥२१९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरु के राशिदेवता

बाधा स्थित/ नवांश स्थित या बाधकेश गुरु की राशि	देवता तथा रोग	बाधा स्थित/ नवांश स्थित या बाधकेश गुरु की राशि	देवता तथा रोग
मेष	शिवगण	तुला	यक्ष-अपस्मार
वृष	यक्षी-अपस्मार	वृश्चिक	दुर्देव (अभिचारजन्य)
मिथुन	नपुंसक देव	धनु	बाधा नहीं, निरोगता
कर्क	विप्रग्रहनिवासी गन्धर्व	मकर	भस्मपिशाच
सिंह	राजसेवक या सपत्नी के अभिचार से उत्पन्न देवता	कुंभ	जलपिशाच
कन्या	नपुंसक देवता	मीन	कोई बाधा नहीं

भृगोर्देवानां कथनम्

भौमक्षेत्रभृगुस्तु जीववदजे यक्षस्तथा राक्षसः;
स्वर्क्षे कर्कटके च यक्षसहिता यक्षी बुधर्क्षे पुनः ।
विद्याभ्यासभवाभिचार इनभे यक्षी सुरक्षेत्रगा;
चापे ब्राह्मणशाप एव झषभे दुर्गा भवेद् भार्गवः ।। २२०।।

जब शुक्र बाधाधिपति हो या बाधाराशि में बैठा हो या बाधानवांश के अनुसार जिस नवांश में हो तो मेषादि राशियों में उसका फल इस प्रकार होता है—

जब मंगल की राशि में हो तो वृश्चिक में राक्षस तथा मेष में यक्ष अथवा गुरु की भाँति शिवगण पीड़ादायक होते हैं । यदि शुक्र कर्क राशि या अपनी राशियों (तुला-वृष) में हो तो यक्ष एवं यक्षिणियों से पीड़ा होती है ।

यदि शुक्र बुध की राशि में हो तो विद्याभ्यासजन्य अभिचार से उत्पन्न देवता कष्ट देते हैं । ("विद्याभ्यासभवाभिचार" का अर्थ है कि किसी तन्त्रशास्त्र के विद्यार्थी ने मात्र अपनी तन्त्रविद्या के अभ्यास का परीक्षण (Trial) मात्र के लिए देवता उत्पन्न किया है, उसमें शत्रुता नहीं है ।) केवल यह परखने के लिए कि यह विद्या सफल है अथवा नहीं ? किसी व्यक्ति पर किया गया अभिचार-परीक्षण से उत्पन्न कष्ट है, ऐसा जानना चाहिए । यदि सिंह राशि में शुक्र हो तो देवमन्दिर में प्रतिष्ठित यक्षिणी का कोप होता है । यदि धनु राशि में शुक्र हो तो ब्राह्मण का शाप तथा मीन में हाने पर दुर्गा से पीड़ा होती है ।।२२०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन्दक्षेत्रगतः शुक्रः स्यादपस्मारदेवता ।
वात्याप्रभृतयः कालपिशाचश्चात्र बाधकः ।। २२१।।

यदि शुक्र शनि की राशि में हो तो अपस्मार तथा वात प्रभृति तथा कालपिशाच (कालिया मशान) देवता बाधक होते हैं । यहाँ अपस्मार देवता का ही नाम है ।।२२१।।

शुक्र के देवता

राशि	देवता	राशि	देवता
मेष	यक्ष, राक्षस, शिवगण	तुला	यक्ष
वृष	यक्षिणी	वृश्चिक	यक्षी राक्षसी
मिथुन	परीक्षण हेतु अभिचार	धनु	ब्रह्मशाप
कर्क	यक्षिणी	मकर	अपस्मार
सिंह	मन्दिर में प्रतिष्ठित यक्षी	कुंभ	कालपिशाच
कन्या	तंत्रविद्यार्थियों के सहयोग से अभिचार	मीन	दुर्गा

द्वादशराशिस्थशनेर्देवानां कथनम्

असाध्यापस्मृतिर्मेषे कीटे प्राग्जन्मपीडितः ।
शिवालयस्थस्तद्भूतो वक्तव्यो भानुनन्दनः ।। २२२।।

यदि शनि मेष राशि में स्थित हो तो असाध्य अपस्मार तथा वृश्चिक राशि में हो तो पूर्व जन्म में कुपित शिवमन्दिरनिवासी देवता का शाप होता है । अथवा कैलाश पर रहने वाले देवता के द्वारा कष्ट होता है । अथवा शिवजी के भूतादि गणों से कष्ट होता है ।।२२२।।

गव्यपस्मारयक्षस्तद्यक्षीशापो द्विजस्य च ।
जूके शास्त्रादिभूतेशाः क्रुद्धा महाविघाततः।। २२३।।

शनि यदि वृष राशि में हो तो यक्ष या यक्षिणी के शाप से अपस्मार होता है । जूक (तुला) में शुक्र हो तो भूतनाथ किरात (अयप्पा=शिवजी के एक अन्य पुत्र) आदि से पीड़ा होती है । मेष-वृष के शनि की पीड़ा ब्राह्मणों के शाप से तथा तुला की पीड़ा शास्त्रों (धर्म-ग्रन्थों) के कारण कुपित देवों से होती है ।।२२३।।

बौधे काननदेवता शनिरपि प्रेतः सुहृत्प्रेषितो;
दैवं नीचसमर्पितं सुमगृहे सिंहे सुरावासगः ।
शास्ताऽखेटपिशाचकश्च गुरुभे गन्धर्वभेदो मणी-
सङ्घातार्तवविश्रुतोऽथ निजभे प्रेतः पिशाचाद्यपि ।। २२४।।

।। इति एतच्छत्रुबाधानिरूपणविषयम् ।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि शनि बुध की राशि में हो तो कानन देवता एवं किसी पूर्व के परिचित मित्र द्वारा प्रेषित प्रेत से पीड़ा होती है। यदि सुमगृह (सुमः=चन्द्रमा) अर्थात् कर्कराशि में शनि हो तो नीच लोगों द्वारा प्रार्थिक देवता के द्वारा पीड़ा होती है। सिंह राशि के शनि से देवालय में वास करने वाले, शास्तादेव तथा आखेटपिशाच नामक देवता पीड़ा करते हैं।

यदि गुरु की राशि में शनि हो तो मणिसंघात तथा आर्तव नामक प्रसिद्ध गन्धर्व पीड़ा करते हैं। यदि शनि स्वराशि में हो तो प्रेत-पिशाचादि द्वारा बाधा उत्पन्न होती है ॥२२४॥

शनि के देवताओं का चक्र

राशि	देवता	राशि	देवता
मेष	असाध्यापस्मार	तुला	अपस्मार, यक्षकोप ब्रह्मशाप से
वृष	अपस्मार यक्षिणी	वृश्चिक	पूर्वजन्म कृत भूतपीड़ा
मिथुन	वनदेवता	धनु	मणिसंघात गंधर्व
कर्क	नीचपूजित देवता	मकर	प्रेत
सिंह	देवालयवासी देवता	कुंभ	पिशाच
कन्या	बान्धव प्रेत	मीन	आर्तव गन्धर्व

वक्तव्य—कुछ प्रतियों से 'सुरगृहे' पाठ है परन्तु मेरी दृष्टि में 'सुमगृहे' पाठ ही अधिक समीचीन है। 'सुमः' चन्द्रमा का पर्याय है। "सुष्ठु मीयतेऽदः इति सुमः" अर्थात् जिसको सुगमता से मापा जा सके वह 'सुमः' होता है। चन्द्रमा की तिथियों की गणना उसकी आकाश में प्रतिदिन की कलाओं से आसानी से हो जाती है। यह सुमः शब्द 'मा' धातु के पूर्व 'सु' उपसर्ग तथा पश्चात् 'क' प्रत्यय लगने से बनता है। सुमगृहे=चन्द्रमा का घर अर्थात् कर्क राशि।

अथ व्याधेः शमननिरूपणप्रकारो लिख्यते

बाधारूढाल्लग्नतो व्याधिशान्ति-
चिन्त्यारूढे पापयोगेक्षणाद्यैः।
दोषैर्युक्ते व्याधिवृद्धिर्गताधः
प्राग्लग्ने सा भाविनी पृच्छकानाम् ॥ २२५॥

आरूढ की राशि से बाधा का विचार किया जाता है। इसी प्रकार प्रश्नलग्न से व्याधि की शान्ति के सम्बन्ध में विचार करते हैं। यदि आरूढराशि पर पाप ग्रहों की युति, स्थिति या लक्षण (दृष्टि) हो तो इन दोषों के कारण प्रश्न समय तक व्याधि या बाधा का आधा समय बीत चुका है, ऐसा कहना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी प्रकार यदि प्रश्नलग्न की राशि पर पाप ग्रहों की स्थिति, युति अथवा दृष्टि जन्य प्रभाव हो तो आगे चलकर (भविष्य में) रोग बढ़ेगा या पुनराक्रमण होगा, ऐसा कहना चाहिए ॥२२५॥

भाग्यस्थानगते शुभे तदधिपे प्राणिन्यभीष्टस्थिते;
लग्नेशे तपनेन वाऽथ धिषणेनालोकिते वान्विते ।
स्यादेवेश्वरसेवयोगदशमस्तद्वन्मनूनां जपै-
र्लग्नेशे नवमे च दोषसहिते व्याधेः शमो दुर्लभः ॥ २२६॥

यदि भाग्यस्थान (नवम भाव) में शुभ ग्रह बैठे हों अथवा नवमेश (भाग्येश) इष्टभावों में बैठा हो अथवा लग्नेश पर तपन (सूर्य) की दृष्टि हो या फिर गुरु (धिषण:) की दृष्टि हो अथवा लग्नेश इन ग्रहों से युत हो तब इनमें से कोई भी ग्रहस्थिति होने पर देवी-देवताओं की सेवा-पूजा-अनुष्ठानि से रोगशान्ति होगी । (एक से अधिक योग होने पर रोगशान्ति में सरलता रहेगी । यदि दैवयोग से तीन ग्रह योग शुभता प्रदान करें तो फिर कुष्ठ का निवारण अति सरलता से हो जायेगा ।

यदि लग्नेश तथा नवमेश पाप ग्रहों से युत या दृष्ट होंगे तो अथवा दु:स्थानों में स्थित होंगे तो रोग की शान्ति कठिनता से या असम्भव होगी ॥२२६॥

वक्तव्य—किसी टीकाकार ने 'तपनेन' का अर्थ नवम भाव किया है और फिर सूर्य भी कर दिया है । वस्तुत: यहाँ तपनेन = सूर्य के द्वारा ही होगा । सूर्य आत्मकारक होता है ।

पृष्ठोदयजलह्रासचराधोमुखराशिभिः ।
लग्नस्थैर्व्याधिशान्तिः स्यात् तत्प्रश्नेन तदन्यथा ॥ २२७॥

यदि रोगशान्ति के प्रश्न में पृष्ठोदय (मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर) राशियाँ, जलह्रास राशियाँ (कम जलवाली=कन्या, कुंभ) तथा चर एवं अधोमुख राशि का लग्न हो तो रोगशान्ति हो जाती है ।

अन्यथा स्थिति होने पर अर्थात् शीर्षोदय राशि का लग्न या स्थिर लग्न हो, अधिक जलवाली राशि का लग्न हो तथा ऊर्ध्वमुख राशि का लग्न हो तो व्याधि शान्त नहीं होती है ॥२२७॥

जलयुक्त राशियाँ—जलराशियों के सम्बन्ध में ग्रन्थों में मतभेद पाया जाता है तथापि बहुमत से मकर का उत्तरार्ध, कर्क, वृश्चिक तथा मीन निर्विवाद रूप से जलराशियाँ हैं । जैसे—

"मृगापरार्धकटकं ·········· मीनोऽम्बुराशय:"।

(जातकादेशमार्ग १।९)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"मीनालिककर्कटमृगाः सलिलाभिधाना-
स्तोयाश्रयाघटवधूयुगगोपसंज्ञा" ॥

(जातकपारिजात १।१५)

"तुलोक्षकर्ककुम्भालिमीननक्राश्च राशयः ।
जलरूपास्तदुदये जलमस्तीति निर्दिशेत्" ॥

(प्रश्नज्ञानप्रदीप २५।१३-१४)

"मकरस्य पश्चिमार्धं ज्ञेयो कुम्भमीनश्च जलचारख्यातः" ।

(लघुजातक १/१२-१३)

"मृगोत्तरार्धं शफरीकुलीरौ नीरे चराः" ।

(शम्भुहोराप्रकाश १।३०)

सूर्ययुक्त राशि अधोमुख होती है । अर्थात् यदि लग्न में सूर्य बैठा हो तो वह राशि अधोमुख कहलायेगी । सूर्ययुक्त राशिलग्न का फल रोगप्रश्न में हो तो अच्छा होता हैं परन्तु अन्य प्रश्नों का उत्तर सूर्योदयव्यापी लग्न में नहीं देना चाहिए ।

ग्रन्थान्तरे व्याधिशान्तियोगाः

षष्ठाष्टमव्ययसुखे पापविमुक्ते शुभान्विते केन्द्रे ।
व्याधेः शान्तिप्रश्ने शान्तिर्भवतीति निर्दिशेन्मतिमान् ॥ २२८ ॥

रोगशान्ति का प्रश्न पूछे जाने पर प्रश्नकुण्डली में छठा भाव, आठवाँ भाव, बारहवाँ भाव, चतुर्थ भाव ये पाप ग्रहों से रहित हों तथा केन्द्र में शुभ ग्रह विराजमान हों तो रोग शान्त होता है । विद्वान् दैवज्ञ को इस प्रकार का उत्तर देना चाहिए । यह व्याधिशान्ति औषधोपचार तथा अनुष्ठानादि से ही होगी, यह ध्यान रखना तथा बताना आवश्यक है ॥२२८॥

४-६-८-१२ इन भावों में पाप ग्रह रोगपीड़ित व्यक्ति को हानि पहुँचाते हैं, रोगी के प्राणों पर संकट भी ला देते हैं । अतः इनमें पापग्रहों का न होना अच्छा माना जाता है । आचार्य सिद्ध नारायणदास ने "प्रश्नवैष्णवशास्त्र" में इसी बात को निम्न शब्दों में प्रकट किया है—

"लग्ने चतुर्थे तनये व्यये च पापाः प्रकुर्युः गदतः प्रणाशम् ।
षष्ठोदये केन्द्रगतैश्च पापैश्छिद्रे विधौ मृत्युमुपैति रोगी" ॥

(प्रश्नवैष्णवशास्त्र ९।१८)

इसी प्रकार केन्द्र में बैठे पाप ग्रह रोग को असाध्य करते हैं परन्तु केन्द्र में शुभ ग्रह बैठे तो बाधा आदि अनुष्ठान करने से शान्त हो जाती है ।

"केन्द्रस्थैः बलिभिः पापैरसाध्या देवताग्रहाः ।
सौम्यग्रहैश्च केन्द्रस्थैः साध्या मन्त्रेण वाऽर्चनैः" ॥ (अध्याय ९।२३)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यही बात श्रीनीलकण्ठाचार्य ने ताजिकनीलकण्ठी में प्रश्नतंत्र के विशेष प्रश्नाध्याय में ६६वें श्लोक में कही है। आठवें तथा बारहवें भाव में तो शुभ या पाप सभी प्रकार के ग्रह नेष्ट ही माने गये हैं—

"सर्वे नेष्टा व्ययाष्टमगाः"।

शुभ ग्रहों की केन्द्रस्थिति रोगशान्ति करती है। इसका समर्थन दैवज्ञवल्लभा में भी है—

"उपचयगृहगे चन्द्रे शुभेषु केन्द्रत्रिकोणनिधनेषु।
शुभदृष्टे वा लग्ने रोगी देशान्तरे नीरुक्" ॥

शान्तिकर्तृज्ञानम्

बाधके खेटाधिष्ठित भांश वशात्प्रतिक्रया करण विधौ।
कर्त्तविशेषो ग्रन्थान्तर गदि तो निगद्यतेतदनु ॥ २२९॥

बाधा को शान्त करने के लिए यह देखना चाहिए कि बाधक ग्रह किस राशि एवं नवांश में बैठा है ? उसके अनुसार ही विचार करना ग्रन्थान्तरों में बताया है, उसे यहाँ पर बताया जा रहा है ॥२२९॥

बाधकविहगाश्रितभवनांशकयोर्निरीक्ष्य सत्त्वादिगुणान्।
सात्त्विकराजसतामसकर्मास्त्वेतत्प्रतिक्रियांकर्ता ॥ २३०॥

बाधक ग्रह के द्वारा अधिष्ठित राशि और नवांश के सत्त्वगुण, रजोगुण तथा तमोगुणों को जानकर अच्छी प्रकार निश्चय करने के उपरान्त ही बाधा का प्रतिकार सात्त्विक व्यक्ति के द्वारा कराया जाय या इसके लिए राजसी या तामसी चिकित्सक बुलाया जाय यह निश्चय करना चाहिए। तदनुसार उस पद्धति के उपचारकर्ता को बुलाना चाहिए ॥२३०॥

यह ज्योतिषशास्त्र का बड़ा उपकार है कि वह रोगपीड़ितों को चिकित्सकों पर भटकने के स्थान पर रोगी के लिए प्रश्नकुण्डली के अनुसार औषधि तथा उपचारक चयन करने में पूर्ण मार्गदर्शन करता है। सात्त्विक, राजस तथा तामस की पहचान कैसे हो ? इसका विस्तृत वर्णन श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय १४, १६, १७ में किया गया है। संक्षेप में सात्त्विकादि गुणों से युक्ति व्यक्तियों के लक्षण निम्न प्रकार से शास्त्रों में बताये हैं—

"यः सात्त्विकस्तस्य दयास्थिरत्वं, सत्यार्जवं ब्राह्मणदेवभक्तिः।
रजोऽधिकः काव्यकला क्रतुस्त्री संसक्तचित्तः पुरुषोऽतिशूरः ।
तमोऽधिकः वञ्चयिता परेषां मूर्खोऽलसः क्रोधपरोऽतिनिद्रः" ॥

सूर्य-चन्द्र-गुरु ये तीनों ग्रह सात्त्विक हैं। बुध तथा शुक्र राजसिक हैं। मंगल तथा शनि तामसिक स्वभाव वाले हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्याचन्द्रमसोर्ग्रहांशकगतश्चेत् खेचरो बाधको;
विप्र कर्म करोतु निर्जनगुरोश्चेद्देवतागायकः।
ज्ञस्य स्याद्यदि कुम्भकृत्प्रभृतयः शुक्रारयोर्वा शने-
श्चण्डालोत्तममध्यमौ तदधमस्तद्देवताप्रीतये ।। २३१।।

यदि बाधक ग्रह सूर्य या चन्द्रमा में से किसी के नवांश में स्थित हो तो बाधा का उपचार किसी तद्‌विषय के विद्वान् ब्राह्मण से कराना चाहिए ।

यदि बाधक ग्रह गुरु के नवांश में स्थित हो तो उपचार किसी देवमन्दिर के गायक से कराना उचित होगा । यदि बाधक खेट बुध के नवांश में बैठा हो तो बाधा का प्रतिकार किसी कुम्हार से कराना चाहिए ।

यदि बाधक ग्रह का अधिष्ठान शुक्र, मंगल या शनि का नवांश हो तो क्रमशः उत्तम चाण्डाल, मध्यम चाण्डाल तथा अधम चाण्डाल से दवता की प्रसन्नता हेतु उपाय करना चाहिए अर्थात् बाधाकारक शुक्र होने पर उत्तम चाण्डाल से प्रतिक्रिया करायें । यदि बाधाकारक मंगल हो तब मध्यम चाण्डाल से उपाय कराना श्रेयस्कर होगा परन्तु यदि बाधाकारक ग्रह शनि के नवांश में हो तब अधम चाण्डाल से बाधा-प्रतिकार करायें ।।२३१।।

कर्क-सिंह नवांश ब्राह्मण हैं, धनु-मीन नवांश देवगायक (Temple musician) हैं, मिथुन तथा कन्या नवांश कुम्हार के द्योतक हैं, वृष-तुला के नवांश उत्तम चाण्डाल के, मेष-वृश्चिक के नवांश मध्यम चाण्डाल के तथा मकर-कुंभ नवांश अधम चाण्डाल के द्योतक होते हैं (संस्कृत में चण्डाल तथा चाण्डाल, चामुण्डा तथा चामुण्डी दोनों ही रूप में शब्द शुद्ध हैं यह ध्यान रखना आवश्यक है) ।

मान्दित्रिकोणयोगेक्षाद्योतस्य यदि पुल्कसः।
दिवाकीर्तिस्तथा केतुबाधकग्रहयोगतः।। २३२।।

यदि बाधक ग्रह का केन्द्रात्म या त्रिकोणात्मक सम्बन्ध गुलिक के साथ हो तो पुल्कस (चाण्डालों की एक जाति) से प्रतिकार करायें । यदि बाधक ग्रह का केन्द्रसम्बन्ध केतु के साथ हो तो दिवाकीर्ति अर्थात् नाई से बाधा की झाड़-फूँक आदि प्रतिक्रिया करायें ।।२३२।।

मतान्तरम्

सौम्ये सौम्यगृहस्थे बाधेशे तत्प्रतिक्रिया विप्रैः।
पापे तद्‌गृहगे वा चण्डालाद्यैरितीरितं किञ्चित् ।। २३३।।

यदि बाधाकारक ग्रह शुभ ग्रह (सौम्य ग्रह) हो अथवा वह सौम्य राशि में बैठा हो तब उस बाधा का प्रतिकार ब्राह्मणों से कराना चाहिए । यदि बाधाकाकर ग्रह पाप ग्रह हो अथवा पाप राशि (क्रूर राशि) में बैठा हो तो उस बाधा का प्रतिकार चण्डालादि से कराना चाहिए या निम्न वर्ग के अशिक्षित व्यक्ति से कराना चाहिए ।।२३३।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेष-मिथुन-सिंह-तुला-धनु-कुंभ ये छः राशियाँ क्रूर होती हैं तथा वृष-कर्क-वृश्चिक-मकर-मीन ये छः सम एवं स्त्री राशियाँ सौम्य होती हैं। जैसा कि जातकादेशमार्ग में श्री सोमयाजी कहते हैं—"पुंस्त्री क्रूराक्रूरौ"। इसी प्रकार पुंजराजाचार्य का कथन है—

"चरस्थिरद्विमूर्तयो ह्यसौम्यसौम्यकौ क्रमात्।
अयुग्मयुग्मसंज्ञकौ नरस्त्रियौ क्रियादिह"॥

(शंभुहोराप्रकाश १।२७)

"मेषादाह चरं स्थिराख्यमुभयं द्वारं बहिर्गर्भमं;
धातुर्मूलमितीह जीव उदितं क्रूरञ्च सौम्यं विदुः"।

(फलदीपिका १।९)

चिकित्सा तु कृता केन रोगशान्त्यै भवेदिति।
प्रश्नोऽपि शमनप्रश्नवत्स्यात् कर्मात्र शक्तिमत्॥ २३४॥

जब पृच्छक यह प्रश्न पूछे कि किस के द्वारा कराई हुई चिकित्सा से रोग का शमन होगा, इसका विचार भी रोगशान्ति की तरह करना उचित है। जो ग्रह शक्तिमान् (बली) हो उसके अनुसार ही प्रतिक्रिया करें॥२३४॥

इस श्लोक में इसी अध्याय की श्लोक संख्या २२६-२२७-२२८ तथा २२९ के अनुसार विचार करने को इंगित किया है। इस ग्रन्थ के अध्येताओं को पूर्व के सन्दर्भों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

मृत्युञ्जयादि जपादिकथनम्

मृत्युञ्जयगणपतिहोमादीनां कर्तृचिन्तने धिषणः।
अनुकूलो जलवृद्धिर्दशमगुणश्चास्तु लग्नमूर्ध्वमुखम्॥ २३५॥

॥ एतद्रोगशमननिरूपणप्रकारविषयकम्॥

॥ इति प्रश्नमार्गे पञ्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

बाधादि के प्रतिकारार्थ तथा गणपतिहोम आदि कराने के लिए दैवज्ञ को अनुकूल धिषण (नक्षत्र एवं बृहस्पति), जलवृद्धि राशि, दशम भाव का बल तथा ऊर्ध्वमुख लग्न इनको ग्रहण करना चाहिए॥२३५॥

रोगशान्ति या बाधाप्रकोप शान्ति के अनुष्ठान का आरंभ शुभ तथा अनुकूल नक्षत्रों में गोचर में बृहस्पति का बल देखकर करना चाहिए। अनुकूल नक्षत्र क्या है? यह अनुकूलता दो प्रकार से देखना है; एक तो वह नक्षत्र अनुष्ठान के मुहूर्त हेतु प्रशस्त एवं ग्राह्य होना चाहिए। दूसरे ताराबल में भी उस नक्षत्र की अनुकूलता हो। जिस नक्षत्र में अनुष्ठान आरंभ किया जाये वह रोगी या पीड़ित व्यक्ति के जन्मनक्षत्र एवं नामनक्षत्र से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तीसरा, पाँचवाँ तथा सातवाँ न हो; क्योंकि ये नक्षत्र (तारा) विपत्तिकर-प्रत्यरि (शत्रुवर्धक) तथा वध (मृत्युकारक) होते हैं ।

अनुष्ठान हेतु अनुकूल नक्षत्र—पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा तथा हस्त ये नक्षत्र अनुष्ठान के लिए शुभ हैं । जैसा कि मुहूर्तगणपति में कहा है—

"पुनर्वसुद्वये स्वातित्र्युत्तरे श्रवणत्रये ।
रेवतीद्वितये हस्तेऽनुराधा रोहिणीद्वये ॥
शान्तिकं पौष्टिकं कर्म पुण्याहे कीर्तितं बुधै:" ॥

मुहूर्तचिन्तामणिकार श्री रामदैवज्ञ इन नक्षत्रों के अतिरिक्त कि मुहूर्त समय की लग्न-कुण्डली में सूर्य लग्न से दशम भाव में होना चाहिए । चन्द्रमा चतुर्थ भाव में शुभ होता है तथा गुरु (बृहस्पति) यदि लग्न में ही हो तो अति शुभ है । इस प्रकार के मुहूर्तों में गुरु-शुक्र के अस्त का तथा केतुदर्शन (धूमकेतु दिखायी पड़ना) आदि का भी दोष नहीं होता है । इनके अस्तादि में भी अनुष्ठान हो सकता है—

"क्षिप्रध्रुवान्त्यचरमैत्रमघासु शस्तं
स्याच्छान्तिकं च सह मङ्गलपौष्टिकाभ्याम् ।
खेऽर्के विधौ सुखगते तनुगे गुरौ नो
मौढ्यादिदुष्टसमयेऽशुभदं निमित्ते" ॥

यह नैमित्तिक कर्म है, इसके लिए मासादि शुद्धि की अपेक्षा नहीं होती है । इसके लिए मुहूर्तसंग्रहदर्पण में भी निम्न श्लोक शास्त्रान्तर से उद्धृत है—

"शान्तिकर्मणि कुर्वीत रोगे नैमित्तिके तथा ।
गुरुभार्गवमौढ्यादि दोषस्तत्र न विद्यते" ॥

शिववास-विचार—श्री महामृत्युञ्जय अनुष्ठान तथा रुद्रजप में शिववास का विचार भी अपेक्षित होता है । शुक्लपक्ष में द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, नवमी, द्वादशी, त्रयोदशी तथा चतुर्दशी तिथि को शिववास अनुकूल कहा गया है । इसी प्रकार कृष्णपक्ष में प्रतिपदा, चतुर्थी, पञ्चमी, अष्टमी, एकादशी, द्वादशी में शिवजी का वास अनुकूल रहता है ।

विशेष—चतुर्थी तथा नवमी रिक्ता होने से वर्जित करनी चाहिए तथा कृष्णपक्ष की चतुर्दशी को ग्रहण करना चाहिए । "शिवस्य प्रोक्ता चतुर्दशी" इस वाक्य के अनुसार प्रतिमास की कृष्ण चतुर्दशी को मासशिवरात्रि तथा फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी को महाशिवरात्रि होने से उसे शिवपूजनादि में नि:सङ्कोच ग्रहण करना चाहिए ।

चतुर्थी के स्वामी श्री गणपति हैं, अत: विनायक-शान्ति (गणपतिशान्तिपूजनादि) के लिए चतुर्थी प्रशस्त है, अन्य कार्यों के लिए नहीं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अग्निवास—होम कार्यार्थ अग्निवास का विचार करना चाहिए। इसमें होम समय या पूर्णाहुति के समय की तात्कालिक तिथि को शुक्ल पक्ष की अमावस्या से गिनकर तथा रविवार से वार गिनकर तिथि तथा वार दोनों की संख्या जोड़ दें। उस योगफल में एक और जोड़कर कुल योगफल में चार से भाग दें। यदि तीन या शून्य शेष बचे तो शुभ है, क्योंकि इसमें अग्नि का वास पृथ्वी पर होता है। एक शेष में आकाश में तथा दो शेष में पाताल में अग्नि का वास होने से शुभ नहीं होता है।

ग्रहमुख-आहुति—हवन में ग्रहमुख आहुति का भी विचार करना आवश्यक होता है। सूर्याधिष्ठित नक्षत्र से इस चक्र के अनुसार चन्द्रनक्षत्र (दिननक्षत्र) तक गिनें तथा शुभाशुभ फल जानें।

"सूर्यभात् त्रित्रिभिश्चान्द्रे सूर्यविच्छुक्रपङ्गवः।
चन्द्रारेज्यागुशिखिनो नेष्टा होमाहुतिः खले" ॥

ग्रहमुख-आहुति चक्र

३तक	४-५६	७-८९	१० ११ १२	१३ १४ १५	१६ १७ १८	१९ २० २१	२२ २३ २४	२५ २६ २७	**सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र तक संख्या**
सूर्य	बुध	शुक्र	शनि	चन्द्र	मंगल	गुरु	राहु	केतु	**आहुति-प्राप्तकर्त्ता ग्रह**
अशुभ	शुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	शुभ	अशुभ	अशुभ	**फल**

परिहार—अत्यावश्यक नैमित्तिक कार्य में यदि अग्नि का विचार न भी किया जाये तो काम चल सकता है। यथा -

"संस्कारेषु विचारोऽस्य न कार्यो नापि वैष्णवे ।
नित्यनैमित्तिके कार्ये न चाब्दे मुनिभिः स्मृतम्" ॥

रोगमुक्ति-स्नानमुहूर्त—रोग से निवृत्ति के उपरान्त स्नान के लिए शुभ मुहूर्त निम्न प्रकार से हैं—

मघा, पुनर्वसु, रोहिणी, उ.फा., उ.षा., उ.भा., आश्लेषा, रेवती ये नक्षत्र छोड़कर सभी अन्य नक्षत्र शुभ हैं। १-६-११ इन तिथियों को छोड़कर, विषघटी, चैत्र तथा पौष मास को छोड़कर शनि तथा मंगल वार को छोड़कर एवं चरलग्न को छोड़कर शेष को ग्रहण करना चाहिए।

औषधिग्रहण मुहूर्त—हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, मूल, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, मृगशिरा, रेवती तथा अश्विनी—ये नक्षत्र औषधि निर्माण तथा सेवन में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुभ हैं। मंगल-शनि को छोड़कर सभी वार शुभ हैं। ४-९-१४-३० को छोड़कर शेष तिथियाँ शुभ हैं। द्विस्वभावलग्न प्रशस्त है। लग्न से ७-८-१२ ये स्थान ग्रहरहित हों तथा उत्तम शकुन ग्रहण करें। यथा—

"हस्तत्रयेऽनुराधायां मूले पुष्ये श्रवत्रये।
मृगभे रेवतीयुग्मे पुनर्वस्वोर्विजन्मभे॥
ज्ञेन्दुशुक्रेज्यसूर्याणां वासरे तत्तिथावपि।
द्विस्वभावे शुभे लग्ने शुद्धे द्यूनमृतिव्यये॥
भैषज्यं शुभदं प्रोक्तं योगे चायुष्यदायिनी"॥

रोगी के जन्मनक्षत्र का त्याग भी औषध सेवन में अवश्य करना चाहिए। औषध निर्माण तथा भक्षण में अमृतयोग तथा अमृतसिद्धियोग उत्तम होते हैं।

भद्रा (विष्टिकरण) भी औषध सेवन एवं निर्माण में त्याज्य है।

इन ऊपर दिये गये शान्तिक एवं पौष्टिक मुहूर्तों में अधिमास आदि भी वर्जित नहीं है।

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड़ कृत "पाथेय"
हिन्दी टीका का पन्द्रहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।१५।।

*

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अथ षोडशोऽध्याय:

सन्दर्भकथनम्

अध्यायै: पञ्चदशभिर्गतैरेतै: समीरित: ।
आयु: प्रश्न: सरोगारम्भान्तबाधाप्रतिक्रिय: ।। १ ।।

पिछले पन्द्रह अध्यायों में आयुप्रश्न, रोगारम्भ, रोग की समाप्ति, दृष्टिबाधा इत्यादि का प्रतिकार वर्णित हैं ।।१।।

पूर्वमायु: परीक्षणं कर्तव्यम्

पूर्वमायु: परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमादिशेत् ।
इत्युक्तायु: परीक्ष्याथ लक्षणं किञ्चिदुच्यते ।। २ ।।

सबसे पहले व्यक्ति की आयु की परीक्षा करनी चाहिए और जब यह निश्चय हो जाय कि वह इतनी अवधि तक जीवित रहेगा तब उसके शारीरिक, मानसिक लक्षणों का वर्णन तथा भविष्य कथन करना चाहिए । आयु की परीक्षा पूर्व में कही जा चुकने के पश्चात् अब कुछ लक्षणों का वर्णन किया जाता है ।।२।।

पूर्वमायु: परीक्षेत—चिकित्साशास्त्र में सर्वाधिक महत्त्व रोग की साध्यता का होता है, यदि रोग साध्य हो तभी उसका उपचार करना चाहिए, असाध्य रोग का नहीं । अत: वैद्य को सबसे पूर्व रोग की परीक्षा भलीभाँति करने का निर्देश है—

"औत्सुक्यारतिसम्मोहकरमिन्द्रियनाशनम् ।
दुर्बलस्य सुसंवृद्धं व्याधिं सारिष्टमेव च ।।
भिषजा प्राक्परीक्ष्यैवं विकाराणां सुलक्षणम् ।
पश्चात् कार्यसमारम्भ: कार्यसाध्येषु धीमत:" ।।

(चरक-सूत्रस्थान १०।२१-२२)

"रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनन्तरमौषधम् ।
तत: कर्म भिषक्कुर्यात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत्"।। (योगरत्नाकर)
"व्याधिं पुरा परीक्ष्यैवमारभेत तत: क्रियाम् ।
स्वार्थविद्यायशोहानिमन्यथा ध्रुवमाप्नुयात्"।। (अष्टांगसंग्रह)

आयु-परीक्षा का महत्त्व आयुर्वेद में भी है । यदि आयु का निश्चय भलीभाँति हो जाय तो व्यर्थ के चिकित्साव्यय एवं परेशानी से बचा जा सकता है । आयु का निर्णय तो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्योतिषी ही कर सकता है वैद्य नहीं, अत: वैद्य के लिए आयुर्ज्ञान पर जोर नहीं दिया गया और कहा गया है—

"रोगस्तत्त्वपरिज्ञानं वेदनायाश्च निग्रहः ।
एतद् वैद्यस्य वैद्यत्वं न वैद्यो प्रभुरायुषः" ॥

अर्थात् रोग को भलीभाँति जानकर पीड़ा को शान्त करना ही वैद्य का वैद्यत्व है । वैद्य आयु का प्रभु (ठेकेदार) नहीं है । आयु का प्रभु तो केवल जीव मात्र के कर्म हैं परन्तु ज्योतिषी उसे शास्त्र द्वारा बता सकता है कि इस जीव की आयु कितनी है । आयुर्वेद भी आयु का ही वेद है, उसमें प्राप्त आयु की रक्षा तथा उसकी वृद्धि का पुरुषार्थ बताया गया है । अत: ज्योतिषी को आयु-निर्णय में परिपक्वता प्राप्त करना चाहिए ।

अत्र प्रथमलग्नवशात् किञ्चिल्लक्षणमुच्यते

लग्ने चरे चरमुखांशकतः क्रमेण,
दूरे नृणां चरणसंस्थिततद्द्वयानि।
अभ्यर्ण एव तदिदं त्रितयं स्थिरर्क्षे
तद्वद्वदेत्तदुभयात्मनि मध्यदेशे ।। ३।।

(१) यदि लग्न में चर राशि तथा चर नवांश दोनों ही हो तो व्यक्तियों का दूरवर्ती स्थान में संचरण होता है ओर वहीं उनका निवास होता है । तात्पर्य यह है कि यदि इस प्रकार की स्थिति हो तो दैवज्ञ को पृच्छक से कहना चाहिए कि आप बहुत दूर से आये हैं तथा आप बहुत दूर की यात्रा करते रहते हैं ।

(२) यदि लग्न में स्थिर राशि तथा स्थिर नवांश हो तो प्रश्नकर्ता अथवा जिसके विषय में प्रश्न किया गया है वह व्यक्ति बिल्कुल समीपवर्ती स्थान में ही रहता है, वह कहीं दूर से नहीं आया है ।

(३) यदि लग्नराशि द्विस्वभाव हो तो पृच्छक या सम्बद्ध व्यक्ति न अधिक दूर रहता है और न अधिक पास में रहता है । वह तो सामान्य मध्यम दूरी पर ही निवास करता है (पृच्छक को विश्वास दिलाने के लिए ये बातें कहना आवश्यक होती हैं) ।।३।।

मिश्रित स्थिति—यह आवश्यक नहीं है कि प्रश्न आरूढ तथा उसका नवांश दोनों ही एक जैसे हों, उनमें भिन्नता भी हो सकती है तब फल में भी मिश्रण होगा; उसका विचार निम्न प्रकार से करें—

(क) यदि राशि (लग्न) चर हो तथा नवांश स्थिर हो तब वह बहुत दूर तो रहता है लेकिन तब वह बीच-बीच में रुकता हुआ आता है और एक साथ लम्बी यात्रा नहीं करता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(ख) यदि लग्न चर हो तथा नवांश द्विस्वभाव हो तो पृच्छक या दूत ने कुछ समय विश्राम किया तथा कुछ समय यात्रा की है । इसमें यात्रा तथा विश्राम का समय लगभग बराबर-बराबर हुआ करता है ।

(ग) यदि लग्न स्थिर तथा नवांश चर हो तो वह पास के ही स्थान का रहने वाला है और गाँव-गाँव घूमता भटक रहा है ।

(घ) यदि प्रश्नलग्न स्थिर तथा नवांश द्विस्वभाव राशि में हो तो भी वह पड़ोस का रहने वाला है और कभी-कभार अपने ही गाँव या कस्बे में घूम लेता है और कभी अपने घर में ही रहता है ।

(ङ) यदि लग्ल द्विस्वभाव तथा नवांश चर हो तो वह अपने मूल स्थान से अधिक दूर तथा अधिक समीप नहीं आता-जाता है ।

कुछ विद्वान् आरूढ लग्न तथा उसके नवांश से विचार करने को कहते हैं ।

आरूढेशराशिनवांशवशात् लक्षणम्

आरूढाधीश्वरारूढराश्यंशाभ्यां च चिन्तयेत् ।
एतद्द्वयोश्च संवादे सति स्याल्लक्षणं दृढम् ।। ४।।

इसी प्रकार से आरूढ राशि तथा आरूढ के स्वामी ग्रह के राशिनवांशों से पृच्छक की निकट तथा दूर स्थिति जाननी चाहिए तथा इन दोनों के बहुमत से जो लक्षण प्रकट होगा वह बहुत दृढ होगा ।।४।।

शत्रुविजयप्रदा दिशाज्ञानम्

जन्मलग्नाधिनाथस्य प्रश्नलग्नाधिपस्य च ।
दिशि सिध्येदयत्नेन कार्यं वैरिजयादिकम् ।। ५।।

जीवन में सफलता तथा विजय किस दिशा में मिलेगी ? इस प्रश्न का उत्तर जानने के लिए जन्मलग्न तथा प्रश्नलग्न के स्वामियों की दिशा पर विचार करें । इन ग्रहों की जो दिशा होगी उसी दिशा में सफलता तथा शत्रु पर विजय प्राप्त होती है । इस दिशा में बिना प्रयास के सरलतापूर्वक सफलता मिलती है ।।५।।

लग्नेश के अुनसार सफलतादायक दिशा का चक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**प्रश्नलग्नेश तथा जन्मलग्नेश ग्रह**
पूर्व	वायव्य	दक्षिण	उत्तर	ईशान	आग्नेय	पश्चिम	**सफलताकारक दिशा**

मान लीजिए—किसी का जन्म मेषलग्न में हुआ है तो ऐसे जातक को लग्नेश मंगल के कारण दक्षिण दिशा में मामूली प्रयास से सफलता प्राप्त होगी । इसी प्रकार वृष तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तुला वाले जातकों के लिए आग्नेय दिशा सफलतादायक होती है । जन्मकुण्डली तथा प्रश्नकुण्डली दोनों ही लग्नों के आधार पर बताना चाहिए । जन्मकुण्डली से स्थायी सफलता का कथन करना चाहिए तथा प्रश्नकुण्डली से तात्कालिक सफलता का उत्तर देना चाहिए । यदि दोनों कुण्डलियों से एक ही दिशा प्राप्त हो तो सफलता जोरदार मिलती है ।

ग्रहाद् द्रव्यलाभज्ञानम्

आरूढे सप्तमे वाऽस्य ग्रहश्चेदुच्चसंस्थितः ।
तस्योक्तं द्रव्यसर्वस्वं प्रष्टुरस्तीति निर्दिशेत् ।। ६ ।।

यदि आरूढ में या आरूढ से सप्तम स्थान में कोई ग्रह उच्च राशिगत हो तो उस ग्रह से सम्बन्धित धातु-मूल-जीवादि द्रव्य पूछने वाले व्यक्ति को प्राप्त होता है या वह उस द्रव्य का संरक्षक तथा उपभोक्ता होता है । इन द्रव्यों का ज्ञान बृहज्जातक से करना चाहिए ।

(१) सूर्य के द्रव्य—तृण, स्वर्ण, ताम्र, ऊन, जड़ी-बूटियाँ, सुगंधित औषधियाँ आदि ।

(२) चन्द्रमा के द्रव्य—कृषि उत्पादन, जलज वस्तुएँ (शाक भाजी, मोती, मूँगा, मछली, बर्फ, शंख, सीप, घोंघा, समुद्रफेन आदि ।

(३) मंगल के द्रव्य—धातुएँ, अग्नि, बिजली के तार, अस्त्र, बन्दूक, हरिताल, मैनसिल, गेरु आदि ।

(४) बुध के द्रव्य—लेखन सामग्री, साहित्य, पुस्तकें, टाइपराइटर, कम्प्यूटर, गणित, शिल्प आदि ।

(५) गुरु के द्रव्य—धर्मशास्त्र, ज्ञान की वस्तुएँ, सोना, पीले वस्त्र आदि हैं ।

(६) शुक्र के द्रव्य—गो, भैंस, हीरा-चाँदी आदि ।

(७) शनि के द्रव्य—लोहा, चमड़ा, तैल, रसायन, श्रमिक, पुराने कबाड़खाने का सामान आदि ।

आरूढराशितः फलकथनम्

आरूढभतदीशाभ्यां लक्षणं यद्यदीरितम् ।
आरूढविषये पूर्वं तत्तदत्रापि योजयेत् ।। ७ ।।

पूर्व के अध्यायों में आरूढ के आधार पर जो फल कहा गया है उसे यहाँ द्रव्य के विषय में भी लागू करें तथा तदनुसार जातक एवं प्रश्नकुण्डली के लक्षणों (सुख-दुःख, सम्पत्ति-विपत्ति, शिक्षा-दीक्षा, स्वास्थ्य-रोग, शत्रु-मित्र, धर्म-अधर्म आदि) का वर्णन करें ।।७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जातक या पृच्छक के जीविकोपार्जन आदि का वर्णन यहाँ पूर्वानुसार करें । यहाँ आठवें अध्याय के विषयों को स्मरण कराने के लिए सन्दर्भसूचक श्लोक लिखा गया है ।

अथ ग्रहस्थितिवशाल्लक्षणमुच्यते

सुखान्त्यार्धादिषड्भावस्थिता यदि शुभग्रहाः ।
सम्पत्स्यादुपरि प्रष्टुः पापश्चेदापदं वदेत् ।। ८।।

यदि सुख (चतुर्थ भाव से लेकर छः भावों में अर्थात् नवम पर्यन्त शुभ ग्रह बैठे हों तो जातक या पृच्छक को सम्पत्ति प्राप्त होती है और यदि इन भावों में पाप ग्रह बैठे हों तो पृच्छक को विपत्तियाँ प्राप्त होती हैं । ऐसा कहना चाहिए ।।८।।

कर्माद्यार्धादिषड्भावस्थितैर्भूतं शुभाशुभम् ।
तुलादिषट्के लग्नस्थे दैवविन्निर्दिशेदिति ।। ९।।

यदि दशम से लेकर तृतीय भाव तक छः राशियों में शुभ ग्रह बैठे हों तो भूतकाल में शुभ फल या यदि इन स्थानों में पापग्रह बैठे हों तो बीते समय में बुरा फल भोगना पड़ा है; साथ ही तुलादि छः राशियाँ लग्न में हों तभी यह लागू होता है ।।९।।

तात्पर्य यह है कि तुला से लेकर मीन पर्यन्त कोई भी राशि लग्न में हो तो तथा दशम से तृतीय तक शुभ ग्रह होने पर भूतकाल में शुभ फल तथा अशुभ ग्रह होने पर अशुभ फल होता है ।

अतीते शुभयोगः

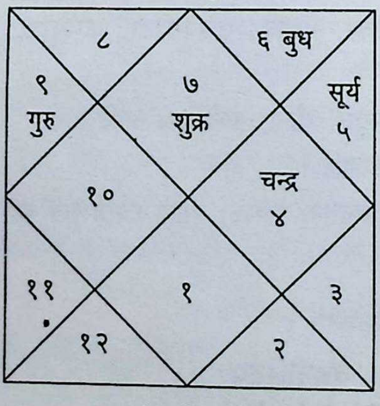

अतीते अशुभयोगः

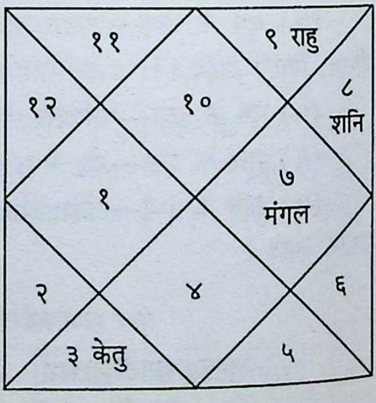

मेषादिषट्के लग्नस्थे सुखान्त्यार्धादिषट्कगैः ।
गता स्यात्सम्पदापच्च भविष्यत्यन्यषट्कगैः ।। १०।।

जिनका जन्म मेषादि छः राशियों के लग्न में हो ओर उनकी कुण्डली में चतुर्थ भाव से नवम पर्यन्त शुभ ग्रह हों तो शुभ फल होगा तथा अशुभ ग्रह हो तो अशुभ फल होगा। यह फल भूतकालीन होगा ।।१०।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

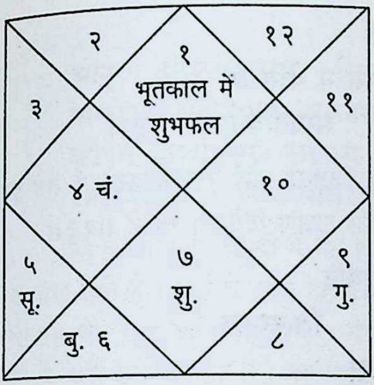

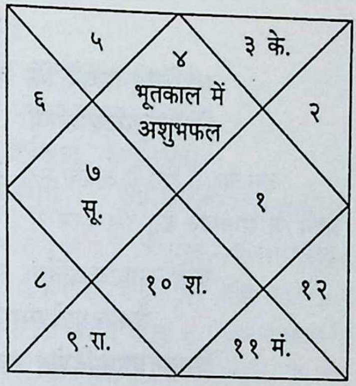

नीतिप्रश्नः

सामादिषु प्रयोक्तव्य उपायः समयेऽत्र कः ।
इति जिज्ञासवे वाच्यं लक्षणं किमपीर्यते ।। ११।।

जब कोई व्यक्ति अपने प्रतिद्वन्द्वी के लिए नीति सम्बन्धी उपाय का निश्चय करने के लिए यह प्रश्न पूछे कि इस प्रकरण में साम, दान, दण्ड, भेद इन चार उपायों में से किस उपाय का प्रयोग उचित होगा ? तो इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए कुछ लक्षणों का वर्णन किया जा रहा है ।।११।।

ग्रहाणां नीतिकथनम्

साम्नी जीवः स भृगुतनयो दण्डनाथौ कुजार्कौ;
दानस्येन्दुः शिखियमबुधाः सासुरा भेदनाथाः ।
वीर्योपेतैरुपचयगतैर्लग्नगैः केन्द्रगैर्वा;
तत् तत् सिद्धिं व्रजति तदहस्स्वंशके वापि तेषाम् ।। १२।।

जो ग्रह बलवान् हो, लग्न में बैठा हो या उपचय स्थान या केन्द्र में बैठा हो तो वह अपने वार तथा काल होरा में सफलता देता है । ग्रहों की नीति इस प्रकार है—(१) सामनीति के प्रतिनिधि शुक्र-गुरु हैं । (२) दण्ड के प्रतिनिधि सूर्य तथा मंगल हैं । (३) दान का प्रतिनिधि चन्द्रमा है । (४) केतु, शनि, बुध तथा तथा असुर (राहु) ये भेद के स्वामी होते हैं । इनके वार या होरा में इनकी नीति सफल होती है ।।१२।।

ग्रहनीतिचक्र

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	ग्रह
दण्ड	दान	दण्ड	भेद	साम	साम	भेद	भेद	भेद	नीति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निधिप्रश्नः

एतस्मिन् भवने किं वा धनमस्ति न वेति यः ।
जिज्ञासुर्वाच्यमेतस्मै लक्षणं सम्प्रतीर्यते ।। १३।।

इस घर में धन है अथवा नहीं ? जब ऐसी जिज्ञासा कोई पृच्छक करता है तब इस प्रश्न के समाधान हेतु इस प्रश्न से सम्बन्धित कुछ लक्षण दिये जा रहे हैं ।।१३।।

यदि कण्टकवर्तिनः शुभाः स्युर्यदि
वैकादशवेश्मगाः विलग्नात् ।
धनवद्ग्रहमादिशेत् तदानीं द्वारञ्च
स्वदिशि परं वदेद् विधिज्ञः ।। १४।।

यदि प्रश्नकुण्डली में सभी ग्रह जो कि शुभ हों, केन्द्रों में बैठे हों अथवा एकादश में बैठे हों तब घर में धन है; ऐसा कहना चाहिए । भलीभाँति विचार कर निपुण दैवज्ञ धनभाव (द्वितीय) में स्थित ग्रह की दिशा में उस निधि (खजाने) का द्वार बतायें ।।१४।।

यहाँ दिशाओं को "प्रागाद्याः" श्लोक के अनुसार ग्रहण करना चाहिए । ग्रहों की दिशाओं का चक्र पीछे पाँचवें श्लोक की टीका के उपरान्त दिया है ।

प्राच्यादीत्युदितेन यत्र विधिना गेहस्य भागे भवेत्;
सौम्यः कण्टकलाभगोऽत्र निहितं तस्योदितं तद्धनम् ।
स्वोच्चस्थो यदि भूरिवैरिगृहनीचस्थः स चेत्तल्लघुः;
क्रूराधिष्ठितगेहभागनिहितं वाच्यञ्च शल्यादिकम् ।। १५।।

जो शुभ ग्रह केन्द्र या लाभ भाव में बैठा हो वह घर के जिस भाग, दिशा अथवा कोण में हो उस हिस्से में उस ग्रह से सम्बन्धित धन गड़ा रहता है । यदि वह शुभ ग्रह अपनी राशि या उच्च राशि में हो तो धन प्रचुर मात्रा में होता है । यदि वह ग्रह शत्रु की राशि या नीच राशि में हो तो धन की मात्रा अल्प होती है । पूर्व श्लोक में वर्णित रीत्यनुसार यदि पाप ग्रह केन्द्र या लाभ में होता है तो उसके द्वारा सूचित दिशा में शल्य (हड्डी आदि पदार्थ) गड़ा होता है परन्तु धन नहीं होता है ।।१५।।

बृहज्जातक के दशान्तर्दशाध्याय में सूर्य का धन—सुगन्धि, हाथीदाँत, चमड़ा, सोना (gold), नख आदि हैं । चन्द्रमा के मोती, वस्त्र, रेशम, तिल आदि हैं । मंगल का ताम्रादि हैं । बुध का चाँदी, सोना आदि हैं । गुरु का सुवर्ण है । शुक्र का चाँदी, हीरा, कांसा आदि भी हैं । शनि का द्रव्य लोहा है ।

बृहज्जातक के संज्ञाध्याय तथा कर्माजीवाध्याय में ग्रहों के जो पदार्थ वर्णित हैं उनको भी याद रखना चाहिए ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रष्टुर्वस्त्रज्ञानम्

भानुः कौसुम्भवासाः सितवसनधरो ग्लौरसृग्रक्तवासाः,
पालाशाच्छादनो ज्ञो वसनमथ गुरोः पीतमच्छस्य चित्रम् ।
कोणः कृष्णाम्बरः स्यादथ कथयतु तैर्लक्षणं केन्द्रसंस्थै-
रायस्थैर्वा स्ववासोधरयुवतिनृणामागमं प्रश्नकाले ।। १६।।

जो बलवान् ग्रह केन्द्रों में बैठे हों अथवा ग्यारहवें भाव में हों उनके अनुसार पृच्छक के वस्त्र होते हैं । सूर्य के वस्त्र रेशमी या रेशम जैसे होते हैं, उनका रंग लाल होता है । चन्द्रमा श्वेत वस्त्र धारण करता है । मंगल लाल रंग के कपड़ों वाला है । बुध पलाश के रंग के वस्त्र धारण करता है । गुरु (बृहस्पति) के वस्त्र पीले होते हैं । अच्छ (शुक्र) के वस्त्र चित्रवस्त्र (छींट या रंग-बिरंगे) होते हैं । कोण (शनि) कृष्णाम्बरधारी है । प्रश्नकाल में विचारपूर्वक उत्तर देना चाहिए ।।१६।।

बली ग्रह पृच्छक का पुरुष या स्त्री लिंग निर्धारित करता है । चन्द्र-शुक्र स्त्री ग्रह होते हैं । आने वाले स्त्री-पुरुषों की संख्या भी ग्रहों के आधार पर बतानी चाहिए ।

प्रस्थानलग्नफलकथनम्

प्रस्था लग्नास्तगतैर्बलिष्ठैः केन्द्रस्थितैर्वा विहगोदितानाम् ।
विप्रादिनारीनरवस्त्रभाजामभ्यागमो वर्त्मनि कीर्तनीयः ।। १७।।

जब यात्रा की तैयारी हो रही हो और उसी समय यात्रा सम्बन्धी प्रश्न पूछा जाय तब यदि प्रश्नलग्न या सप्तम भाव में अथवा केन्द्र में स्थित बलवान् ग्रहों के अनुसार मार्ग में पृच्छक को कितने व्यक्ति स्त्री-पुरुष मिलें उनका विचार उनके रूप-रंग, परिधानादि का विचार उन ग्रहों के अनुसार करना चाहिए । उनके स्त्री-पुरुषादि का विचार भी ग्रहों के अनुरूपादि करना चाहिए ।।१७।।

ग्रहों के रंग

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	केतु	**ग्रह**
भगवा गुड़हल जैसा फूल	श्वेत	लाल	हरित पलाश वर्ण	पीले	छींट	काले	नीले	चित्रित	**रंग (वस्त्र)**

ग्रहाणां व्रणादिकथनम्

मार्तण्डो व्रणवान् व्रणी धरणिजो वाचस्पतिः काचदृङ्,
मन्दो वामपदे व्रणाङ्कसहितः पार्श्वे तिलाङ्को भृगुः ।
चन्द्रो माषतिलादिलाञ्छनयुतः सौम्यः सिरासन्ततो
योज्यं प्राक्तनलक्ष्मणोर्वरकलत्रादेश्च लक्ष्मणयदः ।। १८।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्य शरीर में व्रण आदि का चिह्न देता है । मंगल के कारण भी शरीर में चोट या आघात का चिह्न रहता है । गुरु काचरोग (मोतियाबिन्द/Cataract) काँच जैसी चमकीली आँख का सूचक होता है । शनि वाम पाद में चोट या दुर्बलतादि का सूचक है तथा पैर में व्रण का चिह्न भी दिखता है । शुक्र के कारण बगल में तिल या लहसन होता है । चन्द्रमा मस्सा, तिलादि लाञ्छनों का सूचक है । बुध उभरी हुई नसें (फूली हुई सिराएँ = शिरा-कुटिलता/Verieose veins) देता है । जब विवाह के लिए वर या वधू का चयन करें तो जन्मकुण्डली या प्रश्नकुंण्डली के आधार पर इन चिह्नों को बताना चाहिए ।

विवाहप्रश्ने वरकन्ययोः शरीरे वा व्रणादिज्ञानम्

आरूढनाथेन तु लक्ष्मवध्वा-
स्तदस्तनाथेन वरस्य वाच्यम् ।
प्रश्ने विवाहस्य परत्र लग्न-
पुत्रादिकैः प्रष्टृसुतादिकानाम् ।। १९।।

जो आरूढ राशि का स्वामी ग्रह हो उससे तथा उसके सप्तमेश से वर या कन्या के शरीर में चिह्नों का विवाह प्रश्न में कहना चाहिए । इसी प्रकार विवाहेतर प्रश्न में प्राश्निक के पुत्र-पुत्रियों के शरीर पंचमेश से, लग्नेश की स्थिति से स्वयं पृच्छक के, चतुर्थेश की स्थिति से माता के, दशमेश की स्थिति से पिता के तृतीयेश से भाई के शरीर में व्रणादि चिह्न बताना चाहिए । दक्षिण भारत में पिता का विचार नवमेश से किया जाता है ।।१९।।

पुनश्च लक्ष्मकथनम्

लक्षणकथनेऽमुष्मिन् खचरवपुर्द्रव्यजातमपि यद्यत् ।
संज्ञास्वदशाफलकथितं तद्योजनीयमखिलमपि ।। २०।।

वराहमिहिर ने संज्ञाध्याय, दशाध्याय में जो फल कहा है उसे भी यहाँ लक्षणों के विचार में कहना चाहिए । वहाँ ग्रहों की जो आकृति, चिह्न, वर्ण आदि कहे गये हैं उन्हें बताना चाहिए ।।२०।।

इस श्लोक से सम्बन्धित बृहज्जातक के कुछ अंश निम्न प्रकार हैं—

राशियों के वर्ण

"रक्तः[1] श्वेतः[2] शुकतनुनिभः[3] पाटलो[4] धूम्रपाण्डु-[5]
श्चित्रः[6] कृष्णः[7] कनकसदृशः[8] पिङ्गलः कर्बुरश्च ।
बभ्रुः स्वच्छः प्रथमभवनाद्येषु वर्णाप्लवत्वं;

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(१) सूर्य का स्वरूप—मधु-पिंगल दृष्टि, चौकोर शरीर, पित्त प्रकृति, सिर पर थोड़े तथा विरल केश ।

(२) चन्द्र का स्वरूप—गोल चेहरा, शरीरांग भी गोलाई लिये, शरीर प्रकृति में वात-कफ की अधिकता, प्रखर बुद्धि, मृदु वाणी, शुभ दृष्टि ।

(३) मंगल का स्वरूप—ऊर्ध्व दृष्टि, क्रूर दृष्टि, तरुण मूर्ति, उदार स्वभाव, पैत्तिक प्रकृति, मध्यशरीर कृश ।

(४) बुध का स्वरूप—सुन्दर वाणी, सदैव हास्य में रुचि, वात-पित्त-कफ (त्रिदोषज) प्रकृति ।

(५) गुरु का स्वरूप—लम्बा शरीर, शिर के केश पिंगल वर्ण, नेत्र बिल्ली जैसे, श्रेष्ठ बुद्धि तथा कफ प्रकृति ।

(६) शुक्र का स्वरूप—सुखी, रमणीय शरीर, सुन्दर नेत्र, वात-कफ प्रकृति तथा घुँघराले बाल ।

(७) शनि का स्वरूप—आलसी, कपिल नेत्र, पतला-ऊँचा शरीर, नख तथा दाँत बड़े-बड़े, शरीर पर कठोर रोमावली, शिर के बाल भी कड़े तथा रुखे होते हैं एवं वात प्रकृति हैं ।

इन सब लक्षणों का सावधानी से निरीक्षण कर फल कहना चाहिए । विवाह के प्रश्न में यह पूछा जाता है कि अमुक लड़का या लड़की का रंग-रूप कैसा है ? उसे आरूढ लग्न की राशि, राशीश तथा आरूढ से सप्तम भाव एवं उसके स्वामी में जो बली हो उसके अनुसार ही बताना चांहिए । मान लो सप्तमेश गुरु बलवान् है तो उस वर-वधू के नेत्र मार्जारदृक् (बिल्ली के समान नेत्र) होंगे । यदि मंगल हो तो आँखें तरेरने की आदत होगी ।

धातु-मूलादिविचारः

यद्यद्वस्त्विह लोके तत्सर्वं धातुमूलजीवमयम् ।
कृष्णीयप्रभृतिभ्यः शास्त्रेभ्यस्तद्भिदा ज्ञेया ।। २१।।

विश्व के सारे पदार्थ धातु, मूल तथा जीव इन तीन वर्गों में विभाजित हैं । उनका विस्तृत वर्णन 'कृष्णीयम्' इत्यादि ज्योतिषगन्थों में उपलब्ध है, वहाँ उसका अध्ययन कर लेना चाहिए जिससे दैवज्ञ को प्रश्नफल कहने में सुविधा हो ।।२१।।

ग्रहों के अनुसार उनके धातु-मूल-जीवों को बताना चाहिए ।

शकुनविषयकं लक्षणम्

द्यूनस्थेष्वशुभेषु दुष्टशकुनं सौम्येषु तच्छोभनं,
दूतारूढवशादमुष्य कथयेत् प्रश्नाधिरूढेन वा ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कर्मारूढसुखस्थितैर्बलयुतैरप्येवमादिश्यतां
यातुर्वा शकुनं शुभाशुभमिति प्रस्थानलग्नाद् वदेत् ।। २२।।

यदि प्रश्नलग्न से सप्तम स्थान में अशुभ ग्रह हों तो उस समय अशुभ शकुन होते हैं। यदि सप्तम में शुभ ग्रह हों तो शुभ शकुन कहना चाहिए। ये शकुन पृच्छक को रास्ते में होते हैं। इन शकुनों का विचार आरूढ एवं प्रश्न लग्न से करना चाहिए।

यदि आरूढलग्न अथवा प्रश्नलग्न से दशम-चतुर्थ में बली ग्रह हों तो उन बली ग्रहों से प्रस्थान लग्न की कुंडली में फल कहना चाहिए ।।२२।।

तत्रस्थे चतुरङ्घ्रिसंज्ञविहगे मातङ्गपश्चादयो-
ऽभ्यायाताः पथि पक्षिसंज्ञिखचरे दृष्टाश्चकोरादयः ।
सूर्यारौ तु चतुष्पदौ निगदितौ मन्देन्दुजौ पक्षिणौ
शीतांशुस्तु सरीसृपोऽष्टचरणः शास्त्रीप्रदिष्टः फणी ।। २३।।

उपरिलिखित स्थानों (सप्तम, दशम, चतुर्थ, लग्न) में यदि चतुष्पदसंज्ञक ग्रह बैठे हों तो मार्ग में हाथी आदि पशु दिखायी पड़ते हैं। यदि उक्त स्थानों में पक्षिसंज्ञक ग्रह बैठे हों तब चकोरादि पक्षी मार्ग में मिलते हैं।

सूर्य तथा मंगल चतुष्पाद ग्रह हैं, शनि तथा बुध पक्षीसंज्ञक ग्रह हैं, चन्द्रमा सरीसृप (Reptile) तथा राहु अष्टपाद (Octopod) है ।।२३।।

चण्डालाभ्यागमो यद्यहिशिखिगुलिकब्रध्नजास्तत्र संस्थाः
शुक्रेन्दू चेद् वधूना यदि शशितनयस्तत्र विद्वज्जनानाम् ।
विप्राणां वाक्पतिश्चेद् यदि धरणिसुतः शस्त्रिणां कीर्तनीयो
वर्त्मन्यभ्यागमः प्राग्यदि पुनररुणः श्रेष्ठभाजां जनानाम् ।। २४।।

यदि उन स्थानों में राहु-केतु-या मान्दि बैठा हो तो चण्डाल आदि का दर्शन होता है। चन्द्र-शुक्र की स्थिति से स्त्रियाँ आती हैं या मिलती हैं। बुध होने पर विद्वान् लोग मिलते हैं। यदि गुरु हो तो ब्राह्मणों के दर्शन होते हैं। यदि मंगल हो तो हथियारबन्द लोग मिलते हैं। यदि सूर्य हो तो उत्तम (राजसी) लोगों से भेंट होती है ।।२४।।

अथ दिनगतघटिकावशाल्लक्षणमुच्यते

आदित्यादिदिनेष्वनादिफणिपर्यन्ताः क्रमेणोदयं;
स्वस्वाद्याः स्वदिनेषु यान्ति दिवसाष्टांशेषु खल्वष्टसु ।
जीवज्ञास्फुजितां क्रिया हि सकलाः सिध्येयुरिन्दोः शनै-
र्नोऽन्येषामुदये वदेदिति सुधीः सञ्चिन्त्य पृच्छाविधौ।। २५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आदित्यादि (सूर्यादि) वारों में सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त पर्यन्त आठों ग्रह उदित होते हैं। ये आठ ग्रह सूर्य से लेकर राहु तक होते हैं। प्रत्येक ग्रह अपने वार में प्रात:काल के प्रथम अष्टमांश में उदित होता है, इसके पश्चात् क्रम से अन्य ग्रह उदित होते हैं। इन ग्रहों में चन्द्रमा के अष्टमांश में धीरे-धीरे कार्य सिद्ध होता है। बुध-गुरु-शुक्र के अष्टमांशों में यदि प्रश्न किया जाय तो सभी कार्यों में शीघ्र ही सफलता मिलती है। अन्य ग्रहों के अष्टमांशों में किये गये प्रश्नफल में कार्य सिद्ध नहीं होता है ॥२५॥

अष्टमांशज्ञानविधि:

प्रश्ने दिनगतविघटीर्विन्यस्य विभज्य शेखरैः शेषात्।
विज्ञेयो विहगानामुदयो वक्तव्यममुनेदम्॥ २६॥

प्रश्न समय जितना घटी-पल सूर्योदय से बीत चुके हों उन इष्टकालीन घटी-पलों को पलात्मक बना कर उनमें शेखर (२२५) अर्थात् कटपयादि क्रम से दो सौ पच्चीस का भाग दें तो जो लब्धि (quotient) प्राप्त हो वह विगत अष्टमांश होगा तथा शेष वर्तमान अष्टमांश होगा। अष्टमांश की गणना उस वार के अष्टमांश से करनी चाहिए। इस प्रकार प्रश्नकाल में प्रश्न का समाधान करने के लिए ग्रहों के उदय की रीति बताई गयी है ॥२६॥

प्रतिवार क्रम से अष्टांशों में ग्रहों के उदय का क्रम

वार	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	क्रम
प्रथम ग्रह	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	(१) अष्टांश
द्वितीय ग्रह	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	(२) अष्टांश
तृतीय ग्रह	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	सूर्य	(३) अष्टांश
चतुर्थ ग्रह	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	सूर्य	चन्द्र	(४) अष्टांश
पंचम ग्रह	गुरु	शुक्र	शनि	राहु	सूर्य	चंद्र	मंगल	(५) अष्टांश
षष्ठ ग्रह	शुक्र	शनि	राहु	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	(६) अष्टांश
सप्तम ग्रह	शनि	राहु	सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	गुरु	(७) अष्टांश
अष्टम ग्रह	राहु	सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	(८) अष्टांश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रश्न के समाधान की इस पद्धति की अपनी मर्यादाएँ हैं । इस रीति से एक-एक ग्रह का उदय मध्यम मान से पौने चार घटी होता है जो कि डेढ घण्टे के बराबर है । इतने समय में पूछे गये प्रत्येक व्यक्ति के लिए समाधान एक जैसा ही होगा । मूल ग्रंथ में यह विधि केवल दिन के समय पूछे गये प्रश्नों के लिए ही उपयोगी हैं । रात के समय इसका उपयोग नहीं हो सकता है ।

श्लोक २६ में अष्टांश साधन की जो विधि बताई गई है वह स्थूल है तथा दिनमान के मध्यम मान पर आधारित है । जब दिनमान तीस घटी का होता है तब उसके पल बनाने पर १८०० (अठारह सौ) पल होते हैं । इनमें आठ का भाग देने पर लब्धि २२५ (दो सौ पच्चीस) प्राप्त होती है । इसीलिए दो सौ पच्चीस का भाग देने के लिए ग्रन्थकार ने कहा है ।

शुद्ध अष्टमांश जानने के लिए तो दिनमान की घटी तथा पलों में आठ का भाग देना चाहिए, उससे शुद्ध अष्टमांश का ज्ञान होता है । इस प्रकार के अष्टमांश के घण्टा-मिनट बना लें और उन्हें सूर्योदय के स्टेण्डर्ड घण्टा-मिनटों में जोड़कर वार के अनुसार क्रम से किस ग्रह का उदय हो रहा है यह जाना जा सकता है ।

अष्टमांश कालवेला—तमिलनाडु, केरल, आन्ध्रप्रदेश तथा कर्णाटक में इन अष्टमांश वेलाओं का खूब प्रचार है । वहाँ राहुकाल के अष्टमांश में कोई भी शुभ कार्य आरंभ नहीं किया जाता है । सामान्य जनता इनका उपयोग मध्यम मान से करती है जिसमें प्रतिदिन प्रातः छः बजे से प्रथम अष्टमांश का प्रारंभ मानते हैं तथा प्रति डेढ घण्टे के उपरान्त अन्य अष्टमांश उस वार के क्रम से चलाते हुए सायंकाल छः बजे तक समाप्त कर देते हैं । अतः उस दृष्टि से पीछे दिये गये चक्र का उपयोग कर सकते हैं । जैसे रविवार को (१) प्रातः ६ बजे से सायं सात बजे तक सूर्य का अष्टमांश, (२) साढे सात से नौ बजे तक चन्द्रमा का, (३) नौ से साढ़े दस तक मंगल का, (४) साढ़े दस से बारह बजे मध्याह्न तक बुध का, (५) बारह से डेढ बजे तक गुरु का (यमगण्डम काल), (६) डेढ बजे से तीन बजे तक शुक्र का अष्टमांश, (७) तीन बजे से साढ़े चार तक शनि का (गुलिक काल) तथा (८) अन्त में साढ़े चार से सायं छः बजे तक राहुकाल होता है ।

सूक्ष्म गणना—प्रत्येक ग्रह का उदयकाल जानने के लिए आगे दी गई सारणी का उपयोग करें । सर्वप्रथम यह देखें कि पंचांग में उस दिन का दिनमान (Diurnal duration) कितना है ? फिर दिनमान की घटी का अष्टमांश आगे दी गयी "दिनमान की घटी की अष्टमांशद्योतक सारिणी" में से घटी के नीचे अष्टमांश के घटी-पल-विपल प्राप्त करें । फिर दिनमान के जितने पल अधिक हों उन पलों का अष्टमांश "दिनमान के पलों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

की अष्टमांश सारिणी'' से देख लें और उसे जोड़ दें। यह एक अष्टमांश का मान होगा। इसे तब तक जोड़ें जब तक अभीष्ट इष्ट काल के समय का अष्टमांश प्राप्त न हो जायें।

मान लो— सोमवार को इष्ट १५ घटी १० पल है, दिनमान ३१ घटी ८ पल है अत: दिनमान के ३१ घटी का अष्टमांश आगे प्रथम सारिणी में घट्यादि (घं. प. वि.) ३।५२।३० प्राप्त हुए। इनमें आठ पल का फल सारिणी क्रमांक दो में से १ विपल लेकर पूर्व के फल में जोड़ा तो ३ घटी ५२ पल ३१ विपल यह अष्टमांश हो गया। अब घट्यादि (घं. प. वि.) ३।५२।३१ तक चन्द्र का, (घ.) ७।४५।२ तक मंगल, घट्यादि ११।३७।३३ तक बुध, घट्यादि १४।३०।४ तक गुरु तथा घट्यादि १७।२२।३५ तक शुक्र का उदयकाल हैं; अपना इष्ट १५ घटी १० पल है अत: शुक्र के काल में है, जिसका फल शुभ है।

दिनमान घटी की अष्टमांश द्योतक सारिणी ।।१।।

पच्चीस	छब्बीस	सत्ताईस	अट्ठाईस	उन्तीस	तीस	इकत्तीस	बत्तीस	तैंतीस	चौंतीस	पैंतीस	दिनमान की घटियाँ	
३	३	३	३	३	३	३	४	४	४	४	घटी	अष्टमांश
७	१५	२२	३०	३७	४५	५२	०	७	१५	२२	पल	
३०	००	१५	००	३०	००	३०	०	३०	००	३०	विपल	

दिनमान के पलों की अष्टमांशद्योतक सारिणी ।।२।।

शून्य	एक	दो	तीन	चार	पाँच	छः	सात	आठ	नौ	दस	ग्यारह	बारह	तेरह	चौदह	दिनमान के पल	
०	०	०	०	०	०	०	०	१	१	१	१	१	१	१	पल	अष्टमांश
०	७	१५	२२	३०	३७	४५	५२	०	७	१५	२२	३०	३७	४५	विपल	
०	३०	००	३०	००	३०	००	३०	०	३०	००	३०	००	३०	००	प्रतिविपल	

पन्द्रह	सोलह	सत्रह	अठारह	उन्नीस	बीस	एक्कीस	बाईस	तेईस	चौबीस	पच्चीस	छब्बीस	सत्ताईस	अट्ठाईस	उन्तीस	दिनमान के पल	
१	२	२	२	२	२	२	२	२	३	३	३	३	३	३	पल	अष्टमांश
५२	०	७	१५	२२	३०	३७	४५	५२	०	७	१५	२२	३०	३७	विपल	
३०	०	३०	००	३०	००	३०	००	३०	०	३०	००	३०	००	३०	प्रतिविपल	

तीस	एकतीस	बत्तीस	तैंतीस	चौंतीस	पैंतीस	छत्तीस	सैंतीस	अड़तीस	उनतालीस	चालीस	एकतालीस	बयालीस	तैंतालीस	चवालीस	दिनमान के पल	
३	३	४	४	४	४	४	४	४	४	५	५	५	५	५	पल	अष्टमांश
४५	५२	०	७	१५	२२	३०	३७	४५	५२	०	७	१५	२२	३०	विपल	
००	३०	०	३०	००	३०	००	३०	००	३०	०	३०	००	३०	००	प्रतिविपल	

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पैंतालीस	छियालीस	सैंतालीस	अड़तालीस	उनचास	पचास	एक्यावन	बावन	तिरपन	चौवन	पचपन	छप्पन	सत्तावन	अट्ठावन	उनसठ	दिनमान के पल	
५	५	५	६	६	६	६	६	६	६	६	७	७	७	७	पल	अष्टमांश
३७	४५	५२	०	७	१५	२२	३०	३७	४५	५२	०	७	१५	२२	विपल	
३०	००	३०	०	३०	००	३०	००	३०	००	३०	०	३०	००	३	प्रतिविपल	

अनुष्ठानपद्धतिमतम्

गतनाडिकामुदधिसङ्गुणां हरेदवनीधरैस्तु परिशेषतः क्रमात् ।
मृतिविभ्रमौ कलहसौख्यनिर्गमाः सकलत्रबन्धनमितीरयेद् बुधः।। २७।।

यहाँ अनुष्ठानपद्धति के अनुसार सरलतम विधि दी है कि इष्टकाल की घटियों में चार का गुणा करें तथा सात का भाग दें । यदि एक शेष बचे तो मृत्यु, दो शेष बचे तो विनम्र, तीन शेष बचने पर कलह, चार शेष बचने पर सौख्य, पाँच शेष बचने पर यात्रा, छः शेष बचने पर दाम्पत्य सुख तथा शून्य शेष बचे तो बन्धन कहना चाहिए ।।२७।।

अनुष्ठानपद्धति की इस विधि से उत्तर कभी-कभार ही सही होता है ।

अथ त्रिधा भूतोदयम्

आत्मश्वासोद्भवो दूतवाक्यप्रथमवर्णजः ।
दिनयातघटीभूतो भूतानामुदयास्त्रिधा ।। २८।।

पञ्चमहाभूतों (पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाश) का उदय तीन प्रकार से होता है—

(१) दैवज्ञ अपनी श्वास के स्वरोदय से पंचतत्त्वों के उदय का ज्ञान करें ।

(२) दूत या पृच्छक के द्वारा बोले वाक्य या शब्द के प्रथम वर्ण (अक्षर) के आधार पर तत्त्वोदय का ज्ञान करें ।

(३) इष्टकाल के घटी-पलों के आधार पर भी पंच तत्त्वों के उदय का ज्ञान होता हैं ।।२८।।

आत्मश्वासोद्भवतत्त्वज्ञानकथनम्

उभयो पुटयोस्तु दण्डसंस्था पृथिवीतोयमधः कृशानूर्ध्वम् ।
पवनस्तु तिर्यङ्नसोऽथ मध्ये गगनं भूतगतस्तन्दूद्भवेयम् ।। २९।।

(१) **पृथ्वी तत्त्व**—जब दोनों नासाछिद्रों (नथुनों) से श्वास एक साथ सीधे डण्डे की तरह चलती हो तब पृथ्वी का उदय जानना चाहिए । इसमें श्वास दोनों नासापुटों से ठीक सामने की ओर (पृथ्वी के समानान्तर) तथा आपस में भी दोनों छिद्रों से समानान्तर रहती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(२) **जल तत्त्व**—जब नासा से निकल कर श्वास नीचे की ओर जाती हो तब जल तत्त्व का उदय होता है ।

(३) **अग्नि तत्त्व**—जब श्वास ऊपर की ओर जाती हो तब अग्नि तत्त्व का उदय होता है ।

(४) **वायु तत्त्व**—जब श्वास तिरछी (Angular shape) होकर चलती हो तो वायु भूत का संचार समझना चाहिए ।

(५) **आकाश तत्त्व**—जब श्वास दोनों नथुनों से निकलने के पश्चात् आपस में मिलाकर फिर आगे जाती हो तब आकाश तत्त्व का उदय जानना चाहिए । यहाँ श्वास के अंगुलात्मक माप की आवश्यकता नहीं है ।

इस प्रकार पृथ्वी तथा आकाश तत्त्वों में श्वास दोनों नथुनों से चलती है । शेष तीन में दोनों या एक से ही चल सकती है ॥२९॥

दूतवाक्यप्रथमवर्णात् तत्त्वज्ञानम्

भूमेरकारं पयसत्विकारं, वह्नेरुकारं मुनयो वदन्ति ।
एकारमोकारमपि क्रमेण वायोश्च वर्णं नभसश्च वर्णम् ॥ ३० ॥

भूमि का अकार, जल का इकार, अग्नि तत्त्व का उकार होता है, ऐसा मुनिजनों ने कहा है । इसी प्रकार वायु तत्त्व का एकार तथा आकाश तत्त्व का ओकार वर्ण होता है ॥३०॥

आदि वर्ण से तत्त्वज्ञान का चक्र

दूत के वाक्य का प्रथम स्वर	अ-आ-अं	इ-ई-ऌ	उ-ऊ-ऋ	ए-ऐ	ओ-औ
तत्त्व	पृथ्वी	जल	अग्नि	वायु	आकाश

भूतोदयलग्नकथनम्

यामः स्याद्दिवसाष्टभाग इह तेष्वोजे महीपूर्वको
युग्मे स्याद्गगनादिगश्च दिवसे रात्रौ च भूतक्रमः ।
भूमे पादयुता घटी तु पयसो नाड्यङ्घ्रहीना शुचे-
र्नाड्यर्धं पवनस्य खस्य घटिकापादो द्वयोर्यामयोः ॥ ३१ ॥

दिनमान का आठवाँ भाग यहाँ पर 'याम' कहा गया है । वैसे तो याम का अर्थ दिन या रात का चौथाई भाग है, उसी को प्रहर भी कहा है परन्तु यामार्ध (आधे याम) के समय को भी संस्कृत वाङ्मय तथा लोकव्यवहार में याम कहा गया है । अस्तु, याम का अर्थ दिन या रात का अष्टमांश ही हुआ । एक याम का मध्यम मान पौने चार घटी या डेढ घण्टे होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन यामों में विषम संख्या वाले जो याम हैं उनमें पृथ्वी आदि पाँचों तत्त्वों का उदय क्रम से होता है। जबकि सम संख्यावाले यामों में तत्त्वों का क्रम विलोम क्रम से हो जाता है। विलोम क्रम में तत्त्व आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी इस क्रम से उदित होते हैं।

प्रत्येक याम में पृथ्वी तत्त्व का उदय १ घटी १५ पल, जल तत्त्व का उदय १ घटी, अग्नि तत्त्व का उदय ४५ पल, वायु तत्त्व ३० पल तथा आकाश तत्त्व १५ पल तक उदित रहता है। सब का योग पौने चार घटी होता है।

इसी प्रकार एक अहोरात्र में पृथ्वी तत्त्व बीस घटी, जल तत्त्व सोलह घटी, अग्नि तत्त्व बारह घटी, वायु तत्त्व आठ घटी तथा आकाश तत्त्व चार घटी तक संचरित होते हैं। इन सब का योग साठ घटी होता है ॥३१॥

ध्यान रहें—तत्त्वों का यह समय तीस घटी का दिन तथा तीस घटी की रात्रि मानकर लिखा गया है। यह स्थिति वर्ष में केवल दो दिवस (विषुव दिनों में) रहती है। शेष दिनों में दिनमान तथा रात्रिमान घटते-बढ़ते रहते हैं, उनकी घटा-बढी के अनुसार इसमें परिवर्तन होता रहता है। दिनमान के बढ़ने की स्थिति में यह प्रतिपल की बढ़ोतरी ७ विपल, ३० प्रतिविपल बढ़ता है तथा प्रति घटी के बढ़ने पर ७ पल तथा ३० विपल बढ़ता है।

दिन तथा रात के आठ यामों में पञ्चभूतोदय का चक्र

याम	प्रथम याम			द्वितीय याम				
तत्त्व	घटी	पल	मिनट	तत्त्व	घटी	पल	मिनट	से.
पृथ्वी	१	१५	३०	आकाश	०	१५	०६	-
जल	१	००	२४	वायु	०	३०	१२	-
अग्नि	०	४५	१८	अग्नि	०	४५	१८	-
वायु	०	३०	१२	जल	१	००	२४	-
आकाश	०	१५	०६	पृथ्वी	१	१५	३०	-

याम	तृतीय याम			चतुर्थ याम				
तत्त्व	घटी	पल	मिनट	तत्त्व	घटी	विपल	मिनट	से.
पृथ्वी	१	१५	३०	आकाश	०	१५	०६	-
जल	१	००	२४	वायु	०	३०	१२	-
अग्नि	०	४५	१८	अग्नि	०	४५	१८	-
वायु	०	३०	१२	जल	१	००	२४	-
आकाश	०	१५	०६	पृथ्वी	१	१५	३०	-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

याम	पंचम याम			षष्ठ याम				
तत्त्व	घटी	पल	मिनट	तत्त्व	घटी	पल	मिनट	से.
पृथ्वी	१	१५	३०	आकाश	०	१५	०६	-
जल	१	००	२४	वायु	०	३०	१२	-
अग्नि	०	४५	१८	अग्नि	०	४५	१८	-
वायु	०	३०	१२	जल	१	००	२४	-
आकाश	०	१५	०६	पृथ्वी	१	१५	३०	-

याम	सप्तम याम			अष्टम याम				
तत्त्व	घटी	पल	मिनट	तत्त्व	घटी	पल	मिनट	से.
पृथ्वी	१	१५	३०	आकाश	०	१५	०६	-
जल	१	००	२४	वायु	०	३०	१२	-
अग्नि	०	४५	१८	अग्नि	०	४५	१८	-
वायु	०	३०	१२	जल	१	००	२४	-
आकाश	०	१५	०६	पृथ्वी	१	१५	३०	-

पञ्चभूतानामुदयफलम्

भूतानामुदयेन च विचिन्तयेत् प्रष्टृकार्यमखिलमपि ।
न मृतिर्न रोगशान्तिर्धरणेरुदये जलोदये तु पुनः ।। ३२।।
ईप्सितमचिरात् सिध्यति वह्नेरुदये मृतिर्विरोधश्च ।
वायोरुदये सर्वं सिध्यति गमनागमादि चलकार्यम् ।। ३३।।
व्याध्यारम्भो नाशः स्थिरकार्यं चाहवश्च तथा।
आकाशोदयकाले सिध्यत्यशुभं विशेषेण।। ३४।।

तत्त्वों के उदय (तीनों प्रकार से जानकर) दैवज्ञ को प्रष्टा के सम्पूर्ण प्रश्नों का समाधान करना चाहिए ।

(१) पृथ्वी तत्त्व का उदय हो तो न तो मृत्यु होती है और न रोग ही शान्त होता है । यथास्थिति रहती है ।

(२) जल तत्त्व के उदय में अभीप्सित कार्य में सफलता मिलती है । शीघ्रता एवं सरलता से मिलती है ।

(३) यदि वायु तत्त्व का उदय हो तो उस समय यात्रा सम्बन्धी प्रश्न होने पर यात्रा तथा आगमन सिद्ध होता है ।

(४) जब अग्नि तत्त्व उदित हो तो रोगी की मृत्यु होती है तथा युद्धादि के प्रश्न में शत्रु आदि से खूब विरोध होता है । मुकदमेबाजी बढ़ती है ।

 Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(५) यदि प्रश्न समय आकाश तत्त्व का उदय हो तो रोग का आरंभ होता है, व्यापार आदि में असफलता होती है, सम्पत्ति की हानि होती है तथा युद्धादि अशुभ कार्य सफल होते हैं ॥३२-३३-३४॥

पूर्वसन्दर्भकथनम्

प्रागात्मश्वासविषये विस्तराद्यदिहेरितम् ।
पञ्चानामपि भूतानां फलं तदपि चन्तयेत् ॥ ३५॥

पूर्व में द्वितीयाध्याय में स्वरोदय का विस्तार से वर्णन किया गया है उसका भलीभाँति अध्ययन करें और वहाँ विविध प्रश्नों (कार्यसिद्धि, युद्ध, विवाद, जय, पराजय, सन्तति प्रश्न, गर्भ प्रश्न, नष्टवस्तु प्रश्न, रोग-प्रश्न, मुहूर्त विचार, वारानुसार फल, केलियुद्ध, यात्रा, आगमन आदि) के सम्बन्ध में जो फलादेश वर्णित हैं दैवज्ञ को उसका भी उपयोग यहाँ करना चाहिए ॥३५॥

विपत्तिप्रदयोगाः

लग्नेशोऽशुभसंयुतो यदि नृभे प्रष्टुर्विपत्तिर्नृभिः;
पश्वाद्यैश्चतुरङ्घ्रिभेषु यदि चेत्तद्भेदतो निर्दिशेत् ।
सर्पाख्यैस्तु सरीसृपाख्यभवने यद्यम्बुराशौ नदी-
कूपादौ पतनं झषाधिजलजन्तूपद्रवो वा यदि ॥ ३६॥

(१) यदि प्रश्नकुण्डली में लग्नेश पाप ग्रह से युक्त होकर द्विपद राशि (Biped sign) में बैठा हो तो पृच्छक को मनुष्यों से विपत्ति मिलती है (मिथुन, कन्या, तुला, कुंभ तथा धनु का पूर्वार्ध ये द्विपद राशियाँ हैं) ।

(२) यदि लग्नेश पाप ग्रहों के साथ चतुष्पद राशियों (Qudruped sign) में बैठा हो तो चतुष्पदों (चौपायों) से विपत्ति प्राप्त होती है (मेष, वृष, सिंह एवं धनु का उत्तरार्ध ये चतुष्पद राशियाँ हैं) ।

(३) यदि लग्नेश ग्राम चर राशि में हो तो ग्रामचर (पालतू) पशुओं (सींग वाले पशुओं) से कष्ट मिलता है । यदि वनचर राशि में हो तो हिंसक पशुओं से कष्ट होता है (सिंह वनचर राशि तथा वृष ग्रामचर राशि है, मेष जंगली तथा ग्रामीण दोनों का प्रतिनिधित्व करती है) ।

(४) यदि लग्नेश सरीसृप राशि (कीटराशि = कर्क एवं वृश्चिक) में पाप ग्रह के साथ हो तो सर्प, बिच्छू, छिपकली आदि से विपत्ति होती है ।

(५) यदि लग्नेश पाप ग्रह के साथ जलचर राशियों में से किसी में हो तो जल में डूबने का कष्ट प्राप्त होता है, बाढ़ आदि से हानि होती है, अतिवृष्टि से विपत्ति आती है तथा जलचर जन्तुओं से विपत्ति होती है ॥३६॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मनुष्यों से विपत्ति का योग

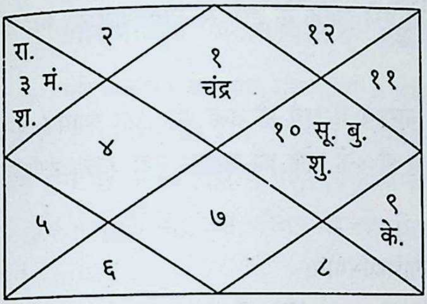

श्लोक ३६ के विपत्ति योगों का विचार जन्मकुण्डली में भी करना चाहिए। पार्श्व में दी गई कुण्डली में लग्नेश शनि एवं राहु दो पाप ग्रहों के साथ नृराशि मिथुन में बैठा है। इस व्यक्ति को सदैव मनुष्यों से ही विपत्तियाँ प्राप्त होती रहती हैं।

संहारनक्षत्रवशात् विपत्तिकथनम्

संहारोडुगतोऽर्कजः क्षितिभुवा युक्तोऽथवा वीक्षितः
प्रष्टुर्मन्दिरदाहकृत्स शिखिना युक्तेक्षितो वा तथा ।
संहारोडुगतोऽसदीक्षितयुतो लग्नाधिपः कुष्ठका-
र्येवं राहुयुतेक्षिते तु तनुपे प्रष्टाहिदष्टो भवेत् ॥ ३७॥

यदि सूर्यपुत्र (शनि) संहारसंज्ञक नक्षत्रों में हो, तथा मंगल से युक्त हो तो पृच्छक के मकान को जलाता है (नष्ट करता है)। यदि वह शनि केतु से युक्त हो तो जातक स्वयं को अग्नि से दग्ध करता है।

यदि लग्नेश संहार-नक्षत्रों में बैठकर असत्ग्रहों (पाप ग्रहों) से युत या दृष्ट हो तो जातक को या पृच्छक को कुष्ठ रोग से पीड़ित करता है। यदि पाप ग्रह राहु हो तो सर्पादि से खतरा रहता है (कृत्तिका तथा आर्द्रा संहार नक्षत्र माने जाते हैं, क्योंकि इनके स्वामी अग्नि तथा रुद्र है। मेरी सम्मति में भरणी का प्रभाव भी संहारक होना चाहिए, क्योंकि इसके स्वामी यम होते हैं) ॥३७॥

वस्तुलाभ-वस्तुहानिश्च

मार्तण्डे तनुगे भृगौ धनगते हेमागमः पृच्छतां
लग्नस्थे भृगुजे व्ययस्थित इने हेम्नो विनाशो भवेत् ।
मन्दे लग्नगतेऽर्थगे च शशिजे लाभोऽयसः कथ्यतां
मन्दे रिःफगते बुधेऽथ तनुगे नाशश्च वाच्योऽयसः ॥ ३८॥

यदि कुण्डली में लग्न में सूर्य बैठा हो, शुक्र द्वितीय में हो तो जातक को पर्याप्त मात्रा में सुवर्ण (सोना) प्राप्त होता है। यदि शुक्र लग्न में तथा सूर्य व्यय भाव में हो तो स्वर्ण का नाश होता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि शनि लग्न में हो तथा बुध द्वितीय भाव में हो तो लोहे से लाभ होता है। यदि शनि बारहवें भाव में तथा बुध लग्न में हो तो ऐसे व्यक्ति के हाथ से लौह धातु का विनाश होता है ॥३८॥

जिस जातक के लग्न में शुक्र तथा बारहवें में सूर्य हो उन्हें सोने का व्यापार तथा जिनके बारहवें भाव में शनि तथा लग्न में बुध हों उन्हें लोहे का व्यापार नहीं करना चाहिए, अन्यथा घाटा होता है।

पुनश्च धातुलाभहानियोगः

लाभस्ताम्रस्य वाच्यो वपुषि यदि भृगुर्भूमिपुत्रो धनस्थो
भूपुत्रे लग्नसंस्थे पुनरपि भृगुजे रिष्फगे ताम्रनाशः।
वक्तव्योऽत्रार्थलाभः क्षितिभुवि तनुगे सूर्यपुत्रे धनस्थे
रिष्फस्थे भूमिपुत्रे वपुषि यदि शनिः कथ्यतामर्थनाशः ॥ ३९॥

यदि वपु (लग्न) में भृगु (शुक्र) हो तथा भूमिपुत्र (मंगल) धनभाव में हो तो ताम्र धातु का लाभ होता है। परन्तु यदि इसका उल्टा हो कि लग्न में मंगल तथा बारहवें भाव में शुक्र हो तो ताम्र धातु की हानि होती है। जिन जातकों की कुण्डली में ताम्रनाश का योग हो उन्हें ताम्र से सम्बन्धित व्यवसाय (बर्तन, बिजली के तार आदि) नहीं करना चाहिए, अन्यथा उन्हें सदैव घाटा उठाना पड़ेगा।

यदि लग्न में मंगल तथा द्वितीय में शनि हो तो अर्थलाभ होता है। परन्तु व्यय भाव में मंगल तथा लग्न में शनि हो तो अर्थनाश कहना चाहिए ॥३९॥

जीवनाश-मूलनाशयोगानां कथनम्

भानोर्लग्ने पशुगजतुरङ्गादिकानां विनाशः
कीटोत्थापत्तपनबुधयोर्मृत्युभीतिः कुजस्य।
इन्दोः सूनोर्विपदिह सुहृत्पुत्रयोः कीर्तनीया
नीचारिस्था रविहतकरा ये फलं प्रोक्तमेषाम् ॥ ४०॥

(१) जब लग्न में सूर्य हो तथा नीच राशि या शत्रु राशि में हो तब पशु, हाथी, घोड़ा तथा अन्य पालतू पशुओं की हानि होती है।

(२) लग्न में नीच, शत्रुक्षेत्री या अस्तंगत होकर सूर्य एवं बुध की युति हों तब कीड़ों, पक्षियों आदि से भय होता है।

(३) लग्न में नीच-शत्रुक्षेत्री या अस्तंगत मंगल हो तो मृत्यु का भय होता है।

(४) यदि लग्न में नीचादिगत होकर बुध बैठा हो तो मित्र एवं पुत्रों पर संकट आता है ॥४०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उच्चादिगतगुरु-शुक्र-चन्द्रयुतिफलम्

स्वोच्चस्थितो देवगुरुर्भृगुर्वा चन्द्रेण युक्तो यदि लग्नसंस्थः ।
प्रीतिर्भवेदेव जनात्समस्तात् पक्षेण लाभश्च चतुष्पदानाम् ।। ४१ ।।

यदि चन्द्रमा के साथ उच्चराशि में देवगुरु बृहस्पति तथा दैत्यपूज्य शुक्र दोनों ही बैठे हों तो जातक को सब लोगों से आत्मीयता प्राप्त होती है तथा प्रश्नकुण्डली में यह योग होने पर पन्द्रह दिनों में पशुलाभ होता है । यदि इस योग में जन्म हुआ हो तो जन्म के कुछ ही दिनों बाद उस परिवार की लोकप्रियता बढ़ती है तथा पशु आदि का लाभ होता है ।

पशुलाभयोगः

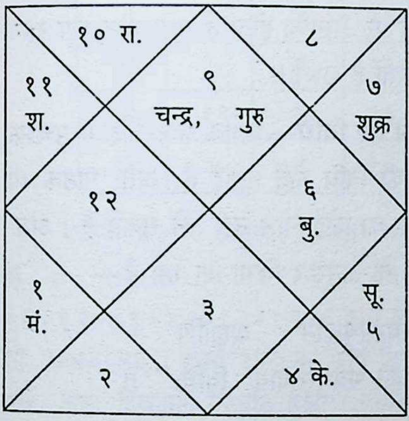

लोकप्रिययोगः

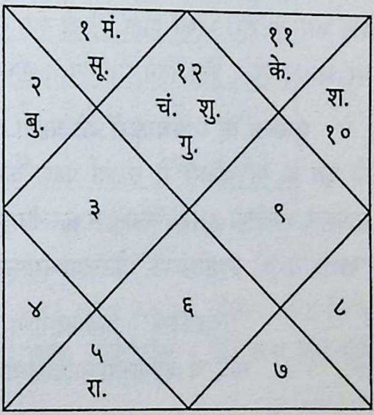

दूतोक्तप्रथमवर्णफलम्

दूतोक्तादिमवाक्यस्य वर्णसंख्यावशादपि ।
कथ्यते लक्षणं किञ्चित् सम्प्रदायान्तरोदितम् ।। ४२ ।।

दूत या पृच्छक के मुख से जो प्रथमाक्षर निकला उसकी वर्णसंख्या के आधार पर अन्य सम्प्रदाय के ग्रन्थों में कहे गये लक्षणों को भी यहाँ बताया जा रहा है ।।४२।।

केरल में एक प्रश्नाक्षर सम्प्रदाय है जो मात्र प्रश्न के स्वर व्यञ्जनों के आधार पर ही प्रश्नों का समाधान प्राचीन काल से आज तक करता आ रहा है । उसमें बहुत-से ग्रंथ हैं जो कि संस्कृत भाषा में लिखे गये हैं । उन्हीं की ओर ग्रन्थकार ने इंगित किया है ।

पञ्चघ्नेऽष्टविभाजिते अक्षरगणोपरिफलकथनम्

पञ्चघ्नेऽष्टविभाजितेऽक्षरगणे दूतोदिते शिष्यते
तत्रैकं यदि देवराट्शिखिमुखा दिक्पा यदि द्व्यादिकम् ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दूतोक्तोऽर्णगणे त्रिभिः खलु हृते शिष्टैकता चेद्गदः,
साध्यो नूनमसाध्य एव युगले शिष्टे त्रिके दुःशम ।। ४३।।

दूत या पृच्छक के मत से जो प्रथम वाक्य या पुष्पादि का नाम प्रथम निकला हो उसमें जितनी अक्षरसंख्या हो उसे पाँच से गुणा करें तथा गुणनफल में (product) में आठ का भाग दें। यदि एक शेष बचे तो रोग का कारण पूर्व दिशा के स्वामी इन्द्र, यदि दो शेष बचे तो अग्निकोण के स्वामी अग्नि के कारण रोग हुआ है, तीन शेष पर यम, चार शेष पर निर्ऋति, पाँचे शेष पर वरुण, छह शेष पर वायु , सात शेष पर कुबेर तथा आठ शेष पर भगवान् शिव रोगकारक होते हैं।

अब दूसरा प्रकार भी कहते हैं—दूतोक्त वर्णसंख्या में तीन का भाग दें, यदि एक शेष बचे तो रोग साध्य होता है, दो शेष बचने पर असाध्य होता है तथा तीन शेष रहने पर अर्थात् शून्य शेष रहने पर रोग दु:साध्य होता है ।।४३।।

पृच्छक के वाक्याक्षरों को ग्रहण करने की विधि—श्लोक ४२-४३ में पृच्छक या दूत के वाक्याक्षरों से संख्या ग्रहण करने की विधि नहीं बताई है, अत: पाठक या सामान्य ज्योतिषी इसके बिना इस केरलीय विद्या का कोई लाभ नहीं ले सकते हैं। अत: उक्त विधि का स्पष्टीकरण "केरलप्रश्नसङ्ग्रह" के अनुसार किया जा रहा है—

"पृच्छकस्य वाक्याक्षराणि स्वरसंयुतानि ग्राह्याणि ।
यदि च प्रश्नाक्षराण्यधिकान्यस्पष्टानि भवेयुस्तदायं विधि:" ।।

अर्थात् जब पृच्छक या दूत के वाक्य के अक्षर अधिक हों या अस्पष्ट हों तब निम्न विधि अपनानी चाहिए। प्रश्नाक्षरों को स्वरों के सहित ही ग्रहण करना चाहिए ।

यदि प्राश्निक ब्राह्मण हो तो उसके मुख से पुष्प का नाम, यदि क्षत्रिय हो तो किसी नदी का नाम, वैश्य हो तो किसी देवता का नाम तथा शूद्र होने पर किसी फल का नाम लेने को कहना चाहिए। उन्हें सावधानी से कागज पर लिख लेना चाहिए। फिर स्वर तथा व्यञ्जनों को अलग-अलग कर लिख लें, फिर आगे दिये गये चक्र से उन स्वरों तथा व्यञ्जनों की अंकसंख्या के अनुसार पिण्ड बना लेना चाहिए। कुछ दैवज्ञ स्वर तथा व्यंजनों को अलग कर उनकी संख्या लेते हैं।

जैसे किसी ने "कमल" के पुष्प का नाम लिया। इसे कागज पर लिख लिया और इसके स्वरों तथा व्यंजनों को पृथक्-पृथक् किया तो क्+अ+म्+अ+ल+अ ये वर्ण प्राप्त हुए। इनसे आगे के चक्रानुसार अंक ग्रहण करें। चक्र अग्रलिखित है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

केरलशास्त्रमत से वर्णध्रुवाङ्क चक्र

स्वर	अंक	व्यंजन	अंक	व्यंजन	अंक	व्यंजन	अंक
अ	१२	क्	१३	ठ्	१३	ब्	२६
आ	२१	ख्	११	ड्	२२	भ्	२७
इ	११	ग्	२१	ढ्	३५	म्	८६
ई	१८	घ्	३०	ण्	४५	य्	१६
उ	१५	ङ्	१०	त्	१४	र्	१३
ऊ	२२	च्	१५	थ्	१८	ल्	१३
ए	१८	छ्	२१	द्	१७	व्	३५
ऐ	३२	ज्	२३	ध्	१३	श्	२६
ओ	२५	झ्	२६	न्	३५	ष्	३५
औ	१९	ञ्	२६	प्	२८	स्	३५
अं.	२५	ट्	१०	फ्	१८	ह्	१२

श्लोक ४३ के अनुसार 'कमल' के वर्णों में स्वर तथा व्यंजन को अलग करने पर क् = १३+अ = १२+म् =८६+अ=१२+ल् =१३+अ=१२ इस प्रकार १३+१२+८६+१२+१३+१२ = कुल संख्या १४८ हुई। अब इसे पाँच से गुणा किया तो ७४० हुए। इनमें आठ का भाग दिया तो लब्धि (भजनफल) ९२ तथा शेष चार बचें, अतः दिक्पाल निर्ऋति हुआ।

श्लोक ४३ के शेषानुसार दिक्पाल चक्र

१	२	३	४	५	६	७	०	शेषांक
इन्द्र	अग्नि	यम	निर्ऋति	वरुण	वायु	कुबेर	ईशान	रोगकारक दिक्पाल

दिक्पालानां फलम्

व्याधीनां शमनं करोति बलभिद्देवस्य पूजादिकै-
रग्निर्होमविधानतोऽथ पितृपूजाभिः पितृणां पतिः।

(१) इन्द्रदेव देवपूजा-बलि इत्यादि से प्रसन्न होते हैं अतः उनके द्वारा उत्पन्न रोग में यहीं उपाय समीचीन है।

(२) अग्निदेव होम-हवन से प्रसन्न होकर रोग निवारण करते हैं।

(३) पितरों के प्रति यमराज पितृपूजा, स्वधाकार, पिण्डदान तथा श्राद्धकर्म से प्रसन्न होते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रक्षः सूचयति व्यथार्दिततनृणां रुग्ब्रह्मरक्षो मुखा -
वेशेनेति विधानमस्य शमनायाधीयतां धीमता।। ४४।।

(४) निर्ऋति ब्रह्मराक्षसादि के आवेश से पीड़ित लोगों की सूचना देता है। इसकी शान्ति के लिए बुद्धिमान् व्यक्ति को अध्याय १५ में बताये गये उपाय करना चाहिए ।।४४।।

तैलाभिषेकाच्च घृताभिषेकाद्देवे सधारादपि तर्पणाद्वा।
पाशी विधत्ते गदशान्तिमेषां वक्त्यप्यभावार्तिकमार्तिहेतुम् ।। ४५।।

पाशी (पाश धारण करने वाले वरुणदेव) नित्य कर्मों के लोप होने पर व्यक्ति को रुग्ण बनाते हैं। वे तैलाभिषेक, घृताभिषेक या (शिवलिङ्ग पर) जलाभिषेक से सन्तुष्ट होते हैं, तब रोग का शमन करते हैं ।।४५।।

वरुण द्वारा जलोदरादि रोग उत्पन्न होते हैं।

मालापटीरागरुगुल्गुलूत्थधूपप्रदानाभरणार्पणाद्यैः ।
देवप्रसादेन गदोपशान्तिं करोति नृणां खलु मातरिश्वा।। ४६।।

मातरिश्वा (वायुदेव) माला अर्पित करने, चन्दन चर्चित करने, अगुरु, गुल्गुलु (गुग्गुलु) की धूप देने, आभरणादि समर्पित करने से प्रसन्न होकर रोगमुक्त करता है ।।४६।।

वायु वातरोगों को उत्पन्न करता है।

देवद्विजार्चनविधिं जनिभे जनानां
रुक्शान्तये विहितवानलकाधिनाथः ।
गीतेन नृत्तकरणेन च भारतेन
त्रय्या च देवपरितोषणमप्युमेशः ।। ४७।।

उत्तर दिशा के स्वामी कुबेर (अलकाधिनाथ) विप्रों-देवताओं की पूजा करने से प्रसन्न होते हैं तथा रोग शान्त कर देते हैं। यह सब कार्य रोगी के जन्मदिवस (नक्षत्र) पर करना चाहिए। ईशान दिगीश उमेश (शिव) गीत, नृत्य, वेदत्रयी का पाठ (रुद्राष्टाध्यायी का पाठ, कत्थकलि, भरतनाट्यम् आदि शास्त्रीय नृत्यों) तथा महाभारत आदि के कथन-श्रवण आदि से प्रसन्न होकर रोग शान्त करते हैं ।।४७।।

प्रष्टुः प्रदत्तताम्बूलसंख्यया फलकथनम्

प्रष्ट्रा वितीर्णताम्बूलैः शुभाशुभमशेषतः ।
वाच्यं द्वादशभावोत्थं तत्प्रकारोऽथ लिख्यते ।। ४८।।

पृच्छक से ताम्बूल मँगवाना चाहिए या पृच्छक को स्वयं दैवज्ञ के पास ताम्बूल लेकर जाना चाहिए। ताम्बूलों की संख्या बारह से अधिक हों। इस प्रकार बिना गिने हुए

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पृच्छक ताम्बूलों को ले जायें और ज्योतिषी को श्रद्धापूर्वक समर्पित करें। ज्योतिषी को प्राश्निक द्वारा प्रदत्त ताम्बूलों के द्वारा लग्नादि द्वादश भावों का फल कहना चाहिए। उसकी पद्धति अब लिखी जाती है ॥४८॥

ताम्बूलैः प्रष्टृदत्तैरपि फलमखिलं तस्य वक्तव्यमेवं
प्रारभ्योपर्यधस्ताद् गणनमिह वपुः पूर्वमह्नोर्द्वयोः स्यात् ।
म्लानिक्षत्यादुपेतं तदयुतमपि यद्भावसम्बन्धि पत्रं
तस्य व्याध्याद्यनिष्टं भवति शुभमपि प्राप्तिसंवर्धनाद्यम् ॥ ४९॥

पूर्वाह्न (मध्याह्न से पूर्व =A.M.) में यदि प्रश्न पूछा जाये तब पृच्छक द्वारा दिये गये पत्तों को दैवज्ञ ऊपर से नीचे की ओर १-२-३-४-५-६-७-८-९-१०-११-१२ इस क्रम से गिनें। यदि संख्या अधिक हो तो पुनः १-२-३ इस प्रकार गिनें। ताम्बूल (पान के पत्ते) का यह क्रम लग्न, द्वितीय, तृतीय आदि भाव होंगे।

यदि समय अपराह्न का हो (मध्याह्न के बाद तथा अर्धरात्रि से पूर्व = P.M.) हो तो पान के पत्तों की गिनती नीचे से ऊपर की ओर करें और लग्नादि द्वादश भावों को निर्धारित करें। इनमें बारह पत्ते लिये जायें, जो पत्ता सड़ा-गला, टूटा-फटा, छेदवाला या मुरझाया हो उस भाव सम्बन्धी अशुभ फल होगा। इन भाँति प्राश्निक द्वारा समर्पित पानों के आधार पर शुभाशुभ फल कथन करना चाहिए। जिस भाव का पत्ता उत्तम होगा उस भाव के फल में वृद्धि होती है ॥४९॥

विशेष निर्देश—(१) पृच्छक द्वारा पान के पत्ते साबुत लेना चाहिए तथा एकदम से (Randomly) पत्ते अन्दाज से उठा लेना चाहिए और उन्हें ज्योतिषी को देना चाहिए। उन्हें देख-परख कर न लिया जायें।

(२) ज्योतिषी को पान के पत्ते अपने वाम हस्त में लेकर दाहिने से गिनना चाहिए।

(३) अब प्रश्न उठता है कि पान के पत्तों की गड्डी का ऊपर-नींचे क्या और कैसे माना जाये तो पानपत्ते का चिकना भाग ऊपरी भाग तथा नसों वाला उभरा भाग निचली सतह मानकर गणना प्रारंभ की जायें।

(४) मध्याह्न पूर्व गिनती ऊपर से नींचे की ओर तथा पश्चात् नींचे से ऊपर को करके द्वादश भाव निर्धारित करें।

(५) पत्तों की संख्या बारह हो चुकने पर शेष पत्तों को छोड़ देना ठीक रहता है।

केरल में इस पद्धति का प्रयोग ग्रामीण अंचलों में परंपरा से प्रचलित है।

ताम्बूलसंख्यावशात् ग्रहोदयकथनम्

ताम्बूलसंख्यां द्विगुणां शरघ्नां सैकां हरेत्सप्तभिरत्र शिष्टैः।
सूर्यादिकानामुदयोऽत्र कल्प्यो ग्रहोदयो यत्र स लग्नराशिः ॥ ५०॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अब पृच्छक जितने ताम्बूल (पानपत्ते) लाया था उनकी संख्या को पहले तो दुगुना करें, फिर उस दुगुने को पाँच गुना करें, फिर उसमें एक और जोड़ दें, जो संख्या आवे उसमें सात का भाग दें, जो शेष बचे उनसे सूर्यादि सात ग्रहों का उदय समझें। वह ग्रह प्रश्न समय पंचांग में जिस राशि में हो उसे ही प्रश्नलग्न मान लेना चाहिए ।।५०।।

मान लीजिए—पृच्छक द्वारा लाये गये पानों की संख्या सोलह है । सालह को दुगुना किया तो ३२ हुए, फिर इन्हें पाँच गुना किया तो १६० हुए, इनमें एक जोड़ दिया तो १६१ हुए । इसमें सात का भाग दिया तो शेष शून्य बचा अतः शनि का उदय हुआ । ताम्बूललग्न में शनि बैठा है जिसका फल मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट है । शनि मिथुन में है तो ताम्बूल लग्न मिथुन हुआ ।

इस पद्धति से निकाले गये लग्न को ताम्बूललग्न कहना चाहिए । इस तरह यह प्रश्न कुण्डली में प्रश्नलग्न के अतिरिक्त होगा । जिस राशि में यह हो उसमें ताम्बूल लग्न लिख दें ।

ताम्बूललग्ने ग्रहोदयफलम्

दुःखाय भानुरुदितः सुखकृच्छशाङ्कः
प्रष्टुः कुजः कलहकृद्धनदौ ज्ञजीवौ ।
शुक्रोऽखिलाभिमतकृन्मरणाय मन्दो
लग्नादिभावविहगैश्च वदेत् फलानि ।। ५१।।

ताम्बूल लग्न में सूर्य का उदय दुःखप्रद, चन्द्र का उदय सुखप्रद, मंगल का उदय कलहकारक, बुध तथा गुरु का उदय धनलाभकारक होता है । शुक्र यदि ताम्बूल लग्न में उदित हो तो सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करता है । शनि मृत्युप्रद होता है । इसी प्रकार लग्नादि भावों में (पानपत्तों के अनुसार) जो ग्रह पंचोम में उदित (स्थित) हों उनसे उन भावों का फल भी कहना चाहिए ।।५१।।

ताम्बूल लग्न में ग्रहोदय का फल

सूर्य	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	**ग्रहोदय**
दुःख	सुख	कलह	धन	धन	सर्वसुख	मृत्यु	**फल**

वाहनप्रश्नः

गजलाभो ममेदानीं किमु स्यादिति कश्चन ।
प्रभुः पृच्छति चेत्तस्मै वाच्यं लक्षणमुच्यते।। ५२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि कोई राजा यह प्रश्न पूछे कि मुझे हाथी प्राप्त होगा कि नहीं तो अग्रिम श्लोकों में वर्णित लक्षणों (योगों) से उत्तर देना चाहिए, उन्हें कहा जा रहा है ।।५२।।

वक्तव्य—आजकल समय के परिवर्तन के कारण दैवज्ञ से यह प्रश्न कोई नहीं पूछेगा, क्योंकि अब राजा लोग नहीं हैं, जनतंत्र है । अस्तु, अग्रिम वर्णित लक्षणों से इस प्रश्न के स्थानापन्न निम्न प्रश्नों का उत्तर दिया जायें—

(१) जब कोई सांसद, विधायक या अन्य नेता यह पूछे कि मुझे लालबत्ती मिलेगी कि नहीं ? तब इस प्रश्न का उत्तर आगे बताये गये लक्षणों से ही दें; क्योंकि **प्राचीन काल में हाथी की सवारी प्रतिष्ठा की सूचक थी, आज लालबत्ती को प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता है ।**

(२) चार पहिये वाले सुविधायुक्त वाहन की प्राप्ति का प्रश्न हो तो भी इसी प्रकार से उत्तर देना चाहिए ।

(३) यदि कोई किसान गाय-भैंसों के लिए प्रश्न करे तो उसे भी इसी के अनुसार विचारपूर्वक उत्तर दें ।

प्रश्नकुण्डल्यां वाहनप्राप्तियोगाः

लग्नद्यूनतपस्सुतेषु धिषणः पाथोनराश्यंशगः
प्रश्ने कुञ्जरलाभकृन्नरपतेस्तत्रायनाशो यदि ।
नाथः संश्चतुरङ्घ्रिभस्य नियतं केन्द्रत्रिकोणाश्रितः
शीघ्रं तत्खलु केन्द्रगौ यदि तदा कर्मेशभाग्याधिपौ ।। ५३।।

यदि प्रश्नकुण्डली में लग्न, द्यून (सप्तम), तप (नवम), सुत (पञ्चम) भावों में गुरु कन्या राशि या कन्या के नवांश का होकर बैठा हो तो पृच्छक या सम्बन्धित को गजलाभ (सुविधासम्पन्न चौपहिया वाहन) प्राप्त होगा ।

यदि उपर्युक्त योग में लाभस्थान का स्वामी चतुष्पद राशि का स्वामी हो अर्थात् लाभस्थान में चतुष्पद राशि हो तथा वह केन्द्र या त्रिकोण में बैठा हो तो सुनिश्चित रूप से उच्च वाहन की प्राप्ति होती है ।

यदि दशमेश तथा नवमेश केन्द्रगत हों तो भी वाहन लाभ शीघ्र ही होता है ।।५३।।
चतुष्पद राशियाँ वाहन प्रश्न में चार पहिया वाहन की प्रतीक होती हैं ।

गुलिकवशाल्लक्षणकथनम्

पृच्छायां गुलिकं पूर्वं सम्यग्विस्पष्टमानयेत् ।
तत्कालजान् ग्रहांश्चान्यान् पुनर्लक्षणमादिशेत् ।। ५४।।

लक्षणों (ग्रहयोगों) को कहने के पूर्व गुलिक सहित सभी ग्रहों को स्पष्ट कर उनके राश्यंशादि लिख लेना चाहिए और इसके अनन्तर फलकथन करें ।।५४।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्येन्द्वोर्गुलिकेन युतिफलम्

भानौ मान्दियुतेक्षिते निजगृहे कस्यापि पुंसो रुजा,
कोपो वा नृपतेस्तदीयपुरुषस्यान्यायतो वागमः ।
शीतांशौ कलहो भवेदबलयोः स्त्रीहेतुकः सोऽथवा
यः कश्चित् कलहोऽथवा पुनरिह श्रूयेत दूरादपि ।। ५५।।

यदि सूर्य गुलिक से युत या दृष्ट हो तो घर में कोई सदस्य रोगी होता है । अथवा शासक पक्ष के कोप से कष्ट होता है । शासन के किसी आदेश के कारण परेशानी आती है । मुकदमे का फैसला विरोध में जाता है ।

यदि गुलिक चन्द्र से युत-दृष्ट हो तो घर की स्त्रियों में परस्पर कलह होता है या स्त्रियों के कारण अन्यों से झगड़ा हो जाता है । अथवा पृच्छक अन्यों के घर के कलह से परेशान रहता है । उसे दूर से कलह की ध्वनि सुनाई पड़ती है ।।५५।।

गुलिकेन भौमयुतिबुधयुतिफलं वा

भूपुत्रे कलहो भवेत्परिसरे श्वद्वीपिनोर्नायकै-
रन्योऽन्ये यदि वा शवोपनयनं यद्वाथ मांसागमः ।
शीतांशोस्तनये तु नूतनघटानीतिः प्रधानागमो;
यद्वा नूतनलौहजाद्युपगमो वा विग्रहः पुंस्त्रियोः ।। ५६।।

यदि मंगल के साथ गुलिक की युति हो तो पृच्छक के निवास के समीप कुत्तों में, चीतों में परस्पर लड़ाई होती है या कुत्तों तथा चीतों के मालिकों में आपस में लड़ाई होती है । या कुत्ते-कुत्ते तथा चीते-चीते ही आपस में लड़ते हैं । पड़ोस में कोई शव लाया जाता है या मांस लाया जाता है ।

यदि बुध गुलिक के साथ युक्त या दृष्ट हो तो घर में नया घड़ा, पानी की टंकी, कलश या कण्टेनर आदि आता है । या किसी विशिष्ट व्यक्ति (V. I. P.) का आगमन होता है । अथवा घर में नये लोह से बनी वस्तुएँ आती हैं अथवा दम्पत्ति आपस में लड़ते-झगड़ते हैं ।।५६।।

कुत्तों के पीछे लड़ाई होना तो एक सामान्य बात है, क्योंकि आज भी लोगों में कुत्ता पालने का शौक जोरों पर है । परन्तु इस श्लोक में एक अन्य भाव भी निहित है कि यह लड़ाई दोनों पक्षों के गुर्गों या गुण्डों के बीच भी हो सकती है । आजकल माफिया गिरोहों में इस प्रकार के झगड़े होते ही रहते हैं, जिनकी चपेट में आकर पड़ोसियों तथा राहगीरों को भी दुष्परिणाम झेलना पड़ता है । मंगल शस्त्रधारियों का कारण है अत: उसके कारण यह सब भी हो सकता है ।

गुलिकेन गुरुयुतिफलम्

जीवे भूमिरुहः पतेद्यदि चरे भग्नः समूलं स्थिरे
मध्ये यद्युभये तदीयविटपस्तत्स्याज्झषे वा हये ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आयानां विमनो द्विजस्य यदि वा यद्वात्र पक्वागमो,
यद्वापन्निजपूर्वहेतुरथवा तषां नु शेषक्रिया ।। ५७।।

यदि चरराशि में बैठा गुरु गुलिक से युत या दृष्ट हो तो कोई वृक्ष टूट जाता है और भूमि पर गिर जाता है । यदि स्थिर राशि में गुलिक से युत या दृष्ट गुरु हो तो वृक्ष जड़ से उखड़ कर गिर पड़ता है ।

यदि गुरु द्विस्वभाव राशियों में से धनु या मीन में स्थित होकर गुलिक से युत/दृष्ट हो तो वृक्षों के झुण्ड में बीच वाला पेड़ गिरता है अथवा कोई पेड़ अपने मध्य भाग से टूट जाता है और उसका ऊपरी आधा हिस्सा धराशायी हो जाता है, जबकि शेष आधा भाग जमीन में ही गड़ा रहता है । अथवा इस योग में किसी खिन्न मन वाले ब्राह्मण का आगमन होता है । अथवा पक्वान्न खाद्य पदार्थ, मिठाइयाँ, फल आदि आते हैं । अथवा अपने पूर्वजों के कारण कोई आपत्ति या समस्या उत्पन्न हो जाती है । अथवा वृद्धजनों में किसी का और्ध्वदैहिक संस्कार (अन्तिम क्रिया) सम्पन्न होती है ।।५७।।

गुलिकेन शनिशुक्रराहूणां युतिफलम्

शुक्रे छेदनमाखुनाथ भविता वस्त्रस्य पात्रक्षति-
र्दध्नो वा पयसोऽथवोपनयनं विप्रागमोन्यायतः ।
गृह्णीयात्पुनराखुरोतुमथवा पादायुधं वाग्रतो
मन्दे कश्चन दीक्षितो गृहमुपेत्याथो रुषा यास्यति ।। ५८।।
चण्डालस्य मृतिः स्थले तु निजके तद्विग्रहो वाऽऽयस-
द्रव्याणामथवा हतिः पुनरहौ श्वव्याघ्रयोर्विग्रहः ।
यद्वा पन्नगदंशनं फणियुगानीतिश्च तत्राथवा
दुग्धस्योपनयो वदेदिति सुधीः केतोः फलं राहुवत् ।। ५९।।

यदि शुक्र गुलिक से युत या दृष्ट हो तो मूषकों द्वारा कपड़े में छेद कर दिया जाता है । दही का अथवा दूध का पात्र फूट जाना या फैल जाना अथवा दूध-दही आते-जाते दिखते हैं और कोई पात्र टूट-फूट जाता है । अचानक कोई ब्राह्मण आता है अथवा आखु (चूहा) या औत (बिल्ली) का सामने से निकलना होता है ।

यदि शनि गुलिक से युत-दृष्ट हो तो कोई दीक्षित पुरुष (साधु-संन्यासी-भिक्षु-वैरागी-तान्त्रिक आदि) प्राश्निक के घर आता है अथवा वह दीक्षित पुरुष या फिर अन्य कोई व्यक्ति असन्तुष्ट होकर चला जाता है । पृच्छक के पड़ोस में किसी चण्डाल आदि की मृत्यु हो जाती है अथवा चाण्डालों में लड़ाई होती है । अथवा लोहे से निर्मित वस्तुओं की चोरी होती है ।

यदि राहु के साथ गुलिक की युति या दृष्टि हो तो कुत्तों एवं बाघों की लड़ाई होती है । किसी को साँप काट लेता है या मार्ग में सर्पों की जोड़ी दिखायी पड़ती है । कहीं से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दूधू का आना या ले जाना दिखायी पड़ता है । यह सब बातें विद्वान् दैवज्ञ को कहना चाहिए ।

केतु का फल भी राहु की भाँति ही होता है ।।५९।।

आजकल चीते कहीं भी लड़ते हुए नहीं मिलेंगे अतः कुत्ते या बिल्लियों की लड़ाई या दो मनुष्यों की लड़ाई ही दावपेंचों के साथ होती दिखेगी ।

पितुरन्त्येष्टिप्रश्नः

एष शेषक्रियां कुर्यात् किमु पित्रोर्न वेति यः ।
प्रश्नोऽथास्योत्तरं वक्तुं लक्षणं किमपीर्यते ।। ६० ।।

जब कोई पृच्छक यह पूछे कि मैं अपने माता-पिता का अन्तिम संस्कार करूँगा या नहीं तब ऐसे प्रश्नों का उत्तर अग्रलिखित लक्षणों (ग्रहयोगों) से देना चाहिए ।।६०।।

स्वांशे राशौ चरे वा स्थितिरिननवमाधीशयोरेनयोश्चेद्
दृष्टी रिष्फे स्थितिर्वा यदि तदुपगतांशर्क्षयोः केन्द्रगत्वम् ।
सम्यग्दीक्षा पितुः स्याद् यदि कथितगुणेष्वेषु नैकोऽपि दीक्षा
नैव स्यात्सम्भवेच्चेदपि बहुविपदः सम्भवेयुर्गदाद्याः ।। ६१ ।।

निम्नलिखित तीनों में से कोई भी योग होने पर पृच्छक अपने पिता की दीक्षा (अन्तिम संस्कार) करता है—

(१) यदि इन (सूर्य) तथा नवमेश स्वनवांश, स्वराशि, चरराशि या चरनवांश में स्थित हों; अथवा

(२) सूर्य तथा नवमेश इन दोनों की दृष्टि या स्थिति द्वादश भाव पर हों ।

(३) सूर्य तथा नवमेश का केन्द्र में होना भी पिता की अन्त्येष्टि पुत्र द्वारा कराता है ।

यदि उपरिलिखित योगों में से एक भी न हो तो जातक अपने पिता का अन्तिम संस्कार नहीं कर पाता है । यदि करता भी है तो अनेक तरह की विपत्तियाँ तथा बाधाएँ आती हैं । चिता में अग्निसंस्कार तथा अन्त्येष्टि श्राद्ध में विघ्न उपस्थित होते हैं । जातक रोगादि से पीड़ित हो जाता है ।।६१।।

दीक्षा—दक्षिण भारत में अन्तिम संस्कार को भी दीक्षा कहा जाता है । माता-पिता या वृद्धजन श्री भीष्मपितामह की तरह अपने उत्तराधिकारियों को कुछ उपदेश देते हैं, कुछ परंपरा सौंपते हैं अतः अंतिम संस्कार को दीक्षा कहा जाता है । दूसरी बात यह है कि मृत्यु के पूर्व आश्रमों एवं वर्णों के जो आवश्यक संस्कार होते हैं उनमें जो छूट गये होते हैं उन्हें प्रायश्चित्तपूर्वक मृत्यु से पूर्व कराने का विधान है । इसके कारण भी अन्तिम समय में मृतक के निमित्त किये गये कर्म दीक्षा नाम से सम्बोधित किये जाते हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

धर्मेऽस्ति पापान्वयवीक्षणं चेद् दीक्षा विहन्येत शुभाऽसतोश्चेत् ।
अग्रे शुभश्चेद् विहतिस्तु मध्ये पृष्ठे स चेत्तां परतो लभेत ।। ६२।।

यदि धर्मभाव में पाप ग्रह बैठा हो तथा उस स्थान को पाप ग्रह देख रहे हों तो वे दीक्षा को नष्ट कर देते हैं ।

यदि नवम भाव में शुभ एवं पाप दोनों प्रकार के ग्रहों की युति-दृष्टि हों तो दीक्षा में विघ्न उपस्थित होते हैं ।

यदि शुभ ग्रह आगे हों तथा पाप ग्रह उनके पीछे हों तो अन्तिम संस्कार में पहले तो विघ्न आते हैं लेकिन बाद में वह कर्म आसानी से सम्पन्न हो जाता है ।।६२।।

जब नवम भाव में शुभ तथा पाप ग्रह समान अंश में हों तो अच्छे तथा बुरे फल साथ-साथ चलते हैं परन्तु जब शुभ ग्रह आगे अधिक अंशों पर तथा पाप ग्रह पीछे कम अंशों पर होते हैं तब पहले विघ्न आते हैं बाद में शान्त हो जाते हैं । परन्तु यदि पाप ग्रह आगे तथा शुभ ग्रह पीछे कम अंशों पर हों तो अंतिम संस्कार पहले तो शुरू हो जायेगा लेकिन विघ्नों के कारण पूरा न हो सकेगा ।

मातृसंस्कारकथनम्

मातृदीक्षाविचारे तु धर्मधर्मेशभास्वताम् ।
प्रोक्तस्थानेष्विह ग्राह्याश्चतुर्थैतत्पतीन्दवः ।। ६३।।

पिता की अन्त्येष्टि का विचार करते समय नवम भाव, नवम का स्वामी तथा नवम के कारक सूर्य का विचार जैसे पिता के लिए करते हैं ठीक वैसे ही चतुर्थ भाव, चतुर्थेश तथा चतुर्थ के कारण चन्द्रमा के अनुसार मातृदीक्षा का विचार करें ।

जातो यः पितृजन्मरन्ध्रभवने यल्लग्नगस्तत्पतिः
कुर्यातां पितृकर्म तौ पितृमृतीशोडुत्रये यः पुनः ।
जातः सात्मजपौत्रयुक्च विधिना कुर्याच्च दीक्षां पितु-
र्जातो व्योम्नि पितुस्समस्तदधिपे लग्नस्थिते चाधिकः ।। ६४।।

(क) जिस पुत्र का जन्म पिता की जन्मराशि (चन्द्र) या लग्न से आठवीं राशि या लग्न में हुआ हो वह पुत्र अपने पिता का अन्तिम संस्कार करता है ।

(ख) अथवा पिता की जन्मकालीन चन्द्रराशि से आठवीं राशि का स्वामी पुत्र के जन्मलग्न में बैठा हो तो भी वह पुत्र अपने पिता की अन्त्येष्टि स्वयं करता है ।

(ग) अथवा जिस पुत्र का जन्म पिता के जन्मचन्द्र या जन्मलग्न की अष्टम राशि के उडुत्रय में (पराशरोक्त तीन नक्षत्रों में) हुआ हो तो वह पुत्र अपने पुत्र-पौत्रादि के साथ पिता की अन्त्येष्टि करता है ।

(घ) जिस पुत्र का जन्म पिता के जन्मकालीन चन्द्र की दशमी लग्नराशि में होता है वह पुत्र हर बात में अपने पिता के समान होता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(ङ) पिता की कुण्डली का दशमेश यदि पुत्र के लग्न में स्थित हो तो वह पुत्र अपने पिता की अपेक्षा प्रत्येक क्षेत्र में अधिक उन्नति करता है ॥६४॥

पिता की जन्मराशि से पुत्र के अन्त्येष्टिकर्ता होने का चक्र

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पिता की जन्म राशि या लग्न
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	यदि पुत्र की राशियाँ, लग्न इनमें से कोई है तो पुत्र स्वयं अन्त्येष्टि करेगा ।

अन्त्येष्टिसूचक द्वितीय चक्र

पिता की जन्मराशि	यदि पुत्र का जन्म इन नक्षत्र-त्रितय में हो तो वह पिता की दीक्षा करता है ।		
१	मृग.	चित्रा	धनिष्ठा
२	पुन.	विशाखा	पू.भा.
३	पुष्य	अनु.	उ.भा.
४	पुष्य	अनु.	उ.भा.
५	पुन.	विशाखा	पू.भा.
६	मृग.	चित्रा	धनिष्ठा
७	पू.फा.	पू.भा.	भरणी
८	श्लेषा	ज्येष्ठा	रेवती
९	रोहिणी	हस्त	श्रवण
१०	कृत्तिका	उ.फा.	उ.षा.
११	श्लेषा	ज्येष्ठा	भरणी
१२	पू.फा.	पू.भा.	भरणी

पिता के समान पुत्र का योग

१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	पिता की जन्मराशि
मकर	कुंभ	मीन	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	पुत्र की जन्मराशि या लग्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पिता से अधिक उन्नतिशील होने का योग

मे.	वृ.	मि.	कर्क	सिं.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कु.	मी.	पिता का लग्न या जन्म राशि
शनि	शनि	गुरु	मंगल	शुक्र	बुध	चन्द्र	सूर्य	बुध	शुक्र	मंगल	गुरु	पुत्र के लग्न में बैठने वाला दशमेश

पितुरनुयायीयोगाः

यस्य स्यात्पितृजन्मतोऽत्र नवमो लाभो द्वितीयोऽथवा
चन्द्राधिष्ठितराशिरेष सततं तातानुवर्ती भवेत् ।
यस्य स्यत्पितृजन्मभं स्वजनिभाल्लाभे त्रिकोणेऽथवा
लग्नेशाश्रितभाल्लभेत सकलं वित्तं स पित्रार्जितम् ।। ६५ ।।

जिस पुत्र की जन्मराशि अपने पिता की चन्द्रकुण्डली की नवम, एकादश या द्वितीय राशि हो तो वह पुत्र अपने पिता की बात सदैव मानता है तथा पिता के मरणोपरान्त पिता के पदचिह्नों पर चलता है ।

जिस पिता की जन्म चन्द्रराशि अपने पुत्र की जन्मराशि से एकादश या त्रिकोण में हो तो वह पिता द्वारा अर्जित सम्पूर्ण सम्पत्ति (चल-अचल) को प्राप्त करता है ।

मान लो—पुत्र की जन्मराशि तुला है तो तुला से नवम मिथुन हुई, द्वितीय वृश्चिक तथा एकादश सिंह हुई; अब या।दे पिता की जन्मराशि मिथुन, वृश्चिक या सिंह है तो पुत्र पिता का आज्ञाकारी होगा ।

त्रिकोण तथा एकादश राशिसूचक चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	जन्मराशि	
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	एकादश राशि	
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	द्वितीय राशि	
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	नवम	त्रिकोण
५	६	७	८	९	१०	११	१२					पंचम	त्रिकोण

इसी प्रकार यदि पिता की जन्मराशि पुत्र के लग्नेश के द्वारा अधिष्ठित राशि से लाभ या त्रिकोण की राशि हो तो भी वह पुत्र पिता की सम्पूर्ण सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता है ।।६५।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अन्ययोगाः

लग्नेन्दुभ्यां पितृगृहपतिः स्वस्वलग्नायगश्चेत्
प्रीतिं कुर्यात् पितुरिह तु सुश्रूषया दीक्षया च ।
लग्नाधीशो नवमपतिना भानुना वा समेतो
भाग्यस्थो वा यदि जनकवद्वृत्तिविद्याद्युपेतः ।। ६६।।

पितृस्नेही पुत्र—यदि कुण्डली में लग्न से तथा चन्द्रमा से पितृगृह का स्वामी (नवमेश) ग्यारहवें भाव में हो (लग्न तथा चन्द्र दोनों कुण्डलियों में) तो वह पुत्र पिता के जीवन काल में उसकी सुश्रूषा करता है तथा मरणोपरान्त दीक्षा (श्राद्ध) से उसे प्रसन्न करता है ।

(क) यदि लग्नेश नवमेश से अथवा नवम के कारण सूर्य से युत हो । अथवा (ख) लग्नेश नवम भाव में स्थित हो तो जातक अपने पिता के समान व्यवसाय तथा अन्य कार्य करता है तथा उसी के समान विद्या तथा गुण प्राप्त करता है । यहाँ लग्नेश की दृष्टि यदि नवम भाव पर हो तब भी यही फल होगा ।।६६।।

पितुर्दुःख-ऋणग्रस्ततादियोगाः

जातो यः पितृजन्मरिःफपतिनक्षत्रेषु कुर्यात् पितु-
र्दुःखं दूरगमादिभिः स सततं वैरी भवेद्वैरिभे ।
यद्रिष्फाधिपसंयुतः खलु पितुर्जन्माधिपो यस्य वा
रिष्फस्थः स च तावुभौ पुनर्ऋणं नूनं लभेतां पतिः ।। ६७।।

यदि पिता की जन्मचन्द्रकुण्डली एवं जन्मलग्नकुण्डली में जो द्वादशेश ग्रह है उसके जो नक्षत्र (विंशोत्तरी के अनुसार) हैं उनमें यदि पुत्र का जन्म हो तो ऐसा पुत्र पिता से दूर स्थान में रहता है तथा पिता के विचारों से विपरीत कार्य करता है जिसके कारण पिता को दुःख प्राप्त होता है ।

यदि पुत्र का जन्म पिता की जन्मराशि से षष्ठेश ग्रह के नक्षत्रों में हो तो उस पुत्र की पिता से सदैव शत्रुता रहती है । यदि पिता का जन्मराशीश पुत्र के व्ययेश के साथ हो तो उस पुत्र को अपने पिता का लिया हुआ ऋण प्राप्त होता है । इस योग में जन्मे पुत्र को पिता का ऋण चुकाना पड़ता है ।।६७।।

ग्रहों के नक्षत्रों का चक्र

सूर्य	चन्द्र	भौम	राहु	गुरु	शनि	बुध	केतु	शुक्र	ग्रह
कृ.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	आश्ले.	म.	पू.फा.	नक्षत्र विंशोत्तरी के अनुसार
उ. फा.	हस्त	चि.	स्वा.	विशा.	अनु.	ज्ये.	मूल	पू.षा.	
उ.षा.	श्रवण	धनि.	शत.	पू.भा.	उ.भा.	रेवती	अश्वि.	भरणी	

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनरपि पितृविषयकं किञ्चिल्लक्षणमुच्यते

भावश्चेन्नवमश्चरे तदधिपो वायं व्यये चाष्टमे
भानुर्वैवमिह स्थितिर्न सविधे तातस्य मृत्यौ भवेत् ।
मार्गे स्यान्मरणश्रुतिर्द्वितनुभे स्थानं स्थिरे सन्निधौ
सत्स्वमीक्षितसंयुते नवमभे नाथेऽस्य चार्के तथा ।। ६८।।

मृत्यु समय पुत्र पिता से दूर हो—निम्न ग्रहस्थितियों में पृच्छक मृत्यु के समय पिता के समीप नहीं होता है—

(क) यदि नवम में चर राशि हो तथा नवम भावेश भी चर राशि में बैठा हो । (ख) अथवा नवमेश बारहवें या आठवें भाव में बैठा हो अथवा (ग) सूर्य (पितृकारक) आठवें या बारहवें भाव में बैठा हो ।

यदि द्विस्वभाव राशि नवम भाव में हो तथा नवमेश भी द्विस्वभाव में बैठा हो तो मार्ग में पिता की मृत्यु का समाचार मिलता है ।

(१) यदि नवम भाव तथा नवमेश दोनों स्थिर राशि से युक्त हों ।

(२) नवमेश नवम को देखता हो या नवम भाव में बैठा हो ।

(३) नवमेश सूर्य हो (यह योग धनुलग्न में ही संभव है, अन्य लग्न में नहीं) । इन तीन योगों में पृच्छक या जातक अपने पिता की मृत्युशय्या पर सेवा करता है और मरणोपरान्त उसकी अन्त्येष्टि करता है ।।६८।।

गृहदोषप्रश्नः

कालेऽस्मिन् वासभूमेर्मे गृहदोषोऽस्ति वा न वा ।
इति प्रश्ने कृते वक्तुं लक्षणं किमपीर्यते ।। ६९।।

जब कोई पृच्छक दैवज्ञ के समीप आकर यह पूछे कि क्या इस समय मेरे आवास में कोई दोष है अथवा नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए गृहदोष सम्बन्धी कुछ लक्षण आगे लिखे जा रहे हैं ।।६९।।

भूमेर्लग्नज्ञानम्

अकला यदि नामादौ भूमेर्लग्नं तु मेषभम् ।
आङ्वा इचः पश्चादीलाः कर्कटोदयः ।। ७०।।
उट ऊणनाः पश्चादेतला एनवा अली ।
ऐप ओमलाः पश्चादोय औरना झषः ।। ७१।।

यदि भूमि या भवन का नाम अ-क इन अक्षरों से प्रारंभ हो तो आवास या भूमि की राशि मेष होगी । इसी तरह आ-ङ अक्षरों की वृष राशि होती है । इ-च इन दो अक्षरों से जिस भूमि-भवन का नाम प्रारंभ होगा उसकी राशि मिथुन होगी ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेषादि द्वादश राशियों के वर्णन

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	भूमि की राशि
अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	एॅ	ए	ऐ	ओ	ओ	औ	भूमि या आवास के नामाक्षर
क	ङ	च	ञ	ट	ण	त	न	प	म	य	र	
ख		छ		ठ		थ		फ				
ग		ज		ड		द		ब				
घ		झ		ढ		ध		भ				
ल	व	श	ष	ह								

प्रायः लोग भवन का कोई-न-कोई नाम रख लेते हैं; जैसे शर्मा सदन, वसुन्धरा निवास, शान्ति विला, अरुणा कुटीन, राम निवास, कृष्ण निवास, गुरु कृपा आदि अथवा कभी-कभी अमुक का बाड़ा, अमुक की हवेली के नाम से भी आवासों को पुकारा जाता है । उनके नाम के प्रथमाक्षर से राशि निश्चय करना चाहिए ।

विशेष—यहाँ जो नामाक्षर दिये हैं वे दक्षिण भारतीय भाषाओं के अनुसरण पर हैं अतः उत्तर भारतीय पाठकों को उन्हें समझने में भूल हो सकती है, अतः कुछ विशेष तथ्य ध्यान में रखें ।

(क) दक्षिण भारतीय भाषाओं में दो स्वर विशेष होते हैं । उनमें एॅ = ह्रस्व एॅ होता है जिनका उच्चारण एकदम में 'ए' का उच्चारण जितना हल्का होता है उतना किया जाता है । दूसरा बड़ा (दीर्घ) ए होता है जिसका उच्चारण दीर्घ होता है । जैसे जितेन्द्र या देवेन्द्र इन नामों में 'ते' तथा 'वे' अक्षरों में 'ए' का उच्चारण दीर्घ है । तीसरा 'ऐ' होता है जैसे कि इन्द्र के हाथी ''ऐरावत'' के प्रारंभ में । ये तीनों स्वर तुला, वृश्चिक, धनु में क्रमशः होते हैं ।

(ख) दाक्षिणात्य भाषाओं में तीन ओकार हैं—ओॅ-ओ-औ । ओॅ यह छोटा (ह्रस्व) ओॅ है, इससे प्रारंभ होने वाले बहुत-से शब्द तमिल, तेलुगु, मलयालम तथा कन्नड़ में विद्यमान हैं । ये तीनों अक्षर क्रमशः मकर, कुंभ, मीन राशियों में पड़ते हैं ।

हिन्दी भाषी लोगों को छोटा ए तथा छोटा ओ के प्रयोग की आवश्यकता नहीं पड़ती है ।

(ग) दाक्षिणात्य व्यंजनों में तमिल भाषा की परिपाटी विचित्र हैं, वहाँ 'क' अक्षर से ख, ग, घ इन तीनों का काम चलाते हैं । 'च' अक्षर से छ ,ज, झ इन तीनों का काम चलाते हैं । 'प' अक्षर का प्रयोग फ-ब-भ इन सब के लिए करते हैं । 'ट' अक्षर का प्रयोग ठ-ड-ढ़ के लिए भी किया जाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी प्रकार 'त' वर्ण का उपयोग थ-ध-द के स्थान पर कर लिया जाता है ।

अस्तु, पाठकों की सुविधा के लिए पूर्व में जो वर्णमाला का चक्र दिया गया है उसे यथासंभव सरल एवं स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जिसके कारण पाठकों के मन में कोई भ्रान्ति या दुविधा न रहें ।

भूमिलग्ने गुरुनिर्णयम्

लग्नत्रिकोणे गुरुरत्र लग्ने चरे गुरुस्तूभयराशिसंस्थः।
द्वन्द्वे विलग्ने चरगः सुरेड्यस्थिरे तु लग्ने स तु लग्न एव ।। ७२।।

पिछले श्लोक से जो राशि प्राप्त हो उसी को भूमिलग्न मानना चाहिए । यदि भूमि लग्न चर राशि में हो तो गुरु को उसके त्रिकोण वाली राशियों में द्विस्वभाव में जानना चाहिए । स्थिर लग्न होने पर गुरु को लग्न में मानना चाहिए तथा लग्न द्विस्वभाव हो तो गुरु को उसके त्रिकोण की चर राशि में जानना चाहिए ।।७२।।

इस 'गुरु' का आकाशस्थ गुरु (gupiter) से कोई सम्बन्ध नहीं है । यह तो मात्र फलादेश करने के लिए काल्पनिक ग्रहबिन्दु है । इसकी स्थिति आगे के चक्र से जानें ।

भूमिराशि (लग्न) से गुरु ज्ञान का चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	**भूराशिलग्न श्लोक ७१ के अनुसार**
धनु	वृष	तुला	मीन	सिंह	कुंभ	मिथुन	वृश्चिक	मेष	कन्या	कुंभ	कर्क	**काल्पनिक गुरु की स्थिति श्लोक ७२ के लिए**

भूमेर्जन्मनक्षत्रज्ञानम्

अवकहडादिकविधिना विज्ञातव्यं हि जन्मनक्षत्रम् ।
नक्षत्रे विज्ञाते विज्ञेया स्थितिरनेन चन्द्रमसः ।। ७३।।

भूमि के नाम का जो प्रथमाक्षर हो उससे ज्योतिष में प्रचलित "अवकहडा चक्र" का अवलोकन कर भूमि का नक्षत्र ज्ञात करें और उस नक्षत्र के अनुसार जो राशि हो उसमें चन्द्र को स्थापित करें ।।७३।।

यह चन्द्र भी गुरु की तरह केवल फल विचार के लिए कल्पित है । इसका खगोलीय आधार नहीं है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूमिलग्नात् फलकथनम्

चन्द्राश्रिते वेश्मनि लग्नभे वा तयोर्द्वयोर्वाष्टमयोश्च पापाः ।
स्थिता यदास्मिन् समये मृतिः स्यात् तद्वासिनां गोनरपूर्वकाणाम् ।। ७४।।

अब श्लोक ७०-७१-७२-७३ में बतलाई विधि से भूलग्नराशि तथा भूचन्द्रराशि से आठवीं राशि में यदि कोई पाप ग्रह बैठा हो तो घर में पालतू पशुओं एवं मनुष्यों की मृत्यु होती है (ये पाप ग्रह द्विपद राशियों में हों तब मनुष्यों तथा चतुष्पद राशियों में स्थित होने पर चौपायों की मृत्यु होती है ।।७४।।

अवकहडा विवेचन—दक्षिण भारत के ज्योतिषी एक अन्य प्रकार के अवकहडा चक्र का उपयोग करते हैं । माधवीयम् के मत से वह निम्न प्रकार से है—

माधवीयम् ग्रन्थोक्त अवकहडा चक्र के वर्ण

प्रथम वर्ग				द्वितीय वर्ग						तृतीय वर्ग					चतुर्थ वर्ग					स्वर मात्रा
अ	व	क	ह	ड	म	ट	प	र	त	न	य	ब	श	ज	ग	स	द	च	ल	अ
इ	वि	कि	हि	डि	मि	टि	पि	रि	ति	नि	यि	बि	शि	जि	गि	सि	दि	चि	लि	इ
उ	वु	कु	हु	डु	मु	टु	पु	रु	तु	नु	यु	बु	शु	जु	गु	सु	दु	चु	लु	उ
ए	वे	के	हे	डे	मे	टे	पे	रे	ते	ने	ये	बे	शे	जे	गे	से	दे	चे	ले	ए
ओ	व	को	हो	डो	मो	टो	पो	रो	तो	नो	यो	बो	शो	जो	गो	सो	दो	चो	लो	ओ

नामाक्षरों से नक्षत्र ज्ञान का चक्र

कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
अ इ उ ए	ओं वा वि वु	वे वो क की	कु	के को ह हि	हु हे हो डा	डि डु डे डो
मघा	**पूर्वाफा.**	**उ.फा.**	**हस्त**	**चित्रा**	**स्वाति**	**विशाखा**
म मि मु मे	मो ट टि टु	टे टो प पी	पु	पे पो रा रि	रू रे रो त	ती तु ते तो
अनुराधा	**ज्येष्ठा**	**मूल**	**पू.षा.**	**उ.षा.**	**अभिजित्**	**श्रवण**
न नि नु ने	नो य यि यु	ये यो ब बी	बु.	बे बो श शी	शु शे शो ज	जि जु जे जो
धनिष्ठा	**शतभिषा**	**पूर्वाभाद्र.**	**उत्तराभाद्र.**	**रेवती**	**अश्विनी**	**भरणी**
ग गि गु गे	गो स सि सु	से सो द दी	दु	दे दो च चि	चु चे चो ल	ली लु ले लो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरुफलम्

लग्नात्पञ्चमभेऽथवा नवमभे यद्वा शशाङ्कात्सुते
धर्मे वा धिषणप्रवेशसमये तद्वासिगर्भोद्भवः।
धर्मापत्यगराशिभेदवशतः स्त्रीणां गवां वा महि-
ष्यादीनामथवा सदा स्थितिजुषां गर्भग्रहस्तत् क्षितौ।। ७५।।

जब गोचर में भ्रमण करता हुआ गुरु भूमिलग्न या भूमिचन्द्र (राशि) से नवम या पंचम में संचार करता है तब उस भवन में रहने वाली स्त्रियाँ तथा गायें आदि गर्भवती होती हैं ।।७५।।

यह फल गुरु की गोचर राशि की प्रकृति के अनुसार होता है । यदि गुरु का संचार मेष राशि में हो तो बकरियाँ एवं भेड़े गर्भ धारण करती हैं । वृष के गुरु में गायें गर्भवती होती हैं । भैसें भी गायों की भाँति गर्भ धारण करती हैं । मिथुन तथा कन्या में स्त्रियाँ गर्भवती होती हैं । द्विपद राशियों में स्त्रियाँ गर्भ धारण करती हैं ।

अरिभवने सहजे वा बृहतां पत्यौ स्थिते कलहः।
नृपपीडा निधनगते लग्नेन्दुभ्यां वधो व्ययगे।। ७६।।

भूमिलग्न या भूमिचन्द्र से छठे या तृतीय भाव में जब गुरु का गोचर भ्रमण हो तो घर में रहने वाले लोगों से कलह होता है । यदि यही गुरु अष्टम राशि में विचरण करे तो राजदण्ड का भय रहता है । बारहवें भाव के गुरु से मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट होता है ।।७६।।

कुछ विद्वान् आरूढ लग्न से गुरु के गोचर भ्रमण का विचार करते हैं ।

आधिपत्यप्रश्नः

आधिपत्यं भवेत् किं मे न वेति यदि पृच्छति।
प्रभूणां कुलजः कश्चित् तं वक्तुं लक्ष्म कथ्यते।। ७७।।

राजवंश या सम्पन्न वंश में उत्पन्न कोई व्यक्ति यह प्रश्न पूछे कि मेरा आधिपत्य होगा या नहीं ? तब अग्रांकित लक्षणों के आधार पर समाधान करना चाहिए ।।७७।।

तत्र प्राग्जन्मकालीनविहगाः खलु संस्फुटाः ।
गणनीया विशेषेण ज्ञेयास्तारास्तदाश्रिताः ।। ७८।।

आधिपत्य प्रश्न पर विचार करने से पूर्व पृच्छक के जन्मकालीन ग्रहस्पष्ट शुद्ध गणित से जानना चाहिए । फिर उन ग्रहों के द्वारा अधिष्ठित नक्षत्रों का विचार ध्यानपूर्वक करें ।।७८।।

सूर्येन्द्वारविलग्नकर्मपतयस्ते येषु भेषु स्थिता-
स्तेष्वाद्यांशकपास्तदंशभवगा लग्नत्रिकोणेऽथवा ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वीर्याढ्याः खलु यस्य स स्वकुलकज्यैष्ठ्यं लभेताचिरात्
तैशेशा इतरत्र चेद् व्ययमृतद्विड्भ्यः शनेर्ज्यैष्ठदाः ।। ७९ ।।

यदि पृच्छक के जन्मकालीन सूर्य, चन्द्र, मंगल, लग्नेश, कर्मेश ये पाँचों ग्रह जिन नक्षत्रों में स्थित हों उन नक्षत्रों के आद्यंशपति (नवांशेश) अपने नवांश या राशि से एकादश या त्रिकोणस्थान में स्थित हो तो वह आधिपत्य प्राप्त करता है ।

अथवा उपर्युक्त ग्रह जन्मलग्न से त्रिकोण में या एकादश में बली होकर बैठे हों तो जातक को परिवार आदि का आधिपत्य प्राप्त होता है ।

यदि उक्त स्थानों के स्वामी ग्रह छठे, आठवें या बारहवें भाव में बैठते हैं तो आधिपत्य नहीं मिल पाता है । इन कथित स्थानों से भिन्न स्थानों जैसे द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, दशम में बैठे हों तो आधिपत्य विलम्ब से मिल पाता है ।।७९।।

मान लीजिए—जन्मकालीन सूर्य मकर के २६° पर धनिष्ठा में सिंहनवांश में है, चन्द्रमा अश्विनी में कर्कनवांश में, मंगल मिथुन के वृश्चिकनवांश में पुनर्वसु में है जो कि लग्नेश भी है, शनि दशमेश होकर मिथुन के २२° पर पुनर्वसु में है । सूर्याधिष्ठित धनिष्ठा नक्षत्र के प्रथम चरण का स्वामी सूर्य दशम में है अतः विलम्ब से आधिपत्य का सूचक हुआ । चन्द्रमा के अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण का स्वामी मंगल तृतीय भाव में (लग्न से) बैठा है, यह भी विलम्ब से आधिपत्य का सूचक है । मंगल जो कि लग्नेश है, वह भी विलम्बकारक है । शनि जो कि कर्मेश है, उसके नक्षत्र का प्रथम चरण का स्वामी भी मंगल है अतः सभी ग्रह विलम्ब से आधिपत्य को सूचित कर रहे हैं ।

सूर्यादिकेतुचरमद्युचरेषु केचित्
तारासु चेन्निर्ऋतिशुक्रपदास्थितासु ।
मित्रादिकेषु पुनरष्टसु चात्र शीघ्रं
ज्यैष्ठ्यं पदे सुरपतेः पयसां च पत्युः ।। ८० ।।

यदि जन्मकालिक सूर्यादि नव ग्रहों में से कम-से-कम तीन ग्रहों के नक्षत्र नैर्ऋत्य कोण तथा पूर्व के नक्षत्रों में स्थित हों अथवा अनुराधा से श्रवण तक अभिजित् सहित आठ नक्षत्रों में तीन से अधिक ग्रह स्थित हों तो प्रधानता या प्रमुखता या नेतृत्व की प्राप्ति होती है ।।८०।।

कालचक्रकथनम्

कृत्तिकादिभरण्यन्ताः प्रदक्षिणतया स्थिताः ।
सर्वास्वपि दिशास्वीशकोणादारभ्य सर्वतः ।। ८१ ।।

कृत्तिका से भरणी तक ईशान कोण से प्रदक्षिण क्रम में सभी आठों दिशाओं में अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्र स्थित हैं । इस प्रकार प्रत्येक दिशा में साढ़े तीन नक्षत्र स्थित हैं ।।८१।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नक्षत्रों की इस स्थिति को कालचक्र कहते हैं।

नक्षत्रैः कालचक्रस्थैर्योगिन्या मृत्युना तथा ।
सम्प्रदायान्तरोक्तानि कथ्यन्ते लक्षणान्यथ ॥ ८२॥

इस कालचक्र में नक्षत्र, योगिनी तथा मृत्यु की स्थिति के अनुसार अब आगे कुछ लक्षणों का वर्णन किया जा रहा है ॥८२॥

कालचक्ररचनाविधिः

चतुरस्त्रत्रिकं कुर्यादन्तर्मध्ये बहिः क्रमात् ।
दण्डांश्च चतुरस्तद्दिक्केणगांश्चक्रसिद्धये ॥ ८३॥
दण्डानां प्रत्येकं चतुरस्त्रसमागमेषु मध्ये च ।
अभिजिद्युक्तास्तारा: स्थाप्याः स्युः सप्त सप्त गणनाय ॥ ८४॥
दण्डाग्रादामध्यं निर्गत्य ततोऽन्तिकस्थदण्डेन ।
एवं पुनः प्रवेशो निर्गमनं प्रोक्तवच्च गणनमिह ॥ ८५॥

भीतर, मध्य तथा बाहर इस क्रम से तीन चतुर्भुज (वर्गाकार) बनायें, फिर (१) पूर्व से पश्चिम तक, (२) उत्तर से दक्षिण तक, (३) ईशान से नैर्ऋत्य तक तथा (४) वायव्य से आग्नेय तक चार दण्ड (रेखाएँ) बनायें ॥८३॥

इन दण्डों के चतुर्भुजों के साथ छः योगबिन्दुओं में तथा एक मध्यबिन्दु में इस भाँति प्रत्येक सात-सात बिन्दुओं में गणना के लिए अभिजित् सहित अट्ठाईस नक्षत्रों का न्यास करें ॥८४॥

दण्ड के अग्रभाग (बिन्दु) से मध्यबिन्दु तक, फिर कोणस्थित दण्ड से निकलकर पुनः दिशा के दण्ड से मध्य में प्रवेश कर कोण के दण्ड से निकल कर एवमेव छः नक्षत्रों की चार आवृत्तियों में २८ नक्षत्रों का न्यास किया जाता है और इस पद्धति से नक्षत्रों की गणना भी होती है ॥८५॥

नक्षत्रन्यास चक्र

ईशान	पूर्व	आग्नेय	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	दिशा
कृत्तिका	आर्द्रा १/२	माघा	हस्त १/२	अनुराधा	पू.षा. १/२	धनिष्ठा	उ.भा. १/२	साढ़े तीन नक्षत्र अभिजित् सहित
रोहिणी	पुनर्वसु	पू.फा.	चित्रा	ज्येष्ठा	उ.षा.	शतभिषा	रेवती	
मृगशिरा	पुष्य	उ.फा.	स्वाति	मूल	अभिजित्	पू.भा.	अश्विनी	
आर्द्रा १/२	श्लेषा	हस्त १/२	विशा.	पू.षा. १/२	श्रवण	उ.भा. १/२	भरणी	

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्र

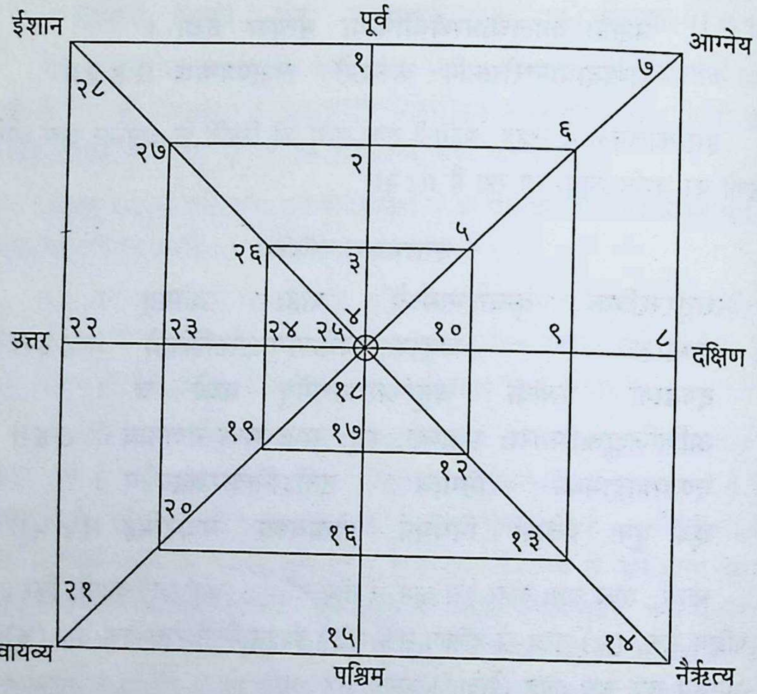

कालचक्रे सूर्यभाद्दिनर्क्षपर्यन्तगणनाकथनम्

प्राग्दण्डाग्रादधस्ताद् दिनकरगतभाद् गण्यमाप्रश्नतारं
प्राणोऽत्र प्रष्टृतारात् पुनरिति गणिते दक्षिणेनात्र देहः ।
वामं सर्वस्य कोणाद्धुतभुज उडुनो गण्यताम्प्राग्वदत्र
स्थानं मृत्योस्त्रयेऽस्मिन् स्थितवति मरणं प्रष्टुरेकत्र दण्डे ॥ ८६॥

कालचक्र में जहाँ पर एक लिखा है वहाँ सूर्याधिष्ठित नक्षत्र को प्रतिष्ठित करके गणना करें । गणना जिस क्रम से चक्र में अंक लिखे हैं उसी क्रम से करें अर्थात् श्लोक ८५ के अनुसार ''दण्डाग्रादिमध्यं निर्गत्य ततोऽन्तिकस्थदण्डेन'' के अनुसार गिनें । गणना सूर्य के नक्षत्र से प्रश्नदिन के नक्षत्र तक करनी चाहिए । अतः कालचक्र में गणना करते समय जहाँ दिननक्षत्र हो उस स्थान (बिन्दु) को 'प्राण' मानना चाहिए ।

अब पुनः जहाँ १ (एक) का अंक लिखा है (पूर्वदण्ड के अग्रभाग में) वहाँ नाम या जन्म (पृच्छक का नाम) नक्षत्र को स्थापित कर प्रश्न दिननक्षत्र तक प्रदक्षिण क्रम से १-२-३-४ इस प्रकार से दिननक्षत्र तक गणना करें । इस तरह गणना करने पर (नामनक्षत्र से दिननक्षत्र तक) जिस बिन्दु पर दिन का नक्षत्र हो वहाँ देह होता है ।

तत्पश्चात् ईशान कोण में जहाँ कृत्तिका नक्षत्र का स्थान है वहाँ से विलोम (अपसव्य) क्रम से अर्थात् कृत्तिका, भरणी, अश्विनी या २८-२७-२६ इस प्रकार दिननक्षत्र तक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गणना करें तो जो बिन्दु प्राप्त होगा वह "मृत्यु" होगा । प्राण, देह तथा मृत्यु यदि एक ही दण्ड पर स्थित हों तो प्रश्नकर्त्ता की मृत्यु होती है ।

मान लीजिए कि किसी स्वाति जन्मनक्षत्र वाले व्यक्ति ने संवत् २०६० विक्रमी आश्विन कृष्ण १२ मंगलवार दिनांक २३ सितम्बर २००३ को श्लेषा नक्षत्र में प्रश्न किया, अत: सूर्यनक्षत्र उत्तराफाल्गुनी से दिननक्षत्र श्लेषा तक अभिजित् सहित गिनने पर २६ संख्या प्राप्त हुई । फिर उसके जन्मनक्षत्र स्वाति से आश्लेषा तक गिना तो संख्या २३ प्राप्त हुई । यह "देह" का अंक या बिन्दु है जब कि पूर्व में गिना गया वह "प्राण" का बिन्दु था । अब कृत्तिका से उल्टे क्रम आश्लेषा तक गिनने पर २३ संख्या प्राप्त हुई, यह मृत्यु है । अब हमने कालचक्र में देखा तो २३ तथा २६ की संख्या एक ही दण्ड पर न होने से शुभ हैं ।

पुनश्च कालचक्रफलम्

दण्डैक्यं यदि तत्र मृत्युवपुषो रुग्वृद्धिदैर्घ्यादिकं;
मूर्च्छालस्यकृदेकदण्डवसतिर्मृत्योश्च जीवस्य च।
प्रागाद्यग्निभपूर्वके च गणने पूर्वापरादन्यतो,
दण्डैक्यं गुलिकोऽर्कभार्तजननडूनां विदध्यान्मृतिम् ।। ८७।।

(१) यदि कालचक्र में 'मृत्यु' तथा 'देह' ये दोनों एक ही दण्ड पर हों तो रोगवृद्धि होती है । यह रोग दीर्घ काल तक (chronic) रहने वाला होता है ।

(२) यदि मृत्यु तथा प्राण एक ही दण्ड पर हों तो मूर्च्छा एवं आलस्य बढ़ता है ।

(३) यदि कृत्तिका (२८) के स्थान से उल्टी गणना करने पर गुलिक का जो नक्षत्र प्राप्त हो वह नक्षत्र पृच्छक का जन्म या नाम नक्षत्र तथा सूर्यनक्षत्र ये तीनों एक ही दण्ड में हों तो रोगी या पृच्छक की मृत्यु होती है ।।८७।।

यहाँ क्रमांक ३ में वर्णित योग (लक्षण) में गुलिक, नक्षत्र, सूर्यनक्षत्र तथा पृच्छक के जन्म या नाम नक्षत्र की गणना विलोम गति से करें ।

कालचक्रे योगिनीज्ञानम्

योगिन्यर्कगतोडु पृच्छदुडु यद्येकत्रगं तत्त्रयं;
प्रष्टुर्मृत्युरिहैकदण्डगमिदं सम्बन्धिमृत्युप्रदम् ।
प्राग्दण्डाग्रकृशानुबाधिकमधः सङ्गण्यतां दक्षिणं;
चक्रेऽस्मिन् खलु योगिनी च चरति प्रोक्तक्रमात् प्रत्यहम् ।। ८८।।

यदि योगिनी सूर्य का नक्षत्र, पृच्छक के जन्म या नाम का नक्षत्र ये तीनों एकत्र हों तो प्रष्टा की मृत्यु होती है । यदि ये तीनों एक ही दण्ड पर स्थित हों तो पृच्छक के

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निकटस्थ लोगों की मृत्यु होती है । यहाँ पूर्व दण्ड के अग्रभाग में जहाँ पर संख्या १ लिखी है वहाँ से कृत्तिका नक्षत्र की ओर गिनें ।

कालचक्र में आगे कही गई रीति से योगिनी भ्रमण करती है ॥८८॥

योगिनीनामुदयकथनम्

अर्कारार्यबुधाच्छमन्दशशिषु प्राच्यादिदिक्षूदिता
गत्वाष्टासु दिशासु सायमुदयस्थानं पुनश्च व्रजेत् ।
मध्यं सोद्गमदण्डतः पुनरतो दण्डद्वयं वामत-
स्त्यक्त्वान्येन बहिर्व्रजेत्प्रथमयामे तद्गतिस्त्वीदृशी ॥ ८९॥
तस्मान्मध्यमतोऽथ दण्डयुगलं वामेन हित्वेतरे-
णोर्ध्वं यातिगति पुनरिति स्यादन्ययामेष्वपि ।
यामर्त्वंशविनाडिका नगसुगीर्ज्ञेयः स कालो गते-
र्बाह्यान्तर्वृतिमध्यमाङ्कणदलेष्वायाननिर्याणयोः ॥ ९०॥

रविवार, मंगलवार, गुरुवार, बुधवार, शुक्रवार, शनिवार तथा सोमवार को योगिनी पूर्वादि दिशाओं तथा विदिशाओं में उदित होती है । इस प्रकार उदित होकर योगिनी आठों दिशाओं में विचरण कर अन्त में अपने उदयस्थान (उदित होने की दिशा) में लौट कर आ जाती है तथा वहाँ से फिर चलती है ॥८९॥

दिन के प्रथम अष्टमांश (याम) में योगिनी वार के अनुसार जिस दिशा में उदित होती है कालचक्र में उस दण्ड के उदय (प्रारंभ) बिन्दु से प्रारंभ होकर वामतः (बायीं ओर के) दो दण्डों को छोड़कर तीसरे दण्ड से बाहर आती है । पुनः दूसरे याम में उसी के मध्य से होकर सायंकाल अपने प्रातः के उदय बिन्दु पर आ जाती है । मध्यम मान से एक याम का छठा भाग अर्थात् ३७ पल ३० विपल अर्थात् पन्द्रह मिनट तक योगिनी प्रत्येक बिन्दु (स्थान) पर ठहरती है ।

कालचक्र में बाह्यवृत्ति, अन्तर्वृत्ति आदि की कल्पना भी कर लेनी चाहिए ॥९०-९१॥

रात्रि में योगिनी-भ्रमण—सूर्यास्त पर योगिनी पुनः अपने उदय (प्रारंभ बिन्दु) स्थान पर आकर पुनः एक वार दिन की तरह उन्हीं बिन्दुओं पर भ्रमण करती है । दिन तथा रात में योगिनी का संचार कालचक्र में एक जैसा ही है ।

रविवार को योगिनी कालचक्र के क्रमांक १ से उदित होती है । सोमवार को बिन्दु क्रमांक २२ से, मंगलवार को बिन्दु क्रमांक ७ से, बुधवार को क्रमांक १४ से, गुरुवार को

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बिन्दु क्रमांक ८ से, शुक्रवार को बिन्दुक्रमांक १५ से तथा शनिवार को बिन्दुक्रमांक २१ से उदित होती हुई आठों दिशाओं में संचार करती है।

रविवार को प्रथम याम में यह बिन्दु (नक्षत्र) क्रमांक १ से प्रारंभ होकर २-३-४-१९-२० से होती हुई २१ पर पहुँचती है। दूसरे याम में वहाँ से २०-१९-१८-१०-९ होती हुई बिन्दु ८ (दक्षिण) तक जाती है। तीसरे याम में ८-९-१०-११-२६-२७ होती हुई २८ बिन्दु पर रुकती है। चौथे याम में यह २७-२६-२५-१७-१६ होती हुई बिन्दु १५ पर पश्चिम में पहुँचती है। फिर पाँचवें याम में १६-१७-१८-५-६ होती हुई ७वें बिन्दु पर आग्नेय में रुकती है। छठे याम में यह वापिस ६-५-४-२४-२३ होते हुए उत्तर में बिन्दु २२ पर रुकती है। फिर सातवें याम में २३-२४-२५-१२-१३ होकर बिन्दु १४ पर नैर्ऋत्य में रुकती है। अंत में रविवार के आठवें याम में १३-१२-११-३-२ बिन्दुओं पर होती हुई पूर्व में बिन्दु क्रमांक एक पर पहुँच जाती है।

प्रतिवार को कालचक्र में योगिनी-उदय का चक्र

रविवार	सोमवार	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	वार
पूर्व	उत्तर	आग्नेय	नैर्ऋत्य	दक्षिण	पश्चिम	वायव्य	योगिनी उदय की दिशा
१	१२	७	१४	२२	१५	२१	कालचक्रांक

प्रतिवार को यामानुसार योगिनी-नक्षत्रभ्रमण चक्र

वार	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	
याम	१	२	३	४	५	६	७	
प्रथम	पूर्व १-४-२१	उत्तर २२-२५-१४	आग्नेय ७-४-२२	नैर्ऋत्य १४-११-१	दक्षिण ८-११-२८	पश्चिम १५-१८-७	वायव्य २१-१८-८	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के नक्षत्र
द्वितीय	वायव्य २१-१८-८	नैर्ऋत्य १४-११-१	उत्तर २२-२५-१४	पूर्व १-४-२१	ईशान २८-२५-१५	आग्नेय ७-४-२२	दक्षिण ८-११-२८	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु (नक्षत्र)
तृतीय	दक्षिण ८-११-२८	पूर्व १-४-२१	नैर्ऋत्य १४-११-१	वायव्य २१-१८-८	पश्चिम १५-१८-७	उत्तर २२-२५-१४	ईशान २८-२५-१५	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वार	रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	
याम	१	२	३	४	५	६	७	
चतुर्थ	ईशान २८-२५-१५	वायव्य २१-१८-८	पूर्व १-४-२१	दक्षिण ८-११-२८	आग्नेय ७-४-२२	नैर्ऋत्य १४-११-१	पश्चिम १५-१८-७	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु
पंचम	पश्चिम १५-१८-७	पक्षिण ८-११-२८	वायव्य २१-१८-८	ईशान २८-२५-१५	उत्तर २२-२५-१४	पूर्व १-४-२१	आग्नेय ७-४-२२	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु
षष्ठ	आग्नेय ७-४-२२	ईशान २८-२५-१५	दक्षिण ८-११-२८	पश्चिम १५-१८-७	नैर्ऋत्य १४-११-१	वायव्य २१-१८-८	उत्तर २२-२५-१४	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अन्त के बिन्दु
सप्तम	उत्तर २२-२५-१४	पश्चिम १५-१८-७	ईशान २८-२५-१५	आग्नेय ७-४-२२	पूर्व १-४-२१	दक्षिण ८-११-२८	नैर्ऋत्य १४-११-१	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु
अष्टम	नैर्ऋत्य १४-११-१	आग्नेय ७-४-२२	पश्चिम १५-१८-७	उत्तर २२-२५-१४	वायव्य २१-१८-१८	ईशान २८-२५ १५	पूर्व १-४-२१	आरंभ दिशा आदि-मध्य-अंत के बिन्दु

योगिनीगणितम्

अह्नो यातविनाडिका मुखरयामर्त्वंशकाभ्यां हरेद्
यामाः प्रष्टृगृहे बहिर्वृतिमुखस्थानं च यातं फलम् ।
योगिन्युक्तवदेव मृत्युचरणं चक्रेऽस्ति वारक्रमा-
न्नित्यं वायुदिगादि चास्य गमनं प्रोक्तं मरुत्पद्यतः।। ९१।।

जन्म या प्रश्न समय की घटियों के पल बनाकर उस पलात्मक इष्टकाल में २२५ का भाग देकर अष्टमांश ज्ञात कर लें, जो लब्धि प्राप्त होगी वह सूर्यादय से बीते हुए यामों की संख्या होगी। जो शेष बचें उसमें ३७¹/₂ का भाग दें तो जो लब्धि आवे वह चक्र में योगिनी की स्थिति का बिन्दु होगा। इस रीति से कालचक्र में योगिनी की तरह मृत्यु का संचार होता है। अन्य मत से मृत्यु का संचार प्रतिदिन सभी वारों में वायुकोण में उदित होकर ही होता है। जैसा कि आगे कहा गया है ।।९२।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मरुद्यमेशाम्बुपवह्निसोमरक्षःसुराधीश्वरदिक्षु नित्यम् ।
उद्धृत्य वामं दिवसेऽष्टवारं भचक्रगोऽर्कोदयतः क्रमेण ।। ९२।।

कालचक्र में मृत्यु का उदय सूर्योदय से लेकर प्रतिदिन (१) वायुकोण, (२) दक्षिण, (३) ईशान, (४) पश्चिम, (५) आग्नेय, (६) उत्तर, (७) नैर्ऋत्य तथा (८) पूर्व इस क्रम से होता है । आठों याम समाप्त होते ही रात्रि के प्रथम याम में अपनी जगह वायव्य में पुन: आ जाता है ।।९३।।

मेषादिकचरभानां दिश्युदयोऽन्तेषु मृत्युयोगिन्योः ।
मिथुनादिद्वन्द्वानां मध्येष्वग्न्यादिकोणेषु ।। ९३।।

मृत्यु तथा योगिनी का उदय पूर्वादि दिशाओं में चर राशियों के अन्त में होता है । जब इनका उदय विदिशाओं में हों तब यह द्विस्वभाव राशियों के मध्य में होता है ।।९४।।

इस प्रकार इस श्लोक से कोई स्पष्ट व्यवस्था समझ में नहीं आती है । क्योंकि यदि योगिनी या मृत्यु पूर्व-दक्षिण, पश्चिम-उत्तर आदि दिशाओं में हो तो इनकी राशि मेष, कर्क, तुला या मकर होगी । यदि वायव्य ईशान, अग्निकोण या नैर्ऋत्य में उदय हो तो इनकी राशि मिथुन-कन्या-धनु या मकर का मध्य होगा ।

अथ योगिन्याः स्वरूपमुच्यते

दंष्ट्रायुग्मभयं कराञ्जननिभा संरक्तवृत्तेक्षणा,
नादापूरितदिङ्मुखा वाधरुचिः सन्ध्याभ्ररक्ताम्बरा ।
मेदोमांसवसाविभूषिततनुर्भोगीशभोगाङ्गदा,
जन्तून् खड्गधरा निहन्ति निखिलान् मत्ता भृशं योगिनी ।। ९४।।

योगिनी दो डाढों से भयभीत करती है, उसकी आँखें लाल-लाल तथा गोल होती हैं । उसकी भयङ्कर गर्जना से दिशाएँ पूरित हो जाती हैं । उसकी रुचि लोगों एवं प्राणियों का वध करने में होती है । वह सन्ध्या की लाली के समान रंगवाले वस्त्र धारण करती है । उसके शरीर पर मेद (चर्बी) तथा मांस शोभा देता है । श्रेष्ठ सर्पों का आभूषण धारण करती है, खड्ग धारण किये हुए तथा मद्यपान में अनुरक्त रहती है । वह मदोन्मत्त होकर अपने खड्ग से जीवों का वध करती है ।।९५।।

स्वाधिष्ठितराशेः सा पादेनाक्रम्य तुर्यभं सुदृढम् ।
प्रहरत्यपि खड्गेन द्यूनं हन्येत तत्रगस्तु तया।। ९५।।

जिस राशि में वह योगिनी उक्त क्रम से बैठी होती है उस राशि से चतुर्थ में यदि पृच्छक की राशि है तो उस राशि वाले को वह योगनी लात से मार डालती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी प्रकार यदि योगिनी स्थित राशि से सप्तम भाव में व्यक्ति की राशि हो तो उस व्यक्ति को योगिनी अपने खड्ग-प्रहार से मार डालती है ॥९६॥

मतान्तरेण योगिनीनामुदयकथनम्

सूर्याद्यहस्सु योगिन्याः पक्षभेदो न चोद्गमे ।
तच्चारे पुनरस्त्येष श्लोकपादैरथोच्यते ॥ ९६॥

सूर्यादि के वारों में योगिनी के उदय के विषय में कोई मतभेद नहीं है परन्तु योगिनी के संचार के विषय में मतान्तर है, अत: उसे यहाँ कहते हैं ॥९७॥

केसरीभोगशेषो हि सद्महारी कलावती ।
राजा गुणवता सेव्यो वारणासितदापगा ॥ ९७॥
लोकभीषणसंहारी मार्गतोहसिकेरवः ।
तव सम्पदरोगेण सूर्यवारादिषु क्रमात् ॥ ९८॥
एकादिसंख्या वचनैरिहार्णैरिन्द्राग्निपूर्वाः कथिता हि काष्ठाः ।
आद्यासु दिक्षूदयनं क्रमेण चान्यासु चारः प्रतियाममाख्याः ॥ ९९॥

रविवार को योगिनी पूर्व दिशा में उदित होती है और प्रतियाम में क्रम से पूर्व, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम, वायव्य तथा ईशान में संचार करती हैं ।

सोमवार को आठों यामों में क्रमश: उत्तर, पश्चिम, ईशान, आग्नेय, पूर्व, दक्षिण, नैर्ऋत्य, वायव्य में संचार करती है ।

मंगलवार को क्रमश: आग्नेय, ईशान, दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य, वायव्य, उत्तर तथा पूर्व में योगिनी का संचार होता है ।

बुधवार को नैर्ऋत्य, आग्नेय, पश्चिम, उत्तर, वायव्य, ईशान, पूर्व तथा दक्षिण में भ्रमण करती है ।

गुरुवार को वह प्रतियाम में क्रमश: दक्षिण, पूर्व, नैर्ऋत्य, वायव्य, पश्चिम, उत्तर, ईशान तथा आग्नेय में योगिनी का संचार होता है ।

शुक्रवार को योगिनी क्रमेण पश्चिम, दक्षिण, वायव्य, ईशान, उत्तर, पूर्व, आग्नेय तथा नैर्ऋत्य में आठों यामों से संचार करती है ।

शनिवार के दिन प्रथम याम से आठवें याम तक योगिनी क्रमश: वायव्य, नैर्ऋत्य, उत्तर, पूर्व, ईशान, आग्नेय, दक्षिण तथा पश्चिम में संचारित रहती हैं ॥ ९८-९९-१००॥

प्रत्येक वार को प्रथम याम में योगिनी श्लोक ९८ के अनुसार निर्देशित दिशा में रहती है तथा उसके उपरान्त कथित क्रम से अन्य दिशाओं में संचारित रहती है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सूर्याद्यहस्सु यस्यां दिश्युदयोतः परा दिशा।
यामक्रमेण गत्वान्त्ये यामे यात्यष्टमीं दिशम्।। १००।।

रवि आदि वारों में योगिनी प्रथम याम में जिस दिशा में उदित हो बीच के २ से लेकर ७ तक की संख्या वाले यामों में जो दिशा बताई गयी है वह उसी में विचरण करती है परन्तु आठवें याम में योगिनी प्रात:कालीन उदय दिशा से आठवीं दिशा में सुनिश्चित रूप से पहुँच जाती है । इस तथ्य को हृदयंगम कर लेना चाहिए ।।१००।।

आगे के चक्र में वार क्रम से उदय तथा याम क्रम से दिशाएँ अंकों द्वारा सूचित की गयी हैं ।

प्रतिवार क्रम से आठों यामों में योगिनी–उदय का चक्र
(अंक पूर्वादि दिशाओं के सूचक हैं)

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	वार
१	७	२	४	३	५	६	**प्रथम याम**
७	५	८	२	१	३	४	**द्वितीय याम**
२	८	३	५	४	६	७	**तृतीय याम**
४	२	५	७	६	८	१	**चतुर्थ याम**
३	१	४	६	५	७	८	**पंचम याम**
५	३	६	८	७	१	२	**षष्ठ याम**
६	४	७	१	८	२	३	**सप्तम याम**
८	६	१	३	२	४	५	**अष्टम याम**

अथ मृत्युर्योगिन्योः स्फुटानयनमुच्यते

चोलेनेष्टघटीर्निहत्य विभजेदह्नः प्रमित्या फलं;
राशिः शिष्टत आनयेल्लवकलाः संशोध्य भान्मण्डलम् ।
शिष्टं शोधितचक्रसंख्यमतिहायोर्ध्वात् त्यजेत् स्थानतः;
केसर्यादिमरुद्यमादिषु तदा तत्तत्स्फुटं सम्भवेत्।। १०१।।

प्रश्नकालीन इष्ट घटी को चोड़ अर्थात् ९६ से गुणा करें, उस गुणनफल में दिन का इष्ट होने पर दिनमान का तथा रात्रि का इष्ट हो तो रात्रिमान का भाग देना चाहिए, जो लब्धि हो वह राशि होगी । जो शेष बचें उसमें तीस का गुणा कर दें और गुणनफल में पुनः दिन-मान का भाग दें तो लब्धि-अंश होंगे । फिर जो शेष बचे उसे साठ से गुणा कर पुनः दिनमान का भाग दें तो लब्धि कला प्राप्त होंगी । पुनः शेष को साठ से गुणा करें और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुणन फल में फिर भाग दिनमान का दें तो लब्धि विकला प्राप्त होगी। यदि प्रथम वार की लब्धि (राशि) का अंक १२ या अधिक हो तो उसे बारह से भाग दें और केवल शेष राशि ही ग्रहण करें तो योगिनीस्पष्ट के राशि-अंश-कला तथा विकला प्राप्त होंगे। यही मृत्युस्फुट भी होंगें।

इस प्रकार आनीत योगिनी की दिशा का ज्ञान पूर्व में कथित श्लोक संख्या ९८ से १०१ तक 'केसरी भोगशेषो हि' के अनुसार योगिनी की दिशा जानें तथा श्लोक संख्या ९३ "मरुद्यमेशाम्बु" से मृत्यु की दिशा जान लें ॥१०१॥

योगिनी संचार का यामानुसार क्रम नियम—आठों दिशाओं में योगिनी के संचार का यामानुसार नियम इस प्रकार है—

(१) प्रथम याम में उदय की दिशा में योगिनी रहती है। फिर इसके बाद (२) द्वितीय याम में उससे सातवीं दिशा में, (३) तृतीय याम में उससे चौथी दिशा में, (४) चतुर्थ याम में उससे तीसरी दिशा में, (५) पंचम याम में उससे आठवीं दिशा में, (६) षष्ठ याम में उससे तीसरी दिशा में, (७) सप्तम याम में उससे तीसरी दिशा में तथा (८) अष्टम याम में उससे तीसरी दिशा में योगिनी का उदय होता है। यह दिशा उदय की दिशा से आठवीं होती है।

उदाहरण—इष्ट ५ घटी तथा दिनमान ३२ घटी है, वार बुधवार है अतः ५×९६ = ४८०÷३२ लब्धि १५ शेष शून्य, अतः १५ राशि में बारह घटाने पर ३ राशि शेष रही। अस्तु, योगिनीस्पष्ट कर्क राशि के शून्य पर है।

दूसरा उदाहरण इष्ट १० घटी १५ पल, दिनमान ३२ घटी ३० पल शुक्रवार का है। इष्ट घटी १०।१५×९६ तो ९८४ प्राप्त हुए। इनमें दिनमान ३२ घटी ३० पल अर्थात् $\frac{६५}{२}$ का भाग दिया अतः $९८४ \div \frac{६५}{२} = ९८४ \times \frac{२}{६५} = \frac{१९६८}{६५}$। अब १९६८ में ६५ का भाग दिया तो लब्धि ३० राशि प्राप्त हुई। शेष १८ को ३० से गुणा किया तो ४५० हुए। इनमें पुनः ६५ का भाग दिया तो लब्धि ८ अंश प्राप्त हुए। शेष २० को ६० से गुणा करने पर पुनः ६५ का भाग देने से १८' कला तथा शेष ३० को पुनः ६० से गुणा कर ६५ का भाग देने से २० विकला प्राप्त हुए। इस प्रकार ३० राशि ८ अंश १८ कला तथा २० विकला प्राप्त हुए राशि में बारह का भाग देने पर राश्यादि ६।८।१८।२० योगिनीस्पष्ट प्राप्त हुआ।

योगिनी का शुभाशुभ फल—योगिनी का शुभ या अशुभ फल कब प्राप्त होगा इसका मार्गदर्शन नहीं है। अस्तु, योगिनी-दशान्तर्दशा में उसके फल की प्राप्ति होती है। ऐसा कुछ विद्वानों का मत है। अतः योगिनी दशा का भोग्य जानने की विधि दी जा रही है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रनक्षत्र के अंशों पर से योगिनीदशा भोग्य साधन सारिणी (१) (पूर्वार्ध)

योगिनी		१ मंगला (शुभ)			२ पिंगला (अशुभ)			३ धान्या (शुभ)			४ भ्रामरी (अशुभ)			५ भद्रिका (शुभ)			६ उल्का (अशुभ)			७ सिद्धा (शुभ)			८ संकटा (अशुभ)		
नक्षत्र		आर्द्रा चित्रा श्रवण			पुनर्वसु स्वाति धनिष्ठा			पुष्य विशाखा शतभिषा			श्लेषा अनुराधा पू.भा. अश्विनी			मघा ज्येष्ठा उंत्तराभाद्र. भरणी			पू.फा. मूल रेवती कृत्तिका			उ.फा. पूर्वाषाढा रोहिणी			हस्त उ.षा. मृगशिरा		
अंश	कला	वर्ष	मास	दिन	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
०	०	१	०	०	२	०	०	३	०	०	४	०	०	५	०	०	६	०	०	७	०	०	८	०	०
०	२०	०	११	२१	१	११	१२	२	११	३	३	१०	२४	४	१०	१५	५	१०	६	६	९	२७	७	९	१८
०	४०	०	११	१२	१	१०	२४	२	१०	६	३	९	१८	४	९	०	५	८	१२	६	७	२४	७	७	६
१	००	०	११	३	१	१०	६	२	९	९	३	८	१२	४	७	१५	५	६	१८	६	५	२१	७	४	२४
१	२०	०	१०	२४	१	९	१८	२	८	१२	३	७	६	४	६	०	५	४	२४	६	३	१८	७	२	१२
१	४०	०	१०	१५	१	९	०	२	७	१५	३	६	०	४	४	१५	५	३	०	६	१	१५	७	०	०
२	००	०	१०	६	१	८	१२	२	६	१८	३	४	२४	४	३	०	५	१	६	५	११	१२	६	९	१८
२	२०	०	९	२७	१	७	२४	२	५	२१	३	३	१८	४	१	१५	४	११	१२	५	९	९	६	७	६
२	४०	०	९	१८	१	७	६	२	४	२४	३	२	१२	४	०	०	४	९	१८	५	७	६	६	४	२४
३	००	०	९	९	१	६	१८	२	३	२७	३	१	६	३	१०	१५	४	७	२४	५	५	३	६	२	१२

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगिनी		१ मंगला (शुभ)			२ पिंगला (अशुभ)			३ धान्या (शुभ)			४ भ्रामरी (अशुभ)			५ भद्रिका (शुभ)			६ उल्का (अशुभ)			७ सिद्धा (शुभ)			८ संकटा (अशुभ)		
नक्षत्र		आर्द्रा चित्रा श्रवण			पुनर्वसु स्वाति धनिष्ठा			पुष्य विशाखा शतभिषा			श्लेषा अनुराधा पू.भा. अश्विनी			मघा ज्येष्ठा उत्तराभाद्र. भरणी			पू.फा. मूल रेवती कृत्तिका			उ.फा. पूर्वाषाढा रोहिणी			हस्त उ.षा. मृगशिरा		
अंश	कला	वर्ष	मास	दिन	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
३	२०	०	९	०	१	६	०	२	३	०	३	०	०	३	९	०	४	६	०	५	३	०	६	०	०
३	४०'	०	८	२१	१	५	१२	२	२	३	२	१०	२४	३	७	१५	४	४	६	५	०	२७	५	९	१८
४	००	०	८	१२	१	४	२४	२	१	६	२	९	१८	३	६	०	४	२	१२	४	१०	२४	५	७	६
४	२०	०	८	३	१	४	६	२	०	९	२	८	१२	३	४	१५	४	०	१८	४	८	२१	५	४	२४
४	४०	०	७	२४	१	३	१८	१	११	१२	२	७	६	३	३	०	३	१०	२४	४	६	१८	५	२	१२
५	००	०	७	१५	१	३	०	१	१०	१५	२	६	०	३	१	१५	३	९	०	४	४	१५	५	०	०
५	२०	०	७	६	१	२	१२	१	९	१८	२	४	२४	३	०	०	३	७	६	४	२	१२	४	९	१८
५	४०	०	६	२७	१	१	२४	१	८	२१	२	३	१८	२	१०	१५	३	५	१२	४	०	९	४	७	६
६	००	०	६	१८	१	१	६	१	७	२४	२	२	१२	२	९	०	३	३	१८	३	१०	६	४	४	२४
६	२०	०	६	९	१	०	१८	१	६	२७	२	१	६	२	७	१५	३	१	२४	३	८	३	४	२	१२
६	४०	०	६	०	१	०	०	१	६	०	२	०	०	२	६	०	३	०	०	३	६	०	४	०	०
७	००	०	५	२१	०	११	१२	१	५	३	१	१०	२४	२	४	१५	२	१०	६	३	३	२७	३	९	१८
७	२०	०	५	१२	०	१०	२४	१	४	६	१	९	१८	२	३	०	२	८	१२	३	१	२४	३	७	६
७	४०	०	५	३	०	१०	६	१	३	९	१	८	१२	२	१	१५	२	६	१८	२	११	२१	३	४	२४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चन्द्रनक्षत्र के अंशों पर से योगिनीदशा भोग्य साधन सारिणी (१) (उत्तरार्ध)

योगिनी		१ मंगला (शुभ)			२ पिंगला (अशुभ)			३ धान्या (शुभ)			४ भ्रामरी (अशुभ)			५ भद्रिका (शुभ)			६ उल्का (अशुभ)			७ सिद्धा (शुभ)			८ संकटा (अशुभ)		
नक्षत्र		श्रवण आर्द्रा चित्रा			पुनर्वसु स्वाति धनिष्ठा			शतभिषा पुष्य विशाखा			अश्विनी श्लेषा अनुराधा पूर्वाभाद्र			भरणी मघा ज्येष्ठा उत्तराभाद्र			कृत्तिका पू.फा. मूल रेवती			रोहिणी उ.फा. पूर्वाषाढ़ा			मृगशिरा हस्त उत्तराषाढ़ा		
अंश	कला	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
८	००	०	४	२४	०	९	१८	१	२	१२	१	७	६	२	०	०	२	४	२४	२	९	१८	३	२	१२
८	२०	०	४	१५	०	९	०	१	१	१५	१	६	०	१	१०	१५	२	३	०	२	७	१५	३	०	०
८	४०	०	४	६	०	८	१२	१	०	१८	१	४	२४	१	९	०	२	१	६	२	५	१२	२	९	१८
९	००	०	३	२७	०	७	२४	०	११	२१	१	३	१८	१	७	१५	१	११	१२	२	३	९	२	७	६
९	२०	०	३	१८	०	७	६	०	१०	२४	१	२	१२	१	६	०	१	९	१८	२	१	६	२	४	२४
९	४०	०	३	९	०	६	१८	०	९	२७	१	१	६	१	४	१५	१	७	२४	१	११	३	२	२	१२
१०	००	०	३	०	०	६	०	०	९	०	१	०	०	१	३	०	१	६	०	१	९	०	२	०	०
१०	२०	०	२	२१	०	५	१२	०	८	३	०	१०	२४	१	१	१५	१	४	६	१	६	२७	१	९	१८
१०	४०	०	२	१२	०	४	२४	०	७	६	०	९	१८	१	०	०	१	२	१२	१	४	२४	१	७	६
११	००	०	२	३	०	४	६	०	६	९	०	८	१२	०	१०	१५	१	०	१८	१	२	२१	१	४	२४

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगिनी		१ मंगला (शुभ)			२ पिंगला (अशुभ)			३ धान्या (शुभ)			४ भ्रामरी (अशुभ)			५ भद्रिका (शुभ)			६ उल्का (अशुभ)			७ सिद्धा (शुभ)			८ संकटा (अशुभ)		
नक्षत्र		श्रवण आर्द्रा चित्रा			धनिष्ठा पुनर्वसु स्वाति			शतभिषा पुष्य विशाखा			अश्विनी श्लेषा अनुराधा पूर्वाभाद्र			भरणी मघा ज्येष्ठा उत्तराभाद्र			कृत्तिका पू.फा. मूल रेवती			रोहिणी उ.फा. पूर्वाषाढ़ा			मृगशिरा हस्त उत्तराषाढ़ा		
अंश	कला	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
११	२०	०	१	२४	०	३	१८	०	५	१२	०	७	६	०	९	०	०	१०	२४	१	०	१८	१	२	१२
११	४०	०	१	१५	०	३	०	०	४	१५	०	६	०	०	७	१५	०	९	०	०	१०	१५	१	०	०
१२	००	०	१	६	०	२	१२	०	३	१८	०	४	२४	०	६	०	०	७	६	०	८	१२	०	९	१८
१२	२०	०	०	२७	०	१	२४	०	२	१	०	३	१८	०	४	१५	०	५	१२	०	६	९	०	७	६
१२	४०	०	०	१८	०	१	६	०	१	२४	०	२	१२	०	३	०	०	३	१८	०	४	६	०	४	२४
१३	००	०	०	९	०	०	१८	०	०	२७	०	१	६	०	१	१५	०	१	२४	०	२	३	०	२	१२
१३	२०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

जो ज्योतिषी भयात गत घटी पर चन्द्र स्पष्ट करते हैं वे भयात गत घटी के चन्द्र मात्र पर से इस सारिणी से भोग्य वर्षादि जान सकते हैं। जो पंचांग के दैनिक चन्द्रस्पष्ट से चन्द्रस्पष्ट करते हैं उन्हें चन्द्रस्पष्ट से गत नक्षत्र चन्द्रस्पष्ट सारिणी से जन्मनक्षत्र में चन्द्रमा के अंश-कला ज्ञात करना चाहिए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योगिनी दशा भोग्य सारिणी (२)

(कलाफल ज्ञान हेतु)

योगिनी	१ मंगला			२ पिंगला			३ धान्या			४ भ्रामरी			५ भद्रिका			६ उल्का			७ सिद्धा			८ संकटा		
कला	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.	मा.	दि.	घ.
एक	०	०	२७	०	०	५४	०	१	२१	०	१	४८	०	२	१५	०	२	४२	०	३	९	०	३	३६
दो	०	०	५४	०	१	४८	०	२	४२	०	३	३६	०	४	३	०	५	२४	०	६	१८	०	७	१२
तीन	१	१	२१	०	२	४२	०	४	३	०	५	२४	०	६	५५	०	८	६	०	९	२७	०	१०	४८
चार	०	१	४८	०	३	३६	०	५	२४	०	७	१२	०	९	०	०	१०	४८	०	१२	३६	०	२४	२४
पाँच	०	२	१५	०	४	३०	०	६	४५	०	९	०	०	११	१५	०	१३	३०	०	१५	४५	०	१८	०
छह	०	२	४२	०	५	२४	०	८	६	०	१०	४८	०	१३	०३	०	१६	१२	०	१८	५४	०	२१	३६
सात	०	३	९	०	६	१८	०	९	२७	०	१२	३६	०	१५	४५	०	१८	५४	०	२२	३	०	२५	१२
आठ	०	३	३६	०	७	१२	०	१०	४८	०	१४	२४	०	१८	०	०	२१	३६	०	२५	१२	०	२८	४८
नौ	०	४	३	०	८	६	०	१२	९	०	१६	१२	०	२०	१५	०	२४	१८	०	२८	२१	१	२	२४
दस	०	४	३०	०	९	०	०	१३	३०	०	१८	०	०	२२	३०	०	२७	०	१	१	३०	१	६	०
ग्यारह	०	४	५७	०	९	५४	०	१४	५१	०	१९	४८	०	२४	४५	०	२९	४२	१	४	३९	१	९	३६
बारह	०	५	२४	०	१०	४८	०	१६	१२	०	२१	२६	२	२७	०	१	२	२४	१	७	४८	१	१३	१२
तेरह	०	५	५१	०	११	४२	०	१७	३३	०	२३	२४	०	२९	१५	१	५	६	१	१०	५७	१	१६	४८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

योगिनी	१ मंगला			२ पिंगला			३ धान्या			४ भ्रामरी			५ भद्रिका			६ उल्का			७ सिद्धा			८ संकटा		
चौंदह	०	६	१८	०	१२	३६	०	१८	५४	०	२५	१२	१	१	३०	१	७	४८	१	१४	६	१	२०	२४
पंद्रह	०	६	४५	०	१३	३०	०	२०	१५	०	२७	०	१	३	४५	०	१०	३०	१	१७	१५	१	२४	०
सोलह	०	७	१२	०	१४	२४	०	२१	३६	०	२७	४८	१	६	०	१	१३	१२	१	२०	२४	१	२७	३६
सत्रह	०	७	३९	०	१५	१८	०	२२	५७	१	०	३६	१	८	१५	१	१५	५४	१	२५	३३	२	१	१२
अठारह	०	८	६	०	१६	१२	०	२४	१८	१	२	२४	१	१०	३०	१	१८	३६	१	२६	४२	२	८	२४
उन्नीस	०	८	३३	०	१७	६	०	२५	३९	१	४	१२	१	१२	४५	१	२१	१८	१	२९	५१	२	८	२४

चन्द्रस्पष्ट से गत नक्षत्र स्पष्ट सारिणी

अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पु.	पु.	श्ले.	म.	पू.	उ.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अ.	ज्ये.	मू.	पू.	उ.	श्र.	ध.	श.	पू.	उ.	रे.	नक्षत्र
०	०	१	१	२	२	३	३	४	४	४	५	५	६	६	७	७	८	८	८	९	९	१०	१०	११	११	०	राशि
१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०	१३	२६	१०	२३	६	२०	३	१६	०	अंश तक
२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	२०	४०	०	कला तक
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	विकला तक

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सारिर्णा द्वारा योगिनी-दशासाधन—

(१) सर्वप्रथम चन्द्रस्पष्ट से जन्मनक्षत्र का चन्द्रस्पष्ट ज्ञात करें। उसकी विधि यह है कि तात्कालिक चन्द्रस्पष्ट में से जन्मनक्षत्र के पूर्व का जो नक्षत्र है उस (गतनक्षत्र) के चन्द्रस्पष्ट को—

"चन्द्रस्पष्ट से गत नक्षत्रस्पष्ट सारिणी" द्वारा जानकर घटा दें, जो शेष बचेगा वही जन्मनक्षत्र का स्पष्ट चन्द्र होगा।

(२) फिर उस जन्मनक्षत्र के स्पष्ट चन्द्र की अंशकला के अनुसार "योगिनीदशा भोग्य साधन सारिणी क्रमांक १" से जिस योगिनी में जन्मनक्षत्र पड़ता है उस योगिनी के नीचे तथा अंशकला की सीध में भोग्य दशा के वर्ष-मास-दिन प्राप्त कर लें।

(३) अब नक्षत्र चन्द्रस्पष्ट की कला-अंश से जितनी अधिक हो उनका फल सारिणी क्रमांक २ से प्राप्त कर सारिणी क्रमांक १ के फल में घटा दें तो योगिनीदशा का भोग्य आ जाता है।

उदाहरण—संवत् २०६० शाके १९२५ आश्विन शुक्ल ३ रविवार दिनांक २८ सितम्बर सन् २००३ ई. को मध्याह्न साढ़े ग्यारह बजे अक्षांश २६।१० रेखांश ७८।५० पर इष्टघट्यादि १३।२० पर चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ६।९°।५४'।४३" है। जन्मनक्षत्र स्वाति है। इसकी योगिनी का भुक्त भोग्य निकालना है।

सर्वप्रथम चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ६।९°।५४'।४३" में से जन्म के पूर्व (गत) नक्षत्र चित्रा के चन्द्रस्पष्ट ("चन्द्रस्पष्ट से गत नक्षत्रस्पष्ट सारिणी" में प्राप्त करके) रा. ६।६°।४०'।०" को घटाया तो राश्यादि ०।३°।२४'।४३" अर्थात् तीन अंश २४ कला प्राप्त हुए (सुविधा के लिए विकला छोड़ दी)। अब "योगिनीस्पष्ट सारिर्णा क्रमांक एक में स्वाति जन्मनक्षत्र = पिंगला योगिनी के नीचे तथा ३°।२०' (तीन अंश बीस कला) की सीध में देखा तो एक वर्ष, नौ मास तथा शून्य दिन प्राप्त हुए। अब चूँकि हमारे नक्षत्र चन्द्रस्पष्ट की चार कला अधिक हैं (२४ कला हैं और हमने फल केवल बीस कला का प्राप्त किया है) अत: शेष चार कला का फल सारिणी क्रमांक २ से प्राप्त किया तो पिंगला योगिनी के नीचे चार कला की सीध में ३ दिन ३६ घटी प्राप्त हुआ, इसे सारिणी क्रमांक १ से प्राप्त फल में घटाया तो १ वर्ष, ५ मास, २७ दिन पिंगला भोग्य है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मृत्योरन्तःप्रवेशादि फलम्

मृत्योरन्तः प्रवेशो वितरति मरणं निर्गमे नैव मृत्यु-
स्तन्निर्याणं पुरस्ताद्यदि तरुपतनं गोमृतिर्वह्निकोणे।
कार्तान्त्यां मर्त्यमृत्युर्निर्ऋति दिशि मृगस्याम्बुपे कासराणां
चण्डालैतन्निकृष्टद्विजमृतिरनिलेन्द्वीशदिक्षु क्रमेण।। १०२।।

यदि प्रश्नकाल में मृत्यु का अन्तः प्रवेश हो तो मृत्युसूचक होता है परन्तु उसका निर्गम मृत्यु नहीं करता। (१) यदि मृत्यु पूर्व दिशा में हो तो वृक्षपतन, (२) अग्निकोण में गवादि की मृत्यु, (३) दक्षिण में होने पर घर में किसी व्यक्ति की मृत्यु, (४) नैर्ऋत्य में पशु की मृति, (५) पश्चिम में मृत्यु हो तो भैंसा की मृत्यु, (६) वायव्य में होने पर चाण्डाल की मृत्यु, (७) उत्तर में निकृष्ट व्यक्ति की मृत्यु तथा (८) ईशान में होने पर किसी ब्राह्मण की मृत्यु होती है ।।१०३।।

मतान्तरम्

नैर्ऋत्यां भृत्यनाशो वा वारुण्यां वा चतुष्पदाम्।
जीवन्ति रोगिणो नूनमेतेषां सति सम्भवे।। १०३।।

यदि प्रश्नकाल में नैर्ऋत्य कोण में मृत्यु का निवास हो तो नौकरों की मृत्यु या विनाश होता है। यदि पश्चिम में मृत्यु स्थित हो तो चतुष्पदों का विनाश होता है तथा इन दिशाओं से मृत्यु का निर्गम हो तो रोग प्रश्न होने पर रोगी निश्चित रूप से जीवित रहता है ।।१०४।।

पुनश्च मृत्योरन्तःप्रवेशफलम्

प्राच्यामन्तःप्रवेशे प्रभुजनमरणं वह्निकोणेऽग्निभीति-
मूर्च्छा कस्यापि पूगाशनत इनजदिश्यात्मनोतश्च दौस्थ्यम्।
नैर्ऋत्यां पाशभृद्दिश्यति सरणमपि छर्दिरित्यब्जरोगा-
श्चापे चौर्योत्थरावः शशिनि स मृगभूः प्रष्टमूर्च्छेशकोणे।। १०४।।

अब दिशाओं के अनुसार मृत्यु का अन्तः प्रवेश कहते हैं। (१) यदि पूर्व में मृत्यु का अन्तः प्रवेश हो तो स्वामी की मृत्यु होती है। (२) यदि अग्निकोण में हो तो अग्निभय होता है। (३) यदि दक्षिण दिशा में मृत्यु का प्रवेश हो तो सुपारी लगने या तमाखू आदि के लगने से किसी की मृत्यु होती है। (४) यदि नैर्ऋत्य में मृत्यु प्रवेश हो तो स्वयं पृच्छक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

को सुपारी या तमाखू लग सकती है। (५) यदि पश्चिम से मृत्यु का प्रवेश हो तो अतिसार, प्रवाहिका, जलोदर, जलशोफ, जलवृषण (फोते में पानी पड़ जाना) तथा उरस्तोय आदि से कष्ट होता है। (६) वायव्य में मृत्यु का अन्तः प्रवेश होने पर चोर आदि के कारण कोलाहल मचता है। (७) उत्तर में अन्तः प्रवेश होने पर सिंहादि हिंसक पशुओं से विघ्न होता है तथा (८) ईशान कोण में अन्तः प्रवेश हो तब पृच्छक को मूर्च्छादि होती है ॥१०४॥

मृत्योरन्तर्गमने यल्लक्षणमिति समीरितं तस्य।
सम्भव इह यदि मरणं प्रष्टुर्निस्संशयं प्रवदेत् ॥ १०५॥

यदि उपर्युक्त वर्णित लक्षणों में कहीं भी पृच्छक की मृत्यु का निर्देश है वहाँ अवश्य ही पृच्छक की मृत्यु होती है। प्रश्नकाल में सभी लक्षणों को भलीभाँति विचार कर उत्तर देना चाहिए ॥१०५॥

सारसंग्रहमतम्

अर्कारजीवबुधशुक्रशनैश्चरेन्दु-
वारोदयेष्वनुदिनं क्रमशोऽथ दिग्भ्यः।
उद्गत्य गच्छति हि मृत्युरिह क्रमेण
कालोऽन्यथाऽह्नि निशिराशिषु च त्रिवारम् ॥ १०६॥

सारसंग्रह के अनुसार रविवार के दिन पूर्व में, मंगलवार को अग्निकोण में, गुरुवार को दक्षिण में, बुधवार को नैर्ऋत्य कोण में, शुक्रवार को पश्चिम में, शनिवार को वायव्य कोण में तथा सोमवार के दिन प्रातःकाल मृत्यु का उदय उत्तर दिशा में होता है। मृत्यु का संचरण प्रदक्षिण क्रम से होता है तथा काल का संचार मृत्यु से ठीक उल्टा अप्रदक्षिण क्रम (Anticlockwise) होता है।

इनकी एक प्रदक्षिणा दस घटी में पूरी होती है। इस प्रकार मृत्यु एवं काल की तीन प्रदक्षिणाएँ दिन में तथा तीन प्रदक्षिणाएँ रात में हुआ करती हैं ॥१०६॥

मृत्युस्पष्ट एवं कालस्पष्ट का साधन इसी ग्रंथ के पाँचवें अध्याय में देखें।

योगिन्यत्र सहोदिता मृतियमस्थाने दिनाष्टांशकं
नीत्वा गच्छति वारदिश्यनुदिनं त्वीशानदिश्यष्टमे।
प्राच्याञ्चेत् स्थितिरेव मेषवृषयोर्दृष्टिस्तुलाकीटयो-
र्याम्यादौ च तथैव यामदलयोः कोणेषु यामावधि ॥ १०७॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मृत्यु एवं यम के साथ ही योगिनी भी प्रतिदिन वार की दिशा में उदित होती है और एक याम के साथ उन दोनों के साथ उसी उदित स्थान पर रहती है। द्वितीय याम में अगले वार की दिशा और तीसरे याम में उससे अगले वार की दिशा में रहती है। इस तरह से सात यामों में सात दिशाओं में भ्रमण कर आठवें याम में प्रतिदिन ईशान दिशा में आ जाती है।

पूर्वादि दिशाओं में ''प्राच्यां मेषवृषा'' इत्यादि श्लोक के अनुसार दो-दो राशियाँ होती हैं, अतः पूर्वादि दिशाओं में योगिनी याम के पूर्वार्ध में पहली राशि में तथा उत्तरार्ध में दूसरी राशि में रहती है (जैसे कि पूर्व में मेष-वृष, अग्निकोण में मिथुन, दक्षिण में कर्क-सिंह, नैर्ऋत्य में कन्या, पश्चिम में तुला-वृश्चिक, वायव्य में धनु, उत्तर में मकर-कुंभ तथा ईशान में मीन राशि में उदित होती हैं)। योगिनी जिस राशि में रहती है उससे सातवीं राशि में उसकी दृष्टि रहती है। यदि योगिनी से पृच्छकारूढ लग्न ४ या ७ भाव में हो तो पृच्छक की मृत्यु होती है।

चर एवं स्थिर राशियों में योगिनी की स्थिति यामार्धकाल तक तथा द्विस्वभाव राशि में पूरे एक याम तक रहती है ॥१०७॥

इन्द्रेन्द्वग्न्यसुरान्तकाम्बुपमरुद्दिक्ष्वर्कचन्द्रारविद्-
वागीशस्फुजिदर्कपुत्रदिवसेषूद्याति सा योगिनी ।
यामैस्सप्तभिरेव सप्तसु दिशास्वैकैकयामक्रमा-
दास्थायन्तिमयामयोर्दिननिशोरीशानदिक्स्था भवेत् ॥ १०८॥

इन्द्र की दिशा (पूर्व), इन्दु की दिशा (उत्तर), अग्निकोण, असुर की दिशा (नैर्ऋत्य), अन्तक = यम की दिशा दक्षिण, अम्बुप = जल के पति की दिशा (वारुणी = पश्चिम), मरुत् की दिशा (वायव्य)—इन सातों दिशाओं में रविवार, सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार तथा शनिवार को क्रम से योगिनी उदित होती है। उदय की दिशा में इसी क्रम में सात यामों में प्रत्येक में एक-एक क्रम से रहकर फिर अन्तिम आठवें याम में प्रतिवार को ईशान कोण में पहुँच जाती है ॥१०९॥

तिथियोगिनी

अष्टानां च तिथीनां दलद्वये तद्वदष्टयामेषु ।
योगिन्याश्चारदिशो वक्ष्यन्ते श्लोकपादेन ॥ १०९॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रत्येक पक्ष की प्रतिपदा से अष्टमी पर्यन्त आठ तिथियों के पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध में दिन तथा रात की भाँति आठ-आठ यामों में योगिनियों का विचरण होता है । तिथि के पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध में योगिनियों का संचार एक जैसा ही होता है, जैसे कि दिन एवं रात में होता है ॥११०॥

अङ्केषु तिथियोगिनीसञ्चारकथनम्

कंसारिभोगमतिदा सोमदाराः कलावती ।
रजोगुणवती सेयं भाद्रमासि तदापगा ॥ ११०॥
लोकवर्तीशसंहारी शार्ङ्गी तद्दासपुत्रवान् ।
स्तम्भे सकृदरोगेण हतः कालोऽत्र भौमसः ॥ १११॥

अब प्रतिपदा से लेकर अष्टमी तक की तिथियों में पूर्वार्ध तथा उत्तरार्ध के हिसाब से योगिनी की दिशाओं के पूर्वादि क्रम से अंक दिये गये हैं । नवमी से अमावस्या या पूर्णिमा तक उनका क्रम उसी प्रकार से होता है, उन दिशाओं को आगे के चक्र से समझें ॥११०-१११॥

नामेषु तिथियोगिनीदिक्कथनम्

दलद्वये प्रतिपदः कंसारीत्युदिता दिशः ।
यामेष्वष्टसु विज्ञेया द्वितीयादलयोऽर्धयोः ॥ ११२॥
सोमदारादिकास्तद्वत् तृतीयदलयोः पुनः ।
रजोगुणवतीत्यादि चतुर्थीदलयोरथ ॥ ११३॥
भाद्रमासीति गदिताः पञ्चम्या दलयोस्ततः ।
लोकवर्त्यादिका षष्ठ्याः शार्ङ्गीत्याद्या दिशः स्मृतः ॥ ११४॥
स्तम्भेत्याद्यास्तु सप्तम्या अष्टम्याश्च हतादिकाः ।
नवम्यादिषु तद्वत्स्याद्यथा प्रतिपदादिषु ॥ ११५॥
दलद्वये योगिनी स्यादित्युक्ता तिथियोगिनी ।

(१) प्रतिपदा के पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध के आठों यामों में योगिनी का क्रमशः पूर्व, उत्तर, आग्नेय, नैर्ऋत्य, दक्षिण, पश्चिम, वायव्य एवं ईशान कोण में भ्रमण होता है । (२) द्वितीया के पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध में योगिनी आठों यामों में क्रमशः उत्तर, पश्चिम, ईशान, आग्नेय, पूर्व, दक्षिण, नैर्ऋत्य एवं वायव्य में संचरित होती है । (३) तृतीया के पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध के यामों में क्रमशः आग्नेय, ईशान, दक्षिण, पश्चिम, नैर्ऋत्य, वायव्य, उत्तर, पूर्व

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में योगिनी भ्रमण करती है। (४) चतुर्थी के पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध के आठों यामों में क्रमेण नैर्ऋत्य, आग्नेय, पश्चिम, उत्तर, वायव्य, ईशान, पूर्व तथा दक्षिण में संचार करती है। (५) पंचमी के दोनों दलों में दक्षिण, पूर्व, नैर्ऋत्य, वायव्य, पश्चिम, उत्तर, ईशान, आग्नेय इन दिशाओं में भ्रमण करती है। (६) षष्ठी के दोनों दलों में पश्चिम, दक्षिण, वायव्य, ईशान, उत्तर, पूर्व, आग्नेय, नैर्ऋत्य में भ्रमण होता है। (७) सप्तमी के उभय भागों में वायव्य, नैर्ऋत्य, उत्तर, पूर्व, ईशान, आग्नेय, दक्षिण तथा पश्चिम में रहती है। (८) अष्टमी को उभय दलों में क्रमशः ईशान, वायव्य, पूर्व, दक्षिण, आग्नेय, नैर्ऋत्य, पश्चिम तथा उत्तर में भ्रमण करती है ॥११५॥

जिस प्रकार से प्रतिपदादि तिथियों में भ्रमण होता है उसी भाँति आठों योगिनियाँ नवमी से लेकर पञ्चदशी तक भ्रमण करती हैं। अर्थात् प्रतिपदा तथा नवमी में द्वितीया तथा दशमी में एक जैसा योगिनी का संचार रहता है ॥११६॥

इस प्रकार दोनों दलों में योगिनी का संचार कहा गया है ॥११७॥

तिथियोगिनीप्रदर्शक चक्र

याम	प्रतिपदा नवमी	द्विर्तीया दशमी	तृतीया एका-दशी	चतुर्थी द्वादशी	पंचमी त्रयोदशी	षष्ठी चतुर्दशी	सप्तमी पञ्चदशी पूर्वार्ध	अष्टमी	**तिथियाँ**
प्रथम	१	७	२	४	३	५	६	८	**दिशा का अंक**
	पूर्व	उत्तर	आग्नेय	नैर्ऋत्य	दक्षिण	पश्चिम	वायव्य	ईशान	**दिशा का नाम**
द्वितीय	७	५	८	२	१	३	४	६	**दिशा का अंक**
	उत्तर	पश्चिम	ईशान	आग्नेय	पूर्व	दक्षिण	नैर्ऋत्य	वायव्य	**दिशा का नाम**
तृतीय	२	८	३	५	४	६	७	१	**दिशा का अंक**
	आग्नेय	ईशान	दक्षिण	पश्चिम	नैर्ऋत्य	वायव्य	उत्तर	पूर्व	**दिशा का नाम**
चतुर्थ	४	२	५	७	६	८	१	३	**दिशा का अंक**
	नैर्ऋत्य	आग्नेय	पश्चिम	उत्तर	वायव्य	ईशान	पूर्व	दक्षिण	**दिशा का नाम**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

याम	प्रतिपदा नवमी	द्वितीया दशमी	तृतीया एका-दशी	चतुर्थी द्वादशी	पंचमी त्रयोदशी	षष्ठी चतुर्दशी	सप्तमी पञ्चदशी पूर्वार्ध	अष्टमी	तिथियाँ
पंचम	३ दक्षिण	१ पूर्व	४ नैर्ऋत्य	६ वायव्य	५ पश्चिम	७ उत्तर	८ ईशान	२ आग्नेय	दिशा का अंक दिशा का नाम
षष्ठ	५ पश्चिम	३ दक्षिण	६ वायव्य	८ ईशान	७ उत्तर	१ पूर्व	२ आग्नेय	४ नैर्ऋत्य	दिशा का अंक नाम
सप्तम	६ वायव्य	४ नैर्ऋत्य	७ उत्तर	१ पूर्व	८ ईशान	२ आग्नेय	३ दक्षिण	५ पश्चिम	दिशा का अंक एवं नाम
अष्टम	८ ईशान	६ वायव्य	१ पूर्व	३ दक्षिण	२ आग्नेय	४ नैर्ऋत्य	५ पश्चिम	७ उत्तर	दिशा का अंक एवं नाम

योगिनीदृष्टिफलम्

योगिन्या यदि दृष्टौ लग्नारूढौ च जन्मलग्ने वा।
मृतिदौ भवतो जीवौ योगिन्या मुखगतश्चापि।। ११६।।

यदि योगिनी की दृष्टि प्रश्नलग्न, प्रश्नराशि, आरूढ़ राशि, जन्मलग्न एवं राशि पर पड़े तो यह योग प्रष्टा के लिए संकटदायक (मृत्युदायक) होता है (योगिनी की दृष्टि अपने से सप्तम स्थान पर होती है)। यदि प्राण योगिनी के मुख में हो (युति हो) तो मृत्युकर होता है।

चतुर्विध प्राण—प्राण चार प्रकार से साधित होता है—

(१) ''लग्नेन्दुमानदानाभ्यां'' श्लोक के अनुसार (अध्याय ५ श्लोक १९)।
(२) ''प्रश्नकालगता नाडीर्निरयत्ला विभाजयेत्'' (श्लोक २० के अनुसार)।
(३) ''प्राणो लग्ननवांश'' के अनुसार।
(४) तथा अध्याय १६ श्लोक ८६ के अनुसार ।।११६।।

स्वर्गादिप्राप्तिप्रश्नः

पातं किं नरके मे किं वासः स्वर्गे धनागमः।
कथं वेति कृते प्रश्ने वक्तव्यमथ कथ्यते।। ११७।।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यदि कोई पूछे कि मैं मृत्यु के उपरान्त नरक में जाऊँगा या स्वर्ग में अथवा धन की प्राप्ति तथा लाभ किस प्रकार से होगा ? तो इस प्रश्न का उत्तर आगे लिखी रीति से देना चाहिए ॥११९॥

षोडशदोषानां कथनम्

स्थूणत्रयविषघटिका विष्टिर्गण्डान्तवैधृतौ लाटः ।
परिवेषव्यतिपातकधूमार्गलमन्दपूर्वचतुरुदयाः ॥ ११८॥
एते दोषा नरकपतनं सूचयन्तीह नृणां
प्राग्लग्ने वा तुहिनरुचि वा सम्भवन्तोऽथवार्के ।
दुःखं मानक्षयमधनतां नारकानेव विद्या-
दस्मिन् लोके पुनरतितरां चन्द्रदोषैः स्युरेतैः ॥ ११९॥

अब प्रश्नलग्न तथा जन्मलग्न के सोलह दोषों को कहते हैं—

(१) स्थूण दोष, (२) रक्तस्थूण दोष, (३) कण्टकस्थूण दोष, (४) विषघटी, (५) विष्टि (भद्रा), (६) गण्डात दोष (मूलादि), (७) वैधृति दोष, (८) लाट दोष, (९) परिवेष, (१०) व्यतिपात दोष, (११) धूम दोष, (१२) एकार्गल दोष, (१३) शन्युदय, (१४) राहूदय, (१५) केतूदय तथा (१६) गुलिक दोष—ये सोलह दोष हैं ॥१२०॥

यदि ये उपर्युक्त दोष उदयलग्न, सूर्यलग्न तथा चन्द्रलग्न में हों तो जातक या पृच्छक इस लोक (संसार) में अनेक प्रकार के कष्टों एवं दुःखों को भोगता है । यदि ये दोष चन्द्र राशि में विद्यमान हों तो अपमानादि की पीड़ा अधिक झेलनी पड़ती है ॥१२१॥

यहाँ जो सोलह दोष वर्णित हैं उनमें विषघटी, विष्टि, गण्डान्त, लाट, वैधृति तथा एकार्गल इनका वर्णन पीछे दूसरे अध्याय में देखें । धूम, व्यतिपात तथा परिवेष (परिधि) इनका वर्णन चौथे अध्याय में है; ये अप्रकाश ग्रहों में से होते हैं । शनि, राहु, केतु इनकी स्थिति पंचांग से ज्ञात होती है । मान्दिस्पष्ट की विधि इस ग्रन्थ के अध्याय पाँच अध्याय में देखें ।

त्रिस्थूणादिस्पष्टविधिः

अर्कक्षोणीसुताभ्यां भवति गणनया नैर्ऋतं यावदस्मात्
तावत्यौ तारके द्वे क्रमश इह मते कण्टकस्थूणसंज्ञे ।
नाभ्यामामूलसंख्याद्वययुतिगणितः कण्टकस्थूणनामा;
रक्तस्थूणोवशिष्टं क्षितिसुतरहिते सिंहधृत्यंशके स्यात् ॥ १२०॥

(१) प्रश्न समय सूर्य जिस नक्षत्र में हो उस से मूल नक्षत्र तक गिनें, जो संख्या हो उतनी ही संख्या तक पुनः मूल से आगे गिने तो गणना करने में जो नक्षत्र प्राप्त होगा वह "कण्टक" कहलाता है ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(२) इसी प्रकार प्रश्नकालीन क्षोणीसुत (मंगल) जिस नक्षत्र पर अधिष्ठित हो उस भौमाधिष्ठित नक्षत्र से नैर्ऋत (निर्ऋति नामक राक्षस जिस का स्वामी है वह नक्षत्र) अर्थात् मूल नक्षत्र तक गिनें, जितनी संख्या आवे उतनी ही संख्या तक पुनः मूल नक्षत्र से आगे गणना करें तो जो नक्षत्र आयेगा वह "स्थूण" कहलायेगा।

(३) अब सूर्यनक्षत्र से मूल नक्षत्र तक गिनने पर तथा भौमनक्षत्र से मूल तक गिनने पर जो संख्याएँ प्राप्त हों उन दोनों संख्याओं को जोड़ दें (यदि इनका योग २७ से अधिक हों तो उसमें से २७ घटा दें), जो संख्या प्राप्त हो उस संख्या तक मूल नक्षत्र से पुनः गणना करें तो जो नक्षत्र प्राप्त होगा उसे "कण्टकस्थूण" कहते हैं।

(४) यदि सिंह राशि के १८ अंश अर्थात् राश्यादि ४।१८°।०'।०" में से यदि तात्कालिक मंगल के राशि-अंश-कला-विकला घटा दें तो जो राश्यादि शेष बचेंगें वह "रक्तस्थूण" नामक दोष होता है। वह जिस नक्षत्र में प्राप्त हो यह ज्ञात कर लें ॥१२०॥

इस प्रकार यह स्थूणत्रय की साधनविधि है।

उदाहरण—संवत् २०६० शाके १९२५ आश्विन कृष्ण अमावस्या शुक्रवार दिनांक २६ सितम्बर सन् २००३ ई. को दिन के साढ़े ग्यारह बजे स्थूणत्रय स्पष्ट करों।

उस समय सूर्य का नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी, मंगल का नक्षत्र धनिष्ठा तथा मंगलस्पष्ट राश्यादि १०।६°।१३'।४५" है। अब—

कण्टक साधन—सूर्य के नक्षत्र उत्तराफाल्गुनी से मूल नक्षत्र तक गिना तो आठ की संख्या प्राप्त हुई। इब मूल से फिर आठ तक आगे गिना तो उत्तराभाद्र नक्षत्र प्राप्त हुआ। यह 'कण्टक' नक्षत्र हुआ या कण्टकदोष युक्त नक्षत्र है।

(१) स्थूण साधन—मंगल धनिष्ठा नक्षत्र में स्थित है अतः धनिष्ठा से मूल तक गिनने पर तो चौबीस संख्या हुई। अब मूल से आगे २४ तक गिना तो स्वाति हुआ। यह 'स्थूण' संज्ञक अर्थात् स्थूणदोष स्वाति नक्षत्र में स्थित समझना चाहिए।

(२) कण्टकस्थूण साधन—सूर्य नक्षत्र से मूल नक्षत्र तक की संख्या ८ है तथा भौमनक्षत्र (मंगल के नक्षत्र) से मूल तक की संख्या २४ हैं। इन दोनों का योग ३२ (बत्तीस) हुआ। यह नक्षत्रों की कुल संख्या २७ से अधिक हैं अतः बत्तीस में से सत्ताईस घटाने पर पाँच शेष रहें। पाँचवीं संख्या तक अब पुनः मूल से गिना तो धनिष्ठा आया। यह "कण्टकस्थूण" दोष हुआ।

(३) रक्तस्थूण साधन—राश्यादि ४।१८°।०'।०" में से मंगल के स्पष्ट राश्यादि १०।६°।१३'।४५" को घटा दिया तो शेष राश्यादि ६।११°।४६'।१५" प्राप्त हुए। यह राश्यादि स्पष्ट 'रक्तस्थूण' नामक दोष का है। अब इसके नक्षत्र को जानने के लिए पीछे योगिनी दशा के प्रसंग में जो "चन्द्रस्पष्ट गत नक्षत्रस्पष्ट सारिणी" दी गयी है। उससे सूर्यादि प्रत्येक ग्रह के राश्यादि स्पष्ट पर यह जाना जा सकता है कि वह ग्रह किस नक्षत्र

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

में है। उस ग्रह का गत वर्तमान तथा अग्रिम नक्षत्र भी जाना जा सकता है। अतः उसमें देखा तो राश्यादि ६।११°।४६'।१५'' ये स्वाति नक्षत्र में प्राप्त हुए, अतः ''रक्तस्थूण'' नामक दोष स्वाति नक्षत्र में है।

अब यदि इन तीनों दोषों से पीड़ित नक्षत्रों में ही सूर्यस्फुट, चन्द्रस्फुट या उदयलग्नस्फुट हो तो पृच्छक के लिए मृत्युकारक होता है।

विषादिदोषैरुदितैः समेते प्रसूतिलग्ने निरयः परत्र।
आरूढभे प्रश्न उडुप्रभौ वा दोषान्वितेऽत्रोष्णकरे परत्र ।। १२१।।

यदि जन्मलग्न पूर्वकथित सोलह दोषों से युक्त हो तो मरणोपरान्त नरकों की प्राप्ति होती है। यदि आरूढ राशि प्रश्नकालीन चन्द्र की राशि उक्त दोषों से प्रभावित होती है तो भी नरक के समान ही कष्ट इस जीवन में भोगना पड़ता है।

यदि उष्णकर (सूर्य) इन दोषों से पीड़ित हो तो भी मृत्यु के पश्चात् नरक की प्राप्ति होती है ।।१२१।।

वक्तव्य—एक साथ सोलहों दोषों की प्राप्ति जन्मकालीन सूर्य-चन्द्रलग्न में हो जायें या प्रश्नकालीन उदयलग्न, सूर्य-चन्द्र तथा आरूढ में हो जायें यह कथमपि आवश्यक नहीं है। यदि सम्पूर्ण सोलहों दोष प्राप्त हों तो महान् कष्ट प्राप्त होता है। दोष जितने कम होंगे कष्ट उतना ही कम प्राप्त होगा। दोष जितने अधिक होंगे कष्ट उतना ही अधिक होगा। अनुपात से उसके फल का तारतम्य ऊहापोह करके दैवज्ञ को बताना चाहिए।

राशीनां युगकथनम्

नृणामायुः सहस्रं कृतयुगसमये तद्दलं तस्य चार्धं;
त्रेतायां द्वापरे वा कलियुग उदितः स्यात् सहस्राष्टभागः।
पूर्णार्धाङ्घ्र्यष्टभागान् निजनिजशरदां तत्तदाख्या-
लयांशारूढाः खेटाः प्रदद्युस्त्वजमुखभचतुष्कत्रिकोणः कृताद्याः ।। १२२।।

कृतयुग (सतयुग) में मनुष्यों की आयु एक सहस्र वर्ष होती थी। त्रेतायुग में उसकी आधी (पाँच सौ वर्ष) ही रह गयी। जब द्वापर आया तो मुनष्यों की आयु उससे भी आधी अर्थात् मात्र ढाई सौ (२५०) वर्ष ही होने लगी। अब कलियुग में तो मनुष्य की आयु उससे भी आधी अर्थात् सवा सौ वर्ष (१२५) ही होती है।

जन्मकुण्डली में जो भी आयुप्रदाता ग्रह सतयुग का प्रतिनिधित्व करने वाली राशियों अथवा उनके नवांश में बैठे हों तो वे अपने पूरे वर्ष आयु के लिए देते हैं। यदि त्रेता की राशिनवांश में वे ग्रह हों तो वे अपने निर्धारित वर्षों में से केवल आधे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वर्ष ही देते हैं । यदि वे ग्रह द्वापरयुग की राशि या नवांश में स्थित हों तो केवल एक चौथाई वर्ष ही देते हैं । यदि वे कलियुग की राशियों में हों तो अपनी आयु का अष्टमांश (१/८) ही देते हैं ।

मेष के त्रिकोण की राशियाँ सतयुग की राशियाँ हैं । वृष के त्रिकोण की राशियाँ त्रेता युग की राशियाँ होती हैं । मिथुन के त्रिकोण की राशियाँ द्वापर की तथा कर्कत्रिकोण की राशियाँ कलियुग की मानी गयी हैं ।।१२२।।

राशियों के युगों का चक्र

मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुंभ	मीन	राशियाँ
सत-युग	त्रेता	द्वापर	कलि-युग	सत-युग	त्रेता	द्वापर	कलि	सत-युग	त्रेता	द्वापर	कलि	युग

युगराशिजन्मलग्नाद् धनलाभादिकथनम्

यज्जननं कृतयुगभे दैवनियोगादुपेत्य सकलजनाः ।
धनमस्मै दद्युरथ त्रेतायामर्थलब्धिरटनेन ।। १२३।।
द्वापरभे स्वीयधनव्यापारात् कलियुगे न केनापि ।
एवं फलदा विहगाः कृतपूर्वयुगाभिधानराशिगताः।। १२४।।

(१) सतयुग की राशियों में जो जातक उत्पन्न होते हैं अर्थात् जिनका जन्म मेष, सिंह, धनु में होता है उन्हें दैवयोग से ही धन की प्राप्ति होती रहती है ।

(२) त्रेतायुग की राशियों में जन्मे लोग भ्रमण कर के धन कमाते हैं ।

(३) द्वापर की राशियों में जन्मे लोग व्यापार से धनार्जन करते हैं ।

(४) कलियुग की राशिंयों में जन्में लोगों को किसी तरह से धनलाभ नहीं होता है ।

ग्रह जिस प्रकार की राशियों में बैठे हों तदनुसार चातुर्यपूर्वक भविष्यवाणी करें ।।१२३-१२४।।

दशान्तर्दशायां फलकथनम्

स्वदशापहृतिप्रभृतिषु समयेष्विह चिन्त्यतां तदंशेऽपि ।। १२५।।

ग्रहों की दशान्तर्दशा के अनुसार तथा उसके अंश (कालचक्र में प्रयुक्त नवांश या अंश) के अनुसार फल कहें ।।१२५।।

कालचक्र दशा के अंश (नवांश) आदि दशमाध्याय में देखें । आगे कालचक्रदशा स्पष्ट की चन्द्रस्पष्ट के आधार पर सारणियाँ दी जा रही हैं—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्र दशास्पष्ट की सारिणी १ (क) पूर्णायु वर्ष १००

१ नक्षत्र एवं चरण	२ स्पष्ट चन्द्र चरण प्रारंभ			३ स्पष्ट चन्द्र			४ स्पष्ट चन्द्र			५ स्पष्ट चन्द्र			६ स्पष्ट चन्द्र			७ स्पष्ट चन्द्र		
	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.
अ. प्र.	०	०	०	०	०	२०	०	०	४०	०	१	०	०	१	२०	०	१	४०
भ. प्र.	०	१३	२०	०	१३	४०	०	१४	००	०	१४	२०	०	१४	४०	०	१५	००
कृ. प्र.	०	२६	४०	०	२७	०	०	२७	२०	०	२७	४०	०	२८	००	०	२८	२०
रो. च.	१	२०	०	१	२०	२०	१	२०	४०	१	२१	०	१	२१	२०	१	२१	४०
मृ. च.	२	३	२०	२	३	४०	२	४	०	२	४	२०	२	४	४०	२	५	०
आ. च.	२	१६	४०	२	१७	०	२	१७	२०	२	१७	४०	२	१८	०	२	१८	२०
पुन. प्र.	२	२०	०	२	२०	२०	२	२०	४०	२	२१	०	२	२१	२०	२	२१	४०
पु. प्र.	३	३	२०	३	३	४०	३	४	०	३	४	२०	३	४	४०	३	५	०
श्ले. प्र.	३	१६	४०	३	१७	०	३	१७	२०	३	१७	४०	३	१८	०	३	१८	२०
म. च.	४	१०	००	४	१०	२०	४	१०	४०	४	११	०	४	११	२०	४	११	४०
पू.फा. च.	४	२३	२०	४	२३	४०	४	२४	०	४	२४	२०	४	२४	४०	४	२५	०
उ.फा. च.	५	६	४०	५	७	०	५	७	२०	५	७	४०	५	८	०	५	८	२०
ह. प्र.	५	१०	०	५	१०	२०	५	१०	४०	५	११	०	५	११	२०	५	११	४०
चि. प्र.	५	२३	२०	५	२३	४०	५	२४	०	५	२४	२०	५	२४	४०	५	२५	०
स्वा. प्र.	६	६	४०	६	७	०	६	७	२०	६	७	४०	६	८	०	६	८	२०
वि. च.	७	०	०	७	०	२०	७	०	४०	७	१	०	७	१	२०	७	१	४०
अनु. च.	७	१३	२०	७	१३	४०	७	१४	०	७	१४	२०	७	१४	४०	७	१५	०
ज्ये. च.	७	२६	४०	७	२७	०	७	२७	२०	७	२७	४०	७	२८	०	७	२८	२०
मू. प्र.	८	०	०	८	०	२०	८	०	४०	८	१	०	८	१	२०	८	१	४०
पू.षा. प्र.	८	१३	२०	८	१३	४०	८	१४	०	८	१४	२०	८	१४	४०	८	१५	०
उ.षा. प्र.	८	२६	४०	८	२७	०	८	२७	२०	८	२७	४०	८	२८	०	८	२८	२०
श्र. च.	९	२०	०	९	२०	२०	९	२०	४०	९	२१	०	९	२१	२०	९	२१	४
ध. च.	२०	३	२०	१०	३	४०	१०	४	०	१०	४	२०	१०	४	४०	१०	५	०
शत. च.	१०	१६	४०	१०	१७	०	१०	१७	२०	१०	१७	४०	१०	१८	०	१०	१८	२०
पू.भा. प्र.	१०	२०	०	१०	२०	२०	१०	२०	४०	१०	२१	०	१०	२१	२०	१०	२१	४
उ.भा. प्र.	११	३	२०	११	३	४०	११	४	०	११	४	२०	११	४	४०	११	५	०
रे. प्र	११	१६	४०	११	१७	०	११	१७	२०	११	१७	४०	११	१८	०	११	१८	२०
भोग्य दशा	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
	१००	०	०	९०	०	०	८०	०	०	७०	०	०	६०	०	०	५०	०	०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्र दशास्पष्ट की सारिणी १ (क) पूर्णायु वर्ष १००

८ स्पष्ट चन्द्र			९ स्पष्ट चन्द्र			१० स्पष्ट चन्द्र			११ स्पष्ट चन्द्र			१२ स्पष्ट चन्द्र चरण समाप्त			एक
रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	नक्षत्र चरण
०	२	०	०	२	२०	०	२	४०	०	३	०	०	३	२०	अश्विनी I
०	१५	२०	०	१५	४०	०	१६	००	०	१६	२०	०	१६	४०	भरणी I
०	२८	४०	०	२९	००	०	२९	२०	०	२९	४०	१	०	०	कृत्तिका I
१	२२	०	१	२२	२०	१	२२	४०	१	२३	००	१	२३	२०	रोहिणी IV
२	५	२०	२	५	४०	२	६	००	२	६	२०	२	६	४०	मृग. IV
२	१८	४०	२	१९	००	२	१९	२०	२	१९	४०	२	२०	०	आर्द्रा IV
२	२२	००	२	२२	२०	२	२२	४०	२	२३	०	२	२३	२०	पुन. I
३	५	२०	३	५	४०	३	६	०	३	६	२०	३	६	४०	पुष्य I
३	१८	४०	३	१९	०	३	१९	२०	३	१९	४०	३	२०	०	श्लेषा I
४	१२	१०	४	१२	२०	४	१२	४०	४	१३	०	४	१३	२०	मघा IV
४	२५	२०	४	२५	४०	४	२६	०	४	२६	२०	४	२६	४०	पू.फा. IV
५	८	४०	५	९	००	५	९	२०	५	९	४०	५	१०	०	उ.फा. IV
५	१२	०	५	१२	२०	५	१२	४०	५	१३	००	५	१३	२०	हस्त I
५	२५	२०	५	२५	४०	५	२६	०	५	२६	२०	५	२६	४०	चित्रा I
६	८	४०	६	९	०	६	९	२०	६	९	४०	६	१०	०	स्वाति I
७	२	०	७	२	२०	७	२	४०	७	३	०	७	३	२०	विशाखा IV
७	१५	२०	७	१५	४०	७	१६	०	७	१६	४०	७	१६	४०	अनु. IV
७	२८	४०	७	२९	०	७	२९	२०	७	२९	४०	८	०	०	ज्येष्ठा IV
८	२	०	८	२	२०	८	२	४०	८	३	०	८	३	२०	मूल I
८	१५	२०	८	१५	४०	८	१६	०	८	१६	२०	८	१६	४०	पू.षा. I
८	२८	४०	८	२९	०	८	२९	२०	८	२९	४०	९	०	०	उ.षा. I
९	२२	०	९	२२	२०	९	२२	४०	९	२३	०	९	२३	२०	श्रवण IV
१०	५	२०	१०	५	४०	१०	६	०	१०	६	२०	१०	६	४०	धनिष्ठा IV
१०	१८	४०	१०	१९	०	१०	१९	२०	१०	१९	४०	१०	२०	०	शत. IV
१०	२२	०	१०	२२	२०	१०	२२	४०	१०	२३	०	१०	२३	२०	पू.भा. IV
११	५	२०	११	५	४०	११	६	०	११	६	२०	११	६	४०	उ.भा. I
११	१८	४०	११	१९	०	११	१९	२०	११	१९	४०	११	२०	०	रेवती I
भोग्य वर्ष	४० वर्ष		३० वर्ष			२०वर्ष			१० वर्ष			शून्य वर्ष			भोग्य दशा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य सारिणी क्र० १ (ख) पूर्णायु ८५ वर्ष

१	२			३			४			५			६			७		
नक्षत्र एवं चरण	स्पष्ट चन्द्र चरण प्रारंभ			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र		
	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.
अश्वि.II	०	३	२०	०	३	४०	०	४	०	०	४	२०	०	४	४०	०	५	०
भर. II	०	१६	४०	०	१७	०	०	१७	२०	०	१७	४०	०	१८	०	०	१८	२०
कृ. II	१	०	०	१	०	२०	१	०	४०	१	१	०	१	१	२०	१	१	४०
रो. III	१	१६	४०	१	१७	०	१	१७	२०	१	१७	४०	१	१८	०	१	१८	२०
मृ. III	२	०	०	२	०	२०	२	०	४०	२	१	०	२	१	२०	२	१	४०
आ. III	२	१३	२०	२	१३	४०	२	१४	०	२	१४	२०	२	१४	४०	२	१५	०
पुन. II	२	२३	२०	२	२३	४०	२	२४	०	२	२४	२०	२	२४	४०	२	२५	०
पु. II	३	६	४०	३	७	०	३	७	२०	३	७	४०	३	८	०	३	८	२०
श्ले. II	३	२०	०	३	२०	२०	३	२०	४०	३	२१	०	३	२१	२०	३	२१	४०
म. III	४	६	४०	४	७	०	४	७	२०	४	७	४०	४	८	०	४	८	२०
पू.फा. III	४	२०	०	४	२०	२०	४	२०	४०	४	२१	०	४	२१	२०	४	२१	४०
उ.फा. III	५	३	२०	५	३	४०	५	४	०	५	४	२०	५	४	४०	५	५	०
ह. II	५	१३	२०	५	१३	४०	५	१४	०	५	१.४	२०	५	१४	४०	५	१५	०
चि. II	५	२.६	४०	५	२७	०	५	२७	२०	५	२७	४०	५	२८	०	५	२८	२०
स्वा. II	६	१०	०	५	१०	२०	५	१०	४०	५	११	०	५	११	२०	५	११	४०
वि. III	६	२६	४०	६	२७	०	६	२७	२०	६	२७	४०	६	२८	०	६	२८	२०
अनु. III	७	१०	०	७	१०	२०	७	१०	४०	७	११	०	७	११	२०	७	११	४०
ज्ये. III	७	२३	२०	७	२३	४०	७	२४	०	७	२४	२०	७	२४	४०	७	२५	०
मूल II	८	३	२०	८	३	४०	८	४	०	८	४	२०	८	४	४०	८	५	०
पू.षा. II	८	१६	४०	८	१७	०	८	१७	२०	८	१७	४०	८	१८	०	८	१८	२०
उ.षा. II	९	०	०	९	०	२०	९	०	४०	९	१	०	९	१	२०	९	१	४०
श्रवण III	९	१६	४०	९	१७	०	९	१७	२०	९	१७	४०	९	१८	०	९	१८	२०
धनि.III	१०	०	०	१०	०	२०	१०	०	४०	१०	१	०	१०	१	२०	१०	१	४०
शत.III	१०	१३	२०	१०	१३	४०	१०	१४	०	१०	१४	२०	१०	१४	४०	१०	१५	०
पू.भा.II	१०	२३	२०	१०	२३	४०	१०	२४	०	१०	२४	२०	१०	२४	४०	१०	२५	०
उ.भा.II	११	६	४०	११	७	०	११	७	२०	११	७	४०	११	८	०	११	८	२०
रेवती II	११	२०	०	११	२०	२०	११	२०	४०	११	२१	०	११	२१	२०	११	२१	४०
दशा	वर्ष	मास	दिन	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
भोग्य	१५	०	०	७६	६	०	६८	०	०	५७	६	०	५१	०	०	४२	६	०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य सारिणी क्र. १ (ख) पूर्णायु ८५ वर्ष

८			९			१०			११			१२			एक
स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र चरण समाप्ति			नक्षत्र
रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	एवं चरण
०	५	२०	०	५	४०	०	६	०	०	६	२०	०	६	४०	१ II
०	१८	४०	०	१९	०	०	१९	२०	०	१९	४०	०	२०	०	२ II
१	२	०	१	२	२०	१	२	४०	१	३	०	१	३	२०	३ II
१	१८	४०	१	१९	०	१	१९	२०	१	१९	४०	१	२०	०	४ III
२	२	०	२	२	२०	२	२	४०	२	३	०	२	३	२०	५ III
२	१५	२०	२	१५	४०	२	१६	०	२	१६	२०	२	१६	४०	६ III
२	२५	२०	२	२५	४०	२	२६	०	२	२६	२०	२	२६	४०	७ II
३	८	४०	३	९	०	३	९	२०	३	९	४०	३	१०	०	८ II
३	२२	०	३	२२	२०	३	२२	४०	३	२२	००	३	२३	२०	९ II
४	८	४०	४	९	०	४	९	२०	९	४	०	४	१०	००	१० III
४	२२	०	४	२२	२०	४	२२	४०	४	२३	०	४	२३	२०	११ III
५	५	२०	५	५	४०	५	६	०	५	६	२०	५	६	४०	१२ III
५	१५	२०	५	१५	४०	५	१६	०	५	१६	२०	५	१६	४०	१३ II
५	२८	४०	५	२९	०	५	२९	२०	५	२९	४०	६	०	०	१४ II
६	१२	०	६	१२	२०	६	१२	४०	६	१३	०	६	१३	२०	१५ II
६	२८	४०	६	२९	०	६	२९	२०	६	२९	४०	७	०	०	१६ II
७	१२	०	७	१२	२०	७	१२	४०	७	१३	०	७	१३	२०	१७ II
७	२५	२०	७	२५	४०	७	२६	०	७	२६	२०	७	२६	४०	१८ II
८	५	२०	८	५	४०	८	६	०	८	६	२०	८	६	४०	१९ II
८	१८	४०	८	१९	००	८	१९	२०	८	१९	४०	८	२०	०	२० II
९	२	०	९	२	२०	९	२	४०	९	३	०	९	३	२०	२१ II
९	१८	४०	९	१९	०	९	१९	२०	९	१९	४०	९	२०	०	२२ III
१०	२	०	१०	२	२०	१०	२	४०	१०	३	०	१०	३	२०	२३ III
१०	१५	२०	१०	१५	४०	१०	१६	०	१०	१६	२०	१०	१६	४०	२४ III
१०	२५	२०	१०	२५	४०	१०	२६	०	१०	२६	२०	१०	२६	४०	२५ II
११	८	४०	११	९	०	११	९	२०	११	९	४०	११	१०	०	२६ II
११	२२	०	११	२२	२०	११	२२	४०	११	२३	०	११	२३	२०	२७ II
वर्ष	मास	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	दशा
३४	०	०	२५	६	०	१७	०	०	८	६	०	०	०	०	भोग्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य सारणी क्र० १ (ग) पूर्णायु ८३ वर्ष

१	२			३			४			५			६			७		
नक्षत्र एवं चरण	स्पष्ट चन्द्र चरण प्रारंभ			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र		
	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.
अ. III	०	६	४०	०	७	०	०	७	२०	०	७	४०	०	८	०	०	८	२०
भ. III	०	२०	०	०	२०	२०	०	२०	४०	०	२१	०	०	२१	२०	०	२१	४०
कृ. III	१	३	२०	१	३	४०	१	४	०	१	४	२०	१	४	४०	१	५	०
रो. II	१	१३	२०	१	१३	४०	१	१४	०	१	१४	२०	१	१४	४०	१	१५	०
मृ. II	१	२६	४०	१	२७	०	१	२७	२०	१	२७	४०	१	२८	०	१	२८	२०
आ.II	२	१०	०	२	१०	२०	२	१०	४०	२	११	०	२	११	२०	२	११	४०
पुन.III	२	२६	४०	३	२७	०	३	२७	२०	३	२७	४०	३	२८	०	३	२८	२०
पुष्य.III	३	१०	००	३	१०	२०	३	१०	४०	३	११	०	३	११	२०	३	११	४०
श्ले. III	३	२३	२०	३	२३	४०	३	२४	०	३	२४	२०	३	२४	४०	३	२५	०
म. II	४	३	२०	४	३	४०	४	४	०	४	४	२०	४	४	४०	४	५	०
पू.फा.II	४	१६	४०	४	१७	०	४	१७	२०	४	१७	४०	४	१८	०	४	१८	२०
उ.फा.II	५	०	००	५	०	२०	५	०	४०	५	१	०	५	१	२०	५	१	४०
ह.III	५	१६	४०	५	१७	०	५	१७	२०	५	१७	४०	५	१८	०	५	१८	२०
चि.III	६	०	०	६	०	२०	६	०	४०	६	१	०	६	१	२०	६	१	४०
स्वा.III	६	१३	२०	६	१३	४०	६	१४	०	६	१४	२०	६	१४	४०	६	१५	०
वि.II	६	२३	२०	६	२३	४०	६	२४	०	६	२४	२०	६	२४	४०	६	२५	०
अनु.II	७	६	४०	७	७	०	७	७	२०	७	७	४०	७	८	०	७	८	२०
ज्ये.II	७	२०	०	७	२०	२०	७	२०	४०	७	२१	०	७	२१	२०	७	२१	४०
मू.III	८	६	४०	८	७	०	८	७	२०	८	७	४०	८	८	०	८	८	२०
पू.षा.III	८	२०	०	८	२०	२०	८	२०	४०	८	२१	०	८	२१	२०	८	२१	४०
उ.षा.III	९	३	२०	९	३	४०	९	४	०	९	४	२०	९	४	४०	९	५	०
श्रव.II	९	१३	२०	९	१३	४०	९	१४	०	९	१४	२०	९	१४	४०	९	१५	०
ध. II	९	२६	४०	९	२७	०	९	२७	२०	९	२७	४०	९	२८	०	९	२८	२०
शत. II	१०	१०	०	१०	१०	२०	१०	१०	४०	१०	११	०	१०	११	२०	१०	११	४०
पू.भा.III	१०	२६	४०	१०	२७	०	१०	२७	२०	१०	२७	४०	१०	२८	०	१०	२८	२०
उ.भा.III	११	१०	०	११	१०	२०	११	१०	४०	११	११	०	११	११	२०	११	११	४०
रे.III	११	२३	२०	११	२३	४०	११	२४	०	११	२४	२०	११	२४	४०	११	२५	०
दशा	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
भोग्य	८३	०	०	७४	८	१२	६६	४	२४	५८	१	०६	४९	९	१८	४१	६	००

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य सारिणी क्रमांक १ (ग) पूर्णायु ८३ वर्ष

८			९			१०			११			१२			
स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र चरण समाप्ति			एक नक्षत्र एवं चरण
रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	
०	८	४०	०	९	०	०	९	२०	०	९	४०	०	१०	०	अश्विनी III
०	२२	०	०	२२	२०	०	२२	४०	२	२३	०	०	२३	२०	भरणी III
१	५	२०	१	५	४०	१	६	०	१	६	२०	१	६	४०	कृत्तिका III
१	१५	२०	१	१५	४०	१	१६	०	१	१६	२०	१	१६	४०	रोहणी II
१	२८	४०	१	२९	०	१	२९	२०	१	२९	४०	२	०	०	मृगशिरा II
२	१२	०	२	१२	२०	२	१२	४०	२	१३	०	२	१३	२०	आर्द्रा II
३	२८	४०	३	२९	०	३	२९	२०	३	२९	४०	३	०	०	पुनर्वसु III
३	१२	०	३	१२	२०	३	१२	४०	३	१३	०	३	१३	२०	पुष्य III
३	२५	२०	३	२५	४०	३	२६	०	३	२६	२०	३	२६	४०	श्लेषा III
४	५	२०	४	५	४०	४	६	०	४	६	२०	४	६	४०	मघा II
४	१८	४०	४	१९	००	४	१९	२०	४	१९	४०	४	२०	००	पूर्वाफा.II
५	२	०	५	२	२०	५	२	४०	५	३	०	५	३	२०	उत्तराफा.II
५	१८	४०	५	१९	०	५	१९	२०	५	१९	४०	५	२०	०	हस्त II
६	२	०	६	२	२०	६	२	४०	६	३	०	६	३	२०	चित्रा II
६	१५	२०	६	१५	४०	६	१६	०	६	१६	२०	६	१६	४०	स्वाति II
६	२५	२०	६	२५	४०	६	२६	०	६	२६	२०	६	२६	४०	विशाखा II
७	८	४०	७	९	०	७	९	२०	७	९	४०	७	१०	०	अनुराधा II
७	२२	०	७	२२	२०	७	२२	४०	७	२३	०	७	२३	२०	ज्येष्ठा II
८	८	४०	८	९	०	८	९	२०	८	९	४०	८	१०	०	मूल III
८	२२	०	८	२२	२०	८	२२	४०	८	२३	०	८	२३	२०	पूर्वाषाढ़ा III
९	५	२०	९	५	४	९	६	०	९	६	२०	९	६	४०	उत्तराषाढा III
९	१५	२०	९	१५	४०	९	१६	०	९	१६	२०	९	१६	४०	श्रवण II
९	२८	४०	९	२९	०	९	२९	२०	९	२९	४०	१०	०	०	धनिष्ठा II
१०	१२	०	१०	१२	२०	१०	१२	४०	१०	१३	०	१०	१३	२०	शतभिषा II
१०	२८	४०	१०	२९	०	१०	२९	२०	१०	२९	४०	११	०	०	पूर्वभाद्र III
११	१२	०	११	१२	२०	११	१२	४०	११	१३	०	११	१३	२०	उत्तराभाद्र III
११	२५	२०	११	२५	४०	११	२६	०	११	२६	२०	११	२६	४०	रेवती III
व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	दशा.
३३	०२	१२	२४	१०	२४	१६	७	६	८	३	१८	०	०	०	भोग्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्र दशा भोग्य सारिणी क्र० १ (घ) पूर्णायु ८६ वर्ष

१	२			३			४			५			६			७		
नक्षत्र एवं चरण	स्पष्ट चन्द्र चरण प्रारंभ			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र			स्पष्ट चन्द्र		
	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.
अश्वि.IV	०	१०	०	०	१०	२०	०	१०	४०	०	११	०	०	११	२०	०	११	४०
भ.IV	०	२३	२०	०	२३	४०	०	२४	०	०	२४	२०	०	२४	४०	०	२५	००
कृ.IV	१	६	४०	१	७	०	१	७	२०	१	७	४०	१	८	०	१	८	२०
रो. I	१	१०	०	१	१०	२०	१	१०	४०	१	११	०	१	११	२०	१	११	४०
मृ. I	१	२३	२०	१	२३	४०	१	२४	०	१	२४	२०	१	२४	४०	१	२५	०
आ. I	२	६	४०	२	७	०	२	७	२०	२	७	४०	२	८	०	२	८	२०
पुन.IV	३	०	०	३	०	२०	३	०	४०	३	१	०	३	१	२०	३	१	४०
पु.IV	३	१३	२०	३	१३	४०	३	१४	०	३	१४	२०	३	१४	४०	३	१५	०
श्ले. IV	३	२६	४०	३	२७	०	३	२७	२०	३	२७	४०	३	२८	०	३	२८	२०
म. I	४	०	०	४	०	२०	४	०	४०	४	१	०	४	१	२०	४	१	४०
पू.फा. I	४	१३	२०	४	१३	४०	४	१४	०	४	१४	२०	४	१४	४०	४	१५	०
उ.फा. I	४	२६	४०	४	२७	०	४	२७	२०	४	२७	४०	४	२८	०	४	२८	२०
ह.IV	५	२०	०	५	२०	२०	५	२०	४०	५	२१	०	५	२१	२०	५	२१	४०
चि.IV	६	०३	२०	६	३	४०	६	४	०	६	४	२०	६	४	४०	६	५	०
स्वा.IV	६	१६	४०	६	१७	०	६	१७	२०	६	१७	४०	६	१८	०	६	१८	२०
वि. I	६	२०	०	६	२०	२०	६	२०	४०	६	२१	०	६	२१	२०	६	२१	४०
अनु. I	७	३	२०	७	३	४०	७	४	०	७	४	२०	७	४	४०	७	५	०
ज्ये.I	७	१६	४०	७	१७	०	७	१७	२०	७	१७	४०	७	१८	०	७	१८	२०
मूल IV	८	१०	०	८	१०	२०	८	१०	४०	८	११	०	८	११	२०	८	११	४०
पू.षा.IV	८	२३	२०	८	२४	४०	८	२४	०	८	२४	२०	८	२४	४०	८	२५	०
उ.षा. IV	९	६	४०	९	७	०	९	७	२०	९	७	४०	९	८	०	९	८	२०
श्र. I	९	१०	०	९	१०	२०	९	१०	४०	९	११	०	९	११	२०	९	११	४०
धनि. I	९	२३	२०	९	२३	४०	९	२४	०	९	२४	२०	९	२४	४०	९	२५	०
शत. I	१०	६	४०	१०	७	०	१०	७	२०	१०	७	४०	१०	८	०	१०	८	२०
पू.भा.IV	११	०	०	११	०	२०	११	०	४०	११	१	०	११	१	२०	११	१.	४०
उ.भा.IV	११	१३	२०	११	१३	४०	११	१४	०	११	१४	२०	११	१४	४०	११	१५	०
रेवती IV	११	२६	४०	११	२७	०	११	२७	२०	११	२७	४०	११	२८	०	११	२८	२०
दशा	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.
भोग्य	८६	०	०	७७	४	२४	६८	९	१८	६०	०	१२	५१	७	६	४३	०	०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य सारिणी क्रमांक १ (घ) पूर्णायु ८६ वर्ष

८			९			१०			११			१२			
स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र			स्पष्ट चंद्र चरण समाप्ति			एक नक्षत्र एवं चरण
रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	रा.	अं.	क.	
०	१२	०	०	१२	२०	०	१२	४०	०	१३	०	०	१३	२०	अश्वि. IV
०	२५	२०	०	२५	४०	२	२६	००	०	२६	२०	०	२६	४०	भरणी IV
१	८	४०	१	९	०	१	९	२०	१	९	४०	१	१०	०	कृत्तिका IV
१	१२	०	१	१२	२०	१	१२	४०	१	१३	०	१	१३	२०	रोहिणी I
१	२५	२०	१	२५	४०	१	२६	०	१	२६	२०	१	२६	४०	मृगशिरा I
२	८	४०	२	९	०	२	९	२०	२	९	४०	२	१०	००	आर्द्रा I
३	२	०	३	२	२०	३	२	४०	३	३	०	३	३	२०	पुनर्वसु IV
३	१५	२०	३	१५	४०	३	१६	०	३	१६	२०	३	१६	४०	पुष्य IV
३	२८	४०	३	२९	०	३	२९	२०	३	२९	४०	४	०	०	श्लेषा IV
४	२	०	४	२	२०	४	२	४०	४	३	०	४	३	२०	मघा I
४	१५	२०	४	१५	४०	४	१६	०	४	१६	२०	४	१६	४०	पू.फा. I
४	२८	४०	४	२९	०	४	२९	२०	४	२९	४०	५	०	०	उ.फा. I
५	२२	०	५	२२	२०	५	२२	४०	५	२३	००	५	२३	२०	हस्त IV
६	५	२०	६	५	४०	६	६	०	६	६	२०	६	६	४०	चित्रा IV
६	१८	४०	६	१९	०	६	१९	२०	६	१९	४०	६	२०	०	स्वाति IV
६	२२	०	६	२२	२०	६	२२	४०	६	२३	०	६	२३	२०	विशाखा I
७	५	२०	७	५	४०	७	६	०	७	६	२०	७	६	४०	अनुराधा I
७	१८	४०	७	१९	०	७	१९	२०	७	१९	४०	७	२०	०	ज्येष्ठा I
८	१२	०	८	१२	२०	८	१२	४०	८	१३	००	८	१३	२०	मूल IV
८	२५	२०	८	२५	४०	८	२६	०	८	२६	२०	८	२६	४०	पूर्वाषाढाIV
९	८	४०	९	९	०	९	९	२०	९	९	४०	९	१०	०	उत्तरापाढ़ा IV
९	१२	०	९	१२	२०	९	१२	४०	९	१३	०	९	१३	२०	श्रवण I
९	२५	२०	९	२५	४०	९	२६	०	९	२६	२०	९	२६	४०	धनिष्ठा I
१०	८	४०	१०	९	०	१०	९	२०	१०	९	४०	१०	१०	०	शतभिषा I
११	२	०	११	२	२०	११	२	४०	११	३	०	११	०३	२०	पूर्वाभाद्र IV
११	१५	२०	११	१५	४०	११	१६	०	११	१६	२०	११	१६	४०	उत्तराभाद्र IV
११	२८	४०	११	२९	०	११	२९	२०	११	२९	४०	०	०	०	रेवती IV
व.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	वर्ष.	मा.	दि.	वर्ष.	मा.	दि.	व.	मा.	दि.	दशा
३४	४	२४	२५	९	१८	१७	२	१२	८	७	६	०	०	०	भोग्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कालचक्रदशा भोग्य साधन सारिणी क्रमांक २

सारिणी क्रमांक	१क के अनुसार			१ख के अनुसार			१ग के अनुसार				१घ के अनुसार			
पूर्णायु वर्ष	१०० सौ वर्ष			८५ पचासी वर्ष			८३ तिरासी वर्ष				८६ छियासी वर्ष			
कलाएँ	वर्ष	मास	दिन	वर्ष	मास	दिन	वर्ष	मास	दिन	घटी	व.	मा.	दि.	घ.
एक	०	६	०	०	५	३	०	४	२९	२४	०	५	४	४८
दो	१	०	०	०	१०	६	०	९	२८	४८	०	१०	९	३६
तीन	१	६	०	१	३	९	१	२	२८	१२	१	३	१४	२४
चार	२	०	०	१	८	१२	१	७	२७	३६	१	८	१९	१२
पाँच	२	६	०	२	१	१५	२	०	२७	०	२	१	२४	००
छह	३	०	०	२	६	१८	२	५	२६	२४	२	६	२८	४८
सात	३	६	०	२	११	२१	२	१०	२५	४८	३	०	३	३६
आठ	४	०	०	३	४	२४	३	३	२५	१२	३	५	८	२४
नौ	४	६	०	३	९	२७	३	८	२४	३६	३	१०	१३	१२
दस	५	०	०	४	३	००	४	१	२४	०	४	३	१८	००
ग्यारह	५	६	०	४	८	३	४	५	२३	२४	४	८	२२	४८
बारह	६	०	०	५	१	६	४	९	२३	४८	५	१	२७	३६
तेरह	६	६	०	५	६	९	५	२	२२	१२	५	७	२	२४
चौदह	७	०	०	५	११	१२	५	७	२१	३६	६	०	७	१२
पन्द्रह	७	६	०	६	४	१५	६	२	२१	०	६	५	१२	००
सोलह	८	०	०	६	९	१८	६	७	२०	२४	६	१०	१६	४८
सत्रह	८	६	०	७	२	२१	७	०	१९	४८	७	३	२१	३६
अठारह	९	०	०	७	७	२४	७	४	१९	१२	७	८	२६	२४
उन्नीस	९	६	०	७	०	२७	७	९	१९	३६	८	२	१	१२
बीस	१०	०	०	८	६	००	८	३	१८	०	८	७	६	००

सारिणियों द्वारा भुक्त भोग्य ज्ञान की सरलतम विधि—जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट के द्वारा कालचक्र भोग्य दशा ज्ञात करने के लिए पाँच सारिणियाँ दी गई हैं। वस्तुतः प्रथम चार सारिणियाँ तो एक ही सारिणी के चार भाग हैं। अतः उन्हें सारिणी क्रमांक १ (क), १(ख), १(ग) तथा १(घ) के नाम से सूचित किया गया है। उन सारणियों का निर्माण नक्षत्र के पूरे चरण को प्रति बीस कला के अन्तर पर दस भागों में बाँटकर किया गया है। पूर्णायु वर्ष १००, ८५ तथा ८६ के लिए पृथक् - पृथक् चार सारिणी हैं, उन्हें क्रमशः

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

(क), (ख), (ग) तथा (घ) से सूचित किया गया है । उनमें कोष्ठक क्रमांक २ का चन्द्रस्पष्ट कोष्ठक क्रमांक १ में दिये गये २७ नक्षत्रों के उस चरण के प्रारंभ को दर्शाता है (प्रकट करता है जो कि उस नक्षत्र के साथ लिखा है) । सारिणी का कोष्ठक (कालम) क्र.१२ उस चरण के समाप्तिकाल को प्रकट करता है । बीच में प्रति बीस कला के अन्तर से उक्त नक्षत्रचरण के चन्द्रस्पष्ट के राश्यादि लिखे हैं । उन कोष्ठकों में सब से नीचे की पंक्ति में उक्त चन्द्रस्पष्टों के अनुसार कालचक्र दशा का भोग्यकाल लिखा है । उक्त चन्द्रस्पष्ट से अपना चन्द्रस्पष्ट जितनी कला अधिक हो उसका फल सारिणी क्रमांक २ में उन कलाओं के सामने देखकर पूर्व प्राप्त भोग्य वर्षादि में घटा देने से अभीष्ट चन्द्र का कालचक्र दशा का भोग्य प्राप्त हो जाता है ।

ध्यान देने योग्य सूचनाएँ—(१) कोष्ठ क्रमांक १२ का उपयोग कभी नहीं करें, क्योंकि वह तो उस नक्षत्र के अगले चरण के प्रारंभ को प्रकट करता है । सारिणी में उसे देने का प्रयोजन तो सारिणी की भूल जाँचने के लिए है ।

(२) सारिणी में दिये गये नक्षत्रों के सामने के कोष्ठों में चन्द्रस्पष्ट क्रमशः बीस कला प्रति कोष्ठक में अधिक होता जाता है ।

(३) अपना जो जन्मकालीन चन्द्रस्पष्ट हो उसके समीपतम अंश-कला का कोष्ठक चुनें तथा वह अभीष्ट चन्द्र से कुछ कम अथवा बराबर हो परन्तु वह चन्द्रस्पष्ट अभीष्ट चन्द्र से १९ कला से अधिक कम नहीं होना चाहिए ।

उदाहरण—मान लीजिए—अभीष्ट चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ३।७°।१९'।१५'' है । अस्तु, सारिणी १ ख (पूर्णायुवर्ष ८५) के कोष्ठक क्रमांक ३ में हमें समीप से कुछ न्यून चन्द्रस्पष्ट राश्यादि ३।७°।०'।०'' मिला, अतः इसके नीचे सबसे निचली पंक्ति में ७६ वर्ष ६ माह तथा शून्य दिन भोग्य वर्षादि प्राप्त हुए । इन्हें एक कागज या प्लेट पर लिख लिया, यह चन्द्र स्पष्ट पुष्य नक्षत्र के द्वितीय (II) चरण का है (कोष्ठक क्रमांक १ के अनुसार) । हमारा वास्तविक चन्द्रस्पष्ट ९ कला तथा १५ विकला अधिक है अतः सारिणी क्रमांक २ में नौ कला के सामने तथा पूर्णायु वर्ष ८५ के नीचे ३ वर्ष ९ माह तथा २७ दिन प्राप्त हुए । इन्हें सारिणी क्रमांक १ (ख) से प्राप्त भोग्य वर्षादि ७६।६।० में से घटा दिया तो वर्षादि ७२।८।३ प्राप्त हुए । इनमें १५ विकला का फल एक कला का $\frac{१}{४}$ भाग अर्थात् (सारिणीक्रमांक २ से) वर्षादि २।२।१६ को भी घटा दिया तो वर्षादि ७४।३।१४ भोग्य वर्षादि प्राप्त हुए । इन भोग्य वर्षों को पूर्णायुवर्ष ८५ में से घटाया तो वर्षादि १०।८।१६ भुक्त प्राप्त हुए ।

अब ध्याय १० के श्लोक ९ की व्याख्या में दी गई कालचक्र के चक्र (अपसव्यमार्ग के चक्र) में जन्मनक्षत्र पुष्य द्वितीय चरण के सामने प्रांरभ के ४ वर्ष कुंभ राशि के तथा फिर ४ वर्ष मकर की दशा है, फिर १० वर्ष धनु की दशा है । इन सब का योग १८ वर्ष है । इन १८ वर्ष में भुक्त वर्षादि १०।८।१६ को घटाया तो धनु की दशा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

के ७ वर्ष ३ मास तथा १४ दिन शेष हैं। इसको जन्मकुण्डली में लिखें। इसके अनन्तर उसी अपसव्य चक्र के अनुसार मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या की दशा क्रमशः चलेगी; फिर पुष्य तृतीय चरण की तुलादि की दशा चलेगी। यही कालचक्र दशा का क्रम है।

कालचक्र की अन्तर्दशा निकालना—जिस राशि की दशा में जिस राशि की अन्तर्दशा उन दोनों के दशावर्ष का गुणा करें तथा पूर्णायु वर्षों में भाग दें तो लब्ध वर्ष होंगे, शेष को बारह से गुणा कर पुनः भाग देने पर लब्ध मास, फिर शेष को तीस से गुणा कर सर्वायु वर्षों से भाग देने पर दिन, पुनः शेष को ६० से गुणा कर पुनः सर्वायु (पूर्णायु) वर्षों का भाग दें तो घटी प्राप्त होंगी। जैसा कि जातकपरिजात (१०।१०७) में कहा है—

"दशादशाब्दैः सङ्गम्य सर्वायुः संख्यया हरेत् ।
लब्धमन्तर्दशा ज्ञेया वर्षमासदिनादिकाः" ॥

॥ इति प्रश्नमार्गे षोडशोऽध्यायः ॥ १६॥

॥ समाप्तोऽयं पूर्वार्धः॥

इस प्रकार बरहा ग्राम वास्तव्य आचार्य गुरुप्रसाद गौड़ कृत "पाथेय" हिन्दी टीका का सोलहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ ।।१६।।

*

Acc. 30939 / 30137

NEPAL SANSKRIT UNIVERSITY पुस्तकालय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

५४

ज्योतिष शास्त्र के महत्वपूर्ण ग्रंथ
(हिन्दी टीका सहित)

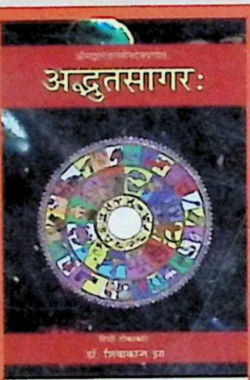

पृष्ठ संख्या : 648

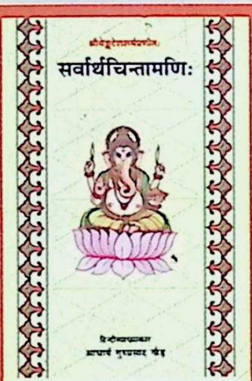

पृष्ठ संख्या : 504

पृष्ठ संख्या : 710

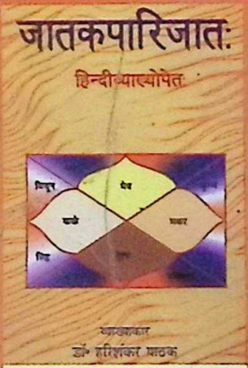

पृष्ठ संख्या : 732

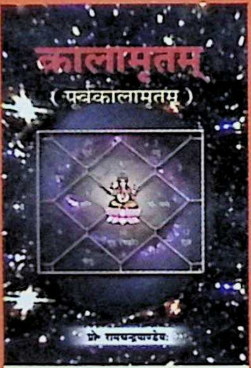

पृष्ठ संख्या : 239

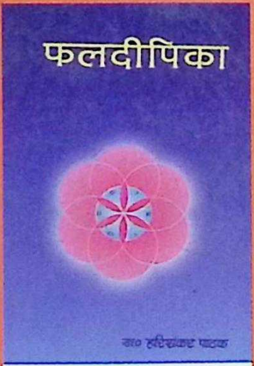

पृष्ठ संख्या : 386

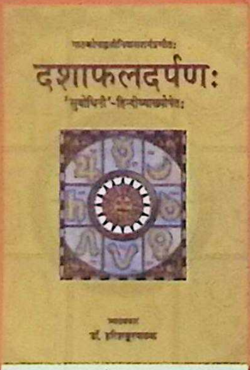

पृष्ठ संख्या : 591

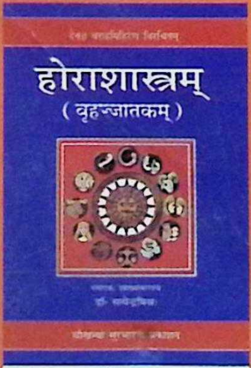

पृष्ठ संख्या : 461

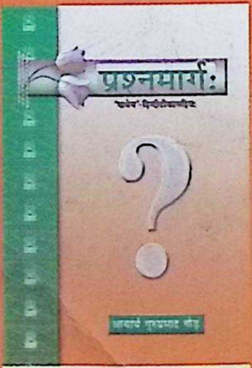

पृष्ठ संख्या : 912 (1-2 भाग सम्पूर्ण)

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu